सूर्यमल्ल मीसण द्वारा प्रणीत

वंश भास्कर

संपादक : चन्द्र प्रकाश देवल



३

वंश भास्कर

(महाचम्पू)

मुख पृष्ठ पर जगजीतसिंह 'निशान' द्वारा निर्मित सूर्यमल्ल मीसण का चित्र जिसमें कवि माँ सरस्वती की पूजा-अर्चना करते हुए।

अस्तर पर छपे मूर्तिकला के प्रतिरूप में राजा शुद्धोदन के दरबार का वह दृश्य, जिसमें तीन भविष्यवक्ता भगवान बुद्ध की माँ - रानी माया के स्वप्न की व्याख्या कर रहे हैं, जिसे नीचे बैठा लिपिक लिपिबद्ध कर रहा है। भारत में लेखन-कला का यह सम्भवत: सबसे प्राचीन और चित्रलिखित अभिलेख।

नागार्जुन कोंडा, दूसरी सदी ई.

सौजन्य : राष्ट्रीय संग्रहालय, नयी दिल्ली

सूर्यमल्ल मीसण द्वारा प्रणीत

वंश भास्कर

(महाचम्पू)

तीसरा - खंड

(चौथी- राशि)

अर्थ प्रबोधनी टीका

एवं संपादन

चन्द्र प्रकाश देवल

साहित्य अकादेमी

वंश भास्कर
चतुर्थ राशि
अनुक्रमणिका

५. एक अरब रुपयों के दान देने की प्रतिज्ञा कर अपने नाम से बीसलपुर नामक नगर बसाना आरंभ कर अजमेर आना।
६. राजा की कामवृद्धि से परेशान राज्य के लोगों द्वारा सोलंकी राजा द्वारा की जाने वाली लूटपाट की शिकायत करना, राजा का सेना सज्जित कर अजमेर से निकलना और बीसलसागर पर पड़ाव डालना।

१४० इकतीसवाँ मयूख २२२७

१. राजा सोमेश्वर की पुत्री पृथा से रावल समरसिंह का विवाह करना, पृथ्वीराज चहुवान का बड़गुज्जर राम की पुत्री से विवाह, पिता के पास अपने सामन्त छोड़ कर स्वयं कुमार का उत्तर दिशा में विजय करने जाना और पीछे से अवसर पा कर चालुक्यराज भीम का दिल्ली के राजा सोमेश्वर को मारना।

२. पृथ्वीराज चहुवान का राजा होना, फिर से चढ़ कर आए गौरी शाहबुद्दीन को बंदी बनाना और छोड़ना, पृथ्वीराज की मुहब्बा के स्वामी चंदेला राठौड़ परमाल को युद्ध में हराना। इस युद्ध में आल्हा, उछल का मरना। फतह कर देवगिरि के राजा रामधन की पुत्री से पृथ्वीराज का विवाह करना।

३. चालुक्यराज भीम को अपने सामंतों की सहायता से मारना तभी पृथ्वीराज चहुवान से राजा अनंगपाल का फिर से दिल्ली का राज मांगना, इसके बाद पृथ्वीराज का हंसावती, इन्द्रावती, शशिव्रता और धीर की बहिन से विवाह संपन्न करना।

४. कर्नाटकी नामक गणिका को जिसे उसके तोल के बराबर सोना दे कर पृथ्वीराज ने अर्जित किया था उसके प्रसंग से अपराधी मान कर अपने मंत्री कैमास को मारना।

५. ग्रंथकार (सूर्यमल्ल मीसण) का पृथ्वीराज रासौ में चंद वरदाई द्वारा वर्णित राजाओं के समय को ही अपने ग्रंथ में अपना कर गलतबयानी के दोष से स्वयं को वंचित करना।

६. मण्डलेश्वर कन्नोज के स्वामी जयचन्द्र राठौड़ की पुत्री संयोगिता का पृथ्वीराज द्वारा हरण और इस युद्ध में काशीराज को मार कर हम्मीर और गंभीर दोनों भाइयों का मारा जाना, तब राजा आनन्ददेव का मांडलगढ़ पर अपने पौत्र सुमेरू के स्थान पर रणधवल को राजा बनाना।

१४१ बत्तीसवाँ मयूख २२३१

१. चहुवान वंश वर्णन के क्रम में हाडा राजा अस्थिपाल के वंश का वर्णन।

२. पुण्डीरराज और धीर का वृत्तान्त।

३. पृथ्वीराज के संयोगिता प्रेम से दिल्ली में अंधेरा होना अर्थात् राज काज में ढील आना, संयोगिता के परिकरों का यादव हम्मीर की पगड़ी गिराना।

४. पृथ्वीराज चहुवान का प्रमाद जान कर शहाबुद्दीन गौरी का फिर से चढ़ाई करने आना और विक्रम संवत् ग्यारह सौ पचपन के श्रावण मास की अमावस्या के दिन युद्ध आरंभ होना।

देना और उसका समय संवत् कहना।

२. चहुवान राजा पृथ्वीराज के छोटे पुत्र सामन्तसिंह के वंशज जैत्रसिंह और रणधीर का बादशाह के सेवकों को मार कर रणथंभोर का गढ़ लेना।

३. बादशाह अल्लाउद्दीन के साथ शिकार में आई एक बैगम का शेख महिमाशाह से मिलना और परस्पर आसक्त हो वहाँ से भाग कर हम्मीर की शरण में रणथंभोर आना।

४. दिल्ली के बादशाहों की संख्या और नामों का उल्लेख और संक्षिप्त वृत्तान्त जिनमें रजिया बेगम का पिता की गद्दी पर बैठना और उसी के छोटे भाई बहरामशाह का उसे हटा कर पाँचवाँ बादशाह होना।

५. यवन चंगेजखान का चीन, खुरासान आदि देश जीतना, और दिल्ली के दसवें बादशाह तक का वृत्तान्त।

१. चहुवान वंश वर्णन में बंवावदा और बूंदी के राजा देवसिंह के समय में चहुवान हम्मीरसिंह पर चढ़ाई कर शाही फौज का संवत् तेरह सौ बारह में रणथंभोर पर आना, पाँच वर्ष के घेरे के बाद रणधीर को मार कर बादशाह का छूंनीगढ़ पर अधिकार करना, चित्तौड़गढ़ के महाराणा लक्ष्मणसिंह का हम्मीर की सहायता में सेना भेजना।

२. सम्मिलित सेना का रतिवाह दे कर शाहीसेना का नाश करना, महिमाशाह का तीर चला कर बादशाह के छत्र काटना, वहीं बादशाह के वीर मीरगाबरू का चहुवान सभा में नृत्य करती चन्द्रकला नामक गणिका की ऐड़ी में तीर मारना।

३. महिमाशाह का स्वयं को शाही सेना के आगे समर्पण की इच्छा करना पर हम्मीर का इनकार करना फिर अपने पुत्र को चित्तौड़गढ़ भेज कर हम्मीर का हठपूर्वक रणथंभोर में मरना और बादशाह अलाउद्दीन का रणथंभोर गढ़ पर अधिकार करना।

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

॥ श्रीसरस्वत्यै नमः ॥

अथ चतुर्थ राशि प्रारम्भ

शुद्ध प्राकृत भाषा

गीई

जस्स सयमुहमउलिणा पावीढणिहित्तपोम्मपुप्फत्तो।
उग्घडिअचलणजुअले ण भाई भेओ णमं णमिहवयणं ॥१॥

पादपीठ पर धरे हुए जिनके चरण युग्म और नमन की मुद्रा में चरण चौकी पर झुके हुए इन्द्र के मस्तक से गिरे कमल पुष्प दोनों एक जैसे हैं। ऐसे चरण कमल वाले गणेश को मैं प्रणाम करता हूँ।

सिद्धज्झाणदुरावा अणअवसरअमरपिक्खिआ दूरे।
राअग्गामछइल्ला रेअइ सव्वाण माअरा वाणी ॥२॥

सिद्ध पुरुष भी ध्यान मग्न हो कर जिन्हें नहीं जान सकते और देवता भी असमय जिन्हें दूर से ही देख पाते हैं ऐसी राग समूह में चतुर सब की जननी सरस्वती देवी को प्रणाम करता हूँ।

वेरग्ग जाण दुहिणं कविलं विय अप्पलाहसंतुट्ठं।
चण्डीआणं पिअरं णंतूण चउत्थ माढवं रासिं ॥३॥

वैराग्य में ब्रह्मा के समान, ज्ञान में कपिलदेव के समकक्ष, और आत्मज्ञान से तृप्त अपने पिता चंडीदान को प्रणाम कर मैं इस ग्रंथ की चतुर्थ राशि आरंभ करता हूँ।

अचलण गज्जं

माणिक्कराअस्स दह उत्ता एक्कमेक्को परपुहविमुत्थारिउं सम त्था ताणं साअम्मरभूवई हुवीअ मुहुक्कम्मा ॥४॥

संस्कृत अनुवाद ॥ गीतिः ॥ यस्य शतमुखमौलिना पादपीठनिहितपद्मपुष्पात्। उद्घाटितचरणयुगलेन भाति भेदो नमामि तमिभवदनम् ॥१॥ सिद्धध्यानदुरापा अनवसरेऽमरैः प्रेक्षिता दूरे। रागग्रामवि दग्धा जयति सर्वेषां माता वाणी ॥२॥ वैराग्यज्ञानद्रुहिणं कपिलमिव आत्मलाभसंतुष्टम्। चण्डीदानं पितरं नत्वा चतुर्थमारंभे राशिम् ॥३॥ अचरणगद्यम् ॥ माणिक्यराजस्य दशसु पुत्रेषु एकैकः परपृथिवी मुत्सारायितुं समर्थः, तेषां शाकंभरीभूपतिर्बभूव मुहुःकर्मा ॥४॥

माणिक्यराज के दस पुत्रों में से प्रत्येक पुत्र जो दूसरे शत्रु की भूमि को जीतने में समर्थ था। उनमें से मुह:कर्म नामक पुत्र सांभर का राजा बना।

प्रायो मरुदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

सचरणगद्यम्

मुहुक्कर्मा रो अनुज लालसिंह मद्रदेसमें आपरो अमल जमाय महीस हुवो जिणरी संतति समस्त माद्रेचा चहुवाण कहीजै।

जिण वंस में कोटि मुद्रा रा देणहार देवराज जिसा नरेस हुवा जिकां रो सुजस संसार रै श्रवण पथ में रहीजै।

लालसिंह रो सोदर हरीसिंह सिंधुदेस रो अधीस हुवो जिण रै पुत्र धुंधेट ऊपजियो जिकण रो बंस धुधेड़िया चहुवाण कहावै।

जिण कुळ में अर्जुन सा अजेय राजा प्रकटिया जिकां रा अभिधान प्रभात रै समय प्रभाकर हूं प्रथम ऊगण मैं आवे।।५।।

इस मुह:कर्म का छोटा भाई लालसिंह मद्र देश (मारवाड़ प्रदेश) पर अपना अधिकार जमा कर वहाँ का राजा बना, जिसके सारे वंशज माद्रेचा चहुवान कहलाए।

जिसके वंश में करोड़ रुपए देने वाला (दान करने वाला) देवराज जैसा राजा हुआ उनका सुयश अभी भी सुनाई देता है। लालसिंह का सहोदर हरिसिंह सिंध प्रदेश का राजा बना। उसको घुंधेट नामक पुत्र हुआ जिसके वंशज धुंधेड़िया चहुवान कहलाते हैं।

इस धुंधेड़िया कुल में अर्जुन जैसे राजा प्रकट हुए जिनके नाम प्रात: समय में सूर्य से पहले उदय होते हैं अर्थात् सूर्योदय से पहले उनका स्मरण किया जाता है। जो प्रात: स्मरणीय हुए।

दोहा

हुवो अनुज हरिसिंह रै, समर बळी सादूळ।
जिणरै सुतघन टंक जुग, थिया निडर जसथूळ।।६।।
घन कीधो पंजाब घर, जय नय अमल जमाय।
जिणरो कुळ ठावो जगत, पंजाबी पदपाय।।७।।

जिण कुळ मैं माधव जिसा, अनड़ हुवा चहुवाण।
भाटी रा भुज भांजिया, जोड़े रण जैसाण॥८॥
टांक कहीजै टंक रा, जिण कुळमैं बहुजाण।
दळ खाधो जयचंद रो, चाटै भड़ चहुवाण॥९॥
सोदर इम सादूळ रो, पूर्णराज बळपूर।
राज भदावड़ जिण रचे, सात्रव दळ दळि पूर॥१०॥
भूप हुवा जिण कुळ भला, थिर अटेर मुख थान।
भाखै सुकवि भदोड़िया, सब जिणरी संतान॥११॥

सिंध के इस राजा हरिसिंह का एक छोटा भाई शार्दूल हुआ। इस अप्रतिम योद्धा शार्दूल के निडर वीर धन और टंक नामक दो पुत्र जन्मे जो यशस्वी थे। इनमें से घन ने पंजाब देश को फतह कर अपने अधिकार में किया और नीतिपूर्वक उस पर अपना अमल जमाया। जिसके कुल वाले अर्थात् जिसके वंशज पंजाबी उपटंक वाले हुए। इसी पंजाबी कुल में माधव चहुवान जैसा दुर्द्धर्ष योद्धा हुआ जिसने जैसलमेर के शासक भाटी से युद्ध कर उसे हराया। इसी प्रकार टंक के जो वंशज टांक उपटंक वाले प्रसिद्ध हैं उन चहुवान योद्धाओं ने जयचन्द की सेना का नाश कर उसे चट कर लिया था। इसी प्रकार शार्दूल का एक वीर भाई पूर्णराज था जिसने युद्ध लड़ कर भदावड़ के राज पर शत्रुओं की सेना का संहार कर अधिकार जमाया। इसी एक कुल में कई जन्में चहुवान मुख्य-मुख्य स्थानों को फतह कर वहाँ के शासक बने। सुकवि (सूर्यमल) कहता है कि भदोड़िया कहलाते हुए पूर्णराज के सारे वंशज प्रसिद्ध हुए।

सचरणगद्यम्

मुहुक्कर्मा नें आपरा छट्ठा सहोदर नूं जाळोर रो दुर्ग दीधो।

जठे खंधावार जमाय मौक्तिकराज नें पुरूरवा प्रियब्रत रै समान राज कीधो।

जिण जाळोर रो दूजो पर्याय आर्यावर्त में विदित सोनगिरि इसो कहावै।

इण कारण मौक्तिकराज चहुवाण सोनगिरा एहो उपटंक पावै ॥१२॥

जिण कुळ मैं राजा कन्हड़देव रै तनूज वीरमदेव जिसा बीराधिबीर रजपूत हुवा।

अर अनेकवार दिल्ली रा साह जवनेस अलाउद्दीन रा फोजां रा बिखेरिया हुवा।

जिणनूं बिवाहण काज पातसाह री पुत्री पिता रो निदेस लेर बारबार फोजां बिदा कीधी।

जिका जिका ही राजकुमार बीरमदेव बाजी उठाय चोड़ै खेत मारि दीधी॥१३॥

सांभर नरेश मुहुक्कर्मा ने अपने छठे भाई को जालौर का दुर्ग प्रदान किया। वहाँ जालौर को अपनी सशक्त राजधानी बना कर मौक्तिकराज ने पौराणिक राजा पुरुरवा और प्रियव्रत की तरह शासन किया। जिसने अपने सुदृढ़ सुशासन के आसरे जालोर का दूसरा पर्याय सोनगिरि को पूरे आर्यावर्त में प्रसिद्ध कर दिया। इसी कारण से मौक्तिकराज के सभी वंशज सोनगिरा चहुवान के उपटंक से विभूषित हुए। इसी कुल में राजा कन्हड़देव के पुत्र राजकुमार वीरमदेव जैसे महावीर क्षत्रिय ने जन्म लिया जिसने अनेक बार दिल्ली के मुगल बादशाह अलाउद्दीन की सेना के समूहों को बिखेरा। जिससे विवाह करने की ख्वाहिशमंद (आकांक्षी) बादशाह की बेटी ने पिता से निर्देश ले कर जितनी बार सेनाओं को जालौर फौजकशी करने भेजा उतनी ही बार राजकुमार ने अपने घोड़े उठा कर (युद्ध में सामना कर) उसे रणक्षेत्र में नष्ट कर दिया।

तुरक री तनया रो स्पर्स अनुचित जाणि जाळोर नूं जळ देर बाजी में प्राण रो ही पण लगायो।

अर परिणाम रै समय हजारां बीबियां ए हाथ बंगडी बिहूण करि काच रा कुंभ जिम ऊजँळा लोहां खंड खंड होय परलोक पायो।

जिणरा कटिया ही सीस नूं थाळ मैं मंगाय जवनराज री सुता बरमाळा पटकण रो बिचार कियो।

जठैपण बिनां ही प्राण चहुवाण रो मस्तक पाछो मुरड़ियो इसड़ी किंबदंती नैं प्रकास लियो ॥१४॥

तुर्क की पुत्री के स्पर्श को अनुचित समझ जालौर को तिलांजलि दे कर अपने प्राण की बाजी लगाई और परिणामस्वरूप अन्त समय में वह राजकुमार वीरमदेव हजारों मुगल योद्धाओं की बीबियों के हाथ कंकणविहीन कर (उन्हें विधवा बना कर) तलवारों के प्रहार से काँच के घड़े की मानिन्द किरच-किरच होकर परलोक को गया। जिसके कटे हुए सीस को थाल में रख कर मंगवाया और उस तुर्क बादशाह की बेटी ने वरमाला पहनाने का विचार किया पर ऐसा कहा जाता है (यह प्रवाद प्रसिद्ध है) कि उस चहुवान राजकुमार का कटा हुआ मस्तक भी उल्टा मुड़ गया।

इण ही बंश में भटनैरपुर रै अधीस जसराज सोनगिरै केही बार जवनां रो जोरदार कटक भांजियो।

अर अंत रै समय आपरी पत्नी रो मस्तक गळै बांधि धारां चढि टूकटूक होय सुरलोक मैं निवास कियो।

और भी अनेक सोनगिरा चहुवाण आप आपरो सुजस अर्क पहली उगावै।

जिण नूं सुणियां रावराजेन्द्र आप जिसा सुछत्रियां नूं आणंद आवै ॥१५॥

इसी वंश का वंशज भटनेरपुर (हनुमानगढ़) का राजा जसराज सोनगिरा हुआ जिस वीर योद्धा ने कई बार यवन सेनाओं का संहार किया और अन्त समय में अपनी पत्नी का कटा हुआ सिर अपने गले में बाँध कर तलवारों की तीखीधारों के प्रहार झेलता हुआ रणभूमि में कट कर टुकड़े-टुकड़े हो स्वर्गलोक को गया। इसी तरह और भी अनेक सोनगिरा चहुवान हुए जिनका अपना सुयश रूपी सूर्य सूर्योदय से पहले उदय होता है। जिसे सुन कर राव राजेन्द्र रामसिंह! आप जैसे सुक्षत्रियों को आनन्द की अनुभूति होती है।

दोहा

नाहर रै सप्तम तनय, निडर थियो निर्बाण।
निर्बाण हि जिणरो जनन, बाजै बिदित बखाण ॥१६॥

नाहर सिंह का सातवाँ पुत्र निडर निर्वाण हुआ। उसके वंशज आगे चल कर निर्वाण उपटंक वाले हुए, ऐसा अब तक प्रसिद्ध है।

पादाकुलकम्

इण कुळ ही देवट अभिधानी, महीभुजंग हुवो रणमानी।
कुळ जिणरो देवड़ा कहावै, दान समर अनुपम दरसावै॥१७॥
पावन धाम सिरोही पत्तन, धारै छत्र अजे कीरतिधन।
तपै कटक अब्बूगिरि रै तिम, अब्बूपति उपटंक भजै इम॥१८॥
अखेराज जिण कुळ ऊपजियो, तृण मुख लियो जिको अरि तजियो।
सोढी अधम गई सुणि सत्वर, गंजण खल गिणियो बपु गत्वर॥१९॥
डंकि निसीथ रुक्ख चढि डाकी, अंतर दुर्ग गयो एकाकी।
दै ठोकर सूतो जगाय द्रुत, हणि जालोर नबाब कियो हुत॥२०॥
जड़ि कीलक अबला निज जीहा, आणे हणी धरे रण ईहा।
वळे हुवा सुरताण महाबळ, दळिया जिण बहुधा अकबर दळ॥२१॥
बंधव विजो पलटि खळ बणियो, अकबर बळ सम्मुह ऊफणियो।
सो सुरताण हणे फोजां सह, अब्बू बिदित कियो रण आग्रह॥२२॥

इसी कुल में भूमि रूपी गणिका को भोगने वाला देवट नामक युद्धप्रिय चहुवान जन्मां। जिसके वंशज देवड़ा कहलाते हैं और जो दान और युद्ध दोनों में उपमारहित अपनी शोभा से शोभायमान है। पवित्र नगर सिरोही पर अब भी इसी वंश के कीर्तिधन देवड़ों का एक छत्र शासन है। वह आबू पर्वत के शिखर पर तपने वाला अर्थात् वहाँ का सूर्य आबूपति की पदवी वाला है। इस कुल में अखेराज जन्मा जिसने अपने मात्र उसी शत्रु को छोड़ा (मारने से) जिसने उसके सम्मुख अपने मुँह से तृण (तिनका मुँह में लेने का अर्थ है मैं तुम्हारी गाय हूँ मुझे मत मारो) लिया। इस अखैराज ने अपनी नीच स्त्री सोढी (सोढ़ा जाति के क्षत्रिय की पुत्री) को जालौर के नवाब के वहां गई हुई सुन कर शत्रु को शीघ्र मारने में अपने शरीर को नाशवान समझा और शत्रु को मार कर ही मरना उचित समझा। वह प्राण लेने वाला अखेराज अकेला आधी रात के समय वृक्ष पर चढ़ कर गढ़ में कूद गया और उसने रनिवास में जाकर

सोये हुए नबाब को ठोकर मार कर जगाया। फिर अपने शत्रु जालौर के इस नवाब को मारा। इसके बाद अपनी स्त्री की जीभ पर कील ठोक कर रण की इच्छा वाला वह वीर उसके मृत शरीर को उठा लाया था। उसके बाद इसी कुल में सुरताण जैसा महाबली जन्मा जिसने कई बार अकबर की सेना को मार भगाया। उसके बांधव जब उसके विरुद्ध हो कर स्वयं शत्रु बन गए और इसी समय अकबर का दल उफन कर सामने आ पहुँचा तब भी इस वीर सुरताण देवड़ा ने शाही सेना का विध्वंस कर आबू पर्वत को रण का आग्रह करने वाली भूमि के रूप में प्रसिद्धि दिलवाई।

आढो रण गलियार उठायो, लागि नृजान अप्पपुर लायो।
करि उपचार अगद बपु कीधो, दुलभ बित्त संचय नृप दीधो॥२३॥
पोळिवृत्ति दुरसै जिण पाई, बढी सतत सुरताण बड़ाई।
अंक करे जोधाण उदैपुर, आश्रय देर झेलिया आतुर॥२४॥
असि अनेक जिणपुर ऊपजिया, सब भूपति राखै कटि सजिया।
इणविधि ख्यात देवड़ा अधिपति, गंजण अरि आहव अर्जुन गति॥२५॥
आणै निजघर बैर उधारा, देवटरा भोगै भुव धारा।
आहवबार बिलंब न आणै, जस केवळ थाई बपु जाणैं॥२६॥

यही सुरताण देवड़ा युद्ध में घायल आढ़ा शाखा के दुरसा नामक चारण को उठा कर पालकी में बिठा स्वयं उसे कंधा दे कर अपने नगर में लाया और उसका इलाज करवा कर दुरसा आढ़ा को नैरोग्य किया। उसने इस कवि दुरसा आढा को दुर्लभता से संचित धन दिया। बाद में इसी आढा ने सुरताण का पोलपात्र होना स्वीकार किया और सुरताण के सुयश को चारों ओर फैलाया। इस देवड़ा सुरताण ने उदयपुर और जोधपुर पर उपकार कर स्वयं के आश्रय में आने वाले उत्सुकों को शरण दी। इसी की नगरी में अच्छी तलवार ने जन्म लिया (सिरोही की तलवार बहुत प्रसिद्ध मानी जाती है) जिसे सारे राजा अपनी कमर से बाँधे रखते हैं। इस प्रकार हे राजा रामसिंह! सिरोही के देवड़ा राजा प्रसिद्ध है जो युद्ध में अपने शत्रु को मारने में अर्जुन जैसी त्वरा वाले हैं। किसी दूसरे का प्रतिशोध भी स्वयं लेने को तत्पर वे देवड़ा तलवार की धार के बल पर भूमि को भोगने वाले हैं। युद्ध के समय

किसी तरह विलंब नहीं करते और शरीर को नाशवान जानने वाले वे मात्र अपनी कीर्ति को ही स्थाई और स्थिर समझने वाले हैं।

इम माणिक्यराज सुत अष्टम, कृष्णराज संगर अणचल क्रम।
पांड्यदेस बैभव जिण पायो, बसुमय कंधावार बणायो॥२७॥
बंस तदीय पंडिया बज्जै, लखियां जिण पैलां जळ लज्जै।
सुत नाहररै नवम सुभायक, लसणराज खट्टण जस लायक॥२८॥
लड़ि गुजरात प्रांत जिण लीधो, कै दळ गंजि अमल थिर कीधो।
उणरा कुळ रण ग्रसण अराती, रजवट धर ठावा गुजराती॥२९॥

इसी तरह चहुवान राजा माणिक्यराज का आठवाँ पुत्र युद्ध में अविचल रहने वाला कृष्णराज हुआ। जिसे पांड्य देश का वैभव प्राप्त हुआ अर्थात् उसे पांड्य देश का राज्य मिला जहाँ उसने अपनी समृद्ध राजधानी बनाई। इसके वंशज पंडिया उपटंक से पहचाने जाते हैं। जिनकी कांति के आगे स्वयं की कांति फीकी हो कर लज्जित होती है। नाहरराज (माणिक्यराज) का नौवाँ पुत्र कीर्ति कमाने वाला लक्षणराज हुआ जिसने युद्ध लड़ कर गुजरात प्रांत को फतह किया और कई शत्रु दलों का संहार कर वहाँ अपना अधिकार जमाया। उसके कुल वाले (वंशज) युद्ध में शत्रुओं को नष्ट करने वाले और पृथ्वी पर क्षत्रियोचित गुणों वाले गुजराती उपटंक से जाने जाते हैं।

षट्पात्

पहु सुत दसम प्रबाल देस बगसर धर दब्बी,
बगसरिया जिण बंस मरण सब प्रथम मुरब्बी।
अग्गैं जिण कुळ अनड़ हुवो चहुवाण हीरमणि,
राणनगर अधिराज हल्ल बिक्कम आयो हणि।
पैंतीस जुद्ध लै जय प्रकट हत्थी सत्तरि रीझ हित।
सांसण पचास दीधा सहज बगसरिया कीधा विदित॥३०॥

राजा माणिक्यराज का दसवाँ पुत्र प्रवाल था जिसने बगसर देश की भूमि को जीत कर अपना अमल जमाया। जिसके वंशज बगसरिया उपटंक से प्रसिद्ध हुए। बगसरिया जो युद्ध में सबसे पहले मरने में ही बड़प्पन मानने वाले हुए। पूर्व में इसी कुल में अनम्र योद्धा हीरमणि चहुवान जैसा पैदा हुआ

जिसने राणनगर के हाला जाति के क्षत्रिय राजा विक्रम को युद्ध में मारा और जिसने लगातार अपने पैंतीस युद्धों में विजयश्री पाई। इसी हीरमणि ने पचास सांसणों (जागीर के गाँव) की जागीर और सत्तर हाथियों की रीझ की अर्थात् प्रसन्न हो कर इनाम में बाँटे और अपनी बगसरिया गौत्र को संसार में प्रसिद्ध किया।

दोहा

हुवा प्रकट माणिक्क हूँ, एगारह ए भेद।
पूरबिया कढिया प्रथम, बारह इम सब बेद॥३१॥

चहुवान राजा माणिक्यराज से ये ग्यारह भेद हुए। पूरबिया पहले ही निकल चुके थे उन्हें मिला कर कुल बारह भेद चहुवानों में हुए। अर्थात् कुल बारह प्रसिद्ध वंश हुए।

पादाकुलकम्

पाटव निपुण मुहुक्कर्मा पहु, बैरी जिण हणिया आहव बहु।
दूजो जिण आव्हय दामोदर, प्रकट थि यो दिसदिस बसुधापर॥३२॥
सो माणक्कराज पट्टप सुत, निडर मुहुक्कर्मा बीरां नुत।
सम्भर नगर छत्र धरि सम्भर, हवो प्रबळ नृप समरसिंह हर॥३३॥

चतुर और कुशल राजा मुहुक्कर्मा जिसने कई युद्ध लड़ कर अपने शत्रुओं को मिटाया। जो अपने अवर नाम दामोदर से पृथ्वी पर चारों दिशाओं में विख्यात हुआ। वीरों द्वारा स्तुतियोग्य यही निडर वीर मुहुक्कर्मा राजा माणिक्यराज का पाटवी (सबसे बड़ा) पुत्र था समरसिंह का वंशज यही मुहुक्कर्मा अपने पिता के बाद सांभर नगर का राजा बना।

दोहा

रुकमंगद प्रतिहार री, सुता सुरूप सुजाण।
महिप कुमरि जिण नाम सो, इण परणी चहुवाण॥३४॥

प्रतिहार राजा रुक्मागंद की सुन्दर और गुणवान महिप कुंवरी नामक पुत्री से इस चहुवान राजा मुहुक्कर्मा ने विवाह किया।

पादाकुलकम्

सविया दोय मुहुक्कर्मा सुत, जिके पढण बितरण रण जयजुत।
अग्रज रामचन्द्र मन उज्जळ, खिच्चीराज अनुज गाहण खळ॥३५॥

सम्भरीक खिच्ची जिण संतति, भुजबळ अनड़ हुवा बहु भूपति।
आहणि जंदराव धर अब्बू[१], पुणु कबंध हणियो रण पब्बू॥३६॥
गागरोणि अचलेस सजे गढ, रण बहु बरस किये रावण रढ।
असुचि मन्त्र दिल्लीस उपायो, बारि पटकि गोपल बिगड़ायो॥३७॥
जरैं अपेय अचळ जळ जाणे, तोड़े अरर मुच्छ कर ताणे।
मथे जवन दळ उदधिखीर मित, अचळ हुवो तिलतिल सुर अंचित॥३८॥

सांभर नगर के स्वामी मुहुक्कर्मा के दो पुत्र हुए जो विद्याध्यन, दान और युद्ध में विजय प्राप्त करने वाले थे। इन दोनों पुत्रों में बड़ा रामचन्द्र था जो उज्ज्वल चित्त वाला था और छोटा खिच्चीराज शत्रु संहार करने वाला हुआ। खिच्चीराज के वंशज खिच्ची चहुवान कहलाए। इस वंश में कई अनम्र योद्धा जन्मे जो अपने बाहुबल से राजा बने। कहते हैं कि इसी वंश में उत्पन्न जिंदराव ने पाबू राठौड़ को युद्ध में मारा था।

इसी प्रकार गागरोनगढ़ के स्वामी खिच्ची (खीची) अचलदास ने रावण की तरह हठ कर कई वर्षों तक निरन्तर आक्रांताओं से युद्ध किया। दिल्ली के बादशाह ने जब इस गढ़ को अविजित जाना तब उसने गायों का मांस डलवा कर पीने के पानी के सभी स्रोतों यथा तालाब, बाव आदि को अपवित्र करवा दिया। तब अचलदास ने उपलब्ध पानी को अपेय जान कर प्यासे मर जाने की जगह अपनी मूँछों पर बल दे कर गढ़ के दरवाजों को खोलने का हुक्म दिया और गढ़ से बाहर धावा कर यवन सेना को समुद्र मंथन की तरह मथ डाला। इस प्रकार युद्ध में तिल-तिल कट कर वीर देवताओं द्वारा भी पूजने योग्य हुआ।

लालाँ उमां साथगति लीधी, पतिसह त्रिदिव सुधा मिलि पीधी।
पिप्पराज इण कुळ खिच्चीपति, महित हुवो हरिभक्त महामति॥३९॥
कळि टोडो चालुक बस कीधो, लल्लो जवन मारि जिण लीधो।
उभय गढां इणारो जस आयो, गग्गरोणि चित्तोड़ गिणायो॥४०॥

१. आहणि जंदराव धर अब्बू से यह अर्थ भी निकलता है कि आबू की भूमि पर जिंदराव को मारा पर प्रचलित आख्यान के अनुकूल यह अर्थ यहां नहीं बैठता। वस्तुतः जायल के जिंदराव खिच्ची ने देवल देवी की गायें छुड़वाने आए पाबू राठौड़ को मारा था जो कि रिश्ते में उसका साला लगता था। -सं.

वळे हुवो नृप गंग महाबळ, थरि दिसदिस कीधा जिण धूंकळ।
प्रतिदिन मेद जूह रण पाड़े, चावो हुवो बंस जळ चाड़े ॥४१॥

उसकी रानियों उमा और लालां (लाल कंवर) ने अपने पति के साथ सहगमन कर स्वर्ग में अमृत साथ पिया अर्थात् वे दोनों सती हुई। इसी कुल में राजा पिप्पराज ने जन्म लिया जो महामति बड़ा हरिभक्त हुआ। जिसने युद्ध कर चालुक से टोडा हथियाया और इसी समय लल्लनखां पठान को (उडणिया पृथ्वीराज के हाथों) मारा। इसीलिए दोनों गढ़ों गागरोनगढ़ और चित्तौड़गढ़ को इसका यश अर्जित हुआ। पिप्पराज खिच्ची के अतिरिक्त इसी वंश में एक और महाबलि राजा गंग हुआ जिसने दिशा-दिशा में जा कर बड़े युद्धों को आमंत्रित किया और उन युद्धों में उसने रणभूमि में शत्रु दल को काट-काट कर मांस का ढेर लगा दिया। इस प्रकार वह अपने वंश को नई कांति प्रदान करने वाला हुआ।

देवै जिण बंटे भुव दीधी, कांकड़ सीम अटीरी कीधी।
खिच्ची कुळ दूदो अरि खावण, राड़ी दुलह हुवो बळ रावण॥४२॥
मारि खळां घर कूक मचाई, चंडी जिण बहुबार नचाई।
राघवगढ़ जयसिंह जई रण, अजे हुवो दक्खिणदल अद्दण॥४३॥

जिस मूल्य पर भूमि दी जाती है अर्थात् सिर के मोल दी जाती है उसने भूमि उसी मूल्य पर दी और अपने राज्य की सीमा को अचल रखा। अर्थात् आगे पीछे नहीं होने दिया ऐसा खीची कुल में शत्रु संहारक दूदा हुआ जो रावण की तरह बलवान हो कर युद्ध का दूल्हा बनने को सदैव अग्रणी रहता था। जिसने अपने शत्रुओं को मार कर दुश्मनों के घर में मातम मनवाया और कई बार रणचंडी को अपने संकेतों पर नचवाया। इस राजा के अतिरिक्त इस वंश राघवगढ़ का विजयी राजा जयसिंह हुआ जो दक्षिण की ओर से आने वाली सेना (मराठा सेना) के लिए आदण स्वरूप था। (शाक और दाल आदि पकाने को एक पात्र में पानी भर कर अग्नि पर चढ़ाया जाए उसे आदण कहते हैं)।

के अवसर तोपां सिर काछी, असह ठेलि कीधी रण आछी।
दोलतराव संकि जिम दावां, रहियो भीत दमण घण रावां॥४४॥

खग्ग उदग्ग इसो कुळ खीची, बिरची जग जिण सुजस बगीची।
तेगां प्रबळ गजांसिर तोड़ण, मां नैं गाळि पीठि पग मोड़ण॥४५॥

उसने युद्ध में कई अवसरों पर गोला उगलती हुई तोपों के सामने अपने घोड़े डाले और अपने उन्हीं घोड़ों के बल पर बलवान शत्रु को भी युद्ध में पीछे ठेल कर असली युद्ध किया। जिसके डर से दौलतराव सिंधिया जैसा योद्धा भी डरता रहा जिसने कई राजाओं का दमन कर उन्हें भयभीत कर रखा था। अपनी तलवार के अग्रभाग को सदैव उछलती हुई रखने वाले उस खीची (खिच्ची) ने इस संसार में अपने सुयश रूपी बगिया का निर्माण किया। जो अपनी प्रबल तलवारों के सहारे हाथियों के मस्तकों को काटने वाला हुआ, जिसके लिए रणभूमि में मुँह मोड़ना अर्थात् अपनी पीठ दिखाना मां की गाली के समान लगता था अर्थात् अति असहनीय था।

दोहा

के मागध इणबिधि कहै, ग्रंथां लिखि जस गान।
रामचंद्र रा अनुज रो, अनड़ हुवो अभिधान॥४६॥

कई मागध जनों (बड़वा भाट) ने अपनी पोथियों में लिखा है कि रामचन्द्र के छोटे भाई का नाम अनड़ था। उन्होंने अपनी बहियों में उसे विख्यात बता कर उसका यशगान भी किया है।

पादाकुलकम्

बूठो मेघ नही जिण बेळा, भैचकि भूप हुवा सब भेळा।
जीमण खिच्च जिकां दीधो जिम, आव्हय खिच्चीराज हुवो इम॥४७॥

उन्होंने इस प्रसंग में लिखा है कि एक बार बड़ा भारी दुर्भिक्ष पड़ा। इस प्राकृतिक विपदा के समय सभी राजागण एकत्रित हुए। इसी अनड़ ने उन सभी को भोजन में खीच (बाजरी से बनने वाला एक खाद्य विशेष) परोसा। बस इस कारण से अनड़ का अवर नाम खिच्चीराज हो गया।

दोहा

धरे छत्र संभरधणी, रामचंद्र नरराज।
किया गरद खरकोण सा, बैरी गण जिण बाज॥४८॥

पट्टणिपति जादव प्रथित, सल्हकरण सुत सूर।
बेटी जिण कुळबैर मैं, दीध करण डर दूर॥४९॥
सीला जिण अभिधान सो, संभर परणि समान।
आणी संभर गुण उदधि, बंधे सुजस बितान॥५०॥
कोसलेस सूद्रक सुता, बिंदबंस निधि नाम।
परणी संभर प्रियतमा, या दूजी अभिराम॥५१॥

इधर सांभर का छत्र धर कर रामचन्द्र चहुवान राजा बना। वह अपने तीतर रूपी शत्रुओं के लिए साक्षात् बाज पक्षी था उसने अपने शत्रुओं को चुग लिया अर्थात् वह बड़े शत्रु संहारक के रूप में प्रसिद्ध हुआ। उस समय के पट्टणिपुर के प्रसिद्ध राजा सल्हकरण ने अपनी पुत्री इसे दी जिससे कुलों की शत्रुता समाप्त हो जाए और वह अभय रह सके। उस पुत्री का नाम शीला था। सांभर के स्वामी ने पूरे लवाजमा सहित जा कर पूरी धूमधाम से उसे अपनी रानी बनाया और उस गुणवती शीला को सांभर लाया। इसके अतिरिक्त कौशल देश के राजा शूद्रक जो बिंद वंशीय क्षत्रिय था की पुत्री निधि को सांभर के राजा रामचन्द्र ने अपनी दूसरी रानी बनाया।

षट्पात्

सूद्रक नृप जिण समय नगर साकेत धराबर,
नय बल धर्म निधान हुवो पंडित सर्वापर।
वेदसाम ऋक बेद गणित वैद्यक आगम मत,
गजसिक्षा व्याकरण न्याय साहित्य पासुपत।
बाणी बिसेस प्राकृत प्रमुख चतुर कळा चउसट्ठि चय।
बिंदकुल करण पुहवी विदित ए आगम पढियो अभय॥५२॥

कौशल देश के साकेत नगर (अयोध्या) की धरती पर जिस समय शूद्रक राजा था उस समय रामचन्द्र नीति, बल और धर्म का पालन करने वाला और विद्याओं में पारंगत पंडित था। वह सामवेद, ऋग्वेद, आयुर्वेद, गणित पुराण आदि का जानकार और हस्तिशास्त्र, व्याकरण, न्यायशास्त्र, साहित्य, पाशुपत शास्त्र जैसी विद्याओं में निष्णात था। चौंसठ ही कलाओं का

ज्ञाता वह अन्य भाषाओं के अतिरिक्त संस्कृत और प्राकृत भाषा का विद्वान था। बिंद कुल का वह दानवीर कर्ण जैसा राजा शूद्रक पृथ्वी पर विद्यमान सारे शास्त्रों को जानने वाला था अर्थात् वह विद्या-व्यसनी उत्कृष्ट विद्वान था।

दोहा

सहर अवंती जिण समय, चारुदत्त द्विजचंद्र।
क्रम पढियो बिद्या कळा, दुर्बिधभाव अतंद्र॥५३॥
एक रुचिर गणिका उठै, सुभगुण सीळ समान।
कवि बसंतसेना कहै, उचित जास अभिधान॥५४॥
तरुणी जिण धनवान तजि, तजियो वेस बिभाग।
चारुदत्त द्विज ही चहै, राची गुण अनुराग॥५५॥
इच्छे धन गणिका अवर, धनवंतां घर धाय।
तिण बाळा तजियो तिको, गुण अनुराग गिणाय॥५६॥
उण दळिद्र द्विज रे अरथ, बणि दासी बिणु मोल।
उलटो निज घर अप्पियो, करि अधीन असु कोल॥५७॥

उसी काल में अवंती का निवासी ब्राह्मण कुल का चन्द्रमा चारुदत्त नामक ब्राह्मण था जिसने गरीब होते हुए भी निरालसी हो कर सारी विद्याओं और कलाओं का अध्ययन किया। उसी नगर उज्जैन में एक सुरुचि सम्पन्न, गुणवान, शीलवान और सुन्दर गणिका थी। कवि लोगों ने उसका नाम वसन्तसेना कहा है। वह अपने नाम के अनुरूप ही थी। वह गणिका धनवानों को छोड़ कर और यहाँ तक कि अपने गणिका वेश और विचार को त्याग कर चारुदत्त ब्राह्मण को ही चाहने लगी। वह वसन्तसेना चारुदत्त के गुणों पर रीझ कर उसकी प्रीत में रंग गई। उसके साथ वाली अन्य गणिकाएँ तो धनवानों के घर दौड़ कर धन चाहती थी पर उस गणिका वसन्तसेना ने तो एक चारुदत्त के गुणों से अनुराग किया बाकी सब चीजों को त्याग दिया। उस वसन्तसेना ने तो अपने प्राण मात्र उस एक दरिद्री के अधीन कर दिये और वह बिना किसी मोल के उसकी दासी हो गई। यही नहीं उसने तो उल्टा अपना घर तक उसे समर्पित कर दिया।

उज्जइणीपुर उण समय, प्रतपै रेणु प्रमार।
तिणरो दूजो नाम जग, आखै करण उदार॥५८॥
तिणरो एक सकार तदि, जामिप धन बय जोर।
रूपाजीवा रूप रो, सुणियो जिण अतिसोर॥५९॥
गणिकाघर सो सठ गयो, कीधो उण सतकार।
भजि मोनूं इसड़ी भणी, तिण सकार तिणवार॥६०॥
कवण चतुर गणिका करै, चारुदत्त घर चित्त।
तजि दळिद्द भजि मुज्झ तू, बिलसि अप्रमित वित्त॥६१॥
सो बसंतसेना सुणे, कहियो बित्त निकाम।
मानों गुणदासी मनैं, धनदासी घणधाम॥६२॥
गडियो जिणरै चित्त गुण, धन तिणरै मन धूलि।
दुर्बिध सोही बिबुध द्विज, मानों जीवनमूळि॥६३॥

उज्जयिनी नगरी पर उस समय परमार रेणु का राज था जिसका अवर नाम करण भी विख्यात है उसकी पत्नी का भाई शकार था जो अपने बहनोई राजा के धन के बल पर और अपने यौवन की वय के कारण इतराता था। उसके कानों में वसन्तसेना गणिका के रूप की चर्चा पड़ी। सुनते ही वह एक दिन गणिका वसन्तसेना के घर गया। गणिका ने उसकी आव भगत की और पूरे सत्कार के साथ आसन दिया पर शकार ने उससे कहा कि मुझ से भोग कर और सुन, कौन चतुर गणिका ऐसी होगी जिसका मन इस निर्धन ब्राह्मण के लिए विचलित हो? ऐसा तो कोई मूर्ख गणिका भी नहीं करती। उस द्ररिद्री ब्राह्मण का ख्याल छोड़ दे और मुझ संग भोग कर सारे विलासों को भोग! अमाप धन सम्पत्ति को प्राप्त हो। यह सुन कर वसन्तसेना ने कहा कि मेरे लिए धन का कोई मोल नहीं। मुझे धन व्यर्थ लगता है। मुझे आप गुणों की दासी मानें, धन की दासियाँ तो और बहुतेरी हैं। मेरे चित्त में तो एक उसका गुण गड़ गया है इसलिए मेरा मन तो धन को धूल के समान गिनता है। वह दरिद्री भले ही हो पर पंडित है, विद्वान है। मैं तो मात्र उसे ही अपने जीव की जड़ी मानती हूँ।

षट्पात्

तिण सकार इणतोर सतत गणिका समुझाई,
बेसबधू गुण बदळि प्रीति लेस न पलटाई।
तदि सकार असि तोलि घाव उणरै लगाय घण,
मरी जाणि खळ मूढ पिहित आयो घर अप्पण।
न मरी सु प्रबल सबसों नियति दिन किताक अंतर दिया।
सह बिप्र बळे बिलसे सफळ काम बंयस जुब्बन किया॥६४॥

उस शकार ने इस तरह उस गणिका वसन्तसेना को बहुत प्रकार से समझाया, तरह-तरह के प्रलोभन दिये पर वह गणिका गुणों के बदले में कुछ भी लेने को तैयार नहीं हुई। उसने शकार के प्रेमानुरोध को अस्वीकार कर दिया। इस पर शकार ने अपनी तलवार निकाल कर वसन्तसेना पर वार किया। उसके शरीर पर तलवार से कई घाव दे कर और उसे मर गई जान कर शकार चुपचाप छिप कर वापस अपने घर आ गया पर भाग्य सबसे प्रबल है वसन्तसेना मरी नहीं और उसने थोड़े दिनों बाद स्वस्थ हो कर अपने यौवन के शेष दिन, अपने प्रिय (चारुदत्त) ब्राह्मण के साथ दो समान वय वाले जवान जो जो कर्म करते हैं, वह करते हुए काटे।

दोहा

बेसबधू जिण बिरचियो, इण बिधि रो अनुराग।
सूद्रक नृप बरणी सुमति, ललित तिकां हित लाग॥६५॥

उस गणिका वसन्तसेना ने जो अपनी प्रीत इस प्रकार निभाई, उसे विद्वान राजा शूद्रक ने अपनी श्रेष्ठ बुद्धि के सहारे अपने प्रसिद्ध ग्रंथ में सिरजा। शूद्रक ने उस गणिका की इस सुन्दर लगन का सुन्दर वर्णन किया।

षट्पात्

गणिका गुण अनुराग चारुदत्तक चरित्र धरि,
मृच्छकटिक अभिधान कमन नाटक सूद्रक करि।
सुतहित तखत समप्पि जाग इक अस्वमेध जजि,
सत हायन दस दिवस भूप जग विरत आयु भजि।

पावक प्रवेस कीधो प्रथित जस उदार राखे उदित।
उण कीध तिको नाटक अजे मही प्रकटि कवि सूरि मत॥६६॥

चारुदत्त के गुणों के प्रति गणिका वसन्तसेना का अनुराग वाला चरित्र ले कर राजा शूद्रक ने बहुत ही सुन्दर नाटक 'मृच्छकटिक' लिखा। इसके बाद इस विद्वान राजा ने अपने पुत्र को राज्य भार सौंपा और एक अश्वमेध यज्ञ किया। तत्पश्चात उस राजा ने पूर्णरूप से विरक्त हो कर एक सौ वर्ष और दस दिनों की लंबी आयु भोग कर अपना शरीर छोड़ा और अग्नि में प्रवेश किया पर अपनी ख्याति यहीं छोड़ गया। राजा शूद्रक ने जिस उत्तम नाटक की रचना की वह आज भी पृथ्वी पर जीवित कवियों पंडितों की स्मृति में जीवित है।

दोहा

तिण सूद्रक नृप री सुता, धारै निधि अभिधान।
सो दूजी परणी सुपहु, रामचंद्र मतिमान॥६७॥
रामचन्द्र नरराज रै, बारह अंगज बीर।
प्रथम सात सीता प्रसव, निजकुळ चाढण नीर॥६८॥

इसी राजा शूद्रक की पुत्री निधि को सांभर के राजा रामचन्द्र ने अपनी दूसरी रानी बनाया। चहुवान राजा रामचन्द्र के बारह वीर पुत्र हुए। इनमें से सात तो पहली रानी सीता के गर्भ से जन्में जिन्होंने अपने वंश का नाम उजागर किया।

पादाकुलकम्

द्वादस रामचंद्र सुत दीठा, गुण तोलण जगहूँत गरीठा।
प्रकट बडो संग्रामसीह पहु, मतिधर सुकवि मिलिंद कंज महु॥६९॥

सांभर के राजा रामचन्द्र के बारह पुत्र हुए जो अपने गुणों के कारण जगत में भारी तोल वाले हुए अर्थात् वे सभी गुण गरीय थे। इनमें सब से बड़ा संग्राम सिंह था जो राजा बना। वह संग्राम सिंह बुद्धिमान श्रेष्ठ कवियों रूपी भ्रमरों के लिए कमलवत और मधुवत था।

इतिश्री बंशभास्करे महाचम्पूके पूर्वायणे चतुर्थ राशौ वीतिहोत्र-

चण्डासिवंशबर्णने लालसिंहा ऽऽदिनव माणिक्यराज पुत्र प्रसूतमाद्रेचा-ऽऽद्येकादश चहुवानभेदप्रकटनपट्टपतिमुहुःकर्म प्रातिहारीमहीपकुमारी परिणयनतत्पुत्ररामचन्द्रा खिच्चिराजो द्भवनतत्कनिष्ठकुलखिच्चिभेदप्राप-णरामचंद्र यादवीशीला वैन्दीनिध्यु पयमनगणिकाबसन्तसेनादुर्भिध-चारुदत्तगुणानुरञ्जनशकारतिरस्करणकोशलेशसूद्रकतद्गणिकानुरागनाटक-निर्माणकृतपुत्राऽभिषेकविन्दाधिराजपावकप्रविशनरामचन्द्रसन्ततिद्वादश संग्रामसिंहा दिसम्भवनं प्रथमो मयूखः॥१॥ आदितो दशोत्तर शततमः॥११०॥

श्रीवंश भास्कर महाचम्पू के पूर्वायण की चौथी राशि में अग्निवंशी चहुवाण वंशवर्णन में लालसिंह आदि माणिक्यराज के नौ पुत्रों का जन्म होना और माद्रेचा आदि चहुवानों में ग्यारह भेद प्रकट होना, पाटवी मुहुकर्मा का प्रतिहार वंश की महीपकुमारी से विवाह करना, उसके पुत्र रामचन्द्र और खिच्चीराज का पैदा होना, उस छोटे के कुल से खीची भेद प्राप्त होना, रामचन्द्र का यादव जाति की स्त्री शीला और बिन्दा जाति की स्त्री निधि से विवाह करना, वंसन्तसेना गणिका का दरिद्री चारुदत्त के गुणों में प्रीति करना, शकार का अनादर करना, कौशल देश के राजा शूद्रक का उस गणिका के प्रीति का नाटक बनाकर, पुत्र के अभिषेक करके उस बिन्द क्षत्रियों के राजा का अग्नि में प्रवेश करना, रामचन्द्र के संग्रामसिंह आदि बारह सन्तान होने का पहला मयूख समाप्त हुआ और आदि से एक सौ दस मयूख हुए।

प्रायो मरुदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

दोहा

पूगी दिव अवसाण पर, सीळा निधि नृप सत्थ।
भूंपभाव संग्राम भजि, प्रथित हुवो रण पत्थ॥१॥

अपने पति राजा रामचन्द्र के निधन पर शीला और निधि दोनों रानियाँ सती हो कर स्वर्गलोक को गईं और उनका पुत्र संग्रामसिंह राजा हो कर संग्राम में अर्जुन की तरह प्रसिद्ध हुआ।

पज्झटिका

संग्रामसीह सोदर सधीर, पटुतम एगारह जे प्रवीर।
बाळेस सबंगड़ गोळपाल, क्रम पुष्टपाळ आरातिकाल॥२॥

जिम मलयराज चाहोड़ जोध, बळभुज हरीण मल्हण सुबोध।
तिण सोदर मोत्कलवार तेम, सह चक्रडाण सूकट सुनेम॥३॥
प्रतिएक प्रसव एतां प्रसार, एकादस प्रकटे कुळ उदार।
बाळेसनाम पत्तन बणाय, तिण ठाम दुर्ग अति रण तणाय॥४॥
बाळेस राज कीधो दुबाह, रण घण जय लीधा धर्मराह।
बाळेसा प्रकटे जेण बंस, तेजाळ और राजां वतंस॥५॥

संग्राम सिंह के ग्यारह भाई जो धैर्यवान, चतुर और वीर थे वे क्रमशः इस प्रकार हुए बालेश, सबंगड़, गोळपाल, और पुष्टपाल जो अपने शत्रुओं के लिए काल स्वरूप थे। वैसे ही योद्धा मलयराज, चाहोड़, हरीण, मल्हण, मोत्कलवार, चक्रडाण और सुकट थे। इस उदार कुल में प्रकटे इन ग्यारहों भाइयों ने अपने वंश का प्रसार किया। बालेश ने अपने नाम पर एक नगर बसाया और उसमें एक सुन्दर सुदृढ़ दुर्ग बनवाया फिर उसने धर्म की राह पर चलते हुए राज किया। कई युद्ध किए और उनमें विजय पाई। उसके वंशज बालेसा कहलाए जो अपने तेजस के बल पर अन्य राजाओं के मुकुट रूप थे।

इणवंस बिरुद खाटण असेस, नीपजिया अतिबळ के नरेस।
सिवराज हुवो रण दान सूर, प्रख्यात कियो जस धर्म पूर॥६॥
हरराज हुवो अर्जुन सहाव, कलिजुग जिण कीरति थिर कहाव।
सिवदास हुवो नय सावधान, मारे जिण रैवतराज मान॥७॥
रणबुध इण बंसहि खेमराज, कीधा अनेक दळ बिजय काज।
चोटालदुर्ग जिण चाहुवाण, जगबिदित कियो सब गुण सुजाण॥८॥
जिणनूं अनूढ सुणि प्रहत जंग, अभ्रलदे कीधो भस्म अंग।
बाळेसा इणविधि बर विबेक, अतिप्राण हुवो भूपति अनेक॥९॥
सुत तीजो बंगड़ सुप्रसंस, बंगड़िया उपजे तेणबंस।
जिण कुळ नृप सत्रुल जीति जंग, पहुदीप किया बहु अरि पतंग॥१०॥

बालेसा वंश में अपना विरुद कमाने (खाटने) वाले कई महाबली राजा हुएं जिनमें से शिवराज नामक राजा तो युद्ध, दान और वीरता के कारण जग में प्रसिद्ध हुआ। दूसरा हरराज हुआ जो कलियुग में दूसरे अर्जुन की तरह

अपनी कीर्ति फैलाने वाला माना गया। नीति में निपुण एक शिवदास हुआ जिसने गुजरात के राजा का मान मर्दन किया। इसी वंश में युद्ध में पटु खेमराज हुआ जिसने अनेक युद्धों में विजय प्राप्त की। इसी सुजान चहुवान ने चोटाल दुर्ग को जगत प्रसिद्ध किया। जिसे बिना विवाह किए युद्ध में मरा हुआ सुन कर आभलदे ने अपना शरीर भस्म किया अर्थात् जल मरी। इस बालेसा वंश में ऐसे कई विवेकवान और बलवीर राजा हुए। राजा रामचन्द्र के तीसरे पुत्र बंगड़ के वंशज आगे चल कर बंगड़िया कहलाए। इस बंगड़िया कुल में जन्मे राजा शत्रुल ने कई युद्ध किए। इसी दीपक रूप राजा पर कई शत्रु पंतगे मरे। अर्थात् उसने अपने शत्रुओं का संहार किया।

पढियो सुत चोथो गोळपाल, अभिधा तदीय कुळ गोळवाल।
जिणमें नृप लक्खण बाहु जोर, उपजे अनेक नरनाह ओर॥११॥
जिम पुष्टपाल लहु तास भ्रात, जिण पुठ्ठवाल चहुवाण जात।
जगमाल हुवोतिणकुळ अजेय, संकर तिम भूधर नियतश्रेय॥१२॥
रण कोविद छठ्ठो मलयराज, मलयेचा जिण संतति समाज।
इणहीकुळ गिरिधर इंद्रसेण, दिपिया उदार खळ त्रास देण॥१३॥
सप्तम चाहोड़ज कुळ सुजाण, चाहोड़ कहावै चाँहुवाण।
मंगल मुकुंद जिण वंस मांहि, बसुधेस हुवा नय जय निबाहि॥१४॥
अष्टम हरीण जिण कुळ उदार, बाजै हरीण चहुवाण बार।
जिण सोदर मल्हण नवम जोध, सबकुळ तदीय माल्हण सुबोध॥१५॥
महराज भूप इण भेद मांहि, दीधा बहु सांसण कृपण दाहि।
भड़ दसमों मोत्कलवार भ्रात, जिण वंस मुक्कला ए प्रजात॥१६॥

राजा रामचन्द्र का चौथा पुत्र गोळपाल कहा गया उसके वंशज गोळवाल कहलाए। इस गोळवाल वंश में लक्खन (लक्ष्मण) जैसा बाहुबली राजा हुआ और उसके जैसे कई अन्य राजा जन्मे। चहुवान राजा रामचन्द्र का पाँचवाँ पुत्र पुष्टपाल था। इसी के नाम से चहुवानों में पुट्ठवाल नामक खांप प्रचलित हुई। इस पुट्ठवाल खांप में जगमाल जैसा राजा हुआ जो निश्चय ही शंकर की तरह अजेय रहा। गजा रामचन्द्र के युद्ध में चतुर छठा पुत्र मलयराज हुआ

जिसके वंशज मलयेचा कहलाए। इसी मलयेचा वंश में गिरधर और इन्द्रसेन जैसे उदार राजा हुए जो अपने शत्रुओं में भय पसारने वाले हुए। चहुवान राजा रामचन्द्र के सातवाँ पुत्र चाहोड़ हुआ उसके वंशज चाहोड़ चहुवान कहलाते हैं। इस वंश में मंगल और मुकुंद जैसे राजा उत्पन्न हुए जो नीति सम्पन्न शासक के रूप में विख्यात थे। आठवाँ पुत्र राजा रामचन्द्र के हरीण नामक था जिसके वंशज हरीण उपटंक वाले हुए। इस कुल में नवमाँ पुत्र मल्हण हुआ इसकी औलादें माल्हण चहुवान कहलाते हैं। इस वंश में भी कई वदान्य राजा हुए जिन्होंने कई सांसण दिये।

इण भेद मांहि भूपति अनंग, भिड़ि जंग किया चउ भूप भंग।
डोहण रण तदनुज चक्रडाण, पहु तेण चक्कठाणा प्रमाण॥१७॥
इण वंस हुवो नृप भोज अग्ग, अरि जूह जेण हणिया उदग्ग।
विभु सर्ब अनुज सूकट सुबोध, जिण बंस सूवटा प्रथित जोध॥१८॥
इण वंस प्रबळ नृपभीम एक, अरि भूप कैद कीधा अनेक।
इम रामचंद्र नृपहूँ उदार, कुळ चाहुवाण ग्यारह प्रकार॥१९॥
संग्रामसीह पट्टप नरेस, धरि छत्र हुवो संभर धरेस।
दोसत गज सांसण तीस दोय, तृण जेम दिया कुळ चाढि तोय॥२०॥

सांभर के चहुवान राजा रामचन्द्र का दसवाँ पुत्र मोत्कलवार जैसा वीर हुआ जिसके वंशज मुकल्ला उपटंक वाले हुए। इस वंश में कई बड़े वीर योद्धा उत्पन्न हुए! इसी वंश में हुए राजा अनंग ने अपने जीवन काल में चार राजाओं के साथ लोहा लिया। मोत्कलवार का छोटा भाई और राजा रामचन्द्र का ग्यारहवाँ पुत्र युद्ध में शत्रु सेना को मथने वाला चक्रडाण नामक था इसके सभी वंशज चक्कठाणा कहलाए। हे राजा रामसिंह! इसी वंश में पहले राजा भोज हुआ जिसने युद्ध में कई शत्रुओं के समूहों का विध्वंश किया। हे राजा! सांभर के राजा रामचन्द्र का सबसे छोटा पुत्र सूकट था जिसके वंशज सूवटा उपटंक वाले कहलाए। प्रसिद्ध योद्धाओं वाले इस वंश में राजा भीम हुआ जिसने अपने कई शत्रुओं को पकड़ कर कैद किया। इस प्रकार राजा रामचन्द्र से ग्यारह प्रकार के भेद चहुवानों में हुए। पाटवी पुत्र संग्राम सिंह अपने पिता का राजसिंहासन पा कर सांभर का राजा बना। जिसने दो सौ हाथी

और बत्तीस सांसण तृणवत जान कर दिये और अपने वंश को शोभायमान किया।

पब्बागढ़ भूपति लोकपाळ, जादवकुळ पर दळ सफर जाळ।
राधा जिण तनया गुण गहीर, विधिसाधि बरी चहुवाण बीर॥२१॥
राधा उदराकर रयणरूप, भवलीध सो सिवादत्त भूप।
दूजो जिण आव्हय सांबदत्त, मति धर्म नीति जय अप्रमत्त॥२२॥
बळ पाय अठी कुळ झाड़ि वैर, नृप रामदेव कनउज्ज नैर।
अटि कज्जअज्ज मण्डल असेस, दिगविजय कीध जिणतिण प्रदेस॥२३॥
विरचे प्रबंध तस जस विसाल, लुभवाय सुणायो भाट लाल।
तिण दुत्थभाव कमधज्ज तोड़ि, करि रजत दम्म बखसीस कोड़ि॥२४॥
मन तुष्ट बधायो अधिक मान, थिर दीधा सांसण दस सुथान।
काळी आराधक जिण कमंध, बैरी अनेक कीधा सबंध॥२५॥

पब्वागढ़ का यादववंशी राजा लोकपाल जो, अपने शत्रु सेना रूपी मछलियों के लिए जाल स्वरूप था, ने अपनी गुण गंभीर और सुन्दर कन्या राधा का विवाह पूरे विधि-विधान पूर्वक इस सांभर के राजा संग्रामसिंह के साथ किया। इसी रानी राधा की गर्भ रूपी खान से रत्न रूप राजा शिवादत्त ने जन्म लिया जिसका दूसरा नाम सांबदत्त भी था, जो बुद्धि नीति, धर्म में प्रवीण और विजयोंत्सुक था। इसी समय में वैर का झाड़ रूप, बल पा कर कन्नौज का राजा रामदेव सिरजोर हुआ। इस राठौड़ ने अपनी सेना के साथ भ्रमण कर सम्पूर्ण आर्यावर्त के कई प्रदेशों को जीत लिया। इसके यश कथन हेतु लाल नामक भाट ने एक विशाल ग्रंथ रचा और राजा रामदेव को अपना यश सुनने का लोभ दे कर जब सुनाया तो उस राजा राठौड़ ने उसका दारिद्र्य मिटा डाला और एक करोड़ रजत मुद्रा की बख्शीश दी। कालिका के आराधक उस राठौड़ राजा ने अपने कई शत्रुओं को पकड़ कर कैद किया और कन्नौज के इसी राजा रामदेव ने रजत मुद्राओं के अतिरिक्त रीझ कर लाल नामक भाट को दस गाँवों की जागीर भी इनायत की।

रण त्रिसत जीति राठोड़राज, दिस च्यारि आण फेरी दराज।
सुत बीस हुवा जिणरै प्रसिद्ध, अनुजात गुणां सतकेतु इद्ध॥२६॥

कन्नौज के उस प्रतापी राठौड़ राजा ने अपने जीवनकाल में तीन सौ से अधिक युद्ध जीते और चारों दिशाओं में अपने अधिकार की दुंदुभि बजवाई। इस राजा रामदेव के बीस पुत्र हुए। इनमें से सबसे छोटा सतकेतु नामक पुत्र अपने गुणों के कारण प्रसिद्ध हुआ।

दोहा

रामदेव राठोड़ सुत, हुवा बीस जय हेतु।
वय सब छोटो गुण बडो, कुल दीवक सतकेतु॥२७॥
सत्यकेतु पण के सुकवि, आखै तिण अभिधान।
बंस कबंधा बाधियो, मारे जिण खल मान॥२८॥

राठौड़ राजा रामदेव के बीस पुत्र हुए जो विजय का कारण कहलाए। इसका वय में सबसे छोटा पर गुणों में सबसे बड़ा पुत्र सतकेतु वास्तव में कुलदीपक था। कुछ कवि इसका अवर नाम सत्यकेतु भी कहते हैं। जिसने अपने शत्रुओं का संहार कर राठौड़ वंश का मान बढ़ाया।

अमर लोक पूगो अठी, सम्भर नृप संग्राम।
कीधो राधा सहक्रमण, नवं खंडां करि नाम॥२९॥
सिवादत्त धरि छत्र सिर, निडर हुवो नरनाह।
प्रथित जाय किलराजपुर, विधिसह कीध विवाह॥३०॥

इधर सांभर के चहुवान राजा संग्रामसिंह का स्वर्गवास हुआ। जिसकी मृत देह के साथ रानी राधा सती हुई और उसने जगत में अपना नाम विख्यात किया। अपने पिता के राज सिंहासन पर शिवादत्त आरूढ़ हो कर सांभर का राजा बना, जिसने प्रसिद्ध किलराजपुर जाकर विवाह किया।

षट्पात्

चंद्रसेण चालुक्क सुता आव्हय जिण श्यामा।
प्रिया निपुण सो परणि अधिप आणी अभिरामा।
भूपति भोगादित्य जनम लीधो इण जाठर।
धनपुर सैंगर धीर सुता परणी जिण सम्भर।
माधवी नाम पतिव्रत मगन सविया जिण पटु दोय सुत।
सिवदत्त वळे चित्रक सुमति नीति विदित संसार नुत॥३१॥

किलराजपुर के चालुक्य राजा चन्द्रसेन की पुत्री जिसका नाम श्यामा था, उस सुन्दर प्रिया को विवाह कर चहुवान राजा अपने घर लाया। इसी रानी श्यामा के गर्भ से राजा भोगादित्य का जन्म हुआ जिसने धनपुर के सेंगर राजा धीर की पुत्री से विवाह किया। इस माधवी नाम वाली, पतिव्रत धर्म में मगन रहने वाली, रानी ने दो चतुर पुत्रों को जन्म दिया। बड़ा शिवदत्त और छोटा चित्रका इनमें से बुद्धिमान चित्रक नीति का अनुसरण कर संसार में स्तुत्य हुआ।

दोहा

प्रकट हुवा चीता प्रचुर, चित्रक रा चहुवाण।
जिण कुळ में गजवळ जिसा, थिया अचळ आथाण ॥३२॥

इस प्रसिद्ध मतिमान चित्रक के वंशज चीता चहुवान के उपटंक वाले हुए। इसी चीता वंश में गजबल जैसा अचल योद्धा हुआ।

षट्पात्

दळण खळां सिवदत्त प्रबळ बधियो सम्भरपति।
मुलक लूटि मेवाड़ कियो फग्गुण तरु की मति।
समर जीति सीहोर पिसुण कीधा घण पद्धर।
अठी नगर उज्जैण हुवो नृप इंद्रसेण हर।
गंधर्वसेण सुत मन गहिर पलटण सक अजमीढ पर।
अभिधान हरी अग्रज अडर बिक्रम छोटो बीरबर ॥३३॥

अपने शत्रुओं का संहार करने वाला शिवदत्त सांभर का राजा बना। इसने अपंना सैन्य बल बढ़ा कर मेवाड़ देश को लूट कर उसे फाल्गुन माह के वृक्ष की मानिन्द निष्पन्न कर डाला। उसने सिहोर देश को युद्ध में जीत कर अपने शत्रुओं का बांकपन मिटा कर उन्हें सीधा कर दिया। इसी समय में उज्जैन नगर का राजा इन्द्रसेन का पौत्र भर्तृहरि बना और राजा गंधर्वसेन का दूसरा पुत्र युधिष्ठिर द्वारा चलाए हुए संवत् को पलटने वाला विक्रमादित्य हुआ। इन दोनों पुत्रों में बड़ा भर्तृहरि और निर्भय वीर विक्रमादित्य छोटा था।

दोहा

हितसह कीधो राज हरि, प्रजा धर्म मग पाळि।
रीझ खीज समुचित रची, भूप बिबिध नय भाळि ॥३४॥

करी अयुत दस कारिका, व्याकृति पर अति बोध।
आयुध वै साधै अजे, जे बाणीरण जोध॥३५॥
अनुजा निज मदनावती, सद्धि निगमबिधि सूर।
देस बंग हरिअंद नूं, परिणाई हित पूर॥३६॥
जिणरै सुत ठावो जगत, गोपीचंद सु गोड़।
नृपता लच्छी जिण निखिल, माणी नृपता मोड़॥३७॥
पौराणिक प्रतिमल्ल नूं, मुद्रा कोटि महीप।
व्है प्रसन्न दीधी हरी, प्रामारां कुळदीप॥३८॥

प्रजा का हित चाहने वाले राजा भर्तृहरि ने धर्म के मार्ग का अनुसरण करते हुए अपना राज्य किया। उसने रीझ और खीझ दोनों का सामंजस्य रख कर अपनी नजर सदा नीति पर रखी। इस राजा भर्तृहरि ने व्याकरण पर दस हजार कारिकाओं का निर्माण किया जो आज भी वाणी का युद्ध करने वाले योद्धाओं (शास्त्रार्थ करने वाले पंडित) के लिए भरोसेमंद आयुध की गरज साधती है अर्थात् वे आज भी उतनी ही अर्थवान हैं। इस राजा ने अपनी बहन मदनावती को वेदोक्त रीति से पूरे विधि-विधान पूर्वक बंगाल देश के राजा हरिचन्द गौड़ से ब्याहा। इस बहन की कोख से जगप्रसिद्ध पुत्र गोपीचन्द गौड़ जन्मा जिस राजाओं के मुकुट ने सम्पूर्ण राज्य लक्ष्मी को अकेले ही भोगा। भर्तृहरि ने पौराणिक (चारण) प्रतिमल्ल को करोड़-पसाव दिया और इस प्रकार परमारों के इस कुलदीपक ने अपनी कीर्ति रूपी प्रकाश को फैलाया।

सचरणगद्यम्

अवंती रा अधीस प्रामारराज भर्तृहरि रै राणी पिंगळा जिकण रो दूजो नाम अनंगसेना कहीजै सो अद्वितीय प्रीति रो आस्पद बणी अर जिण आगै तो बिना प्राण न रहसी असी दुर्लभ बातां अनेक बार माळव रै महीप भणी।

जिण राजा रै अनेक मंत्री बाणी रा जुद्ध मैं महाप्रतिभट जिका राजा री कीधी कारिका अनेक अपूर्ब व्याख्यान करि बसुधा मैं बिदित करी।

अर नीति श्रृंगार बैराग्य री त्रिसती नूं आदिलेर औरभी अनेक ग्रंथ

निर्माण कीधा भर्तृहरी ॥३९॥

अवंती (उज्जैन) नगर के अधिपति परमार राज भर्तृहरि की रानी पिंगला थी जिसका अवर नाम अनंगसेना भी कहा जाता है जो अद्वितीय प्रीति का स्थान बनी। राजा की उसमें प्रगाढ़ प्रीति थी। कई बार मालवा देश के स्वामी भर्तृहरि ने ऐसी-ऐसी दुर्लभ बातें भी उससे कही कि वह उनका प्राण आधार है। रानी तुम्हारे बिना मैं जीवित नहीं रहूँगा। इस राजा के अनेक अमात्य और मंत्री वाणी के युद्ध में महावीर योद्धा थे अर्थात् भाषा के अद्वितीय विद्वान थे जिन्होंने राजा की बनाई हुई व्याकरण की कारिकाओं की टीका कर पूरी पृथ्वी पर उन्हें प्रतिष्ठित किया। यही नहीं इस राजा ने नीति, शृंगार और वैराग्य नामक तीन शतकों से आरंभ कर अनेक ग्रंथों की सृजना की।

एक दिन राजा रै अर्थ कोई तपस्वीन महारसायण रो निदान एक अपूर्व स्वादु फल दीधो।

सो राजा नैं आपरा प्राण री औषध अनंगसेना जाणि अवरोध जाय राणी रै अर्थ निवेदन कीधो।

राणी तो कळिजुग रो रूप एहा अभिरूप अवनीस रो तिरस्कार करि सुद्धांत रै आश्रित अनेक जन रहै जिकां मैं कोई दो ही लोक रो खोवणहार ठालियो।

जिणरी संगति रै प्रभाव स्वर्गलोक रो मार्ग मुद्रित कराय कुम्भीपाक रो निवास भाळियो ॥४०॥

एक दिन राजा के लिए कोई तपस्वी उपहारस्वरूप महारसायन का कारण (अमृत फल) एक अपूर्व स्वादवाला फल ले कर आया। राजा ने उसे स्वीकार कर उस फल को अपने प्राणों की औषध रूप रानी अनंगसेना को भीतर रनिवास में जा कर भेंट किया। (मन में यह सोच कर कि उसकी प्रिया अमर हो जाए) रानी ने कलियुग में सतयुग रूप जैसे मनोहर पंडित राजा का तिरस्कार कर रनिवास में रहने वाले आश्रित दासों में से दोनों ही लोकों को (इहलोक और परलोक) खोने वाले को चुना। जिसकी संगति के प्रभाव में रानी ने अपने लिए स्वर्गलोक के मार्ग को अवरुद्ध कर कुंभीपाक नरक का निवास चुना।

सो आपरा स्वामी रो दीधो अपूर्व चमत्कारिक फळ राणी अनंगसेना नैं जार रै भेट कीधो।

जिण जार रो पण चित्त अनंगसेना री अपेक्षा करि एक बारबिलासिनी मैं विसेस करि आसक्त रहै तिणनूं इण जाय दीधो।

जिण बारांगना सोही फल राजा रै उचित जाणि राजद्वार आय पाछो निवेदन कियो।

सो देखतां ही प्रति हायन बाणवैं लाख निष्क मुद्रा रो मुलक माळव तृण रै समान छोड़ि प्रामारवंस रै प्रभाकर जोग लियो ॥४१॥

आपरा अनुज विक्रम रै उज्जइणी रा आधिपत्य रो अभिसेक करि राजा भर्तृहरि दुर्गम पर्वतां मैं निवास धारियो।

अर दैस बिदेस में बिहार करि केही छात्र पढाय मीमांसा न्याय काणाद कापिल पांतजल वेदांत यां छ हूँ सास्त्रां रै समान सातमों व्याकरण करि बिस्तारियो।

एक समय जोगेस्वर भर्तृहरि बिंद बंस रा अवतंस राजा श्रीधर री पुरी वलभी मैं जाय बिहार कीधो।

जठै कोई बिप्र रा बाळक नूं पाणिनीय[1] पढावण रो नियम लीधो ॥४२॥

रानी अनंगसेना ने अपने पति द्वारा प्रदत उस अद्‌भुत चमत्कारी फल को ले जा कर आगे अपने यार (उपपति) को भेंट दे दिया। उस यार का चित्त भी रानी अनंगसेना की अपेक्षा एक गणिका में अधिक रमा हुआ था सो उसने वह फल आगे अपनी प्रिय गणिका को जा दिया। पर गणिका ने (स्वयं की देह को अमर बनाने की बजाय पुण्यात्मा राजा की सोच कर) उस फल को मात्र अपने राजा के उपयुक्त समझ कर राजदरबार में आ कर राजा को नजर किया। उस फल को देखते ही प्रतिवर्ष बानवे लाख स्वर्ण मुद्राओं की आय वाले मालवा के मुल्क को तृण तुल्य छोड़ कर परमार वंश के उस सूर्य (राजा भर्तृहरि) ने संन्यास ले लिया। अपने छोटे भाई विक्रमादित्य का

१. व्याकरण आठ प्रसिद्ध हैं। यथा "इन्द्रश्चन्द्रः काशिकृत्स्नापिशली शाकटायनः। पाणिन्यमरजैनेन्द्रा जयन्त्यष्टौच शाब्दिकाः॥"

उज्जैन के राजसिंहासन पर अभिषेक कर राजा भर्तृहरि ने दुर्गम पर्वतों में निवास करना चुना। और देश विदेश में भ्रमण कर कई छात्रों को पढ़ा कर व्याकरण को मीमांसा, न्याय, वैशेषिक, सांख्य, योग और वेदान्त जैसे शास्त्र की छह शाखाओं के समान सातवीं शाखा बना कर उसका प्रसार किया। एक बार योगीराज भर्तृहरि ने बिंद वंश के क्षत्रियों के मुकुट राजा श्रीधर की वल्लभी नामक नगरी में जा कर विहार किया और वहाँ एक ब्राह्मण के लड़के को पाणिनि मुनि द्वारा रचित व्याकरण पढ़ाने का नियम लिया।

तिण ठाम संथादान रै समय गुरु छात्र रै अंतर एक गजराज अचाणक आय कढियो।

जिण कारण महाजोगी उपाध्याय माळव रै महीप व्याकरण रा अध्यापन में एक अब्दरो अनध्याय[1] मानि पाणिनीय रो प्रतिनिधि भट्टिनामक काव्य बणाय पढायो जिकण नूं पढियां पंडिता रै पाणिनीय ही रहै पढियो।

इण रीति केही देसां मैं बिहार करि अवंती रै अधिराज अद्वितीय जोगसाधन कीधो।

अर जम नियम आसण प्राणायाम प्रत्याहार धारणा ध्यान सातूं ही अंगां रो जय करि अष्टम अंग[2] समाहित भाव मैं निश्चल होय आपही निरुपाधिक ध्येय रो रूप धारि लीधो।।४३।।

उस जगह विद्याभ्यास के समय गुरु और शिष्य के बीच अचानक एक हाथी आ गया। इस कारण से महायोगी पढ़ाने वाले (गुरु) मालवा के राजा ने व्याकरण के अध्यापन में एक वर्ष व्यवधान (अनध्याय) मान कर पाणिनि के व्याकरण पर प्रतिनिधि भट्टि नामक काव्य रच कर पढ़ाया। जिसको पढ़ने से पंडितों को जैसे पाणिनि के व्याकरण का पूरा ज्ञान हो जाता था। इसी प्रकार कई देशों में भ्रमण कर अवंती के राजा ने अद्वितीय योग साधन किया और यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान

१. मन्वादि शास्त्रों में दो प्रकार के अनध्याय (पढ़ना बंध रखने का नाम अनध्याय है) माने हैं अर्थात् एक तो नित्य अनध्याय और दूसरा नैमित्तिक अनध्याय है सो प्रतिपदा आदि नित्य अनध्याय और गुरु शिष्य के बीच में हाथी का निकलना, भूकम्प, बिना समय वृष्टि होना, अग्नि उत्पात, बिजली पड़ना, दिग्दाह होना आदि नैमित्तिक अनध्याय है। ४३

२. योग के अष्टांग के विस्तृत विवरण के लिए पाठक इसी ग्रंथ की तीसरी राशि में दिया विवरण देखें। सं.

आदि सातों ही योग के अंगों को साध कर (पर विजय प्राप्त कर) आठवाँ अंग समाधि भाव में निश्चल रह कर आप स्वयं ही उपाधिरहित ब्रह्म स्वरूप हो गया।

आपरा अग्रज री चर्या इण रीति सुणि बंगराज गौड़ हरिश्चंद्र री राणी पण पति रा महाप्रस्थान रै अनंतर निज पुत्र गोपीचंद रै योही बीतराग जोग रो उपदेस लगायो।

अर बंग जिसा देस रो अधिराजभाव छुडाय अखंड मोद स्वरूप जाणण रो जत्न दिखाय सूतो सो जगायो।

कोई कहै दोही मांमां भाणेजां नूं जोग रो उपदेस सिद्ध राज गोरक्ष आय सुणायो।

इण बात रो तो संभव नहीं परंतु गोरक्ष रा कान फाटा कहै तिणरो प्रमाण तो कठैही न पायो॥४४॥

इस तरह अपने बड़े भाई के चरित्र को सुन कर बंगाल के राजा हरिश्चन्द्र गौड़ की रानी ने अपने पति के स्वर्गवास के बाद अपने प्रिय पुत्र गोपी चन्द को इसी वीतराग योग का उपदेश दिया। और बंगाल जैसे देश का राज पद छुड़वा कर अखंड आनन्द स्वरूप को जानने का यत्न बता कर उसे (अपने पुत्र) जैसे सोते हुए को जगाया। कोई यह भी कहता है कि मामा (भर्तृहरि) और भानजे (गोपीचन्द) को योग विद्या का उपदेश स्वयं सिद्धराज गोरखनाथ ने आकर दिया। यह बात तो सत्य और संभव नहीं प्रतीत होती क्योंकि गोरखनाथ के कनफटे शिष्यों की ही इस बात का प्रमाण कहीं नहीं मिलता।

ग्रंथ पुरुषपरिक्षा रै निर्माता विद्यापति मिश्र राजा गंधर्बसेण रै तीन पुत्र लिखिया।

तिकां मैं बड़ो हरी बीचलो सक तिणसूं छोटो बिक्रम इणरीति सूचक किया।

यां तीन भायां मैं बड़ै हरी तो एक ही बर्ष राज करि छोटा सोदर सक नूं अवंती रो राज आपियो।

अर सक रै अनंतर राजा विक्रम अवंती रो अधिराज होय च्यारि ही

चरणां सहित बेदधर्म निश्चल थापियो।।४५।।

'पुरुष परीक्षा' नामक ग्रंथ के प्रणेता विद्यापति मिश्र ने अपने ग्रंथ में राजा गंधर्वसेन के तीन पुत्र होना लिखा है। जिनमें सबसे बड़ा हरि (भर्तृहरि) उससे छोटा सक और तीसरा विक्रम (विक्रमादित्य) था ऐसा बताया। और यह भी लिखा कि इन तीनों भाइयों में सबसे बड़े (भर्तृहरि) हरि ने तो मात्र एक वर्ष तक राज्य करने के बाद अपने से छोटे भाई सक को अवंती का राज्य सौंपा। और सक के बाद विक्रम (विक्रमादित्य) अवंती का राजा हुआ उसने वैदिक धर्म को चारों चरणों सहित निश्चल रूप में स्थापित किया।

इसड़ी पुरुषपरीक्षा मैं लिखी जिको तो इण रीति होई तो भी असंभव न जाणीजै।

परंतु कविलोकां रा मत में तो घणां ग्रंथां रो एक आसय मिलै तिको ही सिद्धांत प्रमाणीजै।

इणरीति अग्रज हरी रै अनंतर प्रामारराज विक्रम अवंती रा आधिपत्य रो अभिसेक पायो।

अर आगैं देवराज रो रचियो आठ हात उछ्रित आठ आठ लंबायत बत्तीस पूतली सहित चंद्रकांतिमणिमय एक सिंघासण कोई प्रासाद री पीठभू खोद्तां कढियो तिंको ही आपरै भद्रासण बणायो।।४६।।

ऐसी बातें 'पुरुष परीक्षा' नामक ग्रंथ में लिखी है ये बातें तो सत्य हो सकती है। इसमें कुछ भी असंभव नहीं लगता परन्तु कवियों के मतानुसार तो बहुत सारे ग्रंथों में यदि एक ही आशय की बात लिखी हुई मिले तो वे इसे सिद्धान्त रूप में स्वीकार कर लेते हैं। इस प्रकार बड़े भाई भर्तृहरि के बाद परमार राज विक्रमादित्य का अवंती के राजसिंहासन पर अभिषेक हुआ। इसके बाद देवराज का बनाया हुआ आठ हाथ ऊँचा (दो फुट के बराबर एक हाथ का नाप होता है) और आठ हाथ लंबा बत्तीस पुतलियों वाला, चन्द्रकांति मणि से युक्त एक सिंहासन किसी महल की नींव खोदते समय निकला था उसे ही विक्रमादित्य ने अपना भद्रासन (राज्य सिंहासन) बनाया।

कोई कोई ग्रंथ मैं इसो पण लेख जाणियो सो बिक्रमादित्य ने कोई सिद्ध री संगति सह महामंत्र रो साधन करि अग्नि कोकिल नाम

दोय बीर बसीभूत किया।

जिका रै बळ राजा रो अगम्यठाम बी गमन हुवौ र संसार रा समस्त सुख दुक्ख जाणिया।

जुधिष्टिर रा तजिया रथ नूं थकियो जाणि जिकण रा धुर रै समस्त राजां रै आगैं कढि आपरो अंस लगायो।

अर परदुक्ख कातर इम महाराज रै प्रभाव कुमारिका क्षेत्र[1] मैं कोई मानव रै कष्ट रहण न पायो ॥४७॥

किसी-किसी ग्रंथ में ऐसा लिखा हुआ भी पाया जाता है कि विक्रमादित्य ने किसी सिद्ध पुरुष की सहायता से महामंत्र को साध कर अग्नि और कोकिल नामक दो वीरों को अपने वश में कर लिया था जिनके सहारे राजा जहाँ कोई नहीं जा सकता ऐसे अगम्य स्थान पर भी जा सकता था। इसी सिद्धि के आसरे उसने जगत के सारे दुःख-सुखों को जान लिया था। युधिष्ठिर के छोड़े हुए रथ को थका हुआ जान कर उसके अपना कंधा लगा कर विक्रमादित्य ने उस रथ को सारे राजाओं के सामने से निकाला। दुःख कातर इस महाराजा के प्रभाव से भरतखंड में किसी मनुष्य के कोई दुःख नहीं रहा।

दोहा

कठा अवधि जिण जस कहूँ, रामसिंह नरराज।
बिक्रम रा गुण बहु बळे, कीजे श्रवण सुकाज ॥४८॥

हे राजा रामसिंह! मैं कहाँ तक ऐसे राजा के गुणों का बखान करूँ? आप महाराजा विक्रमादित्य के सद्कार्यों को सुनिये, मैं उन्हें और बताता हूँ।

इतिश्री वंशभास्करे महाचम्पूके पूर्बायणे चतुर्थ राशौ बीतिहोत्रचण्डासिबंशवर्णने रामचन्द्र सार्थज्ञानीशीला निधि सहगमनसंग्राम-सिंहशाकम्भरराज्याभिषेचन दनुजैकादश प्रसूतचाहुवाणकुलबालेशाद्ये-कादश भेदप्रापणप्राप्तराज्यबितीर्णबहुशासनसंग्रामसिंह यादवीराधा परिणयनतत्पुत्रशिवादत्तोद्भवनविजितदिक्कान्यकुब्जनरेश श्रुतस्वकीर्ति-

---

[1] भरतखंड में जहाँ पर वर्ण व्यवस्था है उसको कुमारिका क्षेत्र कहते हैं यथा वर्णव्यवस्थितिरिहैव कुमारिकाख्ये शेषेशु चान्त्यजजना निवसन्ति सर्वे। संपादक

कार्मध्वजरामदेवबन्दी जनलालकोटि मुद्रासम्प्रदानीकरणशतकेतुमुख्य-तत्पुत्रबिंशति प्रादुर्भवन-संग्रामसिंह सार्थराधा ज्वलनस्नानशिवादत्त श्यामा भोगादित्य माधवी बिबहनतत्पुत्रशिवदत्त चित्रक युग्म समुद्भवनचित्रकबंशचीताऽभिधेयी-भवनशिवदत्त मेदपाटबिध्वंसनसिंह-पुरयुद्धबिजयनसमनुष्टितराज्यप्रपञ्चिताऽनेकप्रबन्धसन्मानितपौराणिक-प्रतिमल्लमालवेन्द्रप्रामारराजभर्तृहरियोगाऽनुष्टानप्राप्तराज्यबिक्रमादित्य-यशोविस्तरणं द्वितीयो मयूखः ॥२॥ आदित एकादशोत्तरशततमः ॥१११॥

श्रीवंशभास्कर महाचम्पू के पूर्वायण की चतुर्थ राशि में अग्निवंशी चहुवान वंशवर्णन में रामचन्द्र के साथ ज्ञानी शीला और निधि का सती होना, संग्रामसिंह के सांभर राज्य का अभिषेक होना, उसके छोटे ग्यारह भाइयों से उपजे हुए चहुवान कुल में बालेसा आदि ग्यारह भेद प्राप्त होना, राज्य पाकर बहुत उदक ग्राम देकर संग्रामसिंह का यदुवंशी राधा से विवाह करना, उसके शिवादत्त पुत्र का होना, दिग्विजय करके कन्नौज के राजा का अपनी कीर्ति सुनकर राठौड़ रामदेव का लाल नामक भाट को करोड़ रुपये देना, उसके शतकेतु आदि बीस पुत्रों का होना, संग्रामसिंह के साथ राधा का जलना, शिवादत्त-श्यामा भोगादित्य-माधवी का विवाह होना, उसके पुत्र शिवदत्त और चित्रक दोनों का जन्म होना, चित्रक के वंश के चीता नामवाले प्रसिद्ध होना, शिवदत्त का मेवाड़ देश को लूटना, सिंहपुर के युद्ध में विजय पाना, श्रेष्ट प्रकार से राजा बनकर अनेक ग्रन्थ रचना, और प्रतिमल्ल नामक चारण का सम्मान करके पंवार राजा भर्तृहरि का योग लेना, राज्य पाकर विक्रमादित्य का यश फैलाने का दूसरा मयूख समाप्त हुआ। और आदि से एक सौ ग्यारह मयूख हुए।

प्रायो मरुदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

सचरणगद्यम्

जिण राजा बिक्रमरै द्विजराज धन्वन्तरि अमर संकू बेताळ घटखर्पर बराहमिहिर काळीदास बररुचि तथा क्षपणक सिद्धसेण दिवाकर ए नव ही कवि पण्डित नवरत्न कहाया।

जिकां आधुनिक पंडिता रें अवलंबरूप समस्त विद्यासमुद्र अनेक ग्रंथ बणाया।

जिकां में आयुर्वेद रै आचार्य धन्वन्तरी तो निघंटु आदिक बैद्यक रा ग्रंथ निर्माण कीधा।

अर पंडितराज अमरसिंह काव्य घटपर्व कोस नामलिंगानुशासन इत्यादिक प्रबंध बणाय बिदित करि दीधा॥१॥

जिण लिंगानुशासन रो इसा समय रा लोक अमरकोस इसो अभिधान कहै।

जिण अध्यवसाय कीधां सब्दरूप संसार रा पदार्थ प्रछन्न न रहै। संकू रा बणाया रससिंधु रसरत्न आदिक साहित्य रा प्रबंध सूरिजनां रा श्रवणा नूं पवित्र करै।

अर बेताळ रा कीधा बाणीबिलास नीतिसार प्रमुख ग्रंथ अद्यावधि चतुरां रा चित्त हरै॥२॥

जिस राजा विक्रमादित्य के द्विजराज धन्वन्तरि, अमर, संकू, बैताल, घटखर्पर, वराहमिहिर, कालीदास, वररुचि और क्षपणक (जैन संत) सिद्धसेण दिवाकर जैसे नौ कवि पंडित नवरत्न कहलाए। आधुनिक पंडितों के लिए अवलंब रूप विद्या समुद्र उन पंडितों ने कई श्रेष्ठ ग्रंथों की रचना की। जिनमें से मुख्य आयुर्वेद के आचार्य धन्वन्तरि ने तो *निघंटु* आदि वैद्यकी के ग्रंथ रचे। पंडितराज अमरसिंह ने काव्य, *घटपर्व कोश* नामक *लिंगानुशासन* आदि ग्रंथ बना कर प्रसिद्ध किये। इसी लिंगानुशासन को इस समय के लोग *अमरकोश* के नाम से जानते हैं। जिसका पूर्ण ज्ञान होने से शब्द रूप संसार के सारे पदार्थ छिपे हुए नहीं रहते। संकू के बनाये *रससिंधु, रसरत्न* आदि ग्रंथ पंडितों के कानों को आज भी पवित्र करने का माद्दा रखते हैं। इसी तरह बेताल द्वारा प्रणीत *वाणी विलास, नीतिसार* आदि ग्रंथ आज भी बुद्धिमानों के चित्त का हरण करने में समर्थ हैं।

घटखर्पर रा रचिया घटखर्परनाटक रसरत्नाकर बिक्रमदिग्विजय आदि बाणी रा बैभवरूप जगत मैं जाणिया।

अर बाराहीसंहिता वृहज्जातक योगमात्रा धीवृद्धिकरण जातक कल्पलता इत्यादिक आगम मिहिरोपटंकि गणकराज भट्ट बराह रा बाणिया।

ज्योतिर्विदाभरण बिक्रमोर्वसीनाटक इंद्रसेणचम्पू गंधर्बसेणबिजय इत्यादिक तंत्र काळीदास री बाणी रा विलासमें आया अरु चातुरीचंचरीक भावभास्कर वीरवर्द्धन प्रमुख बररूचि रा बणाया॥३॥

घटखर्पर द्वारा रचित *घटखर्परनाटक, रस रत्नाकर, विक्रम दिग्विजय* आदि ग्रंथ वाणी के वैभव रूप में जगतप्रसिद्ध हैं और *वाराही संहिता, वृहज्जातक, योगमात्र, धीवृद्धिकरण, जातक कल्पलता* इत्यादि शास्त्र मिहिर के उपटंक वाले ज्योतिषराज भट्ट वराह के बनाए हुए हैं। *ज्योतिर्विदाभरण, विक्रमोर्वसी नाटक, इन्दसेण चम्पू, गंधर्वसेण विजय* आदि ग्रंथ कालीदास के वाणी विलास से ओतप्रोत हैं वहीं *चातुरी चंचरीक, भाव भास्कर, वीर वर्द्धन* आदि ग्रंथ वररुचि द्वारा लिखित हैं।

नास्तिकां रा आचार्य दिवाकर सिद्धसेण क्षपणक रा कीधा पण बादकल्पा ऽऽदिक अनेक ग्रंथ सुणीजै।

जिकां मैं जैन तथागत मत विसेस रा तो विना परिचय किण रीति मुणीजै र पुणीजै।

इण तरह ओर भी अनेक विद्या रा अर्णव हजारां कबि पंडित अलौकिक चमत्कार चित्रित बाणी रा विलास करि प्रबीण पुरुषां रा चित्त गहै जिण समय रा कोबिदलोक अबंती अधीस रा दीधा अन्न रा आश्रय बिनां कुमारिका मंडळ मैं कवण रहै।

जिण नरेस आया अर्थी नूं एक, देखिया नूं दस, संलापी नूं सत, सभ्य नूं सहस्र, अभिरूप नूं अयुत, लक्षबेधी नूं लक्ष, प्रातिभ नूं प्रयुत, अजेयकोटि कल्पक नूं कोटि मुद्रा देण रो नियम लीधो।

अर आयो ही पात्र, मांगणों ही गुण, दीठो ही देय, इसड़ो पण उदारपणों प्रकट कीधो॥४॥

जैनों के आचार्य दिवाकर सिद्धसेन क्षपणक के बनाए ग्रंथ तो हैं पर उन ग्रंथों में मुख्यत: जैन और तथागत (बोद्ध) मत का वर्णन है इसलिए उनके बारे में पढ़े बिना कैसे कहा जाए और क्या कहा जाए। इस प्रकार अनेक विद्या के समुद्र, हजारों कवियों और पंडितों ने अलौकिक चमत्कार पूर्ण अपना वाणी विलास कर, प्रवीण पुरुषों के चित्त को आकर्षित करें एसे

ग्रंथ बनाए। अवंती के राजा द्वारा प्रदत आजीविका और आश्रय से बाहर तत्कालीन कोविद पंडितों में से पूरे भरतखंड में कोई नहीं रहा अर्थात् पूरे देश के तमाम बुद्धिजीवी, विद्वानों और लेखकों ने राजा विक्रमादित्य का सदाश्रय पाया।

राजा (विक्रमादित्य) ने उसके पास याचना करने जो कोई आया उसे एक रुपया दिया। जिस याचक को राजा ने देख लिया उसे दस रुपए दिए। और नियमपूर्वक (संलापी) अच्छे बोलने वाले को सौ रुपए, धर्म अर्थ सहित वचन उचार कर सभा को वश में करने वाले सभ्य को हजार रुपए पंडित, (विद्वान) को दस हजार रुपये, सामने वाले के मन के भावों को जान लेने वाले अथवा लक्षणा वृत्ति आदि साहित्य को जानने वाले लक्षबेधी को लाख रुपये, शास्त्रार्थ में सामना करने वाले अथवा प्रतिभावान प्रातिभ को दस लाख रुपए, नहीं जीतने में आए ऐसी कोटि (शास्त्रार्थ के लिए तय विषय को कोटि कहते हैं) की कल्पना करने वाले को एक करोड़ रुपए दिये और राजा ने इस नियम को पूरी दृढ़ता से निभाया।

इस राजा ने जो याचना करने आ गया उसे ही दान का पात्र समझा। जिसने याचना की वस इसे ही याचक का गुण जाना और जो पदार्थ (वस्तु) दृष्टि में आ गई उसे ही देने योग्य जाना। पूरी उम्र पर्यन्त राजा विक्रमादित्य ने ऐसा उदारपन प्रकट किया अर्थात् ऐसी उदारता दिखाई।

दोहा

विक्रम रै मारग बहै, और कवण अवनीस।
जगवाळो लीधो जिकण, सारो दुख निजसीस॥५॥

राजा विक्रमादित्य की राह पर चले भला ऐसी अन्य किसी राजा में ताब कहाँ? उसने तो मानों अखिल जगत का दु:ख ही अपने सिर पर ले लिया था।

सचरणगद्यम्

उण समय आर्यमंडल में और भी जिके जिके परदुक्खरै निमित्त अंग रो परिश्रम तथा धन रो खरच करि बिक्रम रा आसय रै अनुसार रहिया।

तिणसों दस गुणों सरीरसुख दस गुणों द्रविण दे दे रवै भी सब

अवंती रै अधीस अनुकंपा में गहिया।

संसार रा सुख दुक्ख रा निश्चय करण रा लाखां दूत परदेसां में प्रच्छन्न रहै।

अर जिसड़ी जाणों जिसड़ी अवसर अनवसर भी जिण ठाम राजा होय तिणही ठाम आय कहै॥६॥

उस समय आर्यमंडल (भरतखंड) में और भी जो-जो राजा विक्रमादित्य के आशय का अनुसरण करने वाले हुए और उन्होंने पर दुःखकातरता में शारीरिक श्रम किया अथवा धन खर्च किया। उन्हें दस गुणा कायसुख और खर्च से दस गुणा धन दे कर अवंती के नृप विक्रमादित्य ने अपनी अनुकंपा का पात्र बनाया। अपने राज्य में कौन सांसारिक सुख-दुःख भोग रहे हैं अथवा किसे दुःख है इसकी पड़ताल करवाने के लिए राजा ने अपने लाखों दूत (भेदी) लगाए और उन्हें आदेश दिया कि जैसा जितना भी जानने को मिले इस दिशा में, उसे तुम समय, असमय मुझे बताने के लिए स्वतंत्र हो, बल्कि उस समय मैं जहाँ होऊँ वहाँ आ कर मुझे बताओगे।

एकण समय दूत कही चित्रकूट पर्वत में एक विप्र नूं देवी रो आराधन करतां घणां दिन काढ़िया परन्तु मन रो संकल्प सिद्ध न हुवो इण कारण जिण अब देहदाह रो विचार आणियो।

सोही मुणि चित्रकूट जाय उण बिप्र रो महाकठिण तप दीठो परंतु चित्त री भावनां में दोस जाणियो।

जरै अंबा रा आलय मैं जाय परकष्ट निवारण रै कारण आपरो। उत्तमअंग चाढण नूं बाढण ढूको।

जठै बरंब्रूहि इसो देवी रो निदेस सुणि प्रामार पुणियो इण बिप्ररो संकल्प सिद्ध न कीधो जिको यो रंक आराधण रा किसा अंग में चूको॥७॥

इसी प्रक्रिया के अन्तर्गत एक बार एक दूत ने खबर दी कि हे राजा! चित्रकूट पर्वत पर एक ब्राह्मण कई दिनों से देवी आराधना में संलग्न है। लंबी और कठिन साधना करने के पश्चात भी जब उसके मन का संकल्प सिद्ध न हुआ तो वह अब इसी कारण से आत्मदाह करने को उतावला है। उसने मन में पूरा विचार कर लिया है कि वह जल मरेगा। दूत से यह सुनते ही राजा विक्रमादित्य ने चित्रकूट जा कर उस विप्र का अति कटिन तप देखा पर वे यह भी भाँप गए कि इसकी मनोभावना में कोई खोट है। इसके बाद

जब राजा स्वयं अंबा देवी के मंदिर में जा कर पराये कष्ट के निवारण हेतु अपना मस्तक काटने लगे कि तभी 'वर माँग' ऐसी देवी की आवाज सुनाई दी इस पर नृप विक्रमादित्य ने पूछा कि हे माँ! आपने इस तप-साधनारत ब्राह्मण का संकल्प पूरा नहीं किया? ऐसा क्यों? यह ब्राह्मण अपनी आराधना में कहाँ चूका?

जगदंबा कहियो चाहै जिसो कष्ट करो भावनां सुद्ध न होय जरै ऊ कष्ट मातंग रा न्हाण जिम वृथा फल बतावै।

इसड़ों आसय जाणि अवंतींरै अधीस अरज कीधी मोनूं बर बखसो जिको योही आपरे भक्त पावै।

इणरीति देवी रा वरदान जिसड़ी दुर्लभ चीज ब्राह्मण नूं दिवाय हरि रो अनुज उज्जैणि आयो।

अर सारदससी री चन्द्रिका नूं आप री छाया रो करणहार चो तरफ चारु जस चलायो॥८॥

जगदंबा बोली कि चाहे जितना कष्टकारी तप साधो पर यदि साधक की भावना शुद्ध न हो तो ऐसी साधना मात्र हाथी के स्नान की तरह व्यर्थ फल वाली होती है। माँ का आशय जानकर अवंती के राजा ने निवेदन किया कि आप मुझे जो भी वरदान दें वही आपके इस ब्राह्मण भक्त को मिले। इस प्रकार देवी के वरदान जैसी दुर्लभ चीज ब्राह्मण को दिलवा कर भर्तृहरि का छोटा भाई वापस उज्जैन आया। शरद ऋतु के चन्द्रमा की चांदनी को अपनी छाया[१] के समान करने वाले इस राजा ने अपना उज्जवल यश चारों ओर फैलाया।

इण ही तरह देवी रा निदेस सूं जाचकां नूं देणकाज राजा बड़ाह रै सदा ही सुबर्ण रासि सिद्ध कीधो।

अर जिकण रै बदळै ऊकळता कडाह रा तेल में आपरो ही कलेवर झोकि दीधो।

जिणरासिद्धांत प्रमाणिक पंडितांरा रचिया प्रबंधा मैं इणरीति सुणीजै जिको पण बळाविंध्य रा अधीस रामभूपाळ अंग उपांग सहित सुणीजै॥९॥

---

१. मनुष्य के साथ चलने वाली छाया श्याम रंग की होती है पर यहां कवि सूर्यमल मीसण का आशय है कि उस राजा विक्रमादित्य का यश चांदनी को भी श्याम कहला देने वाले उज्जवल रंग का था। -संपादक

पहले इसी देवी की आज्ञा से याचकों को देने के लिए राजा बडाह ने सदा ही स्वर्ण का ढेर पाने का कार्य सिद्ध किया था और इसके बदले में उबलते हुए तेल् के कड़ाह में अपना शरीर झोंका था। इस का वृत्तांत प्रमाणिक लेखकों पंडितों के रचे ग्रंथों में मिलता है। हे आडावला (अरावली पर्वत) नामक पर्वत के स्वामी रामसिंह! उस आख्यान के अंग-उपांगों में साफ सुनने को मिलता है।

पांड्यदेस रा नरेस पंडिया चहुवाण समुद्रसेण नैं बिक्रम रै अर्थ दंड मैं अनेक द्रव्य भेंट भेजियो तिके अवंती रै अधीस सुणतां ही जिण बेताळिक नूं दीधो तिको कीर्तिप्रतानक नाम ब्रोधकर पहली राजा बडाह रै आश्रित रहियो।

एक समय तिण अवंती आय बिक्रम रै आगैं उण बडाह रो उदारपणों सर्बोपर कहियो।

सो सुणतां ही खंधावार रो भार सचिवां रै सीस करने द्वारपाळ वेस सों बिक्रम बडाह री नगरी जाय उणरा प्रतिहारां रो अध्यक्ष होय सेवा करण लागो।

अर प्रतिदिन सुबर्ण रा पुंज रो बांटणों देखि उणरी उत्पत्ति रा निदाननूं निश्चय मैं धरण लागो॥१०॥

पांड्य देश के राजा पंडिया वंशीय चहुवान समुद्रसेन ने राजा विक्रमादित्य के अर्थदंड के फलस्वरूप बहुत सारा द्रव्य भेंट में भेजा उसे अवंती के राजा ने सुनते ही जिस वैतालिक (भाट) को पुरस्कार में दे डाला वह भाट कीर्तिप्रतानक पहले राजा बडाह का आश्रित था। एक बार वही कीर्तिप्रतानक अवंती में आया और विक्रमादित्य के सामने उसने बडाह की उदारता को सर्वोपरि बताया। यह सुनते ही अपनी राजधानी का भार अपने सचिवों के कंधों पर रख कर राजा द्वारपाल के वेश में बडाह की नगरी में गया और वहाँ द्वारपालों का अध्यक्ष बन कर राजा बडाह की सेवा करने लगा। वहाँ विक्रमादित्य ने प्रतिदिन स्वर्ण समूह का वितरण देखा और मन ही मन यह आश्चर्य किया कि आखिर इतने स्वर्ण के आने का स्रोत क्या है इसका पता लगाना चाहिए।

एक राति निसीथ रै समय एकला बड़ाह नूं पुर बारैं जावतो देखी बिक्रम भी प्रच्छन्न पीठि लागो थको एक नदी रे तीर स्मसाण देस गियो।

जठै बेताळां आस्फाल डाकिणीगणां रा डमरू रा डात्कार फेरवियां रा फेत्कार प्रेतां रा आलाप राक्षसां रा रास कुणपां रा कपाळां रा कटकटाहट चिता रा अंगारां करि चित्रबिचित्र बडो अद्भुत चरित देखियो।

जठै नदी रा जळ सूं पुद्गळ पवित्र करि कोई सिद्ध रा दीधा मंत्र रा जाप पूर्बक तप्त तैल रा कटाह मैं बडाह राजा झंप लीधी। अरु उचित अंगां रो सिद्धपळ चंडिका नूं चखाय प्रसन्न कीधी॥११॥

इसी तलाश में सावचेत विक्रमादित्य ने एक दिन आधी रात के समय अकेले राजा बडाह को नगर के बाहर जाते देखा तो वह भी चुपके से उनके पीछे हो लिया। राजा बडाह एक नदी के तट पर बने श्मशान के स्थान पर गया। जहाँ बेताल के भुज ठोकने की आवाज, डाकिनियों के बजते डमरू की डात्कार, सियारों के बोलने के स्वर, प्रेतों के आलाप, राक्षसों की रास, मुड़दा कपालों के कटकटाहट की ध्वनि के बीच, जलती चिता के अंगारे, ये सभी मिल कर बड़ा अद्भुत दृश्य रच रहे थे। विक्रमादित्य ने यह सभी कुछ देखा। राजा बडाल ने जा कर नदी में नहा कर अपनी देह को पवित्र किया फिर किसी सिद्ध द्वारा प्रदत्त मंत्र का जाप करते हुए उसने खौलते तेल के कडाह में धमाक लगाई। अर्थात् वह उस कड़ाह में कूद गया। और इस प्रकार उबलते तेल में सींझा (पका) हुआ अपना मांस चंडिका को ख़िला कर देवी को प्रसन्न किया।

कळिजुग रा समय में प्राण काढिया पछैं सजीव होबा रो सुभचिंतकरा मत मैं तो असंभव ही आवै।

परंतु भट्टप्रभाकर दामोदर मिश्र विद्यापति बामदेव त्रिपाठी जयंत पंडितराज काळीदास घटखर्पर रो लिखियो उदंत बंसभास्कर रै बारैं राखिबा जिसो न जाणियो।

अर गंधर्बसेण नूं जयंत रो हरी नूं हुतासण रो विक्रम नूं धर्म रो अवतार कहियो तिण सूं भी प्रकासण रै उचित प्रमाणियो॥१२॥

हे राजा रामसिंह! कलियुग के इस खोटे समय में प्राण निकलने के बाद भी किसी के फिर से जीवित होने का यह चमत्कार मुझ ग्रंथकर्ता और आपके शुभचिंतक के मानने में तो नहीं आता। मुझे तो यह असंभव प्रतीत

होता है परन्तु भट्ट प्रभाकर, पंडित दामोदर, विद्यापति मिश्र, बामदेव, जयंत त्रिपाठी, पंडित राज कालिदास, घटखर्पर के लिखे ऐसे वृत्तान्त को मैंने वंश भास्कर के बाहर रखने जैसा नहीं समझा, अर्थात् इसे मैंने अपने ग्रंथ (वंश भास्कर) में लेने लायक समझा है।

गंधर्वसेन को (इन्द्र के पुत्र) जयन्त का, भर्तृहरि को अग्नि का और विक्रमादित्य को धर्म का अवतार कहा गया है। इससे मैंने (ग्रंथकर्ता) इस वृत्तान्त को अपने ग्रंथ में समाहित कर प्रसिद्ध करना उचित समझा है।

और भी सातबाहन रा चरित्र नूं आदिलेर अस्थिपाल बीसलदेव बल्लभाचार्य रा चरित्र पर्यन्त इसा ही प्रमाणिका रै लिखियां कही गई तथा कही जावसी।

तिण कारण करि कोई कोई उदंत रा संभव मैं संदेह दीसे तथापि समथा रो लेख बलात्कार सूं ही खटावसी।

इण रीति राजा बडाह रा अंग रो समस्त पळ खाय तिणनूं पाछो सजीव करि भगवती बर लेण रो हुकम दीधो।

जरै बडाह भी जिण तरह प्रतिदिन अरज करतो तिण रीति अर्थी जनां नूं देण काज आपरै द्वार सुबर्ण रो रासि संपादन होण रो ही प्रसाद मांगि स्वकीय सदन आय प्रभात ही सो पुरटपुंज जाचकांनूं लुटाय अपूर्व जस लीधो॥१३॥

इस के अतिरिक्त राजा सातवाहन के चरित्र (इसे तीसरी राशि में सुकवि मीसण ने कह दिया है) से आरंभ कर राजा अस्थिपाल, बीसलदेव और बल्लभाचार्य के चरित्र भी इसी प्रकार पंडितों द्वारा लिखे गए वृतांतों का सहारा ले कर लिखे गए हैं और आगे भी लिखे जाएँगे। इसलिए किसी-किसी वृत्तान्त के होने में पाठकों को संदेह हो सकता है तब तो समर्थ विद्वजनों पंडितों द्वारा पहले लिखा हुआ हाल हठ से ही ठहरेगा। अर्थात् ऐसे वृत्तांतों को सत्य नहीं मानने को पाठक स्वतंत्र हैं।

अब मैं पुनः मूल कथा पर आता हूँ कि इस तरह राजा बडाह के शरीर का सारा मांस खा कर उसे फिर से सजीव बना कर भगवती ने राजा से वर माँगने को कहा। तब बडाह ने भी प्रतिदिन की तरह यही अ़र्ज किया कि मां! याचकों को देने के लिए मेरे द्वार पर भी स्वर्ण का ढेर लग जाए आप मुझे

प्रसाद स्वरूप यही वर दें! ऐसी प्रार्थना करने के उपरान्त राजा वडाह अपने घर को आया और सूर्योदय के होते ही याचकों को उसी प्रकार स्वर्ण बांट कर सुयश अर्जित करने में संलग्न हो गया।

विक्रमरा मनमैं दया रो समुद्र ऊफणियो।

अर बडाह रा प्रस्थान रा समय रै पूर्बही आपरा अंगअंग मैं छुरिका रा छत लगाय समस्त स्वादु द्रव्य मिलाय पूर्ब री तरह तप्त तैल रा कटाह मैं बारबार झंपा लेर भद्रकाळी नूं प्रसन्न करि बिनां ही परिश्रम बडाह रै सुबर्ण राशि सदा ही संपादन होय योही अभिष्ट वर चंडिका सूं पाय प्रच्छन्न ही आपरै नगर गियो।

पाछैं सूं बडाह भी उठै ही पूगो जठै आकास सरस्वती कहियो अवंती रै अधीस विक्रम बिभाकर थारो दुक्ख निरस्त कीधो तिणसूं अब थारै द्वार बिनां ही परिश्रम सदा सुबर्ण रो संचय संपादित पावसी।

इसड़ी सुणि बडाह भी बिचारी इण समय तो इसड़ो कवण जिको पैला रै अर्थ प्राण अर्पण करि बिक्रम रै मार्ग बाजी लगावसी॥१४॥

राजा वडाह का यह लोमहर्षण आचार-व्यवहार देख कर परमार राज विक्रमादित्य के मन में राजा के प्रति दया का समुद्र हिलोरें लेने लगा। उसने वडाह के प्रस्थान करते ही अपने सारे अंगों पर छुरी के प्रहार से घाव ही घाव लगा कर, सारे स्वाद के मसाले अपने शरीर पर मल कर वह भी उबलते तेल के कड़ाह में बार-बार डुबकी ले कर देवी भद्रकाली को प्रसन्न कर बिना अधिक परिश्रम राडा बडाह के यहाँ स्वर्ण का ढेर खत्म न हो यही वांछित वरदान देवी से ले कर राजा विक्रमादित्य चुपचाप नगरी में आ गया। पीछे से बडाह भी वहीं पहुँचा तब आकाश वाणी हुई कि हे राजा बडाह! अवंती के राजा विक्रमादित्य रूपी सूर्य ने तुम्हारे कष्ट का नाश किया। इससे अब तुझे वहाँ देवी के स्थान पर जा कर शरीर को कष्ट देने की आवश्यकता नहीं। तेरे द्वार पर अपने आप स्वर्ण का ढेर लग जाएगा। यह सुन कर राजा बडाह ने सोचा कि इस कलियुग में भला ऐसा कौन हो सकता है जो दूसरे के कष्ट के लिए प्राण अर्पण कर विक्रमादित्य की बराबरी करने की बाजी लगाएगा।

इण रीति बडाह रो दुक्ख मेटि बिक्रमनरेस उज्जैणि आय पांड्यदेस रा अधीस पंडिया चहुवाण समुद्रसेण रो भेजियो समस्त दंड रो उपकरण

बडाह रा दुक्ख रा जणावणहार उण ही बोधकर नूं दीधो।

जिणमैं आठकोटि सुवर्ण त्राणवैं तुला, मोती पंचास, मातंग अयुत, तुरंग एकसत, पातुरि इसड़ै प्रमाण दान कीधो।

जिको विक्रम रो प्रीतिपात्र कीर्तिप्रतानक नाम बैताळिक अजे भी बंदीजनां रा बंस रै पूजनीय रहै।

अर कतराक मूढ भाट बिद्या रो लव पाय नवरत्न मैं आयो जिको बेताळभट्ट तिण नूं भी भाट कहै॥१५॥

इस तरह राजा वडाह का कष्ट मिटा कर राजा विक्रमादित्य उज्जैन आया और पांड्य देश के राजा पंडिया चहुवान समुद्रसेन द्वारा दंड स्वरूप भेजी हुई समस्त नजरानों की राशि उसी भाट को दे दी जो राजा विक्रमादित्य को राजा बडाह का कष्ट देखने के लिए प्रेरित करने वाला था। (यदि वह राजा समक्ष राजा बडाह की वदान्यता की तारीफ नहीं करता तो वह विक्रमादित्य राजा के बडाह के कष्ट से परिचित नहीं हो पाता)। इस नजराने में आठ करोड़ स्वर्ण मुद्राएँ, तिरानवे तुला मोती, पचास हाथी, दस हजार घोड़े और एक सौ गणिकाएँ थीं। यह सारा कुछ राजा विक्रम ने उस भाट को दान में दिया। राजा विक्रम के उसी प्रीतिपात्र भाट कीर्तिप्रतानक को आज भी भाट लोगों के वंश में पूजनीय माना जाता है और कुछ मूर्ख भाट विद्या का थोड़ा सा अंश पा कर राजा विक्रमादित्य के नव रत्नों में शुमार बैताल भट्ट को भाट जाति का बताते हैं। (जब कि वह भाट जाति का नहीं हो कर ब्राह्मण था)।

गीर्वाणभाषा

अचरणगद्यम्

एवं दुर्विधांश्चौरांश्च परिचेतुकामो रङ्कवेशमादाय बिक्रमादित्य एकदाऽवन्तीबहिर्गतः कस्मिंश्चिद्देवताऽऽयतने तस्थौ, तत्र चत्वारश्चौराः सरीसृप मुख्याः समागत्य मन्त्रयाम्बभूवुरित्थं चोचुर्यदिदं पस्त्यादानीतमोदनमत्राऽशित्वा पुरं प्रविशाम इति॥१६॥

इस प्रकार दरिद्री चोरों को पहचानने की इच्छा से कंगाल का रूप धारण कर विक्रमादित्य एक समय उज्जैन नगर से बाहर निकल कर एक देव मंदिर में ठहरा था वहाँ पर सरीसृप नामक मुखिया था जिनका ऐसे चार-

चोर आकर सलाह करने लगे और इस प्रकार बोले कि यह घर से लाया हुआ भात (चावल) यहाँ खाकर नगर में चले बस।

तच्छु त्वैव विक्रमस्तदुच्छिष्टं मत्कृते दत्तेत्याकर्ण्य स्तेयिनो जगदः, रे कस्त्वमिति श्रुत्वा राजोवाच महाघस्मरः क्षुधाकुलितो रङ्कः प्रस्थातुमसमर्थोऽहं तिष्ठामीति ॥१७॥

यह सुनकर विक्रम बोला उसका उच्छिष्ट (खाने से बचे जो ऊंठ) मुझे देना। यह सुनकर चोर बोले अरे तू कौन है? यह सुनकर राजा बोला मैं बहुत खाने वाला भूख से घबराया हुआ दरिद्री हूँ। मैं चलने में समर्थ नहीं इसलिए बैठा हूँ।

तच्छुत्वा चौराः परस्परमूचुरये रङ्क! त्वमस्माभिर्दिवाप्यत्रैव दृष्टः कथमिदानीमपि दारुणेऽनेहसि डाकिनी पिशाच बेताल क्रीडनीये महापुरीपरिसरे दारुणे देवालये तिष्ठसि ॥१८॥

यह सुनकर चोर आपस में बोले अरे दरिद्री! तुझको हम लोगों ने दिन को भी यहाँ देखा था अब भी तू कैसे डाकिनी भूत, प्रेतों के खेलने के कठिन समय में बड़ी नगरी के पास के इस भयानक मंदिर में बैठा है।

राजा चोचे तदाकर्ण्य देवयात्राप्रवृत्तलोकान् समुद्दिश्याऽशनार्थमहमसमर्थोऽत्रायातः कथमपि तमाहारमन्तरा दुष्पूरोदरश्चण्डबुभुक्षुरन्यत्र ब्रजितुमपि न शक्नोमि ॥१९॥

यह सुनकर राजा बोला कि देवयात्रा (देवदर्शन करने) में आए हुए लोगों को जानकर मैं अशक्त, भोजन के अर्थ किसी प्रकार यहाँ आ गया हूँ। इस भोजन के बिना जिसका पेट नहीं भरा जाने वाला है, ऐसा मैं, मारे भूख के दूसरी जगह जाने में भी समर्थ नहीं हूँ।

ब्रुवते स्म चौरा यदि तुभ्यमुच्छिष्टमन्नं दास्यामस्तदा किं नः प्रयोजनं सम्पादयिष्यसीति निशम्योचे प्रामारराडहं रङ्कोपि युष्मानति तुङ्गानि महाश्रीलोदवसितानी महार्हद्रव्योपकरणपूरितानि दर्शयिष्ये बोढास्मि मुषितस्वापतेयभारं समुज्जागरिते समापतत्सु गृहस्वामिषु राजपुरुषेषु तथा युष्मासु पलायनाऽसमर्थे च ॥२०॥

चोर बोले कि यदि तुझे उच्छिष्ट अन्न देवें तो तू हम लोगों का क्या काम करेगा? यह सुन कर प्रमारराज बोला, कि मैं दीन हूँ तब भी तुम लोगों

को बड़े ऊंचे श्रीमानों के रहने के घर जो बड़ी कीमती सामग्रियों से भरे हुए बताऊँगा, चोरी किये हुए धन का बोझा उठाऊँगा और जाग हो जाने पर घर के स्वामी लोगों के आ जाने पर तथा राज के सिपाही आजाने पर जो कोई तुम लोगों में से भागने में असमर्थ होगा अर्थात् नहीं भाग सकेगा उसको भी उठा लाऊँगा।

वदन्ति स्म ततस्तस्करा यद्येवं तर्हि गृहाणाऽस्मदुच्छिष्टमिति ददुश्च ततो बिक्रमाय स्वभोजनोच्छिष्टं तच्च स कर्परे गृहीत्वा हारयित्वा च बेतालेनावोचि कृतकृत्योऽस्मि यष्मत्प्रसादेन ततस्तेषां स्तेनानां सरीसृपाऽभिधेयो मुख्यश्चौरोऽव्रवीद्यदहं शाकनुशास्त्रेऽ भिगततत्त्वो-तस्तावच्छकुनान्यालोचये फेरवः किं ब्रुवन्त इति॥२१॥

इस पर चोरों ने कहा यदि ऐसा है तब तो ले हमारा उच्छिष्ट, यह कह कर विक्रम को अपने भोजन का उच्छिष्ट दिया, जिस को उस विक्रम ने खप्पर में लेकर खाया और बेताल सिद्ध ने विक्रम से कहा आप के प्रसाद से कृतकृत्य हुआ। इसके बाद उन चोरों में से सरीसृप नामक मुखिया चोर ने कहा कि मैं शकुन शास्त्र का खूब जानने वाला हूँ सो पहले शकुन विचारता हूँ कि श्याल (सियार) क्या कहते हैं।

ततः श्रुत्वा फेरण्डोक्तमूचे सरीसृपः सखायः श्रूयन्तां युष्माभिः शृगालगिरो युष्माकं मध्ये चत्वारश्चौरा एको राजा चास्तीति निशम्य त ऊचुर्वयं चत्वारो ऽपि परिचिता एवं परस्परं पञ्चमो ऽसौ रङ्को दिवाऽपि दृष्टोऽधुनाऽप्युच्छिष्टग्राही दृष्यते ततः कुतोऽत्राऽकाण्डे राजशङ्केति॥२२॥

तब सियार का कहना सुनकर सरीसृप बोला कि मित्रो! आप लोग सियार की बोली सुनो! तुम लोगों में चार तो चोर और एक राजा है। यह सुनकर वे बोले हम चारों तो अपने को आपस में पहचानते ही हैं और यह पाँचवाँ रंक अर्थात् दीन तो दिन को भी दिखा था और इस समय भी उच्छिष्ट को ग्रहण करने वाला दिख रहा है तो अब यहाँ पर बिना अवसर के राजा की आशङ्का कहाँ से (अर्थात् हमारे में से किसी का भी राजा होने का भ्रम नहीं हुई ?

तदोचे सरीसृपः फेरुभाषितं मिथ्या नैव भवतीति श्रुत्वेतर ऊचुः प्रत्यक्षबाधितेऽर्थे केदृशी दुःशङ्केति मिथः संज्ञाप्य तं रङ्कमग्रे कृत्वा पञ्चाऽपि पुरं प्रति विविशुः। सार्थपतिगृहे संधिमनुष्ठाय बहूनि धनानि मुषित्वा पुटभे-

दनाद्बहिरागत्य निखाय च जनाऽगम्यभूमिंक्षिप्त्वा च तत्र धनभारं प्रच्छन्नतया ततश्चत्वारो ऽपि तस्कराः सरसि विहितस्नानाः पुनर्नगरमागत्य गञ्जागृहं विविशू राजा तु स्वस्थानमागत्य समाजमण्डपे दत्त्वाऽवसरं सर्वेभ्यो भद्रासनोपविष्टो दण्डनायकमाकारयित्वा निदिदेश॥२३॥

तब सरीसृप ने कहा सियार का कहना मिथ्या नहीं है। यह सुनकर सब बोले प्रत्यक्ष से जो सिद्ध है उस में झूठा सन्देह क्यों? इस प्रकार आपस में बातचीत कर उस रङ्क को आगे करके पाँचों ही नगर में घुसे और नगर सेठ के घर में सेंध (चोरी करने को दीवार फोड़ना) लगा कर बहुत-सा धन चोरों ने नगर के बाहर ला कर एक एकान्त स्थान में खढा खोद कर उसे कोई न जाने, उस प्रकार सम्पूर्ण धन डाल दिया, तदुपरांत चारों ही चोर तालाब में स्नान कर वापस नगर में आ कर कलाल के घर में घुसे और राजा अपने स्थान पर आ सभा मंडल में, सब को सावकाश देकर, सिंहासन पर आ बैठा और कोतवाल को बुला कर बोला!

रे साहसाऽध्यक्ष! मत्पुटभेदनपालनाऽप्रवीण! किञ्चिद्धि तमस्विनीचरितं नाऽवगन्ताऽसि त्वयि प्रमत्ते पतितोऽशेषराज्यरक्षभूरितरभारो मदंस एवाऽतोऽधुनैव गच्छाऽमुकचत्वरादमुकदिशायाममुकप्रतोल्यां पिचण्डिलनाम्ना आसुतीवलस्याऽऽवसथे परिप्लुतां पिबन्तश्चत्वार श्चौरास्तिष्ठन्ति तान्निगडेन सन्दानितान्कृत्वाऽऽनय तूर्णम्॥२४॥

अरे कोतवाल! मेरे नगर की रक्षा में असमर्थ तू कुछ भी रात्रि के समाचार नहीं जानता। तेरे उन्मत्त हो जाने पर तो सम्पूर्ण राज्य की रक्षा का बड़ा भारी भारवाहक मेरा कंधा ही टूटा, इस कारण अभी जाकर अमुक चौक से अमुक दिशा में, अमुक गली में, पिचण्ड नामक कलाल के घर में मदिरा पीते हुए चार चोर बैठे हैं, उनको जंजीरों से बाँध कर शीघ्र ले आओ।

इत्थं स प्रामारराजशासनं निशम्य दण्डाऽध्यक्षो गत्वा जंघालतया मण्डहारकमन्दिरे मदिष्ठामत्तानापानस्थितांश्चतुरो ऽपि परस्वापहारकान्नियम्य शृङ्खलैरानीतवान् राज्ञः पुरस्तादब्रवीच्चविक्रमा-ऽर्कस्तान्पश्यतोहरान्महातस्करान्॥२५॥

इस प्रकार वह कोतवाल, प्रमारराज की आज्ञा पाकर अति शीघ्रता से जाकर कलाल के घर में मदिरा से मदोन्मत्त होकर मतवालों की मंडली में

बैठे हुए चारों ही पराया धन चुराने वालों को जंजीरों से बाँध कर राजा के सामने ले आया। तब विक्रमार्क ने उसके देखते चोरी करने वाले बड़े भारी चोरों से कहा।

अये मम सखाय: सुहृत्स्नेहधना: परिचिनुथ मामिति नरेन्द्रोक्तमाकर्ण्योचे सरीसृपो हे देव! मया तदैव परिचितो यदा भवान्सूचित: फेरण्डै: परंतु त्रय एते सखाय: परमदुष्टा मृगधूर्तकथितमप्यतथ्यं निर्द्धारितवन्त: किमहं करोमि दुष्टसखिवचनैं: प्रमत्तो हारितवानहं कार्यगोपनम्॥२६॥

मित्रों का प्रेम ही है धन जिनके, ऐसे अरे मेरे मित्रो! मुझे पहचानते हो? यह राजा का कहना सुन कर सरीसृप बोला हे! महाराज मैंने तो तब ही पहचान लिया था, जब कि सियार के शकुन जाने थे परन्तु इन परम दुष्ट तीनों मित्रों ने सियार के कहने को भी मिथ्या ठहराया मैं क्या करूँ, नीच मित्रों के वचनों से असावधान होकर काम के छिपाने से ठगा गया अर्थात् चोरी कर्म को न छिपा सका।

इन्द्रवज्रा

धीरो गभीरो रणदुर्जयोपि प्राज्ञोपि दु:खोद्धरणक्षमोपि।
पारीन्द्रवत्सीदति तृट्क्षुधाऽऽर्तो बद्धो बहूनां मतिपञ्जरे स:॥२७॥

देखिये, वह धीर गंभीर, संग्राम में कठिनता से जीता जाए ऐसा बुद्धिमान, दु:खों को दूर करने में समर्थ था-तो भी बहुतों की मति रूपी पिंजरे में बँधा हुआ, तृषा और क्षुधा से घबराया हुआ सिंह के समान दु:खी है।

अचरणगद्यम्

एवं तदुक्तमाकर्ण्य तानूचे राजा रे रे चौरा: परोपदेशसमुत्थं स्वप्रमादं तु शोचथ निजदुर्बोधदोषजं परस्वापहारप्रत्यवायं निक्षेपकं कथं न शोचथ श्रुत्वा स इत्थं विक्रमवचनं प्रोवाच सरीसृप: कोऽस्माकं दुर्बोधसमुत्थ: प्रत्यवायप्रमाद:॥२८॥

इस प्रकार उस का कहा हुआ सुन कर राजा ने उन चारों से कहा अरे चोरो। दूसरों के कहने से की हुई अपनी भूल का तो फिक्र करते हो परन्तु अपनी मूर्खता रूपी दोष से उत्पन्न हुआ जो पराया धन ले लेनं का पाप है उसको छोड़ देने का विचार क्यों नहीं करते हो? इस प्रकार विक्रम के वचन

सुनकर वह सरीसृप बोला कौन सा पापापराध हमारी मूर्खता से हुआ?

एवमाकर्ण्योवाच गन्धर्बसेन सूनुरये स्फुट एवायं युष्माकं प्रमादो निश्चीयते यद्वीरवृत्तिसमर्था अपि चौरवृत्या जीवितुं जीवयितुं चेच्छथेति श्रुत्वोचे सरीसृपो देव दुर्बुद्धिरेव कारणं चौरवृत्तिधारणस्य॥२९॥

इतना सुनकर गंधर्वसेन के पुत्र (विक्रम) ने कहा यह प्रत्यक्ष ही तुम्हारा अपराध नजर आ रहा है। तुम जो शूरवीरों की जीविका के समर्थ हो तब भी चोरों की जीविका से जीने की और जिलाने की इच्छा रखते हो। इतना सुनकर सरीसृप बोला महाराज चोरी की वृत्ति धारण करने का कारण तो मूर्खता ही है।

बिक्रम उवाच रे दुर्विनीता यद्येवं स्वीकुरुथ तदा किं न त्यजथ तां निरयनिक्षेपिकां दुर्वृत्तिं पुनरुचुश्चौरास्तछूत्वा हे देव दरिद्रतैव स्तैन्य-परित्यागप्रतिबन्धिकारिपन्थिनी॥३०॥

विक्रम ने कहा अरं मूर्खो यदि ऐसा मानते हो तो छोड़ क्यों नहीं देते उस नरक में पटकने वाली खोटी जीविका को? यह सुन कर फिर चोर बोले हे महाराज! चोरी कर्म को दूर न कर देने वाली बैरिणी दरिद्रता ही है।

मधुमाधवी

निन्द्यं नियोजयति भोजयति प्रदुष्टं,
पापांश्च भिक्षयति शिक्षयति च्छलादीन्।
देहीति घोषयति पोषयतीह चौर्यं,
किं नो न कारयति दुर्विधभावदायः॥३१॥

हे राजा! यह दारिद्र्य निन्दनीय कामों में लगाता है। ठण्डा बासी भोजन कराता है। पापों की याचना कराता है। कपट आदि की शिक्षा देता है। दीजिये (देओ देओ) इसी शब्द को दुहरवाता है। चोरी कर्म का पोषण कराता है। इसी प्रकार दारिद्र्य क्या-क्या नहीं करता?

अचरणगद्यम्

एतच्चोरवचनं निशम्योवाच हर्युनुजो रे चौरा युष्माकं दुविर्धा वस्तदैव गतो यदा मया सह सखिभावो जातः।

स च सखिभावस्तुल्यप्रतियोगिक एव संभाव्यते युष्माकं सख्यमवलम्ब्यक्षणमपि चौरतां गतवानहं तत्कथं मया सह सख्येन यूयमपि राजतां न यास्यथा ऽतो त्यजथ दुर्मतिमिमां कष्टं च तज्जन्यम्॥३२॥

चोरों के वचन सुनकर हरि (भर्तृहरि) के छोटे भाई (विक्रम) ने कहा रे चोरो! तुम्हारा दारिद्र्य तो तब ही गया जब मेरे साथ मित्रता हुई थी, और वह मित्रता समानता में ही होती है। तुम्हारी मित्रता को लेकर मैं क्षण भर चोरपन को प्राप्त हुआ तो अब तुम भी मेरे साथ मित्रता होने से कैसे नहीं नृपता को प्राप्त होओगे। इस कारण छोड़ो इस दुर्बुद्धि को और दुर्बुद्धि से हुए दुःख को।

पुनर्यदि कुमार्गं यास्यथ तदा पुनरिमामेव दशां प्राप्स्यथेत्यभिधाय सार्थपतिधनं तस्यैव दापयित्वा स राजा चौरान्मुमोच, तेषां मध्ये सरीसृपनामानं मुख्यतस्करं शाल्मलिपुरनाम्नो नगरस्य राजानं चकार। त्रींश्च तदतिचौरान् पुरटराशिभिर्दारिद्र्यदरिद्रीकृत्य करुणया कौतुकेन च प्रास्थापयद्विक्रमः॥३३॥

फिर भी अगर खोटे मार्ग को जाओगे तो वापस इसी दशा को प्राप्त होओगे। यह कहकर उस राजा ने सार्थपति (नगर सेठ) का धन सार्थपति को दिलाया और चोरों को छोड़ दिया। विक्रम ने उन चारों में जो सरीसृप नामक मुख्य चोर था उसको शाल्मली नामक नगर का राजा बनाया, और दूसरे तीनों चोरों को सुवर्ण की ढेरियों से दारिद्य के दरिद्री अर्थात् बड़े धनवाले बना दिये और हँसते हुए उन्हें विदा किया।

ततो गच्छता कियताऽप्यनेहसा चिन्तितवान् प्रामारराजो यत्सरीसृपो मया भूपीकृतः स चौरो राजपदवीं प्राप्य किमिदानीमनुतिष्ठतीति निरूपणीयं मयेत्यालोच्य स राजा सुचेतनं नाम चारपुरुष माहूय प्राप्तराज्यतस्करचरित्रनिरूपणाय प्रस्थापयामास। स च प्रच्छन्नदूतो गत्वा शाल्मलिपुरेऽधिगतसुवृत्तान्तः पुनराजगाम राजसमीपम्॥३४॥

इसके बाद बहुत समय बीत जाने पर प्रमार राजा (विक्रमादित्य) ने विचार किया कि जिस सरीसृप को मैंने राजा बनाया है वह चोर राजपदवी को पाकर अब क्या कर रहा है यह देखना चाहिये, यह विचार करके उस राजा ने सुचेतन नामक दूत को बुलाकर, पाया है राज्य जिसने ऐसे उस चोर

की रचना देखने को भेज दिया, और वह गुप्त दूत शाल्मलीपुर में जा कर सब वृत्तान्तों (समाचारों) को जान वापस राजा के पास आया।

तत उवाच बिक्रमः सुचेतन! कथन सरीसृपोदन्तमिति निशम्योचे संदेशहारको देव! तथ्यं कथयाम्यलीकभाषणमनुचितं चारपुरुषस्येति यथा जन्तोश्चक्षुषी अतिवार्द्धके किञ्चिन्न पश्यतस्तथा राजाऽप्यनृतभाषणचारेणेति यथा दृष्टं तच्चरितं पद्यैर्वर्णयामि शृणोतु देवः ॥३५॥

तब राजा बिक्रम ने पूछा सुचेतन! कहो सरीसृप के समाचार? यह सुनकर सन्देशहार (सन्देशा ले जाने और लाने वाला दूत) बोला महाराज! सत्य बात कहता हूँ मिथ्या कहना दूत पुरुष को उचित नहीं। जैसे प्राणी के नेत्र अत्यन्त वृद्ध अवस्था में कुछ नहीं देखते वैसे ही राजा भी मिथ्या भाषण करने वाले दूत से कुछ नहीं जानते। इस कारण उसके चरित्र जैसे मैंने देखे हैं श्लोकों से वर्णन करता हूँ। सुनिये महाराज!

भुजङ्गप्रयात

खलायाऽघसक्तात्मने धर्महर्त्रे परस्त्री परद्रव्य विप्लावकर्त्रे।
वितीर्याऽप्यऽहो देव तस्मै सुराज्यं बिसृष्टा हि तंत्रत्यसाधुभ्य आपत्॥

'हे महाराज! पापों में आसक्त रहने वाले, धर्म का नाश करने वाले, पराई स्त्री और पराये धन को बिगाड़ने वाले उस दुष्ट को सुन्दर राज्य देकर वहाँ के रहने वाले सज्जनों को आपने विपत्ति ही दी है।

सितां मेलयित्वा पयःपानदातॄन्सुगन्धादिकं घ्रेयमापूर्य पातॄन्।
निसर्गेण दुष्टो दशत्येव सर्वान् कृतं तेन नामाऽनुरूपं चरित्रम्॥३७॥

सुगन्ध आदि (गुलाब जल केवड़ा) से सुगन्धित कर और मिश्री मिलाकर कटोरे भर-भर दुग्ध पान कराने वाले सभी को दुष्ट सांप काटता ही है। उसने सब काम नामानुरूप (सरीसृप उसका नाम है और सरीसृप साँप का नाम है) किया।

ह्युप जातिः

क्षुधाऽसमर्थस्तरुणोऽतिचण्डो ग्रहीतुमप्याखुमहिर्न शक्तः।
सुराज्यदुग्धं भवतैव तस्मै दत्त्वा कृतो बभ्रुवधक्षमः सः॥३८॥

जो भयंकर युवा (जवान) सर्प मारे भूख के अशक्त होकर चूहे को पकड़ने में भी समर्थ न था। उस को आपने सुन्दर राज्य रूपी दुग्ध देकर नेवले को मारने में समर्थ किया।

अचरणगद्यम्

तथाहि दयाऽऽर्द्रहृदयेन भवता तस्य दुःस्थता तु खण्डिता परंतु प्रकृतिस्तु कथमपि केनाऽऽपि न खण्ड्यते राज्यतरोश्च यशः पुण्यं सुखं चेति त्रय मेव फलं तन्नाऽऽप्नुतस्तस्य राज्येनाऽपि किं प्रयोजनं, स तु साधूनां स्वापतेयं मनस्विना मानं दुरात्मनां दुःखं परस्त्रीणां सुचरित्रं धर्मस्य स्थिरभावं पाप्मनश्च दूरस्थायित्वं देवालयानां मर्यादां दस्यूनां च दारिद्र्य मजस्त्रं हरति खलः ॥३९॥

तैसे ही दयार्द्रभाव हृदय से आपने उस की दुःस्थता (दुर्गति) तो दूर की परन्तु प्रकृति तो किसी प्रकार किसी से भी नहीं मिट सकती और राज्य रूपी वृक्ष के यश, पुण्य और सुख ये तीन ही फल हैं सो जिसने नहीं पाये उस के राज्य से भी क्या प्रयोजन है ? वह दुष्ट तो सज्जनों का धन, पण्डितों का मान, दुरात्माओं का दुःख, परस्त्रियों का सच्चरित्र, धर्म का स्थिरभाव, पापियों की दूरस्थिति, देवमन्दिरों की मर्यादा और चोरों की दरिद्रता को निरन्तर हर रहा है अर्थात् दूर कर रहा है।

ब्रवीति चाऽहं चौरवृत्त्या यथा राजतां प्राप्तस्तां प्रत्यक्षहितकारिणीं केन दोषेण त्यजामि दुर्वृत्तेरेव राज्यमिति संप्रति निश्चीय को हि तादृशीं सुखनिदानरूपां दुर्वृत्तिं त्यक्तुं समर्थ इति॥४०॥

और कहता है कि मैं जिस चोरी की वृत्ति से राजापन को प्राप्त हुआ हूँ उस साक्षात् कल्याण करने वाली चोरी को किस अपराध से छोड़ूँ ? दुर्वृत्ति से ही राज्य है ऐसा निश्चय जान कर इस समय ऐसा कौन है जो ऐसी सुख देने वाली चोरी को छोड़ देने में समर्थ हो।

तस्य तु शिव शव निर्माल्यमपि नाऽग्राह्यं ब्राह्मणा अपिनाऽवध्या गुरुस्त्रियोऽपि नाऽभोग्या जीवितमपि नाऽस्थिर मविपरिणामि कामाऽस्त्रं भ्रूभङ्गीभङ्गुरमिव यमास्त्रं सदैव संभवति॥४१॥

शिव के भेंट किया हुआ और मुर्दों के ऊपर का कफन भी ले लेना, ब्राह्मणों को भी मार डालना, गुरु स्त्री से भी सम्भोग करना, जीना भी बहुत

लम्बा, कामास्त्र का भी नाश न होना, यमराज के अस्त्र का भी एक निमिष (पल) भर में नाश होना, सदा ही सम्भव है।

निशम्येति सुचेतनाद्विक्रमः प्रच्छन्नवेशधारी शाल्मलिपुरं गत्वा सरीसृपचर्यां संपरीक्ष्य पश्चाद्राजपदादवतार्य पूर्वामेव दशां प्रापि तं तं चौरं हतवांश्च निर्दयं गन्धर्वसेनसूनुर्मालवेन्द्रः ॥४२॥

इस प्रकार विक्रम ने सुचेतन से सुन गुप्त वेश धारण कर शाल्मलीपुर जाकर सरीसृप की रचना को भलीभाँति जान कर बाद में राजपद से उतारा। पहले वाली दशा को ही प्राप्त कर उस चोर को गंधर्वसेन के बेटे मालवा के राजा (विक्रम) ने निर्दय होकर मारा।

इतिश्री वंशभास्करे महाचम्पूके पूर्वायणे चतुर्थ राशौ वीतिहोत्र-चण्डासिवंशवर्णनान्तर्गतप्रामारराज विक्रमचरित्रे धन्वन्तर्यादिनव रत्नप्र-पञ्चितप्रबन्धविवेचनगृहीतमहौदार्यविक्रमसंसारदुःखनिरासनियम-ग्रहणचित्रकूटसिद्धदेवी वरदानदूरी कृतबडाहदुःखसदैवतद्वारसुवर्ण-राशिसम्पादनकीर्तिप्रतानबैतालिकार्थपाण्ड्यराजचहुवाणसमुद्रसेनप्रेषित-दण्डोपकरणदानचौरचतुष्कदुःस्थभावदूरीकरणसरीसृपराज्या-ऽऽसनाऽऽरोहणश्रुततद्दुर्वृत्तविक्रमपुनस्तन्मारणं तृतीयो मयूखः ॥३॥ आदितो द्वादशोत्तरशततमः ॥११२॥

श्रीवंशभास्कर महाचम्पू के पूर्वायण की चौथी राशि में अग्नि से उत्पन्न हुए चहुवाण के वंश वर्णन के बीच में पुंवार राजा विक्रमादित्य के चरित्र में धन्वतरि आदि नवरत्नों के रचे हुए ग्रन्थों का विवेचन, और बड़ी भांरी उदारता को ग्रहण करके विक्रम का संसार के दुःखों को दूर करने का नियम लेना, चित्रकूट पर्वत पर सिद्धेश्वरी देवी के वरदान से बडाहराज का दुःख दूर कर नित्य उसके द्वार पर सोने का ढेर लगाना, कीर्तिप्रतानक नामक भाट को पाण्ड्यदेश के राजा चहुवाण समुद्रसेन की भेजी हुई दण्ड की सामग्री का देना, चार चोरों की दुर्गति को दूर करना, सरीसृप को राजसिंहासन पर बैठाना और सरीसृप के खोटे वृत्तांत सुनकर फिर विक्रम से उस सरीसृप के मारे जाने का तीसरा मयूख समाप्त हुआ। और आरम्भ से ११२ मयूख हुए।

एकदा विक्रमेण सर्वतीर्थाकारणाय प्रेषिता द्विजास्तेषु कश्चित् क्षीरार्णवं गतो विक्रमनिर्मितं तन्माहात्म्यपद्यं च पपाठ तदर्थश्च श्रुयतां

रावराजेन्द्ररामसिंह मन्त्रिबद्धया जगत्युपजात्या ॥१ ॥

एक समय विक्रमादित्य ने सब तीर्थों को बुलाने के अर्थ ब्राह्मणों को भेजा था उनमें से कोई एक क्षीर समुद्र गया और विक्रम का बनाया हुआ उस समुद्र की महिमा का पद्य (श्लोक) पढ़ा। हे रावराजा रामसिंह! उसका अर्थ मेरे बनाये हुए जगत्युपजाति छन्द से सुनो।

जगत्युपजातिः

किं वैभवं वच्मि त इन्दिरापिता वदान्यतां वच्मि किमर्थिनोम्बुदाः।
क्षोभेण यस्य प्रलयान्तरं भवेत्तस्मै नमस्तेऽब्धय एहि मद्गृहम् ॥२ ॥

आप के वैभव का क्या वर्णन करूँ आप लक्ष्मी के तो पिता हैं, और क्या आप की उदारता का वर्णन करूँ कि, जिस के याचक मेघ हैं और जिस के क्षोभ (चलायमान) होने से दूसरा ही प्रलय हो जाए अैसे आप समुद्र को नमस्कार है! मेरे घर आइये!

अचरणगद्यम्

एतद्विक्रमोक्तस्वस्तुतिपद्यार्थं ब्राह्मणमुखाच्छ्रुत्वोदन्वता स्वकीयलहरीभिरानीय दत्तं रत्नचतुष्टयं विक्रमार्थं तद्विप्रहस्ते, ऊचे च स सिन्धुना हे विप्रैतानि चत्वारि रत्नानि विक्रमकार्यसाधकानि समर्पणीयानि तस्मै जवनेन त्वया गत्वा ॥३ ॥

इस विक्रम के कहे हुए अपनी स्तुति के पद्य का अर्थ ब्राह्मण के मुख से सुनकर समुद्र ने अपनी तरंगों से चार रत्न लाकर विक्रम के अर्थ उस ब्राह्मण के हाथ में दिये और समुद्र ने उस ब्राह्मण से कहा कि हे ब्राह्मण! ये चारों रत्न विक्रम के कार्य सिद्ध करने वाले हैं सो तुम शीघ्र जा कर विक्रम को अर्पण करना अर्थात् देना।

एतेषु चतुर्ष्वेकं द्रव्यसंपादकं द्वितीयं सुभोज्यसंपादकं तृतीयं बलसंपादकं चतुर्थ मलंकारसंपादकं रत्नमस्ति तच्छ्रुत्वा निमन्त्रकद्विजेनाऽवन्तीमागत्य राज्ञे समर्पितानि। तेषां प्रभावं श्रुत्वा प्रसन्नेन विक्रमार्केण स एव द्विज ऊचे हे विप्र एतेष्वेकं यत्तेऽभिरोचते तद्रत्नं गृहाणेतिं ॥४ ॥

विप्रश्च गृहं गत्वा स्वकुटुम्बमेकत्र समानीय प्रत्येकं पप्रच्छ कीदृशं रत्नं ग्राह्यमिति श्रुत्वा च तद्वचनं तत्पुत्र आह बलसंपादकं स्नुषा ऽऽह

भूषणसंपादकं ब्राह्मणपत्न्या ह सुभोज्यसंपादकं स्वयं चाह द्रव्यसंपादकं रत्नं ग्राह्यमिति श्रुत्वा राजदूतेन तद्विवादं राज्ञे निवेदितं, तद्राज्ञा च महावदान्येन रत्नचतुष्कमपि दत्तं तस्मै सकुटुम्बद्विजायेति लोमाञ्चक-मौदार्य विक्रमादित्यस्याभवत्।।५।।

इन चारों में एक तो धन सम्पादन करने वाला है, दूसरा सुन्दर भोजन सम्पादन करने वाला है, तीसरा बल सम्पादन करने वाला और चौथा रत्न अलंकार (गहना) सम्पादन करने वाला है। यह सुनकर वह निमन्त्रण देने वाला ब्राह्मण उज्जैन आया और वे चारों रत्न जा कर अर्पण किये। राजा विक्रमार्क ने उनकी महिमा सुनकर प्रसन्न हो उसी ब्राह्मण से कहा कि हे ब्राह्मण! इनमें से जिस पर तेरी रुचि हो, वह एक रत्न ले ले तब उस ब्राह्मण ने घर पर जाकर अपने घर के लोगों को इकट्ठा कर एक-एक से पूछा कि कौनसा रत्न लेना चाहिये। उस ब्राह्मण के वचन सुनकर पुत्र ने तो कहा बल सम्पादन करने वाला, बहन बोली कि गहना देने वाला, ब्राह्मण की स्त्री ने कहा सुन्दर भोजन देने वाला, और स्वयं (खुद) ने कहा धन देने वाला रत्न लेना चाहिये। इस प्रकार चारों के विवाद को राजदूत ने सुन कर राजा से जा कहा और बड़े दातार राजा ने भी चारों ही रत्न उस कुटुम्बी ब्राह्मण को दे दिये। इस प्रकार रोमाञ्च करने वाली उदारता विक्रमादित्य की हुई।

एकदा विक्रमो मृगयारसमनुभवितुमेकाकी हयद्वितीयो गतोऽटव्यां तत्रैव कश्चिद्विजकुमार एधांस्याहर्तुं पूर्व गतः पश्चात्स राजा तत्र दिङ्भूढो मार्गं पप्रच्छ।।६।।

एक समय विक्रमादित्य मृगया (शिकार) का आनन्द लेने को, घोड़ा ही है दूसरा साथी जिसके, ऐसा अकेला वन में गया। उसी वन में एक ब्राह्मण का लड़का लकड़ियां लेने को पहिले से ही गया हुआ था पीछे से उस राजा ने वहाँ पर दिशा भूल होकर मार्ग पूछा।

तदा विप्रपुत्रेण क्षुत् तृट परीताङ्गस्य राज्ञः फलजलादिनाऽऽतिथ्य-मनुष्ठितं मार्गं च दर्शितं राजा च त्वत्तोऽहं नाऽनृणीत्युक्त्वाऽवन्तीं गत्वा ब्राह्मणकृतसत्कारं प्रकटीकृत्य सभायां तत्प्रतिष्ठा च विशेषण वर्द्धिता।।७।।

त्वत्तोऽहं नाऽनृणीति राजवचनं संस्मृत्य तत्परीक्षार्थं ब्राह्मणेन

क्रमचित्रनामा राजुसतो हृतो वालत्वाद्गोपितश्च तददर्शने समाकुलीभूते राजवर्गे तेनैव ब्राह्मणेन क्रमचित्रकराद्भूषणमेकं निष्कास्य निजपुरुषकरे दत्त्वा सत्याऽनृतविपणिषु विक्रेतुं प्रेषितम्॥८॥

तब ब्राह्मण पुत्र ने भूख और प्यास से घबराये हुए राजा का फल, जल आदि से सत्कार किया और मार्ग भी बताया और राजा ने मैं तुम से उऋण नहीं यह कहकर उज्जैन जा कर ब्राह्मण के किये हुए सत्कार को प्रकट करते हुए सभा के बीच उस ब्राह्मण की बहुत ही प्रतिष्ठा बढ़ाई। मैं तुम से उऋण नहीं, राजा के इस वचन का स्मरण कर उस की परीक्षा के अर्थ ब्राह्मण ने क्रमचित्र नामक राजपुत्र को चुरा लिया और बालक होने के कारण उसको छिपा दिया। उसके न दीखने पर राजमण्डल घबराया। तब उसी ब्राह्मण ने क्रमचित्र के हाथ से एक गहना निकालकर अपने मनुष्य के हाथ दे चोर बाजार में बेचने को भेजा।

तां तु भूषां राजकुमारनामाङ्कितां दृष्ट्वा स ब्राह्मणप्रेषितो विक्रयिको राजपुरुषैरवरुद्धो बद्धश्चोवाच देवदत्तप्रेषितोऽहमत्र विक्रेतुमलं कृतिमागत इति॥९॥

उस गहने को राजकुमार के नाम से अङ्कित देख कर राजपुरुषों ने ब्राह्मण के भेजे हुए उस मनुष्य को पकड़ा और बाँधा। उस ने कहा मैं तो देवदत्त का भेजा हुआ यहाँ पर गहना बेचने को आया था।

राज्ञाऽप्याहूय पृष्टः स देवदत्तः किमिदं त्वयाऽनुष्ठितमिति श्रुत्वाव्याजवेपमानोऽवोचद्देवदत्तो देव मयैव महालुब्धेन भूषणलाभच्युत-धैर्येण कपाटितस्वर्गद्वारेण निरर्गलीकृतनरकवलजेनाऽकाण्डद्रोहबुद्धिना तव पुत्रो व्यापादितस्त्वमेव प्रमाणमत्र यथाऽभिप्रायस्तथा क्रियतामा-चरितमन्तोर्मे वधपात्रस्य॥१०॥

राजा ने भी उस देवदत्त को बुलाकर पूछा कि यह तुमने क्या किया, सुनकर कपट से काँपता हुआ देवदत्त बोला, महाराज! बड़ा भारी लोभी, गहने के लोभ से छोड़ी है धीरता जिसने, स्वर्गद्वार के लगाया है किवाड़ जिसने, नरक द्वार की खोली है आगल (अर्गला) जिसने, ऐसे अचानक बैर बुद्धिवाले, मैंने ही आप के पुत्र को मारा है। इस विषय में आप ही साक्षीभूत हो! मुझे मारे जाने योग्य अपराधी का जैसी इच्छा हो वैसा कीजिये!

एवं देवदत्तोक्तमाकर्ण्य तत्पत भ्रूकुटयोऽनेकविधान्दण्डान्मारण निष्कासन सर्वस्वहरण दीञ्छ्रावयामासुः सामाजिका राजानं राजा त्वाह हे साहसविधायकाः प्राड्विवाकादयो भो इतरे सभ्यलोकाः पौरलोकाश्च शृणुत सर्वेऽप्यहमस्य देवदत्तद्विजकृतोपकारस्य कदापि नाऽनृणीभवाम्यतः सत्कार्य एवासावित्युक्त्वा तस्य विप्रस्याऽभ्युत्थान सन्मान दान विधानैः सत्कारमकरोद्विप्रश्च राज्ञः परमकृतज्ञतां बुध्वा क्रमचित्रं सुप्रसन्नमानीय परिषदि सस्वप्नेहं सभूषणं समर्पितवान्धात्रीप्रमुखपरिलालकजनेभ्यः ॥११॥

इस प्रकार देवदत्त का कहा सुनकर उस पर भृकुटी चढ़ाते हुए समाज के लोगों (न्यायकार्य के अधिकारियों) ने मारना, निकालना और सर्वस्वहरण कर लेना आदि अनेक प्रकार के दण्ड राजा को सुझाए राजा ने कहा कि हे दण्ड देने वाले न्यायकारी लोगो! हे दूसरे सभासद लोगो! सभी सुनो, मैं इस देवदत्त ब्राह्मण के किये हुए उपकार से कभी भी उऋण नहीं हूँ। इस कारण यह तो सत्कार के ही योग्य है। ऐसा कहकर उस ब्राह्मण का अभ्युत्थान (ताजीम) सन्मान और दान देने आदि कामों से सत्कार किया और ब्राह्मण ने राजा की पूर्ण कृतज्ञता जानकर सुप्रसन्न क्रमचित्र को ला कर सभा के बीच धातृ (धाय) आदि पालन करने वाले लोगों के अर्पण किया।

एकदोज्जयिनीवासी कश्चिच्छ्रेष्ठी स्वधनप्रमाणाऽनभिज्ञः सांयात्रिको जगाम समुद्रान्तर्द्वीपे तत्र क्वचिच्चन्द्रकान्तशिलाबद्धसरसस्तटे भगवतीस्थानं तद्वामभागे स्त्री पुरुष युग्मं च पृथक् च्छिरोविष्टं तत्रैवैकतः शिलायां लेखश्च दृष्टः स चेत्थं यदि कश्चित्सत्त्ववान्नरः स्वशिरसा देव्यै बलिमाहरेत्तदा पृथक्शिरसी रूण्डयोः संहितीभूय युग्मं सजीवं भवेदिति दृष्ट्वाऽवन्तीमागत्य श्रेष्ठिना राज्ञे निवेदितं राजाचस महासत्त्वस्तत्र गत्वा देवीबलिमुद्दिश्य स्वशिरश्छेत्तुमारेभे तदैव भगवत्या मामेत्युक्त्वा वरं वरय भद्रेत्युक्तं तदा नृपेणैतन्नृयुग्मं सशिरोजीवं भवत्वनेन वरेणेति दम्पती जीवयित्वा स्वपुरं प्रतस्थे॥१२॥

एक समय उज्जैन में रहने वाला कोई सेठ जिसको अपने धन का ठिकाना नहीं था वह जहाज का व्यापारी होकर समुद्र के बीच के टापू पर गया था। वहाँ पर कहीं चन्द्रकान्त (मणि विशेष) की चट्टानों से बँधे हुए

तालाब के किनारे पर देवी का मन्दिर और उस के बाम भाग में एक स्त्री पुरुष का जोड़ा जिन के मस्तक जुदे कटे हुए, और वहीं पर एक तरफ शिला (पत्थर) पर लेख (लिखा हुआ) देखा वह लेख इस प्रकार था कि "यदि कोई शक्तिमान् पुरुष अपने मस्तक का देवी को बलिदान दे तो दोनों धड़ कटे हुए सिरों से मिलकर जोड़ा (स्त्री पुरुष) सजीव हो जाए" इन सब बातों को देख उज्जैन आकर उस सेठ ने राजा से कहा और वह महापराक्रमी राजा वहाँ जाकर देवी को बलिदान देना मन में ठान अपना सिर काटने लगा उसी समय भगवती ने 'मत मत' ऐसा कह कर कहा हे कल्याण! वर माँग, तब राजा ने कहा यह स्त्री पुरुष का जोड़ा मस्तक सहित सजीवन हो जाए। इस वरदान से ऐसे स्त्री पुरुष के जोड़े को जीवित कर राजा ने अपने नगर को प्रस्थान किया।

शासति भुवं विक्रमे काश्मीरनीवृति केनचित्कारिते कासारे कथमपि जलं नातिष्ठत्तत्राऽशरीरा वागुवाच द्वात्रिंश ल्लक्षणधरनररक्तबलिदानेन भवेयुरापस्तदाकर्ण्य व्यवहारिणा दश भारसुवर्णमयः सुघटितपुरुषस्त-टाकतटे स्थापितस्तत्राऽन्नदानसत्रं च कारितं घोषितश्च डिण्डिमो यः कश्चनात्र सर्वलक्षणः शस्त्रेण स्वशिरश्छिन्द्यात्तस्याऽयं स्वर्णपुरुष इति निशम्यापि न कोपि कथितं करोति विक्रमस्तु चारमुखेन श्रुत्वा गत्वा च रात्राववदत्तटाके स्थित्वा याकाचिद्द्वात्रिंश ल्लक्षणपुरुषरुधिरमिच्छति तस्यास्तृप्तिर्भवत्वित्युक्त्वा यावच्छिरो भिन्द्यात्तावत्तुष्टा देव्याह ब्रूहि वरमिति ततस्तेनैव वरेण सरः पूरयित्वा कनकपुरुषं तदुद्यापने द्विजभोजनार्थं दत्त्वा प्रत्यागमदवन्तीं गान्धर्वसेनिः ॥१३॥

विक्रमादित्य के पृथ्वी का शासन करते समय काश्मीर देश में किसी के बनाये हुए एक तालाब में किसी प्रकार जल नहीं ठहरता था। वहाँ वह आकाशवाणी हुई कि बत्तीस लक्षणों को धारण करने वाले मनुष्य के रुधिर का बलिदान देने से जल ठहरे। यह सुन कर व्यापारी ने दसभार (सोलह मासे का एक तोला, चार तोलों का एक पल, सौ पल की एक तुला और बीस तुला का एक भार होता है, इस हिसाब से दसभार) सोने का एक पुतला (पुरुषाकार) घड़वा कर तालाब के किनारे पर रख दिया और वहाँ पर अन्नदान का सदावर्त लगा दिया फिर डूंडी भी पिटवाई कि जो कोई सम्पूर्ण

लक्षणवाला पुरुष यहाँ पर अपना शस्त्र से सिर काटे उसी का यह सुवर्ण पुरुष (सोने का पुतला) है। इस घोषणा (डूंडी) को सुनकर भी कोई नहीं आया। दूतों के मुख से यह सुनकर विक्रम वहाँ गया और रात्रि के समय तालाब पर खड़ा होकर बोला कि जो कोई बत्तीस लक्षण वाले पुरुष के रुधरि को चाहती है, उसकी तृप्ति हो यह कहकर सिर काटता ही था कि सन्तुष्ट होकर देवी बोली कि वर माँग, तब उसी वरदान से तालाब को भर कर सुवर्ण पुरुष को तालाब के उद्यापन में ब्राह्मण भोजन के निमित्त देकर गन्धर्वसेन का पुत्र (विक्रम) वापस उज्जैन में आया।

विक्रमपुरोधसस्त्रिपुष्करनाम्नः कमलाकरसंज्ञः पुत्रो निसर्गमूर्खो जातस्तं प्रत्येकदा पित्रोक्तं हे पुत्र प्राप्ते मनुष्यपद्गले पाण्डित्यमसाध्यं नैव भवति तथापि कस्त्वमीदृशो यस्य पुच्छ विषाण विहीनस्य ते न विद्या न तपो नाप्यंहति र्न चापि शीलं न गुणो न धर्म स्तथाविधस्त्वंभूभारभत गच्छ कश्मीरानित्युक्तः कमलाकरो माधुमतेषु गत्वा चन्द्रमौलिनामानमुपाध्यायमाराधितवांस्ततो विद्यामवाप्य पण्डितो भूत्वा मालवान्प्रस्थितो मार्गे कान्तिपुरीमगात्॥१४॥

त्रिपुष्कर नामक विक्रमादित्य के पुरोहित के कमलाकर नामक पुत्र प्रकृति से ही मूर्ख हुआ। उससे एक समय पिता ने कहा कि हे पुत्र! मनुष्य के शरीर को पाने पर पण्डिताई होना असाध्य नहीं है तो भी ऐसा तू कौन है? जिसके पूँछ और सींग नहीं, तेरे में न तो विद्या है न तप, न लाभ-हानि, न शील, न गुण और न धर्म है। ऐसा केवल पृथ्वी का भार तू काश्मीर जा। इस प्रकार कहने में आकर कमलाकर काश्मीर में जाकर चन्द्रमौलि नामक उपाध्याय (गुरु) की सेवा करने लगा। उससे विद्या पढ़ पंडित होकर मालव देश (मालवा) को जाता हुआ काँतीपुरी में पहुँचा।

तत्र स्वःस्त्रीगर्वसर्वस्वापहारिदिव्यदेह रूप सौभाग्य लावण्यशालिनी काचिन्नरमोहिनी नाम सामान्यकन्या ददृशे कमला करेण द्रष्टा च मूर्छालुभावमवाप्नोतीति दृष्ट्वा तां त्रैपुष्करिरपि निरिङ्गितं पपात॥१५॥

उस काँतीपुरी में स्वर्ग की स्त्रियों के सर्वस्व घमंड को हरण करने वाली, सुन्दर शरीर, रूप, सौभाग्य कन्या वाली कमलाकर की दृष्टि में आई

कि जिसको देखने वाला मूर्छा खा जाए, त्रिपुष्कर का पुत्र (कमलाकर) भी उस को देख कर मूर्च्छित होकर पड़ गया।

नरमोहिन्यावुदवसिते त्वेको राक्षसोऽधितिष्ठति यो नरस्तस्या गृहे रात्रिं निवसति तं निर्दयं मारयति स क्रव्यादिति श्रुत्वा तद्भयत्रस्तहृदयो नरमोहिन्यासक्तचित्तः कमलाकरोऽवन्तीन् प्राप्य तददृष्टकौतुकं बिक्र-मायाऽकथयत्॥१६॥

नर मोहिनी के घर में एक राक्षस रहता है और वह राक्षस जो कोई नरमोहिनी के घर रात्रि में रहे उसको निर्दयता से मार डालता है यह सुन कर उसके भय से त्रस्त हो गया है हृदय जिसका, और नरमोहिनी में आसक्त हो रहा है चित्त जिसका, ऐंसे कमलाकर ने उज्जैन आकर वह देखी हुई अपूर्व घटना विक्रमादित्य से कही।

राजाप्याकर्ण्य कमलाकरोक्तं तेनैव सह कान्तिपुरीं गतस्तत्र नरमोहिनीगृहे स्थितोऽभ्यायातेन राक्षसेन संयुध्याऽवधीतं कौणपं सा कन्या चाह प्रामारराण्महासत्त्व त्वच्छौण्डीर्यनिर्जितास्मि दासी त्वमेव मे शरणं, राजा त्वाह महावदान्यः पुरोहितपुत्राऽऽशयं विदित्वा यदि भद्रे मत्प्रियकरी त्वं.तर्हि कमलाकरं भजेति तां तस्मै दत्त्वा पुनः प्रत्ययादुज्जयिनीम्॥१७॥

राजा भी कमलाकर का कहा हुआ सुन उसी के साथ कान्तिपुरी गया। वहाँ पर नरमोहिनी के घर में ठहरा और अभिलाषा से आये हुए राक्षस के साथ युद्ध कर उस राक्षस को मार डाला, तब उस कन्या ने कहा कि हे महापराक्रमी पंवार राजा! मैं आपके पराक्रम से जीती हुई दासी हूँ, मेरे शरण दाता आप ही हैं। तब बड़े दातार राजा ने पुरोहित के पुत्र का अभिप्राय जानकर कहा कि हे कल्याणी! यदि तू मेरा अभीष्ट करने वाली है तो कमलाकर को प्राप्त हो। इस प्रकार वह नरमोहिनी उस कमलाकर को देकर वापस उज्जैन आया।

एकदैकेन योगिना सह संगत्या तदुक्तविधिना जपहोमादि चकार ततस्तर्पितहुतभुङ्निःसृतं महारसायनविधायि फलं वणिक्पथेन गच्छता राज्ञा याचमानाय विप्रायाऽऽमवायिने विक्षोभं पुत्रायेव दत्तम्॥१८॥

एक समय विक्रमादित्य ने किसी योगी की संगति से उसकी बताई विधि के अनुसार जप होम आदि किये जिनसे संतुष्ट हुए अग्नि से बड़ा

रसायन करने वाला फल निकला। जिसको बाजार के मार्ग से जाते हुए राजा ने महारोगी ब्राह्मण के माँगने पर जैसे पुत्र को दे तद्वत् बिना कष्ट के उस ब्राह्मण को दे दिया।

कदाचिदेकाकी पर्यटन् विक्रमादित्यः क्वापि गिरौ निधानसंपादकमुखादित्थं श्रुतवान्समुद्रान्तरे राक्षसद्वीपे राक्षसो राजा मानुषी प्रजा वर्तते तत्र प्रजाभी राक्षसस्य भोजनाय प्रत्यहमेकः पुरुषः कल्पितस्तत्र मम प्राग्भवमित्रपुत्रस्याद्य मरणावसरसंभवस्तस्य दुःखं ममेति॥१९॥

किसी समय अकेले विचरते हुए विक्रमादित्य ने किसी पर्वत में किसी वस्तु का सम्पादन करने वाले के मुख से यह सुना कि समुद्रान्तर (इस समुद्र से दूसरे समुद्र) के राक्षसद्वीप में राक्षस तो राजा और मानुषी प्रजा है। वहाँ पर प्रजा ने राक्षस के भोजनार्थ प्रतिदिन एक मनुष्य देने का संकल्प कर रखा है जिसमें आज मेरे पुराने मित्र के पुत्र के मरने की पूरी सम्भावना है जिसका मुझे दुःख है;

तच्छ्रुत्वैव परमदयालुर्विक्रमो योगपादुकाभ्यां वाऽग्निकोकिलनामाभ्यां वेतालाभ्यां वाऽन्यतरेण वा केनचिदुपायेन तद्द्वीपेगत्वा सायन्तने राक्षसभुवनपरशिलायां निविष्टं पित्रादिबन्धुभिर्निसृष्टं मरणभयेनोद्विग्नं पुरुषं तं दृष्ट्वा गान्धर्वसेनिराह॥ २०॥

यह सुनते ही परम दयालु विक्रमादित्य योग पादुकाओं से अथवा अग्नि और कोकिल नामक बेतालों से या किसी और ही उपाय से उस द्वीप में जा कर सायंकाल के समय में पिता आदि बन्धुओं द्वारा घर के बाहर निकाले गए और राक्षस के घर के बाहर की एक वधशिला पर बैठे हुए और मरने के डर से घबराये हुए उस पुरुष को देखकर गन्धर्वसेन का पुत्र (विक्रम) बोला।

भो महाभाग याहि त्वं निःशङ्कमत्राहं तिष्ठामि कस्त्वं कस्मा न्म्रियस इत्याद्युक्त्वा तमप्रैषीद्राक्षसेन चायं हृष्टवदनो दृष्टस्तत आह कस्त्वं सत्त्वशिरोमणे मरणादपि यन्न विभेषि, विक्रमेणोक्तं किं मत्स्वरूपेण त्वया क्रियते गृहाण भक्ष्यं यद्व्यर्थयायिनोपघनेन सफलं गम्यते परकृते तन्मेलय मे प्रियतमं मित्र दीनार्थमरणसंज्ञकं ततो वरं ब्रूहीति राक्षसोक्तं निशम्य गाधर्वसेनिनोचे नोचेद्दीनवधमिच्छसि तुष्टश्चेत्त्वमद्यावधि

प्राणपुद्गलयोर्वियोगो न कार्यस्त्वया दीनानामिति राक्षसेन च स्वीकृतमित्थं तद्द्वीपप्रजानां प्राणाभयं स्वप्राणव्ययेन दत्त्वा प्रत्यागादवन्तीं प्रामारराड्विक्रमाऽर्यमा ॥२१ ॥

हे महाभाग! तू बेधड़क चला जा। यहाँ पर मैं बैठता हूँ। तू कौन है? और क्यों मरता है? इत्यादि कह कर उसको विदा किया और राक्षस ने इस विक्रम को प्रसन्न वदन देखकर कहा कि हे पराक्रमियों में शिरोमणि! तू कौन है? जो मरने से भी नहीं डरता। विक्रम ने कहा मेरे स्वरूप ज्ञान से तुमको क्या करना है अपना भक्ष्य लो जो शरीर व्यर्थ ही चला जाने वाला है वह आज परोपकार से सफल हो जाए। इस मेरे अत्यन्त प्यारे शरीर मित्र को जो एक दीन के अर्थ मरण संज्ञक (देने के लिए मरकर मुर्दा कहाने वाला) है! लो तब राक्षस ने कहा मैं तुझ पर प्रसन्न हुआ 'वर माँग'। यह राक्षस का कहना सुनकर गंधर्वसेन का पुत्र (विक्रम) बोला कि यदि दीन का वध नहीं चाहता है और मेरे पर प्रसन्न है तो आज से दीनों का वध मत करना। यह बात राक्षस ने मान ली। इस प्रकार अपने प्राणों के व्यय से उस द्वीप की प्रजा को जीवन का अभयदान देकर पंवार राजा विक्रमादित्य वापस उज्जैन नगरी में आया।

इतिश्री वंशभास्करे महाचम्पूके पूर्वायणे चतुर्थ राशौ बीतिहोत्र-चण्डासिबंशवर्णनाऽन्तर्गतप्रामारराजविक्रमचरित्रे स्वार्थसमुद्रदत्तरत्न-चतुष्टय ब्राह्मणाऽर्पणस्वपुत्रमारकब्राह्मणदेवदत्तसन्मानद्वीपान्तर-गतनृपस्वशिरश्छेदलब्धदेवीबरनृयुग्म प्रत्युज्जीवनस्वोत्तमाङ्ग कर्तनप्राप्त-भगतीवरकाश्मीरकासारपूरणकनकपुरुषानुपादानकान्तिपुरीस्थसामान्य-वनिता नरमोहिन्यधिष्ठितरक्षोनिपातनकमलाकरार्थतद्वितरणमहारसायन-विधायिफल रङ्कनिवेदनस्वप्राणत्यागराक्षसद्वीपसर्वप्रजाप्राणरक्षणं चतुर्थो मयूखः ॥४॥ आदितस्त्रयोदशोत्तरशततमः ॥११३ ॥

श्री वंशभास्कर महाचम्पू की चौथी राशि में अग्निकुल चहुवान वंश के वर्णन बीच पंवारराज विक्रमादित्य के चरित्र में अपने लिये समुद्र के भेजे हुए चारों रत्न ब्राह्मण को दे देना, अपने पुत्र के मारने वाले ब्राह्मण देवदत्त का सन्मान करना, द्वीप द्वीपान्तर में जाकर राजा विक्रम के मस्तक छेदन से भगवती के वरदान पाने से स्त्री पुरुष के जोड़े का राजीवन होना, अपने मस्तक के काटने से भगवती का वरदान होकर काश्मीर देश का तालाब

भरना, और सुवर्ण पुरुष का दान करना, कान्तिपुरी में सामान्य स्त्री नरमोहिनी पर चढ़े हुए राक्षस का नाश कर वह स्त्री कमलाकर को देना, बड़े रसायन करने वाला फल कंगाल को दे देना, अपने प्राणों के त्याग से राक्षस द्वीप की प्रजा के प्राण बचाने का चौथा मयूख समाप्त हुआ। आदि से एक सौ तेरह मयूख हुए।

गीर्वाणभाषा

अचरणगद्यम्

कश्चिदुज्जयिण्यामतीतप्रमाणस्वापतेयपतेर्वणिज आत्मजः पुरन्दरनामाऽऽसीत् स पितरि मृते सद्व्यवहारेण धनव्ययमकार्षीद्बन्धुभिरपीत्थं निवारितो लक्ष्मीः पुरुषस्य महत्त्वं यां जगदम्बां प्रसूयोदन्वानपि रत्नाकरो वधूकृत्य मधुजि त्रिलोकीशो मातृकृत्य कन्दर्पो जगच्चित्तानन्दनो भगिनीकृत्य चाऽलक्ष्मी रुद्दालकक्रोडक्रीडनकं बभूव, यस्यां सद्मनि स्थितायामालस्यं स्थिरतां, चापल्य मुद्योगितां, मूकत्वं मितभाषितां, धौर्त्यं चतुरतां, पात्राऽपात्रविवेकत्वशून्यत्व मुदारतामवाप्य महादोषा अपि गुणीभवेयुरिति च॥१॥

उज्जैन नगरी में कोई एक अथाह धन वाले सेठ का पुरन्दर नामक पुत्र था। उसने पिता के मर जाने पर दुराचार से धन खर्च किया। बान्धव लोगों ने भी उसे कई प्रकार से मना किया कि पुरुष का बड़प्पन लक्ष्मी ही है। जिस जगत की माता लक्ष्मी को उत्पन्न करके समुद्र तो रत्नाकर हुआ, स्त्री बनाकर विष्णु तीन लोक का नाथ हुआ, माता बनाकर कामदेव संसार के चित्त में आनन्द करने वाला हुआ और बहन बनाकर अलक्ष्मी उद्दालक ऋषि के अङ्क (गोद) में क्रीड़ा करने वाली हुई है जिस लक्ष्मी के घर में स्थित होने पर आलस्य तो धीरता, चपलता उद्योगी होना, मूकता (किसी से न बोलना) मितभाषी होना, धूर्त्तता चतुराई और योग्य अयोग्य का ज्ञान न होना उदारता होकर बड़े-बड़े दोष भी गुण रूप हो जाते हैं।

स तु स्वजनवचनरचनमनादृत्योवाच भवितव्यं येन तेन तु भाव्यमेव लाङ्गलिफलाम्बुवद्येन च न भाव्यं कदापि तेन नैव भवनीयं खकुसुमवदिति सर्वांस्तृणीकृत्य दानभोगादिभिः सर्वं बसु क्षयं प्रापयित्वा निर्धनः पुरन्दर आलुलोच वनमेव श्रेयो न पुनर्निर्धनत्वेन बन्धुवर्गेष्वायुर्व्यय इति॥२॥

उस पुरन्दर ने तो आत्मीय जनों के वचनों का अनादर करके कहा कि जो होने वाला है वह तो होएगा ही जैसे नारियल के फल में जल, और जो नहीं होने का है वह कदापि न होगा जैसे आकाश में पुष्प, इस प्रकार सब को तृणवत् (तुच्छ) समझ कर सम्पूर्ण धन का दान भोग आदि से नाशकर दरिद्री होकर वह पुरन्दर सोचने लगा कि अब तो बनवास ही अच्छा है और दरिद्री होकर बान्धव वर्गों में जन्म बिताना अच्छा नहीं।

ततः पुरन्दरो नीवृदन्तरं गत्वेतस्ततो परिभ्रमन्मलयाचलोपान्त-पुटभेदनं प्राप, तत्र त्रियामायां कस्या अपि स्त्रियाः सकरुणवचनै रोदनं श्रुत्वा प्रातर्लोकानपृच्छत्तैरुक्तः प्रत्यहमेवेयं रोदित्येतदरिष्टशङ्कया निवेशनमेव व्याकुलीभूतमस्तीति स प्रत्यागत्य विक्रमायाऽवदद्राजा च तत्र गत्वा रात्रौ मण्डलाग्रद्वितीयो रोदनमाकर्ण्याऽनु तदन्तर्वन गतस्तत्राऽबलां काष्टैस्ताडयन्तमेकं भीषणपुरुषं दृष्ट्वाऽऽह रे दुष्ट किं स्त्रीवधं करोषि बलदिदर्शयिषा ते तर्ह्यागच्छ योद्धुमिति॥३॥

एक दिन वह पुरन्दर देशान्तर (दूसरे देश) में जाकर इधर-उधर विचरता हुआ मलयाचल पर्वत के समीप के नगर में पहुँचा। वहाँ पर उसने रात्रि के समय किसी एक स्त्री का रुदन करुणा सहित वचनों के साथ सुनकर प्रातःकाल में लोगों से पूछा। उन लोगों ने कहा यह तो प्रतिदिन ही रोती है और इसके दुःख से सब घर भर के मनुष्य घबरा रहे हैं। उस पुरन्दर ने पीछे आ कर विक्रमादित्य से कहा और खड्ग ही है दूसरा साथी जिसके ऐसा विक्रम वहाँ पर जाकर रुदन सुन कर उसी रुदन के अनुसार उस वन में गया और वहाँ पर उस अबला को लकड़ियों से मारते हुए एक भयानक पुरुष को देख कर बोला कि अरे दुष्ट! क्यों स्त्री का वध कर रहा है, यदि तेरी बल दिखाने की इच्छा हो तो लड़ने को आ।

ततस्तयोर्युद्धे समारब्धे विक्रमार्केण स दुष्टपुरुषो हतः सा चाऽऽहाऽबला भो वीराहं सुखिनी जाता त्वत्प्रसादेन नरेन्द्रेण कासि त्वमिति पुष्टाऽब्रबीदहं ब्राह्मणी मम पतिर्बाढं मय्यासक्तोपि मम नाऽरोचत तदा स तेनैव दुःखेन मृतः क्रव्यादश्च जातः सोऽयं तेन द्वेषेण मां ताडयति प्रत्यहं सोऽद्य त्वयाहतोऽहं तु त्वादृशस्योपकारं कर्तुमवीराऽनीश्वराऽस्मि परं मदागारे नव कलशाः पुरटपूर्णाःसन्ति तान्गृहाणेत्युत्क्वाऽऽनयामास

विक्रमस्तान्नवा ऽपिदुर्लभषोड़श वर्णसुवर्णकुम्भान्पुरन्दराय दत्त्वा स्वपुरीं प्रत्यैत् ॥४॥

इसके बाद उन दोनों की लड़ाई शुरू होने पर विक्रमादित्य ने उस दुष्ट पुरुष को मार डाला तब उस अबला ने कहा कि हे वीर! मैं आप की कृपा से सुखी हुई। राजा ने कहा तू कौन है? इस प्रकार पूछने पर स्त्री बोली कि मैं ब्राह्मणी हूँ। मेरा पति मुझ पर बहुत ही आसक्त था तो भी मैं उसे नहीं चाहती थी। तब उसी दुःख से वह मरा और राक्षस हुआ। वही यह उसी द्वेष से प्रतिदिन मुझे मारता है जिसको आपने आज मारा। मैं तो आप जैसे का प्रत्युपकार करने में असमर्थ गरीब हूँ परन्तु मेरे घर में सुवर्ण से भरे हुए नौ घड़े हैं सो लीजिये। इतना कह कर वह ले आई। विक्रमादित्य उन नौ ही कुन्दन के समान सुवर्ण से भरे हुए घड़े पुरन्दर को देकर वापस उज्जैन आया।

एकदा वनायुजविनीतवाजिनं नर्तयन्विजने नखरायुधानां पोत्रिणां च फालवेगं विफलीकुर्वन बिक्रमो वने वर्षासु विहरन्नदीपूरेण ह्रियमाणं प्रियाद्वितीयं बहुविप्लवविपन्नं वार्बहिर्निष्कसत्फूत्कुर्वन्तमन्तरन्तर्निमज्ज-द्बुद्बुदयन्तं पुरुषं ददर्श ॥५॥

एक समय बनायु देश के सुशिक्षित घोड़े को एकान्त में नचाते हुए, वन में सिंहों की छलांगे और सूकरों (सूरों) के वेग को निष्फल करते हुए, वर्षा काल में विचरते हुए, विक्रमादित्य ने नदी के प्रवाह में बहते हुए स्त्री सहित बहुत उलटा-पलटी से घबराये हुए, पानी से ऊपर निकलने पर फूत्कार करते हुए, थोड़ी-थोड़ी दूरी पर डूबते हुए बुदबुदे के समान पुरुष को देखा।

तन्नृयुग्मं कोपि दयादेवीनिरीक्षितोऽन्यो जनो न निस्सार याञ्चकार तदा महानुकम्पोपेतो गान्धर्वसेनिस्तुरगमुत्सृज्य कर्षूपूरे प्रविश्य स्त्रिया सहितं तं मानुषं मध्येनदितटं निन्ये, स चाऽस्मैसर्वकामसम्पादिकां मूलिकामदात्तामादाय प्रत्यागच्छति विक्रमेतां कश्चिद्दीनो ययाचे तदा तस्मै एव दुःस्थाय तृणमिव तां मूलिकां विसृज्य पुरीं प्रत्यैत्प्रमारर्षभः ॥६॥

उस स्त्री-पुरुष के जोड़े को किसी भी दयावान् पुरुष ने नहीं निकाला तब बड़ी कृपा करके गन्धर्वसेन का पुत्र (विक्रम) घोड़े को छोड़ नदी के प्रवाह में धंसा और स्त्री सहित पुरुष को नदी के तीर पर ले आया। तब उस

पुरुष ने सब कामों को सिद्ध करने वाली एक जड़ी विक्रम को दी। उस जड़ी को लेकर विक्रमादित्य के वापस लौटते समय एक गरीब ने वह जड़ी माँगी तब उसी दीन दुखिया को वह जड़ी तृणवत् देकर पंवार राजा वापस उज्जैन नगरी में आया।

कदाचिदेकाकी क्वापि गहने विचरन विक्रमः सिद्धं ददर्श प्रणनाम च तेनोचेऽवन्त्यधीश गान्धर्वसेने कुतस्त्वमागत इति शृणावता राज्ञा च विस्मितेनोचे कथं ज्ञातोहमिति सिद्धः पुनरुवाच पुरावऽन्त्यां दृष्टस्त्वं यदि न दृष्टोऽभविष्यस्तर्हि योगबलेनाऽप्यज्ञास्यं परंतु भवादृशा स्कन्धावारं विहायैकाकिना ना ऽटनीयं विजने सर्वथेदृशमटनमनुचितमिलाभृतो यद्राज्यं चिन्तामयं वैरसन्दानितमविश्वासपदमतस्तत्परोक्षीकुर्वतो भूनेतुर्व्य-सनायैव स्यादिति ॥७॥

एक समय किसी वन में अकेले घूमते हुए विक्रमादित्य ने एक सिद्ध को देखा और उसको प्रणाम किया उसने कहा हे उज्जैन के पति गंधर्वसेन के पुत्र! तुम कहाँ से आये? यह सुन कर आश्चर्य में होकर राजा ने कहा कि महाराज मुझको आप ने कैसे पहचाना? तब सिद्ध ने कहा मैंने तुमको पहिले उज्जैन में देखा है और नहीं भी देखा हो तो भी योगबल से जान सकता हूँ। परंतु आप जैसों का राजधानी छोड़कर निर्जन वन में इस तरह अकेले भटकना कदापि उचित नहीं है क्योंकि राजा का राज्य सदा चिन्ता से भरा हुआ, विरोध से बँधा हुआ और जिसका कभी भरोसा नहीं ऐसा है। इस कारण उस राज्य को परोक्ष (परपूठ) छोड़ कर भ्रमण करना केवल विपत्ति के लिये ही है।

विक्रमः सिद्धमुवाच यद्यवश्यंभाविनो व्यसनस्य प्रतीकारोऽ-भविष्यत्तदा नल राम युधिष्टिरा ऽऽदयो राज्यलक्ष्मीविरहिणो नाभविष्यन्नतो मम का राज्यचिन्ता श्रवणीया चैका पुरातनी कथा यत्पञ्चभिर्यक्षैर्बन्धुच्छिन्नराज्यायाऽपि जयशेखराय नूतन राज्यं दत्तमिति ॥८॥

विक्रमादित्य ने सिद्ध से कहा कि यदि आने वाली विपत्ति का कोई प्रतीकार (इलाज) हो तो नल, राम और युधिष्ठिर आदि राज्य लक्ष्मी के वियोगी नहीं होते। इस कारण मैं क्यों राज्य की चिन्ता करूँ फिर एक प्राचीन

कथा भी है कि भाइयों के राज्य छीन लेने पर भी जयशेखर को पाँच यक्षों (किन्नरों) ने नया राज्य दिया।

यथा पद्मिनीखण्डनाम्नि पुरे जयशेखरो नाम राजा बन्धुभिः सम्भूय राज्यान्निस्सारितो महिष्या सह गच्छन्निशि क्वचिन्निवेशनपरिसरस्थतरोरधः स्थितवांस्तद्वृक्षे च पञ्च यक्षाः स्थायिनोमिथः संलापमारब्धवन्तः प्रातरेवास्य पुटभेदनस्य राजा जीर्णालंकारमिव पञ्चतां यातस्तदियम-मृतफला सुस्वादुराज्यवल्ली तं राजतरुमावेष्टितेति॥९॥

(यह कथा ऐसे है।) पद्मिनीखण्ड नामक नगर में जयशेखर नामक राजा को भाई लोगों ने इकट्ठे होकर राज्य से निकाल दिया। तब रानी सहित वह चलता हुआ रात्रि में कहीं पर एक घर के समीप लगे हुए वृक्ष के नीचे बैठा। उस वृक्ष में रहने वाले पाँच यक्ष आपस में बातें करने लगे कि प्रातःकाल ही इस नगर का राजा पुराने गहने के समान पंचत्व को प्राप्त होगा अर्थात् मर जाएगा। तब यह अमृत फलवाली स्वादिष्ट राज्य रूपी लता कौनसे राज्य वृक्ष के लिपटेगी।

तेषु पञ्चस्वेवं विवदमानेष्वेकेनोचे येनाऽस्मदधिष्ठानाऽनोकहाऽधः स्थीयते तमेव कल्पपादपं प्रातर्वेष्टितैतन्नगरस्कन्धावारवल्लीति जय-शेखरोप्यधःस्थो निशम्य तदोक्तं महिषीसखस्तदेव पत्तनमियाय तत्रत्यश्च राजानुत्पन्नप्रजो गतरात्रावेव ममार ततो मन्त्रिभिः प्रत्यूषकाले कञ्चन-मायान्तमवेक्षमार्णेरयं जयशेखर एव तन्नीवृदाधिपत्येऽभिषिक्तो नरेन्द्रतां प्रापितः॥१०॥

इस प्रकार उन पाँचों ही विवाद करने वालों में ऐसे एक ने कहा कि जो कोई हम लोगों के निवास के वृक्ष के नीचे ठहरा है उसी कल्पवृक्ष से प्रातःकाल इस नगर की राजधानी रूप लता लिपटेगी। तब नीचे बैठे हुए जयशेखर ने यह बात सुनी और रानी ही है मित्र जिसके, अर्थात् रानी के साथ उसी नगर में गया और वहाँ का सन्तानहीन राजा रात्रि ही में मर गया था। तब प्रातःकाल में किसी नये आये हुए को ढूँढने वाले मंत्री लोगों ने इस जयशेखर को ही उस देश के स्वामिपन का अभिषेक कर नृपता प्रदान की।

एवमतीते बह्वनेहसि तद्देशसीमास्पर्द्धिभिर्भुजङ्गैरभ्यागत्य परिबेष्ठा च तदधिष्टानं रुरुधेऽयं तु जयशेखरस्तथापि प्रसन्नसुखललितलपनो

राज्ञ्या सह द्यूतरसिकोऽक्षानेवाऽदीव्यत्तदा महिष्योचे नाथ परचक्रे समायाते कुतोऽप्रयत्नपरेण स्थीयते तदाकर्ण्य जयशेखरेण जगदे मानिनि! किमस्मत्प्रयत्नेन राज्यं त्विदं तन्न्यग्रोधतरुस्थैः पञ्चभि र्यक्षैर्दत्तं तैरेव पुनः प्रतिहर्तुं शक्यते भियं विहाय मयेव त्वयापि दुरोदरविजिगीषा विधातव्या पातनीयाश्चाऽक्षा यद्भावि तेन तु भाव्यमेवेति॥११॥

इस प्रकार बहुत से दिन व्यतीत होने पर उस देश की सीमा पर द्वेष करने वाले राजाओं ने आकर उस राजधानी को चारों ओर से घेर कर रोक लिया। तभी यह जयशेखर तो प्रसन्नता और ललित सम्भाषणपूर्वक रानी के साथ द्यूतरसिक होकर जुआ ही खेलता रहा, तब रानी ने कहा कि हे स्वामी! शत्रुओं की सेना आ गई और आप बिना उपाय कैसे बैठे हो? तब स्त्री के वचन सुनकर जयशेखर ने कहा कि हे मानिनी! अपने प्रयत्न से क्या है? यह राज्य तो उस वटवृक्ष में रहने वाले पाँचों यक्षों का दिया हुआ है। सो वे ही इन सबको दूर करने में समर्थ हैं। इस कारण तू भी निडर होकर मेरे ही साथ द्यूत (जुआ) में जीतने की इच्छा कर और पासे पटक। जो होने वाला है वह तो होगा ही।

एतज्जयशेखरगदितमाकर्ण्य यक्षाणामप्यऽस्मद्दत्तं राज्यमिति चिन्ता विहिता ततस्तेषां प्रभावेण तत्पुरचित्रस्थगज रथाऽर्व पादाति सजीवीभूय कृत्वाऽभिसम्पातं निश्शेषा परिपंथिचमूर्निन्ये यमक्षयमेवं तस्मै साम्राज्यं दत्त्वा तद्गोचरीभूय च ते यक्षाः प्रत्यक्षमूचुर्जयशेखरमहिषीम्॥१२॥

जयशेखर का यह कहना सुन कर यक्षों को भी लगा कि हम लोगों का दिया राज्य है इस कारण चिन्ता हुई। तब उन्हीं यक्षों ने अपने प्रभाव से उस नगर के चित्र में लिखे हुए हाथी, रथ, घोड़े और पैदलों को सजीवन कर युद्ध में शत्रुओं की सम्पूर्ण सेना का नाश किया। इस प्रकार अक्षय सार्वभौम राज्य उस जयशेखर को दिया और वे पाँचों यक्ष सामने आकर जयशेखर की रानी से प्रत्यक्ष बोले।

हे भद्र पुरा वयं पञ्च शफरा अभवाम तानस्मान्परिशुष्यत्तटा-कादेकः कुलालो निष्कास्य कृपया बहुलाऽपे कासारे स्थापितवांस्ते तु वयं कालेन यक्षत्वमाप्ताः स्म स च चक्रजीवको राजाऽयं जयशेखरस्ते भर्ताऽभूत्तेन प्रागुपकारिणेऽस्मै राज्यमस्माभिरपि दत्तमिति निगद्य ते यक्षा अपि जग्मुः

स्वाश्रयं बहुपादमनोकहमि तिभाविनमुल्लङ्घ्य किं कर्तुं कः शक्नोत्यतो दूराऽऽगतस्याऽपि किं मे राज्यभयमिति निशम्य तुष्टेन सिद्धेन विक्रमाय दत्तमेकं चिंतारत्नं तदादाय प्रत्यागच्छति प्रामारराजि कश्चिद्दुर्विधस्तद्रत्नमयाचत राजापि तस्मै तृणमिव तदा तददात्॥१३॥

हे कल्याणी! पहिले हम पाँचों मत्स्य (मच्छ) थे। हम पाँचों को सूख जाने वाले तालाब से एक कुम्हार ने निकाल कर कृपा करके बहुत से जल वाले तालाब में छोड़ा, वहाँ ही हम काल पाकर यक्षपन को प्राप्त हुए हैं और वह कुम्हार यह तेरा पति राजा जयशेखर हुआ है। इस कारण पूर्व समय में उपकार करने वाले इसे हम लोगों ने ही राज्य दिया है। यह कहकर वे पाँचों यक्ष भी अपने रहने के स्थान वटवृक्ष को गये। इस प्रकार जो होने वाली बात है उस का उल्लंघन करके कौन पुरुष क्या करने को समर्थ है। इस कारण दूर आ जाने वाले मुझे भी क्या राज्य का डर है। यह सुनकर उस सिद्ध ने प्रसन्न होकर एक चिन्तामणि रत्न विक्रमादित्य को दिया। उसको लेकर वापस आते हुए राजा से किसी दरिद्री ने माँग लिया और उस राजा ने भी उस रत्न को तृणवत् दे दिया।

कदाचिद्धंसरोमपूर्णोपधानायां शय्यायां सुप्तस्य विक्रमस्य दुःस्वप्नोऽभवत्तत उत्थाय प्रातः समाजे स तदकथयत्समज्यया चोचे राजन्नीदृक् स्वप्नं तु किञ्चिदरिष्टं सूचयतीति तच्छान्त्यै दानमनुष्ठेयमित्याकर्ण्य महावदान्योऽनित्यानि शरीराण्यनित्या एव सम्पदोऽनित्यमेवैन्द्रियं सौख्यमिति संचिन्त्य भाण्डागाराण्यनररीकारयित्वोज्जयिन्यां डिण्डिमघोषणां प्रेरयामास तदित्थमेकवारं यद्यस्मै रोचते तदेव स गृह्णातु कोशेभ्य इति दिनत्रयं यावद्दुःस्वप्नवैफल्याय परम्परानिचितनानास्वापतेयकोशानलुण्टयत्पौरैर्ज्जनपदैश्च लोकैरहो वदान्यता विक्रमस्य॥१४॥

किसी समय हंस के केशों से भरे हुए तकिये वाली शय्या में सोते हुए विक्रमादित्य को दुःस्वप्न हुआ, तब उठकर प्रातःकाल सभा में विक्रम ने वह स्वप्न कहा। सभा ने कहा कि महाराज! ऐसा स्वप्न तो किसी अशुभ को बताने वाला है। इस कारण उस की शान्ति के अर्थ दान करना चाहिये, यह सुन कर बड़े दातार विक्रमादित्य ने शरीर, सम्पत्ति और इन्द्रियों के सुख ये सब अनित्य (नाश होने वाले) हैं, ऐसा विचार करके खजानों के किवाड़

खुलवा दिये और उज्जैन में इस प्रकार डूंडी पिटवा दी कि जिस को जो वस्तु अच्छी लगे उसी वस्तु को वह खजाने में से ले लेवै, इस प्रकार तीन दिन तक उस दुःस्वप्न को विफल करने के लिए पुश्तों (पीढ़ियों) से इकट्ठे हुए अनेक प्रकार के धन के भण्डार लुटाए तब देशी लोगों ने विक्रमादित्य की उदारता का आश्चर्य किया।

एकदा वराहमिहिरादिभिर्ज्योतिर्विद्भिरुक्ते शनिरोहिणीशकटभेदनिमित्ते द्वादश वार्षिकदुर्भिक्षागमे केनचिदायातसिद्धेनैवमूचे राजन्ने-तद्दुर्भिक्षवैफल्याय द्वात्रिंश ल्लक्षणधरो नरः स्वशिरो बलिं दद्यात्तर्ह्येव तद्व्यर्थं भवेदन्यथा न कापि तन्निष्फलीकरणोपाय इतिनिशम्य सर्वप्रजाकल्पद्रुमः परमकारुणिको विक्रमः स्वोत्तमाङ्गमेव च्छेत्तुरमारेभे प्रजादुःखासहिष्णु-रिति तत्सत्वं विविच्य तत्कालमेव देवोऽपि ववर्ष भाद्रपदविशदपक्ष-गतराधाष्टम्यां त्वन्नीवृति माभूत् कदापि दुर्भिक्षतेति देवर्षयः सत्वप्रसन्ना वरं च दुदुस्ततः प्रभृत्याऽऽवन्त्येषु न प्रायोऽवग्राहप्रवृत्तिरित्यपि किंवदन्ती-त्यहो विक्रमकारुण्यम्॥१५॥

एकदा चरमाऽचलचुम्बिनि रवौ मृगयारसिको मर्दितमृगेन्द्रो विक्रम एकाकी निजनगरं प्रति प्रस्थितवांस्तत्रैवाऽकाण्डे नृपतुरङ्गं होजितेनेव च्छदादिवितानच्छादकेन जम्बूद्वीपवेशवधूपारावारचण्डातकचालकेन भुवनभयङ्करभाङ्कारभीमेन पांसुपटलप्रचण्डेन महिलामेदिनीललाट-पट्टिकावर्त्मव्यामोहकरेण वहद्वाहधाराप्रवाहतिर्यक्करणपण्डितेन जगत्प्रा-णेनाऽप्यऽकस्मादेवाऽभिमुखं ववे॥१६॥

एक समय वराहमिहिर आदि ज्योतिषियों के कहे शनिश्चर से रोहिणी नक्षत्र का शकट टूटने (रोहिणी नक्षत्र शकट के आकार का है जिसके मध्य में शनिश्चर के आने से शनि रोहिणी शकट भेद योग होता है जिसका फल बारह वर्ष दुर्भिक्ष पड़ने का है (उसी योग के आने) से होने वाले बारह वर्ष का दुर्भिक्ष आने पर किसी आये हुए सिद्ध ने ऐसा कहा कि हे राजा! इस दुर्भिक्ष के मिटाने को बत्तीस लक्षणों को धारण करने वाला पुरुष अपने सिर का बलिदान दे तभी यह दुर्भिक्ष मिटे, नहीं तो कोई भी दूसरा उपाय इसके मिटाने का नहीं है। यह सुनकर सम्पूर्ण प्रजा का कल्पवृक्ष बड़ी करुणा करने वाला और प्रजा के दुःख को नहीं सहने वाला, विक्रमादित्य अपना सिर

काटने लगा ही था कि विक्रम के सत्त्व का विचार करके उसी समय अर्थात् भाद्रपद मास के शुक्ल पक्ष की राधाऽष्टमी को मेघ भी वर्षा करने लगा और विक्रम के सत्त्व से प्रसन्न हुए देवता और ऋषियों ने वरदान दिया कि तेरे देश में कभी भी दुर्भिक्ष नहीं पड़ेगा। तब से उज्जैन के देशों में प्राय: अनावृष्टि नहीं होती। ऐसी भी जनश्रुति (दंतकथा) है और यह बड़ी ही आश्चर्यवाली विक्रमादित्य की करुणा है। एक दिन सूर्यनारायण के अस्ताचल पर्वत पर पहुँचते समय मृगया (शिकार) के रसिक विक्रमादित्य सिंहों को मार कर अकेला अपनी नगरी को वापस आ रहा था कि उसी समय, समय के बिना ही विक्रम के घोड़े के वेग से जो जीता गया हो, ऐसा पत्ते आदि के डेरे लगाने वाला, अथवा विक्रम के घोड़े के वेग से हारकर लज्जित होकर अपना मुख छिपाने के लिए पत्तों का डेरा तानने वाला जंबू द्वीप रूपी घर की स्त्री (पृथ्वी) के समुद्र रूपी लहंगे (घाघरा) को चलायमान करने वाला, संसार में भय करने वाले भाङ्कार शब्द से डराने वाला, धूलि के समूह से प्रचण्ड स्त्री रूपी पृथ्वी के ललाट रूपी पटड़ी पर मार्ग भुलाने वाला, बहती हुई नदी की धारा के वेग को तिरछा कर देने में समक्ष ऐसा वायु अचानक ही सम्मुख बहने लगा।

यगुपदेव स्पष्टजडीकरणकरकाकलापैस्तडित्तरुणीसमालिङ्गितैर्विश्वबधिरीकरणमन्त्रनिर्घातैः कुलीर केशरि कालोत्थैरिव सान्द्रविस्तीर्णैः स्वैरिणीजनाभिसरणसामग्रीसंपत्तिसर्वस्वैर्दिनकरदरितदरी द्रोणि गर्त शरणागतडाकिनी प्रेत पुण्यजन प्रियान्धतमसबन्धुभिरुज्जागरितपेचक पिङ्गला परोष्णी प्रमुखसत्त्वैः प्रामारराजध्रुवधैर्यपरीक्षिषिषुभिरिव धाराधरैश्च समुज्जजृम्भिरे॥१७॥

साथ ही अपने स्पर्श मात्र से ही जड़ कर देने वाले ओलों से भरे हुए बिजली रूपी, स्त्री से लिपटे हुए संसार को बहरा करने को मंत्र रूपी, गर्जना वाले जो मानों सावन भादों के समय में उठे हों, वैसी घटाटोप व्यभिचारिणी स्त्रियों के सहेट (संकेत स्थान) पर जाने की सामग्री की सम्पदा के सर्वस्व सूर्य से डरकर, गुफा द्रोणी (पर्वत की खाई) और गड्ढों में शरण गये डाकिनी, पिशाच और राक्षसों के प्यारे घोर अन्धकार के भाई जगा दिये हैं उल्लू (घूघू) कोचर और चमगादड़ (बागळ) आदि प्राणियों को जिन्होंने ऐसे पंवारराजा (विक्रम) के अचल धीरज की परीक्षा लेने की इच्छा वाले मेघों ने भी मुँह फाड़े।

तत्कालोचितविहिताऽवस्थे शनैः सरणसूरौ नरेन्द्रे तत्सव्यककुभि काचिद्वृद्धशूद्री विश्लिष्यत्सर्वाऽवयवसंधिर्मूर्तिमतीव विपत्तिः काष्टनिचयाय समागता करस्त्रस्तव्रश्चनाऽनुत्थितेध्मभारा समाहूतबली पलित यमकिंकरा तृप्तालुस्त्राहीत्याचक्रन्द ॥१८॥

उस समय पण्डित विक्रमादित्य के बांई दिशा में धीरे चलने में ढीली हो गई है सम्पूर्ण अवयवों की सन्धियाँ जिसकी, ऐसी दुःख की मूर्ति लकड़ियों का भार लेने को आई हुई हाथ से गिर पड़ी है कुल्हाड़ी जिसकी, नहीं उठता है लकड़ियों का बोझा जिससे, लेने को आये हैं जीर्ण चाम और सफेद केश रूपी यमराज के दूत जिसको, ऐसी दुःख से घबराई हुई कोई शूद्र जाति की बुढ़िया 'बचाओ रे' ऐसा कहती हुई रोई।

कर्णाऽतिथीभूते तदाक्रन्दे तिर्यक्प्रेरिततुरङ्गेन प्राणिमात्रबन्धुना तत्र गतेनाश्वादवातारि भुजाभ्यामुत्थाप्य तां दीनामर्वन्तमारूढां विधाय बध्वा च दृढं तत्पादावश्वाङ्गं च सा रसनेन समाच्छाद्य च तां पल्याणलग्नकौशेय-नीशारेण स्वयं च शिरोदत्तचर्मफलकः पद्गीभूतो गृहीततदर्ववल्गः शनैः शनैरुज्जयिनीं प्रापिपत्काष्ठाजीवामित्यहो विक्रमदयालुता ॥१९॥

उस का रुदन कान पर पड़ते ही घोड़े को मोड़कर प्राणिमात्र का बन्धु विक्रमादित्य वहाँ पर जा कर घोड़े से उतरा और दोनों हाथों से उस गरीब स्त्री को उठा कर घोड़े पर चढ़ा कर कसनी से उसके दोनों पैर और घोड़े के शरीर को मजबूत बाँध कर, घोड़े के पलाण पर लगे हुए रेशमी गद्दे से उसको ढककर और आप चमड़े की ढाल को सिर पर रख पैदल होकर, उस घोड़े की लगाम पकड़कर, विक्रमादित्य ने उस लकड़ी बेचने वाली को धीरे-धीरे उज्जैन में पहुँचाया। यह आश्चर्य वाली विक्रमादित्य की दयालुता है।

एकदा महाध्वान्तमृगमदाऽनुलिप्तायां यामिन्यां कामिन्यां तास्कर्य-नियमनपरेण च्छन्नजनचर्यादिदृक्षुणा विक्रमेण बाढं भ्रमता रथ्यादूरगते शून्यदेवालये तस्थे तत्रैव समुज्जृम्भिताऽऽसन्नगुडाकेन समवगतसुषुप्त-निश्शेषप्तनिश्शेषपौरलोकेन श्रंस्तरीकृतनागोदेनोपवर्हणीकृताऽऽवरणेन दक्षिणपार्श्वस्थापितमण्डलाग्रलतिकेन शिश्ये च क्षणम् ॥२०॥

एक दिन कस्तूरी रूपी घोर अन्धकार से लिपी हुई कामिनी रूपी रात्रि में, चोरों के नियमों को लिये हुए गुप्तभाव से लोगों की रचना देखने की इच्छा

से भ्रमण करता हुआ विक्रमादित्य मार्ग से दूर एक सूने देवमन्दिर में जा बैठा। वहीं पर जंभाई (उबासी) के लेने से समीप हो रही है नींद जिसके, जान लिया है सम्पूर्ण पुरवासियों का शयन जिसने, ऐसा विक्रमादित्य कमरपेटी को बिछा, ढाल का तकिया लगा कर तलवार को दाहिने पसवाड़े (बगल) में लेकर क्षण भर सोया।

तत्रैव कयाचिद्दिवासूचितसंकेतया प्रथमयौवनोद्भिन्नकामकलहविजयवर्द्धनतिलकितवक्षोजया नियमितनूपुरादिभूषणरणितया-दृङ्निषङ्गनिस्सरत्कटाक्षनिशितनाराचया मत्तमातङ्गगत्या शरणागतमदनमहाराजसाम्राज्यवितरण्या पादप्रक्षेपणप्रहारचक्रितचंडातदोलायमानदेहत्रुट्यत्कटिशङ्कया लोकाऽवलोकनलज्जानिश्शङ्कया कन्दर्पेकातपत्रराज्याऽभिषिक्तया प्राप्ताऽवसरया महाश्रेष्ठिदुहित्रा ज्ञाता-ऽऽगतजारयाऽऽजग्मे ॥२१॥

वहीं पर कोई दिन को तय किये स्थान पर (संकेत स्थान) पहले ही यौवन से उभरे हुए, कामदेव की लड़ाई में विजय बढ़ाने वाले चर्चित हैं स्तन जिसके, वन्ध किया है पायल आदि गहने के बजने (शब्द) को जिसने, नेत्र रूपी तूणीर से निकलते हैं कटाक्ष रूपी तीखे बाण जिसके, मदोन्मत हस्ती के समान चलने वाली, शरण में आये हुए कामदेव महाराज को चक्रवर्ती राज्य देने वाली, चलने में पैर की ठोकर से घूम खाते हुए लहँगे और हिलने वाले शरीर से टूट जाने की शङ्का वाली है कमर जिसकी, लोगों के देख लेने की लाज से निडर, कामदेव के एकछत्र राज्य का किया है अभिषेक जिसने, मिल गया है समय जिसको, जानती है अपने जार का आना जो, ऐसी बड़े सेठ की बेटी आई।

मृदुपदाक्षेपमेत्य प्रविश्य च तन्मंदिरे श्वासप्रवेश निर्गमौ निशम्य स्वोपपतिमागतं सुप्तमवगत्य तद्धिया निद्राणनृपबाहु पार्श्वसंधो प्रविश्य च शलाटुश्रीफलकर्कशाभ्यां तारुण्यकुञ्जरकुम्भाभ्यां स्मरसमिज्जय-सामन्ताभ्यां जगद्वशीकरणचूर्णसमुद्गाभ्यां चूचुकमदनमुद्रोज्झृम्भमाणाभ्यां गाढाऽऽलिङ्गनेनाऽप्यनम्रमुखाभ्यां देहदिव्यलतास्फुरत्फलाभ्यां कस्तूरीपिहितचूचुकरङ्गभेदाभ्यां कन्दर्पक्रीड़ैककन्दुकाभ्यां यौवन बाल्य सूर्योदया ऽस्ता ऽचलाभ्यां युववीरविजयलाभन्युब्जाकृतोज्जवलसार्व-

भौमदुन्दुभिभ्यां हारलता लोमलता मातङ्गवरण्डाभ्यां कामज्वरिजीवनपीयूषघटाभ्यां स्वशिखानालीयन्त्राऽट्टालकाभ्यां मोहनमृगयामहापर्वताभ्यां कुर्पासकावितानमण्डपाभ्यां त्रि बलित्रि वेणी चक्रवाकाभ्यां विरहाऽऽतपवितताऽऽतपत्राभ्यां मध्यतिलकबिपञ्चीतुम्बिकाभ्यां प्रीतिचामीकरनिकषोपलाभ्यां मुक्तावलीतारागणमण्डलाभ्यां युवजनबालक्रीडाभ्रमरकाभ्यां प्रोतुङ्गस्ववक्षोजाभ्यां बामपार्श्वाऽन्तर्वि-शिश्ये विक्रमस्य ॥२२॥

कोमल पैरों की गति को लेकर और उस मन्दिर में घुस कर, श्वास का आना-जाना सुनकर, मानों अपना जार आकर सो गया है ऐसा जानकर, उसी बुद्धि से सोते हुए राजा के भुज और पसवाड़े के बीच (बगल) में घुसकर, बील और नारियल के समान कठोर, जवान हाथी के कुम्भस्थल जैसे, कामदेव की लड़ाई जीतने वाले सामन्त भट, (माण्डलिक राजा) संसार को वश में करने वाले चूर्ण के डिब्बे, चूचुक रूपी कामदेव की छाप करके शोभायमान, गाढ़े आलिङ्गन से भी नहीं होते हैं नीचे मुंह जिनके, शरीर रूपी सुन्दर लता में लगे हुए फल, कस्तूरी के लगने से ही है चूचुकों के रंग का भेद जिन में, कामदेव के खेलने के गेंद, जवानी और लड़कपन रूपी सूर्य के उदय और अस्त होने के पर्वत, जवान वीरों को जीतकर उलटे किये हुए सोने के चक्रवर्ती (संसार भर में बजने से कहीं न रुकने वाले) नगारे, हारलता लोमलता ही है मातङ्ग बरण्ड (लड़ाई के दो हाथियों के बीच का अगड़) जिनके, अर्थात् हारलता लोमलता रूपी अगड़ के हाथी, कामज्वर वालों को जिलाने के अमृत घट, अपनी चोटी रूपी नलिका बेधन यन्त्र की ऊंची छतें, (ग्रहों के देखने के लिए नलिका बेधन यन्त्र सबसे ऊंची छत पर लगाया जाता है) मैथुन रूप मृगया (शिकार) के बड़े पर्वत, कंचुकी के ही हैं वितान (चंदवा) और मण्डप जिनके, त्रिबलि रूपी त्रिवेणी के चकवे, वियोग रूपी घाम के चढ़े हुए छाते, बीच में लगा है तिलक (वीणा के बीच के दंड को तिलक कहते हैं) जिनके ऐसे बीणा के तूंबे, स्नेह रूपी सोने की कसौटी के पत्थर, मोतियों की माला रूपी ही है नक्षत्रों के मण्डल (परिधि अर्थात् घेरा) जिनके, जवानों को लड़कपन के खेल खिलाने के भँवरे, ऐसे उठे हुए अपने कुचों से वह विक्रमादित्य के बायें पसवाड़े (बाईं बगल) में घुसी।

तद्गाढाऽऽश्लेषप्रबुद्धप्रामारराट् पुनरपि व्याजनिद्रां सुष्वाप केयमबला किंकांक्षिणी किंधिया मां मृदुतरं वदति निश्चिनोमि परिचिनोमि

च तावदिति प्रसुप्तवच्छ्वासोत्क्षेपिणि नृपे जारधिया शनैरुवाच वणिक्कन्या किमीदृशो निद्रालुरसि यत्त्वयोक्तमन्येद्युरहं राजमहिषीं घातयित्वा तद्धारं महावज्रमूयमब्ज मुद्रामूल्यमानयिष्ये तुभ्यमिति क्वाऽऽनीतः स हारो मे दीयताम्॥२३॥

उसके गाढ़े आलिंगन से जग कर पंवार राजा (विक्रम) फिर भी कपट की नींद से सोया रहा। यह स्त्री कौन है? क्या चाहती है? किस बुद्धि से यह मुझसे अति कोमल बोलती है? पहले यह निश्चय करूँ और पहचानूँ। इस कारण से सोते हुए के समान राजा के श्वास निकालने पर बनिये की बेटी जार बुद्धि से धीरे से बोली, क्या ऐसे नींद लेने वाले हो? जो तुमने कहा था कि मैं कल ही राजा की रानी को मार कर उसका एक अरब रुपयों की लागत का बड़े हीरों का हार तेरे अर्थ लाऊँगा सो कहाँ लाये? वह हार मुझे दो।

राजा तु तां नवकिशोरी मालिङ्गननिरतामपि रहसि प्राप्य नाभ-जन्मनागपि मनोविक्रियां पावकसामीप्यमवाप्यापि हेमन्तघृतपिण्ड इव दृढतरो धैर्यगाम्भीर्यशौर्यसमुपेतो ह्यज्ञेयस्वरवैलक्षण्यमध्यैवानयिष्ये राजमहिषीहारं त्वयापि तावदत्रैव स्थेयमित्युक्त्वा कलाकुशलस्तद-परिचित एवोत्थाय शुद्धान्तं समेत्य पट्टमहिषीं जागरय्य भूतोदन्तमशेष-मूचिवान्॥२४॥

राजा का उस आलिङ्गन में लगी हुई नवीन किशोर अवस्थावाली को एकान्त में पाकर जरा भी मन नहीं बिगड़ा, अग्नि के संयोग को पाकर भी शीतलकाल के घी के पींड के समान, अत्यन्त ही गाढ़ी धीरता गम्भीरता और वीरता के साथ बोली न पहिचानी जाय वैसे अभी मैं राजा की रानी का हार लाता हूँ। तू तब तक यहाँ पर ही ठहरना। ऐसा कहकर कला में कुशल विक्रमादित्य ने उस स्त्री से न पहचाने जाकर ही उठकर रनिवास में जा पटरानी को जगाया और संपूर्ण बीते वृत्तान्त कहे।

ततश्च कुब्जवामनसौविदल्लाञ्शिबिकया सह प्रस्थाप्य शीघ्रतरमेव तां श्रेष्टिदुहितरं बलात्कारेणाऽवरोधनं प्रत्याऽऽनाययाम्बभूव राजा प्रत्य-क्षमागतायां ह्रीणायामधोमुख्यां तस्यामवतार्य महिषीकण्ठात्तद्धीरकहारं ददावमुष्यै जगाद च पुत्रि नैव त्वया भेतव्यं गृहाण हार किंतु मनोभवभवा व्यथा तु स्वस्वस्वामिभिरेवाऽपनेया स्त्रीभिरहं तु प्रजादुःखकातरोऽन्यत्सर्वं

व्यसनमपाकर्तुं समर्थस्तथैव यदि दूरवासी ते स्वामी स्यात्तर्हि शीघ्रमेव तं मेलये त्वया परंतु स्वर्गद्वारसार्गलीकरणमद्यारभ्य मा भज कदापि पुंश्चलीवृत्तमित्युक्त्वा दत्त्वा च हारं भूषणानि च तस्याः क्रियान्तरेण समाच्छाद्य प्रास्थापयत्तां स्वनिलयमित्य हो विक्रमधैर्यगाम्भीर्यमौदार्यम्॥२५॥

तदनतर विक्रम ने कुबड़े वामन नाजरों को पालकी के साथ भेज कर बहुत ही शीघ्र उस सेठ की बेटी को बलात् रनिवास में मंगवाया। लज्जा से नीचा मुख किये उसके सामने आने पर पटरानी के गले से वह हीरों का हार उतार कर उसको दे दिया और कहा कि हे बेटी! तू डर मत हार ले ले परन्तु स्त्रियों को कामदेव की पीड़ा तो अपने-अपने पतियों मे ही मिटानी चाहिए। हाँ, प्रजा के दु:खों को काटने वाला मैं जैसे और सब दु:खों को दूर करने में समर्थ हूँ। वैसे ही यदि तेरा पति कहीं दूर रहता हो तो शीघ्र ही तुझे जा मिलाऊँ। परन्तु स्वर्ग द्वार के आगल लगाने वाले व्यभिचारिणियों के कर्म आज के बाद कभी भी मत करना। यह कह कर उसको हार और गहने देकर और उसकी करनी दूसरों में प्रकट न होने देकर, उसे अपने घर भेजी। यह बड़ी ही आश्चर्य वाली विक्रमादित्य की धीरता, गंभीरता और उदारता है।

एकदैकाकी विक्रमो मृगयासुखमनुभवन्नुद्यानकासारपङ्कमग्नां सौरभेयीमपश्यत्तदनन्तरमनुकम्पया तामुद्धर्तुकामो यावद्धयादवततार तावत्कृतलूमच्छत्रा उत्कीर्णकेसरकलापा बज्राभनखरविराजमानप्रतलाः शेषचन्द्रकलोपमानीभूतदंष्ट्रा दर्शयन्तः सृक्किणी परिलेलिहाना गिरिगुहाद्रोणिगर्तेषु प्रतिध्वनिमुत्थापयन्तः पढञ्चाननाश्च जगर्जुरपि प्रतिदिशम्॥२६॥

एक दिन मृगया (शिकार) का आनन्द लेते हुए अकेले विक्रमादित्य ने वन में तालाब के बीच कीचड़ में फँसी हुई गौ को देखा उसके बाद दया से उसको निकालने की इच्छा वाला, विक्रम जब तक घोड़े से उतरा तब तक किये हैं पूँछ के छत्र जिन्होंने, उठी है जटाजूट (साट) जिनके, वज्र के समान नखों से शोभायमान हैं पंजे जिनके, शेषनाग और चन्द्रमा की कला की उपमा दी जाए ऐसी डाढ़ों को दिखाते हुए, ओष्ट के दोनों प्रान्तों को चाटते हुए, पर्वत की गुफा द्रोणी और खड्डों में प्रतिध्वनि उठाते हुए, ऐसे सिंहों ने चारों दिशाओं से गर्जना की।

समन्तात्क्ष्वेडारवमाकर्ण्यराज्ञाऽप्यालुलोचे यद्वक्षोद्वयसद्गहन-कर्दमादेकेनैव मया तूद्धर्तुमशक्यैवाऽर्जुनी कालश्चाऽद्यतनः प्रादोषिकः प्रतिगते च मयि वराकीमिमां जाठरोपहारीकरिष्यन्ति सिंहा इति विचार्य गोपालाद्यागमनकालेन तस्थौ तत्रैव निराहारपानस्तुरगारूढो नरेन्द्र इत्यहो विक्रमकारुण्यम् ॥२७॥

चारों ओर से सिंह गर्जना का शब्द सुनकर राजा ने भी सोचा कि छाती तक गहरे कीचड़ में धंसी यह गाय मुझ अकेले से तो निकल सकती नहीं और यह समय जो सायंकाल का है और मेरे चले जाने पर इस बेचारी को सिंह अपने पेट भरने की सामग्री बनाएँगे। यह विचार कर घोड़े पर चढ़ा हुआ बिना खाये पिये, ग्वाल आ जाने के समय तक वहीं पर ठहरा रहा, यह बड़ी ही विक्रमादित्य की करुणा है।

कदाचित्पृथ्वीं पर्यटता नृपेण चत्वारः कार्पटिका दृष्टास्तान्नृपो यावत्पृच्छेत्तावत एवोचुर्दैव दैवजीविताः कथञ्चित्प्राप्ताः स्मोयथा पूर्वस्यां बेतालपुरनाम्नि नगरे शोणितप्रिया भगवती भद्रकाली तिष्ठति सा नित्यं नरवलिं कांक्षति यो भक्तिं तदीयां धारयति स स पुरुषः बलिं ददाति तन्निमित्तं मूल्येनाऽपि वैदेशिकजना गृह्यन्ते तदभावे बलात्कारेण प्राप्यन्ते तत्रत्यशाक्तैर्देशान्तरनिवासिनो दीनजनास्तथैव केषुचिद्ध्रियमाणेषु वयं कृच्छ्रेण तेभ्यः पलाय्य समायाता मालवेन्द्र दीनशरणं त्वामिति ॥२८॥

किसी दिन पृथ्वी पर विचरते हुए विक्रमादित्य ने चार काँवड़ियों को देखा। राजा उनसे पूछता ही था कि उससे पहले उन्होंने ही कहा कि महाराज प्रारब्ध से बचे हुए किसी चाल से पहुँच गये हैं। यथा (जैसे) पूर्व दिशा में बैताल नामक नगर में रुधिर (लहू) की प्यारी भवानी भद्रकाली है। वह प्रतिदिन मनुष्य का बलिदान चाहती है। उस बलिदान के अर्थ वहाँ के शाक्तलोग (शक्ति की उपासना करने वाले) परदेशी मनुष्यों को मोल भी लेते है और मोल नहीं मिलने पर बलात् (जबरन) से परदेशी पुरुष को पकड़ लेते हैं। हम भी कितने कई लोगों की पकड़ में आ गए थे, सो बड़े ही कष्ट से भागकर मालवा देश के पति, दीनों को शरण देने वाले आप तक पहुँच पाए हैं।

श्रुत्वैव तद्वाचं निश्शङ्कधीरो राजा तत्रैव जगाम कालिकापुरस्ताच्चैको

वैदेशिको वेपमानस्तत्रत्यैस्सन्दानितो बल्यर्थमानीतः स्नापितः स्त्रक्रन्दन-नैवेद्यादिभिरर्चितो दृष्टस्ततो राज्ञा धिगेतान् पापकर्मनिष्ठानिति मनस्युवा रक्षां कर्तुमुद्यतेन जगदे भो लोकाएनं मुञ्चत दुर्बलं पुष्टाङ्गस्य मे बलिना कालिका सद्यस्तुष्टा भविष्यतीति श्रुतवस्तु चकितेषु तत्रत्येषु गृहीतबद्धं तं दीनजनं स्वहस्तान्निर्बन्धीकृत्य स्वयं तावस्वशिरश्छिन्द्यात्तावद्देवी वरं वरय विक्रमेत्याह तदैवाह गान्धर्वसेनिस्तुष्टा चेज्जीवहिंसा परिहरेति तथैव देव्योररीकृतेऽवन्तीमयाद्राजेत्यहो विक्रमाऽऽनुक्रोश्यम्॥२९॥

उनके वचन सुनते ही निडर धीर राजा वहाँ पर चला गया और कालिका के सामने बलिदान देने को लाया हुआ स्नान करा कर माला, चन्दन, नैवेद्य आदि सामग्री से पूजा गया, वहाँ के लोगों ने बाँध रखा है जिसको, ऐसे काँपते हुए एक परदेशी को देखा। तब राजा ने इन पाप कर्म करने वालों को धिक्कार है। ऐसा मन में कह कर उस को बचाने के अर्थ प्रकट में कहा कि हे लोगो! इस दुबले को छोड़ो, मोटे शरीर वाले मेरे बलिदान से कालिका शीघ्र ही प्रसन्न होगी। यह सुनते हुए वहाँ के लोगों के चकित होने पर पकड़ कर बाँधे हए उस दीन को अपने हाथों से खोल जब तक अपना सिर काटे उससे पहले ही देवी ने कहा हे विक्रम! वर माँग, उसी समय गन्धर्वसेन के पुत्र (विक्रम) ने कहा हे देवी! यदि तू सन्तुष्ट है तो जीव हिंसा को छोड़ दे! देवी ने वैसा ही अङ्गीकार कर लिया। तब विक्रँमादित्य वापस अपनी नगरी में आया। यह बड़ी ही आश्चर्यजनिक विक्रम की कृपा है।

कदाचित्कश्चित्सामुद्रिकशास्त्रज्ञोऽवन्तीपरिसरे प्राप्तस्तत्रातिसूक्ष्मपांसुषु पद्माङ्कितं पदन्यासं दृष्ट्वां राज्ञोऽयं पदन्यास इति विचार्य पुरीमभिगच्छन्मस्तकादवतारितसमीपधृतकाष्टभारं सोभाञ्जनतर्वधःसुप्तं कञ्चित्काष्ठाजीवं ददर्श तद्दक्षिणांघ्रितले पद्मचिन्हमवलोक्याहो तत्पद-लक्ष्म त्वेतस्येति निश्चित्य विषण्ण आहाऽहो धिक् शास्त्रं यदेभिर्लक्षणैरप्ययं काष्ठवाहीतिव्यर्थं सामुद्रिकमिति विचार्य पुनरालुलोचे मयापि नैतद्दृशे पुरे गन्तव्यमिति स्वमनस्युक्तवा भूयः परिभावयाम्बभूव यद्राजा तु यशस्वी द्रष्टव्य एवेति निश्चित्य प्रविवेशोंज्जयिनीम्॥३०॥

एक दिन एक सामुद्रिक शास्त्र को जानने वाला उज्जैन के समीप पहुँचा वहाँ पर अत्यन्त महीन धूलि में पद्म चिह्नवाला पैर का चिह्न देख कर,

यह तो राजा के चरण का चिह्न है, ऐसा विचार कर नगरी को जाते हुए ने, सिर पर से उतार कर नजदीक धरा है लकड़ियों का बोझा जिसने, सरीजणा नामक वृक्ष के नीचे सोते हुए किसी लकड़ी बेच कर गुजारा करने वाले को देखा। उसके दाहिने पैर में पद्म का चिह्न देख कर अरे! वह चरण चिह्न तो इसका है। यह निश्चय कर दुःखी होकर बोला अरे धिक्कार है शास्त्र को क्योंकि इन लक्षणों से भी यह लकड़ी ही बेच कर खाने वाला है। इस कारण सामुद्रिक शास्त्र निष्फल है। ऐसा विचार कर फिर सोचा मुझे ऐसी नगरी में नहीं जाना चाहिए। यह सब अपने मन में कह कर फिर विचार किया कि यशस्वी राजा का तो दर्शन करना ही चाहिये। यह निश्चय करके उज्जैन नगरी में गया।

अवसरे च स दानाऽध्यक्षविज्ञापितप्रापितो राजसमज्यां गतो विक्रमं च कुलक्षणं दृष्ट्वा खिन्नो बभूव राजा च तं तथाभूतमवेक्ष्य प्रोवाच कुतः खिन्न इति निशम्य सोप्याहाऽहो देवैतत्पुरीपरिसरे तु मया सर्वनृप-लक्षणधरो नरो दीनः कश्चित्काष्ठवाही दृष्टस्त्वं च कुलक्षणों राजा दृष्ट इत्यस्मि विषण्णः शास्त्रादास्थामपसारयन्॥३१॥

और समय पाकर वह थानाध्यक्ष के द्वारा राजसभा में पहुँचा। वहाँ जाकर विक्रमादित्य के भी कुलक्षण देखकर दुःखी हुआ और राजा उसको इस प्रकार दुःखी देखकर बोला, क्यों दुःखी हुए हो? यह सुनकर उसने कहा महाराज मैंने इस नगरी के प्रान्त में तो सम्पूर्ण राजा के लक्षणों को धारण करने वाले एक गरीब लकड़ियाँ बेच कर गुजारा करने वाले मनुष्य को देखा है और आप जो कुलक्षणी हो उनको राजा देखा। इस कारण मैं सामुद्रिक शास्त्र से श्रद्धा को दूर कर दुःखी हूँ।

तदुक्तमित्याकर्ण्योवाच विक्रमः सर्वशास्त्रविचक्षणो हे सामुद्रिका-जीविन् शास्त्रेषु सर्वेष्वेव सामान्यविशेषभावो विवेकविचार-साध्यः स नैवाऽदर्शि त्वया शृण्वत्र कारणं पद्मलक्षणप्रेक्षणेन ममाऽपि परिचितः स काष्ठवाही किंतु तत्काकुदे काकपदं वर्त्तते तेनैव शुभलक्षणानि न फलन्ति तस्य काष्टवाहिन इति बचनं त्वयापि स्वशास्त्रे द्रष्टव्यं मम चाऽपस-व्यपार्श्वेकर्बुरमन्त्रजालं महाशुभलक्षणमस्ति तेनैवेतराण्यशुभान्याक्रम्य नरेन्द्रतामहं प्रापित इत्यपि स्वशास्त्रे वचनं दर्शनीयमेवं निशम्य

सामुद्रिकजीविना कतिपयैरहोभिरेते वचने अवलोक्य पुनः परिषदमवाप्य नृपचरणयोः पतितं राज्ञा च तं काष्ठाजीविनमाहूय श्लक्ष्णश्याममृत्स्न-पिण्डं तन्मुखे दत्त्वा नैमित्तिककल्पस्य काकपदनिश्चयं दढीचक्रे, अहो विक्रमसर्वज्ञता ॥३२॥

उसका कहना सुनकर सम्पूर्ण शास्त्रों को जानने वाले विक्रमादित्य ने कहा हे सामुद्रिक शास्त्र की जीविका करने वाले! सब ही शास्त्रों में सामान्य विशेष भाव यथार्थ ज्ञानपूर्वक विचार करने से जाना जाता है सो तुमने नहीं देखा। सुनो इसका कारण पद्म के लक्षणों को देखने से उस लकड़ियाँ ढोने वाले को मैं भी जानता हूँ किन्तु उसके तलवे पर काकपद चिह्न है उसी से उस लकड़ियाँ ढोने वाले के शुभ लक्षण नहीं फलते हैं। ऐसा वचन तुम भी अपने शास्त्र (सामुद्रिक) में देखना और मेरे दाहिने पसवाड़े में कर्बुर मन्त्रजाल नामक बड़ा ही शुभलक्षण है। उसी ने सब अशुभ लक्षणों को दबा कर मुझे राजापद प्राप्त करवाया है। यह भी वचन अपने शास्त्रों में देखना। यह सुन कर वह सामुद्रिक शास्त्र की जीविका करने वाला कई दिनों बाद उन दोनों वचनों को देखकर फिर सभा में आकर राजा के चरणों में पड़ गया और राजा ने उस लकड़ियाँ बेचा ने वाले को बुलाकर उसके मुँह में चिकनी काली मिट्टी का पींड देकर सामुद्रिक शास्त्र के काकपद चिह्न का निश्चय किया। यह आश्चर्य वाली विक्रमादित्य की सर्वज्ञता है।

कदाचिदुज्जयिन्यां महाधनिकश्रेष्ठिपुत्रेण सोमदत्तेन वराहमिहिरा-दिज्योतिर्विद्भरुपदिष्टं मुहूर्तादि संसाध्य राजनिदेशं चादाय महाशिल्पिभिः प्रासादनिर्माणप्रारम्भः कारितो यदा यदा पुष्येऽर्क संक्रमणं तदा तदा काष्ठतक्षण दृषद्घटने ष्टकचित जलचूर्णमिश्रणाऽऽदिकर्माणि कारया-ञ्चक्रेगच्छत्सुकतिपयेषु बर्षेषु स्थानं च निष्पन्नं सोमदत्तः स पुनरुत्तम-मुहूर्त्तेन तस्मिन्प्रविश्य रात्रौ पल्यङ्के शयानो निद्रां निनीषति तावत्कोऽपि समुहूर्तनिष्पन्नसत्त्वः सामीप्येनाह भो भो वणिगात्मज पतामीति ॥३३॥

किसी समय उज्जैन में एक बड़े धनवान सेठ के पुत्र सोमदत्त ने वराहमिहिर आदि ज्योतिषियों के बताये हुए मुहूर्त्त आदि का साधन करके और राजा की आज्ञा लेकर बड़े कारीगरों से प्रासाद (महल) बनवाना प्रारम्भ किया। जब जब पुष्यार्क योग अर्थात् पुष्य नक्षत्र और रविवार का संयोग होवै

तब-तब लकड़ियों का छीलना, पत्थरों का घड़ना, ईंटों का चुनना, जल और चूने को शामिल करना आदि काम करवाये कितने ही वर्षों में वह स्थान तैयार हुआ तब वह सोमदत्त उत्तम मुहूर्त्त में उस मकान में प्रवेश करके रात्रि के समय शय्या में सोता हुआ नींद लेना चाहता ही था कि इतने में कोई सुन्दर मुहूर्त्त में उत्पन्न हुआ प्राणी समीप आकर बोला कि हे बनिये के पुत्र! पड़ता हूँ।

स तु न जाने किं पतेदिति कातरो न किमप्यवोचद्रात्रिंदिवत्रयं व्यतीत्य गोष्टी गत्वा राजानमाह मन्निर्मितनूतनस्थाने पता मीतिशब्दो भवत्यहं च बिभेमि देव एवात्र प्रमाणमित्याकर्ण्य राज्ञोचे बिभेषि चेतल्लग्नं स्वापतेयं त्वं तु मत्कोशाद्गृहाण स्थानं च तदस्माकमुत्सृजेति श्रुत्वा स प्रसन्नस्तल्लग्नं वसु गृहीत्वा प्रासादं राज्ञो ददौ राजा च दिने कृतांहतिप्रमुखपुण्यः सर्वैर्निषिध्यमानः स्वशयबलेन तत्प्रासादे प्रविश्य रात्रौ शेते स्म तथैव तत्र ध्वनिरुदभवद्धो पतामीति श्रुत्वा राजाऽऽह शीघ्रमभयेन पत मा विलम्बं कुर्वित्युक्तमात्रेणैवाऽक्षयः स्वर्णपुरुषः पपाताऽहो ईदृक्सत्वो विक्रम ॥३४॥

वह वणिक् पुत्र तो न जाने क्या पड़े, इस डर से कुछ भी नहीं बोला और तीन दिन रात ऐसे ही बिता कर सभा में जाकर राजा से बोला कि मैंने नया मकान बनवाया हैं उस में 'पड़ता हूँ' यह शब्द होता है और मैं डरता हूँ। अब इस विपय में महाराज ही साक्षीभूत हैं। यह सुनकर राजा ने कहा यदि तू डरता हैं तो उस मकान में जो धन लगा है वह तो मेरे भण्डार से ले ले और वह मकान हमको दे दे। यह सुनकर वह प्रसन्न हुआ और उसकी लागत का धन लेकर हवेली राजा को दे दी। राजा तो दिन में दान देना आदि पुण्य कर्म करके सब लोगों ने मना किया तो भी अपने पराक्रम के बल से उस हवेली में घुसकर रात्रि के समय सोता था कि उसी समय में वहाँ पर शब्द हुआ पड़ता हूँ यह सुनकर राजा ने कहा निडर होकर शीघ्र पड़ो। इतना सुनते ही अक्षय सुवर्ण पुरुष (जो कभी कम न हो ऐसा सोने का पुतला) पड़ा। ऐसे पराक्रमी विक्रमादित्य हैं।

एकदा विक्रमः पराजितैर्दिल्लीपुरप्रान्ताऽधिराजैस्तोमरोपटङ्किभिः पाण्डववंशीयक्षत्रियैरालुलोचे तद्यथाऽहो विक्रमेणाऽसकृत्पराजिता वयं कमुपायमाश्रयेमेति तज्जयविचारवत्सु सत्सु तेष्वेकेन वणिक्पुत्रेण जगदे

विक्रमनगर्यामुज्जयिन्यां यत्किंचिद्विक्रेतुं लोका गच्छन्ति तदेव प्रायस्तत्रत्या गृह्णन्ति यदवशिष्टं स्यात्तत्सायं प्रामारराजा गृह्णात्यन्यथा न कोपिधनीति नगरकलङ्कं मन्यमाना दुर्मनायन्त इति तत्र तोमरराज्यसमज्यायां निशम्यैकेन मान्त्रिकपण्डितेनोचे हरिशेणस्तोमरराजोऽये नरेन्द्र यदि धनाढ्यतमो भवांस्तर्हि बहुमान्त्रिकसहायबलेन साधयामि विक्रमपराभवमिति निशम्य हरिषेणनृपेणाऽपि तथैव प्रतिपन्ने तत्स्वापतेयसंचयशुल्केन स विप्रो देशान्तरेभ्य आथर्वणान्मान्त्रिकांश्च बहुशः समाकारितवान् ॥३५ ॥

एक समय विक्रमादित्य से हारे हुए दिल्ली प्रान्त के राजा, तोमर पदवी को धारण करने वाले, पाण्डव वंश के क्षत्रियों ने विचार किया कि अरे विक्रमादित्य से निरन्तर हारे हुए हम लोग क्या उपाय करें? इस प्रकार विक्रमादित्य को विजय करने का विचार कर रहे थे कि उन्हीं में से एक बनिये के बेटे ने कहा कि विक्रमादित्य की नगरी उज्जैन में लोग जो कोई वस्तु बेचने को ले जाते हैं उसी वस्तु को वहाँ के लोग प्राय: (अकसर) ले लेते हैं। यदि बच जाए तो उस को सायंकाल में पंवार राजा ले लेता है क्योंकि यहाँ पर कोई धनवान नहीं। इस बात को नगर का कलंक समझकर दु:खी होता है। इस बात को तोमरराज की सभा में सुनकर एक मन्त्र शास्त्री पण्डित ने तोमरराज हरिषेण से कहा कि हे महाराजा! यदि आप बहुत धनवान हो तो बड़े मन्त्रशास्त्री की सहायता के बल से विक्रम का पराजय होना सिद्ध करूँ। ऐसा सुन कर राजा हरिषेण के भी हाँ करने पर उसके धन समूह के दान से उस ब्राह्मण ने देशान्तरों से बहुत से अथर्ववेदी मन्त्रशास्त्र जानने वालों को बुलाया।

तैराथर्वणमान्त्रिकैः पण्डितराजैस्तोमरेन्द्रसकाशाद्रजतमुद्रालक्षदशक मवाप्य तत्क्रीतोपहारादिभिर्हवनादिकर्मः विधाय महामन्त्रप्रयोगैर्वर्षसप्तकं यावदेका लोहमयी प्रतिमा निरमाय तस्यां साक्षाद्दारिद्र्यप्रतिष्ठामनुष्ठाय सा सूर्मिस्तोमराधीशस्य निवेदिता निगदितं च द्विजैर्भो दिल्लीन्द्र हरिषेण यद्येनामय:प्रतिकृतिं विक्रमः क्रीणीयात्तदैव स दारिद्र्यपराभूतस्त्वद्वशी-भूयादित्याकर्ण्य नाऽनन्तरमेव हरिषेणनृपेण सा सूर्मिस्तद्वणिकद्वारैवाऽवन्तीं प्रेषिता ॥३६ ॥

उन अथर्ववेद के मंत्र जानने वाले पण्डितराजों ने तोमरराज के भण्डार

से चाँदी के दस लाख रुपये लेकर उनकी सामग्री मँगाकर हवन आदि कर्म करके सात वर्ष पर्यन्त बड़े मन्त्रों के अनुष्ठान से लोहे की एक मूर्ति बनाई। जिसमें साक्षात् दरिद्र का स्थापन करके वह मूर्ति तोमरराज को दी और ब्राह्मणों ने कहा कि हे दिल्लीश्वर हरिषेण! इस लोहे की मूर्ति को जब भी विक्रमादित्य मोल लेगा तभी वह दरिद्री होकर तेरे वश में हो जाएगा। यह सुनते ही उस राजा हरिषेण ने उस मूर्ति को उसी वणिक पुत्र के द्वारा उज्जैन भेज दिया।

तत्र गत्वा स वणिक् चतुष्पथे स्थितो ब्रूते स्म दारिद्र्यमिदं साक्षाद्विक्रेतुमानीतमस्य मूल्यं दीनारसहस्त्र मित्याकर्ण्य न कोपि तदुपादत्ते स्म, तदा सायं राजद्वारे गत्वा विज्ञापयामास मया दारिद्र्यमिदं विक्रेतुमानीतं तन्न कोपि गृह्णाति स्मेत्यहो निर्धनतोज्जयिन्या निश्चिता मयाऽतो ब्रजामीति श्रुत्वा राज्ञैवोचे दारिद्र्यमपि क्रेतव्यं कोशे च स्थापनीयमित्याज्ञां मूर्घ्न्याऽधाय कोशाऽधिकारिभि र्दीनारसहस्त्रेण सा दारिद्र्यसूर्मिः क्रीता स्थापिता च राजकोशे॥२७॥

वहाँ जाकर वह बनिया चौराहे पर खड़ा होकर बोला कि मैं इस साक्षात दारिद्र्य को बेचने लाया हूँ। इसका मोल एक हजार मुहर है। यह सुनकर किसी ने भी उसको नहीं लिया तब सायंकाल में राजद्वार पर जाकर बताया कि मैं इस दारिद्र्य को बेचने को लाया जिसको किसी ने नहीं लिया इस कारण उज्जैन की दरिद्रता मैंने निश्चय जानी। इस कारण जाता हूँ। यह सुनकर राजा ने ही कहा कि दारिद्र्य को भी मोल ले लो और भण्डार में रख दो। इस आज्ञा को शिरोधार्य कर खजांचियों ने उस दारिद्र्य रूप लोहे की मूर्ति को एक हजार मुहरों में मोल लेकर राज भण्डार में धर दी।

दारिद्र्ये क्रीते रात्रौ सुप्ते च विक्रमे सम्राङ्ग राज्यलक्ष्मीः स्वप्ने राजानमाह हे विक्रमराज विहाय त्वामन्यतो गच्छामीत्याकर्ण्य राजाऽऽह कुतो गच्छसि सा पुनराऽऽह यत्र दारिद्र्यं तत्र न वसामि तच्छ्रुत्वा पुनराह राजा स्वीकृतं त्वहं न त्यजामि तवेच्छा गन्तुमेव चेद्गच्छ तर्हीति निशम्य लक्ष्मीस्तु गता क्षणान्तरे विवेक आगत्याह राजन् यत्र दारिद्र्यं तत्राऽहमपि न वसामि लक्ष्मीरिव गच्छामीत्यपि श्रुत्वा राज्ञोचे यदि तवापि जिगमिषा गच्छ तर्हीति श्रुत्वा विवेकेनापि प्रतस्थे क्षणान्तरे च पुनर्मूर्तिमत्सत्त्वमागत्य

तस्मिन्नेव स्वप्ने साक्षादिव राजानमाह विक्रम गच्छाम्यहमपि मयापि नैव स्थे यं यत्र दारिद्र्यं तत्रेति श्रुत्वा प्रह्वो नरेन्द्र आहानुष्टुभा यथा॥३८॥

दारिद्र्य मोल लेने पर रात्रि के समय सोते हुए विक्रमादित्य के सातों अङ्गवाले राज्य की लक्ष्मी ने सपने में राजा से कहा कि हे विक्रमादित्य! तुझ को छोड़कर और जगह जाती हूँ। यह सुनकर राजा ने कहा कि कहाँ जाती है? तब उसने कहा जहाँ पर दारिद्र्य है वहाँ पर मैं नहीं रहती। यह सुनकर फिर राजा ने कहा जिसका मैंने अङ्गीकार कर लिया है उसको नहीं छोड़ता। तेरी जाने की ही इच्छा है तो चली जा। यह सुनकर लक्ष्मी तो गई और क्षणभर में विवेक ने आकर कहा हे राजा! जहाँ पर दारिद्र्य है वहाँ पर मैं भी नहीं रहता। लक्ष्मी के समान जाता हूँ। यह सुनकर राजा ने कहा यदि तेरी भी जाने की इच्छा है तो तू भी चला जा। यह सुनकर विवेक भी गया और फिर दूसरे क्षण में मूर्तिमान् होकर पराक्रम आया और उसी स्वप्न में प्रत्यक्ष के समान राजा से बोला हे विक्रमादित्य! मैं भी जाता हूँ। मैं भी जहाँ पर दारिद्र्य रहे वहाँ पर नहीं रहता। यह सुनकर नम्र होकर राजा ने अनुष्टुप छंद से कहा।

लक्ष्मीरपि चला यातु विवेकादिगुणास्तथा।
प्राणाश्च यान्तु मा यातु सत्त्वं हि जनजीवितम्॥३९॥

कि चंचल लक्ष्मी भी जाए, विवेक आदि गुण भी चले जाएँ और प्राण भी चले जाएँ परन्तु मनुष्य का जीवन रूप सत्त्व (पराक्रम) तो न जाए।

इत्युक्त्वा पुनरुवाच विक्रमो हे सत्त्व! गृहाणेदं ममोत्तमाङ्गं त्वां विना किं प्राणैः प्रयोजनमित्युक्त्वा यावच्छिरश्छिन्द्यात्तावत्सत्वेन प्रसन्नेन राजा निवारितः स्वयं च न प्रस्थितवानिति विज्ञाय समायातौ च सत्त्वसहचारिणौ लक्ष्मीविवेकौ॥४०॥

यह कहकर फिर विक्रम ने कहा कि हे सत्व! यह मेरा शिर ले। तेरे बिना प्राणों से क्या प्रायोजन है? यह कहकर शिर काटता ही था कि प्रसन्न हो कर सत्त्व ने राजा को मना किया और आप भी न गया। यह जानकर सत्त्व के साथ रहने वाले लक्ष्मी और विवेक भी वापस आ गए।

तथैव लक्ष्मी विवेक सत्त्वेषु विक्रमोदवसिते निश्चलीभूतेषु दारिद्र्येणापि विक्रमो जगदे हे शरणागतवज्रपञ्जर विक्रमनरेन्द्र! लक्ष्मी विवेक सत्त्वैस्ताड्यमानोऽहमुज्जयिन्यां तु न स्थातुमुत्सहेऽतो हेतोर्यत्र तव

राज्ये सत्त्वादीन्धर्मवर्धकान्न पश्येयमहं तत्रैव तिष्ठेयमित्युत्सारय मां यत्र सुखेन निवसेयमिति निशम्य राज्ञोचे भ्रातर्द्दारिद्रय! स्वसन्धाभङ्गभयेन पूर्वमूरीकृतं त्वा क्वापि न प्रेषयिष्ये तिष्ठ सुखं मदावसथे नृपोक्तमिति निशम्य पुनस्तेनोचे नरेन्द्र! सत्वर मां प्राणैर्योजय तवैव राज्ये क्वापि स्थास्येऽतो हेतोर्मा भूत्ते प्रतिज्ञा भङ्गोऽपीति श्रुत्वा विक्रमेण तां सूर्मिं शकटे निधाय राजपुरुषैः सह प्रेषितवानुक्तवांश्च यत्र लक्ष्मीविवेकसत्त्वादयो न भवेयुस्तत्र स्थापयत दारिद्रयमस्मद्राज्य एवमित्याकर्ण्य प्रतस्थिरे राजपुरुषैः परीक्षां कुर्वद्भिः ॥४१॥

जैसे ही लक्ष्मी विवेक और सत्व इन तीनों ने विक्रम के भण्डार में स्थिर हो जाने का निश्चय किया तो दारिद्र्य ने भी विक्रम से कहा कि हे शरण आये हुए के वज्ररूप पिंजरे राजा विक्रमादित्य! लक्ष्मी, विवेक और सत्त्व से पीड़ित हुआ मैं उज्जैन में तो नहीं रह सकता। इस कारण से तुम्हारे राज्य में जहाँ पर धर्म को बढ़ाने वाले सत्त्व आदि को न देखूँ वहाँ पर रहूँगा। इस हेतु जहाँ पर सुख से रह सकूँ मुझे वहाँ पर निकालो। यह सुनकर राजा ने कहा हे भाई दारिद्र्य! मैंने अपनी प्रतिज्ञा टूटने के डर से तुझे अङ्गीकार किया है तुझे कहीं भी नहीं भेजूँगा। सुख से मेरे घर में रह। यह राजा का कहना सुनकर फिर दारिद्र्य बोला महाराज! शीघ्र मेरे प्राण बचाओ आप ही के राज्य में कहीं रहूँगा इस हेतु आप की प्रतिज्ञा का भंग भी न होगा। यह सुनकर राजा ने उस लोहे की मूर्ति को गाड़ी में रखकर अपने सेवकों को साथ भेजा और कहा जहाँ पर लक्ष्मी, विवेक और सत्त्व आदि न हों वहाँ पर मेरे ही राज्य में इस दारिद्र्य को रखना। यह सुनकर वैसे ही परीक्षा करते हुए वे राज मनुष्य गए।

ते विक्रमप्रेषितपुरुषा यत्र यत्रत्यान् वदेयुः किं किं याचध्वे तत्र तत्रत्या एव स्वस्वनिर्वाहोपहाराधिकं किमपि नाऽयाचन्त केचित्परिपूर्णाः स्मः किं याचामह इत्यप्युक्तवन्त एवं दारिद्र्योपयोगिजनान्परिचिन्वत्सु गच्छत्सु तेषु याचध्वमिति वदत्सु जाङ्गलदेशान्तर्गतपुङ्गलोपनाम्नि देशविशेषे कयाचिच्छूद्रयानुनयाथे यद्येक क्रोशमितदीर्घाऽऽयतपृथिव्यां यावद्धनं मायात्तावन्मह्यं दातुं समर्थाः स्थ तर्हि त्वहं याचे युष्मानिति निशम्य तत्रैव दारिद्र्योपयोगिस्थानं मन्यमानैर्विक्रमपुरेतिनाम्ना निवसथो निर्ममे तत्र तां दारिद्र्यसूर्मिं प्रतिष्ठया स्थापितवन्तः ॥४२॥

वे राजा के भेजे हुए पुरुष जहाँ तहाँ रहने वालों से बोले कि क्या क्या चाहते हो वहाँ वहाँ के रहने वालों ने अपनी अपनी निर्वाह की सामग्री से कुछ भी अधिक नहीं माँगा। कई लोगों ने ऐसा भी कहा कि हम तो सब तरह से परिपूर्ण हैं क्या माँगें ? इस प्रकार दारिद्र्य के उपयोगी जनों को पहचानते हुए माँगो ऐसा कहते हुए चलने वालों के दूर चले जाने पर जाङ्गल देश के बीच पुंगलोप (पूगल) नामक देश विशेष में किसी शूद्र जाति की स्त्री ने कहा कि यदि एक कोश वर्गात्मक (एक कोस लम्बी और उतनी ही चौड़ी) पृथ्वी में जितना धन समाये उतना धन देने की शक्ति हो, तो तुम लोगों से माँगू। ऐसा सुनकर वहाँ पर दारिद्र्य के लिए उपयोगी स्थान समझ कर उन पुरुषों ने विक्रमपुर नामक गाँव बसा कर वहीं पर उस दारिद्र्य की लौहमयी मूर्ति को प्रतिष्ठा के साथ स्थापित किया।

तया च शूद्र्या यावद्धनं याचितं तत्कथनपरिमितं पृथिव्यां गो महिषी रूपं धनं परिपूर्य तस्यै च महालोभेन गर्ह्यमाणायै समर्पयाञ्चक्रुः सा च दारिद्र्यसूर्मिरद्यावधि तत्रैव जाङ्गले प्रामारराणिनर्मापिते विक्रम-पुरनाम्नि निवसथे श्रूयत इतीदृगहो विक्रमसत्त्वौदायम्।।४३।।

और जिस शूद्र जाति की स्त्री ने पहले धन माँगा था उसी के अनुसार एक कोस जितनी लम्बी-चौड़ी पृथ्वी गौ, भैंस रूपी धन से भरकर उस बड़े लोभ से लेने वाली को दे दिया और वह दारिद्र्य की लोहे की मूर्ति अब तक वहीं जांगलदेश में पंवारराज के बसाये हुए बीकमपुर नामक गाँव में सुनी जाती है यह ऐसी बड़े ही आश्चर्य वाली विक्रमादित्य की पराक्रम और उदारता है।

एकदा सभासीने राजनि ते नैव कीर्तिप्रतानकनाम्ना बोधकरेणोचे राजन्नहं किञ्चित्कलाकौशलमपूर्वं दर्शयामि सावधानैर्भाव्यमित्याकर्ण्य राजा तथैव परिपञ्जनानाह ते च तं बैतालिकं पुरःस्थितं वीक्षमाणा आसंस्तावत्कोऽपि पुमानेककरे निष्परीवारमण्डलाग्रं दधानो द्वितीयपाणौ दिव्यगुणरूपसौकुमार्यामङ्गनां चोपाददानो राजानं प्रणम्याह राजंस्त्वं परस्त्रीपराङ्मुखोऽतो मया प्रार्थ्यसे यदहमिन्द्रस्य सेवकोऽत्र वसामि सति प्रयोजने स्वर्यामि तदद्य देवैः साकमिन्द्रारिभी रणः प्रारब्धोऽत एव हेतोरहमपि तत्र यास्यामि किं त्वियं मम पत्नी स्वस्थाने भवता

परोपकारविधिना रक्षणीया यावदहमागच्छामीत्युक्त्वा तां त्यक्त्वा व्योम्नि प्रस्थितो नेत्रागोचरतामितः सर्वैरदर्शि तदनन्तरमेव सपार्षदेन राज्ञा गगने रोदनं श्रुतं क्षणमन्तरात्तस्यं च्छिन्नं भुजयुगं पपात द्वितीय क्षणे चरणद्वयं पुनः शिरस्ततो मध्यभाग एवं समग्रं वर्ष्म पतितं दृष्ट्वा तत्स्त्री प्राह राजंस्त्वं में भ्राताऽसि तथा कुरु यथाहमग्नौ प्रविशामीति वदन्ती सा राज्ञा निवारितापि सर्वसमक्षं भर्तृदेहखण्डैः सार्धमग्नौ विवेश राजा च शोकसमाकुलो यावत्श्मशानादायाति तावत्स पुमान्प्रत्यायातः प्राह च राजंस्तव प्रसादेनेन्द्रादीनां जयः संपन्नस्तैश्च बहु मानितोहमायातोस्मि ततः प्रसादं कुरु देहि में पत्नी मित्याकर्ण्य राजा सपरिकरो विषादविवशो वभूव तेन तु पुनरुक्तं राजन्मम पत्नी त्वदवरोधने वर्तते कुरु त्वमाज्ञां यथाहं गत्वा तामानयामि सविस्मयेन राज्ञोक्तमानयेति श्रुत्वा गत्वा च तदन्तःपुरात्तामेव स्त्रस्त्रियमानीय पुरःस्थितो राजा तु लज्जयाऽधोवदनोऽभूत्ततोऽग्रे स्थितो वैतालिकः प्राह राजन्मागच्छ बिषादं ममेन्द्रजालमेतन्न सत्यमित्याकर्ण्य सोत्फुल्लनयनो विक्रमस्तस्मै कीर्तिप्रतानकाय बोधकराय चोण्ड्यपुरराज्यं वितीर्णवानित्यहो विक्रमदातृत्वम्॥४४॥

एक दिन राजा विक्रमादित्य के सभा में विराजमान होने पर उसी कीर्तिप्रतानक नामक भाट ने कहा कि महाराज मैं एक अपूर्व कलाकौशल दिखाता हूँ। सावधान होइए, यह सुनकर राजा ने भी सभा के मनुष्यों को सावधान किया और वे सभा के मनुष्य सामने खड़े हुए उस बैतालिक (भाट) को देख ही रहे थे कि इतने में कोई पुरुष एक हाथ में सुन्दर गुण, रूप और सुकुमारता है जिसके, ऐसी स्त्री को पकड़े हुए राजा को प्रणाम कर बोला कि महाराज! आप पराई स्त्री से विमुख रहने वाले हो, इस कारण में प्रार्थना करता हूँ कि मैं इन्द्र का सेवक यहाँ पर रहता हूँ। जब काम होता है तब स्वर्ग जाता हूँ सो आज देवताओं के साथ दैत्यों का संग्राम रचा है। इस कारण मैं भी वहाँ पर जाऊँगा। किन्तु मैं जब तक नहीं लौटूँ तब तक इस मेरी स्त्री को आप अपने स्थान में परोपकार विधि से रक्षा कर रखें। यह कह कर उस स्त्री को वहीं पर छोड़ कर आकाश में चला और सब के देखते दृष्टि के बाहर हुआ। उसके बाद ही सभा सहित राजा ने आकाश में रुदन सुना और क्षण भर में उसके कटे हुए दोनों हाथ पड़े। दूसरे क्षण में दोनों पैर पड़े। फिर सिर इसके बाद बीच का धड़ इस रीति सम्पूर्ण शरीर आ पड़ा। जिस को

देखकर उस की स्त्री ने कहा महाराज आप मेरे भाई हैं, सो मैं अग्नि में प्रवेश करूँ वैसा प्रबंध करें। यह कहती हुई वह स्त्री राजा के मना करने पर भी सब के सामने पति के शरीर के टुकड़ों के साथ अग्नि में प्रवेश कर गई और शोक से घबराया हुआ राजा जब तक श्मशान से वापस आया तब तक वह पुरुष भी वापस आया और बोला महाराज आप की कृपा से इंद्रादि देवताओं की जीत हुई और देवताओं से बहुत ही सम्मान पाकर मैं आया हूँ। अब आप कृपा कर मेरी स्त्री मुझे दीजिये। यह सुनकर सब समूह के साथ राजा दु:ख में पड़ा। तब उसने फिर कहा कि महाराज! मेरी स्त्री आपके रनिवास में है। आप आज्ञा दें तो मैं वहाँ जाकर उसको ले आऊँ। आश्चर्य के साथ राजा ने कहा ले आ। यह सुनकर वह गया और उस अंत:पुर (रनिवास) में से अपनी स्त्री को लाकर सामने खड़ा हो गया। राजा ने तो मारे लज्जा के नीचा मुँह किया। तब सामने बैठा हुआ बैतालिक बोला कि महाराज दु:खी न होइये यह तो मेरा इन्द्रजाल है। यह सत्य नहीं। यह सुनकर प्रफुल्लित नेत्रवाले विक्रमादित्य ने उस कीर्तिप्रतानक भाट को चोण्ड्यपुर का राज्य दे दिया, यह बड़ी आश्चर्यवाली विक्रमादित्य की वदान्यता है।

अथ च व्यतीते कलिवर्षाणां चतुश्चत्वारिंशदुत्तरसहस्त्रत्रये विक्रमः संग्रामे देहं तत्याज राज्ञी चैका गुर्विण्यपि स्वामि कलेवरेण चितामारुरुक्षुर्बभूव सा तत्र सुभटसचिवादिभिर्निवारिता पि स्वोदरं विदीर्याऽऽसन्नप्रसूतिं सम्पूर्णसर्वाऽवयवं भ्रूणं निष्कास्य निवारकेभ्यो दत्त्वाऽन्याभिः सपत्नीभिरारुरोह चितां भ्रूणश्च दैववशान्न मम्रे राज्यांशप्रापणसमये स एव दशपुरेश्वरोऽभवत्तृतीयो वैक्रमिर्युधिष्ठिरशकं समाप्य प्रावर्तत प्रामारराड्विक्रमशकः ॥४५॥

इसके आगे कलियुग के तीन हजार चवालीस वर्ष बीत जाने पर राजा विक्रमादित्य ने रणभूमि में शरीर छोड़ा, एक रानी गर्भवती थी सो भी पति के शरीर के साथ चिता पर चढ़ने वाली हुई। वहाँ पर उमराव और कामदारों के मना करने पर भी उसने अपना पेट चीर कर होने ही वाला था जन्म जिसका, पूर्ण हो गये हैं सब अङ्ग जिसके, ऐसे बालक को निकाल कर, उन मना करने वालों को देकर, दूसरी सपत्नियों के साथ चिता पर चढ़ी और बालक प्रारब्ध से न मरा। राज्य के भाग (हिस्सा) को पाने के समय पर वही दशपुर (मन्दसोर) का राजा हुआ। युधिष्ठिर के सम्वत् को समाप्त कर यह तीसरा

सम्वत् पंवारराज विक्रमादित्य का विक्रमसम्वत् चल रहा है।

इतिश्री वंशभास्करे महाचम्पूके पूर्वाऽयणे चतुर्थ राशौ वीतिहोत्र-चण्डासिवंशवर्णनाऽन्तर्गतप्रामारराड्विक्रमचरित्रेदुस्थवणिक् पुत्रपुरन्द-रसूचिताऽवगतवृत्तान्त विक्रमब्रह्मरक्षोमारणतत्पत्नीनिवेदितषोडश वर्णसुवर्णनिपनवक पुरन्दराऽर्पणपणीकृतस्वप्राण नदीपूरनिमज्जन्नृयुग्म निष्कासनतद्ढौकितसर्वार्थसम्पादनमूलिकायाचमानदीनवितरणश्रुतयक्षपञ्चके तिहासप्रसन्नसिद्धदत्तचिन्तारत्नदुर्विधा ऽऽयत्तीकरणदुस्स्वप्ननिमित्त-स्वकोशस्वापतेयलुण्टका ऽर्थप्रक्षेपणज्ञातदुर्भिक्षाऽऽगमसिद्धोक्तस्वशि-रश्छेदोद्योगप्रसन्नदेववर्षणस्वतुरङ्गस्थापितवातकरकाविव्हलवृद्धशूद्री-प्राणरक्षणवणिक्पुत्रीपरीरम्भाच्युतधैर्यनिवारिततच्चर्यमहिषीहीरकहार-तन्मनोरथपूरणहयारूढवनगत सोढकष्टनृपपङ्कमग्नगोरक्षणकार्पटिक-विज्ञापितवेतालपुरगतस्वशिरश्छेदोद्यतलब्धदेवीवरविक्रमतन्नृबलि-निवारणतच्छास्त्रज्ञसामुद्रिकलक्षणचमत्कारदर्शनवणिक्सोमदत्तविक्रीतस-दनशयाननृपस्वर्ण[illegible]पातनदारिद्र्यसंज्ञकलोहपुत्तलकस्वीकारलक्ष्मी-विवेकतिरस्करणस्वमूर्धच्छेदोपायजिगमिषुसत्त्वप्रत्यानयनदर्शितेन्द्रजाल-चमत्कारबैतालिककीर्तिप्रतानकार्थचोण्ड्यपुरराज्यवितरणदूरीकृतकुमा-रिकादुःखविक्रमपरिणामसमयसङ्ग्रामाङ्गणतनुत्यजनपाटितोदरनिष्का-सितभ्रूणैकसपत्नीसहिततद्राज्ञीजनसहगमनतच्छकप्रवर्तनं पञ्चमो मयूखः ॥५॥ आदितश्चतुर्दशोत्तरशततमः॥ ११४॥ समाप्ता च विक्रमचर्य्या॥

श्री वंशभास्कर महाचम्पू के पूर्वायण की चौथी राशि में वीतिहोत्र (अग्नि) चहुवान के वंश के वर्णन के बीच पंवार राजा विक्रमादित्य के चरित्र में दुर्गति में पड़े हुए बनिये के बेटे पुरन्दर के बताने से समाचारों को जानकर विक्रमादित्य का ब्रह्मराक्षस को मारना, और उसी ब्रह्मराक्षस की स्त्री के दिये हुए सौलहवें सोने (कुन्दन) से भरे नव घड़े पुरन्दर को देना, और अपने प्राणों के प्राण से नदी के प्रवाह में बहते हुए स्त्री-पुरुष के जोड़े को निकालना, उस स्त्री-पुरुष के जोड़े की दी हुई सब कामों को सिद्ध करने वाली जड़ी को एक माँगने वाले को दे देना, पाँच यक्षों की कथा सुनकर प्रसन्न हुए सिद्ध के दिये हुए चिन्तामणि रत्न को एक दुर्गति में पड़े हुए को दे देना, दुर्भिक्ष के निमित्त अपने कोश (खजाने) के धन को लुटाने के अर्थ दे

देना, दुर्भिक्ष के आ जाने को जानकर सिद्ध के उपदेश से अपने सिर को काटने रूप उद्योग से प्रसन्न होकर मेघ का बरसना, अपने घोड़े पर चढ़ाकर वायु और ओलों से घबराई हुई एक बुढ़िया शूद्र जाति की स्त्री के प्राण बचाना, वणिक् पुत्री (बनिये की बेटी) के आलिङ्गन से भी अचल धैर्य रखकर, उसकी करणी को छिपाकर, पटरानी का हीरों का हार देकर उसका मनोरथ पूर्ण करना, घोड़े पर चढ़े हुए वन में दुःख सहकर कीचड़ में फंसी हुई गौ की रक्षा करना, कावड़ियों के बताने से बेतालपुर में जाकर अपना सिर काटने को तैयार होने पर देवी के वरदान से विक्रमादित्य का देवी से नरबलि (मनुष्य का बलिदान) छुड़ाना, सामुद्रिक शास्त्र के जानने वाले को सामुद्रिक शास्त्र का चमत्कार बताना, सोमदत्त नामक बनिये के बेचे हुए मकान में सोते हुए राजा के पास सुवर्णपुरुष (सोने का पुतला) का पड़ना, दारिद्र्य नामक लोहे के पुतले को अङ्गीकार करके लक्ष्मी और विवेक का तिरस्कार करना, अपना सिर काटने रूप उपाय से जाने वाले पराक्रम का पीछा आना, इन्द्रजाल का चमत्कार दिखाने वाले कीर्तिप्रतानक नामक भाट को चौण्ड्यपुर का राज्य देना, भरतखण्ड के दुःख को दूर करने वाले विक्रमादित्य का अन्त समय में रणभूमि में शरीर छोड़ना, पेट चीरकर बालक को निकाल कर, रानी का अन्य पत्नियों के साथ सती होना और विक्रमादित्य के सम्वत् का प्रवर्त्तन होने रूप पाँचवाँ मयूख समाप्त हुआ और आरम्भ से एक सौ चौदह मयूख हुए वहीं विक्रमादित्य का चरित्र भी समाप्त हुआ।

प्रायो मरुदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

दोहा

वेद वेद नभ गुण वरस, कळिजुग जावण काळ।
तजि विक्रम इम जुद्ध तनु, पत्तो दिव भूपाळ॥१॥
कवण अवधि जिणरो कहूँ, रुचिर सुजस नृपराम।
जिण जुग कृत त्रेता जिसा, कीधा कळि बिच काम॥२॥

कलियुग के तीन हजार चवालीस वर्ष गुजर जाने पर उज्जैन के राजा विक्रमादित्य ने एक संग्राम में लड़ते हुए अपने प्राण गँवाए और वह अपनी देह छोड़ कर स्वर्गलोक को गया। हे राजा रामसिंह! मैं कहाँ तक उस राजा के सुयश को कहूँ जिस विक्रमादित्य ने कलियुग में भी त्रेतायुग और सतयुग जैसे अनेक कार्य किये अर्थात् उसका पूरा यश-वर्णन कठिन है।

षट्पात्

सुत जिम माता मरण जाणि गुरु मरण छात्र जिम।
भ्रात मरण जिम भ्रात तात निज मरण पुत्र तिम।
मग्गण बित्तदमरण मरण सरणद सरणागत।
सुणि सेवक मृत सुपहु गदी गदसमण जाणि गत।
कृषिकार मुदिर निष्फ़ल कढत माता जिम सुत लखि मुवो।
पड़तां नरेस विक्रम पुहवि हाहा जग रोवत हुवो॥३॥

जैसे माँ के मरने से पुत्र, गुरु के मरने से शिष्य, भाई के मरने से भाई और पिता के मरने से पुत्र रोता है। जैसे वदान्य दाता के मरने पर याचक, शरणदाता के मरने पर शरणागत, अच्छे राजा के मरने पर सेवक और वैद्य के मरने पर रोगी शोक में बिलखता है। जैसे मेघ के बिना बरसे जाने पर किसान और पुत्र के मरने पर माँ विलाप करे वैसे ही राजा विक्रमादित्य के रणभूमि में निःशेष होने पर पूरा जगत हाहाकार कर विलाप करते हुए जार-जार रोया।

प्रायो ब्रजदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

षट्पात्

इत चालुक महाराज केर सुत खट सोरूंपुर।
वडो राज बलि बीज उभय प्रकटे धारक धुर।
पुनि इनके सापत्न भ्रात कर्ण रू भीमा दिक।
राज बीज सन रारि पारि हुव चउ हि प्रमादिक।
दीने निकासि अग्रज उभय तिन तब धर्महि तक्कयो।
द्वारका गये परसन दुव हि देस सकल अनुजन दयो॥४॥

इधर सोरूँपुर के चालुक्य राजा के छह पुत्र हुए। इनमें से बड़ा राज नामक और छोटा बीज नाम वाला था। दोनों वीर भाई धैर्यवान थे। इनकी विमाता से कर्ण और भीम नामक दो भाई पैदा हुए। इन दोनों कर्ण और भीम ने मिल कर राज और बीज से लड़ाई लड़ना शुरू किया और युद्ध में अपने दोनों बड़े भाइयों राज और बीज को अपने राज्य से खदेड़ बाहर किया। तब

वे दोनों एकमात्र धर्म का आसरा लेकर द्वारकापुरी को दर्शन हेतु गए और राज्य अपने सौतेले भाइयों के हवाले कर दिया।

दोहा

परसि द्वारकाधीस प्रभु, मुरे बहुरि प्रतिमग्ग।
अनिहलपुरपट्टनि उभय, आये अटत उद्ग्ग॥५॥

उन्होंने द्वारकाधीश के दर्शन कर वहाँ से दूसरा रास्ता लिया। वे दोनों फिरते-फिराते अनिहलपट्टन नामक नगर में पहुँचे।

षट्पात्

जिन दिवसन गुजरात पुरी अनिहलपुरपट्टनि।
कुल चापोत्कट सूर करैं सासन महीपमनि।
जानैं चालुक जुग हि सदन आनैं आदरसन।
पुहपावति स्वसुता सु दई राजहिं मोहित मन।
दायज अपुब्ब भुव अद्ध दै रक्खे चालुक तुल्यपन।
राजसों जन्यों पुहपावतिय मूलराज मातुल सदन॥६॥

इन दिनों अनिहलपुर पट्टन नामक नगर चावड़ा वंश के क्षत्रिय अथवा चापोत्कट सूरसिंह नामक राजा शासन करता था। उसने इन दोनों चालुक्य राजकुमारों को अपने राज्य में आया सुन आदर दे कर अपने पास बुलवाया। वहाँ आने पर राजा ने अपनी पुत्री पुष्पावती का हाथ, विवाह सम्पन्न कर बड़े भाई राज के हाथ में दिया। इस विवाह के उपलक्ष्य में दहेज के रूप में बहुत सारा द्रव्य और अपने राज्य की आधी भूमि उसे प्रदान की और उस चालुक्य (सोलंकी) राज को बराबरी का दर्जा दे कर अपने राज्य में रखा। यहीं मामा के घर में चालुक्य राज को पुष्पावती की कोख से मूलराज नामक पुत्र की प्राप्ति हुई।

मूलराज गहि कुमति मूढ मातुल कुल मारिय।
सब गुज्जरधर राज्य धनी अप्पन भुज धारिय।
अनिहलपुर तब तैंहि भये भूपति सोलंकी।
जैनमत हु दृढ जत्थ कर्‌यो स्वीकृत अघकंखी।

चंद्रगिरि प्रमुख तनुजात त्रय मूलराज नृप कै भयो।
चालुक निकेत तजि चावरन जब गुज्जर जनपद गयो॥७॥

मूलराज ने कुमति के अधीन अपने मामा के कुल का ही नाश कर डाला, उसने अपने मामा को सकुटुम्ब मार दिया और गुजरात राज्य की भूमि राज्य पर अधिकार कर लिया। अनिहलपुर पट्टन तभी से चालुक्यों के अधिकार में आ गया। पाप की आकांक्षा वाले सोलंकियों (चालुक्यों) ने फिर जैन मत को अंगीकार कर उसे दृढ़ किया। राजा मूलराज चालुक्य के चंद्रगिरि सहित कुल तीन पुत्र जन्मे, तभी से गुजरात जनपद वाला यह राज्य चावड़ा वंश के क्षत्रियों का घर छोड़ कर चालुक्यों के घर में जा बसा।

प्रायो मरुदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

षट्पात्

सूर अठी सिवदत्त हुवो संभर उदार हद।
जिण कीधा रण जोड़ि मोड़ि अरिथाट बिना मद।
घण सात्रव दळ घेरि दुसह आघात दबाया।
धनचंद्रा अभिधान जेण परणी प्रिय जाया।
श्रीकंठ भूप गोतम सुता तिण पिचंड रणमत्त रै।
हेळा उदार अंगज हुवो रुद्रदत्त सिवदत्त रै॥८॥

इसी काल में सांभर का राजा शिवदत्त बना। इस उदार पर वीर राजा के कई युद्ध लड़े और अपने शत्रुओं को दबा कर उन्हें मदहीन बनाया। शत्रुओं के कई दलों को घेर कर उन्हें अपने शस्त्रों के प्रहार से मार भगाया। इस राजा शिवदत्त ने धनचन्द्रा नामक कन्या से विवाह किया। श्रीकंठपुर के राजा गौतम की कन्या इसी धनचन्द्रा के गर्भ से राजा शिवदत्त के उदारमना पुत्र रुद्रदत्त का जन्म हुआ।

दोहा

साथ करे शिवदत्त रो, धनचंद्रा सुरधाम।
गुण सीता सत्वर गई, लै गळबांह ललाम॥९॥

राजा शिवदत्त की मृत्यु हो जाने पर उसकी रानी ने उसका स्वर्गलोक तक साथ निभाया। पतिव्रता सीता का गुण ले कर वह रानी (धनचन्द्रा)

अपने पति के शव के गले में गलबाँहे डाले इस जगत से विदा हुई अर्थात् पति के साथ सती हुई।

षट्पात्

बंधूगढ जदुबंश फबै हरराज बिनाफर।
जमुना तनया जास सदन आणी बरि संभर।
रुद्रदत्त जिण निरत पुत्र जणिया कुळदीपक।
सात जिके रणसूर प्रथम ईस्वर अवनीपक।
भैरव तदग्ग खयरव अभय अभ्रवाज तिम बग्घउर।
बलि ब्रघ्नदेव सरखेल बुध धारण सब कुळ धर्म धुर ॥१०॥

बंधुगढ़ के यदुवंशी राजा हरराज की कन्या यमुना से विवाह कर सांभर के इस चहुवान राजा रुद्रदत्त ने अपनी रानी बनाया। राजा को इस रानी यमुना की कोख से सात पुत्रों की प्राप्ति हुई। उनमें सबसे बड़ा ईश्वर नामक हुआ जो राजा बना। उससे छोटे भैरव और खयरव हुए। इनके बाद दो निडर वीर अभ्रवाज और बग्घउर जन्मे। फिर ब्रह्मदेव और सरखेल हुए। ये सातों ही भाई बुद्धिमान और धर्म की नीति पर चलने वाले थे।

दोहा

रुद्रदत्त नरराज रा, इम छ भेद चहुवाण।
जे पच्चीस गत भेद जुत, पहुँ इकतीस प्रमाण ॥११॥

रुद्रदत्त राजा के बाद चहुवान कुल में छह भेद हुए। हे राजा रामसिंह! मैंने अब तक चहुवान कुल के कुल पच्चीस भेद गिनाए पर इस राजा के बाद वे बढ़ कर इकतीस भेद हो गए हैं।

पादाकुलकम्

भैरव कुळ अभिधा करि संभर, सब भैरव संगर अग्रेसर।
खयरव बंस हुवा गाहण खल, चाहुवाण खयरव रणनिश्चळ ॥१२॥
अभ्रवाज कुळ रा अवनीपति, अभ्रावा चहुवाण बळी अति।
इण कुळ हुवो गदाधर उद्धत, जादव दल दळिया जिण जुद्धत ॥१३॥

इम जे बग्घउरा कुळ उज्जळ, बाघोरा चहुवाण महाबळ।
व्रघ्नदेव कुळभव ब्रध्नेचा, मोसर जगत जिकां जस मेचा॥१४॥
हुवो प्रथित इणकुळ नृप मोहण, जाड़ेचा हणिया जिण जोहण।
सब सरखेल तणां सरखेला, आहव अरिकुळ देण उथेला॥१५॥

हे राजा रामसिंह! रुद्रदत्त के पुत्र भैरव के सारे वंशज भैरव उपटंक वाले युद्ध में अग्रणी रहने वाले वीर चहुवान हुए। खयरव की औलादें खयरव चहुवान के नाम से विख्यात हुईं। अभ्रवाज के सारे वंशज अभ्रावा जो रण में निश्चल रहने वाले थे। इस तरह के चहुवान कहलाए। इस वंश में गदाधर जैसा वीर जन्मा जिसने यादवों की सेना का युद्ध में नाश किया। इसी प्रकार बग्घउर के वंशज बाघोर चहुवान के उपटंक वाले हुए। ब्रध्नदेव की औलादें आगे जा कर ब्रध्नेचा के नाम से जानी गई। इनमें से कई योद्धा अवसर मिलते ही यश अर्जित करने वाले हुए। इसी प्रसिद्ध वंश में राजा मोहन हुआ जिसने युद्ध में जाड़ेचा क्षत्रियों से लोहा ले कर उन्हें हराया। सरखेल के सारे वंशज सरखेला चहुवान कहलाए जो युद्ध में अपने शत्रुओं को उखाड़ने वाले हुए।

इण कुळ जंभ हुवो अवतारी, मारव चमू सहज जिण मारी।
रुद्रदत्त तजतां बपु राणीं, जमुनां साथगई जगजाणीं॥१६॥
ईश्वर हुवो रुमापुर ईस्वर, दोय बार परसे जगदीस्वर।
उपयम दोय किया मुडिं आतां, बसुधा अचळ करे जसबातां॥१७॥
बरदवान अरु कटक निवेसण, संकर भूप अपर तिम संघण।
कुळ सैंकर अर बैस कहावैं, परदळ गंजि सदा जयपावै॥१८॥
सरणि बीच करि बिहित सगाई, वां निज निज तनया परणाई।
..॥१९॥

इसी सरखेला वंश में जंभ जैसा निडर योद्धा जन्मा जिसने मारवाड़ प्रदेश की सेना का सहज ही विनाश कर डाला। इस तरह राजा रुद्रदत्त के सभी पुत्र अपना वंश चलाने वाले कुलदीपक कहे गए। जब राजा रुद्रदत्त ने अपने शरीर का त्याग किया तो उसकी रानी यमुना ने भी उसके साथ सहगमन किया और वह इस जगत में विख्यात हुई। अपने पिता राजा रुद्रदत्त

की मृत्यु के बाद उसका सबसे बड़ा पुत्र ईश्वर सांभर नगर का अधिपति हुआ जिसने धर्म की राह का अनुसरण करते हुए दो बार तीर्थ यात्राएँ की। वापस लौटेते हुए दो विवाह किए और अपने यश को पृथ्वी पर चिरस्थायी किया। राजा ईश्वर की बर्दवान और कटक के मुकाम पर सैंगर और बैस जाति के शंकर और संघण क्षत्रिय राजा जो अपने शत्रुओं को मार कर उन पर विजय करने वाले थे ने रास्ते में ही चहुवान राजा की सगाई की ओर उन दोनों राजाओं ने अपनी-अपनी कन्या का विवाह उसके साथ किया।

दोहा

सैंगरनृप संकर सुता, नवनंदा जिण नाम।
बैस बंस सिंघण सुता, रुचिरा गुण अभिराम॥२०॥
इम ईस्वर दुलही उभय, आयो परणि उदार।
संभरपुर कीधा सतत, वितरण रण मख वार॥२१॥
उदित हुवा रुचिरा उदर, ईस्वर रै सुत आठ।
उमादत्त अग्रज अडर, करण भस्म अरिकाठ॥२२॥

सैंगर वंश के राजा शंकर की नवनंदा नामक पुत्री और बैस क्षत्रिय वंश के राजा सिंघण की रुचिरा नामक कन्या से राजा ईश्वर ने विवाह किया। इन दोनों गुणवान और सुन्दर राजकन्याओं का दूल्हा बन कर, चहुवान नृप ईश्वर ने उन्हें अपनी रानियाँ बनाया। विवाहोपरान्त राजा अपनी राजधानी सांभर को आया जहाँ उसने अपने द्वार पर कई यज्ञ संपन्न किये और ऐसे अवसरों पर प्रचुर राशि का दान किया। इस रानी रुचिरा की कोख से राजा को आठ पुत्रों की प्राप्ति हुई जिनमें सबसे बड़ा उमादत्त हुआ जो शत्रु रूपी काठ को जलाने वाला अग्निवंशी सचमुच अग्नि रूप था।

सचरणगद्यम्

उमादत्त रै अनुज मयूरध्वज बहुलक गजलदेव तिलवाट चीबक सर्पट चित्रराज ए सात भ्राता सोदर हुवा जिकां मैं मयूरध्वज रा कुळ रा तो समस्त चहुवाण मोरेचा कहावै।

जिण मयूरध्वज रै बडो पर्बत छोटो तुट्ठणपाल ए दोय पुत्र हुवा जिकां मैं पर्वत रा कुळ रा चहुवाण तो पब्बया इसो उपटंक पावै।

अर पर्बत रै अनुज तुठ्ठणपाल साँचोर जाय अमल कीधो जिणरा वंस रा चहुवाण साँचोर कहीजे।

इण रीति मोरेचा चहुवाणं रा मुख्य दोय भेद श्रवणपथ मैं गहीजै ईश्वर रा तीजा पुत्र बहुलक रा बंस रा समस्त बहोला चहुवाण कहाया ॥२३॥

अर जिणरा अनुज गजलदेव रा कुळ रा सब चहुवाण गयला इसो उपटंक देर मागधलोकां गाया।

तिणरा अनुज तिलवाट रा वंस रा तिलवाड़िया चहुवाण जाणिया।

अर तिणरा अनुज चीबक रा चीबा सर्पट रा सर्प्पटा चित्रराज रा चित्रावा चहुवाण बखाणिया ॥२४॥

इण चित्रराज रै चंडालीक चाहड़ बटराज मौरिक रैवत चंदण तथा बंकट ए सात पुत्र जाणिया।

जिकां में चंडालीक रा चंडालीक चाहड रा चाहड बट राज रा बडेरा मौरिक रा मोरी रेवत रा रेवड़ चंदण रा चंदण वंकट रा कुळ रा वंकट ए सात भेद चित्रावा चहुवाणां रा मुणिया ॥२५॥

राजा उमादत्त के सात छोटे भाइयों में मयूरध्वज, बहुलक, गजलदेव, तिलवाट, चीबक, सर्पट और चित्रराज थे। इनमें से मयूरध्वज के सारे वंशज मोरेचा चहुवान कहलाए।

मयूरध्वज के बड़ा पर्वत और छोटा तुठ्ठणपाल ये दो पुत्र हुए इनमें से पर्वत के वंशज सभी पब्बया चहुवान के उपटंक वाले हुए। और पर्वत के छोटे भाई तुठ्ठणपाल ने साँचोर को जीत कर अपने अधिकार में किया। इसके वंशज इसीलिए साँचोरा कहलाए। आगे चल कर मोरेचा चहुवानों के दो मुख्य भेद सुनने में आते हैं। राजा ईश्वर के तीसरे पुत्र बहुलक के वंशज बहोला चहुवान कहलाए और बहुलक से छोटे भाई गजलदेव के कुल वाले सारे चहुवानों को गयला उपटंक वाले कह कर मागध लोग उनका यश करते हैं। इससे छोटे भाई तिलवाट के वंशज तिलवाड़िया चहुवान कहलाए।

राजा ईश्वर के छठे पुत्र चीबक के वंशज चीबा सातवें पुत्र सर्पट के वंशज सर्पटा और चित्रराज के वंशज चित्रावा चहुवान कहलाते हैं। इस

चित्रराज के चंडालिक, चाहड़, वटराज, मौरिक, रैवत, चंदण, और बंकट ये कुल सात पुत्र हुए। इनमें से चंडालीक के वंशज चंडालीक, चाहड़ के चाहड़, वटराज के वडेरा, मौरिक के मोरी, रैवत के रेवड़, चंदण के चंदण और बंकट के वंशज बंकट नाम से कहलाए और इस प्रकार चित्रावा चहुवानों के सात भेद कहे गए।

जिकां मैं मोरेचां रै अंतर्गत पब्बया चहुवाण कहिया जिण वंसमैं राजा भीम जिसा महापराक्रमी चहुवाण हुवा।

अर साँचोरा मैं रणधीर जयमल्ल त्रिलोचन जिसा पृथ्वी रा कंवाड़ उपजिया जिकां सोमनाथ संकररो लिंग तोड़ि पाछो जावतां अलबरा पुत्र नासरुद्दीनरा पुत्र गजनवी सुलतान महमूदसुबुक्तगी री फोजां रा तोड़िया ढुवा॥२६॥

इन में से मोरेचों के अन्तर्गत पब्बया चहुवान कहे इस वंश में राजा भीम जैसा महापराक्रमी चहुवान हुआ और साँचोरों में रणधीर, जयमल और त्रिलोचन जैसे पृथ्वी के किवाड़ (बहादुर रक्षक के अर्थ में) पैदा हुए जिन्होंने सोमनाथ के मंदिर में महादेव का लिंग विग्रह तोड़ कर जाते हुए अलब के पुत्र नासरुद्दीन के पुत्र (अर्थात् अलब के पौत्र) सुलतान महमूद सुबुक्तगी की सेना के समूह का नाश किया।

दोहा

हरी बहोळां मैं हुवो, चाढण जळ चहुवाण।
जिण दहिया दहिया जुड़े, पावक दाव प्रमाण॥२७॥
गयलां मैं गंभीर नृप, हुवो अनड़ असिहत्थ।
जिण सैंगर जसराज रो, बळ हणियो भरि बत्थ॥२८॥
करण भूप तिलवाट कुळ, कीधो सुजस प्रकास।
...॥२९॥

बहोला चहुवानों के वंश में हरि जैसा उत्पन्न हुआ जिसने अपने वंश को यश रूपी जल चढ़ाया और जिसने वन में लगी हुई अग्नि के समान दहिया वंश के क्षत्रियों को भस्म किया। इसी प्रकार गयला चहुवानों के कुल में गंभीर जैसा राजा हुआ जिस अनम्र योद्धा ने तलवार हाथ में ले कर जसराज

सैंगर की सेना के समूह को काट कर नाश किया। इसी तरह राजा गंभीर जैसा तिलवाट चहुवानों के कुल में राजा करण हुआ जिसने पृथ्वी पर अपना सुयश फैलाया।

षट्पात्

चीबक कुळ चक्रधर किया तोमर रण कण कण।
सर्पटकुळ वसुसेण रूप गोहिल हणियो रण।
चंडालीक सुचंद्र दुलभ सांसण सत दीधा।
चाहड़ भड़ चक्रधर कळह सत्तरि जय कीधा।
दिल्लीस मुगल बाबर दहल जाणी निसदिन जेण री।
बटराज बंसधारी प्रबळ लाग अनिस जल लेण री॥३०॥

चीबक चहुवानों के वंश में चक्रधर जैसा वीर जन्मा जिसने युद्ध में तोमर क्षत्रियों को कण-कण जैसा कर बिखेर दिया अर्थात् उन्हें एक-एक कर मार डाला। सर्पट चहुवानों के कुल में वसुदेव जैसा योद्धा हुआ जिसने रणभूमि में गोहिल राजा को मारा। चंडालीक चहुवानों के वंश में सुचन्द्र जैसा वदान्य हुआ। जिसने सौ गाँवों की जागीर (सांसण) बाँटी। चाहड़ चहुवानों की खांप में चक्रधर जैसा योद्धा हुआ जिसने निरन्तर सत्तर युद्धों में विजय पाई। इसी तरह राजा चित्रराज से चली चित्रावा शाखा में प्रबल बटराज जैसा वीर उत्पन्न हुआ जिसके आंतक से दिल्ली का बादशाह बाबर भी नित्य प्रति भयभीत रहता था जिसने कर रूप में मात्र यश ही लिया अर्थात् वह यशलोभी अत्यन्त वीर हुआ।

दोहा

मोरिक कुळ मोरिक हुवो, चित्रांगद चहुवाण।
तिण रचियो चीतोड़गढ़, पहु रणथंभ प्रमाण॥३१॥
रैवतकुळ भूपति रयण, चंदण कुळ नृप चाच।
हरि बंकट ए सब हुवा, समर दिखावण साच॥३२॥

मोरी चहुवानों के कुल में राजा चित्रांगद जैसा महापराक्रमी योद्धा हुआ जिसने रणथंभोर जैसा सुरक्षित दुर्ग चित्तौड़गढ़ में बनवाया। रैवत चहुवान के

कुल (रेवड़) में राजा रयण और चंदण चहुवानों की शाखा में राजा चाच, हरि और बंकट जैसे वीर उत्पन्न हुए जिन्होंने युद्ध में अपनी वीरता का प्रदर्शन कर अपने वीर होने को प्रमाणित किया।

पाय समय तजियो प्रथित, ईस्वर नृप निज अंग।
नवनंदा रुचिरा निपुण, सहगति कीधो संग॥३३॥

अच्छी उम्र बिता कर प्रसिद्ध राजा ईश्वर चहुवान ने अपना शरीर त्यागा जिसके साथ नवनंदा और रुचिरा उसकी दोनों रानियों ने सती हो कर पति का साथ निभाया।

षट्पात्

उमादत्त चहुवाण छत्र धरियो संभर छम।
परणी गोहिल पुंज सुता ललिता पुरसंक्रम।
प्रथम चतुर जस पुत्र अनुज बच्छल रण उद्धत।
बळे प्रबाचक बीर सूर झम्मर तिम संगत।
ए च्यारि उमादत्तज अठै बच्छल कुळ बाछल घणां।
पावचा प्रवाचक रा प्रकट, झम्मरिया झम्मर तणां॥३४॥

अपने पिता के स्वर्गवास के बाद चहुवान उमादत्त ने सांभर का राज सिंहासन संभाला। इस समर्थ छत्रधारी राजा ने संक्रमपुर के गोहिल राजा पुंज की पुत्री ललिता से विवाह किया। राजा उमादत्त को इस रानी ललिता के गर्भ से चार पुत्रों की प्राप्ति हुई। पहला चतुर और दूसरा बच्छल जो रण में वीर योद्धा था। तीसरा प्रवाचक और चौथा वीर झम्मर नामक था। राजा उमादत्त के ये चार सपूत कहे गए। इनमें से बच्छल के वंशज बाछल कहलाए। प्रवाचक की संतानें पावचा और झम्मर की झम्मरिया (झांवरिया) उपटंक वाली हो कर प्रसिद्ध हुईं।

दोहा

वच्छलकुळ वलभद्र नृप, बलू प्रवाचक बंस।
अडर हुवा नृप ए उभय, इतर कुळां अवतंस॥३५॥

बच्छल के कुल बाछला चहुवानों में राजा बलभद्र जैसा और प्रवाचक

के कुल पावचा चहुवानों में राजा बलू जैसे उत्पन्न हुए जो इन दोनों निडर कुलों को सुयश दिलवाने वाले हुए।

षट्पात्

चतुर हुवो चहुवाण अनड़ संगर अगवाणी।
जल्लह सुता जद्दोणि रूमा आणी जिण राणी।
तास थिया सुत तीन सूर अग्रज सोमेस्वर।
तुलसीरक्खण तेम अनुज सल नाम उजागर।
त्रय मांहिं वंस मज्झिम तणां तुलसीरक्खणिया तिके।
कुळ सलाउत्त सल रा कहै जण जण रण जुज्झण जिके॥३६॥

युद्ध में सदा अग्रणी रहने वाला अनम्र योद्धा चहुवान चतुर अपने पिता का उतराधिकारी हो कर सांभर का राजा हुआ जिसने यादव वंशी राजा जल्लह की पुत्री रूमा से विवाह कर उसे अपनी रानी बनाया और उसे ले कर रूमा (सांभर) आया। इस राजा के तीन पुत्र हुए जिनमें सबसे बड़ा वीर सोमेश्वर था। इसके दो छोटे भाई तुलसीरक्खण और सल थे। इन तीनों में से बिचले (मझले) पुत्र तुलसीरक्खण के वंशज, तुलसीरक्खणिया कहलाए और रण में पूरी वीरता से जूझने वाले सलाउत चहुवानों की शाखा सल के नाम से चली। सल के वंशज सलावत कहलाए।

दोहा

तुलसीरक्खण कुळतिलक, हुवो बिदित हम्मीर।
ऊपजियो सल कुळ असह, बीर राज नृप बीर॥३७॥
चतुर साथ पूगी चतुर, सती रुमा सुरलोक।
सोमेस्वर संभर सुपहु, थियो दमण अरि थोक॥३८॥
प्रातिहार बुधपाळ री, सुता प्रमा गुणसुद्ध।
सोमेस्वर परणी सुमति, ललित रूप जसलुद्ध॥३९॥
तिण सोमेस्वर रै तनय, हुवा उभय हमगीर।
एक भरत दूजो उरथ, निज कुळ चाढण नीर॥४०॥

तुलसीरक्खणिया वंश में वंश का तिलक (श्रेष्ठ) हम्मीर हुआ और इसी प्रकार अप्रतिम योद्धा चहुवान राजा वीरराज जैसा वीर सलावत वंश में पैदा हुआ। जब सांभराधीश चतुर का इंतकाल हुआ तो उसकी चतुर रानी रूमा ने स्वर्गलोक तक अपने पति का साथ निभाया। चहुवान नृप चतुर के मृत्योपरांत उसका पाटवी पुत्र सोमेश्वर सांभर का राजा बना जो युद्ध में अपने बहुसंख्यक शत्रुओं का दमन करने वाला था। प्रतिहार राजा बुधपाल की सुलक्षणा और गुणवती कन्या प्रभा से सुमतिवान और यशलोभी राजा सोमेश्वर ने विवाह कर उसे अपनी रानी बनाया। इसी प्रतापी राजा सोमेश्वर की रानी प्रभा के गर्भ से दो पुत्र जन्मे जिनमें से एक का नाम भरत और दूसरे के उरथ था। ये दोनों वीर अपने कुल की कीर्ति को बढ़ाने वाले हुए।

डिड्डुरकुळ पीथल निडर, अधिप भरत भव एस।
अस्थिपालकुळ उरथ भव, धारो श्रवण धरेस॥४१॥
अस्थिपाळ नृप उरथकुळ, जिण कुळ रा रणजोध।
हाडा ग्रंथनिदान है, सो सब मुख्य सुबोध॥४२॥
राम भूप कुळ राज रो, सो इण ग्रंथ असेस।
जदपि सुणायो जावसी, एक तदपि उपदेस॥४३॥

आगे राजा भरत के कुलश्रेष्ठ पुत्र डिडडुर अथवा पृथ्वीराज हुआ और उरथ के वंश में अस्थिपाल जन्मा। हे राजा रामसिंह! आप सुनें कि उरथ कुँल में जन्मे इसी अस्थिपाल के वंशज रणभूमि में वीरता से भिड़ने वाले कई योद्धा हुए। इनमें से एक मुख्य हाडा था जो कि इस ग्रंथ (वंश भास्कर) के बनने का मुख्य कारण बना अर्थात् इसी हाड़ा कुल के इतिहास के प्रसिद्ध करने के निमित्त इस सुबोध ग्रंथ की रचना हुई। हे राजा रामसिंह! इस ग्रंथ में आपका ही कुल मुख्य और पूरा है। इसे सम्पूर्ण रूप से आपको सुनाया जाएगा पर अभी मैं अपना एक उपदेश देता हूँ। अर्थात् अपनी बात आंशिक रूप से कहता हूँ।

प्रायो ब्रजदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

दोहा

उरथ बंस बलि अक्खिहों, तुम जामैं सिरताज।
भनैं तदपि कुल भरत को, मागध मुख्य समाज॥४४॥

पहुँ पित्थल हम्मीर पुनि, जिहिं अन्वय बिच जात।
कारन तस पहिलैं कहों, सोही जनन सुहात॥४५॥
लहि समाप्ति हम्मीर लग, बलि नृप तावक बंस।
बिबिध कथा जुत बरनिहों, उरथ बंस अवतंस॥४६॥

मैं उरथ के वंश को बाद में कहूँगा जिस वंश के आप मुकुट हैं पर चूंकि भाट लोग भरत के वंश को मुख्य वंश गिनते हैं इसलिए मैं उसका वर्णन पहले करूँगा। इसका एक कारण यह भी है कि भरत के वंश में पृथ्वीराज और हम्मीर जैसे प्रतापी पुरुष जन्मे। लोगों को भी इसी क्रम में यह वर्णन सुनना अधिक सुहाएगा। मैं हम्मीर सिंह तक इस वंश का वर्णन कर लूँ इसके बाद हे उरथ वंशी राजा रामसिंह! मैं आपके वंश का विविध आख्यानों सहित पूरा वर्णन करूँगा।

इति श्रीवंशभास्करे महाचम्पूके पूर्वायणे चतुर्थ राशौ वीतिहोत्र-चण्डासिबंशवर्णने विक्रमसमाप्तिसमय कलिबर्षसंख्यासूचनकुमारिका-जनविलपनस्वानुजतिरस्कृतत्यक्तशूकरक्षेत्रराज्यसमनुष्ठितद्वारकायात्रा-प्रत्यागतचालुक्यराज वीज गुर्जरदेशान्तर्भूताऽणिहलपुरराज्यर्द्धप्रापण-निपातितमातुलबंशराजात्मजचालुक्यमूलराजसर्वतज्जनपदराज्यसमाक्र-मणतज्जैनमतनिष्ठनास्तिकीभवनचण्डासिराजशिवदत्त धनचन्द्रा रुद्रदत्त यमुना परिणयनेश्वर प्रमुखरौद्रदत्तिसप्तक समुद्भवनततषट्क भैरवादि-भिन्नचाहुवाणषड्भेदप्रापणशाकम्भरराडीश्वर नवनन्दा रुचिरा विवहनतत्पुत्रोमादत्ताऽऽ द्यऽष्टक समुद्भवनमयूरध्वजादिपुत्रसप्त संततिमोरे-चादिभिन्नभेदसप्तक समासादनमोरेचाऽन्तर्गतपब्बयोपाख्या संचोरोपा-ख्या द्वय प्रकटनचित्रावान्तर्भूतचण्डालीकाऽऽदिभेदसप्त प्रवर्तनशाक-म्भरेश्वरपट्टपपुत्रोमादत्त ललितो द्वहनतच्चतुरा ऽऽदिपुत्रचतुष्कोत्पादन-चतुरसोदरवत्सलादित्रिक वंशीयचाहुवाणवात्सलादिभेदत्रय धारणतत्रया ग्रजशाकम्भरराजचतुर रमा परिणयनतत्पुत्रसोमेश्वरा दित्रयो द्भवनसोमेश्वर प्रमा परिणयनतदनुजद्वय संतानस्वस्वजनक नामोपाख्याधारण चण्डा-सिराज सोमेश्वर पुत्र भरतो रथ युग्मजन्मप्रापणं षष्ठो मयूखः। आदितः पञ्चदशोत्तरशततमः॥११५॥

श्रीवंशभास्कर महाचम्पू के पूर्वायण की चौथी राशि में अग्निवंशी

चहुवान वंशवर्णन में राजा विक्रमादित्य की समाप्ति के समय कलियुग के वर्षों की संख्या का बताना, भारतवर्ष के मनुष्यों का विलाप करना, अपने छोटे भाई सहित अनादर पाकर सुखपूर्वक किये हुए सूकर क्षेत्र के राज्य को छोड़कर द्वारका की यात्रा करके पीछे आते सोलंकी राज और बीज का गुजरात देश के भीतर अनिहलपुर का आधा राज्य पाना, मामा के वंश को मार कर राज के पुत्र सोलंकी मूलराज का मामा के देश और राज्य को लेना, और उसका जैनमत में निष्ठा रखकर नास्तिक होना, चहुवाणराज शिवदत्त का धनचन्द्रा से, रुद्रदत्त का यमुना से विवाह करना, ईश्वर को आदि लेकर रुद्रदत्त के सात पुत्रों का जन्म होना, उन में छह भैरव आदि का चहुवानों में अलग-अलग छह भेद होना, सांभर के राजा ईश्वर का नवनन्दा और रुचि से विवाह करना, उसके उमादत्त आदि आठ पुत्र होना, मयूरध्वज आदि सात पुत्र की सन्तान मोरेचा आदि सात भेद होना, मोरेचों में पब्बय नामक और संचोरा नामक दो भेद प्रकट होना, चित्रावों के भीतर चंडालीक आदि सात भेद प्रवृत्त होना, सांभर के पति ईश्वर के पाटवी पुत्र उमादत्त का ललिता से विवाह करना, उसके चतुर आदि चार पुत्रों का उत्पन्न होना, चतुर के छोटे भाई वत्सल आदि तीनों के वंशवाले चहुवानों में वत्सल आदि तीन भेद धारण करना, इन तीनों में बड़ा सांभर के राजा चतुर का रमा से ब्याह करना, उसके सोमेश्वर आदि तीन पुत्र होना, सोमेश्वर का प्रभा से विवाह करना, उसके दोनों पुत्रों की सन्तान का अपने अपने पिताओं के नामों के अनुसार उपनाम धारण करना, चहुवाण राज सोमेश्वर के भरत और उरथ दो पुत्रों का जन्म प्राप्त होने का छठा मयूख समाप्त हुआ और आदि से एक सौ पन्द्रहवाँ मयूख हुआ।

प्रायो ब्रजदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

दोहा

सती प्रभा किय सहगमन, सोमेश्वर पति सत्थ।
पुरसम्भर भूपति भयो, संभर भरत समत्थ॥१॥

अपने पति राजा सोमेश्वर के मरणोपरान्त रानी प्रभा ने सहगमन किया अर्थात् वह जीवित ही साथ जली। अपने पिता की मृत्यु के बाद सांभर नगर की राजगद्दी पर समर्थ वीर भरत बैठा।

पज्झटिका

युद्धेष्ट भरत सुत रण अमान, तस पुत्र महीसिंहा भिधान।
तस सिंह तास सुत चंद्रगुप्त, आत्मज दुव प्रकटिय तास उप्त॥२॥
अग्रज प्रताप संभर अधीस, आरत्न अनुज रन बुध बलीस।
जेठे प्रताप के बंसजात, खंडन खल कहिहैं बहुरि ख्यात॥३॥
चतुरंग भयो आरत्न अंस, चोरंग बजत सब तास वंस।
चतुरंगकेर जयधर सुचाप, ताकै सुबाहु अरि तुहिन ताप॥४॥
सुत समरसिंह ताकै अधीर, ताके आखंडल विदित बीर।
सुत बीरदेव तस तस विसोक, तस विपुलसेन जिहिं तस त्रिलोक॥५॥
ताकै नृसिंह बलराज तास, वरसिंह तास हुव रन विलास।
तस बिल्हन तस जयदेव जानि, तस जद्दव रनपटु प्रमानि॥६॥

इस राजा भरत के असंख्य युद्ध करने वाला युद्धेष्ट नामक पुत्र हुआ जिसके आगे महीसिंह नामक पुत्र जन्मा। महीसिंह के सिंह नामक और सिंह के चन्द्रगुप्त हुआ। राजा चन्द्रगुप्त के दो पुत्र हुए। बड़ा प्रताप नामक जो सांभर का राजा बना और उससे छोटा आरत्न था जो बलवान और युद्ध विद्या में चतुर था। बड़े भाई राजा प्रताप के वंशज दुष्टों का नाश करने वाले और नामचीन हुए। आरत्न का पुत्र चतुरंग हुआ जिसके वंशज चोरंग के उपटंक वाले चहुवान हुए। चतुरंग का पुत्र जयधर हुआ जो अच्छा धुनर्धर था। अपने शत्रुओं रूपी बर्फ के लिए अग्नि रूप सुबाहु नामक पुत्र जयधर के घर जन्मा। सुबाहु के समरसिंह, समरसिंह के आखंडल, आखंडल के बीरदेव, बीरदेव के विसोक, विसोक के विपुलसेन, विपुलसेन के नृसिंह, नृसिंह के बलराज, बलराज के वरसिंह, वरसिंह के बिल्हन, बिल्हन के जयदेव और जयदेव के जद्ददेव नामक वीर पुत्र जन्मे।

तस विजयपाल तस कर्ण ख्यात, तस लक्खन तस सहदेव जात।
दुस्सासन ताकै जय निदान, सुत तास महावीर सु सुजान॥७॥
तस राम बिजयराज सु तदीय, हरिसिंह तास हुव गुन गरीय।
सुत तास भयो बरसिंह सूर, गोविंद तास गुन धर्म पूर॥८॥

युद्ध विद्या में चतुर जद्ददेव के विजयपाल नामक पुत्र जन्मा, जिसका

कर्ण नामक पुत्र प्रसिद्ध है। आगे कर्ण के लक्खन, लक्खन के सहदेव, सहदेव के दुस्सासन, दुस्सासन के महावीर, महावीर के राम, राम के विजयराज, विजयराज के हरिसिंह, हरिसिंह के बरसिंह, बरसिंह के गोविंद नामक वीर और गुणवान पुत्र हुए।

गोविंद तयन हुव त्रय गहीर, वरन्यों तह जेठो भीम बीर।
क्रम तास अनुज मौक्तिक कहंत, मानिक्यराज तीजो महंत॥९॥
मौक्तिक कुल मोरी खग्ग ख्यात, मानिक्यबंस मानिक कहात।
अरु जेष्ठ भीम जो हुव उदार, सुत तास धुरंधर रन सिंगार॥१०॥
सुत दोय धुरंधर कै सुजान, अग्रज सहस्त्रमल्ला ऽभिधान।
जाको लघुसोदर देवराज, संगरनिसंक बपु बीरसाज॥११॥
जेठेसन संजमराज जोध, बरवीर भयो अतिबल सुबोध।
जब पित्थ महुव्वानैर खेत, छकि लोह पर्यो परिकर समेत॥१२॥
इक गिद्ध बैठि नृप उत्तमंग, कढ्ढन दृग लग्गो तंहं कुढंग।
अंतिक तस संजमराज एह, दो घायन घुम्मत जिहिं अनेह॥१३॥
तजि मोह पाय पुनि चेत तत्थ, संजम कछु खोले दृग समत्थ।
नृप इच्छन तिच्छन त्रोटि मारि, देख्यो सु गिद्ध कढ्ढत बिदारि॥१४॥

आगे गोविंद के तीन पुत्र हुए जिनमें सब से बड़ा भीम, उससे छोटा मोक्तिकराज और सबसे छोटा मानिक्यराज था। इनमें मोक्तिकराज के वंशज मोरी नाम से प्रसिद्ध हुए और मानिक्यराज के वंशज सारे मानिक चहुवान के उपटंक वाले हुए। बड़े भाई भीम के धुरंधर नामक पुत्र हुआ। इस धुरंधर के आगे दो पुत्र जन्मे जिनमें से बड़ा सहस्त्रमल और छोटा देवराज नामक जो युद्ध में निडर रहने वाला वीर कहलाया। बड़े भाई सहस्त्रमल के संजमराज हुआ जो बड़ा वीर और बलवान योद्धा था। जब पृथ्वीराज चहुवान महोवा के युद्ध में अपने परिकरों सहित घायल हो कर मूर्च्छित हो गया तब एक गिद्ध उसके मस्तक पर आ बैठा और मूर्च्छागत पृथ्वीराज की आँख निकालने लगा तब पास में ही घाव लगने से छटपटाता हुआ यही संजमराज पड़ा था। इसे ज्योंही थोड़ा चेत आया और आँखें खोली तो क्या देखता है कि गिद्ध अपनी चोंच के प्रहार से राजा की आँख निकालने को उद्यत है।

चंचू छत पावत कछुक चेत, नृप कैहु प्रकट हुव हिय निकेत।
पैन हुव सक्ति हत्थन हलान, डरिजाय गिद्ध जिम लै उडान॥१५॥
नीकैं सु वृत संजम निहारि, नृप नैन त्रान विरचन बिचारि।
निज कालखंज हिय दृग निकासि, सब गिद्ध अग्ग डारे बिसासि॥१६॥
व्है प्रीति गयो तिन्ह लै विहंग, संजम बपु छोरयो धर्म संग।
भुल्ल्यो न बत्त यह भुम्मिपाल, बचिगो सु आयुबल लहि बिसाल॥१७॥
जयपाल मारि चंदेल मान, आयो पुनि दिल्लय चाहुवान।
....॥१८॥
सामंत लरे जे निज सहाय, बखसे पुर निवसथ तिन्ह बढाय।
संजमसुत बुल्ल्यो तंहं सुबोध, जिहिं नाम लंगरीराज जोध॥१९॥

गिद्ध की चोंच के आघात से पृथ्वीराज को थोड़ा होश आया पर इस अवस्था में राजा के हाथों में इतनी शक्ति शेप न रही कि जिससे वह गिद्ध को उड़ा सके। इधर संजमराज ने देखा कि क्षण भर का विलम्ब भी नुकसानदेह हो सकता है। राजा पृथ्वीराज की आँख जा सकती हैं तो तुरन्त इस वीर योद्धा संजमराज ने अपनी ही कटार से स्वयं की छाती चीर कर अपना कलेजा निकाला और गिद्ध के आगे डाल दिया। इसके बाद उसने अपनी आंखें निकालीं और गिद्ध की दिशा में फैंकीं और धर्मपूर्वक उस वीर ने अपनी देह त्याग दी। गिद्ध उसके कलेजे को ले कर उड़ गया। राजा पृथ्वीराज की आयु शेष थी इसलिए बच गया पर राजा इस बात को नहीं भूला उसने इस एहसान को याद रखा। जब पृथ्वीराज चंदेल जयपाल को मार कर वापस दिल्ली आया तब उसने अपने उन सारे सामन्तों को जो उसके साथ महोवा के युद्ध में लड़े थे जागीरें दी। इसी वक्त राजा पृथ्वीराज ने संजमराज के वीर पुत्र लंगरीराज को दिल्ली बुलवाया।

दिन्हों तिहिं अप्पन अद्धदेस, निजतुल्य सोहु किन्नों नरेस।
करि भेट अद्धआसन स्वकीय, जंपिय मम संजमदत्त जीय॥२०॥
इम दियउ सबन समुचित उदार, सो भुप गयउ पहिलैं सिकार।
बुल्ले करोल तंहं बिनु निगाह, बदरिन थह सोवत इक बराह॥२१॥

तजि तजि हय सो सुनि पकरि तेग, बिंट्योहि जाय थह वह सबेग।
सूकरमति पत्ते ढिग असेस, मयमत्त गज्जि निकस्यो मृगेस॥२२॥
झंपत जिहिं झारिय रक्ख रीस, स्वक प्रतल लंगरीराज सीस।
इक अंखि कर्ण कर पय उतारि, पंचानन लैगो तल प्रहारि॥२३॥
अवसेस रहे इम अद्ध अंग, लंगर तब डार्यो चरन लंग।
अभिधान लंगरी धारि एम, खल साल भयो लहि प्रान खेम॥२४॥

अपने राज्य का आधा भाग प्रदान कर उसे भी अपनी तरह राजा बनाया। यही नहीं अपने आसन का आधा भाग (गद्दी का हिस्सा) दे कर कहा कि मेरा यह नया जीवन संजमराज का ही दिया हुआ है। इस प्रकार सभी को पुरस्कार स्वरूप जागीरें बाँटी। यही राजा पहले एक बार शिकार खेलने गया था वहाँ उसे शिकारियों ने बिना देखे ही कह दिया कि हे राजा! इन बेर के वृक्षों में अवस्थित थेह (सूअर के रहने का स्थान) में एक सूअर सो रहा है। यह सुन कर राजा सहित सभी घोड़ों से उतर पड़े और अपनी-अपनी तलवारें ले कर थेह की दिशा में बढ़े। वे सभी तो यह सोच कर बढ़े थे कि आगे सूअर है पर वहाँ गर्जना करता हुआ मदोन्मत्त सिंह निकला। थेह से निकलते ही केसरी ने कूद कर लंगरीराज के सिर पर अपनी हत्थल का प्रहार किया और लंगरीराज की एक आँख, एक कान, एक हाथ और एक पैर तोड़ कर सिंह ले गया। पीछे इस तरह चहुवान का आधा शरीर ही रह गया तब उस वीर योद्धा ने अपने पाँव में लंगर (सांकल) पहन लिया जिससे उसका नाम लंगरीराज हुआ। यही बीर थोड़े दिनों में भला चंगा हो गया और अपने शत्रुओं के चित्त में साल्हने वाला हुआ।

जब किय नरेस कनउज्ज जंग, अप्पिय तब सेस जु अद्ध अंग।
पुर कान्यकुब्ज बीथी बजार, धोरन चलाय रिपु रक्तधार॥२५॥
बहु सत्रु रमनि कंकन विदारि, पहुपंगु चित्त आतंक पारि।
बैरी दिखाय कहतो सु बैन, संजमसुव सोयो बीरसैन॥२६॥
सारंग भुप खिच्ची चुहान, बलि बीर भ्रात तस बलनिधान।
बीरम चुहान चोरंग जत्थ, अजपाल भूप रट्ठोर तत्थ॥२७॥
नृप पंगु केर मंत्री सुमंत्र, नरसिंह बहुरि संगर स्वतंत्र।
इत्यादि नृप रु गज बहु गिराय, लंगरधर पहुँच्यो सुरनिकाय॥२८॥

गोला लगैं न जो तास गत्त, तो जाय गहैं जयचंद तत्त।
संजमसुव ऐसें लरि असंक, उज्जल किय आसन अद्धअंक॥२९॥

राजा पृथ्वीराज चहुवान ने जब कन्नौज का युद्ध लड़ा तब यही वीर लंगरीराज अपना शेष रहा आधा अंग छोड़ कर स्वर्गलोक को गया। वह भी सहज ही नहीं, उसने कन्नौज की गलियों और बाजार में अपने शत्रुओं के रुधिर के नाले बहाए और अपने शत्रुओं की स्त्रियों के कंगन तोड़ कर (अर्थात् उन्हें विधवा बना कर) पूरे कन्नौज में मुझे शत्रु बताओ ऐसा कहने वाला संजमराज का पुत्र वह वीर रणशय्या पर सोया। उसी का सजातीय भाई खिच्ची (खींची) राजा सारंग भी उतना ही बलवान और भीषण संग्राम करने वाला वीर था। इस कोटि में आने वाले अन्य वीरों में चोरंग गौत्र का चहुवान वीरमदेव और अजपाल राठौड़ थे। उपरोक्त चारों वीरों सारंग खीची, चोरंग बीरमदेव, अजपाल राठौड़ और राजा जयचंद को अच्छी मंत्रणा देने वाले मंत्री नरसिंह जैसे राजाओं और योद्धाओं सहित शत्रुसेना के कई हाथियों को मार कर लंगरधर (लंगरीराज) युद्ध में मरा। वह भी तब कि जब उसको आकर तोप का गोला लगा। यदि उसे गोला नहीं लगता तो कदाचित् वह वीर लंगरीराज राजा जयचंद को भी मार गिराता। संजमराज के इस पुत्र ने पूरी निडरता से युद्ध लड़ कर राजा पृथ्वीराज द्वारा प्रदत्त आधे राज्य और आधे आसन को कलंकित नहीं होने दिया, बल्कि वह अपने पराक्रम से अर्जित यश से उसे निष्कलंक कर गया।

अरु देवराज सुत बल अपार, प्रकट्यो सु आतताई उदार।
कनउज्ज जंग जिहिं पित्थ काज, सयजोर हनें बहु नृप समाज॥३०॥
कंठीरव केसरिराज नाम, सजि संग संखधर गन सुधाम।
किन्नों बढि जासन रन कराल, ढाहत मदमुद्धत गजन ढाल॥३१॥
चालुक प्रतान पट्टा नरेस, दाहिम पहार पति सिंधुदेस।
प्रामार राम सोढा प्रवीर, हमगीर संखुला नाम हीर॥३२॥
इत्यादि संखधर सहंस एक, संहारि देवअंगज सटेक।
चोरंग आतताई चुहान, थिर भक्ति लह्यो सिव मुख्यथान॥३३॥

राजा धुरंधर के छोटे पुत्र देवराज के महाबली वीर आततायी नामक पुत्र हुआ जिसने कन्नौज के युद्ध में राजा पृथ्वीराज चहुवान के पक्ष में लड़

कर अपने बाहुबल से कई शत्रुपक्ष के राजाओं को मारा। उसने संग्राम में सिंह रूप सांखला वंशीय केसरीराज को उसके दल सहित नष्ट किया। इस वीर आततायी चहुवान ने रण में आगे हो कर मदोन्मत हाथियों की पंक्ति रूप ढालों को गिरा कर चालुक्यराज प्रतान को और सिंध देश के राजा दाहिमा पहार को काट कर रणभूमि में सुलाया। इन शत्रुओं के अतिरिक्त प्रमार वंशीय रामसिंह सोढा और उसके साथी हीरसिंह सांखला का भी युद्ध में काम तमाम किया। इस प्रकार युद्ध में देवराज के पुत्र वीर आततायी चहुवान ने कुल मिला कर एक हजार योद्धाओं को मार गिराया। ऐसे चोरंग वंशीय आततायी चहुवान ने भक्ति कर शिव के क्षेत्र में प्रमुख स्थान पाया।

दोहा

इम बज्जिय आरत्न कुल, चाहुवान चोरंग।
अब प्रताप कुल अक्खियत, जहं डिड्डुर जित जंग ॥३४॥

हे राजा रामसिंह! यह तो मैंने (ग्रंथकर्ता सूर्यमल) चहुवान आरत्न के वंशज चोरंगों का वृत्तान्त कहा! अब मैं आपको चहुवान प्रताप के वंश का हाल कहता हूँ। जिसमें प्रसिद्ध वीर राजा पृथ्वीराज (डिड्डुर) हुआ।

इतिश्रीवंश भास्करे महाचम्पूके पूर्वायणे चतुर्थ राशौ बीतिहोत्र-चण्डासिवंशवर्णने शाकम्भरराजसोमेश्वर पट्टपपुत्रभरत बंशान्तर्गतलङ्ग-रिराजा ऽऽततायि पर्यन्तप्रताप सिंहाऽनुजाऽऽरत्नवंशवर्णनतदन्तर्गत-चतुरङ्गादिचहुवाणभेदत्रय प्रकटनं सप्तमो मयूखः ॥७॥ आदितः षोडशो-त्तरशततमः ॥११६॥

श्री वंशभास्कर महाचम्पू के पूवार्यण की चौथी राशि में अग्निवंशी चहुवान वंशवर्णन में सांभर के राजा सोमेश्वर के पाटवी पुत्र भरत के वंश के भीतर लंगरीराज, आततायी पर्यन्त प्रतापसिंह के छोटे भाई आरत्न के वंशवर्णन के भीतर चतुरंग आदि चहुवानों के तीन भेद प्रकट होने का सातवाँ मयूख समाप्त हुआ। और आदि से एक सौ सौलह मयूख हुए।

प्रायो ब्रजदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

दोहा

चंद्रगुप्त चहुवान कै, पट्टप तनय प्रताप।
नेता हुव संभरनगर, छितिपालक धरि छाप ॥१॥

प्रकटिय पुत्र प्रताप कै, देवसिंह अभिधान।
सुत ताकै हुव सिंहबर, पहु संभर अतिप्रान॥२॥
तनुज सिंहवर कै भयो, मोहद्रूप महीस।
साकंभर अधिराज सो, सबल तप्यो सब सीस॥३॥
हुव सुत मोहद्रूप कै, रत्नसिंह रिपु काल।
सेनराज तस तास सुत, संप्रतिराज नृपाल॥४॥
संप्रतिराज अनेह सन, कछु अंतर अनुमान।
लियउ बप्प चित्तोरगढ, हनि मोरी चहुवान॥५॥

चहुवान राजा चन्द्रगुप्त का पाटवी पुत्र प्रताप नामक था जो सांभर नगर का राजा बना और जो प्रजापालक की छाप अपने नाम के साथ लगाने वाला हुआ। इस राजा प्रताप के आगे देवीसिंह नामक पुत्र जन्मा। देवीसिंह के वरसिंह नामक अत्यन्त बलवान पुत्र हुआ। इस वरसिंह के मोहद्रूप नामक पुत्र हुआ। जिसने सांभर का राजा बन कर सभी पर अपने बल से राज्य किया। इस राजा मोहद्रूप के शत्रु संहारक रत्नसिंह जैसा पुत्र जन्मा। आगे रत्नसिंह के सेनराज और सेनराज का पुत्र संप्रतिराज क्रमश: सांभर के राजा बने। इस राजा संप्रतिराज के काल में ही अथवा थोड़ा आगे पीछे वाले समय में बप्पा रावल ने चित्तौड़गढ़ पर मोरी चहुवान राजा को मार कर अपना अधिकार जमाया।

षट्पात्

संप्रतिराज नरेस तनय नृप नागहस्त हुव।
स्थूलानंद तदीय सूर तस लोहधार सुव।
धर्मसार तस धन्य तास सुत बैरिसिंह मित।
बिबुधसिंह तस बिबुध योगसूर सु तदीय इत।
तस चंद्रराज प्रकटिय तनय जो संभरपुर बास तजि।
अजमेर आय निवस्यो अडर समुचित खंधावार सजि॥७॥[१]

---

१. यहाँ भी ग्रंथ में विक्षेप लगता है पर मूल पांडुलिपि से मिलान करने पर ज्ञात हुआ कि ६ . संख्या ६ के स्थान पर लिपिकर्ता द्वारा ७ की संख्या का प्रयोग हुआ है। अत: छन्द संख्या ६ के नहीं होने पर भी यह विवरण पूर्ण है और लगातार है। सं.

चहुवान राजा संप्रतिराज के नागहस्त नामक पुत्र हुआ। आगे नागहस्त के स्थूलानंद, स्थूलानंद के लोहधार, लोहधार के धर्मसार, धर्मसार के बैरीसिंह, बैरीसिंह के बिबुधसिंह हुए और यह वंश आगे चला। राजा बिबुधसिंह के विद्वान पुत्र योगसूर जन्मा। इसी योगसूर के चंद्रराज नामक पुत्र हुआ जो सांभर का निवास छोड़ कर अजमेर नगर में आ बसा। उसने यहाँ अजमेर में अपनी राजधानी बनाई और अपने राज्य को जमाया।

ब्रघ्ननगर सन सज्जि अग्ग मानिक्यराज दल।
प्रतिहारन के द्रंग लये इतके अप्पन बल।
पहिले नृप अजपाल सहर अजमेर बसायउ।
स्वीय हत्थ करि सोहु अमल जिततित अपनायउ।
अजमेर बहुरि संभर उभय इक्क हि घर तबतैं रहिय।
अब चंद्रराज संभर तजि रु सकुल वास अजमेर किय॥८॥

पूर्व में ब्रघ्न नगर से मानिक्यराज चहुवान ने अपनी सेना सज्जित कर बलपूर्वक प्रतिहारों से उनके नगर और गाँव छीन लिये थे। पूर्व में राजा अजपाल (अजयपाल) ने अजमेर नगर बसाया था और अपने बल के आधार पर उसने कई नगरों को जीत कर अधिकार जमाया था। इस प्रकार अजमेर और सांभर दोनों ही राज एक ही घर के अधिकार में आए तब चहुवान चन्द्रराज ने सांभर छोड़ कर अपने कुल सहित अजमेर में निवास किया।

दोहा

संभररपुर कोउक सचिव, संभर थप्पि स्वकीय।
अप्प रह्यो अजमेर इम, बैरिन दमत बलीय॥९॥
सर हय रस प्रामारसन, बित्तत हायन व्रात।
चंद्रराज बिंटुलि चढ्यो, द्रोहिन ताप दिखात॥१०॥
हुव रसूल याही समय, मुलक अर्बबिच मिच्छ।
जिहिं पैगंबर सब जवन, अक्खत बरनि अनिच्छ॥११॥
पृथ्वीराज अनेह पर, उचितक थानक आनि।
जवनवृत्त कछु जंपिहैं, हुव अज्जन जिम हानि॥१२॥

सांभर नगर में अपने एक सचिव को स्थापित कर (उसकी देखरेख में राज पाट दे कर) चहुवान स्वयं अजमेर में रहा। उस वीर ने यहाँ रहते हुए भी अपने कई शत्रुओं का नाश किया। विक्रम प्रमार के (विक्रम संवत्) के वर्ष ६७५ बीते थे कि चन्द्रराज बिंटुली (अजमेर के दुर्ग का नाम गढ़ बिंटली है) पर अपने शत्रुओं के समक्ष अपना प्रताप प्रदर्शन करते हुए चढ़ा। इसी समय अरब देश में रसूल (मुहम्मद) पैदा हुआ जिसको सारे यवन इच्छा रहित अपना पैगम्बर मानते हैं। हे राजा रामसिंह! जब मैं पृथ्वीराज के समय का वर्णन अपने ग्रंथ में उचित स्थान पर करूँगा तब उसी स्थान पर कुछ यवनों का वृत्तान्त भी लिखूँगा जिनके कारण आर्यों की हानि हुई।

अतिबल पुर अजमेर इत, दैन रिपुन उरदाह।
चंद्रराज नृप कै भयो, कृष्णराज नरनाह॥१३॥
सुत तस हरिहरराज हुव, बिल्ल्हनराज तदीय।
दुव तस पृथ्वीराज इक, तिम अनुराज द्वितीय॥१४॥
अबलों कुल अनुराज को, न रह्यो दिष्ट निदान।
गदत किते मागध गयो, प्रजा बिनुहि तजि प्रान॥१५॥

अभी तो मैं सांभर अजमेर के संदर्भ को ही कह रहा हूँ। उन दिनों अजमेर नगर में अपने बाहुबल से शत्रुओं के हृदय में दाह जगाने वाले राजा चन्द्रराज चहुवान के एक पुत्र जन्मा जिसका नाम कृष्णराज था। आगे क्रमशः कृष्णराज के हरिहरराज, हरिहरराज के बिल्हनराज हुए। बिल्हनराज के दो पुत्र हुए पहला पृथ्वीराज और दूसरा अनुराज। हे राजा रामसिंह! दुर्भाग्य से अनुराज का वंश अधिक चल नहीं सका और विलुप्त हो गया। यहाँ तक कि कई बड़वाभाट तो अपनी बहियों में ऐसा लिखा हुआ बताते हैं कि अनुराज अप्रज (निःसंतान) ही मर गया था।

अरु अग्रज अनुराज के, पृथ्वीराज सुधाम।
पायो अहिउडु[१] जन्म करि, दूजो डिड्डुर नाम॥१६॥

१. अहिउडु का अर्थ है अश्लेषा नक्षत्र और पृथ्वीराज ने अश्लेषा नक्षत्र में जन्म होने के कारण डिड्डुर नाम पाया क्योंकि अश्लेषा नक्षत्र के जन्म वालों के नाम के आदि अक्षर डी-डू-डे-डो होते हैं।

डिड्डुरकुल सब डिड्डुरा, यह धारत उपटंक।
सब चहुवानन सिरमुकुट, संगर अजिर निसंक॥१७॥

पर बिल्हनराज का बड़ा पुत्र पृथ्वीराज गुणों की खान था। चूंकि उसका जन्म आश्लेषा नक्षत्र (अहिउडु) में हुआ था इस कारण से उसका दूसरा नाम डिड्डुर भी था। यही कारण है कि पृथ्वीराज के सारे वंशज डिड्डुरा उपटंक वाले हुए जो चहुवान वंश के मुकुट रूप और युद्ध के अखाड़े में निडर हो कर पूरे पराक्रम से लड़ने वाले माने गए।

पादाकुलकम्

डिड्डुर सुत धर्माधिराज हुव, बीसलदेव भयो ताकै सुव।
मुद्राअब्ज दैन जो पन करि, धन अर्जन लग्गो साह सधरि॥१८॥
बीस कोटि चय होय सक्यो बसु, इहिं बिच बीसलदेव तज्यो असु।
बसुधा पिहित कोटि जे बीस हि, धरी रही तजिगो धरनी सहि॥१९॥
पहुनृपराम श्रवन खिन पाऊं, सब यह बिस्तर सहित सुनाऊं।
रासो नाम बीर रस छायो, बंदी चंद जु ग्रंथ बनायो॥२०॥
जो वामैं न असंगत जानी, बरनों सोहि धरहु श्रुति वानी।
रासे मांहिं जो न कवि रक्खी, सूरिं सुकवि मागध जिहिं सक्खी॥२१॥
चंद जदपि अक्खी न तदपि चुनि, सोपैं भनों प्रथित ग्रंथन सुनि।
बीसल पट्ट जबहि उवइट्ठो, मुदित लग्यो खट प्रकृतिन मिट्ठो॥२२॥

डिड्डुर का पुत्र धर्माधिराज हुआ और आगे धर्माधिराज के बीसलदेव जन्मा। इस बीसलदेव ने एक अरब रुपये देने का प्रण लिया और वह इसके लिए धन संचय के कार्य में संलग्न हो गया। वह अपने लक्ष्य के अनुरूप धन संचय न कर सका और मात्र बीस करोड़ का धन ही एकत्र कर पाया था कि उसकी मृत्यु हो गई। उसने बीस करोड़ की पूँजी को गुप्त रूप से रखने के लिए भूमि में गहरा गाढ़ दिया पर वह धन वहीं पृथ्वी में गड़ा ही रह गया और पृथ्वी का स्वामी वह बीसलदेव भूमि को छोड़ गया। हे राजा रामसिंह! यदि आप थोड़ा कान लगाए तो मैं इसे विस्तारपूर्वक सुनाता हूँ। स्तुति पाठ कर राजाओं को जगाने वाले चंद भाट ने वीर रस से परिपूर्ण *पृथ्वीराज रासो* नामक एक ग्रंथ की रचना की थी। उसमें उसने जो असंगत (अनुचित) बातें

कही हैं उन्हें छोड़ कर उचित बातों का आपके लिए वर्णन करता हूँ उन्हें सुनें! पर जो बातें हे राजा ! रासो में नहीं लिखी हुई है और उन्हें मैं कहता हूँ तो ऐसी बातें मैं पंडितों, विद्वानों और कवियों के कथनानुसार कह रहा हूँ अर्थात् मैं उनकी साक्षी में कह रहा हूँ। जो जानकारियाँ चन्द ने नहीं दी उन्हें मैं प्रसिद्ध ग्रंथों के हवाले से कहूँगा। राजा बीसलदेव जब गद्दी पर बैठा तो वह राज्य के छहों अंगों का प्रिय था।

प्रथम भूप परन्यों प्रतिहारी, पुनि आनी रानी प्रमारी।
व्याह उचित इत्यादि करे वहु, प्रतप्यो घने नृपन सिर जो पहु॥२३॥
ता नृप कै सारंगदेव सुत, प्रतिहारी औरस प्रकट्यो नुत।
तोक सु होत मरी जननी तस, बीसलदेव भयो चिंता बस॥२४॥
धात्री बनिकबधू इक धारी, कुमर ताहि सोंप्यो मुदकारी।
लख्यो दुग्ध ताको सुभलच्छन, बैद्यक मत सन खोजि बिचच्छन॥२५॥

राजा बीसलदेव ने पहला विवाह प्रतिहार कुल में किया था और उसकी दूसरी रानी परमार थी। वह राजा इस प्रकार उचित विवाह सम्पन्न कर अन्य कई राजाओं के सिर पर तपा अर्थात् उसने अन्य राजाओं पर भी राज्य किया वे राजा इस राजा के मातहत थे। राजा बीसलदेव के सारंगदेव नामक पुत्र प्रतिहार रानी के गर्भ से जन्मा पर दुर्भाग्यवश इस पुत्र को जन्म देते ही उसकी माँ प्रतिहार रानी मर गई। इससे बीसलदेव को बहुत चिंता हुई। राजा ने एक बनिये की स्त्री को इस सद्यजात बालक की धात्री (धाय मां) बना कर बालक उसे सौंप दिया। चूँकि वैद्यों ने इस स्त्री के दूध को शुभ लक्षणों से संपन्न और बालक के लिए गुणकारी माना था।

तिन दिवसन नृप की बिनास भुव, गौरी नाम तास तनया हुव।
बालक यातैं बनिकबधू कों, भूप दयो रक्खन कुल भू कों॥२६॥
धात्री निलय जाय हित धार्‌यो, पय करि पोत सुता जुग पार्‌यो।
इक कुच निज कन्यामुख अप्पैं, सारंगहिं कुच अपर समप्पैं॥२७॥
इक गृह इक सज्जा इक आसन, सिसु जुग इम सुबढ्यो सुखमा सन।
गौरी अरु सारंग परस्पर, बंधी भगिनी भ्रात प्रीति बर॥२८॥

उन्हीं दिनों में राजा बीसलदेव की विनाशभूमि (विनाश का कारण

क्योंकि राजा बीसलदेव ने इसी गौरी नामक बनिक कन्या से बलात्कार किया था और यही उसके विनाश का कारण बनी) गौरी नामक एक कन्या उस बनिये के घर पैदा हुई। राजा ने अपने कुल और भूमि के रखवाले अपने पुत्र राजकुमार को उस बनिक बधू (धात्री) को सौंपा। धात्री ने अपनी पुत्री के साथ-साथ राजा के इस पुत्र सारंग को भी अपना दूध पिला कर बड़ा किया। वह अपना एक स्तन अपनी कन्या के मुँह में देती तो दूसरा उसी समय सारंग के मुँह में देती। एक ही घर, एक ही शय्या, एक ही आसन पर दोनों बालक सुखपूर्वक बढ़ने लगे। गौरी और सारंग दोनों परस्पर भाई-बहन की तरह प्रीतिपूर्वक रहे।

बनिकसुता जब नव हायन बय, हुव तब भूप समय लखि हितमय।
पुत्री करि बीसल परिनाई, मन्नि बनिक कोउक जामाई ॥२९॥
बनिक सु काहू काज गयो बन, नियति अधीन हन्यों पंचानन।
भूप आदि सब परे सोक भर, दुक्ख लह्यो गौरी अति दुस्तर ॥३०॥
सारंगहु भगिनी सम सोच्यो, मन करि कैद देह सुख मोच्यो।
नास्तिक बनिक गेह सिसुपन तैं, सुन्यों अधिक अरहंत सबन तैं ॥३१॥
मन्नि कुमर सारंग सोहि मत, गह्यो भजन कहि संभु पारगत।
अब गौरी सु अधिक आराध्यो, सारंग हु तिम तिम सब साध्यो ॥३२॥

बनिक पुत्री जब नौ वर्ष की हुई तब राजा ने उचित समय जान कर इस गौरी को एक बनिये के घर उचित वर देख कर ब्याही। एक बार वह बनिया किसी कार्यवश वन में गया वहाँ उसे सिंह ने मार डाला। राजा आदि सभी को बहुत शोक हुआ और गौरी को वैधव्य की गहरी पीड़ा हुई। राजकुमार सारंग को भी अपनी बहनवत गौरी जितना ही आघात लगा परिणामस्वरूप उसने अपने मन को कड़ा कर देह सुख का त्याग किया। चूँकि सारंग अपने बाल्यकाल से ही इस नास्तिक मत (जैन मत) के अनुयायियों के परिवेश में पला-बढ़ा और बचपन में ही अरिहंतों (जैनियों के देवता) के बारे में बहुत अधिक सुना था। इसका यह असर हुआ कि सारंगदेव ने भी जैन मत स्वीकार कर लिया और वह 'जिन प्रभु ही पार लगाएगा' ऐसे आशय के भजन गाने लगा। इधर गौरी ने विधवावस्था में अपना पूरा समय और मन अरिहन्तों की आराधना में लगाना शुरू किया तो

सारंगदेव ने भी उसके साथ इसी मत की साधना में मन लगाया।

बलि गौरी सु गई पुष्कर बन, संजम ब्रह्मचर्य ब्रत सद्धन।
कुमर तबहु अतिसय दुख कीनों, दृढ करि तित्थगरन मन दीनों॥३३॥
ऋसभ अजित संभव अभिनदंन, बिहित सुमति पद्मप्रभ बंदन।
पुनि सुपार्श्व चंद्रप्रभ नामक, सुविधि रु सीतल बहुरि सुधामक॥३४॥
पुनि श्रेयांस रू बासुपूज्य पहु, बिमल अनंत तीर्थकृत गुन बहु।
कथित धर्म बलि सांति कुंथु अर, मल्लि रु सुब्रत निमि रु नेमि बर॥३५॥
पार्श्व बीर संकृति तीर्थंकर, रटन लग्यो सु कुमर जिन तत्पर।
कहैं तथाहि जैन गोमुख हुव, महायक्ष तिम त्रिमुख भक्तिधुव॥३६॥
यक्षनायक रु तुंबुरु जैसैं, कुसुम बहुरि मातंग हु तैसैं।
विजय अजित ब्रह्मा यक्षेश्वर, कुमार छमुख पाताल किन्नर॥३७॥
गरूड़ त्योंहिं गंधर्ब जैन जिम, बलियक्षेट कुबेर बरुन तिम।
प्रथित भृकुटि गोमेध पार्श्व पुनि, मातंग हु जिनमत उदार मुनि॥३८॥

थोड़े दिनों बाद गौरी अपनी इन्द्रियों का निग्रह कर पुष्कर के वन प्रांतर में ब्रह्मचर्य व्रत की साधना करने चली गई तब राजकुमार सारंगदेव ने इस बिछोह के दुःख में अपना मन तीर्थंकरों में दृढ़ किया। जैन मत में कहे गए ऋषभदेव, अजितप्रभ, संभवप्रभ, अभिनंदन, सुमतिप्रभ, पद्मप्रभ, सुपार्श्वप्रभ, चंद्रप्रभ, सुविधिप्रभ, शीतलप्रभ, श्रेयांशप्रभ, वासुपूज्य, विमलप्रभ, अनंतप्रभ, धर्मप्रभ, शांतिप्रभ, कुंथुप्रभ, मल्लिप्रभ, सुब्रतप्रभ, नेमीनाथ, निमिप्रभ, पार्श्वनाथ, महावीर इन चौबीस तीर्थंकरों को तत्परता से राजकुमार सारंगदेव भजने लगा। इन सारे तीर्थंकरों के शिष्यों गोमुख, महायक्ष, त्रिमुख, यक्षनायक, तुंबरु, कुसुम, मातंग, विजय, अजित, ब्रह्मा, यक्षेश्वर, कुमार, छमुख, पाताल, किन्नर, गरूड़, गंधर्व, बलियक्षेट, कुबेर, वरुन, भृकुटि, गोमेध, पार्श्व और द्वितीय मातंग जैसी दृढ़ भक्ति धारण करने वाले प्रसिद्ध जैन श्रावकों को जिन्हें जैन मुनि कहा गया है की तरह वह राजकुमार सारंगदेव भी तीर्थंकरों की भक्ति में अनुरक्त हो गया।

इते भये अरहंत उपासक, सो मत कोन गहैं हितसासक।
वृष गज अश्व रु प्लवग क्रौंच बर, अब्ज रु स्वस्तिक सीतकर मकर॥

श्रीवत्स रु खड्गी लुलाय किरि, स्येन रु बज्र कुरंग छाग फिरि।
नंद्यावर्त घट रु कच्छप गति, नीलोत्पल रु संख अहि मृगपति॥४०॥
क्रमसन ए लच्छन तीर्थंकर, धारत रहत अजस्र दयाधर।
बासुपूज्य पद्मप्रभ लोहित, सुभ चंद्रप्रभ पुष्पदंत सित॥४१॥

इन चौबीस तीर्थंकरों की उपासना करने वाले उनके यक्ष कहे गए पर स्वधर्म का हित सोचने वाला कौन पुरुष इस मत को ग्रहण कर सकता है? अर्थात् कोई नहीं। अब आगे उन चौबीस तीर्थंकरों के चिह्न कहता हूँ वे हैं। वृष (बैल), गज (हाथी), अश्व (घोड़ा), प्लवग (बंदर), क्रौंच (पक्षी विशेष), अब्ज (कमल), स्वस्तिक, सीतकर (चन्द्रमा), मकर (मगरमच्छ), श्रीवत्स (सात के अंक के आकार वाला चिह्न), खड्गी (गैंडा), लुलाय (भैंसा), किरि (सूअर), स्येन (बाज पक्षी), बज्र, कुरंग (हरिण), छाग (बकरा), नंद्यावर्त (एक प्रकार का स्वास्तिक), घट (घड़ा), कच्छप (कछुआ), नीलोत्पल (रात्रि को खिलने वाला कमल), शंख, अहि (सर्प), मृगपति (सिंह)। (ये सभी लक्षण जैन मत के अनुसार तीर्थंकरों के पाँव के टखने से चार अंगुल नीचे रोम के गुच्छों से प्राकृतिक रूप से निर्मित होते हैं।) इन्हें दयावान तीर्थंकर निरन्तर धारण किये रहते हैं। इन चौबीस तीर्थंकरों में से वासुपूज्य और पद्मप्रभ लाल रंग के शरीर वाले और चन्द्रप्रभ और पुष्पदंत (सुविधिप्रभ) श्वेत रंग के कहे गए हैं।

मुनि रु नेमि मेचक छबि धारैं, मल्लि रु पार्श्व नील अनुहारैं।
सेस रहे जे सब तीर्थंकर, कनक कांति धारत विग्रहबर॥४२॥
दुव नेमि रु सुब्रत हरिबंसज, आकृति खिल बैवस्वत अंसज।
भूप नाभि जितसत्रु जिताऽरि, संबर मेघ अधर सुभकारी॥४३॥
भूप प्रतिष्ट रु महासेन अथ, नृप सुग्रीव महीपति दृढरथ।
विष्णु बहुरि बसुपूज्य नरेस्वर, कृतब्रर्मा सिंहसेन भूबर॥४४॥
भानु विश्वसेन सूर सुदर्सन, कुंभ सुमित्र बिजय छोनीधन।
बहुरि समुद्रविजय नृप जानहु, अस्वसेन सिद्धार्थ प्रमानहु॥४५॥
कहैं जनक ए तित्थयरन के, महत बिकार निवारक मन के।
मरुदेवा विजया अरु सेना, सिद्धार्था मंगला अनेना॥४६॥

सुसीमा रु पृथ्वी पुनि जैसैं, विदित लक्खना रामा तैसैं।
नंदा विष्णु जय रुस्यामा, सुयसा बलि सुव्रता सुधामा॥४७॥
अचिरा श्री देवी प्रभावती, पद्मा वप्रा सिवा रुमावती।
वामा त्रिसिला ए सब ख्याता, क्रम सन तित्थयरन की माता॥४८॥

शेष तीर्थंकरों में सुब्रतप्रभ और नेमिप्रभ श्याम रंग वाले हुए। इसी तरह मल्लिप्रभ और पार्श्वप्रभ नीले रंग के शरीर वाले थे। शेष रहे सभी तीर्थंकरों के शरीर स्वर्ण कांति को धारण करते थे। नेमिनाथप्रभ और सुव्रतप्रभ ये दोनों हरिवंश में उत्पन्न माने गए शेष सारे तीर्थंकरों को जैन मत के अनुयायी इक्ष्वाकु के कुल में उत्पन्न मानते हैं। ये चौबीसों तीर्थंकर जिन राजाओं से उत्पन्न हैं अर्थात् जिनके पुत्र माने जाते हैं वे क्रमश: इस प्रकार हैं राजा नाभि, जितशत्रु, जितारी, संबर, मेघ, अधर, प्रतिष्ठ, महासेन, सुग्रीव, दृढरथ, विष्णु, वसुपूज्य, कृतवर्मा, सिंहसेन, भानु, विश्वसेन, सूर, सुदर्शन, कुंभ, सुमित्र, विजय, समुद्रविजय, अश्वसेन और सिद्धार्थ। ये सभी उपरोक्त राजा तीर्थंकरों के पिता माने गए जो मनोविकारों को मिटाने वाले हुए। अब हे राजा रामसिंह! मैं इन सारे तीर्थंकरों की माताओं के नाम बताता हूँ। उन्हें भी आप क्रमश: इस प्रकार जानें। मरुदेवा, विजया, सेना, सिद्धार्था, मंगला, सुसीमा, पृथ्वी, लक्खना, रामा, नंदा, विष्णा, जया, श्यामा, सुयशा, सुब्रता, अचिरा, श्री देवी, प्रभावती, पद्मा, वप्रा, शिवा, रुमावती, वामा और त्रिसिला है। ये सभी प्रसिद्ध स्त्रियाँ चौबीस तीर्थंकरों को जन्म देने वाली मानी गई है।

चक्रेश्वरी तथा अजितबला, दुरितारि रु कालिका सुखफला।
महाकालिका स्यामा सांता, भृकुटि सुतारका हु दृढ दांता॥४९॥
असोका रु मानवी रु चंडा, विदिता अंकुसिका उद्दंडा।
कंदर्पा निर्बाणी बला रु, धारणि रु धरणप्रिया चारु॥५०॥
नरदत्ता गांधारी अंबा, पद्मावती तथा जगदंबा।
सिद्धायिका भक्तिगुनसाध्या, ए जैनी देवी आराध्या॥५१॥

हे राजा रामसिंह! अब मैं (ग्रंथकर्ता सूर्यमल) आपको जैन मत को माननें वालों की आराध्य देवियों के नाम कहता हूँ जो इस धर्म की उलायक देवियाँ कही जाती हैं। वे हैं चक्रेश्वरी, अजितबला, दुरितारि, कालिका,

महाकालिका, श्यामा, शांता, भृकुटि देवी, सुतारका, दृढ़दंता, अशोका, मानवी, चंडी, विदिता, अंकुशिका, कंदर्पा, निर्वाणी, बला, धारणि, धरणप्रिया, नरदत्ता, गांधारी, अंबा, पद्मावती, जगदंबा, सिद्धायिका। ये सभी भक्ति के गुण से साधी जा सकने वालीं सुन्दर, सुख का फल देने वालीं और दृढ़ जितेन्द्रिय देवियाँ जैन मत के मानने वालों की आराध्या कही गईं हैं।

दोहा

इमहु भूत उतसर्पिणी, बेला मैं सुभ बादि।
चउवीस हि हुव तित्थंकर, केवलज्ञानी आदि॥५२॥

जैनियों के मत में सर्पिणी काल दो हैं उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी। इनमें उन्नति के समय को उत्सर्पिणी कहते हैं जिसमें वर्ण, गन्ध, रस, आयु, शरीर आदि की क्रम से वृद्धि होती है और अवनति के समय को अवसर्पिणी कहते हैं जिसमें वर्ण आदि उपरोक्त पदार्थों की न्यूनता होती जाती है इनमें गत उत्सर्पिणी काल में श्रेष्ठ वक्ता केवलज्ञानी आदि चौबीस तीर्थंकर हुए हैं जिनके नाम ये हैं, केवलज्ञानी, निर्वाणी, सागर, महायश, विमल, सर्वानुभूति, श्रीधर, दत्त, दामोदर, सुतेजा, स्वामी, मुनिसुव्रत, सुमति, शिवगति, अस्ताग, निमीश्वर, अनिल, यशोधर, कृतार्थ, जिनेश्वर, शुद्धमति, शिवकर, स्पन्दन और सम्प्रति।

पद्मनाभ कों आदिदै, पुनि चउवीस प्रमान।
आगामिनि उतसर्पिणी, व्है करिहै अघहान॥५३॥

और भविष्यत् उत्सर्पिणी में पद्मनाभ आदि निम्नलिखित चौबीस तीर्थंकर होकर पाप का नाश करेंगे उन के नाम ये हैं। पद्मनाभ, शूरदेव, सुपार्श्वक, स्वयंप्रभ, सर्वानुभूति, देवश्रुत, उदय, पेढाल, पोट्टिल, शंतकीर्ति सुव्रत, अमम, निःकषाय, निष्पुलाक, निर्मम, चित्रगुप्त, समाधि, सम्वर, यशोधर, विजय, मल्ल, देव, अनन्तवीर्य और भद्रकृत। प्रत्येक तीर्थंकर के साथ गणधर होते हैं जिनकी संख्या किसी के साथ अधिक और किसी के साथ न्यून है परन्तु वर्तमान महावीर स्वामी के ग्यारह गणधर (गणाधिप) हैं जिनके नाम ये हैं इन्द्रभूति, अग्निभूति, वायुभूति[1], व्यक्त, सुद्धमा, मंदित, मौर्यपुत्र, अवकम्पित, अचलभ्राता, मेंतार्य और प्रभास।

---

१. महावीर के प्रथम तीन गणधर इन्द्रभूति, अग्निभूति और वायुभूति ये तीनों सगे भाई थे। इनका गोत्र गौतम होने से वे गौतम कहलाते हैं। - संपादक

षट्पात्

विग्रह अद्भुतरूप गंध विनु स्वेद रोग मल।
बारिज गंधित स्वास धेनुपय सित रुधिर रु पल।
आहार रु नीहार उभय सब दिट्ठि अगोचर।
अंबर अंबर जास पूज्य ऐसे तीर्थंकर।
जिनके न बढत लोम रु नखर सुर नरा दि बानी बदत।
गद ईति बैर पास न रहैं पूजों तिन्ह बुल्लहिं प्रनत॥५४॥

जिनके शरीर अद्भुत रूप के हैं और जिनका पसीना गन्ध रोग और मल रहित हैं। जिनका श्वास कमल की गन्धवाला और गोदुग्ध के समान श्वेत रंग का रुधिर और मांस है। उनका भोजन और विप्ठा किसी के देखने में नहीं आते, जिनके आकाश ही वस्त्र हैं ऐसे तीर्थंकर पूजनीय हैं और जिनके केश और नाखून नहीं बढ़ते, वे देवताओं की और मनुष्य आदि की भाषा बोलते हैं। रोग, ईति (अतिवृष्टि, अनावृष्टि, टीडी, चूहे, तोते, अपनी सेना, पराईसेना ये सात ईति हैं) और वैर जिनके पास ही नहीं रहते उनको विशेष नम्र होकर पूजूँ, यह सारंगकुमार कहने लगा।

दान लाभ उपभोग भोग बीर्य हु अबिघ्न जंहं।
हास अरति रति भीति सोक मिथ्यात्व नांहिं तंहं।
काम जुगुप्सा द्वेस राग अज्ञान रु अविरति।
अरु निद्रा इत्यादि दोस न करैं जिन संगति।
इक कहि तदीय मत चहि अखिल श्रवण जनन संगति बहत।
सारंगदेव वीसल सुवनु रत्ति दिवस जिन पर रहत॥५५॥

अब आगे वे अठारह दोष बताता हैं जो तीर्थंकरों के कुछ विघ्न नहीं कर सकते, जिनमें पाँच अन्तराय (विघ्न) दान, लाभ, उपभोग (वस्त्र, भूषण स्त्री, ग्रह आदि जो पदार्थ बारंबार भोगने में आते हैं उनको उपभोग कहते हैं) भोगा, (खान, पान आदि एक वार भोग में आने वाले पदार्थ) वीर्य ये पाँच दोष जिन के विघ्न नहीं करते हास्य, अप्रसन्न होना, भीत (भय), शोक, सत्यासत्य का विपरीत ज्ञान, कामदेव, घृणा, द्वेष, प्रीति, अज्ञान, त्याग का

अभाव, निद्रा, ये अठारह दोष जिनके साथ दोष नहीं करते, इस प्रकार कहकर वह कुमार उन्हीं तीर्थंकरों के सम्पूर्ण मत को सुनने के लिए मनुष्यों के साथ रहने लगा। वीसलदेव का पुत्र वह सारंगदेव रात दिन तीर्थंकरों में परायण (अति आशक्त) रहने लगा।

दोहा

गौरी जब पुष्कर गई, तब अतिदुख सुनि तास।
समुझावन बीसल सुपुहु, पुत्र बुलायउ पास॥५६॥

गौरी जब तप करने को पुष्कर गई तब उसका (सांरगदेव का) दुःख सुनकर बीसलदेव ने अपने पुत्र को समझाने को पास बुलाया।

बनिकभाव लखि सस्त्र बिनु, अरु जंपत अरहंत।
कुमर तरजि खिजि नृप कह्यो, का पंहं पढिय कुमंत॥५७॥

अरिहंत को जपता हुआ, बिना शस्त्र बनिये के समान, कुमार को देखकर क्रोध करते हुए राजा ने कहा कि यह कुमंत्र किससे पढ़ा?

षट्पात्

श्रुति सिक्खहु स्मृति सहित सत्त निज प्रकृति सुधारहु।
सक्तित्रय सुत धरहु नीति खट अंग निहारहु।
व्यसन सत्त तजि बीर चारदृग दूर चलावहु।
दिसा काल गति दच्छ सस्त्र बल सिद्धि दिखावहु।
सिंधुरन हयन जवविधि समुझि बिरचि आय अनुसार व्यय।
रिपु उदासीन मित्रन परखि जतन करहु संचन विजय॥५८॥

सारंग कुमार! अपने धर्मशास्त्र सहित वेद को सीखो और अपनी सात प्रकृति (स्वामी, अमात्य, मंत्री, कोश, राज्य, गढ और सेना) को सुधारो और हे पुत्र! राजा की तीन शक्ति (कोश और दंड आदि प्रभुत्व की साधना करने वाली शक्ति का नाम प्रभुशक्ति, और पराक्रम में अपनी शक्ति का विस्फुरण करने का नाम उत्साहशक्ति, और सन्धि साम आदि यथावस्थित करने का नाम मंत्रशक्ति है) को धारण करके यान, विग्रह, द्वैध, आसन और आश्रय इन छहों नीति के अंगों को देखो। हे वीर! मृगया, स्त्रीसंग, मद्यपान, वाक्पौरुष्य

(गाली देना अथवा कठोर बोलना) अर्थदूषण (कृपणता अथवा पराये धन को हरण करना) दंडपौरुष्य (ताड़ना करना) और जुआ खेलना इन सात व्यसनों को छोड़कर अपने हलकारों (खबरनवीसों) रूपी नेत्रों को दूर तक चलाओ! दिशा और समय की गति में चतुर होकर शस्त्रबल की सिद्धि को दिखाओ! इसी प्रकार हाथी, घोड़ों के वेग की विधि को जानकर आमद के अनुसार खर्च करने, शत्रु, उदासीन (शत्रुता और मित्रता दोनों को छोड़कर तटस्थ रहने वाले) और मित्रों की परीक्षा करके विजय संचय करने का यत्न करो!

दोहा

जनक दत्त सिच्छा सुनत, कुमर मन्नि ततकाल।
गत्त उझल्लिय राजगुन, कर झल्लिय करवाल॥५९॥

पिता की दी हुई शिक्षा सुनकर उसके शरीर में रजोगुण उछला और सारंग कुमार ने अपने हाथ में खड़ग उठाया।

इतिश्री वंशभास्करे महाचम्पूके पूर्वायणे चतुर्थ राशौ वीतिहोत्र-चण्डासिबंशबर्णने शाकम्भरराजचान्द्रगुप्तिप्रतापसिंहवंशपरम्परा-ऽऽख्यानसङ्गतयौगशूरिचन्द्राजाऽजमेरनगरस्कन्धावारस्थापनशाकम्भर-सचिवसन्निवसनचान्द्राजिकृष्णराजबंशीयडिड्डुर को पाख्याग्रहणडिड्डुर-पुत्रधर्माऽधिराजोद्भवनतत्पुत्रवीसलदेवाऽजमेरराज्यसमासादनतत्पुत्रसार-ङ्गदेवोद्गमनधात्रेयीसङ्गतिकुमारजैनमतधारणज्ञातदुदन्तवीसलदेवपुत्र-तर्जनतत्कालत्यक्तनास्तिक्यशारङ्गदेवशस्त्रग्रहणमष्टमो मयूखः॥८॥ आदितः सप्तदशोत्तरशततमः॥११७॥

श्री वंशभास्कर महाचम्पू के पूर्वायण की चौथी राशि में अग्निवंशी चहुवान वंशवर्णन में सांभर के राजा चन्द्रगुप्त के पुत्र प्रतापसिंह की वंश परंपरा के आख्यान के साथ योगसूर के पुत्र चन्द्रराज का अजमेर नगर को राजधानी बनाना, सांभर में सचिव को रखना, चन्द्रराज के पुत्र कृष्णराज वंशीय डिड्डुर की सन्तान का डिड्डुर नाम धारण करना, डिड्डुर के पुत्र धर्माधिराज का जन्म होना, उसके पुत्र वीसलदेव का अजमेर में राज्य करना, उसके सारंगदेव नामक पुत्र का उत्पन्न होना और धाय की संगति से कुमार का जैन मत धारण करना, यह वृत्तान्त जानकर वीसलदेव का पुत्र को धमकाना, उसी समय जैन मत छोड़कर सारंगदेव के शस्त्र धारण करने का

आठवाँ मयूख समाप्त हुआ। और आदि से एक सौ सत्रह मयूख हुए।

प्रायो ब्रजदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

षट्पात्

सस्त्र गहत सारङ्ग मुदित बीसल नरेस मन।
दै तिहिं संभरद्रंग पुत्र पठयो तंहं पालन।
बखसि खास गज बाजि सुभग मनिमय सिंहासन।
किन्न बिदा इम कुमर नैरसंभर दुख नासन।
पय जनक केर सुत तब प्रनमि बंधि कटक लहि बीरगन।
ततकाल अप्प संभर तरफ कियउ कुंच अजमेर सन॥१॥

अपने पुत्र सारंग को इस प्रकार शस्त्र उठाते देख कर राजा बीसलदेव मन ही मन अत्यन्त हर्षित हुआ और तुरन्त ही अपने पुत्र को राजा ने सांभर नगर का राजकाज का कार्यभार दे कर सांभर भेजा। बीसलदेव ने अपने पुत्र को खास हाथी, घोड़े, और सुन्दर राजसिंहासन दे कर सांभर की प्रजा के दुःख दूर करने के लिए रवाना किया। कुमार सारंग ने भी तब अपने पिता को प्रणाम किया और वीर योद्धाओं की सेना ले कर तत्काल अजमेर से सांभर नगर की ओर प्रयाण किया।

पादाकुलकम्

दिय नृप संग मुकुंद पुरोहित, तिम कृपालु कायत्थ सचिव तित।
दिय सुत संग भूप रनदुर्जय साँचोरा चहुवान बीर त्रय॥२॥
जे सारंग नृसिंह भानुबर, खंधारी बहबल बलोच बर।
इत्यादिक विस्वासपात्र कति, कुमरसंग सामंत दिय नृपति॥३॥

राजा बीसलदेव ने अपने कुमार के साथ मुकुंद पुरोहित और कृपाल कायस्थ को उसका मंत्री नियुक्त कर भेजा। राजा ने अपने पुत्र के साथ रण में दुर्जेय थे ऐसे तीन साँचोरा चहुवान वीरों को भी भेजा। वे सारंग, नृसिंह और भानु नामक थे। इनके अतिरिक्त एक कंधारवासी बलोच योद्धा भी पुत्र की सहायतार्थ भेजा। अपने विश्वासपात्र इन लोगों को कुमार की मदद के लिए भेज कर राजा बीसलदेव ने मन ही मन शांति महसूस की।

दोहा

इत्यादिक भट संग लहि, सज्जि कटक हित संग।
बीसल सासन सीस बहि, संभर गय सारंग ॥४॥
किय पुब्बहि दुव कुमर के, बालकाल नृप व्याह।
कुमरानी संगति क्रमिय, निरत द्वै हि निजनाह ॥५॥
ते जद्दोनि रु गोरि तिय, लै निज संग कुमार।
संभर पत्तो सुख सरनि, कुल संभर प्रियकार ॥६॥
सम्मुह पुरजन आय सब, बिहित कलस बंधाय।
लहि प्रसाद अंदर लयो, सब तव तंत्र सुनाय ॥७॥

उपरोक्त सभी योद्धाओं को साथ ले कर अपनी सेना सहित सज्जित हो कर राजा पिता बीसलदेव की आज्ञा शिरोधार्य कर कुमार सारंग सांभर को गया। राजा ने पहले बाल्यावस्था में ही अपने कुमार के दो विवाह कर दिये थे। वे दोनों कुंवरानियाँ भी अपने पति का साथ निभाने के लिए सांभर गईं। इनमें से एक यादव वंश की और दूसरी गौड़ क्षत्रिय थी को सारंग कुमार साथ ले कर सांभर नगर पहुँचा। जब राजकुमार का काफिला सांभर नगर की सीमा पर पहुँचा तब कई नगरवासी सामने स्वागत को आए। उन्होंने अपने नए स्वामी को कलश बधा कर महल तक पहुँचाया और कहा कि हम सभी आपकी प्रजा हैं और आपकी आज्ञा के अधीन है।

रानी बीसलदेव की, प्रामारी तिहिंकाल।
कछु कारन संभर हुती, लायो उर तिहिं लाल ॥८॥
प्रनतिकरी सस्सू पयन, गहि जद्दोनि रु गौरी।
राजकुमर संभर रह्यो, जतन प्रजा हित जोरी ॥९॥
धात्री नृप बरजाय दिय, संभर जावहु तू न।
दंड नतो मिलहि दुसह, अतिदुख हेतु अनून ॥१०॥
संभरपुर सारंग गये, इत बीसल अजमेर।
इम सुत धात्री कों अटकि, किय बिचार सर केर ॥११॥

उस वक्त राजा बीसलदेव की प्रमार रानी भी किसी कार्यवश सांभर नगर में ही थी उसने भी अपने बेटे को छाती से लगा कर उसका स्वागत किया। तभी यादव वंशी और गौड़ वंशीय दोनों कुंवरानियों ने अपनी सास के पाँव छुए और आशीर्वाद लिया। इस प्रकार अपनी प्रजा के सुख-चैन की रक्षा करता हुआ राजकुमार सारंग सांभर नगर में रहा। इसी समय उधर अजमेर में राजा बीसलदेव ने अपने पुत्र की धात्री को मना करवाया कि वह सांभर नहीं जाए। यदि इस पर भी तू वहाँ गई तो दंड की पात्र होगी और दंड भी ऐसा मिलेगा कि वह तेरे लिए असह्य दुःख का कारण होगा। राजा बीसलदेव अपने पुत्र को सांभर भेज कर स्वयं अजमेर में ही रहा और अपने कुमार की धात्री (बनिये की स्त्री) को अजमेर में ही रुकने को कह दिया। तब राजा ने अजमेर में एक तालाब बनवाने का विचार किया।

षट्पात्

करि बिचार सर केर भूप सचिवन निदेस दिय।
पुर अजमेर समीप रचहु इक ताल पुण्य प्रिय।
सासन तिन धरि सीस द्रम्म लक्खन लगाय द्रुत।
बीसलसागर नाम रच्यो कासार रीति जुत।
अर्थिन लुटाय बैभव अतुल दिय भोजन लक्खन द्विजन।
अजमेर नगर बीसल अधिप इम बिलसत चहुवान इन॥१२॥

तालाब निर्माण की योजना बनाने के लिए राजा ने अपने सचिव को निर्देश दिया कि अजमेर नगर के समीप ही एक सुहाना और पवित्र सरोवर बनाया जाए। अपने स्वामी की आज्ञा को शिरोधार्य कर लाखों रुपए की लागत से शीघ्र ही एक बड़े सरोवर का निर्माण मंत्रियों ने करवाया और उसका नाम बीसलसागर रखा। जब सागर का निर्माण पूरा हुआ तब राजा ने लाखों ब्राह्मणों को भोजन करवाया और याचकों को बहुत सारा दान दिया। अजमेर नगर पर वह चहुवानों का सूर्य राजा बीसलदेव इस प्रकार तपा।

दोहा

संभर सन प्रामारि सो, आई पुनि अजमेर।
बिलखानों नृप तस बिरह, बुल्लि लई तिहिं बेर॥१३॥

राजा बीसलदेव का मन अपनी रानी में आसक्त था पर इस समय वह सांभर में थी इसलिए अपनी पत्नी की अनुपस्थिति में उसके विरह को असह्य समझ कर उसने रानी को सांभर से अजमेर बुला भेजा।

षट्पात्

प्रामारी रस रत्त रहै बीसल नरेस मन।
ऋतुकालहु तजि रीति इतर रानिन इच्छैं नन।
तब सवत्ति सब तमकि भई एकत्र सोक भरि।
किय उपाय नृपकेर काम नासन बिचार करि।
प्रच्छन्न इक्क कापालिकिय बुल्लि रु तस अनुसरि बचन।
छितिपहिं खवाय औषध कछुक प्रहत कर्यो तिन पुरुखपन॥१४॥

अपनी परमार रानी को राजा अत्यधिक प्यार करता था। इसी प्रीति के कारण वह अपनी अन्य रानियों को ऋतुकाल में भी नहीं चाहता था। (ऋतुकाल में स्त्री को ऋतुदान नहीं देने को धर्मशास्त्र में दोष लिखा है)। इसलिए परमार रानी की सारी कुपित दूसरी सौतनों ने मिल कर विचार किया कि इस राजा के कामदेव का नाश कर देना चाहिए। यह सोच कर उन्होंने गुप्त रीति से एक कापालिक स्त्री को जनाने में बुला कर उससे मंत्रणा की। फिर उस कापालिक (गारूड़ी स्त्री) के कहे अनुसार राजा को उसके द्वारा प्रदत्त औषधि खिला कर उसके पुरुषत्व का नाश कर दिया।

मदननास लखि मोद सकल छोर्यो नृप बीसल।
तुरग ब्रह्मचारी सु रहैं खोजत उपाय बल।
उज्जमास के अंत गयो न्हावन तीरथ गुरु।
मुलक मुलक के मनुज उहां संघट्ट जुरे उरु।
गोकर्ण गिरिस महिमा अमित पथिक कतिक बुल्ले प्रकट।
सुनि नृप सु सेव्य ताकहं समझि बलि लग्गिय अजमेर बट॥१५॥

अपनी काम वासना का इस प्रकार नाश जान कर राजा बीसलदेव ने सारा आमोद-प्रमोद का आनन्द त्याग दिया और वह ब्रह्मचारी राजा मन ही मन अपनी कामशक्ति बढ़ाने का उपाय सोचने लगा। इसी बीच वह कार्तिक माह की पूर्णिमा के दिन तीर्थराज पुष्कर स्नान करने को गया। इस अवसर

पर पुष्कर में स्नान करने दूर देशों से कई लोग आते हैं इसलिए वहाँ कई लोगों का समूह जुड़ा। इनमें से कई जानकार लोगों ने राजा को गोकर्णेश्वर महादेव की बहुत महिमा बताई। यह सुन कर राजा ने वहां जा कर पूजा अर्चना करने का मन बनाया और पुष्कर से वापस अजमेर का मार्ग लिया।

दोहा

भट सचिवन दै राज्यभर, आय नगर अजमेर।
करन कुंच दिस गोकरन, अक्खिय अब न अवेर॥१६॥
जैतसिंह हो निज सुभट, गोलवाल चहुवान।
जनपद नागरचाल जिहिं, पायो जन्म प्रधान॥१७॥
पुच्छिय नृप तातैं प्रथम, जैतसिंह वह जोध।
कैसे तव धर गोकरन, बरनहु तत्थ्य सुबोध॥१८॥
गोलवाल अक्खिय गिरिस, है तंहं रम्य बहार।
भाव सुद्ध के भक्त कों, देत अभीष्ट उदार॥१९॥

राजा ने अजमेर आते ही अपने योद्धाओं और अमात्यों को बुलवाया। उन्हें अच्छी तरह अपनी अनुपस्थिति में राज-काज संभालने के निर्देश दिये और कहा कि अब मैं और देरी न कर तुरन्त ही गोकर्णेश्वर महादेव के स्थान पर जाना चाहता हूँ। यह कह कर कूच किया। राजा के पास एक सेवक योद्धा जैतसिंह गोलवाल वंशीय चहुवान था जो नागरचाल (उणियारा के पास का क्षेत्र) जनपद का रहने वाला था। इस विश्वासपात्र योद्धा को बुला कर राजा ने पूछा कि तुम्हारे क्षेत्र में गोकर्णेश्वर का जो स्थान है, वह कैसा है? मुझे बताओ। इस पर गोलवाल जेतसिंह ने निवेदन किया कि हे राजा! वह बहुत रमणीय स्थान पर स्थित है और मंदिर की बड़ी मान्यता है। शुद्ध भाव वाले भक्त की मनोकामना वहाँ पूर्ण होती है।

दोय मिजल मग पुब्ब दिस, बाहिनि बहत बनास।
अरु त्रि कोस परिमित अचल, उदगायत जंहं आस॥२०॥
तंहं गोकर्ण बनासतट, अद्रि संधिगत ईस।
तपहु सिद्ध नाना तपत, पिक्खहु चलि पुहवीस॥२१॥

टोडा सूं दक्खिन तरफ, पथ दुव कोस प्रमान।
आराधन ईसान कों, चलन उचित चहुवान॥२२॥

यहाँ से दो मिजल (बीस कोस की दूरी) दूर पूर्व दिशा में जहाँ बनास नदीं बहती है और तीन कोस के घेरे में एक पर्वत है जिसका लंबाई में फैलाव उत्तर दिशा की ओर है। वहीं बनास के तट पर पहाड़ के संधिस्थल पर महादेव का स्थान गोकर्ण है। जहाँ कई सिद्ध, साधु तपस्या रत हैं आप स्वयं चल कर देख लें। टोडा नगर से दक्षिण दिशा की ओर लगभग दो कोस की दूरी पर महादेव का स्थल है। आराधना के लिए वहाँ चलना उचित है महाराज!

षट्पात्

सुनि बीसल करि कुंच आय गोकर्ण ईस थल।
अद्रिदरी बिच इक्खि पुज्जि लिंगहिं बिधि पुष्कल।
अष्टि बिरचि उपचार मत्थ डारिय कुसुमंजलि।
आदि प्रदक्खिन अद्ध किन्न नुति नति बिन्नति वलि।
इक सिद्ध सिवालय मैं मिल्यो पूजन किय ताकोहि पुनि।
परिपाय कह्यो आसन नृपति सिद्ध कह्यो हित लाय सुनि॥२३॥

अपने विश्वासपात्र सेवक जेतसिंह गोलवाल से यह सुन कर राजा बीसलदेव महादेव के स्थान गोकर्ण जाने के लिए रवाना हुआ। पर्वत की गुफा में शिवलिंग को देख कर सारे विधि-विधान पूर्वक षोड्शोपचार सहित पूजा कर पुष्पाजंलि चढ़ाई। आधी परिक्रमा दे कर राजा ने पूरी श्रद्धा के साथ स्तुति की। इसके बाद मन ही मन अपनी मनोकामना दरसाई। इसी मंदिर में राजा की भेंट एक सिद्ध-पुरुष से हुई। राजा ने अपने आने का अभिप्राय उस सिद्ध को बताया। इस पर सिद्ध ने कहा कि राजा! अच्छी तरह से सुन!

दोहा

होत कहा पूजैं हमहिं, ए सेवहु ईसान।
सिद्ध होन तव संकलप, चाहत हमहु चुहान॥२४॥
पुब्बकाल रावन प्रमुख, इहां तपन तप आय।
गिरिस इष्ट करि घर गये, प्रबल सिद्धि सब पाय॥२५॥

तातैं संकरलिंग तुम, भजहु भक्तिकरि भूप।
इच्छित सब पावहु अरहि, रानी रति अनुरूप॥२६॥
दै गरिमा लघिमा दुव हि, औषध इक्क उपेत।
सिद्ध गयो उठि तब सुपहु, हर सेये स्मरहेत॥२७॥
कलस पूरि गोदुग्ध करि, सिवसिर सहंस चढाय।
निर्जल त्रय उपवास नृप, करे भक्ति नत काय॥२८॥

हम तुम्हारे संकल्प के पूरा होने की महादेव से आराधना करेंगे। हे राजा! आप भी प्रभु की पूजा करो। हमारी बड़ी इच्छा है कि राजा! तुम अपने मनोरथ को प्राप्त हो। पूर्व काल में यहाँ रावण भी तप करने आया था और शिव का इप्ट धारण कर अपने घर गया। उसे यहाँ की तपस्या से प्रबल सिद्धि प्राप्त हुई थी। इसलिए हे राजा! तुम भी पूरी भक्ति के साथ महादेव के इस लिंग की आराधना करो। तुम्हें शीघ्र ही अपना मनवांछित फल मिलेगा और तुम फिर से अपनी प्रिय रानी के साथ रति करने योग्य हो जाओगे। इतना कह कर उस सिद्ध पुरुष ने राजा को गरिमा और लघिमा नामक दो सिद्धियों सहित एक औषधि प्रदान की। इतना कर वह सिद्ध पुरुष चला गया। इसके बाद पूरे भक्ति भाव से अपनी कामशक्ति फिर से प्राप्त करने के लिए राजा शिव की आराधना में मगन हो गया। राजा ने तब गाय के दूध से भरे एक हजार घड़ों से शिवलिंग का अभिषेक किया और पूरे तीन दिन तक निर्जल उपवास रख कर पूरी श्रद्धा के साथ पूजा-अर्चना की।

पुरट शृंग मढि रजत पय, ऊध झरत सुवअंग।
दई सहंस सुरभी द्विजन, श्रीहरभक्ति प्रसंग॥२९॥
चोथे दिन चहुवान के, काम बढिग अति काय।
सिद्धदत्त औषध सफल, सिव पुनि भक्त सहाय॥३०॥
सिद्ध जानि इच्छित सुपहु, अर्चि बहुरि ईसान।
दैन कियउ संकल्प दृढ़, मुद्रा अब्ज प्रमान॥३१॥

इसके बाद राजा बीसलदेव ने स्वर्ण सींगों और खुर चांदी से मंडित कर, स्तनों से दूध झरती एक हजार अच्छी नस्ल की गाएँ, पूजा के इस

अवसर पर ब्राह्मणों को दान में दी। चौथे दिन राजा के शरीर में फिर से काम वासना जागृत हुई। राजा को विश्वास हो गया कि शिव-भक्ति से और सिद्ध पुरुष द्वारा प्रदत्त औषधि से यह चमत्कार घटित हुआ है। अपनी मनोकामना पूर्ण होने के कारण अगले दिन राजा ने फिर से महादेव की पूजा की और उसी समय मन में संकल्प लिया कि वह एक अरब मुद्रा का दान करेगा।

पादाकुलकम्

सिवमंदिर बिरचन धन सूतन, निबसथ तत्थ बसावन नूतन।
काज उभय प्रारंभ करायउ, अप्प चलाय काम गृह आयउ॥३२॥
हुव तबतैं गोकर्ण हरालय, बीसलपुर निबसथ पुनि बसुमय।
स्मर बढाय इत संभर स्वामी, कामिनि बिनु न रहैं खिन कामी॥३३॥
औषध सिद्ध दत्त आहारिय, धूर्जटि भक्ति अतुल हिय धारिय।
यातैं मदन बढ्यो दुर्जय अति, प्रमदा बिनु न रहैं खिन भूपति॥३४॥

इसके बादा राजा ने उस स्थल पर एक भव्य मंदिर बनाने के लिए और पास ही में नया नगर बसाने के लिए धन दे कर कारीगरों को निर्देश दिए कि निर्माण कार्य आरंभ हो। जब निर्माण कार्य आरंभ हो गया तब जा कर कामोदीप्त राजा अपने घर जाने के लिए रवाना हुआ। तभी से गोकर्ण पर एक नया भव्य मंदिर बना और पास में राजा के नाम पर बीसलपुर नामक गाँव बसा। अपनी कामशक्ति बढ़ने से सांभर के स्वामी बीसलदेव का यह हाल हो गया कि स्त्री के बिना क्षण भर का समय काटना भी दूभर हो गया। सिद्ध-पुरूष की दी हुई औषधि खा कर महादेव की भक्ति को हृदय में बढ़ाने से राजा इतना कामांध हो गया कि अपनी बढ़ी हुई दुर्जय कामवासना हेतु स्त्री के बिना रहना उसके लिए कठिन हो गया।

दोहा

सजव आय गोकर्ण सन, पहु बुलाय प्रामारि।
जाम च्यारि लिन्नी न जक, नटी तदपि प्रिय नारि॥३५॥
दूजी रत्तिहु सोहि दुख, प्रामारी पुनि पाय।
तीजे दिन कछु रोग कहि, न गई देव मनाय॥३६॥

ताकी बुल्लि सवत्ति तब, रक्खी बीसल रत्ति।
सोहु छुटी भरि नाकसल, घर पत्ती डर घत्ति॥३७॥
रानीजन सब इम रुके, इक इक निस दुख इक्खि।
दासीजन जिततित दुरे, संतत रतिभय सिक्खि॥३८॥

इसलिए राजा तुरन्त ही वहाँ से रवाना हो कर शीघ्र अति शीघ्र अजमेर पहुँचा। उसने पहुँचते ही तत्काल अपनी प्रिया प्रमार रानी को बुलवाया और उसके आते ही राजा उसके साथ रतिरत हुआ। राजा ने चार प्रहरों तक चैन नहीं लिया। वह लगातार रतिक्रीड़ा में निरत रहा जब कि उसकी रानी बराबर इनकार करती रही। अगली रात को भी अतिरति से दुखित हो कर परमार रानी ने तीसरे दिन अपने स्वास्थ्य के ठीक नहीं होने का बहाना बनाया और देव-देव कर किसी तरह बची। तब राजा बीसलदेव ने अगले दिन प्रमार रानी की सौतन को बुला कर रात भर रखा। प्रातःकाल वह भी तौबा कर गई। वह अपने नाक में सल भर कर डरती-डरती अपने घर में गई। इस तरह एक के बाद एक रानी को बुला कर राजा ने उनके साथ रति-क्रीड़ा की और उन सभी का हाल भी वही हुआ। वे घबरा कर अपने-अपने रनिवास में चली गई। यहाँ तक कि रनिवास की दासियाँ भी निरंतर मैथुन से डरती यहाँ वहाँ दुबक गईं।

एनी तिय नरअस्व सों, हा करि पावत हारि।
बीसल कों इम लखि बिसम, नटी हटी सब नारि॥३९॥
औषध इक सिद्धीउभय, संभर कों दिय सिद्ध।
जो औषध खातहि जग्यो, याकै दर्पक इद्ध॥४०॥
तातैं सब अवरोध तिय, हाहा करि करि हारि।
कतिक छिपी सोई कतिक, व्याज रोग बिसतारी॥४१॥

जिस प्रकार मृगी जाति की स्त्री (वात्स्यायन कामसूत्र के अनुसार) अश्व पुरुष से रतिक्रिया में हाहाकार कर हार जाती है उसी तरह राजा को विषम देख कर रनिवास की सारी स्त्रियाँ इनकार कर गईं। राजा को उस सिद्ध-पुरुष ने एक औषधि और दो सिद्धियाँ प्रदान की थी तभी से इस चहुवान की देह में कामदेव ने निरंतर वृद्धि पाई। इससे घबरा कर हाहाकार करती जनाने की सारी स्त्रियाँ हार गई और उससे कतराने लगी। कुछ तो

बीमार होने का बहाना बना कर बमुश्किल तमाम छूटीं।

षट्पात्

द्रुत तब बीसलदेव नीति लंघि रु परनारिन।
दिय लावन आदेस इक्खि सुंदर बयवारिन।
सुनत हुकम पुर सोधि संढ विट चेट बिदूसक।
पुर जुवतिन मग पिहित लगे लावन मनु मूसक।
इम कियउ छन्न कछुदिन अनय पुनि भुग्गन लग्गो प्रथित।
कुल रक्खि जो न आवैं निकट हनैं ताहि सठ गिनि अहित॥४२॥

इसके बाद बीसलदेव ने नैतिक कायदों का उल्लंघन कर दूसरी स्त्रियों (पर नारियों) को लाने का आदेश किया। उसने अपने सेवकों से कहा कि शीघ्र ही सुन्दर, नवयोवना स्त्रियाँ हाजिर की जाएं। राजा का हुक्म सुनते ही संढ (नाजर), विट (काम कला को जानने वाले), चेट (स्त्री पुरुष को मिलाने में दक्ष) और विदूषक (स्त्री-पुरुष को रति क्रीड़ा कराने वाला) (कामुक पुरुषों के ये चार प्रकार के सेवक होते हैं) आदि मार्ग चलती स्त्रियों के मन को ठग कर राजा के लिए लाने लगे। इस प्रकार कुछ दिनों तक तो यह देह-व्यापार गुप्त रूप से चला फिर तो राजा सरेआम भोगने वाला हो गया। जो स्त्री अपने कुल की मर्यादा पाल कर नहीं आती, उन्हें कामुक राजा अपना अहित करने वाली समझ कर प्रताड़ित करने लगा।

दोहा

परी हाक अजमेरपुर, अनय करत चहुवान।
भले मनुज भेजत भये, पीहर सब प्रमदान॥४३॥
ललना पुर न मिलन लगी, देस मांहिं तब दूत।
भेजि जुवति अैंचत भयो, अनाहूत आहूत॥४४॥
व्याकुल व्है च्यारि हु बरन, मिलि उपाय तब मंत्र।
नृप सन अक्खिय सत्रु निज, सद्धत लूट स्वतंत्र॥४५॥
अनिहलपुर चालुक अधिप, बढ्यो अतुल तस बंस।
लिय सोझति जालोर लग, पुहवी अतुल प्रसंस॥४६॥

कह्यो नृपति घरबंट करि, प्रमदा इक मो पास।
हितकरि भेजहु मैं हरूं, तुम पर जो अरि त्रास॥४७॥

पूरे अजमेर नगर में यह चर्चा चल पड़ी कि चहुवान राजा अनीति करने पर उतर आया है उससे भले घरों के लोग डर कर अपनी स्त्रियों को पीहर भेजने लगे। जब नगर में ललनाएँ नहीं मिलने लगीं तो राजा ने बाहर अपने ही राज्य में अपने दूत भेज कर स्त्रियों को बुलवाना शुरू कर दिया। जो बुलाने पर नहीं आतीं उसे बलात् पकड़ कर मँगवाने लगा। इस से चारों वर्ण के लोग (प्रजा जन) व्याकुल हो उठे। उन्होंने मिल कर मंत्रणा करना शुरू की कि हमारा यह राजा किसी शत्रु से लड़ कर मारा जाए तो उतम रहे। ऐसी मंत्रणा कर सभी मिल कर राजा के पास गए और कहने लगे कि हे राजा! आपके शत्रु स्वतंत्र हो कर लूटमार करने लगे हैं। अनिहलपुर के चालुक्य राजा ने अपनी शक्ति बहुत अधिक बढ़ा ली है। उसने जालोर और सोजत की हमारी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भूमि दबा ली है! आप कुछ उपाय करें। इस पर राजा ने कहा कि तुम लोग पहले एक निर्णय करो कि एक घर से एक दिन, दूसरे घर से दूसरे दिन इस तरह प्रतिदिन मेरे पास एक स्त्री भेजोगे। यदि तुम्हें मेरी शर्त मंजूर हो तो मैं तुम्हारी शत्रु की त्रास को मिटा दूँगा।

प्रकृतिन सों इम कहि सुपहु, पटु कायत्थ कृपाल।
संभर सों बुल्ल्यो सचिव, सो द्रुत बुद्धि बिसाल॥४८॥
जनक पास पठयो जबहि, सचिव कुमर सारंग।
आय भेट किन्ने दु असि, जटित रत्न हित जंग॥४९॥
मंडलाग्र तिन मांहिं सों, बीसल नृप इक बंधि।
चालुक्कन उप्पर चढ्यो, सबल मुच्छ कर संधि॥५०॥
मुररि रहे जे बहु मिले, चढ़त भूप चहुवान।
तस बीसलसागर तटहिं, मंडिय प्रथम मिलान॥५१॥

राजा बीसलदेव ने राज्य के अमात्य आदि छह अंगों में से एक अपने चतुर सचिव कृपाल नामक कायस्थ को बुलवाया। वह उन दिनों सांभर में था इसलिए राजा ने उस बुद्धिमान सचिव को शीघ्र भिजवाने का आदेश किया। वहाँ सांभर से राजकुमार सारंगदेव ने इस सचिव कृपाल के साथ दो रत्न

जड़ित तलवारें अपने राजा पिता के लिए भिजवाईं। इन दोनों में से एक खड्ग को राजा बीसलदेव ने अपनी कमर में बाँधा और चालुक्य राजा पर आक्रमण करने को अपनी मूँछों पर ताव देता हुआ बढ़ा। अपनी सज्जित सेना के साथ इस अभियान का पहला पड़ाव बीसलसागर के तट पर किया।

इति श्रीवंशभास्करे महाचम्पूके पूर्वायणे चतुर्थ राशौ बीतिहोत्र-चण्डासिबंशबर्णने चाहुवाणबीसलदेवत्यक्तजैनधर्मगृहीतप्रहरणस्वकु-मारशारङ्गदेवशाकम्भरद्रङ्गप्रेषणाऽजमेरनगरपरिसरबीसलसागरकासार-निर्माणत्यक्तान्यसहधर्मिणीसङ्गधर्माधिराजिनिरन्तरप्रामारीसङ्गसेवनत्स-पत्नीजनभेषजप्रदानवीसलदेवदर्पकनाशनश्रुतमाहात्म्यनृपगोकर्णाऽऽग-मनत्र्यम्बकाऽर्चनसिद्धसमागमपूजनप्रसन्नसिद्धगरिमा लघिमा सिद्धिद्वय रहितमदनवर्द्धनौषधदानप्रगशिततद्भेषजविवृद्धकामतुष्टदत्ताऽनेकदानदिनत्रयो पोषित नीतमुद्रा ऽब्ज वितरणसन्धसमारब्धगोकर्णमन्दिर स्वनामाऽभिधाय-निबसथ वीसलदेवाऽजमेरपुरा ऽऽगमनतत्प्रचण्डमदनमर्दितराज्ञी-जनपिहि-तीभवनाऽलब्धस्त्रीकनृपपरदाराऽभिकर्षणतदाऽऽतङ्कविव्हल-प्रकृतिजनचालुक्यधाटिस्वदेशभ्रंशनिवेदनश्रुततदुदन्तसञ्जीकृतसैन्यवीस-लदेवनिर्याणवीसलसागरोपकण्ठशिबिरविन्यसनं नवमों मयूखः ॥९॥ आदितोऽष्टादशोत्तर-शततमः ॥११८॥

श्री वंशभास्कर महाचम्पू के पूर्वायण के चतुर्थ राशि में अग्निवंशी चहुवान बीसलदेव का जैन धर्म छोड़कर शस्त्र ग्रहण किये हुए अपने कुमार सारंगदेव को सांभर नगर भेजना, अजमेर के समीप की भूमि में बीसलसागर बनाना, अन्य विवाहित स्त्रियों को छोड़कर धर्माधिराज के पुत्र (बीसलदेव) का निरन्तर प्रामारी रानी का संग सेवन करना, उस प्रामारी की सौतनों द्वारा औषधि देकर बीसलदेव का कामनाश करना, माहात्म्य सुनकर राजा का गोकर्ण महादेव के पास आना और शिव के पूजन से सिद्ध का समागम होना, पूजन से प्रसन्न होकर सिद्ध का गरिमा और लघिमा दो सिद्धि सहित कामदेव बढ़ाने वाली औषधि देना, उस औषधि के खाने से कामदेव बढ़कर प्रसन्न होकर अनेक दान देकर तीन उपवास करके एक अरब रुपयों के दान करने की प्रतिज्ञा लेकर गोकर्णेश्वर के मंदिर और अपने नाम के पुर बसाने का आरंभ करके बीसलदेव का अजमेर पुर में आना, उसके भयंकर कामदेव से मर्दित होकर रानी लोगों का छिपना, और स्त्री नहीं मिलने से राजा का

परस्त्रियों को खींचना, इस भय से विह्वल होकर राज्य के अंगी लोगों का सोलंकी राजा की लूटपाट से अपने देश का भ्रष्ट होना निवेदन करना, यह वृत्तान्त सुनकर सेना तैयार करके बीसलदेव का निकलना और बीसलसागर के पास डेरा करने का नवाँ मयूख समाप्त हुआ। और आदि से एक सौ अठारह मयूख हुए।

प्रायो ब्रजदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

दोहा

बीसलसर सन कुंच करि, बीसल लरन प्रबीर।
तब हंक्यो पच्छिम तरफ, धरि बिसेस बल धीर॥१॥

बीसलसागर तालाब के तट से कूच कर बीसलदेव अपने दल सहित चालुक्यराज से लड़ने चला। उसने अपनी सज्जित सेना के साथ पश्चिम दिशा की ओर प्रयाण किया।

पज्झटिका

अजमेर नाथ इम चाहुवान, पच्छिम दिस जित्तन किय प्रयान।
सुनि यह कितेक नृप संकलाय, अधिपति पय लग्गे प्रनत आय॥२॥
रघुराज भूप मंडोवरेस, प्रातिहार मिल्यो करि भेट पेस।
तिम महनसिंह नृप प्रतिहार, आयो सु उपायन लै उदार॥३॥
नृप सभामुकुट गोहिल बिनीत, प्राबासर तोमर प्रनतप्रीत।
मेवात ईस मोहिल महेस, दिय भेट दंदुनांपुर नरेस॥४॥
कूरमनृप अंतरवेद केर, सह ढोकन आये हरि सुमेर।
कूरम अटेरपति बिजयकर्ण, सो आयो करिकर कर सुवर्ण॥५॥

अजमेर का चहुवान राजा बीसलदेव पश्चिम दिशा में विजय प्राप्त करने चला यह सुन कर कई राजा घबराये। उन्होंने आ कर चहुवान राजा के सामने नम्र हो कर कई तरह के नजरानें भेंट किए। सबसे पहले मंडोवर का प्रतिहार राजा रघुराज सेवा में आया। वैसे ही प्रतिहार महनसिंह भी कई प्रकार की भेंटें ले कर उपस्थित हुआ। राजाओं का मुकुट गोहिलराज और तंवर राजा पाबासर भी हाजिर हुआ। इसी तरह मेवात का मोहिल राजा महेश और दंदुनापुर का राजा भी अपनी-अपनी भेंटों के साथ चहुवान राजा की सेवा में

आए। अंतरवेद क्षेत्र के कूरम वंशीय राजा हरिसिंह और समुरे सिंह भी राजा बीसलदेव को धोकने (धोक देने) आए। अटेर का कुरमवंशीय राजा विजयकर्ण भी अपने हाथों में स्वर्ण मोहरें ले कर हाजिर हुआ।

द्योसापति करम सोढदेव, सोपायन आयो बिहित सेव।
भेटहि पठाय भटनैर भूप, रानिंग कह्यो हित आनुरूप॥६॥
मुलतानपति रु ठट्ठामहीप, सह भेट सचिव पठये समीप।
भट्टी नृप जैसलमेर भानु, संक्यो घन बरसत जिम कृसानु॥७॥
गो ब्रह्मताल नृप भजि गनेस, दिन्नों तजि डर भर सिंधुदेस।
प्रामार उदय लग्गो सु पाय, सह जैतसिंह सोढा सुभाय॥८॥
जवनहु बलोच अरु मेर जत्थ, सेवन चलि आये भेट सत्थ।
..॥९॥

इसी तरह दोसा का राजा कूरम सोढ़देव भी राजा की सेवा में नजराना ले कर आया। भटनेर के राजा रानिंग ने भी भेंट भेजने में ही अपना हित समझा। मुलतान और ठट्ठा के राजाओं ने भी अपने अमात्यों के हाथों राजा बीसलदेव की सेवा में उपहार भेजे। जिस प्रकार मेघवर्षा से अग्नि डरती है उसी तरह जैसलमेर का भाटी राजा भी भयभीत हुआ। उधर सिंध देश का राजा गणेश अपनी राजधानी को छोड़ कर राजा बीसलदेव के आगमन की खबर पा कर ब्रह्मताल की ओर भाग गया। प्रमार राजा उदय और सोढा राजा जैतसिंह का भी दूसरे राजाओं के जैसा हाल हुआ। चहुवान राजा के भय से कई बलोच, यवन और मेर भी उपहार साथ ले कर हाजिर हुए।

मोरी बडगुज्जर मल्हनास, निर्वान डोड लच्छीनिवास।
आये चंदेल रु मंकुवान, सैंगर रु बैस दाहिम सुजान॥१०॥
इत्यादि मिले नृपतैं अनेक, टरि बैठे चालुक बीर टेक।
थिर राज्य देस गुजरात थान, अनिहलपुरपट्टनि जोरवान॥११॥
चालुक नृप बालुकराज चंड, देत जु बहु भूपन दुसह दंड।
आये सगोत्र बहुबंधु ओर, निज दिनन बढे जित तित सजोर॥१२॥
इक बंधु लयो जालोर आय, छम अपर लिन्न सोझति छुराय।
इम पच्छिम नैर्ऋत घां असेस, दब्बे चहुवानन के प्रदेस॥१३॥

रघुराज कह्यो मंडोवरेस, सत्रुन मम भुम्मिहु लिय बिसेस।
यह सुनत चल्यो बीसल अमान, चालुकन सीस चढि चाहुवान॥१४॥

प्रतापी राजा बीसलदेव की सेवा में मोरी, बडगुज्जर, मल्हना, निर्वाण, डोड आदि लक्ष्मी संपन्न राजा आए। इसी तरह दूसरे चंदेल, झाला, सैंगर, बैस और दाहिमा वंशीय क्षत्रिय राजाओं ने भी अपनी उपस्थिति दर्ज कराई पर एक चालुक्य (सोलंकी) वीरों ने टेक रखी वे नहीं आए। गुजरात देश में अनिहलपुर पट्टनि का बलवान चालुक्यराजा बालुकराज भी प्रचंड राजा था। वह कई छोटे राजाओं को अनेक बार दंडित कर चुका था। इससे उसके चालुक्य बंधु उसके साथ होते गए। इससे दिन-प्रतिदिन उसकी शक्ति बढ़ती गई और वह अधिकाधिक ताकतवर होता गया। इसके एक चालुक्य बंधु ने आकर जालोर का राज दबा लिया तो दूसरे समर्थ चालुक्य ने सोजत को हड़प लिया। इस प्रकार चालुक्यों ने पश्चिम और नैऋत दिशा में चहुवानों के प्रदेश दबा लिए। राजा बीसलदेव की सेवा में आए मंडोवर के राजा रघुराज ने शिकायत की कि उन शत्रुओं (चालुक्य) ने मेरा सर्वाधिक क्षेत्र दबाया है। यह सुन कर और तेश में आ कर चहुवान राजा बीसलदेव ने चालुक्यों पर चढ़ाई के उद्देश्य से प्रयाण किया।

बीसलनृप आगमन सुनत बात,. रमनिन तहखानन नर दुरात।
दरकुंचन सोझति बिंटि द्रंग, जोर्‍यो धकि बीसल तोप जंग॥१५॥
प्राकार तोरि गढ अट्ट पारि, बहु छिन्न दये चालुक बिडारि।
जालोर दब्बि पुनि जुद्ध जित्ति, किय बिद्रुत चालुक प्रहत कित्ति॥१६॥
अब्बूगिरि पहुँच्यो बहुरि अप्प, देखे अचलेस्वर हर सदप्प।
गिरिनारि सहित सोरठ्ठ गंजि, भूपाल दये चालुक्य भंजि॥१७॥

राजा बीसलदेव आ रहा है यह सुन कर उस क्षेत्र के प्रजाजन अपनी स्त्रियों को तहखानों में छिपाने लगे। दर कूच दर मंजिल चलते हुए राजा की सेना ने सोजत नगर को आ घेरा और तोपों के साथ बीसलदेव ने आक्रमण किया। थोड़ी ही देर में नगर की शहरपनाह को तोड़ डाला और दुर्ग की छत फोड़ कर तुरन्त कई चालुक्यों को वहाँ से निकाल बाहर किया। इसके बाद जालोर को जा घेरा और वहाँ से भी चालुक्यों को खदेड़ दिया। चालुक्यों की कीर्ति को मिटा कर आगे राजा सेना सहित आबू पर्वत पर पहुँचा। जहाँ राजा

ने सदर्प अचलेश्वर महादेव के दर्शन किये। वहाँ से आगे गिरनार के साथ सोरठ (सौराष्ट्र) को जीत कर राजा बीसलदेव ने वहाँ से भी चालुक्यों को निकाल बाहर किया।

बग्गड पुनि छप्पन ककुभ बाम, नृप प्रबल दंडि पायउ प्रनाम।
अनिहलपुर उप्पर कोप आनि, ततकाल बढ्यो कर मुच्छ तानि॥१८॥
सुनि चालुक बालुकराज सज्जि, गंजन अरि आयो समुख गज्जि।
तुल्लत असि सादी सहंस तीस, कर अब्भ घसत सत्तरि करीस॥१९॥
मंडिय जिहिं जोजन इक मिलान, इततैं सुनि हंकिय चाहुवान।
चालुक के देसहिं करत चूर, द्रंगन लूटत पहुँच्यो अदूर॥२०॥

अपने मार्ग की बाईं दिशा में पड़ने वाले बागड़ और छप्पन प्रदेशों को भी जीत कर वहाँ के शासकों से आदर पाया। इसके बाद कोप कर राजा सीधा अनिहलपुर पर चढ़ा। अपनी मूँछों पर ताव देकर उसने चालुक्यराज को ललकारा। यह देख कर चालुक्य राजा बालकराज भी अपनी सेना चढ़ा कर शत्रु का सामना करने आया। राजा बीसलदेव के समक्ष तीस हजार की घुड़सवार फौज और अपनी सूंडों से आकाश को घिसते हुए सत्तर हाथियों के साथ चालुक्य राजा ने एक योजन क्षेत्र में अपनी सेना सहित पड़ाव डाला। यह सुन कर चहुवान राजा बढ़ा। वह चालुक्य के राज में उसके नगर गाँवों को लूटता हुआ युद्ध क्षेत्र के समीप आया।

सत्तरि सहस्र चहुवान सेन, बहु धनिक बनिक पकरे बलेन।
कति जूह भूम्मियन कंपि काय, अनुगामि भये सह भेट आय॥२१॥
ऋतु सिसिर माघ इम पारि रोर, चहुवान दले गुजरात ओर।
यह सुनत खिज्जि चालुक अधीस, सजि दंस चढ्यो दमि नागसीस॥२२॥
श्रीकंठ बुल्लि बंदी स्वकीय, बीसल पंहं पठयो लखि बलीय।
सूचन किय तासों प्रथम साम, न बनें तब जंपहु लरन नाम॥२३॥

राजा बीसलदेव के साथ सत्तर हजार की सेना थी। वह राह में पड़ते नगरों से कई धनवान व्यापारियों को बलात् पकड़ता हुआ आया। कितने कई भोमियों के समूहों ने आ कर चहुवान सेना के समक्ष आत्मसमर्पण किया और वे राजा के सेवक हो गए। शिशिर ऋतु के माघ मास में चारों ओर अपने

भय का प्रसार कर चहुवान राजा ने गुजरात के उन चालुक्यों को दण्ड दिया। यह सुनते ही चालुक्यराज ने खीझ कर अपना कवच धारण किया और शेषनाग के फन को कुचलने के लिए उद्यत हुआ। इसी समय उसने अपने भाट श्रीकंठ को बुलवाया और बीसलदेव को बलवान समझ कर उसे समझाने को भेजा। अपने भाट से चालुक्यराज ने कहा कि हे श्रीकंठ! सर्वप्रथम संधि का प्रयत्न करना। संधि के लिए वह तैयार न हो तो उसे युद्ध का कह कर डराना।

वह बंदी बीसल अग्ग आय, बुल्यो अनेक नयमय बनाय।
जोलों अरि अरिसिर देत जोर, अच्छी नहिं तोलों लूट ओर॥२४॥
बपुरे पकराये बनिक बात, कैसी यह अतिबलता कहात।
हमरे नृप पठई यह कहाय, मन्नहु स्वतंत्र हमकों मिटाय॥२५॥
जो नहिं बिरोध तो गेह जाहु, दृढ बैर ततो भुजबल दिखाहु।
हो प्रबल अप्प जैहो न हारि, मंडल यह लैहो हमहिं मारि॥२६॥

इतना सुन कर वह भाट श्रीकंठ राजा बीसलदेव के पास गया और उसने वहाँ जा कर नीति की नजीरें दे कर कई तरह से अपने स्वामी का पक्ष रखा कि जब तक कोई शत्रु अपने शत्रु के सिर पर दबाव बनाये हुए हो तब तक उसे उसके क्षेत्र में लूट नहीं मचानी चाहिए। आपने बेचारे उन बनियों के समूहों को बलात् पकड़ लिया है। शक्ति का यह कौन सा प्रदर्शन है? मेरे स्वामी ने कहलवाया है कि पहले आप उन्हें मिटा दें तो अपने आप को स्वतंत्र जाने। यदि उनसे कोई विरोध नहीं है तो आप अपने घर जाएं और यदि दृढ़ वैर है तो अपने भुजबल का प्रदर्शन करें! हमें पता है कि आप प्रबल हैं इसलिए हारेंगे नहीं और अपनी तलवार के जोर पर हमें मार डालेंगे।

रुठ्ठो सु सुनत चहुवानराय, अंतिक लिय चालुकराज आय।
बीसल दल मंडिय चक्रव्यूह, जिह्मग किय चालुक कटक जूह॥२७॥
पहुँचो दू ओर भट होत प्रात, घमसान मच्यो बलवान घात।
संक्यो लखि बालुक स्वीय सत्थ, तुरगहिं उडाय हुव अग्ग तत्थ॥२८॥
दिन च्यारि जाम रन हुव दुरंत, मंडिय पुनि दोउन सिविर मंत।
रन थंभि दुव हि मुरे नरेस, दिय तिन मिलान जित तित प्रदेस॥२९॥

उपनाह घायलन किय दु ओर, जान्यों बिहान चहुवान जोर।
चालुक्य सचिव तब मिलि दुचित्त, विरच्यो प्रपंच इक कपटवित्त ॥३०॥

श्रीकंठ की बातें सुनते ही चहुवान राजा को क्रोध आ गया और वह सेना सहित चालुक्यराज के क्षेत्र के और समीप आ गया। बीसलदेव की सेना के आगे चालुक्य सेना के समूह ने चक्रव्यूह रचा और सवेरा होते ही दोनों दलों में घमासान युद्ध होने लगा। बालुकराज चालुक्य ने अपनी सेना को डरा हुआ देखा तो वह स्वयं अपना घोड़ा बढ़ा कर सबसे आगे हो गया। चार दिन चारों प्रहर तक लगातार दुरंत युद्ध होता रहा। इसके बाद दोनों ओर की सेनाओं ने अपने-अपने शिविरों में मंत्रणा की और युद्ध रोक दिया। दोनों पक्ष की सेनाओं ने मुड़ कर दूर अपनी-अपनी राह में पड़ाव डाले और दोनों ओर के घायलों की मरहम पट्टी होने लगी। सवेरा होते ही जब चहुवान राजा बीसलदेव की सेना का जोर जाना तो चालुक्यराज ने हताश हो कर अपने सचिव को शत्रु राजा के पास भेजा। इस कपटी (कपट ही है धन जिसका) सचिव ने एक प्रपंच (षड़यंत्र) रचा।

मिथ्याहि कोटि धन लिखित मंडि, छलनिरत गये जुरि लरन छंडि।
पननारि रुचिर लै कतिक पेस, स्मरअंध जानि साकंभरेस ॥३१॥
प्राबासर तोमर केर पास, बुल्ले इम जाय रु छल बिसास।
इककोटि दम्ममय लिखित एहु, ललना अभुक्त बलि ललित लेहु ॥३२॥
भरि हैं दम मुद्रा पुनि प्रभीत, जो गेह मुरैं नृप अक्खि जीत।
तब यह प्राबासर उचित तुल्लि, बलि वह कृपालु कायस्थ बुल्लि ॥३३॥

वे अमात्य कामान्ध राजा बीसलदेव के लिए सुन्दर-सुन्दर गणिकाएं ले गए और साथ में ऐसा खोटा अनुबंध ले गए जिसमें करोड़ मुद्राओं के धन देने की बात थी। इन सचिवों ने जा कर यह छल भरा प्रस्ताव चहुवान राजा के विश्वासपात्र योद्धा पाबासर तंवर के समक्ष रखा कि हम लिख कर देते हैं कि एक करोड़ मुद्रा देंगे। इसके अतिरिक्त अपने राजा के लिए ये अनभोगी हुई सुन्दर ललनाएँ भी देते हैं। यदि आप यह कह कर कि हमारी जीत हुई और आपके राजा सेना सहित यहाँ से मुड़ कर वापस अपने देश को चल देंगे। पाबासर तंवर ने यह प्रस्ताव अपने चहुवान राजा के सचिव कृपाल कायस्थ को जा कहा।

दोउन कह्यो नृप सों निदान, पन रक्खि करहु पच्छो प्रयान।
भेजी पनप्रमदा भेट भव्य, नखसिख सुकुमारी उचित नव्य॥३४॥
दम दम्म कोटि स्वीकरत दैन, इम जित्ति पधारहु क्यों न अैन।
जिन कुंच जबहि करिहो नरेस, ए दम्म तबहि भरि हैं असेस॥३५॥
रन मैं जय संसय नियत राय, जीवत गह्यो न चालुक्य जाय।
इनमैं रुचैं सु करिये उदार, सामहिं तब मन्न्यों नृपति सार॥३६॥
कामुक पननारिन लखि कडच्छ, अंगीकृत कीनों साम अच्छ।
निज नाम बसावन तत्थ नैर, बीसल निदेस दिय धोय बैर॥३७॥

तब पाबासर तंवर और कृपाल कायस्थ दोनों ने जा कर अपने राजा से कहा कि हे राजा! यहाँ से अब प्रयाण ही श्रेष्ठ है, इससे हमारा प्रण भी रह जाएगा। फिर चालुक्यराज ने आपके लिए सुन्दर स्त्रियों की भेंट भी भेजी है। वे अनभोगी हुई नख से ले कर शिखा तक अत्यन्त सुन्दर भी हैं। इसके अलावा उन्होंने दण्डस्वरूप एक करोड़ की राशि देना भी स्वीकार किया है। अब विजय प्राप्त कर हम क्यों न अपने देश की राह लें? हमारी सेना ज्योंही यहाँ से कूच करेगी कि तभी चालुक्यराज हमें राशि दे देंगे। राजा ने भी सोचा कि अपनी जीत हो ही जाए इसमें संशय है क्योंकि यह तो युद्ध का मामला है। यह सोच कर बीसलदेव ने जीवित ही चालुक्यराज को बंधक बनाने का अपना इरादा त्याग दिया। उस कामुक राजा ने उन सुन्दरियों के सुन्दर कटाक्ष देख कर संधि के इस प्रस्ताव को अच्छा जान कर स्वीकार कर लिया फिर चहुवान नृप ने आदेश दिया कि मेरे नाम से यहाँ नगर बसाया जाए। इसके बाद हमारा वैमनस्य धुल जाएगा।

थानां स्वकीय तंहं नियत थप्पि, मुरि भूप चल्यो मग कुंच मप्पि।
किय चालुक सचिवन छद्म कम्म, कुंचहि कराय दैहैं न दम्म॥३८॥
बीसल प्रमत्त प्रभुता बिगारि, व्है कामुक जैहैं राज्य हारि।
दिय नैर बसावन जिहिं निदेस, सो सिद्ध छिन्न लैहैं असेस॥३९॥
मंगै सु खरच नवपुर निमित्त, बिस्वस्त देहु कित जात बित्त।
चालुक अमात्य यह छल बिचारि, नृप कुंच करायउ नय निहारि॥४०॥

बीसलदेव अपने थाने वहाँ कायम करने का निर्देश दे कर वहाँ से मुड़ गया और अपने वतन की राह ली। सेना के कूच कर जाने पर भी चालुक्यराज के अमात्यों ने छल किया। उन्होंने चहुवान राजा की फौज की रवानगी पर भी दंड की राशि नहीं देने का निर्णय किया और सोचा कि इस प्रकार हम बीसलदेव की प्रभुता को बिगाड़ देंगे और वह कामुक राजा राज्य हार जाएगा। चहुवान राजा ने जो नगर बसाने का निर्देश दिया है उसे पूरा होने दें उसके बाद हम उसे छीन लेंगे। हम राजा से नया नगर बसाने का खर्च माँगेंगे और उसे आश्वस्त कर देंगे कि आपका पैसा कहाँ जाता है? अभी तो आप दे दें, हम वापस कर देंगे। चालुक्यराज के अमात्यों ने इस प्रकार कपट करने की मंत्रणा की और राजा बीसलदेव को सेना सहित कूच कराने की नीति अपनाई।

पहु इम गुज्जरधर बिजय पाय, बीसल निज नामक पुर बसाय।
अजमेरनैर पुनि आय अप्प, दिनरति गह्यो कंदप्प दप्प॥४१॥
बिक्रम सक रन गुन अंग बेर, आयो नृपाल नन किय अबेर।
तबतैं धरनीधर प्रांत तत्थ, सुबस्यो बीसलपुर रीति सत्थ॥४२॥

राजा बीसलदेव ने इस प्रकार गुजरात की धरती पर विजय पाई और अपने नाम पर बीसलपुर नामक नगर बनवा कर अजमेर नगर में वापस आया। चहुवान राजा ने वापस अजमेर पहुँचते ही फिर से अपनी कामशक्ति का दर्प धारण कर लिया। विक्रमी संवत के वर्ष नौ सौ छत्तीस में गुजरात से वापस लौटा तब से उस राजा ने बीसलपुर में निवास करना शुरू किया।

दोहा

बीसल करि चालुक बिजय, आलय निज इम आय।
राच्यो सतत अनंग रस, ललना जन हिय लाय॥४३॥
सो गौरी उरुजा सुता, पुष्कर गिरि तप प्रीति।
कोउक सिद्ध प्रसंग करि, जोग भजत निज जीति॥४४॥
बरखा गेह बिताय नृप, पुष्कर सरद पधारि।
गिरिकंदर अंदर गही, निलज सती वह नारि॥४५॥
भई समर्थ सु जोग भजि, सप्यो नृपहिं रिझाय।
मानवभोजी होहु तुम, रक्खस संभरराय॥४६॥

अक्खिय रासे मांहिं यह, बंदी चंदहु बत्त।
बनिक सुता के साप बल, रक्खस भो अघरत्त॥४७॥

चालुक्यराज पर विजय प्राप्त कर राजा बीसलदेव जब अपने घर वापस आया तभी से वह फिर से ललनाओं को हृदय से लगा कर निरन्तर कामदेव के रस में पगने लगा। उधर वह बनिये की पुत्री गौरी (जिसे बीसलदेव ने अपनी पुत्री मान कर ब्याहा था और जो राजकुमार सारंगदेव की धाय की पुत्री बहन थी) पुष्कर के पर्वत में साधना रत थी। उसने सिद्धों की संगत पा.कर अपने मन को जीत कर योग साधना में निमग्न कर लिया। पावस ऋतु पूरी अपने घर में बिता कर शरद ऋतु के आगमन पर राजा पुष्कर गया। वहाँ उस निर्लज्ज ने पर्वत की गुफा में जा कर तपस्यारत शीलवती स्त्री गौरी को पकड़ लिया और उसके साथ बलात् रतिकर्म किया। वह अपने योगाभ्यास और तप के बल पर सिद्ध वचन हो गई थी उसने क्रोधित हो कर राजा को शाप दिया कि हे नीच राजा! जा तू आदमखोर हो जा और राक्षस की योनि भुगत। हे राजा रामसिंह! चन्द बरदाई ने अपने ग्रंथ *पृथ्वीराज रासो* में भी यह बात लिखी है कि पाप में निमग्न रहने वाला बीसलदेव उस बनिये की पुत्री के शाप से राक्षस हो गया।

मागधलोक हु यहहि मत, मन्नत लिखत समान।
भासैं मुहि संसय भर्यो, अति समीप आख्यान॥४८॥
दिव्यचरित कछु कलि दिनन, विक्रमलग बरतेहु।
ता पिच्छैं दिन दिन घटत, जाने होत न जेहु॥४९॥
बीसल तातैं साप बल, रक्खस भयउ नरेस।
जिम मागध बंदी जपत, अक्खैं तिम हम एस॥५०॥
कहैं इम न तो किम कहें, इक्ख्यो लेख न ओर।
रीति कछुक मनमय रचैं, जो उचित न हियजोर॥५१॥
भई यों न तो ज्यों भई, होय सत्य तिम होहु।
कही चंद सुहि हम कहत, करहु प्रमान न कोहु॥५२॥

इसके अतिरिक्त बड़वा भाटों ने भी अपनी बहियों में यही लिखा है परन्तु मुझ (ग्रंथकर्ता सूर्यमल) को इस कलियुग में यह आख्यान संदेहास्पद

लगता है (हाँ, यदि यह सतयुग अथवा त्रेतायुग की बात होती तो शाप के बल पर राक्षस होना माना जा सकता था)। ऐसे दिव्य चरित्र वाले लोग विक्रम संवत् के आरंभ के पूर्व होते आए हैं और हमने भी सुना है पर इसके बाद तो दिन-दिन चरित्र घटते जाते हैं और मात्र कल्पना प्रसूत लगते हैं। हे राजा रामसिंह! इस शाप के कारण बीसलदेव राक्षस हो गया। यह बात हम (ग्रंथकर्ता) मागधों और बंदीजन (भाटों) के कहे अनुसार कह रहे हैं और यदि इस तरह न कहें तो क्या करें। कैसे कहें? क्योंकि लिखित प्रमाण तो इसका उपलब्ध हैं नहीं, फिर हम यदि मन से नया रच कर कुछ कहें तो वह हमें उचित प्रतीत नहीं होता। ऐसा हुआ अथवा नहीं हुआ और हुआ तो जैसे भी हुआ उसमें सत्य है कि नहीं? इससे मैं सहमत नहीं पर जैसा चन्द भाट (बरदाई) ने कहा वही हम ने कहा है ऐसा मानें। कोई पाठक अथवा श्रोता इसका प्रमाण न पूछें।

इतिश्री वंशभास्करे महाचम्पूके पूर्वायणे चतुर्थ राशौ बीतिहोत्र-चण्डासिवंशवर्णनसङ्गतबीसलदेवचरित्रे धर्माऽधिराजिपश्चिमदिग्विजय-प्रस्थापितप्रातिहाररघुराजादिसोपायनाऽनेकनृपसम्मिलनसमुद्धतसोझति जालपुर दमितसौराष्ट्रादिदेशबीसलदेव चालुक्यबालुकराजरणविजय-प्रापणगौर्ज्जरप्रान्तस्वनामाभिधायि नगरनिर्माणस्वपुरप्रत्याऽऽगमकामान्ध-नृपगौरीतपस्विनीतपोध्वंसनतच्छापप्राप्तराक्षसभावसन्देह विस्मय सूचन-तत्सद्भावप्रमाणाऽभावदर्शनं दशमो मयूखः ॥१०॥ आदित एकोनविं-शत्युत्तरशततमः ॥११९॥

श्रीवंशभास्कर महाचम्पू के पूर्वायण की चौथी राशि में अग्निवंशी चहुवान वंशवर्णन के साथ बीसलदेव के चरित्र में धर्माधिराज के पुत्र (बीसलदेव) का पश्चिम दिशा के विजय को जाना, प्रतिहार रघुराज आदि का भेट सहित अनेक राजाओं का मिलना, सोजत और जालोर को छुड़ाकर सौराष्ट्र आदि देशों को दंड देकर बीसलदेव का सोलंकी बालुकराज से युद्ध में विजय पाना, गुजरात देश में अपने नाम पर नगर बसाना, और अपने पुर को वापस आना और उस कामांध राजा का गौरी तपस्विनी का तप नाश करना, और उस गौरी के शाप से राजा का राक्षस होने में संदेह और आश्चर्य सूचन करके इस नवीन समय में ऐसे प्रमाणों का अभाव दिखाने का दसवाँ मयूख समाप्त हुआ। और आदि से एक सौ उन्नीस मयूख हुए।

प्रायो ब्रजदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

सोरठा

पच्छिम सन जय पाय, दमि चालुक बालुक दुसह।
इस बीसल गृह आय, रह्यो अनर्गल काम रत॥१॥

पश्चिमी दिशा (गुजरात) में जा कर दुस्साहसी चालुक्यराय बालकराज का दमन कर राजा बीसलदेव अपने नगर को लौटा और यहाँ आ कर रति-क्रीड़ा के अनर्गल कार्यों में निमग्न हो गया।

दोहा

पुष्कर मेला उग्ज पर, पिक्खन बीसल पत्त।
नागअद्रि द्रोहिन नृप सु, रमत रह्यो अनुरत्त॥२॥
द्रोनि इक्क बिच कंदरा, विमल सलिल तरु व्रात।
तत्थ हुती सु तपस्विनी, गौरी सुंदर गात॥३॥
स्वीय कुमर सारंग की, धात्रेयी भगिनी सु।
दोरि गही नृप देखत हि, गम्य नही न गिनी सु॥४॥

कार्तिक मास की पूर्णिमा को मेला देखने के लिए बीसलदेव पुष्कर गया। वहाँ भी नागपहाड़ की खाइयों (खाद्रियों) में प्रीतिपूर्वक रमन करने में ही मगन रहा। इसी पहाड़ के एक हिस्से में बहते निर्मल जल और वृक्षों के झुरमुट के बीच ही सुन्दर शरीर वाली तपस्विनी गौरी अपनी साधना में रत थी। जो स्वयं राजा के पुत्र सारंगदेव की धाय माँ की जाई बहिन थी देखते ही राजा ने दौड़ कर उसे पकड़ लिया वह गमन करने योग्य नहीं थी पर राजा ने इस सत्य को नकार दिया।

पादाकुलकम्

पुत्री करि अग्ग जु परिनाई, भनी बहिनि सारंग हु भाई।
सो पति मरत सद्धि दुख संजम, रही सु पुष्कर गहन मनोरम॥५॥
कोउक महत सिद्ध सेवन करि, अट्ठ हि अंग जोग भव उद्धरि।
हठजोग हु विधि पुब्ब धारि हिय, क्रम अभ्यस्त सबहि गौरी किय॥६॥

ध्यान समाधि नियत मत धारी, बनिक सुता गति दुलभ बिचारी।
सो बनाय गौरी पद्मासन, त्रिपुटी जोरि समाधि मग्नमन॥७॥
बैठी गहन गुफाबिच बामा, राजा वह निरखी अभिरामा।
बीसल दोरी गही तस बांहीं, निपट कुप्पि जुग्गिनि किय नांहीं॥८॥

जिस कन्या को स्वयं ने अपनी पुत्री गिन कर ब्याहा था, जिसे राजा का पुत्र सारंगदेव स्वयं बहन कहता था। जो अपने पति की मृत्यु के बाद पूरे संयम के साथ अपने वैधव्य की दशा में इन्द्रियों का दमन करने का दुख भोगती हुई तप साधना करने पुष्कर के मनोहारी वन में जा बसी थी। जो सिद्ध की सेवा कर योग के आठों ही अंगों को साध कर अपने जीवन का उद्धार कर चुकी थी। विधिपूर्वक हठ योग धारण कर उसका अभ्यास करने वाली, ध्यान और समाधि में मन रमाने वाली उस बनिये की लड़की गौरी ने दुर्लभ गति पाई थी। वही गौरी पद्मासन लगा कर त्रिपुटी जोड़ कर (ज्ञातृ, ज्ञान और ज्ञेय का समाहार करने को त्रिपुटी कहते हैं) ध्यानमग्न हो गहन गुफा के बीच बैठी थी कि राजा ने उसे देख लिया। बीसलदेव ने तत्काल उसे दौड़ कर अपनी बाँहों में भर लिया। राजा का यह आचरण देख वह योगिनी कुपित हुई।

तदपि ताहि लै सठ भुज अंतर, निधुवन किय अनुचित कामुक नर।
सुक्र पात करि तदनु सिटायो, प्रमदा छुट्टि महादुख पायो॥९॥
खिज्जि कह्यो रे जनकतुल्य खल, सजव होहु रक्खस नृप बीसल।
खोवहु पुण्य रु मानव खावहु, बन बन भ्रमि निज आयु बितावहु॥१०॥
प्रहर इक्क मानव मति पैहै, खिल सत्त हि जामन नर खैहै।
तव सुत कै जो होय पुत्र तब, वह उद्धार करहि तावक अब॥११॥

उसने बहुत चीख-चीख कर मना किया फिर भी उस मूर्ख कामुक राजा ने उसे अपने भुजपाश से नहीं छोड़ा और अनुचित मैथुन किया। वह कामुक मनुष्य अपने वीर्य का स्खलन कर थोड़ा अवश्य लज्जित हुआ पर स्त्री ने उससे छूट कर महादुख पाया। उसने कुपित हो कर कहा रे पिता तुल्य दुष्ट! तू राजा बीसलदेव शीघ्र ही राक्षस हो जाए! तू अपने पुण्य खो कर मानव भक्षी हो जाए और वन-वन डोलता हुआ आदमखोर की तरह व्यवहार करे! दिनभर में ममात्र एक प्रहर के लिए मानवमति को प्राप्त हो और शेष

सारे समय आदमखोर बना रहे और तेरे पुत्र के जो पुत्र हो वही तेरा उद्धार करने में समर्थ हो।

नृप करजोरि दिट्ठि भुव नक्खी, इतनी तब जुग्गिनि पुनि अक्खी।
तदनु दारुचय बन्हि ज्वलित करि, जुग्गिनि वह तत्काल गई जरि॥१२॥
इम लहि साप भूप पुर आयो, सेवन पुनि गोकर्ण सिधायो।
कासार हि पहिलो मिलान किय, दूजे प्रात निदेस चढन दिय॥१३॥
दिनकर बार तबहि सत्तमि दिन, आयउ चढन बेर भावी इन।
पन्नग इक पटनिलय पइट्ठो, दोरि कतिन हाहा करि दिट्ठो॥१४॥

जब तक वह योगिनी यह सब कहती रही तब तक राजा हाथ जोड़े नीचे देखता रहा। नजर मिलाने की राजा की हिम्मत नहीं हुई। गौरी ने यह शाप दे कर काठ की चिता बनाई और उसमें तत्काल अग्नि प्रज्वलित कर स्वयं जल मरी और राजा उपरोक्त शाप ले कर अपने घर अजमेर आया। पर दूसरे ही दिन शाप के डर से राजा ने गोकर्णेश्वर महादेव की सेवा में जाना उचित समझा। राजा बीसलदेव ने बीसलपुर जाते हुए पहला पड़ाव अपने द्वारा बनवाए गए तालाब के किनारे किया। दूसरे दिन प्रातः से ही कूच का आदेश दिया। उस दिन रविवार को सप्तमी तिथि थी और इसी दिन से भविष्य राजा से वैर निकालने लगा। सायंकाल डेरों में एक सर्प घुस आया उससे डरे हुए कई सेवक दौड़ कर हाहाकार करते बाहर निकल भागे।

षट्पात्

लखि बीसल अहि आत बान कोदंड सज्ज किय।
अर्द्धचंद्र करि बान फटा तस त्वरित कट्टि दिय।
लग्गो तरफन भुजग नृपहु अपदत्र लखन गय।
तस पदत्र बिच आय छिप्यो उडि फन सु गरलमय।
लखि भूप आय हैवर चढन पय पदत्र पहिरत डस्यो।
पय सों तुराय डास्यो फन सु गरल तास बीसल ग्रस्यो॥१५॥

जब राजा बीसलदेव की आते हुए सांप पर नजर पड़ी तो उसने तुरन्त अपना धनुष-बाण उठाया। उसने एक अर्द्धचन्द्राकार बाण को प्रत्यंचा पर ले कर सर्प का संधान कर चलाया। इससे सांप का फन कट गया और सर्प

तड़पने लगा। राजा उसे देखने नंगे पांव ही उधर सर्प के समीप गया कि पीछे से जहर की थैली सहित कटा हुआ सर्प का फन राजा की जूती में आकर दुबक गया। सांप को मरा जान कर राजा ने घोड़े पर सवार होने से पहले अपने जूते पहनने के लिए ज्योंही अपना पाँव डाला कि सांप ने उसे काट खाया। स्वयं राजा के हाथों काटे हुए सर्प के फन ने अपने जहर सहित बीसलदेव को डस लिया।

दोहा

औषद मंत्र अनेक किय, तदपि सिव न भो तास।

जहर लहरि चढि तनु तजिय, बीसल पाय बिनास॥१६॥

दम्म अब्ज मित दैन को, संभर पन न भयो सु।

कोटि बीस चय करि सक्यो, गड्डी भुव तजिगो सु॥१७॥

अनेक औषधियों और मंत्रों द्वारा उपचार करने पर भी राजा को आराम नहीं हुआ। धीरे-धीरे जहर चढ़ता ही गया और राजा को शरीर छांड़ना पड़ा। इस प्रकार राजा बीसलदेव विनाश को प्राप्त हुआ। इस चहुवान का अपना वह प्रण कि एक अरब की राशि का दान करेगा पूरा नहीं हो पाया। उसने बमुश्किल तमाम मात्र बीस करोड़ की राशि एकत्रित की थी पर वह भी उसके द्वारा भूमि में गाड़ दिये जाने के कारण भूमि में दबी हुई ही रह गई।

षट्पात्

प्रामारी पति मरत कियउ सहगोन रीति करि।

बुल्ली पावक बिसत रही जद्दोनि गब्भ धरि।

ताकै प्रकट हि तनय सूनु सारंग केर सुत।

अक्खि यह रु सहि अग्गि हुव सु रानी पतिजुत हुत।

तासों कढ्यो सु रक्खस त्वरित खाये सब जन खोज करि।

अजमेर नगर उज्जर गयो प्रद्दव जिततित मुलक परि॥१८॥

इधर राजा बीसलदेव की मृत्यु की खबर पा कर उसकी प्रिय परमार रानी ने सती हो कर पति के साथ सहगमन किया पर सती होते समय रानी ने यह कहा कि सारंगदेव की यादव रानी गर्भवती है उसे पुत्र होगा अर्थात् मेरे

पुत्र सारंगदेव को पुत्र की प्राप्ति होगी। इतना बोल कर वह परमार रानी अपने पति के शव के साथ अग्नि की लपटों पर सवार हो गई। पर उस चिता से शीघ्र ही एक राक्षस निकला जो मनुष्यों को ढूँढ़-ढूँढ़ कर खाने लगा। इससे अजमेर नजर उजड़ गया। यहाँ के निवासी अपना नगर छोड़ कर इधर-उधर के प्रांतों में भाग गए।

संभरपुर सारंग जनक गति एह सुनिय जब।
कुमरानी जद्योनि दई पीहर पठाय तब।
सजि आयो निजसेन अप्प अजमेर बसावन।
इक्खि सहर उद्यान कहिय पुरजन बुल्लावन।
दिनरत्ति तीन जत्थ सु रह्यो नहिं जान्यों रक्ख स कितहु।
सारंग स्वस्थ किय मंत्र तब बसहिं द्रंग अब भय न बहु॥१९॥

उधर सांभर नगर में सारंगदेव ने जब अपने पिता की यह गति (राक्षस हो जाने की) सुनी तो उसने सबसे पहले अपनी पत्नी को उसके पीहर भिजवा दिया। इसके बाद अपनी सेना सज्जित कर अजमेर को फिर से बसा कर आबाद करने आया। उसने शहर को इस प्रकार खाली देख कर प्रजाजनों को बुलाने का आदेश दिया। इस बीच वह तीन दिन और तीन रात तक वहीं अजमेर के उद्यान में रहा पर उसे राक्षस कहीं नजर नहीं आया। तब सारंगदेव ने मन ही मन आश्वस्त हो कर अपने अमात्यों से मंत्रणा की कि यह तो मात्र अफवाह थी। अब शहर अपने आप फिर से आबाद हो जाएगा।

दोहा

दिन चउत्थ एकादसी, होवत समय विहान।
अघरत रक्खस आय जो, खल लग्गो सब खान॥२०॥
सुभटन प्रेरे सस्त्र जे, चूर करे मुख चब्बि।
सबन खाय सारंग सिर, दोर्यो ओठन दब्बि॥२१॥
कर्यो समर अद्भुत कुमर, पै रक्खस अतिप्रान।
सस्त्र बिफल करि निज सुतहु, मार्यो मसक समान॥२२॥

हक्क यहै दिस बिदिस हुव, अखिल रुके जन आत।
विपिन भयो अजमेर बलि, जीव को न उत जात॥२३॥

पर चौथे दिन एकादशी तिथि के विहान (प्रातःकाल) से ही पाप में प्रीति रखने वाला वह राक्षस फिर से आ प्रकट हुआ और वह दुष्ट चुन-चुन कर लोगों को खाने लगा। उस पर कई सेवक योद्धाओं ने अपने शस्त्र चलाए पर वह राक्षस उन शस्त्रों को पकड़ कर चबा डालता। एक बार तो वह अपने होंठ दाँतों में दबा कर स्वयं सारंगदेव को खाने के लिए उसके पीछे दौड़ा। सारंगदेव ने बहुत बहादुरी के साथ उससे अद्‌भुत मुकाबला किया पर उस बलवान ने अपने पुत्र के सारे शस्त्रों को विफल कर डाला और उसे मच्छर की तरह मसल दिया। अपने पुत्र सारंगदेव को इस तरह मार डालने पर दूर-दूर के देशों में भी उसका यह आतंक फैल गया। लोग-बाग अजमेर की ओर आने से भी कतराने लगे और इस तरह भरा-पूरा आबाद शहर अजमेर उजड़ कर वन प्रान्तर जैसा हो गया जहाँ प्रत्येक जीव जाने से बचने लगा।

सब जन खाये ढुंढि सठ, इहिं कारन अभिधान।
रक्खस कों ढुंढ हि रह्यो, बस्यो उतहि बलवान॥२४॥
खाय मनुज उतके सु खल, ईसकोन दिस ओर।
जुब्बनेरपुर लों जबहि, रह्यो मचावत रोर॥२५॥
उतके जन खावत अटत, कबहु श्रांत अतिकाय।
जुब्बनैर गिरिशृंग जो, उकुरू बैठत आय॥२६॥

इस राक्षस ने लोगों को तलाश-तलाश कर खाया था इसलिए उसका नाम ही ढूँढ़ राक्षस हो गया। वह अकेला ही जैसे अजमेर में बसता हो यह स्थिति हो गई। अजमेर नगर में हाथ आए मनुष्यों को खा कर उस ढूँढ़ राक्षस ने ईशान कोण की राह ली और वह जोबनेर नामक नगर तक पहुँच गया। उसने अपना भय वहाँ तक फैला लिया। वह अतिकाय ढूँढ़ वहाँ के लोगों को खा लेता तब जरूर थोड़ा शांत हो जाता और तब वह जोबनेर की पहाड़ी पर उकड़ूं जा बैठता।

षट्पात्

देवराज जदुबंस भूप रनथंभ दुर्गभुव।
अरु गौरी अभिधान सुता ताकै सुंदर हुव।

सो दुलहनि सारंगदेव परिनय करि पाई।
अप्प चल्यो अजमेर तबहि पीहर पहुँचाई।
गौरी गई सु रनथंभगढ़ हो दोहद लच्छन तसहि।
जंहं नियति जोग जद्दोनि जनि ललित भयो सुत समय लहि ॥२७॥

रनथंभोर दुर्ग का स्वामी यदुवंशी राजा देवराज था। उसके एक सुन्दर गौरी नामक कन्या थी। उसे राजा देवराज ने सांभर के राजकुमार सारंगदेव से ब्याहा था। जब वह सारंगदेव अजमेर गया था (उस राक्षस के आतंक को समाप्त करने हेतु) तब उसने अपनी ब्याहता पत्नी को उसके पीहर भेज दिया था। जिस समय गौरी रणथंभोर गढ़ गई उस वक्त वह गर्भवती थी। वहाँ पीहर में सौभाग्य से उस यादववंशी गौरी ने गर्भावधि पूर्ण होने पर एक सुन्दर पुत्र को जन्म दिया।

दोहा

मातुल किय उच्छव अमित, तकि डिड्डुरकुल तंतु।
द्विजन तास अभिधान दिय, अन्नलदेव अमंतु॥२८॥
सस्त्र सास्त्र सिच्छा गहिय, पंच अब्द बयपाय।
क्रम सह सब बिद्या कला, सिक्ख्यो मति समुझाय॥२९॥
बारह हायन होत बय, विद्या परखि सुबोध।
सद्धन लग्गो सस्त्र सब, जो मृगयारत जोध॥३०॥

मामा ने जिसके जन्म अवसर पर बड़ा उत्सव किया और इस बात पर खुशी जाहिर की कि डिड्डुर कुल का एक तंतु अभी विद्यमान है। उसने हर्ष विभोर हो पंडितों को इस सद्यजात बालक के नामकरण हेतु बुलवाया। पंडितों ने उसके जन्मग्रहों के अनुसार उसका नाम अनलदेव रखा। यह बालक पाँच वर्ष की वय से ही शस्त्र और शास्त्र दोनों विद्याओं की शिक्षा प्राप्त करने लगा। धीरे-धीरे उसने सभी कलाओं और विद्याओं में महारत हासिल कर ली। जब वह बारह वर्ष का हुआ तब वह विद्याओं की परीक्षा सुबोध ढंग से करने योग्य हो गया। यही नहीं आखेट कर्म में प्रीति रखने के कारण वह सारे शस्त्रों को साध कर एक अच्छा योद्धा बन गया।

षट्पात्

हरिन गवय बाराह सिंह हत्थन गहि सद्धैं।
सस्त्र करैं कहुँ सफल लाह नव नव तंहं लद्धैं।
रनत्थंभपुर दुग्ग दरी द्रोनिन बिहरैं जंहं।
एक सिद्ध निस अटत तपोधन पिक्खि गयो तंहं।
वह रह्यो सद्धि संजय बिजय चरन परन यह ढिग चल्यो।
इक हो मइंद बैठो उहां वह सम्मुह धकि उज्झल्यो॥३१॥

वह हरिण, रीछ, जंगली सूअर और शेर को हाथों से पकड़ कर मारने लगा। वह नये-नये शस्त्रों को सफलतापूर्वक चला कर नये-नये लाभ लेने लगा। रणथंभोर गढ़ की गुफाओं और द्रोनियों में विहार करने वाला एक सिद्ध पुरुष वहाँ तपस्थारत था जो मात्र रात्रि में ही विचरण करता था। ऐसे सिद्ध को देख कर वह बालक अनलदेव उसके पास गया। वह सिद्ध महात्मा अपनी इन्द्रियों पर संयम से विजय पाने वाला था। उसके चरणों में जा कर प्रणाम निवेदन करने की सोच कर वह बालक गया कि तभी उस सिद्ध के पास बैठा हुआ एक सिंह गरज कर अनलदेव पर झपटा।

गज्झि असह मृगराज प्रतल उद्धरि अन्नल पर।
समुख उड्यो तस सीस गदा झारिय झकि संभर।
हनि सिंहहिं ढिग होय सिद्ध चरनन सिर थप्पिय।
हरि गज्जत दृग खोलि उनहु चितवनि इत अप्पिय।
विग्रहं युवां मा कुरुतमिति सिद्ध कथित संस्कृत सुनत।
रुकिगो मइंद अन्नल तदपि प्रहरि गदा किन्नों प्रहत॥३२॥

उस मृगराज ने असह्य गर्जना कर अपना हत्थड़ बालक अनलदेव पर उठाया ही था कि उसने अपनी गदा का एक भरपूर प्रहार कर उस सिंह का मस्तक चूर-चूर कर डाला। अनलदेव ने एक ही झपाटे में शेर को मार कर सिद्ध पुरुष के चरणों में अपना सिर जा रखा। सिंह की गर्जना सुनते ही महात्मा ने आँखें खोल कर इधर देखा और कहा कि तुम दोनों विग्रह (लड़ाई) मत करो। (विग्रहं युवां मा कुरुतमिति)। महात्मा के संस्कृत में

कहे गए इस वाक्य को सुन कर सिंह जहां था वहीं ठहर गया था पर अनलदेव ने अपनी गदा के प्रहार से उसे मार गिराया।

सिद्ध कहिय अब्रबिषमिह न कुरुतं विग्रहमिति।
रुकिगो हरि तैं तदपि छोहि पटक्यो सु मारि छिति।
बरज्यो बिग्रह हम सु करि रु अब आय प्रनत हुव।
यातैं तव अभिधान होहु बिग्रहराज हु ध्रुव।
आयुध उबाय आयो लखि रु हंक्यो मारन केहरिय।
मम हनन ताहि संसय भयो तैं हन्यों सु अनुचित करिय॥३३॥

तब सिद्ध ने फिर संस्कृत में कहा (अब्रबिषमिह न कुरुतं विग्रहमिति) कि यहाँ विग्रह मत करो, यह सुनते ही सिंह तो रुक गया पर तू ने क्रोध कर उस सिंह को मार कर भू लूंठित कर दिया। हमने विग्रह करना रोका था पर वही (विग्रह) कर अब तुम मेरे पास आ कर इस तरह नम्र हुए हो। इसलिए तुम्हारा नाम निश्चय ही विग्रहराज होगा। तुम्हें उस सिंह ने जब आयुध (गदा आदि) लिये आते हुए देखा तो उसे संदेह हुआ कि कदाचित् तुम मुझे (महात्मा) मारने आ रहे हो इसीलिए वह सिंह तुम पर झपटा और तुमने उसे मार गिराया। यह तुमने बहुत ही अनुचित कर्म किया।

दोहा

अब तावक प्रनिपत्ति लखि, रीझयो बिग्रहराज।
मंगहु बर जो इष्ट मन, कोऊ दुर्लभ काज॥३४॥
अन्नल तब किन्नी अरज, गत राज्य हि प्रभु देहु।
करहु बितत बीसल कुलहि, उभय मिल्यो बर एहु॥३५॥
इच्छित भूपहिं अप्पि यह, सिद्ध चलिय स्वच्छंद।
आयो गढ रनथंभ इम, संभर पुनि सानंद॥३६॥
अन्नलकी अभिधा अपर, हुव इम बिग्रहराज।
विक्ख्यो तिहिं मातुल कबहु, करत श्राद्ध मुख काज॥३७॥

पर हे विग्रहराज! मैं तेरी इस अतिशय नम्रता भरी भक्ति देख कर

प्रसन्न हुआ। अब जो तेरी इच्छा हो-वैसा वरदान माँग। कोई दुर्लभ कार्य करने की मन में हो तो वह भी कहो। यह सुन कर अनलदेव ने अर्ज की कि मेरा गया हुआ राज्य मुझे फिर से प्राप्त हो। हे स्वामी! कृपा कर मुझे यह वर दें। तब महात्मा ने 'तथास्तु' कहा और कहा कि हे पुत्र! बीसलराज का वंश विस्तृत होगा। इस प्रकार अनलराज को दो वरदान दे कर वह स्वच्छंद विचरण करने वाला सिद्ध-पुरुष वहाँ से चला गया। तब अनलदेव भी सानंद वापस रणथंभोर के दुर्ग में आया। यही कारण है कि अनलदेव का दूसरा नाम विग्रहराज हुआ। इसी विग्रहराज ने कभी अपने मामा को श्राद्ध कर्म करते देखा था।

षट्पात्

सुनि अन्नल सह नाम तत्थ मातामहादि त्रय।
तिम तर्पन पुनि पिंड बंदि बिरुदन बलि आव्हय।
अरु अप्पहिं जामेय कहनि ए सब बिचारि उर।
आये भरि निज नयन गयो गौरी पंहं आतुर।
कट्टार कढ्ढि गदगद कह्यो बेग जननि सुत सुभ बहहु।
तव अग्ग धरों सिर कट्टि मम कुलउदंत कैं सब कहहु॥३८॥

अपने मामा को श्राद्ध करते समय नाम उच्चारण करते हुए अनलदेव ने अपने तीनों नाना के नाम सुने। फिर एक बार भाट के मुँह से विरुदाते वक्त फिर उन्हीं तीनों नाना के नाम सुने। इसके साथ ही सभी का उस स्वयं को भानजा कह कर पुकारना भी सुना था। इन बातों से अनलराज ने अन्दाज लगाया कि मैं रणथंभोर गढ़ का नहीं हूँ। यह सोचते ही उसकी आँखें भर आईं वह तुरन्त अपनी माँ गौरी के पास आया और अपनी कटार निकाल कर रुआंसे स्वर में बोला कि माँ! मैं कौन हूँ? माँ ने अपने पुत्र का शुभ सोच कर उसे सात्वंना दी, पर अनलराज ने कहा कि मैं अपना सिर काट कर आपके आगे धर दूँगा अन्यथा आप मुझे मेरे कुल का पूरा वृत्तान्त कहें।

क्यों अप्पन इत रहत क्यों न निज भुम्मि सम्हारत।
क्यों न जननि मम बिहित श्राद्ध तर्पन उच्चारत।
जनक पितामह नाम क्यों न बंदिय मम जंपत।
मोहि कहत जामेय इत सु अबिरत हिय कंपत।

जह्योंनि सु सुनि रोवत कहिय ध्रुवहिं जानि पुत्रहिं मरत।
हठ छोरि सुनहु कारन कहूँ इम न राज्य अप्पन करत॥३९॥

अनलराज ने माँ से आगे पूछा कि हे माँ! हम यहाँ क्यों रहते हैं? हम वहाँ जा कर अपनी जागीर को क्यों नहीं संभालते? मैं क्यों श्राद्ध कर्म नहीं करता और अपने पिता पितामह के नाम का तर्पण क्यों नहीं करता? मुझे अब तक मेरे पिता-पितामह का नाम ले कर भाट लोग शुभराज क्यों नहीं करते? मुझे यहाँ सभी भानजा कह कर क्यों संबोधित करते हैं? रोते-रोते अपने पुत्र का बुरा हाल देख कर माँ का मन पसीज गया। यह उस यादववंशी स्त्री से अधिक नहीं देखा गया। बेटा! हठ छोड़ दे। मैं कारण बतातो हूँ कि हम क्यों अपना राज नहीं संभालते हैं?

दोहा

पुत्र पितामह तव हुतो, बीसलदेव नृपाल।
सो नरपलभोजी भयो, रक्खस काल कराल॥४०॥
जन नागर अरु जानपद, खोजि गयो वह खाय।
भई सून्य अजमेर भुव, भज्जे कति भय लाय॥४१॥
संभरपुर हो तव जनक, जिहिं यह जानत बेर।
मैं सगर्भ इत मुक्कली, वह पत्तो अजमेर॥४२॥

माँ बताने लगी कि हे अनलराज! तेरे पितामह चहुवान राज बीसलदेव थे। वे अब आदमखोर राक्षस हो कर मनुष्यों को खाने लगे हैं। वे अब एक विकराल राक्षस हैं। उन्होंने सभी हमारे (प्रजाजन) नगरवासी और देशवासियों को खा लिया है। इस कारण से पूरा अजमेर जन शून्य हो गया क्योंकि लोग वहाँ से डर के मारे भाग गए हैं। तेरे पिता भी उस समय सांभरनगर में थे जब उन्हें इस बात का पता चला तो उन्होंने मुझ गर्भवती को यहाँ पीहर भिजवा दिया और वे स्वयं अजमेर गए।

षट्पात्

एकादसि दिन प्रात नयर प्रविसत वह रक्खस।
जुज्झत हनि तव जनक तिहिं सु खायो परिकर तस।

बहुरि बसावन द्रंग मनुज तव जनक बुलाये।
खाये ते सब खोजि कतिक भग्जे अकुलाये।
अजमेर बहुरि संभर नगर सुत तब खंधावार दुव।
उद्यान रहत क्रव्याद भय हेय सबन वह देस हुव॥४३॥

सुना कि एकादशी के दिन नगर में उस राक्षस ने प्रवेश लिया। उससे मुकाबला करने जब तेरे पिता गए तो उस राक्षस ने तेरे पिता को सेवक-योद्धाओं सहित मार डाला। तेरे पिता ने अजमेर नगर को फिर से आबाद करने की गरज से जिन्हें बुलवाया था वह राक्षस उन लोगों को भी ढूंढ़-ढूंढ़ कर खा गया। कुछ लोग जो शेष जीवित बच गए वे डर कर वापस कहीं भाग गए। हे पुत्र! अजमेर और सांभर नगर तुम्हारी बड़ी राजधानियाँ थी। वे दोनों पुर अब निर्जन हो गए और वह देश भी सभी के लिए उस राक्षस के रहते त्याज्य हो गया है। सभी कुछ उजड़ कर रह गया है।

दोहा

पच्छी पसु नर तिहिं पुहवि, कोऊ जाय सकैं न।
खावत ढुंढ सु खोजिकैं, उज्जर चाहत अैन॥४४॥
भुव तव इम कानन भई, होते नृप जंहं जाय।
तो कंहं मैं अत्थहि जन्यों, मातुल भ्रात निकाय॥४५॥

उस तेरे राज्य की पूरी भूमि पर मनुष्य, पशु अथवा पक्षी भी नहीं जाते और न ही जा सकते हैं क्योंकि वह ढूँढ़ राक्षस उन्हें ढूँढ़ कर खा जाता है। वह पूरे राज्य को निर्जन चाहता है। हे पुत्र! तेरी पृथ्वी (जागीर) इस प्रकार उजड़ कर जंगलवत हो गई है जहाँ तुम जा कर राजा बनते। उसी राक्षस के डर से बेटा! मैंने तुझे भी यहाँ तेरे मामा के घर आ कर जन्म दिया है। तेरे कुल का कुल यहीं वृत्तांत है।

बुल्ल्यो विग्रहराज तब, जैहों रक्खस पास।
कै अप्पन छिति छोरिहै, कै करिहै मम नास॥४६॥
चवि अन्नल अैसें चल्यो, जव सु गह्यो जद्दोनि।
कह्यो वह न कीटहु तजैं, तू इच्छत तस छोनि॥४७॥

करि साहस अन्नल तदपि, मति कछु ताहि मनाय।
पच्छिम दिस हंक्यो प्रबल, तजि रनथंभ निकाय॥४८॥
मन्नि पितामह सों मिलन, सिद्ध बचन दृढ साहि।
जुब्बनैर अजमेर के, अंतर पत्त उमाहि॥४९॥
न मृग न खग न मनुज जहाँ, देखे विग्रहराज।
इक्खि पवन संचार इक, किय संसय भुवकाज॥५०॥

अपनी माँ के मुँह से यह सुन कर विग्रहराज बोला कि हे माँ! अब मैं उस राक्षस के पास जाऊँगा। या तो वह मेरी पृथ्वी (जागीर) छोड़ कर भाग जाएगा या वह मेरा भी नाश कर देगा। इन दोनों में से एक बात होगी। इतना कह कर अनलराज जब रवाना होने लगा तो उसकी माँ ने उसका हाथ पकड़ लिया और बोली बेटा! तू जिससे अपनी पृथ्वी छीनना चाहता है वह दुष्ट तो एक कीट पतंग को भी नहीं छोड़ता। वह तो उसे भी झपट कर खा लेता है! तू मत जा! माँ के इतना समझाने पर भी अनलराज साहस कर पश्चिम दिशा की ओर रवाना हुआ। अपने कुछ विश्वासपात्र सेवकों के साथ उसने रणथंभोर का निवास छोड़ दिया। मन ही मन उस सिद्ध महात्मा द्वारा दिये गए वरदानों को याद कर वह अपने पितामह से मिलने को उत्सुक वीर आगे ही आगे बढ़ता गया। वह जब जोबनेर और अजमेर के मध्य स्थान पर पहुँचा तो वहाँ वह क्या देखता है कि उस जगह पर न मृग दिखाई देते हैं न कोई पक्षी नजर आता है। मनुष्य तो आगे की बात उनका नजर आना भी असंभव सा जान पड़ा। बस, उस जगह तो सर्वत्र एक मात्र पवन ही आता-जाता प्रतीत हुआ। विग्रहराज को यह सब देख कर एक बार तो मन में संदेह उपजा कि जागीर नहीं मिलनी है।

इतिश्री बंशभास्करे महाचम्पूके पूवार्यणे चतुर्थ राशौ वीतिहोत्र-चण्डासिबंशबर्णनप्राप्ताऽवसरचाहुवाणबीसलदेवचारित्रे प्रसभभुक्त-गौरीदत्तराक्षसभावशापबिकलनृपाऽजमेराऽऽगमनतपस्विनीपावकप्रवि-शनगोकर्णयियासुसर्पदष्टमतबीसलदेवक्रव्यादीभवन प्रामारीसहगमन-श्रुतैतदुदन्तसारङ्गदेवाऽन्तर्वत्नीस्वपत्नीरणस्तम्भपुरप्रेषणस्वयमजमेरा-गमनक्रव्यादतद्भक्षणपुर जनपदो द्यानीभवनयादव्यौरससारङ्गदेवकुमा-राऽन्नलदेवजन्मप्रापणसमधीतसर्वविद्यतत्कुमारसिद्धदर्शनतद्दत्तविग्रह-

राजस्वनामोपादाननीतसिद्धवरचहुवाणस्वमातुलकृतमातामहादिश्राद्ध-निरीक्षणस्वराज्य परिकर कुला ऽभावदुर्मनीभूताऽन्नलदेवजननीप्रश्नो-त्तरनिश्चितढुण्ढक्रव्यादस्थानगमनमेकादशो मयूखः ॥ आदितो विंशत्यु-त्तरशततमः ॥१२० ॥

श्री वंशभास्कर महाचम्पू के पूवार्यण की चतुर्थ राशि में अग्निवंशी चहुवान वंशवर्णन में अवसर मिलने से बीसलदेव चहुवान के चरित्र में हठयुक्त गौरी के दिये हुए राक्षस भाव में शाप से विकल राजा का अजमेर आना और तपस्विनी का अग्नि में जलना, गोकर्ण महादेव जाने की इच्छा वाले सर्प के डसने से मरकर बीसलदेव का राक्षस होना और प्रामारी रानी का सती होना, उसका वृत्तान्त सुन कर सारंगदेव का अपनी गर्भिणी स्त्री को रणथंभोर पुर भेजना और आपका अजमेर आना, उसको राक्षस का खाना, पुर और देश का निर्जन होना, यादवी के उर से सारंगदेव कुमार से अनलदेव का जन्म होना, और सब विद्या पढ़कर उस कुमार को सिद्ध का मिलना, उसका दिया हुआ अपना विग्रहराज नाम ग्रहण करना और सिद्ध का वर प्राप्त कर चहुवान (अन्नल) का अपने मामा का किया हुआ नाना आदि का श्राद्ध देखना, अपने राज्य, परगह (प्रजा) और कुल का अभाव देख कर उदास हो कर अनलदेव का माता से प्रश्नोत्तर करके निश्चय किये हुए ढूँढ़ राक्षस के स्थान पर जाने का ग्यारहवाँ मयूख समाप्त हुआ। और आदि से एक सौ बीस मयूख हुए।

प्रायो ब्रजदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

दोहा

जुब्बनगर दै दाहिनैं, अवनि उद्धरन आस।
अन्नलनृप अजमेर बन, पत्तो रक्खस पास॥१॥
जुब्बनैर अजमेर बिच, देस बिरचि उद्यान।
ढुंढ तहां ढुंढत रहै, प्रानिन पालन प्रान॥२॥

अपनी जागीर की भूमि को मुक्त कराने की आशा से ओत-प्रोत विग्रहराज तब जोबनेर नगर को अपनी दाहिनी ओर छोड़ता हुआ आगे बढ़ने लगा। अन्ततः वह अनलराज उजड़े हुए (जंगल बन गए हुए) अजमेर नगर में राक्षस के पास पहुँचा। जोबनेर से अजमेर के मध्य के सारे गाँव नगरों को

निर्जन बनाता हुआ वह ढूँढ़ राक्षस तो अपने प्राणों की पालना करने हेतु (भूख मिटाने के लिए) प्राणी ढूँढ़ता फिरता था।

हरिगीतम्

आमैर सों दिस वारुनी अजमेर सों सिव ओर में।
ढुंढार नामहि देस भो यह ढुंढ ढुंढन दोर मैं।
जब गो सु अन्नल जातुपैं तब जातु पुष्कर प्रांत हो।
अजमेर ढिग इक अद्रिकट्टर मैं प्रविष्ट असांत हो।।३।।

आमेर से पश्चिम दिशा में और अजमेर से ईशान कोण में जो क्षेत्र है यह पूरा क्षेत्र उस ढूंढ़ राक्षस की शिकार स्थली था। वह यहीं अपना आहार ढूँढ़ता था इसलिए इस प्रांत का नाम ही ढूँढ़ाड़ हो गया। जिस समय अनलराज उसे ढूँढ़ता हुआ अजमेर पहुँचा उस समय वह ढूँढ़ राक्षस पुष्कर प्रांत में था। अजमेर के पास ही स्थित नागपहाड़ की एक गुफा में खीझा हुआ अशान्त बैठा था।

यह बीर ढुंढत ढुढंको जितहो वहै तित पत्त भो।
आहार के हित मर्त्य आवत पिक्खि जो अनुरत्त भो।
कछु व्है प्रसन्न सु जातुधान हु कंदरा सन निक्खस्यो।
सतपंच हत्थ तदीय बिग्रह दिग्घ पब्बय लों लस्यो।।४।।

अनलराज भी उस ढूँढ़ को यहाँ-वहाँ ढूंढ़ता हुआ अन्ततः वहीं पहुँचा जहाँ वह था। जैसे ही उसने एक आदमी को अपनी गुफा की ओर आता हुआ देखा तो वह मन ही मन बहुत प्रसन्न हुआ कि चलो, आज भोजन स्वयं चल कर मेरे पास ही आ रहा है। इस तरह खुश हो कर वह राक्षस अपनी गुफा से बाहर आया तब अनलराज को वहाँ पाँच सौ हाथ लंबा दीर्घकाय, पर्वताकार सा लगा।

कर जास हत्थ असीति आयत मंडलाग्र प्रभा करैं।
अपसव्य पाय हजारमनमय इक्क डुड्डुर कों धरैं।
करि ओठ उद्ध कराल जो उठि पिक्खि बालक बुझ्यो।
जननी पिता अभिधान को तव कोन अन्वय मैं भयो।।५।।

अनलराज ने देखा कि उसके हाथ में अस्सी हाथ लंबी खड्ग चमक रही थी। दाहिने पाँव में उस राक्षस ने हजार मन भार का एक लंगर पहन रखा है। तभी वह राक्षस अपने बड़े होंठ हिला कर उस अनलराज से बोला कि रे बालक! तेरे पिता और माता का क्या नाम है ? तू किस वंश में जन्मा हुआ है ? अर्थात् तेरा कुल क्या है ?

सुनि एह विग्रहराज अक्खिय गौरी नाम प्रसू जन्यों।
चहुवान बीसल तातात रु नाम अन्नल मो भन्यों।
मरिबो हि कै हम भू अकंटक राज्य कै करिबो कह्यो।
इम अप्पके ढिग आय कै रन कै प्रजा भरिबो चह्यो॥६॥

ढूँढ़ राक्षस के सवाल सुन कर विग्रहराज ने निर्भयता से प्रत्युत्तर दिया कि गौरी नामक मेरी माँ ने मुझे जन्म दिया है। चहुवानराज बीसलदेव मेरे पितामह थे और मुझे अनलराज कहते हैं। शत्रु रहित राज्य करना अथवा इसके लिए मर जाना ही मेरा अभीष्ट है। यहाँ अभी आपके पास आने का एक ही मकसद है मेरा कि या तो युद्ध कर मरूँ या प्रजा को बसा कर इस देश को फिर से आबाद करूँगा।

बिनु भुम्मि भूपतिबाल कों मरनों भलो सरनों बुरो।
निज पुत्त ज्यों ब हनों पउत्तहि आय आहव अंकुरो।
तब याहि अष्टम जाम हो सु कह्यो तपस्विनिको फुरयो।
निज पुत्र पुत्रहिं जानि मोदित व्है तदाकृति तैं दुरयो॥७॥

वह आगे कहने लगा कि किसी राजा के पुत्र के लिए भूमि रहित होने से अच्छा है मर जाना! बिना राज्य के सड़-सड़ कर मरना अच्छा नहीं। अपने बेटे (सारंगदेव) को आपने जिस तरह मार कर खा लिया था। अब आओ इस पौत्र को भी मारो पर इसके लिए पहले युद्ध करो। इस समय उस राक्षस का आठवाँ प्रहर था जो उस जैन तपस्विनी के शापानुसार उसकी मनुष्य बुद्धि वाला समय था (शाप के अनुसार आठ प्रहर की दानव बुद्धि के बाद तुझ में एक प्रहर के लिए मनुष्य बुद्धि रहेगी)। राक्षस ने सामने वाले को अपने पुत्र का पुत्र जान कर मन ही मन (शाप को याद करते हुए कि तेरा पौत्र ही तेरे

उद्धार का निमित्त बनेगा) प्रसन्न हुआ और अपना दीर्घ स्वरूप छोड़ कर अपने असली रूप में आ गया।

पुनि तास निश्चय कों परक्खन ढुंढ जृंभित व्है कह्यो।
गदग्रस्त सप्त कि तू दरिद्र कि रुट्ठि बंधुनतैं रह्यो।
बनि चंडपावक को पतंग रु दिट्ठि मामक क्यों पर्‌यो।
पौंगडभाव हु साव तावक जाव अल्प न उत्तर्‌यो॥८॥

उसके बाद ढूँढ़ राक्षस ने एक बार फिर आगन्तुक के निश्चय की परख करने के लिए अपना मुँह खोल कर कहा कि मुझे तू या तो असाध्य रोग का रोगी लगता है या कि शाप पाया हुआ लगता है। यदि ये दोनों नहीं तब तू शर्तिया अति दरिद्री है या फिर अपने बंधुओं से झगड़ कर आया लगता है। इसीलिए मरना चाहता है अन्यथा प्रचण्ड अग्नि का पतंगा बन कर मेरी दृष्टि की जद में क्यों आया है? ओ लड़के! अभी तो तेरा पौंगडपन (पाँच से दस वर्ष के बीच की अवस्था) थोड़ा-सा भी नहीं उतरा है अर्थात् अभी तो तू ने अपनी कच्ची वय भी पूरी नहीं की है।

अबही जमालय भेजिहों मरिबो हि तोर निरर्थ है।
सुनि एह अन्नल हू कही मरिबो हि मामक अर्थ है।
गदग्रस्त सप्त न मैं दरिद्रउ न रूट्ठि बंधुन तैं रह्यो।
मरनों पितामह हत्थ सों अथवा सुही सरनों गह्यो॥९॥

मैं अभी पलक झपकते तुझे यमराज के घर भेज सकता हूँ पर तेरी वय देख कर तुझे मारना मुझे निरर्थक लगता है। यह सुन कर अनलराज ने कहा कि मैं तो मात्र मरने को ही अर्थवान समझता हूँ। न मैं असाध्य रोग से ग्रसित रोगी हूँ, न मैं शापित हूँ, न मैं अति दरिद्री हूँ, न मैं अपने बन्धुओं से रूठ कर आया हूँ। मैं तो यह निश्चय करके आया हूँ कि मरना तो अपने पितामह के हाथ से वरना उम्र भर के लिए सड़ने में क्या अर्थ है?

इम ढुंढ बिग्रहराज को मरिबोहि निश्चित जानिकैं।
धरि सांत मानवरूप सोहु प्रसन्न भो ढिग आनिकैं।
हिय लाय दै तस मत्थ हत्थ रु ढुंढ अन्नल सों कही।
सब इष्ट जीवन अंगतैंहि अनिष्टता तंहं क्यों लही॥१०॥

तब ढूँढ़ राक्षस ने यह जान कर कि यह विग्रहराज तो सचमुच मरने के लिए तत्पर हो कर आया है उसने अपना शांत स्वरूप कर मनुष्य का रूप धर लिया। फिर प्रसन्न हो कर वह विग्रहराज के थोड़ा समीप आया। इसके बाद ढूँढ़ राक्षस ने वात्सल्य भरा अपना हाथ अनलराज के सिर पर रखा और कहा कि सारे कार्य इस प्रिय जीवन के साथ लगे हैं। मनुष्य अपने इच्छित कर्म जीवित रह कर ही कर सकता है फिर तू ने इस (जीवन) के साथ इतनी अप्रियता क्यों ग्रहण की है?

पुनि सोहि अन्नल उच्चरी बिनु भुम्मि कोन क्रिया बनैं।
भोगावली बिच बंदिलोक हु नाम पैतृक नां भनैं।
नहि श्राद्ध व्है तुमकों मिलै नन जो तिलोदक अंजली।
नहिं जज्ञ पूजन दान यों अपकित्ति या कुल की चली॥११॥

अनलदेव ने फिर से जवाब दिया कि बिना पृथ्वी के (जागीर) भला कौन से कार्य सिद्ध होते हैं। इसके बिना तो भाट लोग अपनी वंशावली की बही में लिखे पूर्वजों के नाम भी ठीक से नहीं बोलते। उनके नाम की जानकारी के बिना श्राद्ध के तर्पण में तिल और जल की अंजली (अंजुरी) भी पूर्वज नहीं स्वीकारते। बिना भूमि के न यज्ञ संभव है न पूजा-अर्चना और न ही दान देना संभव होता है। इससे कुल की अपकीर्ति चल निकलती है।

तसमात जीवन हे पितामह मैं अनिष्ट हि स्वीकरयो।
इत आय में अब रावरे कर मिच्छु पावन अद्दरयो।
तब ढुंढ सत्व प्रसन्न अन्नल अत्थ आसिख यों पढ्यो।
यह भुग्गि भू तव वंस पुत्त पउत्त पाय रहो बढ्यो॥१२॥

इसीलिए हे पितामह! मुझे अपना जीवित रहना अप्रिय लगता है और यही सोच कर मैं यहाँ आया हूँ कि आपके हाथों मृत्यु पा सकूँ। यह सुन कर ढूँढ़ ने उसके पराक्रम से प्रसन्न हो कर इस प्रकार आशीर्वाद दिया कि इस भूमि को भोगते हुए तेरा वंश बढ़े! तू पुत्र और पौत्रों को प्राप्त हो कर श्रीवृद्धि को प्राप्त हो।

इम अक्खि रक्खस पाय डुड्डुर तत्थही तजि खग्ग लै।
भुव अप्पि अन्नलकों चल्यो दिस पुब्बघां नभमग्ग लै।

इहिंठां विसेस कितेक मागध जो लिखैं मत सो कहों।

द्रुत ढुंढ अन्नल सों कह्यो तव हत्थ मिच्चुहि में लहों॥१३॥

इतना कह कर उस ढूँढ़ राक्षस ने अपने पाँव का लंगर खोल कर वहीं डाल दिया और अनलराज को उसकी भूमि सौंप कर, अपनी तलवार के साथ आकाश मार्ग से पूर्व दिशा में चला गया। इसी वृत्तान्त को कुछ भाट लोग अपने मतानुसार यों भी लिखते हैं ढूँढ़ ने अनलराज से कहा कि मैं तेरे हाथ से ही मरना चाहता हूँ।

करि वार इक्क हि खग्ग को जिम मत्थ मामक उत्तरैं।

कछु कंठ पैं न लग्यो रहैं लव जाय दूरहि जो परैं।

इम अक्खि अन्नल अग्ग ढुंढ बइट्ठ कंधर नाय कैं।

किय तास सीस अलग्ग विग्रहराज खग्ग चलाय कैं॥१४॥

और ढूँढ़ ने अनलराज से कहा कि मुझ पर तलवार का एक वार कर जिससे मेरा मस्तक कट जाए पर ध्यान रखना एक ही वार से पूरा सिर कटना चाहिए यदि थोड़ा सा हिस्सा भी गले का कटने से रह गया तो मैं मरूँगा नहीं। इसलिए झटका ऐसा करना कि मेरा सिर कट कर दूर जा गिरे। इतना कह कर वह ढूँढ़ अपनी गर्दन झुका कर अनलराज के आगे बैठ गया तब विग्रहराज ने तलवार के एक ही प्रहार से उसका सिर काट कर अलग कर दिया।

तब डारि डुड्डुर अन्य विग्रह धारि अंबर संचर्‌यो।

यह चंदसोंहु विसेस मागधजाति ग्रंथनमैं धर्‌यो।

सबठां न वृत्त सदृक्ष पावत चंदकेहु प्रबंध है।

लिखिदेत केक नई नई हु परंपरा सुहि अंध है॥१५॥

भाटों के मतानुसार इसके बाद वह अपने पाँव का लंगर वहीं डाल कर, दूसरा रूप ले कर वह ढूँढ़ आकाश में चला गया। यह वृत्तांत बड़वा भाटों ने चंद भाट (बरदाई) से इतर लिखा है पर अंध परंपरा के चलते चंद बरदाई ने भी कई नई-नई बातें अपने ग्रंथ में लिख दी हैं। यही नहीं चंद बरदाई के ग्रंथ *पृथ्वीराज रासो* में भी वृत्तान्त एक जैसा नहीं मिलता है।

इम अप्पि अन्नल कों मही नभमग्ग रक्खस नें गह्यो।
दिस पुब्ब कोउक पुण्यछेत्र स्वदेह उज्झन कों चह्यो।
तिस भूख पीड़ित यों वहै नभ जात कोउक सिद्धकों।
लखि उत्तरयो भुव तास आश्रम ओ नम्यों तप इद्ध कों ॥१६॥
तब सिद्ध अक्खिय कोन तू सुनि प्रव्ह रक्खस यों कही।
चहुवान बीसल मैं हुतो लहि साप रक्खसता लही।
अब देह छोरन मैं चह्यो मुनि कोन तीरथ मैं तजों।
तजि जातुभाव रु जा प्रभाव दुराप केवल कों भजों ॥१७॥

पर जैसा कि लिखा है कि इस प्रकार अनलराज को उसकी जागीर निरापद सौंप कर आकाशमार्ग से वह राक्षस पूर्व दिशा में गया कदाचित् वहाँ किसी पुण्य क्षेत्र में वह अपनी देह त्यागना चाहता था। फिर भूख प्यास झेल कर किसी तप-सिद्ध के आश्रम को ऊपर से देख कर वह (ढूँढ़) नीचे उतरा और ऐसे सिद्ध के चरणों में झुका। जब सिद्ध ने उसे पूछा कि तू कौन है ? तो उस राक्षस ने नम्र हो कर यह कहा कि मैं ही चहुवान राज बीसलदेव था और शाप के कारण राक्षस हुआ हूँ। अब मैं अपनी इस देह को छोड़ना चाहता हूँ। कृपा कर मुझे यह बताएँ कि इसके लिए कौन सा तीर्थ क्षेत्र उत्तम रहेगा जहाँ मैं अपने इस दानवी रूप से निवृत्त हो सकूँ और दुराप कांति वाले का भजन कर सकूँ।

सुनि यों कह्यो मुनि कासिका नगरी त्रिलोचन थान है।
तजि तत्थ देह कयत्थ होवन सत्थ अत्थ प्रमान है।
नमि सिद्ध कों तब ढुंढ यों सुनि कासिका दिस हंकयो।
नभमग्ग आवत नैर दिल्लिय भानुजा लखतो भयो ॥१८॥

ढूँढ़ राक्षस के मंतव्य को सुन कर सिद्ध मुनि ने कहा कि त्रिलोचननाथ वाली काशी ही वह उत्तम तीर्थ है। ऐसे शिव के स्थान पर अपनी देह त्यागने से जीवात्मा स्वयं परमात्मा स्वरूप हो जाता है। ऐसा प्रमाण शास्त्र देते हैं। इसके बाद वह ढूँढ़ उस सिद्ध मुनि को प्रणाम कर काशी की ओर चला। उसे आकाश मार्ग से काशी जाते हुए नीचे दिल्ली नगर और उसके पास बहती यमुना नदी नजर आई।

जिहिं काल तोमर लक्खधीर सु राज्य दिल्लिय में करैं।
तंहं आय न्हाय कलिंदजा जलपान किन्न हरैं हरैं।
इक सिद्ध तत्थहु भानुजातट भूगुफा तप आचरयो।
सुनिकैं निसीथहु न्हान आहट ध्यान छोरि सु निस्सरयो ॥१९॥

उस समय लखधीर तंवर दिल्ली पर राज करता था। ढूँढ़ ने वहाँ नीचे उतर कर यमुना में स्नान किया और अपनी प्यास बुझाने के लिए धीरे-धीरे यमुना का जल पिया। यहीं यमुना के तट पर जमीन में गुफा बना कर एक सिद्ध तपस्यारत था। आधी रात के समय में इस प्रकार किसी के नदी में नहाने की छप-छप सुनी तो वह अपना ध्यान छोड़ कर बाहर आया।

लखि सोच पुच्छिय ढुंढ सों तब ढुंढ भूत सबै कही।
इम जातु भो अब जाय कासिय देह डारन की चही।
सुनि सिद्ध अक्खिय जातु होय अनेक दुष्कृत तैं करे।
असु धेनु जाचक वृद्ध बालक बिप्र नारिन के हरे॥२०॥

सिद्ध ने सामने ढूँढ़ को नहाते देखा तो पूछा कि तू कौन है ? तब ढूँढ़ राक्षस ने अपना पूरा वृत्तांत सुनाया और यह भी बताया कि अब किस प्रकार मैं (राक्षस) अपनी देह का त्याग करने काशी जा रहा हूँ। यह सुन कर उस सिद्ध ने कहा कि राक्षस रूप में तू ने अनेक दुष्कृत्य किये हैं। तू ने कई गायों, याचकों, वृद्धों, बालकों, ब्राह्मणों और स्त्रियों के प्राण हरे हैं।

तप घोर पुब्ब कुमाय कासिय जाय यों बपु छोरिये।
तबलों इहां रहि मो गुफा जप ध्यान ओ तप जोरिये।
सब तित्थ न्हावन जात मैं तप तू इहां करि आनलों।
कहि यों गुफा तजि सिद्ध गो हुव ढुंढ व्हां थिर थानलों ॥२१॥

इसलिए पूरे पापों से छूटने के लिए काशी में शरीर त्यागने से पूर्व तुझे कठिन तपस्या कर पुण्य कमाना चाहिए। तू यहाँ मेरी इस गुफा में रह कर जप, तप, और ध्यान कर। चूँकि मैं सारे तीर्थ करने जा रहा हूँ इसलिए मैं जब तक वापस न लौटूँ तब तक यहाँ तप कर। इतना कह कर वह सिद्ध अपनी गुफा छोड़ कर तीर्थाटन को गया और ढूँढ़ राक्षस उसकी गुफा में बैठ कर जप तप करने लगा।

जमुनोद पान रु न्हान सों तमचित्त सीतल रंच भो।
बिसवास सो लहि ढुंढ व्हां तपकाज पुण्य प्रपंचभो।
तंहं निगमबोध गुफा प्रबेसि रु ढुंढ यौं तप मंडयो।
सतसट्ठि हायन कालहू करतैं तहां तप त्यों गयो॥२२॥

यमुना का जल पीने से और उसमें नहाने से उसका तमोगुणी चित्त शान्त हुआ इससे उसके मन में थोड़ा भरोसा बंधा कि यहाँ तप करने से पुण्य मिल सकता है। अतः ढूँढ़ राक्षस ने फिर उस निगमबोध गुफा में प्रवेश कर कठिन तपस्या की। कहा जाता है कि एक सौ साठ वर्षों (अथवा सड़सठ) तक उसने वहाँ तपस्या की, उसके बाद वह काशी को गया।

अजमेर कों इत पाय अन्नल राज्य अप्पन वित्थस्यो।
तजिगो जु डुड्डुर ढुंढ सो निजगेह पूजन मैं धस्यो।
रनथंभ तैं जननी बुलाय सु सर्व उप्पर व्है रह्यो।
करि धर्म नीति प्रवृत्त मारग आदिराजन को गह्यो॥२३॥

इधर अजमेर का राज्य पा कर अनलराज ने इसका विस्तार किया। मरते समय ढूँढ़ राक्षस जो अपने पाँव का लंगर छोड़ गया था उसे राजा ने ले जा कर अपने घर में पूजा के स्थान पर रखा। अर्थात् उसकी पूजा करने लगा। रणथंभोर से अपनी माँ को आदर सहित अजमेर बुलाया। धीरे-धीरे वह सर्वोपरि राजा हो गया। धर्म और नीति के मार्ग का अनुसरण कर उसने अपने पूर्वज राजाओं की परम्परा को जीवित रखा।

सब नैर देस बसाय निश्चल दुर्ग्ग सज्ज किते करे।
चढि भोर घोरन दोर मोरन जोर ओरन के हरे।
सह दैन बीसल अब्ज रुप्पय जो लयो पन सो गयो।
भुव मैं रह्यो बसु बीसकोटि सिवाय संचित नां भयो॥२४॥

अनलराज ने उजड़े हुए सारे नगरों को फिर से बसाया। देश को भी फिर से आबाद कर कई दुर्ग बनवाए। प्रभात के समय वह राजा घोड़े पर सवार हो कर अपने राज्य की सीमा की रक्षा करते हुए शत्रुओं के फैलाव को रोकने जाता। पूर्व में राजा बीसलदेव ने जो एक अरब की राशि दान करने का प्रण लिया था उसे वह बिना पूरा किये ही सो गया (अर्थात् मर गया)। उससे कुल मिला कर मात्र बीस करोड़ की राशि ही एकत्रित हो सकी इससे

अधिक वह संचित नहीं कर सका।

सु बिचारिअन्नल अप्पकों जु मिल्यो सु दैनलग्यो जहाँ।
भुवके सबै कविराज पंडितराज आय बसे तहां।
मृगनृपतिभाषणयज्ञयूपप्रशस्ति नामक बिप्र हो।
कवि जो प्रबुद्ध अपुब्ब काव्य प्रबंध कल्पन छिप्र हो॥२५॥

इस बात को अच्छी तरह मन में सोच कर राजा अनलराज स्वयं को जो मिल गया उसी का दान करने लगा। इससे पृथ्वी पर कहीं भी बसने वाले कविराज और पंडित सारे उसके राज्य में आ बसे। मृगनृपतिभाषणयज्ञयूप प्रशस्ति नामक बाह्मण था। (यहाँ सुकवि सूर्यमल का आशय यह कहने का हो सकता है कि इस प्रशस्ति का प्रशस्तिकार जो ब्राह्मण कवि था अथवा प्रत्येक शब्द का अन्तिम अक्षर लेने से जैसे मृग का ग, भाषण का ण, यज्ञयूप का प और प्रशस्ति का ति यह गणपति बनता है। कदाचित उसका नाम गणपति हो या गणेश हो।) वह पंडित कवि कई अपूर्व काव्य ग्रंथ शीघ्र रचने में कुशल था।

सह भूप बीसल ग्रंथ बिग्रहराज को तिहिं निर्मयो।
जसको प्रकास बिसेस ही करि ख्यात भूतल पैं दयो।
सारंगधर दुव पद्य ता बिच के लिखे निज पद्धति।
जिहिं ठां नरेस बिसेस है तिहिं ठा लखो तस संगती॥२६॥

उसने राजा बीसलदेव सहित विग्रहराज का ग्रंथ बनाया। इसमें उसने दोनों राजाओं के यश के प्रकाश को भूतल पर फैला कर प्रसिद्ध किया। उस ग्रंथ के दो श्लोक[१] पंडित शार्ङ्गधर ने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ शार्ङ्गधर-पद्धति में

---

१. आविन्ध्यादाहिमाद्रेर्विरचितविजयस्तीर्थयात्राप्रसङ्गदुद्ग्रीवेषु प्रहर्ता नृपतिषु विनमत्कंधरेषु प्रसन्न।
आयावर्तं यथार्थं पुनरपि कृतवान्म्लेच्छ विच्छेदनाभिर्देवःशाकंभरीन्द्रो जगति विजयते वीसलक्षोणिपालः॥१॥

२ ब्रूते संप्रति चाहुवाणतिलकः शाकंभरीभूपतिः श्रीमान्विग्रहराज एष विजयी संतानजानात्मनः।
अस्माभिः करदं व्यधायि हिमवद्विन्ध्यान्तरालं भुवः शेषस्वीकरणाय मास्तु भवतामुद्योगशून्यं मनः॥२॥

तीर्थयात्रा के प्रसंग से विंध्य पर्वत से लेकर हिमालय पर्वत तक जिसने विजय की है, जो गर्दन उठाने वाले राजाओं पर प्रहार करता और गर्दन झुकाने वालों पर प्रसन्न रहता है और जिसने म्लेच्छों का नाश करके आर्यावर्त (भरतखंड) को फिर से यथार्थ में आर्यों का देश बनाया। वह देदीप्यमान सांभर का सर्वोपरि राजा बीसलदेव जगत् में विद्यमान है॥१॥ चहुवान वंश का तिलक सांभर का राजा श्रीमान् विजय करने वाला यह विग्रहराज (अन्नलदेव) अभी अपने वंशज वीर योद्धाओं से कहता है कि हम ने पृथ्वी के हिमालय और विंध्याचल के मध्य भाग को कर (राजदेय द्रव्य) देने वाला किया है सो तुम बाकी की पृथ्वी अपने अधिकार में लेने को अपने मन को उद्योग रहित मत करो, अर्थात् बाकी की पृथ्वी लेने का मन में सदा उद्योग रखो॥२॥

लिखें है। जिस जगह पर उस विशेष राजा का इस ग्रंथ में उल्लेख आया है उन श्लोकों को उनके संदर्भ में संगति बैठा कर देंखें।

इम देत बिग्रहराज आयतिकाल मैं गिनती लई।
जुरि इकट्ठी तंहं तीस कोटि प्रदत्त दम्मन की भई।
कति यों कहै प्रतिअर्थि अन्नल इक्क अन्नहि देत भो।
जुरिकैं तथापि इते प्रमान सु दत्त सर्ब समान भो॥२७॥

राजा विग्रहराज (अनलराज) ने इस कारण से बुहत समय तक दान दिया उसकी गिनती की जाए तो उसका दान तीस करोड़ मुद्राओं का बैठता है। कुछ लोग यह भी कहते हैं कि राजा अनलराज प्रत्येक याचक को अन्न ही (दूसरे अर्थ में अन्नी अर्थात् इकन्नी देता था) देता था। यदि इस हिसाब से भी जोड़ा जाए तब भी कुल योग तीस करोड़ की राशि का बैठता है।

करि राज्य बिग्गहराज यों बहु पत्ति सत्रुन की हई।
चहुवान आन चलाय अप्पन सर्वपैं प्रतप्यो जई।
अजमेर सों धुव घां तडाग हु स्वीय नामक निर्मयो।
अबके समै बिच अन्नसागर नाम जास कह्यो गयो॥२८॥

इस तरह का राज्य विग्रहराज कर वह कई राजाओं का स्वामी अर्थात् राजाओं का राजा हुआ। इस विजयी चहुवान राजा ने सभी राज्यों में अपनी आन (आज्ञा) चला कर सभी पर राज्य किया। अजमेर से उत्तर दिशा में अपने नाम का एक बड़ा तालाब बनवाया। आज के समय में भी वह तालाब आनासागर के नाम से प्रसिद्ध है।

कति यों कहैं गढ बिंटुली हु बिसेस अन्नल सों बन्यों।
जस ओ प्रताप तदीय बीसलसों बडो भुवपैं भन्यों।
सुत सूर विग्रहराज कै जयसिंहदेव बली भयो।
निज तात कै दिवजात पट्ट तदीय धारि स्वयं लयो॥२९॥

कुछ विद्वान लोग यह भी कहते हैं कि गढ बिंटली (वर्तमान में नाम तारागढ़) भी विशेष रूप से इसी अनलराज ने बनवाया। कुछ भी हो सुयश और प्रताप में उसका नाम पृथ्वी पर बीसलदेव से भी बढ़ कर प्रसिद्ध हुआ।

इसी प्रतापी राजा अनलराज (अवर नाम विग्रहराज) के जयसिंह देव जैसा बलवान पुत्र हुआ जो अपने पिता के स्वर्गवासी होने पर उनका उत्तराधिकारी हुआ।

षट्पात्

अन्नल सुत जयसिंह देव भूपति समर्थ हुव।
पाई जिहिं प्राचीन भाग्यबल करि निधान भुव।
गढ बिंटुलि बिच गड्डि धर्यो जनक सु कढ्यो धन।
बीसलसर सन बीस कोटि आखनि लिय अप्पन।
धर्माधिराज अर्जित धनहु लाय खोज अगनित लये।
पहिले निधान उभय हि सुपहु द्विजन बंटि अविरत दये॥३०॥

अनलराज का पुत्र जयसिंहदेव भी समर्थ राजा हुआ। जिसने अपने भाग्य बल से जमीन में गाड़ा हुआ धन प्राप्त किया। इसने अपने पिता का गढ़ बिंटली में गाड़ा हुआ धन निकाला। इसके साथ ही बीसलसागर में राजा बीसलदेव द्वारा गाड़ा गया बीस करोड़ का धन भी इसी राजा जयसिंह देव ने खुदवा कर निकलवाया। इसी तरह धर्माधिराज द्वारा संचित अगणित धन की खोज भी इसी राजा ने करवाई और उसे भी प्राप्त किया। कहा जाता है कि पहले दो स्थानों से मिले धन को इस श्रेष्ठ राजा ने ब्राह्मणों को बाँट दिया अथवा निरंतर बाँटता रहा।

श्रुति पुरान नय धर्म सकल जयसिंहदेव सुनि।
भुव सत्रुन गन भेदि चाहि जिततित लिन्नी चुनि।
याकै सुत आनंदमेय प्रकट्यो गुन पूरन।
तात मरत लहि तखत रारि किन्नें रिपु चूरन।
आनंदमेय नृप कै भये सोमेस्वर अरु कृष्ण सुत।
तिन्ह प्रसवकाल जगहित तब सु नानाधन बरख्यो प्रनुत॥३१॥

वेद, पुराण, नीति और धर्म के सारे ग्रंथ राजा जयसिंहदेव ने सुने। उसने शत्रुओं को मार कर उनकी भूमि जहाँ चाही वहाँ प्राप्त की। अथवा शत्रुओं को चुन-चुन कर मारा और भूमि हासिल की। इसके गुणवान आनंदमेय

नामक पुत्र हुआ। पिता के मरने पर जो राजगद्दी पर बैठा और युद्ध कर जिसने अपने शत्रुओं को मारा। आगे राजा आनंदमेय के दो पुत्र जन्मे। पहला सोमेश्वर और दूसरा कृष्ण। अपने इन पुत्रों के जन्म अवसरों पर स्तुतियोग्य इस राजा आनन्दमेय ने नाना प्रकार से धन की वर्षा की अर्थात् पुरस्कार में धन लुटाया।

इतिश्री वंशभास्करे महाचम्पूके पूर्वायणे चतुर्थ राशौ बीतिहोत्र-चण्डासिबंशबर्णनान्तर्भूतचाहुवाणबीसलदेवचरित्रे विग्रहराज क्रव्याद-प्रसादप्रापणत्यक्तशृंखलासहाऽजमेरप्रान्तनीतनभोमार्गढुण्ढदिल्लीपुरागमन-तत्रत्यसिद्धप्राप्तशिक्षयमुनातटगुफाप्रविष्टक्रव्यादतपश्चर्याऽनुष्ठानविग्र-हराजाऽजमेरजनपदजीर्णोद्धरणकवि पण्डित राजमृगनृपतिभाषणयज्ञयूप-प्रशस्तिसपितामहाऽन्नलकाव्यनिर्माणविग्रहराजसमाहृतत्रिंशतकोटि मुद्रावितरणस्वाऽख्याऽभिधेयतडागनिर्माणबैग्रहराजिजयसिंहदेवो द्भव-नप्राप्ततातपट्टतन्नानानिधानप्रापणवीसलाऽन्नलसञ्चितनिधानसम्प्रदाना-ऽर्पणजायसिंह्यानन्दमेय जानकाऽनन्तराऽजमेरराज्यसमासादनतत्कुमार-सोमेश्वर कृष्ण द्वय जन्मप्रापणं द्वादशो मयूखः ॥१२॥ आदित एकविं-शत्युत्तरशततमः ॥१२१॥

श्री वंशभास्कर महाचम्पू के पूवार्यण की चौथी राशि में अग्निवंशी चहुवान वंशवर्णन के भीतर चहुवान बीसलदेव के चरित्र में विग्रहराज का राक्षस की प्रसन्नता प्राप्त करना, और उसकी तजी हुई सांकल अजमेर प्रान्त में प्राप्त होना, आकाश मार्ग से ढूँढ़ का दिल्ली जाना वहाँ सिद्ध की शिक्षा को प्राप्त होकर यमुना किनारे की गुफा में प्रवेश कर राक्षस द्वारा तपस्या का अनुष्ठान करना, विग्रहराज का अजमेर और देश का जीर्णोद्धार करना, पंडितराज मृगनृपतिभाषणयज्ञयूप्रशस्ति (गणपतित) का पितामह सहित अन्नल का काव्य बनाना, विग्रहराज का सब मिलाकर तीस करोड़ रुपये दान करना और अपने नाम का तालाब बनवाना, विग्रहराज के पुत्र जयसिंह देव का जन्म होना, पिता का पट्ट पाकर अनेक प्रकार के धन को प्राप्त करना, बीसलदेव और अन्नल देव के संचय किये धन का दान करना, जयसिंह के पुत्र आनन्दमेय का पिता के बाद अजमेर का राज्य करना, उसके पुत्र सोमेश्वर और कृष्ण दोनों के जन्म पाने का बारहवाँ मयूख समाप्त हुआ और आदि से एक सौ इक्कीस मयूख हुए।

प्रायो ब्रजदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

दोहा

सोम कृष्ण पावत प्रसव, नृप आनंद सुनीति।
नांदीमुख मुख विधि निखल, पटु सद्विय सह प्रीति ॥१॥

सोमेश्वर और कृष्ण के जन्म लेते ही सुनीतिज्ञ राजा आनन्दमेय ने आभ्युदयिक संस्कार के साथ सभी षोड़श संस्कार विधि-विधान पूर्वक संपन्न करवाए।

षट्पात्

बाल चंद्र सम बढिग साव कन्ह रु सोमेस्वर।
काल पंच सम कढत पढन लग्गे बिद्या पर।
महिपालक आनंदमेय पुष्कर प्रसाद लिय।
चउ आश्रम चउ बरन सरन निजनिज सरनी किय।
तबतैं सु ढुंढ अबलों तपहि इत दिल्लिय सद्धत रह्यो।
कंदरा पिहित कालिंदितट सिद्ध कथित कष्टहि सह्यो ॥२॥

द्वितीया तिथि से बढ़ते चन्द्रमा के समान वे दोनों बालक कृष्ण और सोमेश्वर दिन-दिन बढ़ने लगे। गुजरते समय के साथ वे पाँच वर्ष की उम्र से ही श्रेष्ठ विद्याध्ययन में बढ़ते गए। राजा आनन्दमेय ने अपना राज्य करने में बहुत यश प्राप्त किया। उन्होंने चारों आश्रम वाले और चारों वर्णों के प्रजाजनों को अपने-अपने मार्ग पर निर्बाध चलने वाला बनाया। अपने समय से अब तक ढूँढ़ राक्षस दिल्ली में तप साधना करता रहा। वह यमुना किनारे गुफा में छिप कर कठिन साधना का कष्ट सहन कर रहा था।

तोमर नृपति अनंगपाल पांडव कुल पुंगव।
दिल्लियपुर तिन दिनन दारुद्रोहिन प्रतपै दव।
इंद्रप्रस्थ जिहिं अधिप व्यास करि अधिक बसायउ।
निगमबोध लग नैर सीम प्राकार लसायउ।
प्रासाद कुंज उपवन प्रचुर पुरबाहिर नाना प्रतिम।
क्रीड़ानिवास जिततित क्रमत भोगत भोग अनंद इम ॥३॥

उस काल में पांडव कुल का तंवर वंशीय श्रेष्ठ राजा अनंगपाल दिल्ली का राजा था। जो अपने काष्ठ रूपी शत्रुओं के लिए साक्षात अग्निरूप था। उसने इन्द्रप्रस्थ (दिल्ली) नगर को विस्तार से बसाया। महल बनवाए। बाग-बगीचे भी बहुत बनवाए। निगमबोध घाट तक की शहर की सीमा के चारों ओर शहरपनाह बनवाई। अपनी राजधानी को इस प्रकार विकसित कर वह आनन्दपूर्वक राज्य के ऐश्वर्य को भोगने वाला हुआ।

दोहा

तोमर कै इक्क न तनय, तनया दुव हुव तास।
जेठी जंहं सुरसुंदरी, अनुजा कमला आस॥४॥

इस तंवर राजा अनंगपाल के एक भी पुत्र नहीं जन्मा। हाँ, पुत्रियाँ अवश्य दो पैदा हुईं। बड़ी बेटी का नाम सुरसुंदरी और छोटी कमला थी।

षट्पात्

बरख अठट नव बहत रहत कन्यापन रंचक।
परिकर कन्या पास सबय तिनकै सतपंचक।
आनंगी इम उभय करैं परिसर सह क्रीड़न।
निगमबोध भुव निखिल गये इकदिन कन्यागन।
उपबन प्रबेसि ए सब अटत जामिक बाहिर दूर जंहं।
सहबात उमड़ि बारिद सघन तड़ित डारि किय गज्ज तंहं॥५॥

छोटी वाली कन्या आठ बरस की और बड़ी नौ वर्ष की हुई। उनका थोड़ा-सा कन्यापन शेष था (दस वर्ष तक कन्यावस्था कही गई है)। इस समय उनकी समान उम्र वाली पाँच सौ कन्याएँ सेविकाएँ और सहेलियाँ थी। ऐसी अनंगपाल की पुत्रियाँ अपनी परिचारिकाओं के साथ महल के परिसर में खेलती रहतीं। एक दिन यह कन्याओं का समूह निगमबोध घाट पर गया। वहाँ के बाग में ये लड़कियाँ दौड़ती-फिरती खेलने लगीं। राज के पहरेदार (प्रहरी) दूर खड़े थे। तभी वहाँ घनघोर घटा उमड़ी। खूब तेज गति से पवन चलने लगा और बादल तेज आवाज में गरजे।

अतिप्रचंड लखि अनिल बडी बुंदन लखि बरस्सत।
सब कन्या भचि सजव तक्यो आश्रय हिय तरसत।

दइवजोग जिहिं दरिय ढुंढ व्यवहित तप धारत।

द्वार सिला तस दिग्घ परिग तिन्ह दिट्ठि पुकारत।

इन मिलि डिगाय सोही उपल पत्र लता पथ दूर करि।

देख्यो सु ढुंढ इंद्रिय दमत धिय सिद्धोदित ध्यान धरि॥६॥

प्रचंड वात के चलते और बड़ी-बड़ी बूँदों वाली वर्षा होने लगी। सारी कन्याएँ डर गईं। उन्होंने इधर-उधर आश्रय लेने की जगह तलाशी। देवयोग से जिस गुफा में ढूँढ़ राक्षस तपस्यारत था और जिसके प्रवेश द्वार पर एक बड़ी शिला रखी हुई थी। ठंड से ठिठुरती सारी कन्याएँ इसी गुफा की ओर भागीं। उन्होंने वहाँ वह शिला देखी। सारी लड़कियों ने उस भारी शिला को मिल कर हटा दिया और वहाँ उगे हुए झाड़-झंखाड़ को हटाया तो वे क्या देखती हैं कि आगे कोई तपस्वी बैठा है। असल में वह ढूँढ़ राक्षस था जो अपने इन्द्रिय निग्रह के साथ वहाँ ध्यान लगा कर बैठा था।

जे तिहिं तापस जानि प्रनमि लग्गी सब पूजन।

दीप धूप मुख द्रव्य आनि एकत्र मुदित मन।

अरचन विधि रचि अखिल उचित पुनि करि आरत्तिय।

नमि नमि कन्या निकर स्वीय तस पयन सीस दिय।

अनुलेप छुवत तजि ध्यान वह पिक्खत ढुंढ कन्नीन प्रति।

बुल्ल्यो प्रसन्न मंगहु बरहिं मन्नहु जाहि दुराप मति॥७॥

दोनों राजकुमारियों की परिचारिकाओं का समूह उसे तपस्वी और सिद्ध पुरुष जान कर प्रणाम करने लगा। वे धूप, दीप आदि की व्यवस्था कर मुदित मन से उस की आरती उतारने लगीं। सारी झुक-झुक कर उसके चरणों पर अपना मस्तक रखने लगीं। अपने शरीर पर स्पर्श पा कर उसका ध्यान टूट गया। उसने आँखें खोल कर देखा कि यह क्या नजारा है? सामने इतनी सारी कन्याओं को देख कर वह ढूँढ़ राक्षस बोला कि ओ कन्याओ! मैं तुमसे प्रसन्न हुआ! माँगो, क्या वरदान चाहती हो?

अक्खिय सु सुनि अनंगपाल तनया कमला तब।

जग अदेय बर जेहु सदा प्रभु तव अधीन सब।

सखी सखिनि बिच संग सजातीयहि छ अग्ग सत।
कनी इक्क द्विजकेर बंदितनया हु इक्क बत।
सब अट्ठ अग्ग सत हम सखी राग चहत इक थान रहित।
सो देहु बहुरि संतति सबन देहु प्रबल बिरहक दहि ॥८ ॥

तपस्वी के मुँह से यह सुनकर राजा अनंगपाल की छोटी पुत्री कमला कहने लगी। हे महात्मा! आपके लिए तो कोई वर अदेय नहीं, अर्थात् कोई वर कठिन नहीं सारे वरदान आपके अधीन हैं। इन सारी कन्याओं में से एक सौ छह मेरी सजातीय सखियाँ हैं। इनके अतिरिक्त मेरी सखियों में एक ब्राह्मण कन्या है और एक भाट कन्या। इस प्रकार हम सारी मिल कर एक सौ आठ कन्याएँ हैं जो सभी आपस में एक दूसरे को अत्यन्त चाहने वाली सखियाँ हैं। अतः आप कृपा कर हमें ऐसा वरदान दें कि हम सभी उम्र पर्यन्त साथ रहें, कभी जुदा न हों। हम में से किसी को आपस में बिछुड़ना न पड़े। इसलिए हमारे भाग्य में लिखे विरह के अंक (विरहांक) को मिटा दें और हम सभी को संततिवान होने का वरदान दें।

कनी कथित करि करन अस्तु कहि पुनि अक्खिय यह।
अप्यों जो कछु आनि सोहु स्वीकार करहु सह।
पहिलैं दै हैं पितर जितहि परनी तुम जैहो।
आय आय सब आयु बहुरि इकथान बितै हो।
पुत्रहु अजेय सबकै प्रबल वसुधातल ह्वै हैं बिदित।
इम अक्खि ढुंढु नभमग्ग उडि हंक्यो कासिय इष्ट हित ॥९ ॥

कन्याओं की ओर से यह निवेदन सुन कर ढूँढ़ राक्षस ने पहले सभी को 'तथास्तु' कहा और आगे कहने लगा कि मैं जो भी तुम्हें दूँ तुम्हें उसे स्वीकार करना होगा? पहले तो तुम लोगों के माता-पिता जहाँ तुम्हें ब्याहें वहाँ अपना विवाह कर लेना पर तुम सभी बाद में आ-आ कर एक स्थान पर मिल जाओगी और वहीं अपनी शेष आयु साथ-साथ बिताओगी। तुम सभी को प्रबल पुत्र होंगे जो पृथ्वीतल पर विख्यात होंगे। अर्थात् बाद में तुम्हारी सभी इच्छाएँ पूरी हो जाएँगी। इतना कह कर ढूँढ़ राक्षस आकाश मार्ग से उड़ता हुआ काशी नगरी की ओर गया।

दोहा

उडत ढुंढ यह अक्खिगो, बासर कछुक बिहाय।
आंऊं में जब अत्थही, सब आवहु समुदाय॥१०॥

पर वह ढूँढ़ राक्षस उड़ने से पहले यह कह कर गया कि कुछ समय बाद मैं यहाँ लौट कर वापस आऊँगा तब तुम सारी कन्याओं को पूरे समूह सहित यहाँ आना होगा॥

षट्पात्

सुनि यह कन्या सकल गई निज निज गृह गावत।
इत सु ढुंढ उडि गयउ नैर कासिय सिर नावत।
प्रथम सिद्धजुग परसि बहुरि जमुना तप बित्थरि।
ईसपुरी अब आय धन्य हुव अनघ तेज धरि।
सजि न्हान पान गंगा सलिल करि सअट्ठसत वपु सकल।
तनु दिव्य इतर धरि भजि त्रि दृग वे हि सकल हुतकिय अनल॥११॥

यह सुन कर सारी कन्याएँ गाती-कूदतीं खुशी-खुशी अपने-अपने घर गईं और उधर वह ढूँढ़ राक्षस काशी नगर में गंगा स्नान करने के लिए चला गया। राक्षस ढूँढ़ ने सर्वप्रथम तो इसी गुफा में तपस्यारत उस सिद्ध पुरुष के चरण स्पर्श किए थे फिर उसी सिद्ध पुरुष के आदेश से यमुना के किनारे इस निगमबोध घाट की गुफा में बैठ कर तपस्या की थी और अन्त में इस पवित्र काशी नगरी में आ कर स्नान करने से निष्पाप हो कर वह फिर से कांतिवान हो गया। इस प्रकार वह राक्षस ढूँढ़ अन्ततः साधना कर धन्य हुआ। उसने काशी के घाट पर गंगा स्नान किया। गंगा जल का पान किया फिर अपने शरीर के एक सौ आठ टुकड़े कर उस राक्षस ने अपना नया दिव्य शरीर धारण किया। इसके बाद काशीनाथ (महादेव) की आराधना कर उसने अपने ही शरीर के उन टुकड़ों को अग्नि में होम किया।

दोहा

काय होमि सिव तुष्ट करि, कहिय ढुंढ हिय काम।
भखि अंब रु अस्थिन भसम, बीर जनैं सब बाम॥१२॥

ढुंढ ब्रजिन गिरि ढाहिकैं, उज्झि सदय पल आद।
अंगखंड करि होमि इम, पायउ ईस प्रसाद॥१३॥
भिन्न भिन्न तिनकी भसम, अरु रसाल फल एक।
लैआयउ दिल्लिय लघुहि, बलि सु ढुंढ सबिबेक॥१४॥

इस प्रकार उस ढूँढ़ राक्षस ने अपने उस राक्षसी शरीर के टुकड़ों से हवन कर महादेव को प्रसन्न किया और महादेव से यह वरदान माँगा कि मेरे इस शरीर की भस्म और आम का फल खा कर एक सौ आठ स्त्रियाँ वीर पुत्रों को जन्म दे। उस ढूँढ़ राक्षस ने इस तरह अपने पापी देह रूपी पर्वत को गिरा कर मन में दया विचारी और मांस आदि खाना छोड़ दिया। अपने ही अंगों के टुकड़ों को इस प्रकार अग्नि में होम कर उसने शिव की कृपा पाई। उसकी देह के अलग-अलग टुकड़ों की राख और एक सौ आठ आम फल ले कर शीघ्र ही वह वापस दिल्ली आया।

जिहिं कंदर तप जजत हो, आयो तंहं अब एह।
क्रीड़त पुनि आई कनी, वे अपरान्ह अनेह॥१५॥
सिद्ध लखि रु अर्चन सहित, सब प्रनमी तब सिद्ध।
देखि उचित प्रत्येक दिय, अंब भसम तप इद्ध॥१६॥
सतछ अग्ग छत्रन सुता, जिन सह इक द्विजजा रु।
बंदिसुता इक तिन सबन, चक्खे दुव हित चारु॥१७॥

वह सीधा यमुना के किनारे वाली उसी गुफा पर आया जहाँ बैठ कर उसने तपस्या की थी। वहीं पर राजकुमारी सहित वे सभी कन्याएँ फिर से खेलने को आईं। उस सिद्ध पुरुष को वापस आया देख सारी कन्याएँ एकत्रित हो कर उसकी पूजा-अर्चना करने लगीं। उसने सभी एक सौ आठ सखियों को आशीर्वाद दे कर प्रसाद रूप एक-एक आम का फल और वह भस्म दी। एक सौ छह तो उनमें से क्षत्रिय पुत्रियाँ थी और एक-एक कन्या ब्राह्मण और भाट जाति की थी। उन सभी ने एक-एक आम का फल और सिद्ध द्वारा दी गई भस्म खाई।

जंपिय ढुंढ बहोरि जब, सब लहिहो पति संग।
तब प्रबीर जनिहो तनय, जे न पराजित जंग॥१८॥

भोनन जावहु तजहु भय, पावहु पतिन प्रसाद।
गो ढुंढहु इम कहि सुगति, बिनु प्रमाद तप बाद॥१९॥
कनी सकल निज निज निलय, पत्ती द्वै बर पाय।
जित दैहैं तित जायकैं, इक्कत बसिहैं आय॥२०॥

उसके बाद उस सिद्ध (ढूँढ़) ने कहा अब तुम सभी जब अपने-अपने पति के साथ रति-क्रीड़ा में संलग्न होओगी तब तुम सभी वीर-प्रसविनी हो जाओगी। तुम सभी ऐसे वीर पुत्र की माँ बनोगी जो युद्ध में अजेय रहेगा। अब तुम सभी अपने-अपने घर जाओ और निर्भय हो कर अपने पति के साथ प्रसन्न रहो। इतना कह कर वह ढूँढ़ राक्षस (सिद्ध) अपनी तपस्या के सहारे श्रेष्ठ गति को प्राप्त हुआ। सारी कन्याएँ निगमबोध घाट से खुशी-खुशी दो वरदान प्राप्त कर अपने-अपने घरों को लौटी। मन में यह सोचती हुई कि जहाँ भी घर वाले देंगे जाएँगी पर फिर से एक साथ रहने का सुख भी तो मिलेगा। वरदान व्यर्थ नहीं होंगे।

षट्पात्

इत पत्तन अजमेर तजिग आनंदमेय तनु।
सोमेस्वर तस सूनु भयो भूपति मघवा मनु।
पट्ट लहत जिहिं प्रबल गज्जि गुज्जरधर गंजिय।
मरुधर जैसलमेर भुम्मि दब्बि रु अरि भंजिय।
दलि रन अनेक खुरसान दल धारापति रनधीर हनि।
सबनृप हटाय प्रतप्यो सुमति बसुधातल पुरूहूत बनि॥२१॥

इधर अजमेर के चहुवान राजा आनन्दमेय की मृत्यु के बाद उनका बड़ा बेटा सोमेश्वर अजमेर का राजा हुआ और राजा भी साक्षात् इन्द्र जैसा। राजगद्दी पर बैठते ही इस पराक्रमी राजा ने गुजरात (गुज्जरधर) को फतह किया। इसके बाद मारवाड़ और जैसलमेर की भूमि दबाई। इसने कई युद्धों में हिस्सा लिया और धारा नगरी के राजा रणधीर को मार कर खुरासान देश की सेना से टक्कर ली। राजा सोमेश्वर ने अपने कई समकालीन राजाओं को परास्त कर सुरेन्द्र इन्द्र की तरह नरेन्द्र की पदवी पाई अर्थात् बहुत बड़े भू-

भाग का राजा हुआ।

इत दिल्लिय कनउज्ज उभय उरझे कछु कारन।
बिजयचन्द्र रट्ठोर चढ्यो तोमर संहारन।
सोमेश्वर यह सुनत सज्जि दिल्लिय सहाय पर।
पहुँच्यो लै दल प्रचुर ताहि आवत सुनि तोमर।
संक्रमि अनंगपालहु समुख मिलि स्वगेह लैगो मुदित।
इक थाल बिरचि दुव नृप असन हुव प्रसन्न करि परमहित॥२२॥

इसी काल में दिल्ली और कन्नौज के राजा किसी कारण से आपस में उलझ गए। कन्नौज के राजा विजयचन्द्र राठौड़ ने दिल्ली के तोमर वंशीय राजा पर चढ़ाई की। यह सुनते ही राजा सोमेश्वर भी अपनी सेना सज्जित कर दिल्ली की सहायता करने को रवाना हुआ। जब तोमरराज ने सोमेश्वर के सेना सहित दिल्ली पहुँचने का समाचार सुना तो स्वयं राजा अनंगपाल इसके स्वागत हेतु चल कर सामने आया और पूरे आदर सहित राजा सोमेश्वर को अपने राजप्रासाद में ले कर गया। दोनों राजाओं ने प्रसन्नतापूर्वक एक ही थाल में साथ बैठ कर भोजन किया और एक-दूजे के हित हेतु मंत्रणा की।

दोहा

पुच्छि कुसल सत्त हि प्रकृति, बिहित चब्बि तंबूल।
प्रात चढत थप्पि रु सुपहु, सोये दुव अरिसूल॥२३॥

दोनों राजाओं के भोजन करने के बाद पान चबाते हुए राजा सोमेश्वर ने तोमरराज अनंगपाल से उसके राज्य की सातों ही प्रकृति की कुशलता बाबत पूछताछ की और कल सुबह को युद्ध करने का तय कर दोनों शत्रु संहारक राजा सोने को चले गए।

षट्पात्

रजनि जाम खिल रहत बज्जि गुड प्रखर बकत्तर।
अस्ववार हुव उभय सूर तोमर अरु संभर।
बिजयंत्र सु कबंध अनखि उततैं पहुँच्यो इत।
इततैं तुरग उठाय मिले ए नृप समुद्रमित।

सेना कबंध अहिव्यूह सुनि विपतिव्यूह संभर बिरचि।
ब्रहमंड अजक डारत बहुरि तमकि जुरे रसउग्र तचि॥२४॥

सूर्योदय के एक प्रहर की अवधि पहले ही हाथियों की पाखरें (कवच), घोड़ों की पाखरें और वीर योद्धाओं के कवचों की खड़खड़ ध्वनि के बीच अनंगपाल तंवर और सोमेश्वर चहुवान दोनों राजा अपने-अपने घोड़े पर सवार हुए। दूसरे वाले पक्ष से विजयचन्द राठौड़ भी अपने घोड़े पर चढ़ कर सामने आया। दोनों पक्षों के योद्धा राजा अपने घोड़े बढ़ा कर इस प्रकार मिले जैसे समुद्र नदी से मिलता है। राठौड़ राजा ने अपनी सेना का सर्पव्यूह रचा है यह सुन कर चहुवान (सोमेश्वर) ने पक्षिपति व्यूह अर्थात् गरुड़ व्यूह रचा। इस प्रकार अपनी-अपनी सेना की व्यूह रचना कर वे योद्धा क्रोध में तमतमाते हुए भयानक रूप धर कर पूरे जगत (ब्रह्माण्ड) को बेचैन करते हुए एक दूजे पर चले।

गरुरव्यूह रचि सोम त्रोटि कंधर हुव अप्पन।
देवराज चोरंग पच्छ दक्खिन जय थप्पन।
पच्छ बाम प्रामार रक्खि बीरम नृप संभर।
कियउ पुच्छ जयसिंह कुम्म तोमर दिय जाठर।
चहुवान असह इम खेत चढि तस पय रचि गज चय प्रतति।
रट्ठोर भुजग भट भोग सिर गरुड़ उडायउ गरुड़ गति॥२५॥

गरुड़ व्यूह रच कर चहुवान राजा सोमेश्वर स्वयं चोंच के स्थान पर तैनात हुआ और कंधे के स्थान पर अनंगपाल तंवर को रखा। चोरंग कुल के चहुवान देवराज को सेना के दक्षिण भाग पर और इसी प्रकार गरुड़ के पेट वाले भाग पर बांई ओर प्रमार बीरम को रखा। पूँछ वाले भाग में कछवाहा जयसिंह और पेट की ओर तंवर को रखा। चहुवान सोमेश्वर ने अपनी सेना के हाथियों को गरुड़ के पाँवों वाले भाग पर तैनात किया। उधर राठौड़ राजा जो अपनी सेना के सर्प व्यूह में सर्प के फन वाले भाग में डटा था ने अपने घोड़े को शत्रु सेना के गरुड़ व्यूह पर गरुड़ की गति से बढ़ाया।

सह तोमर संग्राम रचिग संभर रट्ठोरन।
अैंचि बग्ग अति भटन घुमड़ि डारे बिच घोरन।

तुमुल बजी तरवारि कवच पक्खर लगि कट्टन।
खिन बिच मच्चिग खेत लुत्थि लुत्थिन अर्वघट्टन।
हंकिय कबंध बरसिंह तंहं देवराज चोरंग दिस।
संभर कटार झारिय सहज सो कबंध मारिय सरिस॥२६॥

बिना समय खोये तंवर, चहुवान और राठौड़ की सेना में संग्राम होना आरंभ हो गया। योद्धाओं ने अपने-अपने घोड़ों की लगामें खींच कर रणक्षेत्र में अपने घोड़े झोंके। भयंकर रूप से दोनों पक्षों के मध्य तलवारें चलने लगी और योद्धाओं के कवच, घोड़ों के पाखर कटने लगे। रणभूमि में थोड़ी ही देर में कटे हुए योद्धाओं की लाशों (शवों) का अंबार लग गया। रणक्षेत्र के खड्डे कटे हुए मानव अंगों से भर गये। इसी समय वरसिंह राठौड़ ने अपना घोड़ा चोरंग चहुवान देवराज की दिशा में बढ़ाया पर कुपित वीर चहुवान ने आगे बढ़ कर अपनी कटार मारी और राठौड़ बरसिंह को ढेर कर दिया।

बीरदेव रट्ठोर जुरयो बीरम प्रमारसन।
आयो गज आरुढ बान बरख्यो घन ज्यों बन।
कासू बीरम करखि मलपि गज के बिदु मारिय।
वहहि संगि प्रति अैंचि बीर उर प्रबल प्रहारिय।
मुख रत्त बमत गज वह मुरयो व्यसु सु बीर पुहबिय परयो।
उततैं बघेल रिपुसल्ल अब वीरम सन आय रु अरयो॥२७॥

इधर वीरदेव राठौड़ ने बीरम प्रमार को जा घेरा। अपने हाथी पर सवार राठौड़ ने अपने बाणों की झड़ी लगा दी मानों मेघ बरस रहे हों कि तभी क्रोध में भरे बीरम ने उछल कर जोर से अपनी बरछी उसके हाथी के कुंभस्थल में पूरी की पूरी गाड़ दी। फिर उसने वही बरछी खींच कर हाथी के सिर से निकाली और वीरदेव राठौड़ की छाती में घुसेड़ दी। तभी अपने मुँह से रक्त वमन करता हुआ हाथी तो पीछे मुड़ गया और उसका सवार वीरदेव राठौड़ निष्प्राण हो कर धम्म से भूमि पर आ रहा। यह देख कर शत्रुसाल बघेला कुपित हो कर बीरम प्रमार पर चढ आया और दोनों आपस में भिड़ने लगे।

घरिय इक्क घमसान बिरचि तासन भट बीरम।
सो बघेल रिपुसल्ल छेदि भूतल पटक्यो छम।

सुभट बीर रिपुसल्ल उभय परतहि रनअंगन।
स्वामि बिजय पंहं सेस मुररि पहुँचे असुमंगन।
कनउज्ज कटक प्रद्रव परत पहु सोमेस्वर उप्परिय।
बित्थरि हड्डु हुरियार बिधि अरिन ओघ कन कन करिय॥२८॥

दोनों योद्धाओं में एक घड़ी तक घमासान चलता रहा पर अन्ततः वीर प्रमार वीरम ने बाघेला वंश के क्षत्रिय शत्रुसाल को काट कर रणभूमि में गिरा दिया। इस तरह वीरदेव राठौड़ और शत्रुसाल बाघेला के रणांगन में कट कर गिरते ही राठौड़ राज की सेना के शेष योद्धा भाग कर अपने प्राण बचाने की गुहार करते हुए अपने स्वामी विजयचंद के पास जा लगे। शत्रुसेना में इस प्रकार की भगदड़ मची देख कर चहुवान सोमेश्वर बढ़ा। उसने शत्रु सेना के झुण्ड में एकत्र योद्धाओं को होली के अवसर पर गोलाकार गेहर नृत्य करते हुए उन्हें कण-कण कर बिखेर दिया।

समुख बढत सोमेस तुरग पिल्ल्यो नृप तोमर।
पहुँचत हय सत पैंड सघन लग्गो ताकै सर।
लोह छकत लखि ताहि मोरि आनंदमेय सुत।
अप्पन दिल्लिय ओट भयो संभर करि अद्भुत।
खरकोन चुगत जिम भास खग इम प्रबेसि अंतर असह।
कनउज्ज कटक पेचक कियउ मारतंड चहुवान मह॥२९॥

चहुवान राजा सोमेश्वर को इस प्रकार बढ़ता निरख अनंगपाल तंवर ने भी अपना घोड़ा उसकी दिशा में बढ़ाया। वह अभी अपने घोड़े को सौ कदम ही बढ़ा पाया था कि एक पूरे वेग से छूटा हुआ तीर उसके शरीर को बींधता हुआ आ लगा। उसके घाव से छलकते लहू को देख कर आनन्दमेय का पुत्र (सोमेश्वर) अद्भुत ढंग से दिल्ली की ओट में हो गया अर्थात् दिल्ली के राजा अनंगपाल को अपने पीछे छोड़कर वह सीधा राठौड़ सेना के घेरे को भेदता अन्दर तक चला गया। वहाँ पहुँच कर जिस तरह बाज पक्षी तीतरों को चुग लेता है उसी प्रकार सामने पड़ते योद्धा को चुगते हुए (मारते हुए) वह चहुवान राज सोमेश्वर अभी ऐसा लग रहा था मानों राठौड़ों की सेना रूपी उलूक के समक्ष तेजस्वी सूर्य उग आया हो। अर्थात् रात का राजा

उल्लू जिस प्रकार सूर्य की रोशनी में अंधा सा हो जाता है उसी तरह कर्तव्यमूढ़ राठौड़ सेना को यह नहीं सूझा, कि अब क्या करें?

झमकि सोम असि झरत परत बरबर प्रबीर पर।
बिजयचंद्र दल बिकल भज्यो सिर गिरत घोर भर।
दइव भद्र इत उदित जुद्ध हुव मच्छरीक जय।
स्वबपु घाय चउसट्ठि लहे करि अरिन महालय।
सतपंच करी हय भट सहंस पहु दोउ न इतके परे।
प्रतिभट हजार पंचक प्रमित उतके धारन उत्तरे॥३०॥

चहुवान सोमेश्वर की तलवार चलने लगी वह भी इतनी त्वरा से कि जैसे बादलों के बीच कभी चन्द्रमा नजर आता है और कभी छुप जाता है। यहाँ कवि का आशय यह है कि झपाझप करती वह चन्द्रहास (तलवार) बर्बर शत्रु योद्धाओं को और दूसरे अर्थों में श्रेष्ठ वीरों को काटने लगी। जिसे देख कर विजयचन्द्र राठौड़ की सेना व्याकुल हो गई और अपने सिरों पर यकायक पड़ते इन प्रहारों के बोझ से भाग खड़ी हुई। चहुवान पक्ष के भाग्योदय से युद्ध में शुभ विजय हुई और चहुवान राज सोमेश्वर ने अपने शरीर पर लगे चौंसठ घावों के बावजूद भी शत्रु पक्ष की सेना को अपने घमासान युद्ध के महाप्रलय में डुबो दिया। दोनों राजाओं (राजा अनंगपाल और चहुवान राजा सोमेश्वर) के पक्षों के पाँच सौ हाथी, एक हजार घोड़े और एक हजार योद्धा इस भीषण संग्राम में काम आए। जबकि उधर वाले पक्ष (राठौड़ सेना) से सामना करने वाले पाँच हजार योद्धा असिधारों के कट मरे।

दोहा

सबल दैव देस रु समय, थिर होवत सब थान।
जुरि भजिगो विजय रु जई, हुव कौरव चहुवान॥३१॥

युद्ध में सभी स्थानों पर भाग्य, देश और समय बलवान और स्थिर होते हैं सो युद्ध करके विजय (विजयचन्द्र राठौड़) तो भाग खड़ा हुआ पर अनंगपाल तंवर और सोमेश्वर चहुवान ने स्थिर रह कर जय का वरण किया।

मानसिंह सोमेस को, बंधव सहि असि बान।
झकट जुज्झि तिलतिल झर्‌यो, डिड्डुर चतुर चुहान॥३२॥

मरन ओडि लरिबो महत, महत न कटक अमेय।
मंडलेस कनउज्ज मनि, जो दोउ न किय जेय॥३३॥

चहुवान राज सोमेश्वर के भाई मानसिंह ने इस युद्ध में तीरों और तलवारों के घाव सहते हुए भी कायरता का प्रदर्शन नहीं किया। वह डिड्डुर कुल का वीर तो रणांगन में तिल-तिल कट कर जूझता हुआ मरा। असल में युद्ध में जो योद्धा मृत्यु को ओढ़ लेता है वही महत्वपूर्ण होता है अन्यथा किसी सेना का अपरिमित परिमाण में बड़ा होना महत्वपूर्ण नहीं होता क्योंकि यदि ऐसा होता तो संभवत: कन्नौज के मंडलेश्वर राठौड़ विजयचन्द्र की विजय होती। मृत्यु से निर्भय हो कर लड़ने वाले सूरमाओं के कारण दोनों राजाओं की विजय हुई।

षट्पात्

तोवर तरनि अनंगपाल नृप बीरसेन सुव।
लहि जय सोम सहाय धरनि अप्पन रक्खी ध्रुव।
अब दिल्लिय दुव आय छलत उपनद्ध करे छत।
सोम घाय चउसट्ठि स्वबपु सत्रह रन संगत।
जयहेतु सुभट दुवघां जिते क्रम प्रसन्न सबबिधि करिय।
संभरहिं रक्खि बहुदिन सदन अतिहित कौरव अद्दरिय॥३४॥

राजा वीरसेन के पुत्र और तंवर वंश के सूर्य अनंगपाल ने युद्ध में चहुवान राज सोमेश्वर की सहायता से अपने राज्य की भूमि की रक्षा की। युद्ध के बाद दोनों राजाओं ने दिल्ली पहुँच कर अपने घावों की मरहम पट्टी करवाई। इस युद्ध में सोमेश्वर चहुवान को चौंसठ घाव लगे और राजा अनंगपाल सत्रह घाव खा कर घायल हुआ। विजयश्री का वरण करने के लिए इतना त्याग कर दोनों सेनाओं के सुभटों ने भी घाव खाये थे उनकी भी सेवा-सुश्रुषा वहाँ दिल्ली में हुई। कौरव राजा (अनंगपाल) ने कई दिनों तक चहुवान राज सोमेश्वर को पूरे आदर और आवभगत के साथ अपने घर रखा।

नृप दिल्लिस अनंग सचिव भट उचित पुच्छि सब।
देस काल नय देखि त्वरित मंडिय रहस्य तब।

मंडलेस यह प्रबल बिजय रट्टोर कुसस्थल।
अबके परिभव अनखि बंध करिहैं अप्पन बल।
यह मंत्र रुचत तसमात अब सुरसुंदरि ताके सुत हिं।
जेठी बिबाहि द्वेसहिं सजव दूर करहिं अनुपम द्रुत हिं॥३५॥

इसके बाद दिल्ली के राजा अनंगपाल ने अपने मंत्रियों और योद्धा उमरावों के साथ बैठ कर मंत्रणा की कि देश काल और नीति को देखते हुए अब हमें शीघ्रताशीघ्र कुछ उपाय सोचने चाहिए क्योंकि हमारा शत्रु मंडलेश्वर विजयचन्द्र राठौड़ प्रबल है फिर वह अपनी इस पराजय से आहत हो कर कुपित है। वह अवश्य ही अपने बल का प्रयोग कर हमें काबू करने का प्रयत्न करेगा। यह सोच कर मेरे मस्तिष्क में यह उपाय सूझा है कि मुझे अपनी बड़ी बेटी सुरसुन्दरी का विवाह राठौड़ राजा विजयचन्द्र के बेटे से कर देना चाहिए। इससे हमारे बीच का द्वेष शीघ्र ही खत्म हो जाएगा। मुझे यही एक उपाय अनुपम और निरापद लगता है।

दोहा

भट सचिवन नृप के भनत, यह मंत्रहि दृढ अक्खि।
पठये चर कनउज्ज प्रति, रस सगपन हित रक्खि॥३६॥

राजा द्वारा सुझाए गए इस उपाय को राजा के मंत्रियों सहित उमरावों ने भी उचित ठहराया। इसके बाद इस योजना को कार्यान्वित करने के लिए उन्होंने अपने संदेशवाहक कन्नौज राज्य के स्वामी के पास राजकुमारी की सगाई का प्रस्ताव लेकर भेजे।

षट्पात्

बिजयचन्द्र दल बंचि समुद सगपन यह स्वीकरि।
पठये दिल्लिय पत्र भाव आर्जव सनेह भरि।
संभर होय सहाय कियउ तोवंर उपकारहि।
यातैं धरिय अनंग ब्याह तस करन बिचारहि।
कमला स्वकीय लघु कन्यका सोमहिं दैन बिचार सो।
संबंध बिरचि कौरव सुपहु तंहं उच्छव किय तार सो॥३७॥

कन्नौज के मंडलेश्वर राठौड़ ने राजा अनंगपाल द्वारा भेजा पत्र पढ़ा और शीघ्र ही सहज भाव से अपनी स्वीकृति का प्रत्युत्तर भेजा कि पूरे स्नेह के साथ आपका विवाह का प्रस्ताव मुझे स्वीकार है। इस पत्र के मिलते ही राजा अनंगपाल ने सोचा कि चहुवान राज सोमेश्वर की सहायता से ही उसे युद्ध में विजय मिल पाई है इसलिए अपनी छोटी बेटी कमला का विवाह सोमेश्वर से कर देना उत्तम रहेगा। यह सोच कर राजा अनंगपाल ने सगाई कर निर्मल (शुद्ध मोती के समान) उत्सव किया।

दोहा

सगपन रचि इम सोमसन, लक्खन दम्म लुटाय।
कह्यो परनि अब संक्रमहु, कौरव हित नत काय॥३८॥
तनया उभय अनंग तब, इम व्याही दुव अैन।
परनी को तिनमें प्रथम, हमहिं सु निश्चय है न॥३९॥
बदिय चन्द निज ग्रंथ बिच, यह रन जित्ति अनंग।
कमला सोमहिं व्याहि कैं सिक्ख दई हित संग॥४०॥
बत्त पलटि रासे बिचहु, भिन्न लिखी बहु भुल्लि।
कविप्रमाद कहुँक रु कहुँक, डहके लेखक डुल्लि॥४१॥

इस प्रकार चहुवान राज सोमेश्वर के साथ अपनी पुत्री की सगाई में लाखों रुपयों का खर्च किया और कहा कि हे चहुवान राज! अब आप शीघ्र ही विवाह करने आओ और तंवर राज के प्रति अपना स्नेह यथावत रखो। राजा अनंगपाल ने इस तरह अपनी दोनों पुत्रियों सुरसुन्दरी और कमला के विवाह संपन्न किए पर इन दोनों में से किसकी पहले शादी हुई यह नहीं कहा जा सकता। ग्रंथकर्ता सूर्यमल कहता है कि मैं निश्चयपूर्वक नहीं कह सकता कि कौन-सी पुत्री का विवाह राजा ने पहले रचा क्योंकि चंद बरदाई ने अपने ग्रंथ में लिखा है कि युद्ध जीतने पर राजा अनंगपाल ने अपनी पुत्री कमला का विवाह चहुवान राज सोमेश्वर से करने के बाद ही उसे दिल्ली से वापस सांभर के लिए विदा किया था पर उसी पृथ्वीराज रासो में दूसरी जगह चन्द भाट ने इसी बात को दूसरी तरह से उलट कर लिखा है। इसमें या तो रासोकार की भूल है कि लेखक (लिपिकर्ता) की यह नहीं कहा जा सकता।

कहुँक लिखी कनउज्जपुर, कन्या दैन कही सु।
सुरसुंदरि तोमर सुता, बिजयचंद्र बिबही सु ॥४२॥
कहुँक लिखी जयचंद्र कों, व्याही यहहि अनंग।
कैसैं तंहं निश्चय करैं, पावत पृथक प्रसंग ॥४३॥
कोऊ बिधि होवहु कथा, कोऊ व्याहहु काहि।
पै अनंग दुहिता दई, बडी गाधिपुर व्याहि ॥४४॥
बिजयचंद्र सन लहि बिजय, सोमहिं गिनि स्व सहाय।
कौरव कमला कन्यका, लघु व्याही हित लाय ॥४५॥

कहीं पर लिखा है कि राजा ने अपनी पुत्री को कन्नौज में देने को कहा था इसलिए तंवर राजा ने अपनी बेटी सुरसुन्दरी का विवाह विजयचन्द्र से किया। इसी रासों में यह भी लिखा है कि राजा अनंगपाल ने अपनी पुत्री सुरसुंदरी का बिवाह विजयचन्द्र के पुत्र जयचन्द्र से किया। अब सबसे बड़ी समस्या यह है कि ग्रंथकार (सूर्यमल मीसण) इन भिन्न-भिन्न वृत्तांतों के चलते निश्चय रूप से किस पर विश्वास करें? इसलिए यह वृत्तांत चाहे जिस तरह के हों और किसी का विवाह किसी से होना लिखा हो पर यह तय है कि मेरी मान्यतानुसार राजा अनंगपाल ने अपनी बड़ी पुत्री का विवाह ही गाधिपुर (कन्नौज) में किया था। इसी तरह यह भी मेरे मत से सही है कि कन्नौज के राजा विजयचन्द्र पर विजय प्राप्त करने में चहुवान राज सोमेश्वर की सहायता रही इसीलिए राजा अनंगपाल ने अपनी छोटी पुत्री कमला का विवाह स्नेहपूर्वक राजा सोमेश्वर से किया।

षट्पात्

अग्गैं परिसर अटत करत स्वसखिन सह क्रीड़न।
कंदर जमुना कूल ढुंढ वह निरखि तपोधन।
पुञ्ज ताहि पय प्रनमि मंगि बर लियउ जथामति।
अट्ठ अधिक सत सखिय रहै इक थान बंधि रति।
संतति प्रवीर पावहिं सकल ललित इष्ट यह जिहिं लयो।
कमला सु व्याहि सोमेस कंहं दायज बहु तोमर दयो ॥४६॥

पूर्व में दिल्ली नगर के समीप की भूमि पर अपनी सखियों के साथ खेलती कमला ने एक बार यमुना नदी के तट पर तपस्यारत ढूँढ़ को बहुत बड़ा तपोधन मान कर अपनी सारी सखियों सहित उसे प्रणाम कर, उसकी पूजा अर्चना कर वरदान माँगा था। वे सभी एक सौ आठ सखियाँ थी, उन्होंने तपस्यारत ढूँढ़ राक्षस से यह वरदान चाहा था कि वे सभी सखियाँ एक ही स्थान पर प्रीति पूर्वक रहें तब उस तपस्वी ढूँढ़ ने उन्हें यही वरदान दिया था कि उन्हें वीर सन्तान की प्राप्ति होगी और साथ भी रहेगा। इस प्रकार का वरदान प्राप्त कमला को राजा अनंगपाल ने चहुवान राज सोमेश्वर से ब्याहा। दिल्ली के राजा ने इस अवसर पर दहेज स्वरूप बहुत सारा धन भी दिया।

सहंस दत्त संबसथ सहर हिंसार दुर्ग सह।
पटु दासी सयपंच द्विरद मत्ते दह गुन दह।
सप्ति मनोजव सहंस दुलभ मुत्तियमाला दस।
मनि अनेक अतिमुल्ल दये इत्यादि रक्खि रस।
परिगह समेत पहरावनी सबकी करि तोमर सुपहु।
दिय सिक्ख पुज्जि दुलही दुलह बिरचि फार सतकार बहु।।४७।।

तंवर राजा अनंगपाल ने अपनी छोटी पुत्री कमला को दहेज स्वरूप एक हजार गाँवों के साथ हिसार का दुर्ग, पाँच सौ चतुर दासियाँ, हाथी जिनकी संख्या दस की दस गुना अर्थात् सौ, एक हजार मन के समान वेग वाले घोड़े और दुर्लभ मोतियों से बनी दस मालाएँ दी। इनके अतिरिक्त कई बहुमूल्य मणियाँ भी प्रदान कीं। यही नहीं स्नेह वश राजा ने सारे योद्धाओं और सेवकों को (पहरावणी) कपड़े आदि भी दिए। इतने दहेज के साथ राजा अनंगपाल ने दूल्हा (राजा सोमेश्वर) और दुल्हन (अपनी पुत्री कमला) को पूरे आदर-सत्कारपूर्वक विदा किया।

दोहा

सोम परनि तोमरसुता, आयउ इम अजमेर।
कलह जित्ति अविरत करे, जिततित सात्रव जेर।।४८।।
कमला दिन जावत कतिक, गहिय सोमसन गर्भ।
तास गई पीहर तहां, उपज्यो सुंदर अर्भ।।४९।।

मातामह हुव अति मुदित, दुलभ होत दौहित्र।
हुव दिल्लिय घरघर हरख, मंगल बिबिध बिचित्र ॥५०॥
सुत संभव नृप सोम सुनि, जातकर्म बिधि जोरि।
कवि पंडित पूरन करे, रंकन बिपति मरोरि ॥५१॥

चहुवान राज सोमेश्वर इस तरह पूरे लवाजमे के साथ तंवर राजा अनंगपाल की पुत्री कमला से विवाह रचा कर पूरी धूमधाम से अजमेर नगर लौटे। यह राजा निरन्तर युद्धों में विजयी रहा और इसने अपने शत्रुओं को दबाया। कुछ समय पश्चात् रानी कमला ने अपने प्रिय सोमेश्वर से गर्भ धारण किया। रानी कमला तब अपने पहले जापे के लिए पीहर दिल्ली गई जहाँ उसने समय पर एक सुन्दर बालक को जन्म दिया। जब राजा अनंगपाल ने अपने इस दौहित्र के जन्म का समाचार सुना तो वह अत्यधिक प्रसन्न हुआ। इस अवसर पर उसने अपने पूरे राज्य में उत्सव मनाने का आदेश किया जिसके फलस्वरूप घर-घर में पूरे हर्ष से मंगलगीत गाए गए और खुशियाँ मनाई गईं। इधर अजमेर नगर में जब राजा सोमेश्वर के पास पुत्र जन्म का शुभ समाचार पहुँचा तो उन्होंने पूरे विधि-विधान से बालक के जात कर्म आयोजित करवाए और इस खुशी के अवसर पर राजा ने गरीब-गुरबों को दान किया। अपने राज्य के कवियों और पंडितों को बड़े-बड़े इनाम दे कर उनकी इच्छा पूर्ण की और पूरे उल्लास के साथ पुत्र जन्म की खुशियाँ मनाई।

इतिश्री वंशभास्करे महाचम्पू के पूवार्यणे चतुर्थ राशौ बीतिहोत्र-चण्डासिबंशबर्णनाऽन्तर्गतचण्डासिडिड्डुरराडाऽऽनन्देमय चरित्रे कुमार-सोमेश्वर कृष्ण बिद्याऽध्ययनप्राप्तपुष्करप्रसादाऽऽनन्दमेयधर्मप्रवर्तनपा-ण्डववंशीयतोमराऽनङ्गपालकन्याकमलाढुंढप्रसादनतत्साऽष्टशत सखी-सहवासादिबरप्रापणक्रव्यादकाशीक्षेत्रहुतस्वाऽङ्गभस्म रसालफलतत्क-न्याप्राशनस्वयातुधान्यप्रहाणचाहुवाणराजा ऽऽनन्दमेयतनूज्झनभद्रासनो-पविष्टसोमेश्वरगुर्जर धन्वाऽऽदिविषयविजयनतत्सहाय तोमराऽनङ्गपा-लगाधिपुरेशराष्ट्रकूटबिजयचन्द्रपरिभवनतोमरराजज्येष्टसुतासुरसुन्दरी का-न्यकुब्जप्रदानकनिष्टसुताकमला सोमेश्वरविबाहनहिंसारदुर्गादिमहा-मूल्यनानायौतक बितरणचहुवाणराजाऽजमेराऽऽगमनसमात्तगर्भराज्ञीदि-ल्लीप्रेषणतत्कुमारपृथ्वीराजोद्भवनं त्रयोदशो मयूखः ॥१३॥ आदितो

द्वाविंशत्युत्तरशततमः ॥१२२॥

श्री वंशभास्कर महाचम्पू के पूवार्यण की चौथी राशि में अग्निवंशी चहुवान वंशवर्णन के भीतर चहुवान डिङ्गुरराज आनन्दमेय के चरित्र में कुमार सोमेश्वर और कृष्ण का विद्या पढ़ना, पुष्कर की प्रसन्नता पाकर आनन्दमेय का धर्म प्रवृत्त करना, पाण्डववंशी तंवर अनंगपाल की कन्या कमला का ढूँढ़ को प्रसन्न करना, और उससे एक सौ आठ सखियों के संग रहने का वर पाना, ढूँढ़ राक्षस का काशी क्षेत्र में भस्म किये हुए अपने अंगों की भस्म और आम्रफल उन कन्याओं को खिलाकर अपने राक्षसत्व का नाश करना, चहुवान राजा आनन्दमेय का शरीर छोड़ना, सिंहासन पर बैठकर सोमेश्वर का गुजरात और मारवाड़ आदि देशों को जीतना और सोमेश्वर की सहायता से तंवर अनङ्गपाल का कन्नौज के राजा राठोड़ विजयचन्द्र को पराजय देना, तंवर अनङ्गपाल की बड़ी पुत्री सुरसुन्दरी को कन्नौज विवाहना और छोटी पुत्री कमला को सोमेश्वर चहुवान को विवाहना, हिसारगढ़ आदि नाना प्रकार के बहुमूल्य दहेज देना, राजा सोमेश्वर चहुवान का अजमेर आना, गर्भ धारण की हुई रानी को दिल्ली भेजना, उसके कुमार पृथ्वीराज के जन्म होने का तेरहवाँ मयूख समाप्त हुआ। और आदि से एक सौ बाईस मयूख हुए।

प्रायो ब्रजदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

दोहा

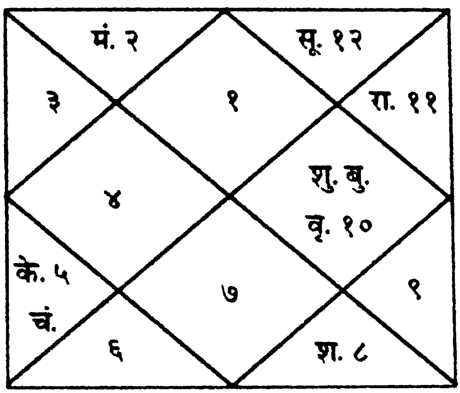
सोम पठाई गर्भसह, कमला पीहरकाज।
जातैं पुर दिल्लिय जनम, पायउ पृथ्वीराज॥१॥
सक्करि उत्तर रुद्र सत, बिक्रम बच्छर ब्रात।
बरस पंद्रहम के बहुरि, जिम सत्रह दिन जात॥२॥
राध द्वितीया असित अह, गुरु गर सिद्धि समाज।
जिहिं अनेह दिल्लिय जनम, पायउ पृथ्वीराज॥३॥

चूंकि पहला जापा पीहर में करवाने की प्रथा प्रचलित है इसलिए चहुवानराज सोमेश्वर ने अपनी रानी कमला के गर्भ ठहरते ही उसे उसके पीहर दिल्ली भिजवा दिया था। इसी कारण से राजकुमार पृथ्वीराज चहुवान का जन्म दिल्ली नगर में हुआ। विक्रम संवत् के ग्यारह सौ चौदह वर्षों का

समूह व्यतीत हो गया था और पन्द्रहवें वर्ष के सत्रह दिन भी गुजर गए थे अर्थात् विक्रमी ११९५ के वैशाख माह के कृष्ण पक्ष की द्वितीया तिथि को बृहस्पतिवार के दिन, गर करण में सिद्धि नामक योग के मिलने के समय कुमार पृथ्वीराज ने दिल्ली में जन्म लिया।

पज्झटिका

सतरुद्र ससक्करि जात साल, क्रमल गत पंद्रहम अब्द काल।
पख असित द्वितीया राधपाय, उड्डुचित्रा गीष्पति बार आय॥४॥
जिम सिद्धि योग गर करन जत्थ, तिम रहत रत्ति पल नवति तत्थ।
असांदि त्रि ख ख अबि लग्न आत, प्रकट्यो सिसु आवत ढिग प्रभात॥५॥
दूजै कुज पंचम ससि उदार, बैठो सनि अष्टम लग्न बार।
सुरगुरु रु सुक्र बुध दसम संग, तम आय आय व्यय तिम पतंग॥६॥
ए खेट लग्नकुंडलि अधीन, है चंदकथित निजभुक्ति हीन।
अंतर यह दीसत तदपि अत्थ, रवि कबि बुध मध्यम सतत सत्थ॥७॥
जो चंद दसम भृगु बुध जताय, जंपिय रवि द्वादश भाव जाय।
बिनु गनित व्है न संसय विनास, श्रम अधिक कटावत व्यर्थ स्वास॥८॥



लग्न कुंडिली पृथ्वीराज रासो

विक्रम संवत की गणना के अनुसार ग्यारह सौ चौदह वर्ष व्यतीत हो गए थे और पन्द्रहवाँ वर्ष लगा ही था। इस वर्ष अर्थात् ११९५ के वैशाख मास

के कृष्ण पक्ष की द्वितीय तिथि, चित्रा नक्षत्र, वृहस्पतिवार का दिन आया। इस दिन सिद्धि योग, गर करण में रात्रि के नब्बे पल शेष रहते, अंश तीन, कला शून्य विकला शून्य (३-०-०) में मेष लग्न आने पर प्रभात होने के समय बालक प्रकट हुआ। इस जातक के जन्म समय में ग्रहों की स्थिति इस प्रकार थी। जन्म कुंडली के दूसरे स्थान में मंगल, पंचम स्थान में चन्द्रमा, लग्न से आठवें स्थान में शनि उस समय बैठा था। बृहस्पति, शुक्र और बुध दसवें स्थान पर साथ-साथ थे। ग्यारहवें स्थान में राहु और बारहवें स्थान पर सूर्य था। यह ग्रह स्थिति पृथ्वीराज रासो के लेखक चंद बरदाई के लिखे अनुसार और दी गई जन्म-कुण्डली के अनुसार है पर यह संभव नहीं इसलिए इन्हें सत्य मानने में मेरा (ग्रंथकर्ता सूर्यमल मीसण) मन नहीं करता। उस समय चंदभाट के बताए आठों ग्रहों की ग्रहस्थिति इस प्रकार नहीं हो सकती क्योंकि सामान्यत: मध्यम राशि में सूर्य, शुक्र और बुध का निरन्तर साथ रहता है। परन्तु चन्द भाट ने शुक्र और बुध को जन्म कुण्डली के दसवें स्थान पर दर्शाया है और यह बता कर सूर्य को बारहवें स्थान पर बताया है। इस संशय का निवारण बिना गणित किए नहीं हो सकता और गणना में व्यर्थ ही समय गँवाना मुझे उचित प्रतीत नहीं होता। (मेरे मतानुसार यह पृथ्वीराज रासो अप्रमाणिक ग्रंथ है इसलिए इस पर परिश्रम कर व्यर्थ अपनी आयु घटाना है)

माघ हि के भृगु राध मांहिं, अक्खे सु असंगत बत्त आहिं।
वदि लग्न अवि रु झख रवि बताय, निस जन्म कह्यो सोपै न न्याय॥९॥
बलि चित्रा तारा तदिन बुल्लि, भाख्यो ससि मृगपति रासि भुल्लि।
अरु चैत विसद अष्टम अनेह, इम अक्खि भरनि नच्छत्र एह॥१०॥
नवमी दिन बहुल कहि निलज्ज, कहिगो पुनि रोहिनि दसमि कज्ज।
कनउज्ज खंड बिच यह कुरीति, पै मूढ करत तोसहु प्रतीति॥११॥

पृथ्वीराज रासो के रचनाकार चंद ने अपने ग्रंथ में कुमार पृथ्वीराज की जो जन्म कुण्डली दी है उसमें मकर राशि के शुक्र और बुध को वैशाख मास में होना बताया है जबकि वे माघ मास में वहाँ रहते हैं। इसलिए मुझे उसकी बात असंगत लगती है फिर मेष लग्न कह कर मीन का सूर्य बता कर रात्रि में जातक का जन्म लिखा यह तो ज्योतिष के अनुसार तर्कसंगत नहीं लगता। ऐसा कहना सरासर अन्याय है। इसके अतिरिक्त उसने उस दिन चित्रा नक्षत्र

कह कर सिंह राशि का चन्द्रमा बताया यह भी चंद की भूल है। यही नहीं चैत्र शुक्ल अष्टमी के दिन (समय) इस तरह भरणी नक्षत्र कह कर वह निर्लज्ज (चंद भाट) नवमी के दिन कृतिका नक्षत्र कह कर आगे दसवीं के कार्य में रोहिणी नक्षत्र कह गया। यह कुरीति *पृथ्वीराज रासो* नामक ग्रंथ के कन्नौज खंड में वर्णित है फिर भी मूर्ख लोग संतोषपूर्वक उस (चंद बरदाई) पर विश्वास करते हैं।

बिक्खहु सु सूरि रचि अंकब्रात, इन दिनन कबहु ए उडु न आत।
इत्यादि असंगत बहुत ओर, जंपिय तिहिं केवल प्रसभ जोर॥१२॥
सब कोन गनें लहि यंहं प्रसंग, भाख्यो तदीय बिबुधत्व भंग।
कवि भो पढि प्राकृत शब्द केक, इतरन सक्योसु कछु सिक्खि एक॥

अब मैं इस प्रसंग को लेकर कर अधिक क्या कहूँ (क्योंकि चैत्र शुक्ला अष्टमी को भरणी, नवमी को कृत्तिका और दशमीं को रोहिणी नक्षत्र कदापि नहीं आते जिसका प्रसिद्ध प्रमाण है कि चैत्र शुक्ला नवमी को पुष्य नक्षत्र में रामचन्द्र का जन्म है इसमें कृत्तिका से छह नक्षत्रों का अन्तर पड़ता है इसलिए चैत्र माह के शुक्ल पक्ष में ये तीनों नक्षत्र कभी नहीं आ सकते हैं) पंडित लोग स्वयं अहर्गण (अंक समूह) रच कर देखें ऐसा संभव ही नहीं है। ऐसी अनेक बातें पृथ्वीराज रासो में केवल अपने हठ के बल पर कही हैं उन्हें कौन गिनवाए? यह तो प्रसंगवश उस (चन्द भाट) की पंडिताई का भंग कह दिया है। वह मूर्ख था, थोड़े बहुत प्राकृत के शब्द पढ़ कर कवि बन बैठा। उसने इन शब्दों के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं सीखा।

कवि नृप नट तनु पढि होत कूर, सब जानि बजत ए नाम सूर।
प्रभु कोन करत चंदहिं प्रमान, इत्यादि लिखी बुध बनि अजान॥१४॥
बर इक्क तास रसबीर बानि, प्राकृत पद संगति कछु प्रमानि।
इस चंद कथित समयानुसार, कमला जन्यों सुनृप सों कुमार॥१५॥
दौहित्र जन्म सुनतहि उदार, उत्सव अनंगनृप किय अपार।
गृह गृह हुव दिल्लिय बाद्य गान, सुख मंडन त्रिदसालय समान॥१६॥
यह सुनि कबंध जयचंद राय, पहिरावनि दिल्ली दिय पठाय।
सुरसुंदरि माउसियाहु सत्थ, जामिज हित पठये खेल जत्थ॥१७॥

राजा, कवि और नट इन तीनों की विद्या पूर्ण होनी चाहिए। थोड़ा जानने पर ये तीनों मूर्ख कहलाते हैं। ये तीनों नाम से ही सूर (वीर) हैं इसलिए पूर्ण विद्या को जानने वाले प्रसिद्ध हो ही जाते हैं। हे राजा रामसिंह! चन्द भाट को कौन प्रमाणिक मानता है? अर्थात् उसे कोई विद्वान नहीं गिनते। इस अज्ञानी (चन्द) ने कवि बन कर ऐसी कई बातें कहीं है। उसके कहे कुछ पदों में वीर रस अवश्य प्रकट हुआ है इसके अतिरिक्त उसका लिखा तत्वहीन है। उसी चंद के बताए समयानुसार सोमेश्वर चहुवान की रानी कमला ने पुत्र को जन्म दिया। अपने दौहित्र होने की खुशी में दिल्ली के राजा अनंगपाल ने कई उत्सव किए। उस समय दिल्ली के घर-घर में गाना-बजाना हुआ। इस उत्सव के अवसर पर घर-घर में सुखपूर्वक अनेक रंगों से दिल्लीवासियों ने अपने आंगन में मांडने (अल्पनाएँ) रचाए। अपने घरों को सजा कर उन्हें स्वर्गवत बनाया। रानी कमला के पुत्र जन्म के उपलक्ष्य में राठौड़ जयचंद ने दिल्ली पहरावणी (कपड़े-आभूषण इत्यादि) भेजी। सुरसुन्दरी ने जातक (बालक) की मासी होने के कारण अपने भानजे के खेलने हेतु कई खिलौने भेजे।

सुत जन्म सुनत किय संभरेस, अजमेरपुरहु उच्छव असेस।
गज सहंस सहंस हय सहंस ग्राम, प्रत्येक दये इक इक प्रकाम॥१८॥
बिप्र रु पौरानिक बुध बुलाय, निधि पूर्ण करे तिनके निकाय।
अरु दुर्विधादि दुक्खित.अनेक, बसु आढ्य करे नृप सह बिबेक॥१९॥
लक्खन लुटाय सुत जन्म लाह, चहुवान चिंति अब गमन चाह।
दिन कछु बिताय धरि बिजय दप्प, आयउ इम दिल्लिय सोम अप्प॥२०॥

इधर अजमेर में चहुवान राज सोमेश्वर ने पुत्र जन्म के अवसर पर उत्सव मनाया और इस अवसर पर अपने याचकों को एक हजार हाथी, एक हजार घोड़े और एक हजार गाँवों की जागीर इनायत की। अपनी कीर्ति के प्रसार हेतु ब्राह्मणों, चारणों और पंडितों (विद्वानों) को बुला कर इस अवसर के उपलक्ष्य में अच्छी तरह विचार कर इतना धन बाँटा कि वे सभी धनाढ्य हो गए। अपने पुत्र जन्म की खुशी में राजा ने लाखों लुटाए और मन ही मन अपने पुत्र को देखने की इच्छा से दिल्ली जाने का विचार किया। कुछ दिन और उछाह में व्यतीत कर चहुवान राज सोमेश्वर स्वयं दिल्ली आए।

निज नारि द्विरागम करन काज, रहि दिन कितेक चहुवान राज।
निज स्वसुर सिक्ख दिय जब अनंग, दंपति तब आये स्वीय द्रंग॥२१॥
अजमेर ससुत इम सोम आय, रिपु दमन तप्यो चहुवान राय।
पहिलैं भजि ढुंढहिं करि प्रनाम, कमला बर पायउ इष्ट काम॥२२॥
सो सत्य कह्यो लिखि चंद सर्ब, वह वृत्त कहों जोपै अखर्ब।
अट्ठ रु सत जे दूर रु अदूर, सब जयनभई सुत प्रबल सूर॥२३॥
जो जो परिनाई जत्थ जत्थ, आई बहोरि इक ठाम अत्थ।
पहिलैं रजपूतन की प्रजाहि, अक्खों छ अग्ग सत सर्ब आहि॥२४॥

अपनी रानी के द्विरागम (गोना) हेतु चहुवान राज सोमेश्वर को अपने ससुराल में थोड़े दिन ठहरना पड़ा। थोड़े दिनों वाद अच्छा मुहूर्त देख कर तंवर राजा अनंगपाल ने अपनी बेटी-दामाद को विदा किया। वहाँ से चहुवान दम्पति अपने नगर अजमेर को आए। यहाँ आ कर चहुवान राज ने अपने राजकाज को संभाला। वह शत्रु संहारक राजा सोमेश्वर अपने पुत्र के साथ राजधानी में आनन्दपूर्वक रहने लगा। रानी कमला को पूर्व में तपस्वी ढूँढ़ राक्षस की पूजा अर्चना करने पर वरदान मिला हुआ था इस वृत्तांत को भी चन्द भाट ने अपने ग्रंथ में लिख कर सत्य कर दिया है यद्यपि यह वृत्तांत सत्य मानने योग्य प्रतीत नहीं होता। एक सौ आठ जो रानी कमला सहित सखियाँ थी जिन्हें दूर-दूर ब्याहा गया था सभी ने प्रबलवीर पुत्रों को जन्म दिया। वे सभी दूर-दूर अवस्थित अपने-अपने ससुराल से आ कर यहाँ एकत्रित हुईं। हे राजा रामसिंह! अब मैं उन सभी में से एक सौ छह क्षत्रिय जाति की सखियों की सन्तानों का विवरण प्रस्तुत करता हूँ।

भनि चंद दिखाई भिन्न भिन्न, अधिराज सुनहु अन्वय अछिन्न।
दुलही इक व्याही गाधिद्रंग, भो तस कबंध निड्डर अभंग॥२५॥
मंडोवर दिय इक हे महीप, प्रकटे तस दुव सुत महन पीप।
अब्बुव इक व्याहिय सलख अत्थ, सुत तास जैत प्रकट्यो समत्थ॥२६॥
व्याहिय इक कंगुर सुनहु बीर, हुव तनय तास हाहुलि हमीर।
नागोर इक्क दिय हे नरेस, बिलभद्र तास हुव बल बिसेस॥२७॥

इक ब्याही धामिनि पुर अजेय, गोइंदराय हुव तस सुगेय।
जालोर बिबाहिय इक्क जास, सुत रामदेव हुव रन सुभास॥२८॥

इनमें से क्रमशः एक कन्या कन्नौज में ब्याही गई उससे तो निडर कबंध अर्थात राठौड़ वंश वाले हुए। एक को मंडोवर में ब्याहा उसके दो पुत्र महन और पीपा नामक हुए। एक कन्या आबू में ब्याही उसकी कोख से जैत नामक समर्थ पुत्र उत्पन्न हुआ। एक लड़की का विवाह कांगड़ा में हुआ उसके गर्भ से हाहुलि हमीर हुआ। एक कन्या नागौर में ब्याही गई, उसकी कोख से बलभद्र जैसा वीर जन्मा। एक को धामिनिपुर में ब्याहा उसके गर्भ से अजेय योद्धा गोइंदराय जन्मा। एक का विवाह जालोर हुआ उसके पुत्र रूप में रणवीर रामदेव हुआ।

ब्याहिय इक कन्या पुरबयान, हरिसिंह तास हुव सुत सुजान।
दुहिता इक जैसलमेर दत्त, सुत अचल भानु दुव तस सुपत्त॥२९॥
द्योसेस जन्हड़ हिं इक्क दीन, पज्जुण्ण कुम्म हुव तस प्रबीन।
ब्याहिय कलिकुंड हु इक्क बाम, निपज्यो तस औरस भीम नाम॥३०॥
सुमयान दुर्ग्ग दिय इक समान, नरसिंह तास हुव बलनिधान।
दिय इक पयवान हु गुनदराज, दुव तस रनधीर रु देवराज॥१६॥
जूनागढ़ इक दिय रीतिजुत्त, पहु तास भीम जंघाल पुत्त।
बल्होर कनी इक दिय बिबाहि, अंगज तदीय सारंग आहि॥३२॥
ऊढा आसेर हु इक्क आस, जुग सहंसमल्ल अरु करन जास।
इक नोर कनी दिय गुनगरीय, तेजल्ल डोड हुव सुत तदीय॥३३॥

रानी कमला की उन सखियों में से एक का विवाह बयाना नगर में हुआ, उसकी कोख से हरिसिंह जैसा सुजान पुत्र जन्मा। एक कन्या का पाणिग्रहण जैसलमेर हुआ उसके गर्भ से दो पुत्र जन्मे, एक अचल और दूसरा भानु। दौसा के स्वामी जन्हड़ से एक कन्या का विवाह हुआ था उसके पज्जुण कच्छवाहा जैसा प्रवीण पुत्र हुआ। एक कन्या जो कलिकुंड ब्याही गई उसके एक औरस पुत्र भीम नामक हुआ। एक कन्या जो सुमयान दुर्ग में ब्याही उससे नरसिंह जैसा बल-निधान पुत्र जन्मा। एक कन्या जो पयवान के

गुनदराज से ब्याही गई उसके दो पुत्र हुए, एक रनधीर और दूसरा देवराज। जूनागढ़ में जिस कन्या का विवाह हुआ उससे वेगवान पुत्र भीम हुआ। बल्होर में एक कन्या ब्याही उससे सारंग नामक पुत्र हुआ। आसेरगढ़ में जिस कन्या का विवाह हुआ उसकी कोख से सहंसमल्ल और करन नामक दो पुत्र जन्मे। एक गुणवती कन्या को नोहर ब्याहा था उससे तेजल नामक पुत्र जन्मा।

इक सिद्धिदुर्ग्ग ब्याहिय उदार, कैमास तास औरस कुमार।
कहुँ भो जुदो रु कहुँ इमहु काज, कैमास अनुज चामुंडराज॥३४॥
दिय इक्क कनी भटनैर द्रंग, तारन तदीय सुत जुरन जंग।
व्याहिय गर्जनपुर इक्क बाम, चंदेल तास भयहा सनाम॥३५॥
अनिहलपुर भीमहिं दत्त एक, कच्चर तदीय सुत बर बिबेक।
इक दिय दक्खिन धरपुर अलात, जावल कुल तस सुत जल्ह जात॥
इक उपयम सूरति द्रंग आस, सुत पूर्णमल्ल चहुवान तास।
अरु कंबु कियउ एको पयाम, तस दुव बडगुज्जर कनक राम॥३७॥

एक कन्या सिद्धगढ़ ब्याही गई उसके उदर से कैमास नामक वीर पुत्र ने जन्म लिया। इसी कैमास के छोटे भाई के रूप में चामुण्डराज लिखा गया है पृथ्वीराज रासो में और कहीं उसे अलग से होना लिखा है। रासो में ऐसी कई असंगतियाँ विद्यमान हैं। एक कन्या जिसे भटनेर गढ़ ब्याहा गया उसके गर्भ से युद्ध में भिड़ने वाला तारन जैसा पुत्र जन्मा। एक कन्या जो चंदेलों के यहाँ गर्जनपुर में ब्याही उससे भयहा नामक पुत्र हुआ। अनिहलपुर पट्टनि के भीम को एक कन्या ब्याही उसके कच्चर नामक पुत्र जन्मा। एक कन्या जो ठेठ दक्षिण की भूमि में अलातपुर में ब्याही उसके जल्ह जैसा वीर पुत्र हुआ। एक कन्या का विवाह सूरतगढ़ हुआ उसका पुत्र पूर्णमल्ल चहुवान हुआ। एक का विवाह कंबुगढ़ किया गया उसके दो पुत्र कनक बड़गुज्जर और राम बड़गुज्जर हुए।

मंडनगढ इक्क हि दिय सुबड्ड, हुव तस हमीर गंभीर हड्ड।
धर जित्ति नैनवा द्रंग धीर, हुव तस अधीस कुमर सु हमीर॥३८॥
गूढापुर दक्खिन इक गई सु, तस खित्तल खंगारक द्वई सु।
इक छबरमऊ दिय गुनउदार, प्रकट्यो तदीय कनक सुप्रमार॥३९॥

पल्हनपुर इक दिय लग्न पाय, संग्राम गोर ताकै सुभाय।
पावनपुर इक दिय गुननपूर, सुत तस प्रमार रनधीर सूर॥४०॥
भुजनैर कनी इक दिय सुभास, तंहं हुव सुत जद्दवजाम तास।
बसुनैर इक्क दिय सह बिधान, सुत तस प्रसंग खिच्चिय सुजान॥४१॥
संचोर दई इक गुन सुढार, उद्दिग्ग तास बाहु प्रकार।
किरनाल इक्क दिय लग्नकाल, पुंडीर धीर तस हे नृपाल॥४२॥
व्याहिय इक कन्या जंबुवास, जुगल बरसिंह हरसिंह जास।
दिय इक बड़ोद तस गुन दराज, चालुक सारंग रु बिंझराज॥४३॥

मांडलगढ़ में जिस कन्या का विवाह किया गया उसकी कोख से हमीर और गंभीर हाडा का जन्म हुआ। इसी हाडा हमीर ने नैनवा के दुर्ग को जीत कर अपना राज्य जमाया और स्वयं कुंवर से राजा हमीर बना। दक्षिण में गूढापुर जो लड़की ब्याही गई उसके दो पुत्र जन्मे पहला खित्तल और दूसरा खंगारक। एक गुणवती कन्या छबड़ामऊ दी गई उसके गर्भ से कनक प्रमार ने जन्म लिया। एक को पाल्हनपुर ब्याहा गया उसके गर्भ से संग्राम गोड़ जन्मा। एक परम गुणवान कन्या को पावनपुर ब्याही उससे रणधीर प्रमार जैसा वीर पुत्र जन्मा। एक कन्या जिसे भुज नगर में ब्याहा गया उसके उदर से यादव जाम पैदा हुआ। वसुनगर में जिस कन्या का विवाह किया गया उसके गर्भ से खिच्ची प्रसंग जन्मा। एक गुणवंती कन्या पाँचोर ब्याही गई उससे उद्दिग्ग नामक पुत्र हुआ। अच्छे लगन का मुहूर्त निकलवा कर करनाल ब्याही गई कन्या ने हे राजा रामसिंह! पुंडीरधीर को जन्म दिया। एक कन्या जिसे जंबुवास ब्याहा गया उसके दो पुत्र बरसिंह और हरसिंह जन्मे। एक गुणवान कन्या बड़ौदा ब्याही उसके भी दो पुत्र सारंग और विंझराज चालुक्य हुए।

दुलहनि इक सत्तलनैर दीन, हुव तास सूर जंगर अहीन।
इक दिय बर्तिकपुर गुन अगार, कुल गौड सगर ताकै कुमार॥४४॥
इक को विवाह बुगलान आस, जुग बारडसिंह रु रैन जास।
व्याहिय निर्बान हि इक बडार, सुत तस नारायन कित्तिसार॥४५॥
व्याहिय इक बक्करनैर बाल, मन अडर तास चंदेल माल।
जिम इक्क कनीदिय जयनिवास, रट्ठोर सामलो सूर तास॥४६॥

इक दिय डग तस दुव रनवतंस, बीरम बरसिंह मुहिल्ल बंस।
लक्खेरिय इक दिय विहित लाज, जिहिं सूनु देवरो देवराज॥४७॥

एक कन्या को दुल्हन बना कर सातलनेर भेजा उसकी कोख से सूर पैदा हुआ जो युद्ध में अहीन (न्यूनतारहित) था अर्थात् बढ़ कर था। एक कन्या जो बर्तिकपुर ब्याही गई उसकी कोख से गौड़ कुल का सगर जन्मा। एक का विवाह बुगलानपुर हुआ उसके दो पुत्र जन्मे, एक बारडसिंह और दूसरा रैनसिंह। एक कन्या निर्वाण चहुवानों के यहाँ ब्याही गई उसके कीर्ति को ही सार तत्व समझने वाला नारायण पैदा हुआ। बक्कर नगर में जिस कन्या का विवाह हुआ उसके गर्भ से निडर चंदेल मालसिंह जन्मा। जिस कन्या को जयनिवास ब्याहा गया उससे राठौड़ वीर रामला पैदा हुआ। डग नगर में जिस कन्या का उपयम हुआ उसने दो पुत्रों को जन्म दिया जिनमें से एक मुहिल्ल वंशीय युद्ध का मुकुट वीरम मोहिल था और दूसरा बरसिंह मोहिल हुआ। एक लजालु कन्या जिसका विवाह लाखेरी किया गया उसकी कोख से देवड़ा देवराज जन्मा। एक उदारता के गुण वाली कन्या जो बटेसर ब्याही गई उसने भारमल चालुक्य को जन्म दिया।

दिय इक्क बटेस्वर गुन उदार, भो तास सूनु चालुक्क भार।
दिय इक्क भानुपुर मनवदात, जिहिं सूनु बग्गरी बग्घ जात॥४८॥
इक सोझति दिय तस दुव उदान, सारंग बीर प्रतिहार रान।
मथुरा इक दिय सह सुख समाज, भो तिहिं सुत जद्दव भोजराज॥४९॥
हिसार इक्क दिय मति गहीर, बिक्रम कबंध ताकै प्रबीर।
जिन्नोद इक्क दिय रीति जुत्त, पहु मोरी सद्दल तास पुत्त॥५०॥

एक उज्ज्वल मन वाली जिसे भानपुरा ब्याहा था उसके गर्भ से बग्घ नामक पुत्र जन्मा। एक जिसे सोझत नगर दिया गया उसने दो पुत्रों को जन्म दिया। पहला सर्प के समान क्रोधी सारंग प्रतिहार और दूसरा वीरसिंह था। एक कन्या जिसका विवाह मथुरा नगर में हुआ उससे यादव भोजराज पैदा हुआ। गंभीर स्वभाव वाली जिस कन्या को हिसार ब्याहा गया वह वीर राठौड़ विक्रम की माँ बनी। विधि-विधान पूर्वक जिसका पाणिग्रहण जिन्नोद के राजा के साथ हुआ उसने सद्दल मोरी जैसे पुत्र को जन्म दिया।

ब्याहिय इक ठठ्ठापुर बिसंक, सुत तास नाम सारंग टंक।
ब्याहिय कालंजर इक सुबोध, जयसिंह तास चंदेल जोध॥५१॥
दिय इक पट्टालय अस्मदीय, तनुजात भीम जद्दव तदीय।
परिनाई सिवपुर इक प्रबीन, ताकै कुल बारड तनय तीन॥५२॥
जे बीर मंडन रु देवराज, बलि अचल एहु अरि लाव बाज।
इक को बिबाह भाडंग आस, तनु भव कबंध आरज्ज तास॥५३॥
इक दिय जयतारन गुनन इद्ध, प्रतिहार तास अल्हन प्रसिद्ध।
इक दिय बढेल रुचि हित अखंड, चालुक्य भीम जिहिं सूनु चंड॥५४॥
पण्णागढ इक दिय प्रासपूज, ताके बघेल लक्खन तनूज।
ब्याहिय हंसीपुर इक्क बाल, सोढा तदीय सुत सत्रसाल॥५५॥
इक दिन्नी झंसीपुर अनेन, सुत तस बडगुज्जर चंद्रसेन।
परिनाई त्यौं इक नैरपेल, बर बिजयराज तासुत बघेल॥५६॥

एक कन्या जो ठठ्ठापुर ब्याही गई उसके गर्भ से निशंक वीर सारंग टांक जैसा पुत्र हुआ। एक अच्छे स्वभाव वाली कन्या कालंजर दी गई उससे वीर जयसिंह चंदेल नामक पुत्र जन्मा। एक कन्या का विवाह जो हमारे पट्टालय (चूँकि सूर्यमल मीसण के पूर्वज चंडकोटि को पट्टालय नामक यह पुर दान में मिला था इसलिए ग्रंथकर्ता ने हमारा पट्टालय लिखा है) में हुआ उसके गर्भ से यादव भीम पैदा हुआ। एक कन्या जिसे शिवपुर ब्याहा गया उसके बारड वंशीय तीन पुत्र हुए वे थे वीर मंडन, देवराज और अचल जो शत्रु रूपी लावा पक्षी पर झपटने वाले बाज थे। एक कन्या जो भाडंगपुर में ब्याही गई थी उसकी कोख से राठौड़ आरज्ज ने जन्म लिया। एक गुणों में प्रसिद्ध कन्या को जैतारण ब्याही थी उसके गर्भ से अल्हन प्रतिहार का जन्म हुआ। एक जो बढेलपुर में स्नेहपूर्वक ब्याही गई उसके पुत्र रूप में भीम चालुक्य हुआ। एक पूजा के योग्य कन्या को पन्नागढ़ ब्याहा गया उसके लक्खन बघेला जैसा पुत्र उत्पन्न हुआ। हंसीपुर में ब्याही गई कन्या से शत्रुसाल सोढा उत्पन्न हुआ। झांसी में ब्याही गई कन्या के निष्पाप बड़गुज्जर चंद्रसेन हुआ। पैलनगर में दी गई कन्या से विजयराज बाघेला उत्पन्न हुआ।

इक केर दैनपुर व्याह आस, तनु संभव गोहिल चाच तास।
कंटाल इक्क दिय धर्मकज्ज, लक्खन प्रमार ता सुत सलज्ज॥५७॥
इक पल्लि दई तस भयअछुत्त, पुंडीरघंटीराज पुत्त।
भू इक्क पारकर दिय सुभाय, तनुभव कंबध कुल च्यारि तास॥५८॥
जयसिंह जिमहिं पुंज रु प्रहार, सर्बानुज भारत समरसार।
इक को बिबाह ऋनताल आस, जंगल कुल केसरिराज जास॥५९॥
बधनोर इक्क दिय तस सुबेस, कुल मल्हनास सुत बैंकटेस।
बीरूपुर इक दिय बिधि बनाय, सुत तास टंक चट्ठा सुभाय॥६०॥
दिय इक्क देवली जस उदात, जद्दव तदीय हरिराज जात।
कन्या इक अप्पिय कालरोध, बलिराय बच्छ कुल तस सुबोध॥६१॥

गोहिल चाच नामक पुत्र उस कन्या से जन्मा जो दैनपुर में ब्याही गई थी। जिस कन्या का विवाह कंटाल नगर में किया गया उसके उदर से प्रमार लक्खन जन्मा। एक भयहीन (निडर) कन्या जिसका विवाह पाली हुआ उसका पुत्र पुंडीर घंटीराज हुआ। एक कन्या जिसे थरपारकर ब्याहा गया उसके राठौड़ कुल वाले चार पुत्र जन्मे जिनमें जयसिंह, पुंज, प्रहार और सबसे छोटा भारत राठौड़ था जो युद्ध को ही सारतत्व मानता था। एक कन्या ऋनताल ब्याही गई उसके गर्भ से केसरीराज जन्मा। बधनोर में जिस बालिका का विवाह हुआ उसके गर्भ से बेंकटेश जन्मा। विधि विधानपूर्वक जिस कन्या का पाणिग्रहण संस्कार बीरुपुर में किया गया उसका पुत्र चट्ठा टांक कहलाया। एक उदात कन्या को देवली ब्याहा गया उसके गर्भ से हरिराज यादव उत्पन्न हुआ। कालरोध नगर में ब्याही गई कन्या बलिराय नामक पुत्र की माँ बनी। आहड़ नामक नगर (पुराना उदयपुर) में शादी हुई उस कन्या की, कोख से गंभीरराय गुहिलोत पैदा हुआ।

आहुट्ठ इक्क दिय हित उपाय, गहिलोत तास गंभीरराय।
जालप्या इक दिय रीति जुत्त, पुष्कर रु कन्ह दुव तास पुत्त॥६२॥
इक दिय अलोर सुत तस सुजान, उपज्यो पंचायन चाहुवान।
सहबिधि इक जीरन दिय सुभास, तनुजात बीर प्रतिहार तास॥६३॥

सखिगन कमलादिक बीस सत्थ, अजमेर दई सोमादि अत्थ।
सोमज हुव पृथ्वीराज सुद्ध, लोहान आदि इतरन अलुद्ध॥६४॥
आजानुबाहु लोहान अच्छ, चहुवान लंगरी दंददच्छ।
धावर प्रमार जुग धीर धीर, बलि मोरी सारंग हु प्रबीर॥६५॥
लघु वेधी सिंह हु मंडलीक, बंबार बीर बलि संभरीक।
इत्यादि बीस अजमेर आय, हुव बालमित्र पित्थल सहाय॥६६॥
दिल्लीहि रही तेरह उदूढ, तिनकै तिते हि हुब गुन अगूढ।
चतुरंग आतताई चुहान, संखुल सहस्त्रमल्ल हु सुजान॥६७॥
पुनि बैस चंद तोमर महार, जंगलियराज दाहिम उदार।
रनधीर बहुरि प्रतिहारराय, दिल्ली हुव इत्यादि समुदाय॥६८॥
जे तेरह संख्यामान जोध, बंदीस चंद बरनें सुबोध।
छत्रिय जाए इक सतछ अग्ग, इम जनत भई सब सुत उदग्ग॥६९॥

एक कन्या जालप्या में दी गई पूरे विधि-विधान पूर्वक उसकी कोख से दो पुत्र जन्मे जिनमें एक पुष्कर और दूसरा कान्ह था। अलोर में ब्याही कन्या के गर्भ से पंचायन चहुवान उत्पन्न हुआ। एक सुन्दर कन्या जो जीरन में ब्याही गई उसके प्रतिहार वीरसिंह पैदा हुआ। कमला सहित बीस सखियां अजमेर के राजा सोमेश्वर से ब्याही गई उनसे चहुवान राज सोमेश्वर के पृथ्वीराज पैदा हुआ और लोहान जैसा निर्लोभी चहुवान भी सोमेश्वर के पुत्रों में था। लोहान जो अजानुबाहु था के अतिरिक्त द्वंद्व में दक्ष चहुवान लंगरी भी पैदा हुआ। कमला की सखियों की कोख से उत्पन्न दूसरे पुत्रों में मुख्य इस प्रकार थे। धावर, प्रमार, जुगधीर, धीर, सारंग मोरी, बेधीसिंह, बंवार और मंडलिक। ये सभी चहुवान बाल अजमेर में पृथ्वीराज के बालसखा बने। शेष कन्याओं में से तेरह कन्याएँ दिल्ली में ही ब्याही गईं उनके गर्भ से तेरह गुणवान पुत्र हुए। दिल्ली में ब्याही गई कन्याओं के पुत्रों में मुख्य चतुरंग चहुवान, सहस्त्रमल सांखला, बैस चन्द्र, महार तोमर, जंगलियराज दाहिमा, रणधीर प्रतिहार थे। इन तेरहों योद्धाओं के प्रमुख नाम भाट चंद ने अपने रासो में गिनाए हैं। इस प्रकार रानी कमला सहित सभी एक सौ छह सखियों ने अपने उदर से एक सौ पच्चीस उदग्र योद्धा पुत्रों को जन्म दिया।

पादाकुलकम्

कुछ अनंग संबंधि नृपन की, ही दिल्लिय कन्या हित मन की।
सुभटन की खिल सकल सुहाई, पहु तोमर ते इम परिनाई ॥७० ॥
स्वपुरोहितकी इक्क सुता सहि, सोम पुरोहित कों दिय संगहि।
रामदेव गुरु तास तनय हुव, सास्त्र रु सस्त्र सकल धारक धुव ॥७१ ॥
इक निज बंदिसुता गुन ठाई, पुर लाहोर सुपै परिनाई।
तासचंद चंडीस भट्ट तिम, अट्ठ अग्ग सत सखिन जनें इम ॥७२ ॥
प्रथम ढुंढ बर के फल पाये, जित तित बीर सबन उपजाये।
कुल भने न सामंत कतिन के, जानहु अब कहियत कछु जिनके ॥७३ ॥

दिल्ली के राजा अनंगपाल ने अपनी पुत्रियों के साथ दिल्ली में रहने वाले अपने रिश्तेदार राजाओं की पुत्रियों का भी विवाह किया। यही नहीं उन्होंने अपने उमरावों की उन पुत्रियों का भी विवाह किया जो उनकी पुत्रियों की सखियाँ थीं। राजा ने अपने पुरोहित की एक कन्या का विवाह भी राजा सोमेश्वर के पुरोहित गुरु रामदास के पुत्र जो शस्त्र और शास्त्र आदि विद्या में निष्णात था, से किया। राजा अनंगपाल ने अपने भाट चंडीस भट्ट की एक कन्या का विवाह भी इसी अवसर पर लाहोर के भाट से किया। इस प्रकार पूर्व में वर्णित सभी एक सौ आठ सखियाँ (जिनमें से एक सौ छह क्षत्रिय जाति की थी एक पुरोहित और एक भाट जाति की थी) का विवाह राजा ने किया। इन सभी ने तपस्वी ढूँढ़ राक्षस से प्राप्त वरदान के फलस्वरूप वीर पुत्रों को जन्म दिया और वे सभी वीर-प्रसविनी हुईं। हे राजा रामसिंह! मैंने कई उमरावों के कुल बताए इसलिए उनके कुलों का वर्णन अब करता हूँ। सो आप जानें!

षट्पात्

पीप मैन प्रतिहार जैत प्रामार सलखसुव।
जद्दव हाहुलिराय हठी बलभद्र कुम्म हुव।
गोइंद सु गहिलोत रामदेव सु कंठीरव।
हुव दाहिम हरिसिंह अचल भानू भट्टी भव।

पज्झुण कुम्म अरु भीम भट चालुक अन्वय उप्पजिय।
नरसिंह बीर दाहिम जनन बज्रबेग प्रकट्यो बलिय॥७४॥

रानी कमला सहित एक सौ छह क्षत्रिय सखियों ने जिन वीर पुत्रों को जन्म दिया उनके कुल इस प्रकार है। पीपा और मेहन तो प्रतिहार कुल में जन्मे। एक सलख का पुत्र (सलखावत) जैतसिंह प्रमार वंशीय था। हाहुलिराय यादव कुल में और हठी बलभद्र कछवाहा कुल में जन्मा। गोइंदराय और रामदेव गुहिलोत वंश में उत्पन्न हुए। हरिसिंह दाहिमा वंश में, अचलसिंह और भानु दोनों भाटी कुल में जन्मे। पज्जुण कछवाहा वंश में और योद्धा भीम चालुक्य (सोलंकी) कुल में पैदा हुए। वज्र जैसे वेग वाला वीर नरसिंह दाहिमा वंश में प्रकट हुआ।

रनधीर रु भट देवराज बग्गरि कुल बंधुव।
गाजी कुल सारंग हठी बल्होरनैर हुव।
सहंसमल्ल अरु कनक भये बारड दुव भ्राता।
कुल दाहिम कैमास सहित चामुंड सुदाता।
प्रतिहार बंस तारन प्रबल कच्चरराय चुलुक्य कुल।
बग्गरी बंस खित्तल बली बलि खंगार हु मति बिपुल॥७५॥

रणधीर और कुशल योद्धा देवराज दोनों बागड़िया कुलोत्पन्न भाई थे। गाजी कुल में हठी सारंग हुआ जो बल्होर पुर में जन्मा। बारड कुल में जन्मने वाले सहंसमल्ल और कनक दोनों गोत्री भाई थे। वीर कैमास और चामुंडराय दोनों दाहिमा कुल में जन्मे। जिस प्रकार प्रतिहार कुल में वीर तारन जन्मा उसी प्रकार प्रबल वीर कच्चरराय चालुक्य वंश में उत्पन्न हुआ। खित्तल जैसा बलवान योद्धा और खंगार जैसा बुद्धिमान दोनों बागड़िया कुलोत्पन्न थे।

संभर कुल बरसिंह सहित हरसिंह प्रबल पहु।
कहुँक सूर सामल कबंध कहुँ कहिय प्रमार हु।
पुष्कर कन्ह प्रबीर भ्रात दाहिम अन्वय भव।
इम लहि कुल इत्यादि जोध हुव प्रकट महाजव।
इन भटन आय क्रम तैं अडर किय स्वामी पित्थल कुमर।
अजमेर मिले कति बीर अरु कति दिल्लीय आजानुकर॥७६॥

बरसिंह और हरसिंह दोनों सांभरिया चहुवान थे। इसके अलावा शामला सूर के लिए पृथ्वीराज रासो में कहीं तो राठौड़ वंश का होना लिखा है और कहीं पर प्रमार वंश का। पुष्कर और कान्ह ये दोनों वीर दाहिमा वंशोत्पन्न थे। इस तरह के वंश और कुल में जन्म ले कर ये सभी योद्धा, वीर और युद्ध में वेगवान हुए और इन सभी ने आ कर निडर कुमार पृथ्वीराज चहुवान को अपना स्वामी बनाया। इनमें से कुछ योद्धा पृथ्वीराज से अजमेर में आ कर मिले और कुछेक अजानुबाहु जैसे वीर उससे दिल्ली में मिले।

दोहा

जे पित्थल के जन्म सों, उपजे प्रथम उदार।
बहुत रु कछु सम बेस के, इम हुव बर अनुसार॥७७॥
धीर रु हाहुलिराज से, बहुत बड़े कति बीर।
विक्रम से थोरे बड़े, हुव कति रन हमगीर॥७८॥

इन बहादुर योद्धाओं में से कुछ का जन्म तो कुमार पृथ्वीराज चहुवान से पहले हुआ था अर्थात् कुछ उदार मन वाले योद्धा उससे उम्र में बड़े थे। अधिकतर योद्धा पृथ्वीराज के समवयस्क थे। ये सभी श्रेष्ठ योद्धा पृथ्वीराज के सहायक बने। वीरों के इस समूह में कई योद्धा तो धीर और हाहुलिराज से उम्र में बड़े थे पर विक्रम से उम्र में कुछ योद्धा ही बड़े थे। छोटे, बड़े और हमउम्र ये सभी युद्धोत्सुक योद्धा पृथ्वीराज का साथ देने वाले थे।

इतिश्री बंशभास्करे महाचम्पूके पूर्वायणे चतुर्थ राशौ बीतिहोत्र-चण्डासिवंशवर्णनाऽन्तर्गतडेडुरिकचाहुवाणराजसोमेश्वरचरित्रे राजकु-मारपृथ्वीराज जन्मसमयशक सम्वत्सर मास पक्ष तिथि, बारह नक्षत्र योग करण गतेष्ट काल लग्नसूचनबन्दिचन्दोक्ताऽसङ्गतकाल खेटा ऽऽदिकथन-श्रुतदौहित्रजन्मतोमरराडनङ्गपालवर्द्धापनादिमंगलबिस्तरण राष्ट्रकूटराज-जयचन्द्रबस्त्रक्रीडन का ऽऽदिदिल्लीप्रेषणश्रुतपुत्रप्रादुर्भावदत्तगज हय निवसथ सहस्त्रचण्डासिराजसोमेश्वरदिल्लीपुराऽऽगमनविविहतद्विराग-मनस्वराज्ञीकमला कुमारपृथ्वीराज पुनरजमेरप्रविशनतत्रत्यतत्रत्यकम लासखीसमाजप्रसूतप्रत्येक सामन्तनाम जाति जन्मस्थान कीर्तनतत्सर्व पृथ्वीराज समाऽऽश्रयणं चतुर्दशो मयूखः॥१४॥ आदितस्त्रयोविंशोत्त-

रशततमः ॥१२३॥

श्री वंशभास्कर महाचम्पू के पूवार्यण की चौथी राशि में अग्निवंशी चहुवान वंशवर्णन के भीतर डिड्डुरकुल के चहुवान राजा सोमेश्वर के चरित्र में राजकुमार पृथ्वीराज के जन्म समय में शक सम्वत्, महीना, पक्ष, तिथि, नक्षत्र योग, करण गया हुआ इष्ट समय लग्न की सूचना, चन्द भाट के कहे असंगत समय, नक्षत्र आदि कहना, दोहिते का जन्म सुनकर तंवरराजा अनंगपाल का नाड़ीछेदन (नाला काटना) आदि मंगल फैलाना, राठौड़ राजा जयचन्द का वस्त्र और खिलोने आदि दिल्ली भेजना, पुत्र का जन्म सुनकर हजार हाथी घोड़े ग्राम देकर चहुवान राजा सोमेश्वर का दिल्ली पुर आना और गौना फेरा करके अपनी रानी कमला और कुमार पृथ्वीराज सहित फिर अजमेर में प्रवेश करना, जहाँ थी वहीं पर कमला की सखियों के समाज का पुत्र जनना, और हर एक सामंतों के नाम जाति और जन्मस्थान का कहना, उन सबका पृथ्वीराज का आश्रय लेने का चौदहवाँ मयूख समाप्त हुआ और आदि से एक सौ तेईस मयूख हुए।

प्रायो ब्रजदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

दोहा

पृथ्वीराज चरित्र पहु, सुनिये अब ससमास।
जान्यों नहिं क्रम हैं जदपि, तदपि कहों कछु तास॥१॥
बालभाव जब बित्तयो, प्रकटभयो पौडंग।
अष्टम अब्द कुमार यह, दिल्लिय गय उद्दंड॥२॥

हे राजा रामसिंह! अब मैं आपके समक्ष पृथ्वीराज चहुवान का चरित्र संक्षेप में कहता हूँ, उसे सुनें! इस वृत्तान्त में पूरी क्रमबद्धता नहीं है पर मैं उसे यथासंभव क्रमबद्ध कर सिलसिलेवार कहने का प्रयत्न करूँगा। इस चहुवान कुमार पृथ्वीराज की जब बाल्यावस्था बीत गई (यहाँ वाल भाव से कवि का आशय यह है कि जब कुमार की उम्र पाँच वर्ष से अधिक हो गई) तो उसने पौंगड अवस्था (यह अवस्था पाँच से दस वर्ष के मध्य की कही गई है) में प्रवेश किया। लगभग आठ वर्ष की उम्र में यह राजकुमार प्रबल (उद्दंड) हो कर दिल्ली गया।

सचरणगद्यम्

जिण समय दिल्ली रा अधीस तोमरराज अनंगपाळ रो प्रताप केही राजां रै ऊपर अमोघ बहै।

अर मण्डोवर नागोर सिंधु जलवट्ट पेसोर लाहोर कंगुर कासी प्रयाग देवगिरि रा अवनीस जिणरी आण रै अधीन रहे।

तिण समय मंडोवरेस प्रतिहार नाहरराज तोमरावतंस रो प्रसाद लेण दिल्ली आयो।

अर मातामह री सभा रै अंतर दौहित्र कुमार पृथ्वीराज नूं देखि मोद पायो ॥३ ॥

जिण नाहरराज अणिहलपुर रा भूपाल भीम अब्बूरा अधीस प्रामार सळख मेदपाट रा महीप राउळ समरसिंह सूं भी जोर गहियो। इणा मैं एक री भी आसंग मैं न आयो र आपकै हीं मनमतै रहियो।

सो नाहरराज देस काळ बिचारि दिल्ली आय इणरीति अनंगपाळ नूं प्रसन्न करण सभा मैं मिसल माफिक रहियो।

अरु कुमार पृथ्वीराज री तरह देखि प्रसंसा रो प्रकर गहियो ॥४ ॥

यह वह समय था जब दिल्ली के राजा अनंगपाल का दिल्ली के अतिरिक्त बाहर भी अन्य कई राजाओं पर अचूक दबदबा था। इसकी आज्ञा के अधीन उस समय मंडोवर, नागोर, सिंध, जलवट्ट, पेशावर, लाहोर, कांगाड़ा, काशी, प्रयाग, देवगिरि के राजा थे। इसी समय मंडोवर का राजा प्रतिहार नाहरराज तंवर वंश के मुकुट राजा अनंगपाल को प्रसन्न करने का इरादा ले कर दिल्ली आया। उसने वहाँ अपने नाना के राजदरबार में आए हुए कुमार पृथ्वीराज को देखा। उसे देख कर नाहरराज के मन में मोद हुआ। यह वही नाहरराज था जिसने अनिहलपुर पट्टन के ताकतवार राजा भीम, आबू के राजा सलख परमार और मेवाड़ के महिपत रावल समरसिंह जैसे प्रबल राजाओं से जोर आजमाया था। वह इन सभी राजाओं में से किसी के हिम्म में नहीं आया अर्थात् नाहरराज को हराने की किसी की हिम्मत नहीं हुई। व तो अपनी मनमानी ही करता रहा। ऐसा प्रतापी राजा नाहरराज देश-काल विचार कर दिल्ली आया और दिल्लीपति अनंगपाल के दरबार में मिसल के

अनुसार रहा। उसने पृथ्वीराज को देख कर उसकी प्रशंसा के पुल बाँध दिए।

जिण समय आपरी सिराह करता प्रतिहारराज नूं पृथ्वीराज कुमार निज कंठ सूं उतारि सोळह बर्ण रा सुबर्ण री माळा दीथी।

अर अणंगपाळ भी आपरा दौहित्र रै साथ प्रतिहार री कन्या रा संबंध री बात कीथी।

पछैं मातामह सूं सीख पाय कुमार पृथ्वीराज अजमेर आयो। अर तोमराधीसरो प्रसाद पाय नाहरराज आपरै सदन मंडोवर सिधायो ॥५ ॥

प्रतिहार राज नाहरराज को अपनी प्रशंसा करने पर राज दरबार में ही कुमार पृथ्वीराज चहुवान ने अपने गले से उतार कर सोलह बार तपाए गए स्वर्ण अर्थात् कुंदन से बना हार प्रदान कर दिया। उसी समय राजा अनंगपाल ने अपने दौहित्र पृथ्वीराज की सगाई का प्रस्ताव किया कि नाहरराज की पुत्री के साथ कर दी जाए। इसके बाद अपने नाना की आज्ञा ले कर कुमार पृथ्वीराज चहुवान अजमेर आ गया और तंवरराज अनंगपाल की राजी रजा पा कर प्रतिहार नाहरराज भी मंडोवर अपने घर आया।

अठी अणिहलपुर रै नरेस चालुकराज भोळारायभीम आखेट रै निमित्त प्रस्थान कियो। अर आपरो बांधवबर्ग समस्त ही साथ लियो।

हिरण्याक्ष रा अंग ज्यों महाबराह दंत तुंडाघात सोभित केही बन पर्वत घिराय केही सूकर सिंहां रा प्राणां रो संघात बथायो।

अर मृगया रो सवाद अनुभूत करि फौज मैं पाछा पधारण रो निदेस लगायो ॥६ ॥

इधर अनिहलपुर के नरेश चालुक्य भोलाराय भीम ने शिकार पर जाने का कार्यक्रम बनाया और आखेट के लिए प्रस्थान किया। उसने अपने सारे बांधवों को भी साथ लिया। जिस तरह हिरण्याक्ष का शरीर वराह (अवतार) से भिड़ने में वराहदन्त और वराहतुण्ड के आघातों से घायल हो कर घावों से युक्त हो गया था उसी तरह इस वीर चालुक्य राज भीम ने भी घायल हो कर वन पर्वतों में कई सिंहों, सूअरों के प्राण हरे। अच्छी तरह से शिकार का आनन्द ले कर राजा ने अपनी सेना को वापस लौटने की आज्ञा दी अर्थात् शिकार में अपने साथ वाले बांधव वीरों को घर लौटने की रजा दी।

पाछा आवतां राजा रा काका सारंगदेव रा बडा पुत्र प्रतापसिंह अरिसिंह दो ही सहोदर एक नदी रै तीर उचित जळ देखि सायंकाळ रो बिधेयकर्म करण पाळा ही चलाया।

अर विमुखदुर्ग्ग ओघट घाट रै कारण आपरा घोडा सिपाह पाछा ही झलाया।

तिण समय साहणसिंगार नाम राजा रो पाटहाथी डाण लागो थको पैली तीर आपरा सजातीय नूं जळ पीवतो देखि तिण ऊपर चालियो।

अर ऊठी वेतण्ड साहणसिंगारनूं आवतो देखि साम्हों हालियो।।७।।

राजा की आज्ञा से वापस घर को लौटते समय राजा के चाचा सारंगदेव के दो पुत्र, अरिसिंह और उसका छोटा भाई दोनों एक नदी में पानी देख कर सायंकाल का विधेय कर्म (उचित कर्म यथा स्नान, संध्या आदि) करने हेतु नदी के किनारे की ओर पैदल ही रवाना हुए। नदी तक जाने वाले मार्ग को उबड़-खाबड़ और विषम जान कर उन्होंने अपने घोड़े सेवक सिपाहियों को संभला दिए अर्थात् अपने घोड़े वहीं छोड़ कर वे दोनों टहलते हुए नदी की ओर आए। इसी समय राजा भीम की सवारी का खास हाथी साहण-शृंगार नदी पर पानी पीने के लिए आया और उसने पानी पीते हुए नदी के दूसरे किनारे पर एक सजातीय (हाथी) को पानी पीता देख और उस पर लपकता हुआ बढ़ा। साहण-शृंगार को अपनी ओर खीज कर बढ़ता देख कर वह हाथी भी उससे लड़ने के लिए सामने बढ़ा।

इण रीति दो ही गजां आप आपरा कलावां सूं आधोरणा नूं उडाय रोस मैं अंध होय समीप आवतां हीं लोयण मिळाया।

अर दैव रै परतंत्र प्रतापसिंघ अरिसिंघ दो ही गइंदां रै बीच आया।

एक तरफ तट दुगम एक तरफ द्रह अगाध देखि दो ही बीरां मूंछां रा अग्र भुंहारां री कोटि लिया।

अर अस्वमेध सत्र रा फल देणहार दो ही गजां रै साम्हैं पैंड दिया।।८।।

इस तरह दोनों खीझे हुए हाथियों ने अपने पर आसीन महावतों को उछाल फेंका और क्रोध में अंधे से हो कर वे दोनों हाथी एक दूजे के समीप

आए। दोनों ने उसी प्रकार खीज कर एक दूसरे को देखा। संयोग से प्रतापसिंह और अरिसिंह भाई इन खीजते हुए भिड़नोन्मत हाथियों के बीच आ गए। ऐसी विषम स्थिति में फंस कर दोनों भाइयों ने इधर-उधर देखा तो क्या देखते हैं कि पीछे एक ओर नदी का दुर्गम तट है वहीं दूसरी ओर अथाह गहरा गड्ढा और सामने क्रोधित हाथी। इधर-उधर टलने का अवसर ही नहीं। यहीं रहना है और भिड़ना है यह सोचते ही दोनों वीर बांधवों की मूँछें जोश में भरी भृकुटी को परसने लगीं। वीरता का प्रदर्शन (जूझ कर मरना) जो अश्वमेध यज्ञ का फल देने वाला होता है यह सोच कर उन दोनों वीरों ने निडरतापूर्वक हाथियों के सम्मुख अपने कदम बढ़ाए।

प्रतापसिंघ तो साहणसिंगार रै सीस चंद्रहास रो प्रहार कियो।

तिण सूं दो ही दंतां समेत सुंडादंड झड़ि पडियो।

दूजा गज रो पोगर अरिसिंह री पाघ पर आयो।

जाणें पूंग्यां रा पुंज पर नागराज भोग झुकायो ॥९॥

प्रतापसिंह ने बढ़कर अपनी तलवार का एक प्रहार साहण शृंगार नामक हाथी के सिर पर किया जिससे हाथी का दोनों दाँतों सहित सूंड वाला अग्रभाग जमीन पर कट कर आ गिरा। दूसरे हाथी की सूंड वाला अग्रभाग अरिसिंह के स्वयं के सिर पर बंधी पगड़ी पर आ रहा जैसे पूंगी वाद्य के बजने पर सर्प ने अपना फण झुकाया हो।

तिण समय अरिसिंघ गदा रो आघात देर दूजा सिंधुर रो सीस चो फाडि करि पटकियो।

या सुणतां ही कोपरे परतंत्र राजा भीम काका सारंगदेव रा सातूं ही पुत्रा नूं आपरा देस सूं प्रवास कियो।

जरैं या जाणि पौगंड अवस्था मैं ही कुमार पृथ्वीराज पिता सूं अरज करि सातूं ही सोदर सोलंकी पत्र भेजि अजमेर बुलाया।

जरैं पत्र बांचतां ही प्रतापसिंह अरिसिंह गोकुलदास गोइंदराज हरिसिंघ स्यामदास भगवद्दास सातूं ही सूरबीर आप आपरा परिकर सहित चंडासिराज रै बास रहण आया ॥१०॥

इस समय अरिसिंह ने तत्काल अपनी गदा के प्रहार से उस दूसरे हाथी का सिर चार टुकड़ों में अलग-अलग दिशा में बिखेर दिया। अपने

खास हाथी साहण-शृंगार के साथ अन्य हाथी के वध का समाचार जब चालुक्यराज भीम ने सुना तो उसने कुपित हो कर अपने चाचा सारंगदेव के सातों बेटों को देश निकाला दे दिया। इस बात की खबर जब कुमार पृथ्वीराज चहुवान ने सुनी तो उसने अपने पिता से निवेदन किया कि हे पिता! ऐसे वीरों को हमें रखना चाहिए और उसने पत्र भेज कर सातों ही सोलंकी वीरों को अजमेर बुलाया। यह पत्र पढ़ते ही प्रतापसिंह, अरिसिंह, गोकुलदास, गोइंदराज, हरिसिंह, श्यामदास और भगवददास ये सातों ही सूरवीर भाई अपने-अपने सेवक सिपाहियों के साथ चहुवान राजा के पास रहने को आए।

कुमार पृथ्वीराज खासा हय सिरोपावां सहित सातां नूं सात पटा बखसीस किया।

अर सातूं ही आपरा सामंतां रै अनुकार जाणि बडाआदर मैं लिया।

एक समय सभा मैं महाभारत रो उदंत चालतां बडै भाई प्रतापसिंह मूंछ रै माथै हाथ दियो।

सो देखतां ही कोपानल मैं मत्त कन्ह चहुवाण ऊठि मूंछ रा हाथ सहित दाहिणै कांधै खङ्गरो प्रहार कियो ॥११॥

राजकुमार पृथ्वीराज चहुवान ने इन सातों भाइयों को सिरपाव, घोड़े सहित सात गाँवों की जागीर प्रदान की जिसे उन सभी ने अनुकरण करने वाले सामंतों की तरह आदर जान कर स्वीकार कर ली। एक बार की बात है कि राज दरबार में महाभारत के वृत्तांत के चलते उनमें से बड़े भाई प्रतापसिंह ने अपनी मूँछ पर हाथ किया अर्थात् मूँछों को बल दिया वीरता का वृत्तान्त सुन कर। यह देखते ही क्रोधाग्नि में डूबा हुआ कन्ह चहुवान अपनी जगह से उठा और प्रतापसिंह के पास जा कर अपनी तलवार का भरपूर प्रहार कर उसके मूँछ पर पड़े हाथ पर किया अर्थात् दाहिने कंधे पर प्रहार किया।

प्रतापसिंह तो उपवीत उतार दोय टूक हुवो।

अर छोटा छ ही सोदरां होली रा हुलियार जिम खङ्ग रो खेल्ह मंडियो जुवो जुवो।

जिण समय कुमार पृथ्वीराज तो महल मैं जाय कपाट दीधा।

अर दो ही तरफ रा बीरां आपस मैं निस्संक होय सस्त्रां रा प्रहार कीधा ॥१२॥

कन्ह चहुवान के उस जनेऊ उतार वार (ऐसा वार जिसमें एक कंधे पर तलवार लग कर दूसरी ओर वाली बगल से निकल जाए अर्थात जिस रूप में उपवीत पड़ी रहती है शरीर पर उसी के अनुसार तलवार चले उसे जनेऊ उतार वार कहते हैं) से प्रतापसिंह के दो टुकड़े हो गए। अपने अग्रज का यह हाल देख कर शीघ्र ही शेष छहों भाइयों ने होली खेलते हुलियारों (होली नृत्य नाचने वाले) की तरह अपनी-अपनी तलवारों से अलग-अलग खेल रचा। यह देख कर कुमार पृथ्वीराज चहुवान तो भाग कर अपने महल में घुस गया और उसने महल के कपाट बंद कर लिये। पीछे से दोनों ओर के (चहुवान और चालुक्य) वीरों ने खुल कर अपने शस्त्र चलाते हुए घमासान युद्ध किया।

डोढी पर ह्मक सुणतां ही सोलंखियां रो साथ भी आपरा स्वामी नूं सहाय देण सभा रै बीच उलटि आयो।

अर दो ही तरफ रा बीरां आस्थान रूप बाजार मैं प्राणां रा क्रय बिक्रय रूप व्यापार मचायो।

इम रीत सोळंखी सारंगदेव रा सातूं ही पुत्र आप आपरा सिपाहां सहित सभा मैं टूक टूक झड़िया।

अर कन्ह कैमास चामुंडराज नरसिंघ पृथ्वीराज रा खवास माधव सहित लोहछक होय पड़िया॥१३॥

ड्योढी पर हाक-हूंक सुन कर सोलंकियों के साथ वाले अर्थात् सिपाही सेवक भी अपने स्वामियों की सहायतार्थ राजसभा में घुस आए फिर तो दोनों ओर के दलों ने सभा रूपी बाजार में अपने प्राणों की खरीद-फरोख्त रूपी व्यापार आरंभ कर दिया। इस तरह सोलंकी सारंगदेव के सातों ही पुत्र अपने-अपने सिपाहियों सहित उस चहुवान राजसभा में टुकड़े-टुकड़े हो कर गिरे। उधर चहुवानों की ओर से लड़ने वाले कन्ह, कैमास, चामुंडराज, नरसिंह और पृथ्वीराज का खवास (साथी और दूसरे अर्थों में नाई) माधव जैसे योद्धा शस्त्र प्रहारों से घायल हो कर पस्त हुए।

कुमार पृथ्वीराज दुर्मन होय काका री गर्हा प्रकट करी।

अर कन्ह बी मूर्छा बिहाय आपरी हवेली जाय पाछो सभा आंवण

री आंट धरी।

आठवैं दिन कुमार पृथ्वीराज कन्ह रै सदन जाय सत्कार पूर्बक गर्हा री ग्लानि भगाई।

अर काका रा लोयणां माथै रत्नां रा जड़ाव री पट्टी लगाई ॥१४॥

राजकुमार पृथ्वीराज ने इस हादसे पर खिन्नमना हो कर अपने काका कन्ह की भर्त्सना की। उधर चहुवान कन्ह की जब मूर्छा टूटी तो वह वहाँ से सीधा अपनी हवेली आ गया और उसी दिन से मन में यह निश्चय कर लिया कि अब से वह कभी राजसभा में नहीं जाएगा। यह जान कर आठवें ही दिन कुमार पृथ्वीराज अपने चाचा की हवेली गया और पूरी विनम्रता से अपनी भर्त्सना पर पश्चात्ताप का प्रदर्शन किया। उसने अपने घायल चाचा की आँखों पर रत्न जड़ित पट्टी बाँधी।

आहव रै समय अवरोध रै प्रवेस दोय ठाम पट्टी रो त्याग करणों और समय सदा ही भतीज री अरज सूं आपनैं अंधभाव धरणों।

मूंछां कर देणहार नूं मारण री कन्ह पूर्बकाळ मैं संधा लीधी तिकण सूं इण रीति नम्रता सूं कूमार पृथ्वीराज कन्ह रा लोयणां पट्टी लगाई।

या बात सुणतां ही गुजरात रै अधीस राजा भीम भायां रो बैर पाछो देण री कहाई ॥१५॥

इस पट्टी के खुलने का यह नियम बनाया कि जब युद्ध हो अथवा जब कन्ह चहुवान अपने जनाना-खाने में जायें तब पट्टी खुले अन्यथा शेष समय और स्थिति में बँधी रहे। चाचा ने भी अपने भतीजे के आग्रह पर कृत्रिम अंधत्व धारण किया। अपने समक्ष मूंछों पर हाथ धरने वाले को मारने की प्रतिज्ञा पूर्वकाल में कन्ह चहुवान ने ली थी। इसलिए कुमार पृथ्वीराज ने अपने चाचा की आँखों पर पट्टी बाँधी थी। यह सोच कर कि अब न वह किसी अन्य को अपनी मूँछों पर हाथ धरते देखेगा और न ही बखेड़ा होगा। उधर सातों ही चालुक्य भाइयों के इस तरह मारे जाने का समाचार जब गुजरात के स्वामी चालुक्य राज भीम ने सुना तो उसने अजमेर कहलवाया कि वह अपने भाइयों की मृत्यु का बदला लेगा।

चहुवाणां कहियो जिण समय गजां री पताका खुलाय चोड़ै आय बैर लियो जावसी।

तिण ही समय साँचा मन सूं बीतिहोत्र बंस नूं ऊजळो दिखाय दियो जावसी।

सिंघ रा सावक चहुवाण रा पुत्र और कोई रै ओडै न रहसी।

अर सिंधुरां रा संघात बैरियां रा ब्रात देखतां ही कोप रूप दावानळ मैं दहसी ॥१६ ॥

इस पर चहुवानों ने वापस कहलवाया कि जिस समय आप अपने हाथियों पर अपने ध्वज फहराते हुए प्रत्यक्ष सामने आ कर लड़ोगे तब ही वैर का लेना माना जाएगा और उस समय चहुवान वंश भी वीरता का प्रदर्शन कर अपने वंश की उज्ज्वलता का प्रमाण देगा। सिंह के बच्चों जैसे चहुवानों के पुत्र भी किसी के पीछे दुबके नहीं रहेंगे। वे हाथियों के समूह रूपी शत्रुदल को देखते ही अपने क्रोध की दावाग्नि से जला कर खाक कर देंगे।

दिल्ली रा जावण रा समय सूं तीजै बरस चहुवाणां प्रतिहार नूं कुमार रा संबंध री बात स्मरण मैं गहाई।

दूत रो बचन श्रवण मैं पड़तां ही नाहरराज कहियो राजा अनंग पाळ तो संबंध रा संभव री सहज वात कीथी।

जिको ही चहुवाणां मगरूरी रै मतै साँची बणाय लीधी ॥१७ ॥

पहले जब कुमार पृथ्वीराज दिल्ली गया था तब वहाँ दिल्ली में राजा अनंगपाल के दरबार में मंडोवर के राजा नाहरराज की पुत्री से उसकी सगाई की बात चली थी। इसके ठीक तीन वर्ष बाद चहुवानों के प्रतिहार राज को इस सगाई के प्रस्ताव की बात स्मरण कराई। चहुवानों ने दूत की बात सुनते ही प्रतिहार नाहरराज ने कहा कि वह बात तो राजा अनंगपाल ने यों ही सहज स्वभाववश कह दी थी पर इसे मगरूर चहुवानों ने सच्ची मान ली है।

प्रतिहारां री पोळि पधारण रै उचित तो दिल्ली कण्णउज्ज अणिहलपुर आदिक नरेस किसा नही छै।

अर नीच क्रव्याद रा कुळ नूं दुहिता देण री किण मूढ कही छै।

जिण रीति मुकुंद रा मंदिर नूं बिहाय खेत्रपाळ पूजण री श्रद्धा

किसो कापुरुष चित्त धरै।

अर त्रयी रा तिरस्कार करि किसड़ो नीच चंडाळी मंत्र रो साधन करै ॥१८॥

उसने आगे कहा कि प्रतिहारों की प्रोल (दरवाजे पर विवाह के अवसर पर तोरन मारने के रिवाज से आशय है) पर आने को दिल्ली, कन्नौज, अनिहलपुर पट्टनी जैसे राजा कौन से नहीं रहे ? अर्थात् हमारा उचित सम्बन्ध जिन से हो सकता है उन्हीं से होगा आप मुगालता न पालें ! फिर नीच राक्षस (बीसलदेव चहुवान जो ढूँढ़ नामक राक्षस बन गया था उस ओर संकेत है) के कुल में बेटी देने का किस मूर्ख ने कहा ? अर्थात् ऐसा प्रस्ताव तो कोई पागल ही रख सकता है। यह तो ठीक उस कापुरुप के आचरण जैसा होगा जो श्री विष्णु के मंदिर को छोड़ कर क्षेत्रपाल (भैरव) को पूजने की सोचता हैं। ऐसा कौन नीच होगा जो प्रणव मंत्र (अ उम्) की इस मंत्रिक त्रयी को छोड़ कर वाम्ममार्गियों की तरह चंडाली मंत्र को साधने की सोचेगा।

प्रायो ब्रजदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

दोहा

दंतून पच्छे जाय द्रुत, अक्खिय यह अजमेर।
कह्यो चढत कोपित कुमर, अब नन उचित अवेर ॥१९॥
जनक सोम बरज्यो जदपि, करि मिस तदपि सिकार।
इतर बयस्य रु कन्ह इक, लै चढ्यो सु द्रुत लार ॥२०॥

चहुवानों के मंडोवर भेजे गए दूतों ने वापस नाहरराज की बात अजमेर जा कर कही उसे सुनते ही कुमार पृथ्वीराज चहुवान ने कुपित हो कर कहा कि चढ़ाई करने में अब और विलम्ब करना उचित नहीं। इस बात का पता जबा राजा सोमेश्वर को चला तो उसने अपने पुत्र को ऐसा करने से रोका तब कुमार पृथ्वीराज ने आखेट पर जाने का बहाना बना कर अपने चाचा कन्ह के अतिरिक्त अपने समवस्यक योद्धाओं को साथ लिया और शीघ्र ही चढ़ाई कर दी।

षट्पात्

कुमर दूत रनकाज अग्ग पठये मंडोवर।
नाहर भटन बुलाय कह्यो न भलो इत संगर।

संक्रमि सोझति सरनि नैर पट्टनि लै अप्पन।
मिलि मित्रन सन मुररि रारि गंजहिं रिपु दप्पन।
करि यह प्रपंच लै निज कटक गुज्जरधर अंतिक गयो।
चहुवान समुख मैंनन चमू भट अटकन भेजत भयो॥२१॥

कुमार पृथ्वीराज चहुवान ने अपने दूत अग्रिम रूप से मंडोवर भेज कर कहलवाया कि युद्ध के लिए तैयार हो जाओ। इस पर प्रतिहार नाहरराज ने अपने सामन्त-उमरावों को बुला कर मंत्रणा की और कहा कि यहाँ युद्ध करना हमारे पक्ष में ठीक नहीं रहेगा। इसकी बजाय हम पहले सोजत के रास्ते में जा कर पट्टन नामक नगर को लेगें फिर हम अपने मित्रों से मिल कर वापस लौटते वक्त इस शत्रु के दर्प को चूर करेंगे। ऐसी योजना बना कर नाहरराज अपना सेना के साथ गुजरात की सीमा के समीप गया और पीछे से चहुवान सेना को रोकने के लिए मीणों की सेना को लगाया। उसने मीणों को सेना से कहा कि तुम लोग जा कर उनका (चहुवानों) मुकाबला करो।

दोहा

करि आदर नाहर कह्यो, देखि कछुक निज देर।
सजव जाहु तुम चउ सहंस, मिलि मैंना अरु मेर॥२२॥
मैं आवत जोलों उमंडि, अटकहु तुम चहुवान।
पब्बय घांटो दुर्ग पथ, थिर रुंधहु वह थान॥२३॥

उसने अपने सहायक मीणों और मेरों को बुला कर कहा कि आप लोग अधिक विलम्ब मत करो। आप चार हजार योद्धा (मीणा और मेर) मिल कर शीघ्र ही जाओ और उस चहुवान को रोके रखो। हम जब तक लौट कर न आए तब तक तुम लोगों को उन्हें रोके रखना है। इसके लिए तुम लोग सीधे पर्वत के घाट पर (जहाँ दुर्गम और संकरा मार्ग हो) सामने चले जाओ और उसी स्थान पर स्थिर हो जाओ (मोर्चा ले कर डट जाओ)।

पादाकुलकम्

पर्बत तब तिनके पल्लीपति, सब मैंनन मेरन रचि संगति।
रोकिय आनि मग्ग गिरि घांटो, इत उत असह बढावन आंटो॥२४॥

हो पट्टनि चालुक्य सचिव जंहं, ता प्रति नाहर सुहृद मिल्यो तंहं।
पृतना बलि चहुवानन उप्पर, बिखम थान लखि सजी धराबर॥२५॥
पित्थल इत दाहिन मग पद्धर, आवत हो पत्तन मंडोवर।
मिलि तिहिं जुब्बनराव बीचि मग, बुल्लयो इत किय धरहु व्यर्थ पग॥२६॥
मारव तो तजिगो मंडोवर, पत्तो धर गुज्जर सीमा पर।
उतके पथ बन दुर्ग बिखम अति, अरु तस चालुक सचिव मित्रमति॥२७॥
यातैं लहि दुर्गम भुव आश्रय, गब्ब धरत प्रतिहार तत्थ गय।
पथभेदी कोउ न है पास हु, सो तुम जावत अग्ग निकास हु॥२८॥

इन मीणा और मेरों के पाल-पति (मीणा-मेर आदि के गाँवों को पाल कहते हैं इस अर्थ में गाँव नायक) जिसका नाम पर्वत था ने अपने साथियों को साथ ले कर पहाड़ के घाट पर आ कर मार्ग को रोक लिया। यह मार्ग ही तो व्यर्थ ही का दोनों पक्षों में वैर बढ़ाने वाला था। उधर आगे पट्टन में चालुक्यराज का सचिव (कामदार) था जो नाहरराज का मित्र था। नाहरराज वहाँ जा कर पूरे स्नेह के साथ उससे मिला। इसके बाद भूपति नाहरराज ने चहुवानों के विरुद्ध जाने के लिए अपनी सेना को सज्जित किया। इधर कुमार पृथ्वीराज चहुवान दाहिने मार्ग से सीधा मंडोवर पर चढ़ाई करने को बढ़ा कि उसे राह में जुब्बनराव मिला। उसने कुमार से कहा कि तू व्यर्थ ही मंडोवर क्यों जा रहा है ? मारवाड़ का राजा तो मंडोवर छोड़ कर गुजरात की सीमा की ओर चला गया है। उधर के रास्ते पहाड़ी और वन के कारण दुर्गम हैं फिर चालुक्यराज का कामदार नाहरराज का मित्र है। यही सोच कर प्रतिहार राज ने उस दुर्गम भूमि का आश्रय लिया है और वह अपने दर्प के साथ वहाँ गया है। इधर तुम्हारे पास कोई उस मार्ग का भेद जानने वाला भी नहीं है इसलिए आगे जा कर किसी को ले लेना।

अद्रि सत्त पट्टनि पथ अैहैं, बन हु दुर्ग दिमूढ बनैहैं।
अग्गैं कछु अग्रग बुल्लावहु, जिन ढिग लैहु प्रमत्त न जावहु॥२९॥
जुब्बनराव बत्त यह जंपिय, क्रम्यौं सु सुनि धाम्मन भुव कंपिय।
दूतन किय बिन्नति तीजे दिन, अड्डो गिरि घंटो कुमरन इन॥३०॥

मैंना मेर सहंस चउ मत्ते, रक्खे तत्थ लरन अनुरत्ते।
पर्बत नाम सबन तिन्ह है पति, सो सठ खिन न तजैं गिरि संगति॥३१॥
जो इनको सुनिहैं ब पराजय, नाहर तब अैहैं सु कुसल नय।
यह जानत गिरि ढिग दल आयो, पित्थल कुमर कोप प्रकटायो॥३२॥

पट्टन के रास्ते में सात पर्वत आएँगे और तुम वन में जा कर दिग्भ्रमित हो जाओगे। इसलिए आवश्यक है कि तुम उस क्षेत्र में किसी राह के जानकार को आगे कर लेना, फिर जाना। कहीं बावलेपन में बिना पथप्रदर्शक के वहाँ मत चले जाना! जुब्बनराव ने इस प्रकार कुमार पृथ्वीराज को सावचेत करते हुए उसके हित की बात बताई। यह सुन कर कुमार आगे बढ़ा। उसके घोड़ों की दौड़ से पृथ्वी काँप गई। तीसरे दिन कुमार पृथ्वीराज के दूतों ने निवेदन किया कि आगे पहाड़ का घाट है। यही नहीं नाहरराज ने चार हजार मीणा और मेर योद्धाओं को वहाँ तैनात कर रखा है जो राजा के स्वामीभक्त हैं। इन योद्धाओं का नायक जो है उसका नाम भी पर्वत है और वह ढीठ क्षण भर के लिए भी पर्वत का साथ नहीं छोड़ता है अर्थात् पूरी तरह वहीं घाट पर डटा है। वह नीति कुशल प्रतिहारराज यहाँ आएगा जब वह यह सुनेगा कि इन मीणा योद्धाओं की हार हो गई। दूतों से यह पूरी जानकारी प्राप्त कर कुमार पृथ्वीराज का दल पहाड़ वाली घाटी के पास पहुँचा तब कुमार पृथ्वीराज ने क्रोध किया।

काका सन अक्खिय रन किज्जै, लै इन्ह असु नाहर असु लिज्जै।
भनिय कन्ह इन्ह उचित घनैं भर, पट्टिय मम न डिगैं रंकन पर॥३३॥
लायक कतिन जानि जो लैहों, तो अंधहि कछु खेल बतैहों।
तब कुमार धावर निज गर्बत, पिल्लयो सुनि पर्वत पर पर्बत॥३४॥
जुग हि महर कन्ह रु चाचिक जंहं, पर्बत संग दये संगर पंहं।
जंग रचत पैले न रुके जब, तकि सामंतन दिय सहाय तब॥३५॥
गिरि नितंब बाजिन तजि चढि गय, सस्त्र बजिग पविगति बीरन सय।
पर्बत मेर बढ्यो बहु पारत, असिन सिपाहन मत्थ उतारत॥३६॥

कुमार ने कुपित हो कर अपने काका कन्ह चहुवान से कहा कि युद्ध

शुरू करें और इस मीणा सेना के प्राण ले कर फिर नाहरराज को मिटा डालें। इस पर चाचा ने कहा कि इन मीणा और मेरों की सेना में जो योद्धा माने जाते हैं पर ऐसे रंकों मेरी आंखों की पट्टी नहीं खुल सकती है। इनमें युद्ध और वीरता की कितनी लायकी है वह मैं वैसे ही जान लूँगा और इन्हें मैं अपने अंधे युद्ध का तमाशा दिखाऊँगा। तब पृथ्वीराज चहुवान ने दर्प से भर कर अपने पर्वत नामक अपनी धात्री के पति को शत्रु सेना के पर्वत नामक पालपति पर चढ़ाई करने भेजा। तभी कन्ह महर और चाचिक दोनों चहुवान योद्धाओं ने भी पर्वत का युद्ध में साथ दिया। जब सामने वाला पक्ष भिड़ते हुए न रुका तो शेष सामन्तों ने भी युद्ध में सहायता देने का कार्य किया। पहाड़ के पास के रास्ते को दुर्गम जान कर सारे चहुवान योद्धाओं ने अपने घोड़ों की पीठ छोड़ दी और वे दौड़ कर पहाड़ के शिखर पर चढ़ गए जहाँ वीरों के हाथ के शस्त्र वज्र की तरह बजने लगे (चलने लगे) कुमार पृथ्वीराज के पक्ष वाला पर्वत कई शत्रु सिपाहियों के धड़ों से मस्तक उतारता हुआ आगे बढ़ता ही गया।

प्रायो मरुदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

सचरणगद्यम्

उण समय कन्ह चहुवाण घणां मेरां रा माथां सू माथा भिड़ाय भेजा काढिया। अर केही बैरियां रा थाट किवाण रा आघात देर साबण री तरह बाढिया।

पर्बत मेर रो सीस खड्ग री ओझाड़ देर भूतनाथ भैरव रै उपायन कियो तिण रै पड़तां ही मेर मीणां दुर्लभ प्राण रा महामित्र मन रा। हुकम रै अधीन होय जठी तठी पलायन रो ओडो लियो ॥३७॥

धीर मेर रा खड्ग प्रहार सूं कन्ह महर रो अंस पंसुली सूधो झड़ियो। तोभी घणां सात्रवां री सुंदरियां रा कंकणां रो कोलाहल मिटाय पड़ियो।

मेर मीणा रै सिकस्त लेतां ही पाछैं सू प्रतिहार नाहरराज पखरैतां रा भार सूं पृथ्वी रा पुड़ झुकावतो बडै बेग आयो।

अर पृथ्वीराज रो साथ बी महाकाली री तरफ हल्लीसक रास रो कटाक्ष देतो साम्हैं चलायो॥३८॥

इस भिड़न्त में कन्ह चहुवान ने अपना सिर भिड़ा कर (भेंटी मार कर) कई मेरों के सिर से भेजा निकाला और वह शत्रुओं के कई समूहों को अपनी तलवार के प्रहार से साबुन की तरह कच्च-कच्च काटता चला गया। मेरों के नायक पालपति पर्बत के मस्तक को अपनी तलवार के उल्टे हाथ के प्रहार से काट कर महादेव को प्रसन्न करने के लिए उसने भैरवनाथ को भेंट किया। अपने नायक का सिर कटते ही मीणा और मेर योद्धाओं के समूह ने अपने प्राणों को प्रिय मान मन की आज्ञा के अनुसार (मन का धर्म सदैव अपना हित चाहता है इसलिए वीर योद्धा मन को रोक कर अथवा पहले मन मार कर मरते-मारते हैं) इधर-उधर जहाँ कहीं ठौर मिली उन्होंने युद्ध से पलायन की आड़ ली अर्थात् जान बचा कर भागना उपयुक्त समझा। धीर नामक एक मेर योद्धा के खड्‌ग प्रहार से कन्ह महर का एक कंधा पसलियों तक कट कर गिर पड़ा तब भी वह वीर शत्रुओं की स्त्रियों के हाथ में बजने वाले कंगनों का रव मिटा कर ही पड़ा अर्थात् अपने कई शत्रुओं की स्त्रियों को वैधव्य सौंप कर पड़ा। मेर और मीणा योधाओं की हार होते ही पीछे से प्रतिहार राज अपने घोड़ों से धरती को कँपाता हुआ तेज गति से वहाँ आ पहुँचा। इधर से कुमार पृथ्वीराज ने भी महाकाली को विनाश रास की घूमर लेने का संकेत कर अपने साथ के वीरों को सामना करने की आज्ञा दी।

गिरिनार सिंधुबट्‌टी·पाटणि री सीमा रै समीप दो ही तरफ सूं बाजी ऊठिया।

कन्ह कैमास लोहान आतताई लंगरीराज चामुंडराज इत्यादिक बानांबंध सामंत बज्रपात रा विडंबक सस्त्रां रा आघात बढिया।

उण समय कुमार पृथ्वीराज एकादस अब्द री अवस्था मैं बीरां रै बरजतां बाजी री बल्गां उठाय प्रतिहार नाहरराज सूं प्रतिमल्ल जाय सिरू कीधी।

अर दो ही बीरां रा करवालां बावन ही बीरां रै अर्थ बीरां री बपा खप्परां मैं भरण री सैन दीधी॥३९॥

गिरनार, सिन्धुवाटी और पाटण की सीमा के संधिस्थल पर दोनों ओर

के घोड़े बढ़े। कन्ह महर, कैमास, लोहान, आततताई, लंगरीराज और चामुण्डराज जैसे युद्ध में अविचल रहने की प्रतिज्ञा वाले सामन्तों ने अपने शस्त्रों से वज्र की मानिन्द प्रहार करने आरंभ किए। इस समय कुमार पृथ्वीराज की उम्र लगभग ग्यारह वर्ष की थी। अपने वीर सामन्तों के मना करने के बावजूद कुमार ने अपने घोड़े की लगाम उठाई अर्थात् अपने घोड़े को बढ़ा कर प्रतिहार नाहरराज के पास मुकाबला करने पहुँचा। जहाँ दोनों ही वीरों के हाथों की तलवारों ने मानों संकेत ही में मनुष्य की मज्जा से खप्पर भरने का अवसर देते हुए बावन भैरवों को आमंत्रित किया हो कि आओ तुम्हारे खप्पर भरते हूँ।

तिण समय चहुवाण कुमार मंडलाग्र रो आघात देर नाहरराज रा तुरंग रो खंध पाखर समेत झाड़ियो।

जिण रीति भाई नैं पाळो हुवो देखि मारवधरा रो कंवाड़ कनक प्रतिहार असि रो आघात देर पृथ्वीराज रा अश्व रो अंस उडाय पाड़ियो। उण समय पाळा होय दो ही बीरां अजमेर मंडोवर रा सुहाग री लाज रा लंगर घींसता अस्वमेध अध्वर रा अवभृथ रो तिरस्कार करता पैंड साम्हैं ही लगाया।

जठै दो ही तरफां रा किताक सूरबीर आपरै ऊभां मालिकां रो मिळिबो अनुचित जाणि बीच मैं आया।।४०।।

इस अवसर पर उत्तेजित चहुवान कुमार ने अपनी तलवार का भरपूर वार कर नाहरराज के घोड़े को कंधों के पाखर (घोड़े का कवच) सहित काट गिराया। मरुधर के किंवाड़ अपने बड़े भाई को इस प्रकार घोड़ा विहीन पैदल देख कर कनक प्रतिहार का क्रोध उफन पड़ा उसने आव देखा न ताव बस अपनी तलवार के पूरे प्रहार से कुमार पृथ्वीराज के घोड़े का कंधा उड़ा दिया। तब दोनों नायक पैदल हो गए। अजमेर और मंडोवर के सुहाग की लाज के रक्षक, दोनों वीर योद्धा इस अश्वमेध (दोनों के अपने घोड़ों की बलि हो जाने के बाद) यज्ञ का अवभृथ स्नान किये बिना ही, एक दूसरे के सामने मजबूत कदम रखते हुए बढ़े। जहाँ दोनों ओर के कई सामन्त, अपने रहते अपने मालिकों को यों भिड़ंत के लिए उद्यत देख कर बीच में आ गए, अर्थात् पहले हम आपस में भिड़ लें। हमारे जीते जी आप दानों क्यों उतावली दिखा रहे हैं?

दोहा

यां पीथल नाहर उभै, चपल हयां चढवाय।

आपस मैं लीधा असी, कीधा रण छक काय ॥४१॥

इसके बाद इधर पृथ्वीराज और उधर नाहरराज दोनों को चपल घोड़ों पर आरूढ़ कर दोनों पक्षों के सामन्त योद्धाओं ने अपनी-अपनी तलवारें संभाल कर एक-दूजे को रणभूमि में घायल कर गिराया।

अचरणगद्यम्

अठी सूं अब अजमेर रै सहाय प्रामार पाउसराज चलायो।

अर उठी सूं मंडोवर रै भीड़ प्रतिहार मोहणराज आयो।

दो ही बीरां री तेगां सूं आपस मैं टोप समेत माथा धड़ सूधी फाटिया। अर आप आपरा मालिक रो लवण ऊझळो दिखाय स्वर्गलोक रा सुख खाटिया ॥४२॥

इधर अजमेर के चहुवानों के पक्ष में परमार पाउसराय ने अपना अस्त्र चलाया और इधर से मंडोवर की सहायतार्थ लड़ने के लिए सामने प्रतिहार मोहनराज बढ़ा। दोनों ही वीरों के आपसी तलवार प्रहारों से दोनों के शिरस्त्राण सहित सिर और धड़ फट पड़े। दोनों ही वीर अपने-अपने स्वामी का नमक हलाल करते हुए (अपने स्वामी का खाया नमक उज्ज्वल कर) स्वर्गलोक का सुख पाने चले अर्थात् मारे गए।

अठी प्रतिहार प्रतापसिंघ री बरछी दोय बार दाहिमां चामुंडराज रै कंकट भेद पार कढी।

जिके बासुकी नाग री तरह लगलगाट करती सिलहबंध री कड़ियां नूं कतरती पिंड मैं पैठतां रणत्कार पढी।

प्रतिहार रा प्रहारां नूं सिराहि चामुंडराज प्रतापसिंह रा सीस रै दो ही हाथां री चपेट दीधी।

जिण नूं नवनीत रा पिंड री उपमानभूत भेजी ऊछटी तिको ऊपर ही झेलि भद्रकाली लोहित रूप आसव रा चसक रै साथ उपदंस करि पीधी ॥४३॥

इधर से प्रतिहार योद्धा प्रतापसिंह की बरछी दो बार चामुण्डराज दाहिमा के कवच को बेधती आर-पार हुई। मानों वह बरछी साक्षात वासुकी नाग की लपलपाहट करती जीभ की तरह कवच की कड़ियों को काटती हुई उसके शरीर में घुस गई हो। अपने प्रतिद्वंद्वी प्रतिहार के इस प्रहार की जैसे सराहना करते हुए चामुण्डराज ने प्रतापसिंह के मस्तक पर दोनों हाथों से पकड़ कर अपनी तलवार का भरपूर वार किया जिससे मक्खन के डले की तरह (जिसे मक्खन के डले की उपमा लगे ऐसा) उसका सफेद रंग का भेजा उछला जिसे ऊपर ही हवा में भद्रकाली ने लपक कर अपने रक्त के शराब की घूंट के साथ चबैना रूप बना कर गटक लिया।

अठी सामंत बलिराज बच्छकरण प्रतिहार रो माथो स्कंधत्राण सहित चंडिका रै चढायो।

अर सोलंकी भाणुराज प्रतिहार तेजसिंह रो मस्तक उडाय महारुद्र रा मुख सूं वाहवाह पढायो।

अठी सूं लोहान आजानुबाहु किवाण झाडि बीर प्रतिहार रा मतंगज रो मस्तक कर्णताळ हलावतो तोड़ियो।

सो जाणैं आपरी त्रोटि मैं पन्नग नूं पोय पंखां रो प्रसार करतो गरुड़ रो बाळक आकास रा मार्ग सूं हेठो थियो ।।४४।।

उधर सामन्त बलिराज ने प्रतिहार बच्छकरण का सिर कवच सहित काट कर रण चंडिका को चढ़ाया और सोलंकी भानुराज ने तेजसिंह प्रतिहार का मस्तक सटाक से उड़ा कर महादेव के मुँह से अपने लिए वाह-वाह के शब्द सुने। इधर से वीर लोहान चहुवान ने अपने अजानुबाहु (घुटने तक लंबे हाथ से) से तलवार का प्रहार कर वीर प्रतिहार के हाथी ताड़ वृक्ष के पत्तां की तरह अपने कान हिलाते मस्तक को काट गिराया। उस प्रतिहार के हाथी का कटा हुआ सिर यों गिरा मानों अपनी चोंच में नाग दबाए अपने पंख पसारता कोई गरूड़ का बच्चा आकाश मार्ग से नीचे आ पड़ा हो।

घणां बीरा नूं प्राण रा वियोगी करि जुद्ध रो जस कुमार रै भेट कीधो।

अर केही बार बाजी नूं अठी रो अठी उडाय उडाय बीच दीधो।

अठी सूं कन्ह चहुवाण रो किवाण प्रतिहार नाहरराज रा मस्तक सूं

चूकि बाम भुज रै भुजबंध पड़ियो।

सो हीरां रै प्रभाव भूखो ही तक्षकनाग री रसण रै रूप पाछो ही ऊंचो चढियो ॥४५॥

इस तरह चहुवान सामन्त-योद्धाओं ने शत्रुपक्ष के कई वीरों को उनके प्राणों का वियोग दे कर युद्ध में विजय का यश अपने स्वामी कुमार पृथ्वीराज को भेंट किया और कभी इधर और कभी उधर होते उसके घोड़े को अपने मध्य घेरे में लिया। उधर कन्ह चहुवान के तलवार का एक वार प्रतिहार नाहरराज के मस्तक का निशाना चूक कर उसके बाएँ हाथ के भुजबंध (हाथ का कवच) पर हुआ। भुजबंध पर जड़े ठस्स नगीनों के कारण से ठस खड्ग को बिना कुछ खाए ही लौटना पड़ा। तक्षक नाग की जीभ की तरह अर्थात् कन्ह चहुवान का किया हुआ वार व्यर्थ हुआ। तब उसने वापस अपने खड्ग को ऊपर लिया।

कन्ह रा टोप ऊपर नाहरराज रो चंद्रहास आछटियो। जिकण सूं टोप दोय टूक होय पाघ रै साथ कितोक सीस कटियो। तुरंग नूं लोह छाकियो देखि पाळै ही कन्ह चहुवाण रीस रै साथै तरवारि छोडि नट रै माफिक मलंग लेर पल्हण प्रतिहार रै जमडाढ जाय जड़ी।

अर बाजी सूं उतारि बारबार पट्टिस चखावतां दिणयर नूं ठहरायो दोय घड़ी ॥४६॥

इसी बीच प्रतिहार नाहरराज की अपनी चंद्रहास (तलवार) कन्ह चहुवान के टोप पर तीव्र वेग से गिरी जिससे उसके टोप के दो टुकड़ो हो गए और सिर पर बँधी बाघ को काटती थोड़ी उसके सिर में जा धंसी। इस पर कन्ह चहुवान ने अपने घाव लगे घोड़े को छोड़, पैदल ही और अपनी तलवार को भी छोड़ कर क्रोध में नट की तरह कूद कर पल्हण प्रतिहार के सीने में कटारी का भरपूर प्रहार किया। फिर उसे अपने घोड़े से नीचे गिरा कर उसे अपनी कटारी का स्वाद इस तरह चखाने लगा कि जिसे देखने को सूर्य दो घड़ी के लिए ठहर गया।

तीं पछैं ऊंळा हाथ री ओझाड़ सूं नाहरराज सिपाह बळी रो सीस उडायो।

जिण बळी मेर बिना माथै चहुवाण रा केही सिपाहां रा प्राणां रो

संघात छुडायो।

इणरीति बीरां रो संहार होतां प्रतिहार नाहरराज पलाय कढियो।

इण जुद्ध रा विजय रो फल चाहुवाण कन्ह आजानुबाहु लोहान रै हाथ चढियो।।४७।।

इसके बाद उल्टे हाथ की एक वेगवान चोट (प्रहार) से नाह्रराज के योद्धा बलि का सिर उड़ा दिया। उस बलि मेर ने अपना मस्तक कट जाने के बाद भी तलवार चला कर चहुवानों के कई योद्धाओं को प्राणों से विलग कर डाला। इस प्रकार अपने वीर सैनिकों का संहार होते देख प्रतिहार नाहरराज युद्ध भूमि से भाग छूटा। इस युद्ध में विजय का फल चहुवान कन्ह, अजानबाहु लोहान के हाथ लगा।

कुमार पृथ्वीराज जीत रा दुंदुभि घुराय खेत सु धाय कन्ह गोईंदराज प्रसंगराज पहाड़राज लंगरीराज प्रमुख घायलां नूं नृजान चढाय गिरिनार मुकाम दीधो।

अर नाहरराज पाटणि रा दुर्ग मैं जाय चहुवाणां नूं बळवान जाणि कुमार पृथ्वीराज सूं आपरी सुता रा संबंध रो जबाब कीधो।

पहली बचन कहियो जिकां रो तो निर्वाह छोडियाने।

अर लग्न दिखाय मंडोवर आय कुमार पृथ्वीराज नूं आपरी पुत्री परिणाय लाखां रुपियां रा उपहार सहित विदा कियो।।४८।।

कुमार पृथ्वीराज चहुवान ने अपनी विजय की दुंदुंभी बजवा कर रणक्षेत्र से कन्ह, गोइन्दराज, प्रसंगराज, पहाड़राज, लंगरीराज आदि प्रमुख घायल सामन्त योद्धाओं को पालकी में उठा कर गिरनार में मुकाम (पड़ाव) किया और नाहरराज ने पाटण के दुर्ग में जा कर चहुवानों को बलवान मानते हुए कुमार पृथ्वीराज चहुवान से अपनी पुत्री की सगाई का प्रस्ताव किया। पहले जो उसने कटु वचन कहे थे उस पर वह टिका न रह सका। उसने लग्न लिखवा कर मंडोवर पहुँचने के बाद कुमार पृथ्वीराज चहुवान से अपनी पुत्री का विवाह कर लाखों रुपयों का दहेज दे कर विदा किया।

दोहा

वय एकादस मित बरस, समर जीति इम सूर।
प्रतिहारी आणी प्रथम, पित्थ कंवर गुणपूर।।४९।।

रण इण बीच कुमार रै, दुव लग्गा बळ दाव।
बय एकादस बरस मैं, घट एकादस घाव ॥५०॥

अपनी ग्यारह वर्ष की उम्र में युद्ध में विजय प्राप्त कर इस वीर कुमार पृथ्वीराज चहुवान ने प्रतिहार रानी से विवाह कर उसे अपनी रानी बनाया। यह गुण में पूरे कुमार पृथ्वीराज का ही करिश्मा था। युद्ध में यद्यपि इस कुमार को भी कुछ घाव खाने पड़े। ग्यारह वर्ष की वय में इस वीर कुमार ने अपनी देह पर ग्यारह घाव खाए।

इति श्री वंश भास्करे महाचम्पूके पूर्वायणे चतुर्थ राशौ बीतिहोत्र-चण्डासिबंशबर्णनाऽन्तर्गतडिड्डुरवंशबिरोचनशाकम्भरेशपृथ्वीराज चरित्रे कुमारपृथ्वीराज प्रतिहारनाहरराज दिल्ली द्रङ्गगमनसभास्थितप्रतिहारकुमारप्रशंसाकरणसौमिस्वपुरटमालानाहरराजाऽर्पणतोमरराजस्वदौहित्र प्रतिहारी संबंधमौचित्यकथनकुमार प्रतिहार स्वस्वपत्तनाऽऽगमनगूर्जरधरेशभीमहतगजद्वय प्रतापसिंहाऽऽदिपितृव्यपुत्रसप्तक स्वदेशनिष्कासनतत्पृथ्वीराजसमाव्हयनचहुवाणकृष्णाऽऽदिप्रहतदत्तश्मश्रुकरचालुक्यप्रतापसिंहाऽऽदिसप्त सोदरनिपतनतन्मन्तुनिवारककुमारकृष्णदृग्रत्नमयपट्याऽऽरोपणचालुक्यभीमभ्रातृबैरयाचनतत्प्रतिदानाङ्गीकरणशाकम्भरेशदूतराजकुमारोपयामार्थप्रतिहारामार्गणनाहर राजसाक्षेपतदनूरीकरणश्रुतैतदुदन्तकुमारपृथ्वीराजयुद्धार्थप्रस्थानरैवतगिरिप्रान्तगतनाहरराजपर पक्षपतनाऽभिमुखमेर मीणो पटङ्कथारकान्त्यजशूरचतुःसहस्त्र प्रेषणचाहुवाणचमूमिलितमार्गसङ्गतस्थाननिवासियोवनराजमरुराजवस्तव्यस्थानसूचननतन्मार्गलग्नाऽजमेरसैन्यगिरिदुर्गाऽऽरूढपर्बतमेरसार्थसम्मिलनप्रवृत्त संग्राम महरोपाख्यपर्बत कृष्ण निपतनचहुवाणकृष्णतत्प्रतिपक्ष विध्वंसनश्रुतपराभूतस्वभटनाहरराजयुद्धप्रारम्भणकुमारपृथ्वीराजतत्प्रतिभटी भवनप्रामारवृहद्राजादिकतिचिद्भटमरणकुमारपृथ्वीराज कृष्ण चामुण्डराज बलिराज भानुराज गोविन्दराज प्रसङ्गराज प्रहाटराज लङ्गरीराज प्रमुखकतिचिद्भटशस्त्राऽऽघातप्रापणप्रतिहारराट्सुभटमोहनराज प्रतापसिंह कर्ण तेजसिंह बीरम पल्हणा दिबीरनिद्रासमासादनदृष्टप्रहतसैन्यपलायितनाहरराजकन्यासंबंधस्वीकरणलग्नसमयकुमारपृथ्वीराजनाहरराजपुत्रीप्रतिहारीपरिणयनतत्प्राप्तनानायौतकसौमिस्वद्रङ्गाऽजमेरसमागमनं पञ्चदशो मयूखः

॥१५॥ आदितश्चतुर्विंशोत्तरशततमः ॥१२४॥

श्री वंशभास्कर महाचम्पू के पूवार्यण की चौथी राशि में अग्निवंशी चहुवान वंशवर्णन के भीतर डिड्डुर वंश विरोचन सांभर के पति कुमार पृथ्वीराज और प्रतिहार नाहरराज का दिल्ली जाना, सभा में स्थित प्रतिहार का कुमार की प्रशंसा करना, सोम के पुत्र पृथ्वीराज का अपनी सोने की माला नाहरराज को देना, तंवरों के राजा अनंगपाल का अपने दौहिते से नाहरराज की पुत्री प्रतिहारी के सम्बन्ध को उचित कहना, कुमार पृथ्वीराज और प्रतिहार नाहरराज का अपने पुरों को आना, गुजरात के राजा भीम के दो हाथियों को मारने से अपने काका के पुत्र प्रतापसिंह आदि सातों को अपने देश से निकालना, उनको पृथ्वीराज का बुलाना, चहुवान कन्ह आदि के मारने से मूँछ पर हाथ देने वाले सोलंकी प्रतापसिंह आदि सात सगे भाइयों का मारा जाना, उनके अपराध मिटाने को कन्ह के नेत्रों पर रत्नों की जड़ी हुई पट्टी बँधवाना, सोलंकी भीम का भाइयों का बैर माँगना, उसके देने का अस्वीकार करना, चहुवान राजा सोमेश्वर के दूत का कुमार पृथ्वीराज के विवाह के अर्थ प्रतिहारी (प्रतिहार नाहरराज की पुत्री) को मांगना, (नाहरराज का आक्षेप सहित उसको अस्वीकार करना, वह वृत्तान्त सुनकर कुमार पृथ्वीराज का युद्ध करने के लिए गमन करना, रैवतगिरि के प्रान्त में गये हुए नाहरराज का शत्रुओं की सेना के सामने मीणा और मेर पदवीं को धारण करने वाले चांडाल चार हजार वीरों को भेजना, मार्ग में चहुवान की सेना से मिलकर उस स्थान के रहने वाले यौवनराज का मारवाड़ के राजा (नाहर) के निवास करने का स्थान बताना, उस मार्ग लगकर अजमेर को सेना का पर्वत रूपी गढ़ पर चढ़ाना, पर्वत नामक मेर के साथ मिलकर संग्राम में प्रवृत्त होकर महर पदवी को धारण करने वाले पर्वत और कृष्ण का मारा जाना, कन्ह चहुवान का उन शत्रुओं को मारना, अपने वीरों को पराजित हुए सुनकर नाहरराज का युद्ध प्रारंभ करना, उससे कुमार पृथ्वीराज का युद्ध करना, प्रामार वृहत्राज आदि कई वीरों का मरना, कुमार पृथ्वीराज कन्ह, चामुंडराज, बलिराज, भानुराज, गोविन्दराज, प्रसंगराज, प्रहाटराज, लंगरीराज आदि कई वीरों का शस्त्राघात पाना, प्रतिहारराज के सुभट, मोहनराज, प्रतापसिंह, कर्ण, तेजसिंह, वीर पल्हण आदि का वीरनिद्रा में सोना (माराजाना) इनको मरे हुए देखकर सेना का भागना, और नाहरराज का अपनी कन्या के सम्बन्ध को स्वीकार करना, लग्न

के समय पृथ्वीराज का नाहरराज की पुत्री प्रतिहारी से विवाह करना, उसको प्राप्त करके नाना प्रकार के दहेज सहित सोमेश्वर के पुत्र पृथ्वीराज के अपने पुर अजमेर आने का पन्द्रहवाँ मयूख समाप्त हुआ। और आदि से एक सौ चौबीस मयूख हुए।

प्रायो मरुदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

दोहा

पित्थल इम आयो परणि, सम्मद पायो सोम।
अनळ अग्ग प्रतिहार अरि, हणि कीधा घण होम ॥१॥

कुमार पृथ्वीराज चहुवान जब इस तरह मंडोवर से विवाह कर लौटा तो उसके पिता राजा सोमेश्वर ने खुशी महसूस की इस विवाह के लिए अग्निकुल वाले चहुवानों ने अपनी अग्नि में कई प्रतिहार शत्रुओं को मार कर होमा।

सचरणगद्यम्

जिण समय गुजरात देस रा सत्तरि हजार ग्रामां रो अधीस अणिहलपुरपाटणि मैं चालुक्य राजा भोळारायभीम राज करै।

अर बडा बडा देसपती सीमाड़ जिणरा प्रस्थान सूं आतंक धरै।

जिकण रै ब्राह्मण लीलापति जती अमरसिंह चारण चंद्रभाणु भाट भैरव ए च्यारि ही मंत्री सामादिक एकएक उपाय मैं अद्वितीय रहै।

अर स्वामी रै अनुकूळ समस्त ही खंधावार रो भार आप आपरै अंस बहै ॥२॥

उस समय गुजरात देश में सत्तर हजार गाँवों का स्वामी, अनिहलपुर पट्टनी में चालुक्य (सोलंकी) राजा भोलाराय भीम राज्य करता था और बड़े-बड़े सीमान्त प्रान्त के राजा उसके गमन (चढ़ाई करने के लिए जाना) करने पर आतंकित हो जाते थे। उसके चारों मंत्री लीलापति ब्राह्मण, अमरसिंह जती, चन्द्रभान चारण और भैरव भाट साम, दाम दंड और भेद के उपाय करने में अद्वितीय थे। ये चारों अपने स्वामी की आज्ञानुसार पूरी राजधानी की जिम्मेदारी का भार अपने-अपने कंधों पर वहन करने वाले थे।

जिकां रै बळ राजा भीम पारकर रा जादव बम्हणवास रा सोढा

ठट्ठु रा मल्हनास इत्यादिक राजां नूं रजोगुण रै उफाण दंड ले लेर गंजिया।

अर बडो आसान करि तिकां नूं आप आपरा देस भोगण दिया।

जिण राजा भीम आबूगढ रा अधीस प्रामारराज सळख रै इच्छणीनाम पुत्री अलौकिक गुण रूप री निधान सुणी।

जरैं श्रौतानुराग रै ही प्रभाव आकर्षण मोहण द्रावण उन्मादण बसीकरण पाँचूं ही मनोज रा सायकां रो बेझो होय तत्काल ही आपरा प्रधान टीला नूं बुलाय प्रामारी रा पाणिग्रहण रै काज अर्बुदाचळ जाय सलख रा चित्त मैं या बार स्वीकार करावण री पुणी ॥३॥

कही पहली तो प्रमारां री प्रसंसापूर्वक साम उपाय रै साथ यो काम बणें तो ठीक छै।

नहीं तो चतुरंग चक्र रो आतंक देर बलात्कार सूं बणाय लेबा री बात कतरीक छै।

इण रीति रो आदेश सुणि टीलै दूत रै साथ सत्कार रो वर्णदूत तो अगाऊ भेजियो।

अर पाछैं सू आप भी पाँच हजार पखरैतां रै साथ अर्बुदाचळ पूगण रो प्रस्थान कियो ॥४॥

इन्ही के सहारे राजा भीम ने पारकर के यादव, बम्हणवास के सोढा, ठट्ठु के मल्हनास आदि राजाओं से दंड वसूल कर उन्हें दबाया और बड़ा अहसान कर उन्हें अपना-अपना मुल्क भोगने दिया अर्थात् अपनी दया का प्रदर्शन कर उन्हें राजा रखा। इस राजा भीम ने आबूगढ़ के प्रमार राजा सलख के ईक्षणी नामक एक गुणवंती और अलौकिक रूप से सुन्दर कन्या के बारे में सुना। सुनते ही श्रौतानुराग (किसी के रूप और गुणों के बारे में सुनने से प्रीति उत्पन्न हो उसे श्रौतानुराग कहा जाता है) के प्रभाव में आकर्षण, मोहन, द्रावण, उन्माद, और वशीकरण आदि कामदेव के पाँचों ही बाणों का लक्ष्य बन कर राजा ने तत्काल ही अपने प्रधान अमात्य टीला को बुलवाया। उसके आने पर राजा ने कहा कि तुम अर्बुद पर्वत पर जाओ और वहाँ के राजा सलख के चित्त में यह बात बिठाओ कि वे अपनी कन्या का विवाह मुझ से कर दे। वे इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लें इसके लिए उनका मानस

बनाओ। इसके लिए तुम सर्वप्रथम तो प्रमारों की प्रशंसा करने के साथ साम नीति से काम बनाना। इससे काम बन जाए तो उत्तम। यदि नहीं तो हमारी चार अंगों वाली सेना का भय दे कर हठपूर्वक अपनी बात मनवा लो इसमें क्या बड़ी बात है। अपने स्वामी राजा भीम का ऐसा आदेश पा कर प्रधान टीले ने अग्रिम रूप से अपना एक दूत पत्र दे कर भेजा और पीछे से खुद पाँच हजार घुड़सवारों की सेना के साथ अर्बुद पर्वत जाने के लिए रवाना हुआ।

दरकूंचां जाय अब्बूगढ रा अधीस प्रामारराज सळख सूं सत्कार पायो।

अर आपरी नम्रता उपेत भीम री लिखाई प्रसंसापूर्बक बर्णदूत रो समस्त वृत्तांत सुणायो।

सो बात बिचार रे बिधेय जाणि प्रामार रा प्रधान नूं पाछो उत्तर न दीधो।

जरैं बणिक भी अभिमान रै आग्रह सिद्धराज जयसिंह रा बंस रो अधिकभाव दिखावण रो बाद कीधो ॥५॥

टीले ने दर कूच दर मंडिल आबू पहुँच कर राजा सलख का सत्कार पाया। फिर उसने पूरी विनम्रता के साथ अपने राजा द्वारा लिखवाए गए पत्र जिसमें राजा सलख की प्रशंसा थी का पूरा वृत्तान्त कह सुनाया। टीला के इस प्रस्ताव को विचारणीय मान कर प्रमार राजा ने प्रधान टीला को कोई सीधा उत्तर नहीं दिया। तब उस बनिये (टीला) ने भी अपने स्वामी के अभिमान के हठ से सिद्धराज जयसिंह के वंश को सर्वोत्तम ठहराने के लिए वाद किया।

कहियो सोळंकियां रो ओज तो इण समय हिंदुस्थान रा अंधकार नूं मइंद आगली मंजा करि बांधवजनां रा दुक्ख रूप सुसीम नैं उडावैछै।

अर इच्छणी रा गुण रूप चालुक्यराज मानसमंदिर रा निवासी हुवा तिण दिन सूं राज री पुत्री रा गुण रूप रै पड़ोस आहार बिहारा दि क्रिया रा संकल्प कोई भी रहण न पावै छै।

तिणसूं दो ही राजावां रै ऊंची आवै इसा प्रपंच सूं तो घणा प्रामारांरा घर घूकां रा घुरसाळां रो ही सहबास गहै।

अर सूधी लीधां थकां बिटपीसूं बल्ली रै समान बडाबडा बसुधा पाळां रै ऊपर अर्बुददेस रो आदेश बधतो रहै ॥६ ॥

प्रधान ने कहा कि सोलंकियों की वीरता और प्रताप तो इस समय हिन्दुस्तान के अंधकार रूप सिंह के आगे की बकरी बने क्षत्रिय बांधवों के दु:ख की शीतलता को हरने वाला है। इधर आपकी पुत्री ईक्षणी के गुण और रूप दोनों चालुक्यराज के मन रूपी मंदिर में निवास करने लगे हैं और जिस दिन से ऐसा हुआ है उसी दिन से प्रमारराज आपकी कन्या के रूप और गुणों के पड़ोस के कारण अपनी आहार विहार आदि क्रियाओं के संकल्प को भी उनके मानस में रख नहीं पाते हैं। इससे पहले कि दोनों राजाओं में विरोध हो, इसे समाप्त कर देना चाहिए क्योंकि ऐसे प्रपंचों (रचना से) से तो कई सारे प्रमारों के घरों में उल्लुओं के घोंसले बनेंगे अर्थात् वे उजड़ कर निर्जन हो जाएँगे। यदि विरोध नहीं चाह कर साथ चाहते हैं तो जिस प्रकार साथ रहने से वृक्ष के साथ बेल बढ़ती है उसी प्रकार आपकी भी वृद्धि होगी। आपके आबू का आदेश कई बड़े-बड़े राजाओं पर चलने लगेगा।

या सुणतां ही जाणैं बारूद रा गंज मैं दमंग दीधो किनां खीजिया नागराज री पूंछ पर पग आणियो।

चालता काळ सूं चाळो कीधो किनां सूता मृगराज री नासिका रो लोम ताणियो।

खेमकर्ण खंगार भीम चंद प्रताप पहाड़राज नारायण दुर्गभाण महणसिंह गोइंदराज त्रिलोचन इत्यादिक आपरा बीरां रै जंग री उमंग बधाय जैतकुमार मूंछ रै माथै हाथ दीधो।

अर टीला रा बचन रो तिरस्कार करि इण रीति उच्चारण रो आरम्भ कीधो ॥७ ॥

यह सुनते ही मानों बारूद के ढेर में चिनगारी (अग्निकण) पड़ी हो अथवा जैसे किसी नागराज की पूँछ पर पाँव पड़ा हो। मानों जाते हुए काल (विषधर मृत्यु) से छेड़ गानी की हो अथवा सोये हुए सिंह के नाद के पास का लोम खींचा हो। खेमकर्ण, खंगार, भीम, चन्द, प्रताप, पहाड़राज, नारायण, दुर्गभाण, महणसिंह, गोइन्दराज, त्रिलोचन आदि अपने वीर रणबांकुरों में युद्ध के लिए उमंग बढ़ाकर राजा सलख के जैत नामक कुमार ने अपनी मूँछ पर हाथ दिया।

नीच नास्तिकां रो बंस प्रामारराज बिक्रम भोज रा बंस रो संतान किण रीति पावै।

अर चांडाळ रै मुख सावित्री रै समान केहरी रो बिभाग फेरण्ड रै मुंहुँडे कदापि न खटावै।

इसड़ी कही टीला नूं बडा तिरस्कार रै साथ काढियो।

अर अर्बुद रा दुर्ग रै माथै संगर री सामग्री रो समूह चाढियो ॥८॥

उन्होंने चालुक्यराज के प्रधान टीला के प्रस्ताव का तिरस्कार कर इस प्रकार के वचन सुनाए कि नीच नास्तिक (पूर्व में चालुक्य राजाओं ने जैन मत स्वीकार किया था) का वंश प्रमारराज विक्रम और भोज जैसे उच्च राजाओं के वंश की कन्या किस प्रकार प्राप्त कर सकते हैं? किसी चांडाल के मुँह से गायत्री मंत्र की तरह सिंह का हिस्सा सियार के मुख में कैसे समा सकता है? भला आपका ऐसा हेय प्रस्ताव हम कैसे स्वीकार कर सकते हैं यह असंभव है। ऐसा कह कर चालुक्यराज के प्रधान टीला को पूरे तिरस्कार के साथ वहाँ से निकाला और तुरन्त ही अपने आबू के दुर्ग में युद्ध सामग्री का अंबार लगाया।

प्रधान रा मुख री सोभा रै साथ चालुक्यराज भीम आपरा बामभुज नूं इच्छणी रा ताटंक रो पीढ करण रो संकल्प तजियो।

अर अभिमान रै उफाण आपरा बीरां नूं बडी बडी बखसीस देर अर्बुद रै ऊपर चतुरंग चक्र सजियो।

अठी जैतकुमार प्रामारराज कहियो आज रो भीम आसंगियो न जावै इण कारण बळवान सूं बैर करण मैं आबू घरे रहण रो संदेह पटकियो।

अर जै बलात्कार सूं पुत्री रो पाणिग्रहण बणैं तो बिक्रम रा बंस रो रजपूतपणों न टकियो ॥९॥

अपने प्रधान टीला के मुँह (लटके हुए) के भाव देखते ही चालुक्यराज भीम ने अपनी वाम भुजा को ईक्षणी का तकिया बनाने का संकल्प त्याग दिया। फिर उसने तुरन्त ही अपने अभिमान के उफान से अपने वीर योद्धाओं को बड़े-बड़े इनाम दे कर अपनी चतुरंगिनी सेना को सज्जित करने के निर्देश दिए। इधर प्रमारराज के कुमार जैत ने कहा कि आज का बलशाली भीम हमारी हिम्मत में नहीं आ सकता अर्थात् उस पर विजय पाने जितनी

हमारी ताकत नहीं इसलिए बलवान से दुश्मनी मोल लेने में मुझे अब हमा॰ आबू (राज्य) हमारे रह सकेगा इसमें सन्देह लगता है और यदि बलात् हमारी कन्या का विवाह होता है तो राजा विक्रम के वंश की राजपूती नहीं टिकेगी।

जैतकुमार कही आज रा समय मैं इच्छणी रै उचित चहुवाण जिसो बर ओर न लाधै।

अर एक लग्न बुहत दूर एक लग्न अति समीप जिको सोळंखी रा आगम रै पूर्ब किण रीति साधै।

सूरबीरां कहियो आबू रो दुर्ग तो म्हांरा भुजां बंधियो जिकण रो सोच तो म्हां जीवतां न धारो।

अर दो ही पिता पुत्र अजमेर जाय चहुवाण कुमार सूं संबंध करि सीघ्र ही बिबाहण रै काज ले पधारो॥१०॥

प्रमार कुमार जैत ने कहा कि वर्तमान समय में मेरी बहिन ईक्षणी के योग्य वर एक चहुवान के अतिरिक्त दूसरा नहीं मिल सकता। फिर इस विवाह का लग्न आने में तो बहुत समय लग जाएगा और शीघ्र आने वाला लग्न का मुहूर्त भी चालुक्यराज की सेना के आने से पहले कैसे साधा सकता है? कुमार जैत की यह बात सुनकर उसके सामन्त योद्धाओं ने कहा कि आबू का दुर्ग तो हमारी भुजाओं से बँधा है इसलिए हम लोगों के जीते जी आप आबू की चिन्ता न करें। आप दोनों पिता पुत्र अपनी कन्या सहित शीघ्र ही अजमेर जा कर कुमार पृथ्वीराज चहुवान से सगाई पक्की कर झट से अपनी कन्या का विवाह सम्पन्न करें।

जरै खेमकर्ण खंगार महणसिंह गोविंदराज त्रिलोचन यां पाँचूं ही बीरां रै भुजां तो अर्बुदगढ रो भार झलायो। अर जैतकुमार जुक्त सब सुद्धांत परिकर सहित प्रामारराज सळख चाहुवाण कुमार सूं स्वकीय सुता रो संबंध करण अजमेर द्रंग चलायो।

तिण समय चालुक्यराज अजमेर रै मार्ग छद्माघातक भेजिया या बात जाणि सळख प्रमार बांई तरफ टळि नागोर आयो। अर संबंध रो वृत्तांत अजमेर कहायो॥११॥

तब खेमकर्ण, खंगार, महणसिंह, गोविंदराज और त्रिलोचन इन पाँचों ही वीर योद्धाओं को आबू के दुर्ग की रक्षा का भार सौंपा और कुमार जैत

सहित अपने पूरे जनाना को साथ ले कर प्रमारराज सलख चहुवान कुमार से अपनी पुत्री की सगाई करने के लिए अजमेर को रवाना हुआ। इसी समय चालुक्यराज भीम ने अजमेर जाने वाले मार्ग पर अपने छद्म घातक भेजे पर इस योजना की भनक पा कर प्रमार सलख ने उस रास्ते को बाएँ छोड़ा और सीधा नागोर पहुँचा। यहाँ पहुँच कर सलख ने अजमेर सगाई का प्रस्ताव भिजवाया।

जरैं अजमेर सूं प्रामार रै काज सत हय पंच गज पंचसत निष्क मेवात देस सहित हिंसारदुर्ग रो पटो कैमास रै साथ देर बडा आदर सूं नागोर भेजियो।

अर संबंध रों वृत्तांत कहायो जिको समता रा सत्कार पूर्वक स्वीकार कियो।

यो उदंत श्रवण रो संचारी होतां ही भोळारायभीम अणिहलपुर रै बाहिर मुकाम दीधो।

अर सिंधुरं रै सीस पताका खुलाय अनीकां रा ओघ मिलाय पृथ्वी रा पुड़ चलावतै जिकण भद्रकाळी रै घरे निमंत्रण लगावतै अर्बुद रै ऊपर प्रस्थान कीधो ॥१२॥

इस पर अजमेर से चहुवान राज ने प्रमार सलख के लिए सौ घोड़े, पाँच हाथी सहित पाँच सौ मोहरों की आमदनी वाले मेवात प्रदेश के साथ हिसार दुर्ग का पट्टा कैमास के हाथों पूरे आदर के साथ नागोर भिजवाया और कहलवाया कि सगाई का प्रस्ताव जो आपने भेजा उसे बराबरी का सम्बन्ध जान कर हमने स्वीकार किया। उधर इस वृत्तान्त का समाचार चालुक्यराज भीम के कानों में पड़ा तो उसने अपनी राजधानी अनिहलपुर पट्टन के बाहर आ मुकाम किया। उसने हाथियों पर ध्वज लगवा कर अपनी सेना के दल जोड़ कर पृथ्वी कँपाते हुए और भद्रकाली को न्यौता देते हुए आबू दुर्ग पर चढ़ाई करने को प्रस्थान किया।

दरकूंचा जाय दुर्ग रै पृतना रो पळेटो दियो। किनां सुमेरू पर्वत रै चोतरफ जंबूद्वीप रो मंडळ थियो।

उण समय समुद्र मैं टापू रै समान अर्बुदाचळ रो दुर्ग दृष्टिपथ मैं आयो। अर पर्बतां रै सीस पविपात रै प्रमाण गढगंजण तोपां रै श्रवणां अलात देदेर गोळां रो गजर लगायो ॥१३॥

दर कूच दर मंजिल पहुँच कर आबू दुर्ग के चारों ओर अपनी सेना का घेरा लगाया। मानों सुमेरु पर्वत के चारों ओर जंबूद्वीप का घेरा बना हुआ हो। इसी समय चालुक्यराज के दृष्टिपथ में समुद्र से उठे हुए किसी टापू की तरह आबू का दुर्ग आया। उसने तुरन्त ही पर्वत के शिखर पर अवस्थित दुर्ग पर वज्रपात करने को गढ़ तोड़ने वाली तोपों के कानों में (मुहाने में) जलती हुई बत्तियाँ लगा कर गोलों के प्रहार किए अर्थात् गोले दगवाए।

हजारां मण बारूद उडाय दुर्ग माथै बानैत बीरां रा केही हल्ला पेलिया। जिके जिके ही अहंकार रै उफाण प्राकार रै कंगुरै कंगुरै होय गढ रा सिपाहां पाछा ठेलिया।

आबूगढ़ तूटतो न जाणि जैन अमरचंद्र प्रमुख चालुक्य रा मंत्रियां सलख रा नाम सूं कपट रा पत्र बणाया।

अर कोई नैमित्तिक महा अंधकार मैं निसीथ रै समय दक्षिण दिसा रै द्वार जाय जिके बडा जत्न रै साथ गढ मांहिलां नूं जणाया ॥१४॥

दक्खिणरै द्वारपाळ महामूढ सलख रा पत्र सुणतां हीं अरर उठाय मांहिं लीधा।

जठै भीम रा सिपाहां तोरण रै बाहिर आया जिके राजा सहित प्राकार मैं प्रबिष्ट कीधा।

या बात कर्णगोचर पड़तां ही गढ रा सिपाह प्रामार बी अली रा अंग रो स्पर्स करतां अल रा चालवा मैं बिलंब न होय तिण रीति सुणतां ही समीप आया। अर चक्री रा चक्र रै समान मही रै माथै प्रतिबिंब पाड़ता चतुरंग चक्र मेघ माळा मैं चंचळा रा चपळभाव मैं चूक पाड़ता चन्द्रहास चलाया ॥१५॥

हजारों मन बारूद उड़ा कर दुर्ग पर प्रतिज्ञाबद्ध वीरों के कई हमले बोले पर गढ़ में उपस्थित योद्धाओं ने अपने अभिमान के उफान के फलस्वरूप दुर्ग के कंगूरे-कंगूरे तक पसर कर चालुक्यराज के सिपाहियों को वापस धकेला। आबू गढ़ को नहीं टूटते देख कर जैन अमरचंद जैसे चालुक्यराज के मंत्रियों ने प्रमार सलख के नाम से झूठा और छद्म पत्र बनाया। फिर वे प्राकृतिक महाअंधकार में आधी रात के वक्त दक्षिण दिशा वाले द्वार पर गए और पूरे यत्न कर येन केन प्रकारेण गढ़ के भीतर वालों तक यह बात

पहुँचाई। जिसे सुन कर दक्षिण द्वार के महामूढ़ द्वारपाल ने राजा सलख के पत्र का सुनते ही दरवाजा खोल कर बाहर वालों को भीतर लिया। फिर तो राजा भीम के सिपाहियों ने दरवाजे खोल दिए तो राजा भीम सहित शेष सेना भी दुर्ग में दाखिल हो गई। ज्योंही गढ़ में प्रमार राजा के योद्धाओं को इसकी खबर पड़ी तो वे बिच्छू के अंग को परसते ही और उसके डंक मारने जितने अंतराल में ही (अर्थात् शीघ्र ही) शत्रुओं का सामना करने के लिए सामने आए। और भगवान विष्णु के सुदर्शन चक्र जैसी चपलता से अपनी तलवारों को चमकाते हुए चार अंगों वाली चालुक्यराज की सेना रूपी मेघमाला में चमकती बिजली की तरह अपनी तलवारें चलाईं।

डोल्ल्हर रा पल्लड़ां रै प्रमाण ऊपरा ऊपरी लोथि लागण ढूकी। क्रव्याद प्रेत डाकिणी बेताळां री भूख जागण ढूकी जिका ही भागण ढूकी।

दो ही तरफ सूं लोह रा प्रभाव मैं कसर न देखी तथापि पश्चिम रो अधीस जाणि वारसुंदरी रै स्वभाव जयलक्ष्मी रो कटाक्ष तो भोळाराय री तरफ हुवो।

अर अल्पधन भुजंग नायक रै समान लज्जा पाय प्रामारां रो समूह नाक रूप बिदेस मैं थियो जुवो ॥१६॥

डोलर हींडे (चक्राकार ऊपर नीचे चलने वाले झूले) के पल्लड़ों की तरह एक के बाद एक कर शवों का ढेर लगने लगा। जिन्हें देख कर राक्षसों, प्रेतों, डायनों और बेतालों की जागृत भूख थी वह शान्त होने लगी। दोनों ओर से होने वाले प्रहारों में कोई कसर न रही तब भी पश्चिम दिशा के स्वामी को जान कर गणिका ने अपने स्वभाव वश विजय का कटाक्ष (नजर) तो भोलाराय भीम पर डाला और अल्प धन वाले प्रमार समूह रूप गणिकापति ने विजय लक्ष्मी रूपी गणिका को अपने से अनासक्त जान कर लज्जा आरूढ़ हो स्वर्ग रूपी विदेश में निवास करने की सोच कर जुदा होना स्वीकारा।

नायक रै विदेस गमण आपरी अंगना रै समान राजपुत्रियां भी कुळ रा धर्म रै अनुसार पावक रा प्रबेस बिनां ही उणही बिदेस मैं बसण री चाढ लागी।

सो धवां रा धड़ पड़ता देखि खड्ग खेटक रा पाटव मैं प्रबीण सूर

भाव रै साथ श्रद्धा रै समान सात्रवां रो संहार करती सारी ही मध्य पुर रा प्रकोष्ट रै माथै आवती कृपाणां रै बाढ लागी।

खेमकर्ण खंगार महणसिंह गोविंदराज त्रिलोचन पाँचूं ही प्रामारां सीस रै सांटै दुर्ग दीधो।

अर जिकां रा परिग्रह रा जनां बी दो ही तरफ री कुळ लज्जा रै अनुसार धाराधर री धारां सू तिलतिल होय पीहर सासरै पाणी रो चढावणहार अपूर्व सहगमण कीधो ॥१७॥

जिस स्त्री का पति विदेश जाता है उसकी स्त्री भी सामान्यत: अकेली घर में रहना नहीं चाहती इसी माफिक राजकुमारियों ने भी अपने कुलधर्म का निर्वाह करते अग्नि में प्रवेश किये बिना ही उसी देश (अपने पति गए उस विदेश अर्थात् स्वर्ग) में बसने की लगन लगाई सो उन्होंने अपने पतियों के कट कर गिरते धड़ों को देख कर खड्ग और ढाल उठाई और वीरता के साथ अपनी श्रद्धा का भाव मिला कर वे जनाना ड्योढी पर आई और तलवारों की धारा से जा लगी अर्थात कट मरीं। खेमकर्म, खंगार, महणसिंह, गोविंदराज और त्रिलोचन इन पाँचों ही प्रमारों ने अपना सिर दे कर ही दुर्ग का भार सोंपा। इनकी घरवालियाँ और परिकर (दासियाँ) भी अपने दोनों पक्ष यथा ससुराल और पीहर के कुलों की लाज रखने को असिधारों से तिल-तिल कट मरी। इस तरह उन्होंने अपने दोनों पक्षों को उज्ज्वल बना कर अपने पतियों के साथ स्वर्ग के लिए सहगमन किया।

इण रीति चालुक्यराज कपट रै प्रपंच अर्बुद रो गढ लेर आपरी आण चलाई।

अर प्रामार रा दूतां आपरा पराजय रै साथ अर्बुदाचळ जावण री बात नागोर घलाई।

चालुक्यराज भीम अर्बुद रा दुर्ग मैं मास एक दिन पंचक बिताय आपरा विस्वास रा बीरां नूं जन्मभूमि घरे राखण री संधा भळाय अणिहलपुर आयो।

अर चंडासिकुमार रै साथ इच्छणी रो संबंध कर्णगोचर पड़ता ही प्रामारां चहुवाणां रै माथै अधम बिरोध बधावण रै काज मकुंवाण राज सारंगदेव नूं बुलाय गजनी जावण रो निदेस लगायो कहियो जवनेस

गौरी सहाबुद्दीन सूं इणरीति कहणी अबसूं चालुक्यराज थांहरै सहाय छै।

अर चाहुवाण प्रामार फितूरी फेरंड मइंदां रो मत्तभाव आणैं जिको उडावण रो आपणैं उपाय छै।१८॥

इस रीति से चालुक्यराज ने कपट से (छद्म पत्र प्रचलित कर) आबू का दुर्ग हस्तगत कर वहाँ अपनी राजाज्ञा चलाई। इधर प्रमारों के दूतों ने अपने पक्ष की पराजय हुई यह खबर किसी तरह नागोर तक पहुँचाई। विजय प्राप्त करने के बाद चालुक्यराज भीम आबू के दुर्ग में एक माह और पाँच दिन व्यतीत कर, अपने भरोसे के योद्धाओं को जन्मभूमि (चालुक्य भी अर्बुद को अग्निकुंड से उत्पन्न होने के कारण जन्मभूमि मानते हैं) को अपने ही अधिकार में रखने की हिदायत दे, अनिहलपुर पट्टन को लौटा। उधर चहुवान कुमार पृथ्वीराज के साथ ईक्षणी की सगाई हुई। इस सगाई के समाचार जब चालुक्यराज के कान में पड़े तो उसने प्रमारों के साथ चहुवानों के साथ भी अपना हेय विरोध बढ़ाने हेतु झाला राजा सारंगदेव को बुलवाया। बुला कर उसे गजनी नगर जाने का निर्देश देते हुए कहा कि तुम शाहबुद्दीन गौरी से जा कर कहना कि चालुक्यराज भीम अब से तुम्हारे पक्ष में है। वह तुम्हारा सहायक रहेगा पर इसके लिए आपको इन प्रमारों और चहुवानों को सबक सिखाना पड़ेगा क्योंकि ये फ़ितूरी गीदड़ सिंह की बराबरी करने पर उतारूँ हैं। इनके उड़ाने का उपाय आपको करना है।

अठी सूं म्हे आवां-जरै हीं उठीसूं थे सज्जीभूत होय सामलि आवो अर चालुक्कां रै प्रताप प्रमारां नूं पाड़ि तेगां रात ड़ाका चहुवाणं नूं चखावो साकंभरी रा देस में तो अणिहलपुर रो अमल कियो जावसी।

अर नागोर द्रंग रो देस थांहरै काज उपहारीभूत लियो जावसी।

इण तरह पत्र लिखाय पातसाह री भेट निमित्त एकसत तुरंग दोय गजराज पैंताळीस कांतलोहमय खड्ग च्यारि रंगदार चामर साथ देर सारंगदेव नूं गजनवी विदा कीधो।

जिण दरकूंचां जाय उपहार दिखाय चालुक्यराजरो पत्र दीधो॥१९॥

इधर से हम अपनी सेना सज्जित कर आएँगे और उधर से आप अपनी सेना सहित चढ़ आओ। जिससे हम मिल कर अर्थात चालुक्यों के सहारे प्रमारों को पस्त कर अपनी तलवारों का जलवा चहुवानों को दिखाएँ।

इसके बदले में नागोर प्रदेश का इलाका आपको उपहारस्वरूप प्रदान किया जाएगा। इस प्रकार का पत्र लिखवा कर बादशाह के भेंट स्वरूप एक सौ घोड़े, दो हाथी और पैंतालीस अच्छी धातु से बनी उम्दा तलवारें (कांत लोह मय का अर्थ है वह लोहा जो भ्रामक, चुंबक, रोमक और स्वेदक नामक होता है), चार रंगीन चंवर आदि सामग्री सहित सारंगदेव को गजनी नगर के लिए विदा किया। झाला राजा सारंगदेव ने दर कूच दर मंजिल वहाँ पहुँच कर उपहार भेंट दिए और साथ ही चालुक्यराज का पत्र भी साथ में थमाया।

तिण पत्र मैं आपरै साकंभर पातसाह रै नागोर यो लेख देखतां ही सभा रै बीच गौरी सहाबुद्दीन कोप गहियो।

अर तत्तार खुरासाण न्याज निसुरुत् रुस्तुम् फीरोज इत्यादिक प्रत्यंतधरारा किंवाड़ प्रबीर जन उठै हूँता तिकां भी चालुक्यराज नूं अतिदर्प कहियो ॥२०॥

पर इस पत्र में यह देख कर कि चालुक्यराज ने अपने लिए सांभर का इलाका और बादशाह के लिए नागोर का प्रदेश रखा है अपने भरे दरबार में ही शाहबुद्दीन गौरी आग बबूला हो गया। उसके अतिरिक्त दरबार में उपस्थित तातार, खुरासाण, नियाजी, निसुरुत (नुसरत), रुस्तम, फीरोज इत्यादि म्लेच्छ देश के रक्षक वीरों ने भी चालुक्यराज को अत्यधिक घमंडी कहा।

जवनेस जंपियो बिजय रो बिभाग बीजा नूं बांटि देण रो संकल्प तो कातरलोकां रै सुणीजै।

परंतु आपरै रासि संचय करि सहायक नूं कण देण री अधिकाई मुणीजै ॥२१॥

पत्र पढ़ते ही यवनपति गौरी बोला कि विजय का हिस्सा दूसरे लोगों में बाँटने का रिवाज (संकल्प) तो कायर लोगों में सुना जाता है। पर यहाँ तो अपनी संचय की हुई राशि में से अपने सहायक को तो कण देने की अधिकार पूर्ण घोषणा की गई है। अर्थात् उस दंभी चालुक्य ने विजय का इस प्रकार हिस्सा करने की हिमाकत कैसे की?

चालुक्य रै इसो अभिमान किसा भड़ां रै भरोसै प्रकट थियो।

आगै भी जिणरो गुजरात देस बारबार री चढ़ाई रै अनुसार महमूदगजनवी रो गंजियो।

इण रीति मूढ शृगाल सिंह रा सहाय सूं गजराज नूं गुडाय आपरै ही अधीन जाणि ऊंहीं गजराज रो लूम बिभाग मैं सिंह नूं देण चहै।

इण रीति कातर चालुक्य गजनवी रै प्रताप चहुवाणां रो देस लेर सहाबुद्दीन री भेट नागोर निवेदण री कहै ॥२२॥

चालुक्य के इतना अभिमान कौन से भंडार के आसरे हुआ? आगे भी (पूर्व काल में भी) जिसके गुजरात देश को बारबार चढ़ाई कर महमूद गजनी ने जीता है। यह तो ठीक उस जैसी बात हुई कि कोई मूढ़ शृंगाल (सियार) किसी सिंह की सहायता से गजराज को मार कर उसे अपना शिकार मानें। यही नहीं वही गीदड़ मरे हाथी के हिस्से से सिंह को मात्र उसकी पूँछ देना चाहता हो। इसी उदाहरण के अनुरूप वह कायर चालुक्य (भीम) गजनवी के प्रताप से चहुवानों का राज्य छीन कर शाहबुद्दीन की भेंट मात्र नागोर की भूमि देने की बात करता है।

तिण सूं अब पहली चहुवाणां नूं बिगाड़ि साथ ही गुजरात रो बिध्वंस करणों।

जठै मंकुवाण कही जवनां रो जाति स्वभाव आपरो उत्कर्ष जणावै परंतु आजरो चालुक्य सारां ही प्रत्यंतदेसां रो सरणों।

जिण भीम जूनागढ रा बढैल अंगदेस रा बघेल आसेर रा बारड़ माण भंजि आपरै चरण लगाया।

अर दिग्बिजय रै चढाण केही जंग करि देस देस रा नरेसां रै घरै सूता बैर जगाया ॥२३॥

इससे अब हमारी प्राथमिकता यह तय रहेगी कि हम पहले चहुवानों को बिगाड़ कर (हरा कर) उसके बाद गुजरात का विध्वंस करेंगे। यह सुन कर झाला सारंगदेव ने कहा कि यवनों का तो जाति स्वभाव ही ऐसा है कि वे हर कहीं अपना बड़प्पन बघारते हैं परन्तु वे नहीं जानते कि चालुक्यराज भीम इस समय सारे म्लेच्छ देशों को अपनी शरण में रखने की हैसियत रखता है। जिस प्रतापी चालुक्यराज भीम ने जूनागढ़ के बढैलों, अंग देश के बघेलों और आसेर राज्य के बारड़ों को मार-भांग कर अपने चरणों में झुकाया। यही नहीं उस दिग्विजयी ने कई आक्रमण कर कई युद्ध लड़े हैं और देशों-देशों के कई राजाओं से घर बैठे वैर मोल लिया है।

मुसलमांनां रो जोर आपरै ही घर रहै छै। अर रजपूतां सू मिळियां अद्रि रा उदक समान निस्सेस ढळि बहै छै।

या कहतां ही पातसाह री सैन सूं वजीर रो तीर मंकुवाण री छाती रै पार फूटो।

सो लोह लागतां ही सारंगदेव रा हाथ रो चंद्रहास रो प्रहार छूटो॥२४॥

मुसलमानों का जोर तो अपने घर में ही चलता है और राजपूतों के मिलने के बाद पर्वत के जल की तरह सम्पूर्ण रूप से बह निकलता है अर्थात् इसमें तो राजपूतों की सहायता ही प्रमुख है जिसके सहारे आप निर्बाध रूप से मन करे उस तरफ बह सकते हैं। अन्यथा आपका क्या बुता है? यह सुनते ही बादशाह के संकेत पर उसके वजीर का एक तीर झाला सारंगदेव की छाती पर आ लगा। झाला की देह पर तीर का घाव लगते ही उसके हाथ की तलवार का प्रहार हुआ।

तिण सूं गजनवी रा हुजाबहैजम रो मस्तक चक्र होय पड़ियो।

इणरीति केही जवनां रा प्राण देहरूप कारासदन रा बंदीवान छुडाय सहाबुद्दीन री सभा मैं सारंगदेव टूक टूक होय झड़ियो।

मंकुवाण रो मरण सुणतां ही चालुक्य संधा रै साथ सभा मैं बोलियो जै खुरासाण रो तखत गौरी सहाबुद्दीन रै रहाऊं।

तो अब लज्जा रै अधीन आछो पुरुषार्थ खोय भीम नाम न कहाऊं॥२५॥

झाला की तलवार के इस प्रहार से गजनवी के हुजाबहैजम का मस्तक कट कर भूमि पर आ गिरा। इस प्रकार कई यवनों की देह की कारागार में कैद उनके प्राणों को छुड़ाता हुआ शाहबुद्दीन गौरी के दरबार में झाला सारंगदेव का शरीर टूक-टूक हो कर गिरा अर्थात् सारंगदेव वहाँ गौरी के कई यवनों को मार कर स्वयं भी मारा गया। झाला के इस प्रकार मारे जाने का समाचार जब चालुक्यराज ने सुना तो वह आगबबूला हो गया। उसने यह सुनते ही प्रणपूर्वक अपने दरबार में यह घोषणा की कि यदि अब मैं खुरासाण की राजगद्दी पर शाहबुद्दीन गौरी को रहने दूँ तो मैं अपने अच्छे पुरुषार्थ को

खो कर लज्जा के मारे भविष्य में भीम नाम से कहलाना छोड़ दूँ। अर्थात् यदि मैं उसे अपने राज्य से विहीन न कर दूँ तो मेरा नाम भीम नहीं।

इम संधा रै अनंतर ही बडो बरूथ बणाय गौरी जवनेस अटक रै वार आयो।

अर केही नरेसां रा थांणां भांजि बिजय रा मद मैं मत्त थकै ग्राम सारूड़ै मुकाम लगायो।

जवनां रा जोर सूं हिन्दुस्थान मैं ओद्राव पड़तां प्रतिहार नाहरराज मंडोवर सूं चलाय प्रत्यंतराज रै अधीन बणियो।

अर प्रतिदिन पृतना रो प्रस्थान होतां आघात रै आतंक आर्यावर्त्त हाकार भणियो॥२६॥

चालुक्यराज भीम की इस प्रतिज्ञा के बाद ही अपनी एक जंगी सेना सजा कर यवनेश गौरी अटक नदी को पार करता हुआ इधर आया और कई राजाओं के थानों को नष्ट करता विजय के नशे में (मद में) मत्त उसने सारूड़ा गाँव में अपना डेरा लगाया। यवनों के बल से हिन्दुस्तान में भय का प्रसार हुआ जिसके फलस्वरूप प्रतिहार नाहरराज अपने मंडोवर से चल कर वहाँ पहुँचा और उसने उनकी अधीनता स्वीकार की। इसके बाद तो म्लेच्छ सेना के विचरण के कारण दिन प्रतिदिन युद्ध के आतंक से आर्यावर्त्त में हाहाकार मचने लगा।

या सुणतां ही अणिहलपुर रो अधीस सेना रा संभार सूं मही रै मचोळा देतो गजनवी रो बेग झेलण रै काज जवनेस रो राह रोकि सोझति सहर आडो आय पड़ियो।

अर अठी नागोर पहली रा जुद्ध मैं आपरो आबूगढ़ भीम रै गयो सुणतां ही कुमार समेत प्रमार सळख अणिहलपुरजाय जुद्ध मैं मरण रो प्रपंच घड़ियो।

जठै सळख रा सत्कार रै अर्थ पहली अजमेर सूं कैमास भेजियो जिण नागोर आय प्रामार सूं कहियो केवळ ही मरण मांडिया बसुधा र बडाई दो ही व्यर्थ जावसी।

अर धीर भाव लीघां मंत्री री महत्तारै साथ सोलंखियां री सीमां मैं

सारो ही फैल खटावसी ॥२७॥

म्लेच्छ गौरी के अपने देश आगमन के समाचार सुनते ही, अणिहलपुर के स्वामी चालुक्यराज भीम ने धरती कँपाते अपनी सेना के समूह के साथ, गजनवी की ताकत से मुकाबला करने की गरज से, यवन सेना का मार्ग अवरुद्ध कर, सोजत शहर में पड़ाव डाला। उधर नागोर में अपने आबू के गढ़ के जाने की सुन कर प्रमारराज सलख ने अपने कुमार जैत के साथ अनिहलपुर जा कर युद्ध में मरने की योजना बनाई। वहीं अजमेर से कैमास को चहुवानों ने नागोर राजा सलख के सत्कार हेतु भेजा जिसने नागोर पहुँच कर राजा से कहा कि मात्र मरने की सोचने से पृथ्वी और बड़प्पन दोनों के व्यर्थ जाने का खतरा रहता है। इसके उलट आपको धैर्य रखना चाहिए। धैर्य रखने से और अच्छी सलाह लेने के बाद चालुक्यों के राज्य की सीमा में हमारे प्रयत्न सार्थक होंगे।

सोही स्वीकार करि प्रामार कैमास रा मंत्र रै अनुसार सन्नद्ध होय नागोर रहियो।

अर जवनेस रा आगम रै निमित्त पृथ्वीराज कुमार पिता सूं प्रच्छन्न आपरो परिकर कैमास रै समीप भेजि खुरासाण री फोजां बिरोळण रो निदेस कहियो।

जरै कंवर रो परिकर नागोर आय सो सासन प्रामारां दाहिमां नूं सुणाय रस्सा रा तंतुवां रै समान एकमतै हुवो।

अर नागपुर री लज्जा कैमास नूं भळाय अणिहलपुर गजनवी रा अनीकां मैं रतिवाह देण हांकियो बणाय ढुवो ॥२८॥

वीर कैमास की इस मंत्रणा को प्रमारराज सलख ने मान लिया और नागोर में ही रह कर वह युद्ध की तैयारियों में संलग्न हो गया। इधर यवनेश के आगमन को सुन कर कुमार पृथ्वीराज चहुवान ने अपने पिता से गुप्त (बिना बताए) अपने परिकरों को कैमास के पास भिजवाया और खुरासाण की फौज को मथ डालने का निर्देश दिया। जब कुमार पृथ्वीराज का परिकर नागोर आया तो उसने शासन का हुक्म सुनाया कि प्रमारों और दाहिमाओं को एकमत हो जाना चाहिए जिस प्रकार बहुत सारे तन्तुओं के मिलने से रस्सी बनती है। इसके बाद कुमार नागौर की लाज का भार कैमास को सौंप कर

अनिहलपुर और गजनवी की सेनाओं पर रात्रिकालीन छापा मार धावा बोलने के लिए अपने समूह के साथ चला।

सळख प्रामार भी जैतकुमार समेत सोझति सारूड़ा रै साम्हैं थकावण रै काज पृथ्वीराज रा बीरां मैं इण तरह भिळियो। सो जाणैं पाउसकाळ री नदियां मैं उपटथट बेग रै अनुसार तटां बारैं छळतो महानद आय मिळियो।

जरैं भीमनरेस कपट रै प्रपंच नागोर मैं अल्प परिकर जाणि कैमास नूं गहण रै काज जती अमरसिंह भेजियो।

अर प्रामार रामदेव झल्ल राणिंगदेव सोढो सारंगदेव बघेलबीर देव डाभी गंगदेव चाचिक बसुदेव इत्यादिक आठ सामंतांरो समूह साथ दियो ॥२९ ॥

कुमार पृथ्वीराज के समूह को जाते देख सलख प्रमार भी अपने पुत्र कुमार जैत सहित सोजत और सारूड़ा में सामने जाने के लिए उसी दल में यों आ मिला जैसे अपने किनारे तोड़ती नदियाँ बह कर किसी महानद में मिलती हैं। तब उधर नागोर में शेष अल्प सैन्य को जान कर चालुक्य नरेश भीम ने चहुवान कैमास को पकड़ने के लिए अपने अमात्य जती अमरसिंह को नागोर भेजा। यही नहीं जती अमरसिंह की सहायता के लिए राजा ने रामदेव प्रमार, राणिंगदेव झाला, सारंगदेव सोढा, बीरदेव बघेल, देव डाभी, गंग, वसुदेव और चाचिक इन आठ ही योद्धा सामन्तों को साथ भेजा।

सामंतां कहियो जवनेस सूं तोड़ि चहुवाणां सूं बिगाड़ करण मैं आपरो विचार नीति रा लेस बिनां जाणियो।

तथापि साहस रै साथ असूया रै अनुचर आपरो ही आदेस प्रबळ माणियो।

इण रीति अमरसिंह नागोर जाय कैमास रा मिलाप मैं कपट रै निदान केही कैद करण रा प्रपंच किया।

परंतु पृथ्वीराज रो मंत्री उण रा उक्त रूप इंद्रजाल रा उद्बंधण मैं न आयो र श्रावक रा प्रेरिया समस्त ही फंद जाणि लिया ॥३० ॥

सामन्तों ने कहा कि हे स्वामी! यवनेश से नाता तोड़ कर साथ ही आपने चहुवानों से भी विरोध लिया है। आपका यह निर्णय नीति सम्मत प्रतीत नहीं होता। तब भी हठ के साथ असूया (पराया उत्कर्ष नहीं सह सकने

का अवगुण) के अनुचर होने के आपके आदेश को ही हमनें प्रबल मानने योग्य माना है। इस प्रकार अमरसिंह ने नागोर पहुँच कर कैमास को कैद करने के कई प्रपंच रचे परन्तु कुमार पृथ्वीराज चहुवान का मंत्री कैमास उस जती अमरसिंह के इन्द्रजालीय फंदे में नहीं आया उल्टे उसने इस श्रावक (सरावगी जैन) के फैलाए सारे छल छन्दों को अच्छी तरह जान लिया।

निसीथ रै समय थाटी रै संपात दिवाय आपरा गहणहार गुजरात अधीस रा सामंत मंत्री अमरसिंह समेत जठी तठी पलायमान किया।

अर गज बाजि डेरा ऊंट रह्या जिके लुटाय लिया।

इण बात रै अनंतर कैमास भी सहोदर चामुंडराज बागड़ी देवराज जादव जाज बडगूजर रामदेव गहिलोत गोइंदराज चोरंग लंगरीराज हाडा अखैराज समेत अल्प साथ सूं ही राजा भीम रै माथै प्रस्थान कियो।

जिको सुणतां ही भयहा चंदेल महण प्रतिहार नृसिंह चहुवाण तेजल प्रमार सारंग चालुक्य पचायण चहुवाण महणसिंह भाटी निडर राठोड़ गंजळराज दहियो कन्ह चहुवाण चाटो टांक आततार्इ चहुवाण जयसिंह जादव बंबाळ चहुवाण भीम जंघाल कनक बडगूजर इत्यादिक कतराक सामंत अजमेर छा जिकां भी कंवर सूं अरजकरि सहाय रै काज कैमास नूं आय लियो॥३१॥

कैमास ने आधी रात के समय इस छापामार शत्रु के सम्मुख जा कर अपने पकड़ने को आए गुजरात के स्वामी के सामंत मंत्री अमरसिंह सहित उसके साथी योद्धाओं को भी इधर-उधर पलायन करने को बाध्य किया। यही नहीं इस दल के हाथी, घोड़े, डेरे, ऊँट सभी को लूट लिया। इस घटना के बाद कैमास ने भी अपने भाई चामुंडराज, देवराज बागड़ी, जाज जादव, रामदेव बडगूजर, गोविंद राज गुहिलोत, लंगररोज चोरंग और अखैराज हाडा के दल के साथ अपनी छोटी-सी सेना ले कर चालुक्य राजा भीम पर चढ़ाई करने को प्रस्थान किया। यह सुन कर चंदेल भयहा, प्रतिहार महण, चहुवान नृसिंह, प्रमार तेजल, चालुक्य सारंग, चहुवान पंचायण, भाटी महणसिंह, राठौड़ निडर, दहिया जंगलराज, चहुवान कन्ह, टांक चाटो, चहुवान आततार्इ, यादव जयसिंह, चहुवान बंबाल, जंघाल भीम, बडगूजर कनक इत्यादि जो योद्धा और सामंत अजमेर थे वे भी कुमार पृथ्वीराज से सहायता करने का निवेदन कर कैमास से आ मिले।

दोहा

जोध प्रथम आया जिकां, मग पूगो कैमास।
एक झुण्ड अजमेर सूं, तीजो मिळियो तास॥३२॥

थोड़े योद्धा तो कुमार पृथ्वीराज के साथ ही चले थे और बीच रास्ते में चहुवान कैमास अपने साथियों सहित उनसे आ मिला। इन दो दलों के साथ तीसरी खेप के रूप में अजमेर से चल कर आया वीरों का झुण्ड मिल गया।

षट्पात्

करि प्रच्छन्न मुकाम सुहड़ एकत्र होय सब।
मन्त्र बिबिध नय मंडि उचित रतिवाह जाणि अब।
बीखत पळ जिम बाज अडर उडि आय अचाणक।
निस तम पाय निसीथ बीच दीधा बळताणक।
तिम लव चउत्थ गुजरात दळ सहंस साठि जे तिण समय
सेनेस सिंह झाला सहित रहिया फिरि चोकी प्ररय॥३३॥

सारे योद्धाओं ने एकत्रित हो कर एक गुप्त जगह पर पड़ाव डाला फिर सभी ने आपस में मंत्रणा कर रात्रि के समय धावा बोलने की नीति तय की। उन्होंने इसी योजना को अन्तिम रूप दिया। रात को शत्रु कें सोते समय उन्होंने धावा बोलने का इस प्रकार निश्चय किया कि जैसे मांस को देखते ही बाज पक्षी निडर हो कर टूट पड़ता है, हमें भी इसी तरह टूट पड़ना है। अंधेरा होते ही अर्द्धरात्रि के समय उन्होंने (बळताणक अर्थात् सेना को ढोने वाले) अपने घोड़ों की लगाम उठाई। उस समय गुजरात का सैन्यदल का चौथाई भाग जो साठ हजार की संख्या वाला था का चौथाई भाग सैन्य शिविर के चारों ओर पहरा देने के लिए सेनापति सिंहदेव झाला के साथ चक्कर काट रहा था। सावधानी के लिए वे जाग कर पहरा दे रहे थे।

जिण झालै बळ जोर जंग आहणि जाड़ेचां।
पुहवि कच्छ पंचाळ गंजि लीधी पटु पेचां।
अधिप भीम रै अग्ग बिजय कीधा कई बारां।
भड़ सात्रव घण भेटि किया धड़ पार कटारां।

उण सिंहदेव रण अग्रणी लै बळ साथ चउत्थ लव।
गरदाय सिबिर दीधो गरट जामिकपण लीधो सजव॥३४॥

जिस सेनापति सिंहदेव झाला ने अपने बल पर युद्ध में जाड़ेचों को मारा और कच्छ सहित पंजाब की भूमि को भी लड़ाई में अपने दाँव पेच दिखा कर हथियाया था। उसने अपने स्वामी चालुक्यराज भीम के साथ कई युद्धों में विजय पाई थी और उस योद्धा ने अपने कई शत्रु वीरों के धड़ों को अपनी कटार से बींध डाला था। सिंहदेव झाला जो युद्ध में सदा अग्रणी रहने वाला था ने अपने सैन्य दल के चतुर्थांश को साथ ले रखा था। उसने अपने इस जंगी शिविर के चारों ओर शीघ्र ही चक्कर लगाया और शानदार प्रहरी की अपनी भूमिका को सार्थक किया।

सचरणगद्यम्

तिण समय चंद्रमा रै चोतरफ परिवेस रै प्रमाण झालै सिंहदेव साठि हजार सेना सूं स्वकीय स्वामी रा सिबिर रै छबीनां रो चक्र चलायो।

अर पृथ्वीराज रा बीरां अचाणक काछी मिलाय ऊंघाणों बीररस तत्काळ जगायो।

गंगा री सहस्त्र धारा रे समान केही धाराधरां री ऊजळी धारा कंकटां रा कदम्ब मैं कढण लागी।

जठै स्याम धाराधर री लहर लेती संपा रा सळांवां री सोभा चढण लागी॥३५॥

इस समय चन्द्रमा के चारों ओर बने कुण्डलाकार घेरे की तरह झाला सिंहदेव ने सिपाहियों सहित अपने स्वामी चालुक्यराज के शिविर के छबीना (रात्रि के समय सेना के चारों ओर घूम कर पहरा देने वाले योद्धाओं को छबीना कहा जाता है) ने चक्कर पूरा किया ही था कि तभी कुमार पृथ्वीराज के वीर योद्धाओं ने अचानक अपने घोड़े झोंक कर (ऊंघते) सोये हुए वीर रस को तत्काल जागृत किया। गंगा नदी की हजारों धाराओं की माफिक कई तलवारों की चमकती धारें शत्रुओं के कवच समूहों से पार निकलने लगीं। यहाँ अभी इन तलवारों को केवल श्याम रंग के मेघों में सलावा भरती (सिहरती) बिजली की उपमा लगने लगी।

नागणी लेती तोप रै अभिमुख थकावै जिण तरह काळेजा करां मैं लीधा प्राणां रो दुर्भिक्ष पटकता चहुवाण रा सामंत बीच हुवा।

अर सस्त्रां रै संपात जीवां री यात्रा र माथां रा व्यापार मंडिया जुवा जुवा।

झालो सिंहदेव तो प्रथम अणी मैं ही लोहछक होय प्राणां रा पोखण मैं लुभायो थको प्रमदा रो पाहुणों अपूठो खड़ियो।

अर कंठीरव कन्ह चालुक्यराज रै विजय रो संकल्प बधावतो। निस्संक थको एक मुहूर्त्त लड़ियो ॥३६॥

चलती हुई तोपों (गोले उगलती तोपों) के सम्मुख जाएँ उस तरह अपने अपने कलेजे मानों हाथों में ले कर अर्थात् मृत्यु का भय छोड़ कर शत्रु दल में प्राणों का अकाल पटकते चहुवान के सामंत शत्रु सेना के मध्य घुसे और अपने शस्त्रों के प्रहारों से जीवों को परमधाम की यात्रा कराने लगे। उन्होंने अलग-अलग स्थान पर मानों काटे हुए मस्तकों की मंडी लगाई हो। अचानक हुए इस अप्रत्याशित हमले में पहले ही प्रहार से सेनापति सिंह देव झाला घायल हो, स्वयं के प्राणों के पोषण का लोभ कर अपनी स्त्री का मेहमान हो कर उल्टी दिशा में अपना घोड़ा बढ़ा कर भागा। चालुक्यराज भीम की विजय के संकल्प हेतु (संकल्प को पूरा होने में सहायता करता) कंठीरव (सिंह) कन्ह निडर हो कर पूरी दो घड़ी तक लड़ता रहा।

सामंतां रो बेग कण्ठीरव झेलियो जिण अन्तराय मैं चालुक्यराज सावधान थियो।

इतै चामुण्डराज कंठीरव कन्ह नूं देवलोक रा भोग रो अधिकारी कियो।

प्रामार जैतकुमर जनक री आण रै अनुसार इच्छणी रै एवज उर्वसी देण आयो।

चालुक्यराज रा एक भाई दोय पुत्र मारि गुजरात कटक मैं कलकल मचायो ॥३७॥

इधर चहुवान योद्धाओं के प्रहारों को वह शेर (कन्ह) झेल रहा था उसी समय सोलंकी राजा भीम निद्रा त्याग कर सावधान हुआ। इतने में

चहुवान चामुण्डराज ने शेर योद्धा कन्ह को स्वर्गलोक के भोग का अधिकारी बनाया अर्थात् मार डाला। पिता की आज्ञा ले कर प्रमार कुमार जैत भी जो राजा भीम को ईक्षणी की एवज में उर्वशी देने आया (अर्थात् मारने आया क्योंकि अप्सरा उर्वशी तो स्वर्ग लोक में रहती है) था उसने चालुक्यराज भीम के एक भाई और दो पुत्रों को मार गिराया और गुजरात की सेना में खलबली मचा दी।

राठौड़ निडरराज गुजरात रो कंवाड़ गोहिल पारम्भदेव हणियो।

जठै गजारूढ चालुक्यराज सामुहो धकाय अळाव धकता लोयण मिळाय आपरा पखरैतां नूं प्रेरण रै काज अनेक प्रसंसा रा प्रपञ्च भणियो।

जठै जादवराम रै संबंधी भ्राता जाजदेव रा किवाण करि चालुक्यराज रा गज रो सुंडादंड वाहित्थदेस सूं बिछूटि झड़ियो।

अर गुजरात रो अधीस विकळ थको परीवार सूं चन्द्रहास लेतो ही आगै आय पड़ियो ॥३८॥

उधर गुजरात का कपाट कहलाने वाले प्रबल रक्षक राठौड़ वीर निडरराज ने गोहिल पारंभदेव को मार डाला। वहीं हाथी पर सवार चालुक्यराज कुम्हार के अलाव की तरह अपने धधकते लोचन मिलाते हुए अपने योद्धाओं को युद्ध में जूझने की प्रेरणा देने की गरज से उनकी तरह-तरह से प्रशंसा करने लगा। इसी समय राम यादव के रिश्ते में लगते भाई जाजदेव यादव की तलवार चली सो सीधी चालुक्यराज के हाथी की सूंड को कुंभस्थल के पास से काटते (पीतवान की जगह से) हुई निकल गई। गज पर आरूढ़ म्यान से अपनी तलवार निकालता हुआ चालुक्यराज उस कटी हुई सूंड के साथ ही जमीन पर आ गिरा।

तो भी तत्काळ ही ऊठि बाहण बिहूणों भी नाक री नारियां रा झुण्ड झुकावतो निस्संक जूटियो।

जठै अमाप आघात पड़तां चंद पुण्डीर री गदा रै लागि भीम रो करवाळ तूटियो।

कटार लेतां हीं मंत्री कैमास चालुक्यराज नूं जाय पकड़ियो।

अर कांख रै अन्तर उंचाय पाछो हालण रो प्रबंध घड़ियो॥३९॥

पर राजा भीम तत्काल ही उठ खड़ा हुआ और वाहन विहीन होते हुए भी स्वर्ग की अप्सराओं के झुण्ड को नीचे की ओर जमीं पर उतारता निशंक युद्ध करने लगा। वहाँ दोनों ओर से आघातों की झड़ी लग गई कि इसी बीच चंद पुंडीर की गदा के वार से चालुक्यराज के हाथ से खड्ग टूट कर गिर पड़ा। इस पर राजा भीम अपनी कटार निकालने को उद्यत हुआ कि तभी कैमास ने दौड़ कर चालुक्यराज को पकड़ लिया और फिर वह राजा को अपनी कांख में दबा कर चलने को हुआ।

दोहा

देखि जेर सळखादिकां, कहियो चालुक काज।
किण बळ रहतो दर्पकरि, इण बळ तळ खल आज ॥४० ॥

सोलंकी राजा को इस प्रकार कैमास की कांख में जकड़ा देख कर प्रमार सलख आदि वीर बोले कि हे चालुक्यराज! अब बोल! किस बल के आधार पर इतना दर्प पाले था? तेरा बल तो बस इतना है कि अभी तू अपने शत्रु की कांख के नीचे दबा हुआ है।

सचरणगद्यम्

या सुणतां ही लोहछक होय पड़िये थकै ही मलप लेर चालुक्य हम्मीर कैमास री कांख मैं चंपिया आपरा स्वामी नूं झाटकियो।

इण अन्तर तो राजा नूं गहियो जाणतां ही डाभी वीरमदेव सोढ सारंगदेव देवड़ै देव बढैल बीरदेव प्रामार सिंहदेव गाजी नृसिंह इत्यादिक बीरां भी आय सहाय दियो।

जठै चामुण्डराज रा खड्ग रा आघात करि बाजी समेत गाजी नृसिंह आजी अंगण मैं खण्ड खण्ड होय ढळियो।

जरैं गजारूढ प्रामार सिंह उरग असि चलाय आपरा सुरंग होदा रै बरब्बर कढतो दाहिमां रो तुरंग दळियो ॥४१ ॥

प्रमार राजा सलख के इस उलाहने के बोलों को सुन कर पास ही घायल हो कर पड़े चालुक्य हम्मीर ने अपनी ठौर से उछल कर कैमास की बगल में दबे अपने स्वामी को छुड़ाने के लिए पूरे करार से खींच लिया। इसी बीच यह समाचार सुनते ही कि चालुक्यराज को पकड़ लिया गया। डाभी

बीरमदेव, सोढा सारंगदेव, देवड़ा देव, बढैल वीरदेव, प्रमार सिंहदेव और गाजी (वीर) नृसिंह आदि भी दौड़ कर वहाँ अपने स्वामी की सहायता को पहुँचे कि इतने में चामुंडराज चहुवान की तलवार का एक प्रहार हुआ जिससे अपने घोड़े सहित गाजी नृसिंह रणभूमि में टुकड़े-टुकड़े हो कर गिर पड़ा। इसी बीच हाथी पर सवार प्रमार सिंह देव ने अपनी नागिन जैसी तलवार चला कर अपने सुरंगे (हाथी के) होदे के पास से गुजरते वीर दाहिमा के घोड़े को काट डाला।

सिंह रो वार होतां ही इणरा कुम्भी रै कलावै चामुण्डराज रो चंद्रहास झड़ियो।

पछैं गजराज मस्तक समेत दाहिमो बाहण बिहूण हेठो आय पड़ियो।

जोगिणी बेताळ प्रेत डाकिणी भैरव गणां पाँचो हाथ छूटण री प्रसंसा करी।

अर सिंहदेव भी साथ ही हेठै आय खड्ग खेल्ह मचाय महाप्रलय रा समय रा महानट री आभा धरी ॥४२॥

इसके बाद चामुण्डराज के हाथ की तलवार का प्रहार इस प्रकार हुआ जिस प्रकार सिंह (शेर) अपने पंजे के प्रहार से हाथी का कुंभस्थल तोड़ डालता है। और सचमुच हाथी अपने मस्तक सहित ढेर हो गया और उसका सवार दहिया वाहन विहीन हो नीचे आ गिरा। इस भयंकर प्रहार की योगिनियों, बेतालों, प्रेतों, डायनों, भैरव आदि महादेव के गणों ने सच्चे मन से प्रशंसा की कि इस एक वार से उन सभी की उदर पूर्ति हो गई। फिर तो गिरा हुआ सिंह देव भी उठ खड़ा हुआ और उसने अपनी तलवार से प्रलय का खेल रच कर महाप्रलय के काल के महानट (महादेव) की कांति धारण की।

जठै रणरूप मद रै मतवाळै चामुण्डराज रंभादिकां नूं रिझावतो प्रामारसिंह किवाणपात देर पाड़ियो।

अर सोढे सारंगदेव चामुण्डराज रै चाचैर चंद्रहास झाड़ियो।

तिण सूं टोप रा टूक होय मस्तकरो चोथो अंस खुलियो।

अर दाहिंमां रो तोत्र लागतां हीं प्रामार सारंग रा प्राण कढण पैठण री पद्धती सूं डुलियो ॥४३॥

इसके तुरन्त बाद युद्ध रूपी मद में मतवाले चामुण्डराज ने रंभा आदि अप्सराओं को रिझाते हुए प्रमार सिंह को अपनी तलवारों के आघातों से छलनी कर रण आंगन में गिराया। इसी बीच सोढा सारंगदेव ने चामुण्डराज के मस्तक पर अपनी तलवार का जोरदार प्रहार किया जिससे उसका सिर स्त्राण (माथे का टोप) कट कर उसके मस्तक का चतुर्थांश कट पड़ा। इधर वीर दाहिमा के भाले का भरपूर प्रहार लगते ही प्रमार सारंग के प्राण श्वास निश्वास का मार्ग भूल गए अर्थात् वह मर गया।

बढैल बीरदेव नूं मारि तिणरै तुरंग चामुंड चढियो।

अर बेताळ बीरां जठी तठी जयकार पढियो।

जठै प्रतिहार सिंह चामुण्डराज सों कहियो गज बाजि री पीठि न लेण पावै तिण पहली ही चालुक्यराज रा प्राणां रो उपहार कुमार पृथ्वीराज रै भेट करणों म्हारा विचार मैं ठीक जाणियो।

जिको सुणि सांखुळै बीरमदेव आपरा स्वामि नूं पयादो जाणि चामुंडराज सिंहदेव प्रमुख सामंतां रो समूह रोकण रै काज आडा आय बाजी रा बेग रो चक्रवाळ ताणियो ।।४४।।

इधर बढैल वीरदेव को मार कर उसके घोड़े पर चामुण्डराज सवार हुआ। यह देख कर बेतालों और प्रेतों ने उसकी जयकार की किलकारी दी। वहाँ प्रतिहार सिंह ने चामुण्डराज से कहा कि किसी हाथी अथवा घोड़े की पीठ उसे वाहनरूप उपलब्ध हो उससे पहले ही चालुक्यराज भीम के प्राणों का उपहार मैंने कुमार पृथ्वीराज को देने की ठानी थी। जब प्रतिहार यह कह रहा था उसी समय उसके बोलों को सुन कर सांखला वीरमदेव ने अपने स्वामी को वाहन विहीन पैदल जान कर उसकी रक्षार्थ इन योद्धाओं चामुण्डराज और सिंहदेव आदि प्रमुख सामन्तों के समूह को उधर बढ़ने से रोकने के सबब अपने घोड़े से शीघ्र ही उन्हें घेर कर उनके समक्ष बाधा उपस्थित कर दी।

जठै सिंह प्रतिहार आपरा तुरंग नूं उडाय प्रामार बीरमदेव रा तुरंग रै सम्मुख आयो।

अर दो ही बीरां आप आपरो स्वामिधर्म ऊजळो दिखायो।

दो ही सामंतां रा सस्त्रा रा संपात सों दो ही तुरंगा रा सीस झड़िया अर उच्छाह रै अनुसार भाला नूं भमाय सौदामिणी रा सा सळाव देता

अति ही समीप आय अड़िया ।।४५ ।।

पर सिंह देव प्रतिहार अपने घोड़े को बढ़ा कर प्रमार वीरमदेव के घोड़े के सम्मुख पहुँचा फिर तो दोनों वीर योद्धाओं ने घमासान युद्ध कर अपने-अपने स्वामीधर्म को उज्ज्वल किया। दोनों सामन्त योद्धाओं की तलवारों के प्रहारों से दोनों पक्षों के घोड़ों के मस्तक कट कर गिरे अर्थात् सर्वप्रथम उन दोनों ने एक दूजे के घोड़ों का काम तमाम किया फिर दोनों ने वाहन विहीन होते ही अपने-अपने भाले संभाले और उन्हें तड़ित विद्युत की तरह सलावा भरवाते (चमकाते हुए) एक दूसरे के आमने-सामने करीब आ कर लड़ने लगे।

दो ही बीरां रा तोत्र दो ही तरफ रा कंकटां नूं काटि पुद्‌गलां मैं पैठि तूटिया।

जरैं दो ही सामंतां रा अहंकार रै उफाण भद्रकाळी रा कटाक्ष रै अनुकार चंद्रहासां रा संपात छूटिया।

तोमरां री तरह तरवारि तूटितां ही दो ही जुज्झारां परिवारां बिहूण करि कृतांत री दाढां रो तिरस्कार करता कटार झालिया।

अर रण रा गळियार रोस मैं रजोगुण रै रूप हुवा थका सिंहनाद रै साथ दाकालिया ।।४६ ।।

अंततः दोनों वीरों के वे दोनों भाले एक दूजे के कवच तोड़ते एक दूसरे के शरीर में घुस कर ही टूटे। तब जा कर कहीं बमुश्किल तमाम दोनों ही सामन्तों के अहंकार के उफान से भद्रकाली के कटाक्ष का अनुकरण करने वाले उनके खड्‌ग प्रहार होने लगे पर अन्त में भालों की तरह ही दोनों के खडग टूट कर गिरे। तब दोनों ने चमचमाती हुई कटारों, कटारें कि जो साक्षात यमराज की दाढों को भी पीछे छोड़े, को अपनी-अपनी म्यानों से खींच कर हाथ में पकड़ीं और युद्ध के क्रोध रूपी दलदल में फँसे दोनों वीरों ने सिंहनाद करते हुए ललकार की।

इण अंतर मैं ताजी तुरंग आरूढ होय कातरां रा संकल्प रै साथ सत्तरि सहस्त्र ग्रामां रो अधीस चालुक्यराज भीम मरुदेस रै समान अपूठो अणिहलपुर री तरफ खड़ियो।

जठै संगर रो भार आपरै माथै ओडि गुर्जरधरा रो कपाट होय

आपरा बारह सै बानैंतां समेत काठी कृष्णदेव चंद्रहासां रा चोड़ा बाढ चखावण रै काज पृथ्वीराज रा बीरां रै थोभ लगाय लड़ियो जिकण रो सीस महेस रो मनोरथ मोघ करि अनेक धाराधरां री धारा मांहीं लागि लीन थियो।

अर आपरा स्वामी चालुक्यराज भीम नूं प्राण बचावण रै काज अभीष्ट आगार जावण रो अवकास दियो।।४७।।

इसी बीच ताजिक देश में जन्मे नसलदार घोड़े पर सवार हो कर कायरों जैसे संकल्प (विचार) के साथ, सत्तर हजार गाँवों का स्वामी चालुक्यराज भीम ने मारवाड़ देश जैसा हो कर (अर्थात् बेआब, पराक्रम रहित) उल्टे पाँवों अणिहलपुर की ओर अपना घोड़ा बढ़ाया। पीछे से पूरे युद्ध का भार अपने कंधों पर ओढ़ कर वीर कृष्णदेव गुजरात का कपाट रूप हो अपने बारह सौ बानेतों (प्रण ले कर लड़ने वाले वीरों) के साथ रण भूमि में अपनी तलवारों से गहरे घावों का स्वाद चखाने के लिए पृथ्वीराज के योद्धाओं को रोक कर लड़ा जिसका मस्तक महेश (महादेव की अपने मुंडमाल में गुंथे जाने की इच्छा) के मनोरथ को व्यर्थ कर अनेक खड्ग प्रहारों से रज-रज होता सूक्ष्म बन कर तलवार की धारों से चिपक कर रह गया पर उसने अपने स्वामी चालुक्यराज भीम के प्राणों की रक्षा कर उन्हें अपने वांछित प्यारे घर तक जाने का अवकाश प्रदान किया।

जिण झकट मैं जुज्झार होय एक अयुत तीन हजार सेना रै साथ अजमेर रा अनीक मैं सामंतां रो दसक खेत पड़ियो।

बिद्रावण रै समय चालुक्यराज भीम सूं चहुवाण कन्ह कहियो।

सातूं हीं भायां रो बैर वाळण रो संकल्प होय तो इण संगर सिवाय बळे किसड़ो अनेह आवै छै।

अर प्रामारां रा बैर माथै अब चाहुवाणां रो चक्र अर्बुदाचळ री सरणीधरै समुख पाथरो ही थकावै छै।।४८।।

इस भीषण युद्ध में जुझार (शहीद) हो तेरह हजार की संख्या वाली सेना के साथ अजमेर की फौज में दस सामन्तों का समूह खेत रहा अर्थात् दस सामन्त योद्धा मारे गए। युद्ध से विमुख हो कर भागते हुए चालुक्यराज भीम से चहुवान कन्ह ने कहा कि अजमेर में मारे गए सातों ही भाइयों का यदि वैर

लेना है तो इस युद्ध के अतिरिक्त आप और कहाँ उचित मौका और समय पाएँगे। फिर कब अवसर मिलेगा? रही बात प्रमारों के बैर की तो उसके लिए चहुवान सेना अब अर्बुदाचल के रास्ते यहीं से सीधी प्रस्थान करेगी।

भूखा केहरी रो केहर खीजिया नागराज रो मणि माडांणी झाटकि लेण रो बळ होय तो म्हांरा प्रस्थान रो राह रोकण री सलाह छै।

अर आज रा समय मैं गुजरात रूपी काचा कळस रै सीस चाहुवाणां रा समुद्र रो सीमा लोपियो प्रबाह छै।

इसड़ा कन्ह रा बचन गिरिनारी नाग रै समान श्रवण मैं पड़िया तिकां सू काळो होतो तो पाछो पलटण री जेज करतो नहीं।

अर अणिहलपुर बंबी मैं पाधरो ही जाय पैठण रो संकल्प धरतो नहीं ॥४९ ॥

भूखे सिंह के अयाल के बाल (सटा) और खीजे हुए सर्प की मणि को जबरन झपट लेने का साहस और शक्ति हो तो आपको हमारी सेना का प्रयाण रोकने की सलाह है अर्थात् हमारे बढ़ते दल को रोक कर देखें। और आज के समय में गुजरात रूपी कच्ची माटी के घड़े जैसे सिर पर लो अब चहुवान का समुद्र अपनी सीमा तोड़ने को उतावला है। इसका प्रवाह अवरुद्ध करने योग्य नहीं। कन्ह चहुवान के ऐसे कड़वे वचन गिरनारी राग के समान चालुक्यराज रूपी सर्प के कानों में पड़े। इस समय यदि काले रंग का भुजंग होता तो यह सुनते ही वापस पलटने में क्षण भर का समय भी नहीं लगाता और अपनी अनिहलपुर नामक बांबी में सीधा जा घुसने का विचार मन में नहीं आने देता।

परंतु इसड़ा राग रा रिझवार अलगर्द विलेसय तो कठै न जाणिया।

इणरीति प्रामारां रा सहाय काज सोझति रा खेत मैं जय रा दुंदुभी घुराय पृथ्वीराज रा बीरां भूंहा रै भेड़ै मासु री लोम आणिया।

चालुक्य रो रखत रहियो जिको सो समस्त ही रंकां रै कनैं लुटवाय लीधो।

अर दो ही तरफ रा घायल भड़ां रा उपनाह आदिक उपचार रै निमित्त खेत खोजण रो प्रारंभ कीधो ॥५० ॥

[१] जुभाग सुभाग्र अन्त्यानुप्रास।

परन्तु ऐसे राग के रिझवार बिना विष वाले (जल में रहने वाले सर्प) सर्पों को तो कहीं कभी नहीं सुना अर्थात् एक मात्र काले सर्प ही ऐसे राग पर रीझने वाले होते हैं अन्य सर्प नहीं। इस प्रकार प्रमारों की सहायता करने के कार्य हेतु सोजत की रणभूमि में विजय की दुंदुभी बजवा कर पृथ्वीराज के वीरों ने अपनी भोहों से मूँछों के केश मिलाये अर्थात् गर्व से वे फूले नहीं समाये। चालुक्यराज की सेना के पीछे छूटे सामान को चहुवानों ने गरीबों में बँटवा दिया और दोनों पक्षों के घायल योद्धाओं की मरहम-पट्टी आदि उपचार के लिए रणक्षेत्र में घायलों को ढूँढ़ना आरंभ किया।

प्रतिहार महणसिंह महीराज हाडो अखैराज प्रामार जैत चालुक्य सारंग चहुवाण पंचायण भाटी महणसिंह दहियो जंगळराज जादव जयसिंह बडगूजरकनकसिंह ए दस पृथ्वीराज रा सामंत घायल हुवा जिकां नूं बडा जतन रा सहाय रै साथ अजमेर भेजिया।

अर मोहिल नवलसिंह चोहत्थ सहदेव सोनिंग देव डाभी गंगदेव चाचिक बसुदेव प्रामार रामदेव सांखुलो बीरमदेव इत्यादिक चालुक्यराज रा सूरबीर लोह छक होय घूंमता लाधा जिकां रै उपनाह कराय नृजान आरूढ अणिहलपुर बिदा किया।

अर अवसेस सारा ही सामंत प्रामारराज सळख रै साथ अर्बुदा चळ रै ऊपर चलाया।

अर आतंक री अवाई सूं जठी तठी रा गढां रा कंवाड़ां रै माथै जंजीरा घलाया।।५१।।

घायलों की खोज में प्रतिहार महणसिंह और महीराज, हाडा अखैराज, प्रमार जैत, चालुक्य सारंग, चहुवान पंचायण, भाटी महण, दहिया जंगलराज, यादव जयसिंह, बडगूजर कनकसिंह इन दसों ही कुमार पृथ्वीराज चहुवान के योद्धाओं को घायल पाया जिन्हें पूरे यत्न के साथ अजमेर उपचार के लिए भेजा गया। उधर मोहिल नवलसिंह, चोहत्थ सहदेव, सोनिंग देव, डाभी गंगदेव, चाचिक वासुदेव, प्रमार रामदेव, सांखला रामदेव इत्यादि चालुक्यराज भीम के पक्ष वाले घावों से पस्त युद्धभूमि में मिले जिनके मरहम पट्टी आदि उपचार करने के बाद पालकियों में बिठा कर अनिहलपुर के लिए विदा किया गया। इनके अतिरिक्त सारे चहुवान योद्धा सामन्त प्रमार राज सलख के

साथ अर्बुदाचल के ऊपर चढ़ाई करने के लिए रवाना हुए और आतंक की खबर से इधर-उधर के दुर्गों के कपाट जंजीर डाल कर बंद करवाए गए।

इतिश्री वंशभास्करे महाचम्पूके पूर्वायणे चतुर्थ राशौ वीतिहोत्र-चण्डासिबंशबर्णनान्तर्गतडिड्डुरबंशबिरोचनशाकम्भरेशपृथ्वीराज चरित्रे सचिवचतुष्क ससहायचालुक्यराजभीमपारकर बम्भणवास ठट्ठा ऽऽदिबलिग्रहणसूचनप्रामारराट्स लक्षकन्येक्षणीसौन्दर्यश्रवणतद्याचितुकामभीमसवर्णदूतटीलाख्यप्रधानप्रेषणप्राप्तार्बुदप्रधानस्वामिपत्रप्रामारार्थनिवेदनसलक्षतद्वाचनश्रुतैतदुदन्ताऽनङ्गीकृतस्वस्त्रुपयामकुमारजैततिरस्कृतटीलाख्यप्रधाननिष्कासन सुभटदत्तदुर्गभारपृथ्वीराजार्थकन्याबिबाहितुकाम सकुटुम्बसलक्षनागोरपुरागमनतदजमेरद्रङ्गपत्रप्रेषणस्वीकृतबिबाहपृथ्वीराजस्वमन्त्रिकैमाससार्थश्वशुरसलक्षार्थगज हय देस दुर्ग शासन-प्रस्थापनश्रुताऽदोवृत्तान्तससैन्यभीमाऽर्बुददुर्गवेष्टन छद्मोपायसहायचालुक्यज्ञातसमरासाध्यदुर्गान्तः प्रविशनक्षेमकर्ण खंगार मथनसिंह गोविन्दराज त्रिलोचना ऽऽदिसस्त्रीकदुर्गरक्षकधारातीर्थमरण कतिदिनोषितदुर्गन्यस्तस्वविश्वस्तबीरस्वपुरागतयवनेशाऽनुनिनीषुचालुक्यभीममङ्कुवाणसारङ्गजनवीप्रेषण वाक्कलहरुष्टयवनेन्द्रतन्मारणश्रुतैतद्भीमप्रत्यन्तपतिपातनप्रतिज्ञानतत्सन्धाकोपितसमुत्तीर्णकरतोयादूर्द्धरचमूकगजनवीशसारूडाख्यनिवसथपरिसरनिपतनकुमारिकाक्षेत्रतत्रासप्रसरणम्लेच्छत्रस्तप्रतिहारनाहरराजप्रत्यन्तेन्द्रशरणगमन श्रुतैतच्छुध्यतीपुरन्यस्तशिबिरवृहद्वरूथचालुक्यभीमम्लेच्छमहीन्द्राऽभिगमनप्रतीक्षणसलक्ष कैमास मन्त्रस्वीकरण-समाकरण-तद्द्विषद्द्वया ऽभिप्रस्थानकुमारपृथ्वीराजचालुक्येन्द्र यवेन्द्र पराजयनिमित्तसामन्तप्रस्थापनज्ञापितकैमाससज्जीकृतनागपुरदुर्गसहायीकृतसपरिकरसलक्षरात्रिबाधपिपातयिषुतद्भटयूथचालुक्यसैन्यसमाभिसरणचालुक्यराजज्ञाताऽल्पबलकैमासनियमननिमित्तसुभटसाहयस्वमन्त्रिजैनाऽमरसिंहनागपुर बिसर्जन।

श्री वंशभास्कर महाचम्पू के पूर्वायण की चौथी राशि में अग्निवंशी चहुवान वंशवर्णन के भीतर डिड्डुरवंश के विरोचन (सूर्य) सांभर के पति पृथ्वीराज के चरित्र में चारों सचिवों की सहायता से सोलंकी राजा भीम का पारकर वंभणवास-ठट्ठा आदि से कर लेने की सूचना, पंवार राजा सलख की कन्या ईक्षणी की सुन्दरता सुनकर उसको याचना के लिये भीम का पत्र

सहित टीला नामक प्रधान को भेजना, आबू जाकर टीला प्रधान का अपने स्वामी का पत्र प्रमार के भेट करना, उस पत्र को सलख का पढ़ना, और उस टीला का वृत्तान्त सुनकर बहिन का विवाह अस्वीकार कर जैत कुमार द्वारा अनादर किये हुए टीला नामक प्रधान का निकाला जाना, गढ का भार उमरावों को देकर पृथ्वीराज को कन्या विवाहने की कामना से कुटुंब सहित सलख पंवार का नागोर पुर आना, उसका अजमेर पत्र भेजना, विवाह को स्वीकार करके पृथ्वीराज का अपने मंत्री कैमास के साथ अपने श्वसुर सलख के अर्थ पाँच हाथी सौ घोड़े देश और गढ पर आज्ञा स्थापना करना, वृत्तांत सुनकर भीम का सेना सहित आबू गढ़ का घेरना, युद्ध से गढ का लेना असाध्य जानकर छलघात से सोलंकी भीम को गढ़ में प्रवेश करना, क्षेमकरण खंगार मथनसिंह गोविन्दसिंह त्रिलोचन आदिक गढ़ के रक्षकों का स्त्रियों के साथ युद्ध में मरना, कितने दिन गढ़ में रहकर अपने विश्वासपात्र वीरों को रखकर अपने पुर में आये हुए बादशाह को चढ़ा लाने की इच्छा से अप्रसन्न होकर बादशाह का सारंगदेव को मरवा डालना, यह सुनकर भीम का बादशाह के प्रति तिरस्कार करना, उस भीम की प्रतिज्ञा जानने पर कुपित होकर और बलवान् सेना को अटक के पार उतारकर बादशाह का सारूड़ा नामक ग्राम के नजदीक मुकाम करना, हिन्दुस्तान में भय फैलाना, यवनों से भयभीत होकर प्रतिहार नाहरराज का बादशाह की शरण जाना, यह सुनकर सोजत में सेना का मुकाम कर के बड़ी फौज के साथ सोलंकी भीम का बादशाह के आने की राह देखना, सलंख का कैमास की सलाह को स्वीकार करना, सुनकर उनके देशों में दोनों का पीछा जाना, कुमार पृथ्वीराज का सोलंकियों के इन्द्र और बादशाह की पराजय के वास्ते उमरावों के स्थापन करने को बताना, कैमास का सज्जीभूत होकर नागोर के गढ की सहायता करना, परगह सहित सलख का रतिवाह पटकना, उसके वीरों के समूह सहित चालुक्य की सेना का पीछा हटना, चालुक्यराज की थोड़ी सेना जानकर कैमास को पकड़ने के लिए अपने वीरों की सहायता के लिए अपने मंत्री जैन अमरसिंह को नागोर भेजना।

ज्ञातश्रावककपटदत्तनिशीथप्रपातवशीकृताऽरिविभवविद्रावित-द्वैरिवृन्दनागपुरदुर्गन्यस्तविश्वस्तरक्षकचामुण्डराज देवराज याज रामदेव गोविन्दराज लङ्गरिराज अक्खयराजो पेतनिर्गतदाधिमराज पूर्बप्रस्थित-

सामन्तसम्मिलनबिदितैतदुदन्ताऽजमेरस्थकुमारपृथ्वीराजपुनपितृव्या-दिसामन्तसङ्घप्रस्थापनतत्पूर्बप्रस्थितसम्मिलनदृढैक्यमतसर्वसामन्त-बुद्ध्यतीपुरपरिस्थचालुक्यचमूपरिरात्रिबाधप्रपातन चक्रयामिक झल्ल-सिंहदेवपलायनप्रबुद्धभीमयुद्धप्रारम्भण चामुण्डराज कण्ठीरवकृष्ण निपातनजैतकुमार भीमसोदर पुत्र त्रय निषूदननिर्दरराज प्रारम्भदेव निर्दलनयाज चालुक्यमारीचशुण्डादण्ड बिकर्त्तनसमात्तखड्गपत्तभूतभी-मयथातथयोधनपुण्डीरचन्द्र गदाऽऽघातचालुक्यचन्द्रहास त्रोटन कैमास चालुक्य कक्षान्तरनियमनसलक्ष तत्कर्ण कटुबर्णश्रावण मूर्छितपतितो-त्थितचालुक्यहम्मीर दाधिमकक्षाकीलितस्वामि मोचनचामुण्डराज सवाजिनृसिंह निर्वहणसिंहदेव चामुण्डराजाबाजिविशसनचामुण्डराज सवारणसिंहदेव व्यापादनसारङ्गदेव प्रेरितकृपाणबिभिन्नसशीर्षण्यमूर्द्ध-बिभाग।

उस श्रावक का वैभव अपने अधीन करना, और उनके शत्रु समूह को नागोर के गढ में स्थापित करना, और विश्वास लिये हुए रक्षक चामुंडराज, देवराज, याज, रामदेव, गोयिंदराज, लंगरीराज, अक्षयराज सहित निकले हुए दाधिमराज का पूर्व से प्रस्थान करके सामन्तों से मिलना, इस वृत्तान्त के जानने से अजमेर में स्थित कुमार पृथ्वीराज का काका आदि सामन्तों के समूह का प्रस्थापन करना, उनसे पहले प्रस्थान किये हुए सामंतों से मिलना, और सब सामंत एक दृढमत होकर बुध्यतिपुर पड़ी हुई चालुक्य की सेना पर रतिवाह पटकना, छबीना लगाने वाले सिंहदेव झाला का भागना, जग कर सोलंकी भीम का युद्ध प्रारंभ करना, चामुंडराज का कंठीरव कृष्ण को मारना, जैतकुमार का भीम के छोटे भाई को दो पुत्रों सहित मारना, निडरराज का प्रारंभदेव को दलना, याज का सोलंकी भीम के सवारी के हाथी के सुंडादंड को काटना, शोभा युक्त खड्ग को ग्रहण करके भीम का यथातथ (जैसा चाहिये वैसा) युद्ध करना, पुंडीरचन्द्र का गदा की चोट से चालुक्य भीम का खड्ग तोड़ना, कैमास का चालुक्य को कांख के भीतर रख लेना, भीम के कानों में सलख का कटु वचन सुनाना, मूर्छित पड़े हुए सोलंकी हम्मीर का उठकर दाहिमा कैमास की कांख से कैद हुए अपने स्वामी को छुडाना, चामुंडराज का घोड़े सहित नृसिंह को मारना, और सिंहदेव का चामुंडराज के घोड़े का नाश करना, चामुंडराज का हाथी सहित सिंहदेव को मारना, सारंगदेव के प्रेरित किये हुए खड्ग से केशों सहित मस्तक काटना।

चामुण्डराज तत्प्रामार प्राणप्रस्थापनविध्वस्तवीरदेववाजि चामुण्डराजाऽऽरोहणप्रतिहारमन्त्र दाधिममनोमनन प्रामारबीरमदेव चालुक्यसहायीभवन सिंहदेव बीरमदेव परस्परसप्ति संहरणत्रुटितततोत्रत-रवारिप्रतिहार प्रामार कट्टारादि कलहकरणचालुक्यभट्टकण्ठुपटङ्कि-कृष्णदेव पृथ्वीराज सैन्यस्तम्भनप्राप्ततदवसरचालुक्यराजपलायनचाहु-वाणकृष्ण बिद्रुतवैरि जुगुप्सन पृथ्वीराजबलबिजयदुन्दुवादन पक्षद्वय षोडशसहस्त्र सैन्यसंहरणयथाक्रमोभय पक्षप्रचुरप्रहारप्रभिन्नपतितसो-पनाहाद्युपचारसक्षतसामन्तदशक सप्तक प्रभृतिसुभटस्वस्थानप्रस्थापन-सपरिकरप्रमारसलक्षसहिताऽवशेषकृष्णादिसमस्तपृथ्वीराजसामन्ताऽर्बुद-दुर्ग्गबिजयार्थप्रस्थानं षोडशो मयूखः ॥१६॥ आदितः पञ्चविंशोत्त-रशततमः ॥१२५॥

चामुंडराज का उस पंवार को मारना, मरे हुए वीरदेव के घोड़े पर चामुंडराज का चढ़ना, प्रतिहार और दाहिमा का मन में सलाह करना, प्रमार बीरमदेव का सोलंकी भीम की सहायता करना, सिंहदेव और वीरमदेव का परस्पर घोड़ों को मारना और भाले तलवारें टूट जाने पर कटार आदि से युद्ध करना, सोलंकी के उमराव कंठीरव पदवी को धारण करने वाले कृष्णदेव का पृथ्वीराज की सेना को रोकना, उस समय अवसर पाकर सोलंकी राजा भीम का भागना और कन्ह चहुवान का भागे हुए शत्रुओं की निंदा करना, पृथ्वीराज की फौज का विजय के नगारे बजाना, दोनों पक्ष की सौलह हजार सेना का नाश होना, यथाक्रम से दोनों पक्ष के बहुत प्रहारों से कटकर पड़े हुओं का इलाज करवाना और घावों सहित दश सामंत चहुवानों के साथ सामंत सोलंकियों आदि सुभटों को अपने अपने घरों को भेजना, परिग्रह के साथ प्रमार सहित बाकी रहे जो कन्ह आदि उन सब पृथ्वीराज के सामंतों का आबू गढ विजय करने के गमन का सौलहवाँ मयूख समाप्त हुआ। और आदि से एक सौ पच्चीस मयूख हुए।

प्रायो मरुदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

सचरणगद्यम्

इण रीति कुमार पृथ्वीराज रा सामंत चालुक्कराज भीम सूं बिजय पाय आपरा आतंक सूं गौरी जवनेस नूं भजाय प्रामार रै साथ अर्बुदाचळ

जाय तत्काळ ही अनेक अधिरोहिणी लगाय दुर्ग रै अंतर पूगा जिका राजा भीम रा सूरवीर साम्हा हुवा तिके समस्त ही चोड़ै खेत बाढिया।

अर प्रामार नूं अर्बुद रो अधीस करि बिजय रा दुंदुभी बजाय अणिहलपुर रा अनीक रा कातर दीठा तिके निरायुध दुर्ग रै बाहिर काढिया जठै प्रामारराज नागोर सूं आपरो अंतहपुर बुलाय अंगजा रा उपयम रो आरंभ करि बिबाहण रै काज अजमेर अधीस रा कुमार पृथ्वीराज नूं निमंत्रण दीधो।

जिको सुणतां हीं बीरां रा बरूथ रै साथ बडी बरात बणाय सेस सामंतां समेत संभरराज रै तनूज परिणयन रो प्रस्थान कीधो॥१॥

इस प्रकार कुमार पृथ्वीराज चहुवान के सामन्तों ने चालुक्यराज भीम को हरा कर विजय पाई तत्पश्चात् अपने आतंक से यवनेश गौरी को भगा दिया। फिर प्रमार सलख के साथ अर्बुदाचल जा कर तत्काल ही कई सीढियाँ लगा कर दुर्ग के भीतर प्रवेश लिया। वहाँ जिस किसी चालुक्यराज के सिपाही ने इनका सामना करने का प्रयत्न किया वह वहीं मारा गया। कुमार के दल ने थोड़ी ही देर में दुर्ग को फतह कर लिया और प्रमार सलख को फिर से इस राज्य का राजा बनाया। अपनी विजय की दुंदभी बजाते हुए, अनिहलपुर की सेना की कायरता देखते हुए उन्हें निशस्त्र कर दुर्ग से बाहर निकाल दिया। इसके बाद प्रमारराज सलख ने नागोर से अपने अंतःपुर को वापस आबू बुलाया। जनाने के यहाँ पहुँचने के बाद राजा ने शीघ्र ही अपनी पुत्र ईक्षणी के विवाह की तैयारियां करनी आरंभ की और शीघ्र ही अजमेर के चहुवान कुमार पृथ्वीराज को विवाह के लिए निमंत्रण भिजवाया। अजमेर में जब यह समाचार पहुँचा तो इसे सुनते ही राजा ने वीर सामन्तों को साथ ले कर बड़ी बरात बनाई फिर अपने सामन्तों सहित चहुवान राजा का पुत्र विवाह करने के लिए रवाना हुआ।

दर कूंचां अर्बुदाचळ जाय मुकाम लागतां ही दुल्लह रै काज प्रामारराज उपायन भेजियो।

जिकण मैं छ हाथी अनेक निष्क बिबिध जवाहर नानावस्त्र रो संघात निवेदन कियो।

पछै चालुक्कराज बिजयी सामन्त अर्बुदाचळ हूँता तिके कन्ह

निडरराज गोइंदराज भयहाराज कैमास चामुंडराज लोहानराज देवराज जाजदेव रामदेव महणसिंह नृसिंह तेजल सागर पंचायण दूजो महणसिंह जंगलराज चाटो आतताई बिंबाल भीम कनक लंगरीराज हाडो अखेराज इत्यादिक समस्त ही मंडप रा प्राघुणकां प्रामारराज री तरफ सूं बरात रै सिबिर जाय दुल्लह नूं मारीच चढाय अर्बुद रा दुर्ग रै तोरण पधरावियो।

अर बरात रा प्राघुणकां नूं महानस मैं बुलाय खट रस मय नाना व्यंजनां रो व्रात पूरण तृप्ति चखावियो ॥२ ॥

दर कूच दर मंजिल बरात ने जा कर अर्बुदाचल में मुकाम किया। बरात के पहुँचते ही दूल्हे पृथ्वीराज के लिए प्रमारराज ने उपहार भेजे। इन उपहारों में छह हाथी, बहुत सारी मोहरें, हीरे जवाहरात और तरह-तरह के वस्त्रों का अंबार था। इसके बाद चालुक्यराज पर विजय पाने वाले कुछ चहुवानों के सामन्त वहाँ थे जिनमें चहुवान कन्ह, निडरराज, गोइंदराज, भयहाराज, कैमास, चामुण्डराज, लोहानराज, देवराज, जाजदेव, रामदेव महणसिंह, नृसिंह, तेजल, सागर, पंचायण, महणसिंह द्वितीय, जंगलराज, चाटो, आतताई, बिंबाल, भीम, कनक, लंगरीराज और अखेराज हाडा थे। वे सभी मांडे के महंगे मेहमान आबू के दुंग के दरवाजे तोरण पर ले कर आए। फिर बारात के डेरे पर आए और दूल्हे को पाटवी हाथी पर सवार करवा कर प्रमारराज की ओर से बारात के मेहमानों को रसोईघर में बुलवा कर खटरस मय नाना प्रकार के व्यंजन परोस कर जिमाया।

नीराजन प्रमुख समस्त ही बिधान करि अर्बुद रै अधीस दुर्लभ पृथ्वीराज नूं आपरै अंतहपुर आणि बेद मंत्रां रा बिधानपूर्वक अंगजा इच्छणी परिणाय दीधी। अर गज बाजि बस्त्र जवाहर प्रमुख दायजे रो द्रव्य देर बरात नूं बिदा कीधी।

इण रीति अर्बुद रा अधीस री पुत्री रो पाणिग्रहण करि कुमार पृथ्वीराज अजमेर आवियो।

अर सामंतां में सिरोमणि जाणि जैतकुमार सहित प्रामाररराज सळख नूं आपरै कनैं राखण रै काज अजमेर बुलावियो ॥३ ॥

बड़ी-बड़ी आरतियों से बधवा (स्वागत) कर पूरे विधि-विधान पूर्वक आबू के राजा दुर्लभ दूल्हे पृथ्वीराज को अपने रनिवास में लाए। वहाँ

पूरे वैदिक मंत्रों के साथ विधान-पूर्वक अपनी कन्या ईक्षणी का पाणिग्रहण संस्कार संपन्न किया। तदुपरान्त हाथी, घोड़े, वस्त्र और जवाहरात वाला दहेज दे कर अपनी पुत्री को विदा किया। इस प्रकार आबू के राजा सलख की पुत्री ईक्षणी से विवाह कर कुमार पृथ्वीराज वापस अजमेर आया। उसने सामन्तों को शिरोमणि समझते हुए सभी को और कुमार जैत सहित उसके पिता प्रमार राज सलख को भी अपने पास रखने के लिए अजमेर बुलवाया।

कितांक सामन्त तो पृथ्वीराज जन्म रै पूर्व ही चंडासिराज सोमेस्वर रो आश्रय लेर अजमेर आय रहिया।

अर कितांक सामंत तथा बंदी चंद ए भी अब कुमार पृथ्वीराज रो विसेस सुजस सुणि अजमेर आया र आप आपरा पराक्रम रै अनुसार सारां हीं सम्भरराज रा पटा गहिया।

तीस सामंत तथा रामदेव द्विजराज यां इकतीस जणां अजमेर ही जन्म लीधो।

इण रीति सोमेस्वर री पाटराणी कमळा बीसलदेव रा वर रै अनुसार आपरा अंतहकरण रो आशय सफल कीधो ॥४॥

इनके अतिरिक्त वैसे भी देश के कोने-कोने से कुमार पृथ्वीराज के जन्म से पहले कई सामन्त राजा सोमेश्वर के आश्रय में अजमेर आ कर रहने लगे थे। कुछ सामन्त और चंद भाट आदि भी अब पृथ्वीराज का सुयश सुन कर अजमेर आए और अपने-अपने पराक्रम के अनुसार सभी ने सांभरराज के पट्टे ग्रहण किए। उपरोक्त के अलावा तीस सामन्तों और पंडित रामदेव इन इकतीस पुरुषों का तो जन्म ही अजमेर में हुआ था। इस प्रकार राजा सोमेश्वर की पटरानी कमला ने बीसलदेव द्वारा प्रदत्त वरदान के सहारे अपने मन की बात को पूरा किया।

प्रायो ब्रजदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

दोहा

कुमर जन्म पुब्बहि कतिक, पीछैं कतिक प्रबीर।
आय मिले अजमेर इम, धर जित्तन रनधीर ॥५॥

सुनि कुमार बिक्रम सरम, विजय लेन बहु बेर।
तंहं चन्दहु लाहोर तजि, आनि मिलिय अजमेर॥६॥
अतुल तीस सामंत अरु, द्विज गुरु राम उदार।
इकतीसन अजमेर इन्ह, पायउ जनन प्रकार॥७॥
सिंहवलोकन न्याय सम, बडे प्रबंधन बत्त।
न पुनरुक्त मन्नहु नृपति, आनि श्रवण अनुरत्त॥८॥
तदनंतर दूतन तहां, अक्खिय नृपहिं उदंत।
मुगल होत मेवात के, हुकम बहिर्गत हंत॥९॥
सबही जुरि एकत्र सठ, करत जु इच्छत काज।
बलि न देत दुव दुव बरस, रहत समुद्धत राज॥१०॥

कुमार पृथ्वीराज के जन्म से पहले कुछ और कुछ वीर उसके जन्म के पश्चात् अजमेर में आ गए। इस प्रकार ये सभी पृथ्वी को विजय करने वाले रणधीर अजमेर में आ इकट्ठे हुए। कुमार पृथ्वीराज की पसरती कीर्ति को सुन कर युद्ध में कई बार विजयश्री हासिल करने वाला विक्रम भी अजमेर आ रहा और इसी तरह लाहौर छोड़ कर चंद भाट भी अजमेर में आ गया। इनके अतिरिक्त तीस सामन्त और पंडित गुरु रामदेव ने तो जन्म ही अजमेर में पाया था इसलिए ये सभी तो अजमेर में थे ही। हे राजा रामसिंह! आप साहित्य के बड़े प्रबन्ध काव्यों में बरती जाने वाली सिंहावलोकन की पद्धति को जान कर इसे सुनें! और आप मुझ पर पुनरुक्ति दोष न मड़ें क्योंकि बड़े प्रबन्ध काव्यों में यही होता है। इसके बाद दूतों ने चहुवानों के दरबार में आ कर यह वृत्तान्त सुनाया कि मेवात प्रदेश में बसने वाले मुगलों (युवनों) ने अपाके हुक्म को मानना बन्द कर दिया है। उन सभी मूढ़ों ने एकता कर आपकी हुक्म अदूली करना आरंभ कर दिया है। वे अब अपनी इच्छा के अनुसार निर्णय लेने लगे हैं। वे दो-दो वर्षा तक राज्य कर नहीं देते हैं और माँगने पर राजा के आदमियों का सामना करते हैं।

पज्झटिका

सुनि यह उदंत चहुवान सोम, रसबीर आनि किय उद्धरोम।
अक्खिय निदेस सब भटन अग्ग, देखहु अनेह महिमा उदग्ग॥११॥

होवत प्रजाहु कर दैनहार, स्वस्वामि समुख समयानुसार।
दैहैं न तिन्हैं जो उचित दंड, खल तो निसंक बढिहै अखंड॥१२॥
नृपजनन सनातन दंड नीति, तिहिं बिनु करैं न जन रीति प्रीति।
प्रभु भानु असह गुन ओज पाय, सुचि असह दाहकर गुन सहाय॥१३॥
दुस्सह भुजंग गुन बिख निदान, इम असह समन गुन दंडवान।
दुस्सह समुद्र जलखार देह, अवनिप असह्य बल नीति एह॥१४॥

दूतों से मेवात का यह हाल सुन कर चहुवान राज सोमेश्वर को जोश आ गया। उनमें वीर रस का प्रादुर्भाव हुआ और उसके कारण उनके शरीर का रोम-रोम खड़ा हो गया। उन्होंने तुरन्त अपने योद्धाओं को निर्देश किया कि देखो! कैसा समय आ गया है? समय की महिमा अपार है। प्रजा को समय पर राज्य कर अदा करना चाहिए। उन्हें अपने स्वामी की अवज्ञा नहीं करनी चाहिए। यदि ऐसी परिस्थिति में हमने उन उदंडों को दंड नहीं दिया तो वे दुष्ट और अधिक निरकुंशता को अपनाएँगे। राजाओं के वंश की यह नीति सदा से रही है कि यदि वे अपनी सनातन दंड नीति को छोड़ देंगे तो प्रजाजन में भय की न्यूनता से राजा में प्रीति नहीं बढ़ेगी क्योंकि राज्य शासन के नियमानुसार भय के बिना प्रीति नहीं होती है। हे राजा रामसिंह! अपने ताप के गुण से सूर्य असह्य हैं। इसी तरह जलाने के गुण के कारण अग्नि असह्य है। सर्प अपने जहर की तासीर के कारण दु:सह है! और दंड देने की योग्यता के कारण यमराज असह्य है! जिस प्रकार खारे पानी की देह वाला होने से समुद्र दु:सह है इसी प्रकार राजा अपनी भारी सेना के कारण असह्य होता है। यही राजनीति है।

रचि भटन मंत्र इम मच्छरीक, अप्पन असंक सज्जिय अनीक।
निजअंगज पृथ्वीराज नाम, धरि भुजन भार रक्खिय स्वधाम॥१५॥
तब कहिय कुमरछत पुत्र तात, बहुभार सहैं अनुचित सु बात।
अप्यहिं धकेलि आयास बीच, निर्ल्लज्ज पुत्र सुख लहत नीच॥१६॥
यातैं नरेन्द्र तुम रहहु अत्थ, मैं सब निदेस निबहन समत्थ।
मन्नी न एहु सुत की महीस, सोमेस चढिग मेवात सीस॥१७॥

कैमास संग हुव चढन काल, चामुंडराज पुनि रन अचाल।
प्रद्युम्न संग कूरम प्रबीर, पुंडीरचन्द्र भुव हरन पीर॥१८॥

चहुवान राजा सोमेश्वर ने अपने सामन्त वीरों के साथ ऐसी मंत्रणा की और इसके बाद अपनी विशाल सेना को सज्जित होने की आज्ञा दी। फिर अपने पुत्र कुमार पृथ्वीराज को घर (अजमेर) में ही छोड़ कर इस चढ़ाई का कार्यभार स्वयं के कंधों पर लिया। यह देख कर पृथ्वीराज कहने लगा कि पुत्र के होते हुए पिता स्वयं ऐसे भार उठाए यह उचित बात नहीं। इस स्थिति में कि पिता को श्रम करने के लिए भेजें और निर्ल्लज पुत्र घर पर सुख भोगे ऐसा पुत्र उतम पुत्र नहीं कहलाता है। इसलिए हे राजा (पिता)! आपको यहीं रहना चाहिए क्योंकि मैं आपकी सभी आज्ञाओं को पूरा करने में समर्थ हूँ। पर राजा ने अपने पुत्र पृथ्वीराज की नहीं मानी और चहुवानराज सोमेश्वर ने मेवात पर अपने स्वयं के नेतृत्व में ही चढ़ाई की। राजा ने इस अभियान में कैमास जैसे वीर को और युद्ध में अचल रहने वाले चामुण्डराज को साथ लिया। इनके अतिरिक्त सेना में प्रद्युम्न के साथ पृथ्वी का दु:ख हरने वाला पुंडीरचन्द्र भी था।

सकनक बडगुज्जर राम सज्जि, गोबिंदराज गहिलोत गज्जि।
सामंत निट्ठि तजि कुमरसंग, नृप संग चले ए कसि निखंग॥१९॥
बाहिर तजि गोपुर कढत बेर, क्रम बिहित सकुन हुव विजय केर।
मेवात सोम लहि दिय मिलान, इत कुमर स्वभट बुल्लिय अमान॥२०॥
तंहं कहिय नृपहिं नहिं सुत प्रतीति, रन हित गये सु मम अनय रीति।
यातैं नृप पुब्बहि जय उमाहि, चल्लहु चढ अप्पन लरन चाहि॥२१॥

कनक बडगूजर, रामदेव, गोविन्दराज गहलोत भी इस प्रयाण में साथ हुए। शेष सामन्तों को वहीं कुमार के पास छोड़ कर वे वीर अपने-अपने तूणीर भर कर राजा के साथ चले। सेना सहित राजा को अपने नगर के मुख्य द्वार से बाहर आते ही विजय दिलाने वाले सभी प्रकार के अच्छे शकुन होने लगे। राजा ने अपने अमले सहित मेवात पहुँच कर अपना पड़ाव डाला। इधर अजमेर में कुमार पृथ्वीराज ने अपने भरोसेमन्द योद्धाओं को बुलवाया। सभी जब एकत्रित हो गए तो कुमार ने कहा कि लगता है राजा को अपने पुत्र पर

विश्वास नहीं है। वे स्वयं युद्ध के लिए गए इससे मेरा अच्छा नहीं लगा। इसलिए चलो! हम सभी जा कर राजा से पूर्व ही विजय हासिल कर लें।

इम कहि निसीथ रजनी अनेह, आयउ कुमार यह पुब्ब एह।
स्वक सुभट भये जे भूप सत्थ, सब तेहु छन्न बुल्लिय समत्थ॥२२॥
दरकुंच मंडि मेवात देस, पहुँच्यो कुमार सजि बल बिसेस।
मुगलहु इत आवत सुनि कुमार, हुव सम्मुह रचि बल लरनहार॥२३॥
धर अज्ज सिकंदर अग्ग धाय, पुनि अज्ज कछुक किय मिच्छप्राय।
दै तिन्ह रसूल सिक्षा सु दुष्ट, करि कुंच गयो सुनि रूम क्रुष्ट॥२४॥
मेवात देस ते रहत मत्त, घनरूप चढे रन करन घत्त।
जवनन अनीक हो मुख्य जोहि, सुभटन प्रचारि हुव समुख सोहि॥२५॥
जग रूढ नाम महिमंद जास, अरु कहत मिच्छ महमूद आस।
तिहिं सिलह बंटि करि दल तयार, किय हल्ल कुमर सिर कतलकार॥२६॥

ऐसा कह कर स्वयं कुमार पृथ्वीराज आधी रात के समय से थोड़ा पूर्व ही अपने प्रयाण के स्थान पर आ गया। उसने अपने उन वीर योद्धाओं को जो राजा के साथ गए थे गुप्त संदेश भिजवा कर बुलवाया। इसके बाद दर कूच दर मंजिल कुमार अपने दल सहित सज्जित हो कर मेवात प्रदेश में आ पहुँचा। वहाँ के यवनों ने जब यह सुना कि कुमार पृथ्वीराज स्वयं आ रहा है तो वे अपनी सेना के साथ सामना करने बढ़े। पूर्व में आर्यावर्त पर सिकंदर ने आक्रमण किया था तब यहाँ के कुछ आर्यों को मुसलमान बना दिया था। उसने उन्हें रसूल के नाम पर दीक्षा दे कर उनका धर्म परिवर्तन किया और वह दुष्ट स्वयं उसके बाद रूम देश को अपने मुल्क पर रूष्ट देख कर लौट गया। वही मेवात देश जब मदमत्त हो उठा तो उस पर घात करने को मेघ रूपी चहुवान चढ़ आए। यवनों की सेना में जो मुख्य योद्धा था वही अपने योद्धाओं को लेकर चहुवानों का मुकाबला करने बढ़ा। इसका नाम जगत में महीमंद रूढ़ हो रखा था और म्लेच्छ लोग उसे महमूद कहते थे। इसी महमूद ने कवच बांट कर अपना दल तैयार किया और उसने कुमार पृथ्वीराज के दल को कत्ल करने के इरादे से हमला करने को कहा।

तीरन कमान चिल्ला तनंकि, खर लोह बाढ बग्गिग खनंकि।
रट्ठोर उत्तमांगद सरोस, जो मुगलईस भट सजय जोस॥२७॥
आयो सु कुमर सिर हय उडाय, किय कन्नह तास सिरहीन काय।
पुनि इक पठान बाजीद बीर, धायो सु कुमर सह लरन धीर॥२८॥
कैमास तास सिर दै कृपान, दिय अवनि अर्थ बलि उचित दान।
पुनि कुम्म नरायन दाव पाय, मुगलेस सुभट दिय हय मिलाय॥२९॥
तस सिर बडगुज्जर राम तोरि, मुगलन जय आसा लिय मरोरि।
कुमरहु धपाय पल निज कृपान, मन गिनि रतीक मुगलेस मान॥३०॥
झुंडन गिराय गज लोह झारि, महिमंद गह्यो भट तास मारि।
लै ताहि मुररि करि जस ललाम, नृप समुख आय किय जय प्रनाम॥३१॥
नृप कहिय तरजि खिझि व्है अनेह, अटक न गिनी सु जय अजय एह।
मेवात गंजि इम रंज मिलाई, सुत सहित सोम अजमेर आइ॥३२॥

धनुष की प्रत्यंचा को खींच कर फेंके हुए तीखे लोहे के तीर बजने लगे। उधर से उत्तमांगद राठौड़ कुपित हो म्लेच्छ पक्ष की ओर से उनका नायक हो कर विजय पाने के जोश में आगे आया। उसने अपना घोड़ा आगे कर कुमार पृथ्वीराज पर वार करने को बढ़ाया कि तभी चहुवान कन्ह ने अपने खड्ग का प्रहार कर उसे मस्तकविहीन बना दिया। इसके बाद एक वाजीद नाम का पठान वीर कुमार से भिड़ने को दौड़ा। तभी कैमास ने उसके सिर पर अपनी कृपाण का आघात किया और उसे अपनी धरती के लिए बलिदान होने का अवसर दिया। इसके बाद नारायण कछवाहा ने अपना मौका लगते ही मुगल योद्धा के घोड़े को मार कर उसे अपने स्वामी से मिला दिया। म्लेच्छ पक्ष के दूसरे नायक के सिर को राम बडगूजर ने तोड़ कर उस पक्ष की विजयेच्छा को मरोड़ डाला। कुमार पृथ्वीराज ने भी मन में म्लेच्छों के मान को तुच्छ गिन कर अपनी कृपाण को माँस से संतुष्ट कर दिया, उसके साथ ही कई हाथियों को शस्त्र प्रहार से गिरा कर चहुवान योद्धाओं ने महिमंद को पकड़ लिया और उसके साथी योद्धाओं को मार गिराया। इसके बाद कुमार पृथ्वीराज ने सुन्दर यश अर्जित करने के लिए महिमंद को बाँध कर साथ ले अपने पिता राजा के पास जा विजय का प्रणाम किया। राजा ने

उसे धमकाते हुए कहा कि हे कुमार! आपने हमारी मनाही को नहीं माना इसलिए आपकी यह विजय, विजय नहीं हार है। इस प्रकार मेवात में उठे विरोध को दबा कर बल्कि उसे धूल में मिला कर अपने पुत्रसहित राजा सोमेश्वर अजमेर को लौटे।

सोरठा

इच्छनि परनि रु आई, इक्कत लहि सामंत इम।
मुगलन गरद मिलाई, कुसली गृह आयउ कुमर॥३३॥
करि प्ररूढ जसकंद, बारह हायन प्रमित वय।
मुगल पकरि महिमंद, कुमर स्वनैर प्रवेस किय॥३४॥

ईक्षणी को ब्याह कर लाने के बाद कुमार पृथ्वीराज अपने सामन्तों को साथ ले यवनों को मिट्टी में मिला कर कुशलतापूर्वक अपने घर अजमेर आया। कुमार ने अपने यश रूपी कंद की जड़ों को सुदृढ़ बना कर मात्र बारह वर्ष की वय में ही यवन महिमंद को हरा कर बंधन युक्त किया। इसके बाद कुमार पृथ्वीराज चहुवान ने स्वदेश में प्रवेश किया।

इतिश्री बंश भास्करे महाचम्पूके पूर्वायणे चतुर्थ राशौ वीतिहोत्र-चण्डासिबंशबर्णनान्तर्गतडिड्डुरबंशबिरोचनशाकम्भरेशपृथ्वीराज चरित्रे जितचालुक्यभीमानीक प्रतिस्थापितयवनेन्द्र सामन्तभीमग्रस्तार्बुददुर्गोद्ध-रण तदधीशप्रामारसलक्षकुमारपृथ्वीराजजामातृकरण सजन्य यौतक सदुर्लभ दुर्लभस्वनगरागमन सपुत्रसलक्षाऽऽव्हान सबन्दिचन्द्र समस्तसामन्त सम्मिलन पितृप्रतिरुद्धपृथ्वीराज मेवातनिर्दलन चहुवाण-कृष्ण राष्ट्रकूटोत्तमाङ्गद विशसन दाधिमकैमास पठानबाजीद विध्वंसन बडगूर्ज्जरराम कूर्मनारायण निपातन कृतजयकुमारमुगलमहिमन्दनि ग्रहण चण्डासिराजप्रत्यागततनयतर्जन ससूनुसोमेश स्वपुरागमनं सप्तदशो मयूखः॥१७॥ आदितः पञ्चविंशोत्तरशततमः॥१२६॥

श्री वंशभास्कर महाचम्पू के पूर्वायण की चौथी राशि के अग्निवंशी चहुवान के वंशवर्णन के भीतर डिड्डुर वंश विरोचन (सूर्य) सांभर के पति पृथ्वीराज के चरित्र में सोलंकी भीम की सेना को हटाना, बादशाह के उमराव भीम का आबूगढ़ का उद्धार करना, और आबूगढ़ के अधीस पंवार सलख

का कुमार पृथ्वीराज को जवांई करना, बरात वालों सहित दुर्लभ दुर्लभ दायजा लेकर पृथ्वीराज का अपने नगर में आना, पुत्र सहित सलख को बुलाना, चंद भाट सहित सब एक सौ छह सामंतों का शामिल होना, पिता को रोक कर पृथ्वीराज का मेवात को दलना, चहुवाण कन्ह का राठोड़ उत्तमांगद को मारना, दायमा कैमास का पठान वाजीद को मारना, बडगुज्जर राम का कछवाहा नारायन का नाश करना, विजय करके कुमार पृथ्वीराज का मुगल महीमंद को पकड़ना, चहुवान राजा सोमेश्वर का अपने पीछे आये हुए पुत्र को धमकाना, पुत्र सहित सोमेश्वर का अपने नगर में आने का सत्रहवाँ मयूख समाप्त हुआ। और आदि से एक सौ छब्बीस मयूख हुए।

प्रायो ब्रजदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

पादाकुलकम्

पहिलैं तजि सारूड़ा परिसर, भजिग साह चहुवान भीतिभर।
बट्टमांहिं अजमेर नगर बहु, पाये तिन्हहु गयो लुट्टन पहु ॥१॥
लुट्टि कुसाब भेहरा लुट्टिय, छतधनपुर अध्वस्त न छुट्टिय।
इतर पुरहु लुट्टे जे आये, बसु उपदा गहि कतिक बचाये ॥२॥
गक्खर लुट्टि जवन बहु गंजिय, भज्जत गजहु कटि बहु भंजिय।
जनपद सिंधु गयो लुट्टत जब, तहं इक अज्ज रु इक्क जवन-तब ॥३॥
महन रु आरबखान अडरमन, अद्ध अद्ध भुग्गहिं उपबर्त्तन।
वे न उपायन दैन उमाहे, चित्त प्रगल्भ दुहुँन रन चाहे ॥४॥
सु सुनि सहाबुद्दीन कोप सह, उभय कैद डारन किय अग्गह।
पुच्छिय परिखद् स्वीय परिग्गह, अक्खहु सब किम होइ अरिग्गह ॥५॥
जंहं तत्तार रु सेरन जंपिय, पुनि रुस्तुम खुरसान पयंपिय।
जदपि दुव हि तिल तिल बनि जक्कहिं, तदपि स्वीय कारा नन तक्कहिं ॥६॥

सारूड़ा गाँव में अपने शिविर से बादशाह ने चहुवान के भय से भागना बेहतर समझा और वह भाग छूटा। सारूड़ा से जाते हुए रास्ते में जितने भी गाँव पड़े उन्हें उसने लूटने का मानस बनाया। उसने कुशाब और भेहरा गाँवों को लूटा। इन गाँवों से आगे पड़ने वाला छतधनपुर भी उसके लूट के दायरे

से बाहर न रहा। उसकी राह में जो भी गाँव पड़े वे लूटे जाने से नहीं बच सके। कई गाँवों से उसने धन भेंट में ले कर नहीं लूटा और उन्हें छोड़ दिया। बीच राह के गाँव गक्खर को लूटने में उसने कई लोगों को मार तक डाला जिस प्रकार भागता हुआ हाथी कई कीटों और छोटे प्राणियों को कुचलता जाता है उसी प्रकार गौरी इस प्रकार की लूट मचाता हुआ सिंध देश को लूटने के लिए पहुँचा। वहाँ एक आर्य और एक यवन इन दोनों का पूरा दबदबा था। वे आरबखान और मदनसिंह नामक दोनों निडर मन वाले इस प्रदेश का आधा-आधा भाग भोगते थे। इन दोनों ने तय कर लिया कि वे किसी प्रकार का उपहार गौरी को नहीं देंगे। वे मन ही मन उससे भिड़न्त करने को उतावले हो उठे। जब शाहबुद्दीन गौरी ने उन दोनों का यह मंतव्य सुना तो वह आग बबूला हो गया। उसने तुरन्त आदेश दिया कि उन दोनों को पकड़ कर तुरन्त कारागार में डाल दिया जाए। इस पर तातारों, सेरों आदि ने कहा और यही मत रुस्तमों और खुरासानों का था कि वे दोनों अड़ियल वीर युद्ध में तिल-तिल कट मरेंगे पर वे पकड़े जाकर आपके कारागार में जाना पसंद नहीं करेंगे।

यातैं दान रु भेद उपायहि, करिये प्रथम दुहुन अपनैं कहि।
मंत्र बिचारि साह सुहि दृढमति, पठयो निसुरतखान दुहुँन प्रति॥७॥
कहि पठई तुम दुव हि साम करि, आनि मिलहु सासन मम अनुसरि।
उचित जानि उपदा जो आनहु, पच्छी सो सब दैंहिं प्रमानहु॥८॥
बिहित मरातब दुहुँन बढैहों, देय अदेय न लखि बहु दैहों।
सुहि निसुरत मुख महनसिंह सुनि, धीर तथास्तु कह्यो न सीस धुनि॥९॥
जानी समर मैं रु आरब जुरि, करि हैं चिरहिं दुर्ग सिर अंकुरि।
इम नहिं साह कथित उर आनिय, मन उद्धत मुरि रहन प्रमानिय॥१०॥
आरब पहं निसरत तब आयउ, बिबिध साह डर ताहि बतायउ।
कहिय जो न सासन यह करिहो, रुद्ध बिकल कारा सरि मरिहो॥११॥
नतो चलहु प्रभु पयन परहु नत, उपदा करि कछु भेट अनुद्धत।
जंहं सतपंच मत्त गज गज्जहिं, सप्ति कुलीन लक्खदुव सज्जहिं॥१२॥

'इसके लिए हे बादशाह! आप इन पर दान और दण्ड की नीति अपना कर पहले उन दोनों को अपना बनाएँ। अपने साथी योद्धाओं की इस मंत्रणा

पर दृढ़ मति शाहबुद्दीन गौरी ने अच्छी तरह विचार करने के बाद अपने विश्वस्त सेवक निसुरतखान (नुसरतखान) को उन दोनों के पास भेजा। उसने दोनों के पास जा कर यह प्रस्ताव रखा कि तुम दोनों आपस में मिल कर हमारे स्वामी गौरी की आज्ञा का अनुसरण करते हुए हमारे साथ हो जाओ। तुम लोग जो भी भेंट उपहार ले कर आओगे उस भेंट को शाहबुद्दीन तुम्हें वापस दे देगा इसका भरोसा करो। ऐसा करने से तुम दोनों को गौरी मरातब देगा और उसमें देने योग्य अथवा अदेय का फर्क वह नहीं करेगा। विश्वास रखो वह तुम्हें आशा से अधिक ही देगा। निसुरतखान के मुँह से यह बात सुनते ही महनसिंह ने अपना सिर हिला कर कहा कि ऐसा नहीं हो सकता। अर्थात् मैं 'तथास्तु' नहीं कह सकता और सुनो मैं और आरबखान दुर्ग पर खड़े हो गए तो समर में काफी देर लगा देंगे अर्थात् तुम्हारी शीघ्र फतह नहीं होने देंगे। इस प्रकार महनसिंह ने तो गौरी के प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया। उसने तो जो कहा गया उसके उलट ही अपने मन में सोचा। इसके बाद निसुरतखान तब आरबखान के पास गया और उसे शाहबुद्दीन के बल का तकमीना बता कर तरह-तरह से भयग्रस्त करने का प्रयत्न किया। उसने कहा यदि तुमने गौरी की आज्ञा की अवहेलना की तो उसका अंजाम जानते हो, उसकी कारागार में सड़-सड़ कर मरोगे। यदि नहीं तो कुछ उपहार का उपाय करो और चल कर उसे मेरे स्वामी के चरणों में विनम्रतापूर्वक भेंट करो। मेरा स्वामी गौरी कोई मामूली शाह नहीं उसके यहाँ पाँच सौ मस्त हाथी नित्य गर्जना करते हैं और अच्छी नस्ल के दो लाख घोड़े हिनहिनाते हैं। अर्थात् उसकी सेना में पाँच.सौ हाथी और दो लाख घोड़े हैं।

प्रबल साह अैसो गजनीपति, तासों मुरि खोवहु निज संतति।
सुनत एहि ओदक आरब सठ, हुव गौरीस अनुग तजि रन हठ॥१३॥
इक्क समय जंगलधर अंतर, आरब आय लूट मंडिय अर।
गनिका इक सामुद्रिक गाई, पुंगल नगर लूट बिच आई॥१४॥
अधिक रूप जुब्बन गुन अनुपम, स्वर अवरोह कण्ठ कलरव सम।
ताहि लखत आरब कामातुर, पकरि बिसासि लै गयो निजपुर॥१५॥

निसुरतखान ने दण्ड की नीति अपनाते हुए आरबखान को आतंकित करने की गरज से आगे कहा कि ऐसे महाबलशाली गजनीपति से विरोध

मोल लेने का अर्थ सीधा-सीधा यह समझो कि तुम अपनी संतति का नाश कराओगे। अपने वंश का खात्मा करवा कर निर्वंश होना। निसुरतखान की इस भभकी (झूठी धमकी) के सामने वह मूर्ख आरबखान अधिक टिक नहीं पाया और उसने युद्ध करने के अपने हठ को छोड़ कर तुरन्त ही गौरी का सेवक होना कबूल कर लिया। इसी आरबखान ने एक मर्तबा जंगलधर (बीकानेर) क्षेत्र में जा कर लूटपाट मचाई। इस लूट में उसे एक सामुद्रिक शास्त्र में निपुण गणिका हाथ आई जब वह पूगल शहर को लूट रहा था। रूप, योवन और गुणों में अनुपम वह अपनी गायकी में (अवरोह के स्वरों में) तो साक्षात कोकिल-कंठी थी। इस गणिका को देखते ही आरबखान कामातुर हो उठा और वह उसे जबरन उठा कर अपने नगर में ले आया।

दोहा

नाम चित्ररेखा निपुन, गनिका आरब गेह।
व्है स्वामिनि तबतैं रहत, इतर तियन मनि एह ॥१६ ॥
सो गनिका उपदा समुझि, आरब नम्रित आय।
कातर निसुरत के कहैं, पर्‌यो जवनपति पाय ॥१७ ॥
किन्नी बिबिध सलाम करि, इतरहु भेट अनेक।
किंकर मैं जिन वस कहिय, टारि लरन मन टेक ॥१८ ॥

वह गायन में निपुण चन्द्ररेखा नामक गणिका तब से आरबखान के घर की शोभा बन गई। वह जैसे पूरे घर की स्वामिनी हो और सारी स्त्रियों में मणिरूप हो ऐसा व्यवहार करने लगी। इसी बीच एक दिन आरबखान ने इस गणिका चित्ररेखा को गौरी को देने योग्य उचित उपहार समझ कर सीधा पूरे विनीत भाव से कायर की तरह निसुरतखान के सिखाए-सिखाए यवनपति गौरी के चरणों में आ गिरा। आते ही उसने जमीन तक झुक कर कई बार सलाम किया और अपने साथ लाई गई अन्य भेटों का नजराना दे कर बोला कि आप मुझे अपना दास मानिए। मेरे मन में आपसे टक्कर लेने की कोई बात ही नहीं है। मैं तो आपका सेवक हूँ।

इत सु मिल्यो सुनि आरबहिं, महन बिंट बंसीय।
सिंधु उतरि टरिगो सकुचि, गिनि अरि कटक गरीय ॥१९ ॥

उपदा वह पननारि इत, गहि रु साह गय गेह।
कलि अनेह क्यों नहिं करैं, नृप पननारिन नेह॥२०॥
बारनारि जिहिं रूपबल, स्वीय छंद किय साह।
सो बीसरि हुरमन सबन, उतहि धरत उच्छाह॥२१॥
सीलवती ऊढाहु सब, कठिन होन कलिकाल।
तो यह गनिका किम तकैं, चित्त कुलीनन चाल॥२२॥
उद्धत खानहुसैन इक, जो गौरीकुल जात।
साह बंधुगन मांहिं सों, पूगो अवसर पात॥२३॥

इधर आरबखान के इस प्रकार समर्पण की बात सुन कर बिंदा वंशीय क्षत्रिय महनसिंह भी सिंधु नदी को पार कर उस पार चला गया क्योंकि वह जानता था कि शाहबुद्दीन की सैन्य शक्ति अत्यन्त प्रबल है और समझदारी उसने उलझने में नहीं बचने में है। उधर शाहबुद्दीन ने आरबखान द्वारा उपहारस्वरूप दी हुई उस गणिका को न केवल स्वीकार ही किया बल्कि वह उसे खुशी-खुशी अपने साथ वतन ले गया। इसमें आश्चर्य की भला क्या बात क्योंकि कलियुग के इस समय में राजा का गणिका से स्नेह सामान्य बात है। इसी गणिका चित्ररेखा ने अपने यौवन ओर रूप के बल से शाहबुद्दीन को वश में कर लिया। गौरी तो अपने हरम की दूसरी बेगमों को भूल गया और मात्र इस एक गणिका के मोहपाश में बँध गया। यदि सारी ब्याहता स्त्रियों के लिए कलियुग में एकदम शीलवती होना कठिन है तब फिर ऐसे में गणिकाएँ भला कुलीन मनुष्यों के चित्त को क्यों नहीं तर्कें। अर्थात् अवश्य तकेंगी। हुआ भी ऐसा ही कि इसी गौरी कुल में उत्पन्न हुसेनखां जो चंचल स्वभाव का था और शाहबुद्दीन के बांधवों में था अवसर पा कर इसी गणिका की चितवन में उलझ कर रह गया अर्थात् गणिका से प्रेम करने लगा।

षट्पात्

जब हुसैन संजोग चित्ररेखा सन चाहिय।
करि आदर गनिकाहु वाहि लहि संग उमाहिय।
जवनईस यह जानि बुल्लि तरज्यो हुसैन बहु।
पै न तज्यो सठ प्रसभ पाप सिर आनि छयो पहु।

सुनि साह कहिय मम देस सन दिल इच्छत तित जाहु द्रुत।
तब यहहु छन्न लै संग तिहिं जार भजिग पननारि जुत॥२४॥

जब हुसैनखां ने गणिका चित्ररेखा के साथ अपना मिलाप चाहा। उसने अपनी प्रेमिका का आदर करते हुए मन में उत्साहित हो कर उसका संग साथ चाहा। इस बात की भनक जब यवनेश शाहबुद्दीन को पड़ी तो उसने तुरन्त हुसैनखां को बुलवाया और आने पर पूरी डांट डपट करते हुए धमकाया पर प्रेम में अंधे उस मूर्ख ने हठ कर उस गणिका के पास जाना नहीं छोड़ा क्योंकि इसके सिर पर मालिक की अंकुश का पाप छा गया था। इस पर अन्त में शाह ने उसे बुला कर देश निकाला देते हुए कहा कि अब तेरी इच्छा हो वहाँ चला जा पर मेरा देश छोड़ दे। शाह से यह सुनते ही वह हुसैन खां अपनी प्रेमिका उस गणिका को चुपके से ले कर वहाँ से भाग गया।

सब दिस चिंत हुसैन इतर असरन सब इक्खिय।
इक्क सरन अजमेर सरनि चल्लन तस सिक्खिय।
नगर आय नागोर रक्खि ताकंहं सपरिग्रह।
कुमर सहायी करन अग्ग हंकिय विनम्र वह।
सोमेस कुमर तद्दिन समय रचि सिकार खट्टुव रमत।
अग्गहि हजूर लायउ उहां खत्रिय सुन्दर तास खत॥२५॥

हुसैनखां ने अपने वतन को छोड़ते हुए सोचा कि मुझे किस दिशा में शरण मिल सकती है? मन ही मन उसे कहीं से भी जब शरण न मिलने की संभावना लगी तो उसने अजमेर जाने का रास्ता लिया। इस मार्ग से चलते हुए वह सपरिवार नागौर पहुँचा। उसने वहाँ पहुँच कर कुमार से शरण माँगी। इस समय राजा सोमेश्वर का वह राजकुमार खाटू शहर की ओर शिकार खेलने आया हुआ था। यहीं पर क्षत्रिय सुन्दरदास ने हुसैनखां की दरख्वास्त कुमार के आगे पेश की।

दोहा

खत्रिय अग्गहि तास खत, दिन्नैं सुन्दरदास।
सब ही अरज हुसैन की, बंचिय दै बिसवास॥२६॥

कुमार पृथ्वीराज चहुवान के समक्ष जब सुन्दरदास ने हुसैनखां का प्रार्थना-पत्र पेश किया तब कुमार ने उसे पढ़ने की आज्ञा दी। इस तरह कुमार ने हुसैनखां की पूरी अर्ज सुनी और धीरज बंधाया।

षट्पात्

सकल बंचि सोमेस कुमर बिन्नति हुसैन कृत।
मंत्रिय बर कैमास सुभट इतरहु निज अनुसृत।
प्रबल चन्द्र पुंडीर जोध खिच्चिय प्रसंग जिम।
पुनि कूरम प्रद्युम्न तत्थ गोबिन्दराज तिम।
इत्यादि बुल्लि परिगह उचित कहिय स्वीय संधा कुमर।
बिक्खें न अज्ज मिच्छन बदन अरु तिन्ह तक्कत सरन अर॥२७॥

जब चहुवानराज सोमेश्वर के कुमार पृथ्वीराज ने हुसैनखां के पत्र में लिखी पूरी प्रार्थना सुनी तो उसने सर्वप्रथम अपने श्रेष्ठ अमात्य के साथ अपने योद्धाओं और सेवकों को बुलवाया। उसने कैमास, प्रबल चंद्र पुंडीर, जोध खीची, प्रद्युम्न कछवाहा, गोविन्दराज आदि सभी सेवक योद्धाओं के आने पर कहा कि मेरे तो आर्य प्रतिज्ञा है कि एक आर्य किसी म्लेच्छ का मुँह नहीं देखता और समस्या यहाँ यह आन पड़ी कि वह यवन हुसैनखां शीघ्र ही हमारी शरण चाहता है। अब आप लोग बताएँ कि क्या किया जाए?

दोहा

मिलन कहाँ न लखैं मुखहु, अप्पन उज्जल अज्ज।
जानि सरन आयउ जवन, किम निबहैं यह कज्ज॥२८॥
भटन मंत्रि प्रमुखन भनिय, बिदित सरन दैबोहि।
बदन दिखावैं अनुग बनि, बिनु बिक्खे सम सोहि॥२९॥
कम्म छुवन को है न कछु, उपदाजुत वह आय।
रहहिं खरो कछु करि नजरि, परि दूरहि प्रभु पाय॥३०॥
सरनागत के त्याग सम, अघ न कहैं श्रुति ओर।
उचित ताहि दैबो अभय, जदपि होइ अरि जोर॥३१॥

मिलने पर हम उज्ज्वल आर्य जिनका मुँह देखना भी नहीं चाहें ऐसा ही एक यवन हमारी शरण में रहना चाहता है अब यह काम बने कैसे? इस पर मंत्री और योद्धागणों ने जवाब दिया कि हे कुमार! शास्त्रों में तो शरणागत की रक्षा का प्रावधान है। रही उसके म्लेच्छ होने की बात तो उसके संदर्भ में निवेदन है कि वह आपका गुलाम हो कर यदि अपना मुँह दिखाता है तो वह बिना देखे समान है। आपका दास हो जाने पर उसका चेहरा देखना क्षम्य है फिर वह तो स्वयं अपना सिर नीचा रखेगा। आगे की बात यह कि वह जो कुछ नजराना दे उसे अधिक से अधिक आप छुए नहीं। वह भेंट कर आपसे दूर जा खड़ा होगा और वहीं से आपके चरणों की वन्दना कर लेगा। हमारे शास्त्र हे कुमार! यह व्यवस्था देते हैं कि किसी शरणागत को शरण नहीं देना पाप कर्म है। वह शरणागत लाख हमारा शत्रु भी हो तब भी उसे अभयदान देना उचित माना गया है।

षट्पात्

मंत्र यहहि दृढ मंडि कुमर बुल्लिय हुसैन कंहं।
निज उपहार निवेदि जाय ठड्ढो सु दूर जंहं।
अक्खि कुसल दै अभय संग दै ताहि भटन सह।
नगर आय नागोर गहन गोरिय किय अग्गह।
पुर तिहिं लिखाय हांसिय पटा सिंधुर इक हय दुव सहित।
अप्पिय कुमार मिच्छहिं अडर मान उचित मंडिय महित॥३२॥

अपने सेवकों और साथियों से अच्छी तरह उपरोक्त मंत्रणा करने के बाद कुमार ने आदेश किया कि उस हुसैनखां को बुलाया जाए। हाँ, पर उसे इतना अवश्य कह देना कि वह अपना नजराना दे कर दूर जा खड़ा हो। हुसैनखां ने जब निर्देशानुसार वही किया तब कुमार ने पहले उससे उसकी कुशलता के समाचार पूछे और बाद में उसे अभयदान दिया। पूर्व में नागौर आने पर जिस गाँव में शाहबुद्दीन गौरी को बंदी बनाया था वही हांसी नगर नामक गाँव उस हुसैनखां को प्रदान कर कुमार ने म्लेच्छ का उचित मान करते हुए उसे निर्भय हो कर अपने राज्य में रहने की इजाजत दी।

दोहा

स्वीय सचिव कायस्थ को, धर्मायन को धाम।
रहन काज दै तिहिं रुचिर, किन्न प्रकट निज नाम॥३३॥

इसके साथ ही अपने एक कायस्थ सचिव को जो धर्म का धाम नीतिराज के रहने के घर को कुमार ने हुसैनखां को धर्मपूर्वक रहने के लिए सौंपा ओर इस तरह अपना सुयश फैलाया।

षट्पात्

तब हुसैन इभ इक्क द्वीप सिंहलभव दुद्धर।
बहुरि पञ्च मनबेग बीति अैराक जात बर।
त्रिसत त्रिसत बर तीर सहित तिम पञ्च सराश्रय।
खुरासान भव धनुख मंजु पञ्चक बिखानमय।
मानिक्य जुगल इक वज्रमनि जो इतरहु समुचित जितो।
ढौकन हुसैन चहुवान ढिग आय निवेदिय पुनि इतो॥३४॥

अपने को इस तरह की बाइज्जत पनाह मिल जाने के एवजाने में हुसैनखां ने कुमार को एक हाथी और सिंहलद्वीप में उत्पन्न बेशकीमती मोती, मन के वेग से भी अधिक वेग वाले पाँच चंचल घोड़े जो एराक नस्ल के थे भेंट किए। नजराने में इंनके अतिरिक्त तीन सौ तीरों से भरे पाँच तूणीर, खुरासान देश में निर्मित श्रेष्ठ पाँच धनुष जो सींगों के बने थे। दो बहुमूल्य माणिक्य और एक हीरा भी भेंट किया। इन बहुमोली वस्तुओं के अलावा और दूसरी चीजें भी थीं जो सामान्यत: ऐसे नजरानों में शामिल होती हैं। इतने सारे उपहारों के साथ हुसैन खां ने कुमार के चरणों में धोक दे कर स्वीकार करने का निवेदन किया।

च्यारि दूत चहुवान पास जवनेस पठाये।
नागनगर उन्ह आय पत्र परिखद पहुँचाये।
हो मम अनुग हुसैन गो सु तुम ढिग पातुरि गहि।
चोर देहु चहुवान चित्त दुहुँ ओर साम चहि।

करि कोप बंचि ए दल कुमर दूतन तरजि निकासि दिय।
काबल कितीक क्यों सठ करत हठ सिंहन सिर स्यार हिय॥३५।

उधर यवनेश शाहबुद्दीन गौरी ने अपने चार दूत चहुवान कुमार के पास भेजे जिन्होंने नागौर आ कर शाह का लिखवाया हुआ पत्र सौंपा। अपनी राजसभा में बैठे कुमार ने आज्ञा दी कि पत्र में क्या लिखा है पढ़ा जाए! पत्र के समाचार इस प्रकार थे कि हे कुमार! मेरा सेवक हुसैनखां यहाँ से हमारी प्रिय गणिका को ले कर तुम्हारे पास आ गया है। इसलिए चहुवान कुमार! यदि तुम दोनों पक्षों में शान्ति चाहते हो तो हमें हमारा चोर लौटा दो। वह हुसैन हमारा कसूरवार है और चोर है क्योंकि यहाँ से कुछ चुरा कर भागा है। हमारे अपराधी को हमें तुरन्त लौटाओ। पत्र के पूरा होने से पहले ही कुमार ने कुपित हो कर बीच में ही रुकवा दिया और गौरी के चारों संदेशवाहकों को वहाँ से धमका कर निकाल दिया कि वह मूर्ख जानता ही नहीं यह काबुल कितीक बात है? वह मूर्ख गीदड़ सिंह के मस्तक पर हठ कर रहा है। उसके हठ की क्या बिसात यह बात वह सठ जानता नहीं क्या?

रोला

पच्छे उत दूतन पठाय उद्धत कुमार इत।
नीतिराज खत्रिय निकेत दिय पुनि हुसैन हित।
सुनत एह जवनेस सभा बुल्लिय उमीर सब।
तंहं रुस्तम तत्तार खान खुरसान जुरे जब॥३६॥
अरज सबन किय अबहु पत्र इक उचित पठावन।
संगहि भेजहु साह सेख आरब समुझावन।
जिहिं आरब कर जोरि किन्न गनिका उपदा वह।
तिहिं प्रति दल लिखि त्वरित साह पठवहु निदेस सह॥३७॥
सिन्धुदेस यह सुनत पत्र पठये गजनीपति।
आरब तुम अजमेर करहु जाय रु उपाय कति।
कुमरहिं अक्खहु करहु प्रीति तुम साह परस्पर।
सह पननारि हुसैन चोर अप्पहु मम अनुचर॥३८॥

शाहबुद्दीन के चारों सन्देशवाहक दूतों को धमका कर अपनी राजसभा से निकाल देने के बाद क्रोधित कुमार ने अपने सेवक नीतिराज खत्री को हुसैनखां के घर भेजा यह कह कर कि उसकी रक्षा करो। उधर अपने दूतों से कुमार की कहलाई बात सुन कर यवनेश ने अपने अमीर-उमरों की मजलिस बुलवाई। शाह के बुलाते ही रुस्तम, तातार, खान, खुरासान वंशीय उसके सारे उमराव आ एकत्र हुए। सभी ने मंत्रणा कर यवनेश से निवेदन किया कि अब एक पत्र पूरी तफसील से लिख कर भिजवाया जाना चाहिए और यह पत्र मात्र दूतों के हाथ नहीं भेजा जाए बल्कि उनके साथ शेख आरबखां को भी भेजा जाना चाहिए जो वहाँ जा कर चहुवानों को अच्छी तरह हमारी बात समझा सके। यह वही आरबखां था जिसने अपने स्वामी को हाथ जोड़ कर उपहार स्वरूप सुन्दर गणिका चित्ररेखा भेंट की थी। शाहबुद्दीन ने तुरन्त अपने उमरावों की बात मान कर फिर से पत्र लिखवाना स्वीकार किया और पत्र शीघ्र भिजवाने की व्यवस्था हो ऐसा निर्देश दिया। गजनीपति ने तुरन्त पत्र दे कर कहा कि वहाँ जा कर तुम कुमार से कहना कि तुम्हें शाहबुद्दीन के साथ परस्पर प्रीति का व्यवहार रखना चाहिए और इसके लिए उस गणिका सहित मेरे चोर (अपराधी) हुसैनखां को मुझे सौंप देना चाहिए। मेरा सेवक मुझे देने में आपत्ति भी क्या है ?

षट्पात्

जो न दैंहिं तो जोर अखिल अक्खहु जिम अप्पन।
अथिर हिं अप्पन अचल थिरहिं चल करि उत्थप्पन।
जानि दुसह जवनेस सहज बिग्रह नन सज्जहु।
अप्पहु तसकर अप्प आहि दुहुं दिस हित अज्जहु।
मन्नैं न कुमर तब यह मरम जाय कहहु सोमेस जंहं।
नहिं दोस हमहिं अब दोस नृप कुहक त्वदीय कुपुत्र कंहं॥३९॥

हे आरबखान! यदि तुम्हारे इस प्रकार के प्रस्ताव पर वह चहुवान कुमार मेरे चोर को लौटाने को तैयार न हो तो उसे मेरी सम्पूर्ण शक्ति का अहसास करवाना। कहना कि शाहबुद्दीन में इतनी कुव्वत है कि वह अस्थिर को अचल और जो स्थिर हो उसे चलायमान कर उखाड़ डालता है। ऐसे

बादशाह को दुस्सह जान कर तुम मन में युद्ध करने की सोचना भी मत। कहना कि बस, उसका अपराधी लौटा दो और हे आर्य कुमार! इसी में दोनों देशों का हित सन्निहित है। इतना समझाने पर भी यदि वह चहुवान कुमार नहीं माने तो आरबखां! तुम ये सारी मर्म की बातें उसके पिता राजा सोमेश्वर से जा कहना। राजा से कहना कि हे चहुवान राज! फिर तुम हमें दोष मत देना क्योंकि इसमें पूरी जालसाजी तुम्हारे पुत्र की ही है।

इम आरब प्रति पत्र दये गोरिय पठाय द्रुत।
गो आरब अजमेर जवन असवार त्रिसत जुत।
अप्पि कुमर प्रति अरज कथा सब बिदित कहाई।
चोर देहु चहुवान करहु जानि न कुटिलाई।
सुनि साह पत्र परिखद सहित कोप असह धारिय कुमर।
जंपिय कितेक बपुरे जवन धरम बिगारहिं अज्जधर॥४०॥

इस प्रकार का पत्र लिखवा कर गौरी ने आरबखां को सौंप कर कहा कि अब तुम शीघ्र ही प्रस्थान करो! अपने स्वामी की आज्ञा पा कर तीन सौ यवन घुड़सवारों के साथ आरबखां अजमेर के लिए रवाना हुआ। उसने वहाँ पहुँच कर चहुवान कुमार के सामने पूरा वृत्तान्त सुना कर अपने मालिक का पत्र सोंपते हुए कहा कि हे चहुवान! कुशलता इसी में है कि आप हमें हमारे अपराधी हुसैनखां को सौंप दें और जान बूझ कर किसी भी प्रकार की कोई कुटिल चाल न चलें। शाहबुद्दीन का ऐसा पत्र पाते ही (सुन कर) कुमार ने भरी सभा में असह्य क्रोध करते हुए कहा कि बेचारे इन यवनों को देखो जो आर्यों की भूमि का धर्म बिगाड़ना चाहते हैं।

अज्ज धरम यह आदि सरन पालन अरि सातन।
सुहि इच्छत वनि सुहृद साह इम हमहिं सुहात न।
बदहु जाय आरबहिं साह सद्धहु इच्छित उर।
सिर ढंकहु सय इक्क इक्क ढंकहु गुद आतुर।
सोंपै न अज्ज आगत सरन जम रु रुद्र मंगहिं जदपि।
जो रन उमंग आवहु सजव जिय निसंक निज इष्ट जपि॥४१॥

आर्यों का यह शुरू से ही धर्म रहा है कि शरण में आए हुओं की रक्षा

करना और अपने शत्रुओं का संहार करना। जब कि तुम्हारे शाहबुद्दीन इन बातों को मानने वाला नहीं है इसलिए ऐसे व्यक्ति से मित्रता करना हमें तनिक भी अच्छा नहीं लगता। इसलिए आरबखां! सुनो, अपने शाह से जा कर कहना कि वह अपने मन की निकाल ले। वह अपनी इच्छा को पूरा करने को स्वतंत्र है। क्योंकि एक हाथ से सिर ढाँप कर और दूसरे हाथ से अपनी गुदा ढाँपते हुए अरजाउ होना (प्रार्थना के लिए प्रयुक्त होना) दीन-हीन मनुष्यों का काम है हमारा नहीं! यह जो तुम माँग रहे हो, इसमें तुम्हारी तो औकात ही क्या? हमारी शरण में आए हुए को स्वयं महादेव और साक्षात मृत्युदेव यमराज भी मांगें तो उन्हें भी नहीं मिलेगा। इस पर भी यदि तुम्हारी युद्ध करने की इच्छा हो तो शीघ्रताशीघ्र अपने इष्ट देव को याद कर रणभूमि में आ जाना। हम तुम्हें तत्पर मिलेंगे।

दोहा

गजनीपुर आरब गयउ, अक्खिय सकल उदंत।
कुमर न देत हुसैन कंहं, हठि चाहत रन हंत।।४२।।

चहुवान कुमार पृथ्वीराज के मुँह से यह प्रत्युत्तर सुन कर आरबखां वापस अपने नगर गजनी को आया और आते ही अपने मालिक को जा पूरा वृत्तान्त कह सुनाया कि कुमार हुसैनखां को नहीं देने पर तुला है और खेद की बात यह कि वह हठपूर्वक युद्ध के लिए उतावला है।

इतिश्री बंशभास्करे महाचम्पूके पूर्वायणे चतुथर्ठ राशौ वीतिहोत्र-चण्डासिबंशबर्णनान्तर्गतडिड्डुरवंशबिरोचनशाकम्भरेशपृथ्वीराज चरित्रे पुरापलायितप्रत्यन्तेन्द्रकुसाब भेहरा द्यजमेरसीमनगरलुण्टन मार्गमिलितेत-रपुरबिध्वंसन दत्तोपाय नकति चिदभयीकरण लुण्टितगक्खरगौरीश-सिन्धुदेशसंविशन तत्रत्याऽर्द्धदेशपतिनरेन्द्रमथनसिंह सेखारब द्वय ढौकनाऽना-दरण कृतमन्त्रयवनेन्द्र प्रत्येक पाश्र्वनिसुरतखान प्रेषण मथनसिंह तदुक्तानूरीकरण तद्भणितिभीभीतभृत्यी भूतसेखाऽऽरब प्रागा-नीतपणप्रमदाचित्ररेखोपदायवनेन्द्रार्पण श्रुतैतदुदन्तबिन्दबंशीयमथन-सिंहप्रच्छन्नपलायन चित्ररेखा ऽनुचरीभूतगौरीशगजनीगमन तिरस्कृता-ऽन्यस्त्रीम्लेच्छराज तदाऽऽसज्जन यवनेन्द्रबान्धवहुसैन पणस्त्री परस्पर प्रसक्तीभवन।

श्री वंशभास्कर महाचम्पू के पूर्वायण की चौथी राशि में अग्निवंशी

चहुवान वंशवर्णन के भीतर डिड्डुरवंश के सूर्य सांभर के पति पृथ्वीराज के चरित्र में पहले भागे हुए यवनेन्द्र का कुसाब भेहरा आदि अजमेर सीमा के नगर लूटना, मार्ग में मिले उन गाँवों को बल से नाश करना, कई लोगों का भय से नजराना देना, गक्खर को लूटकर सहाबुद्दीन गौरी का सिंधु देश में जाना, तहाँ देशपति नरेन्द्र महनसिंह और सेख आरब दोनों के नजराना देने से इनकार करना, सलाह करके बादशाह का हर एक के पास निसुरतखान को भेजना, उसके कहे हुए को महनसिंह का नामंजूर करना, उस निसुरत खां के कहने से भयभीत होकर सेख आरब का चाकर होना, पहले लाई हुई चित्ररेखा नामक गणिका का बादशाह के नजर करना, और वृत्तान्त सुनकर बांदा जाति के क्षत्रिय का छिपकर भागना, चित्ररेखा का अनुचर होकर गौरी पति का गजनी जाना, म्लेच्छराज का और स्त्रियों को छोड़ देना, यहाँ बादशाह के असज्जन बाँधव उस हुसैन का और उस चित्ररेखा नाम गणिका का परस्पर आसक्त होना।

ज्ञाततदृतम्लेच्छमहीपतद्बान्धवस्वदेशनिष्कासन प्राप्तप्रच्छन्नपणस्त्रीकहुसैनपृथ्वीराजशरणागमन नागपुरन्यस्तुसर्वस्वतन्म्लेच्छखट्टूपुराऽऽखेटरणरममाणचहुवाणकुमारचरणजिघृक्षुभवन स्वदौत्यसम्मतश्रावितोदन्तखत्रिसुन्दरदासकुमारसभाप्रस्थापन वाचितविज्ञप्तिपत्रकुमार स्वगोष्ठीसहमन्त्रण निशिचतप्रपन्नत्राणढौकितढौकनप्राप्ताऽभयस्थितदविष्टम्लेच्छदर्शन नागपुरागतकुमारतदर्थगज बाजि धर्मायणधाम सहितहांसीपुरपट्टाऽर्पण हुसैन कुमारार्थगज बाजि तूणीर चाप माणिक्य हीरकाऽऽदिनिवेदन श्रुतैतदुदन्तयवनेन्द्रहुसैननिग्रहार्थपत्रप्रेषण निराकृततद्दूतचतुष्क कुमारप्रपन्ननिवासार्थनीतिराज खत्रिनिकेतपुनरर्पण बिदिततद्वृत्तान्तकृतमन्त्रयवनेन्द्रसेखाऽऽरबसहितपत्रनागपुरप्रेषण तदाऽऽगताऽऽरबसर्वोदन्तकुमारसभाश्रवण तिरस्कृततदुक्तकुमारसेखप्रतिप्रस्थापन यवनेन्द्रसभाप्रान्तसेखभूतवृत्तनिवेदन मष्टादशो मयूखः ॥१८॥ आदितः सप्तविंशोत्तरशततमः ॥१२७॥

वह वृत्तान्त जानकर बादशाह का अपने बांधव को देश बाहर निकालना, चोरी-चोरी गणिका को लेकर हुसैन का पृथ्वीराज की शरण में जाना, अपने सर्वस्व को नागौर में रखकर उस म्लेच्छ की खाटू पुर में शिकार खेलने वाले चहुवान कुमार के चरण ग्रहण करने की चाहना करना, अपने दूत की सलाह

से वृत्तान्त सुनकर खत्री सुन्दर दास का कुमर की सभा में प्रस्थापन करना और वह अरजी पढ़कर कुमार का अपनी सभा से सलाह करना, प्राणों को अर्पण करके शरण आये हुए की निश्चय ही रक्षा करना. और धोखा देकर अभय को प्राप्त होकर दूर खड़े म्लेच्छ को देखना, नागौर जाकर कुमार का उस म्लेच्छ को हाथी घोड़ा देना, और धर्मायन के धाम सहित हांसीपुर का पट्टा देना, हुसेन का कुमार पृथ्वीराज को एक हाथी पाँच घोड़े, पाँच तूणीर, पाँच धनुष, माणिक्य, एक हीरा आदि नजर करना, यह वृत्तान्त सुनकर बादशाह का हुसैन को पकड़ने के लिए पत्र भेजना, उन दूतों का अनादर करना और कुमार का शरण आये हुए के रहने के लिए नीतिराज खत्री का मकान देना, वह वृत्तान्त जानकर बादशाह का शेख आरब सहित नागोर पत्र भेजना, उस आए हुए आरब का सब वृत्तांत कुमार को सभा में सुनाना, उसके कहे हुए का अनादर करके कुमार का शेख को वापस भेजना, बादशाह की सभा में प्राप्त होकर शेख का पहला वृत्तान्त निवेदन करने का अठारहवाँ मयूख समाप्त हुआ और आदि से एक सौ सत्ताईस मयूख हुए।

प्रायो ब्रजदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

दोहा

गौरिय सुनि आरब गदित, बिरचि मन्त्र सजि बीर।

चढि चल्लिय चहुवान पैं, धारा चक्खन धीर॥१॥

आरब खां ने जब लौट कर सारे हालात बताते हुए समाचार कह सुनाये जिसे सुन कर शहाबुद्दीन गौरी ने अपनी सभा बुलवाई और उसने अपने योद्धाओं से मंत्रणा की। फिर अपने योद्धाओं से कहा कि समय आ गया है इसलिए सज्जित हो कर जंग के लिए बढ़ो। वहाँ रणभूमि में तलवार की धारों के स्वाद चखने का वक्त आ गया है।

अन्त्यानुप्रासिनी रोला

साकम्भर सिर कुपित साह चतुरंग चलाये।

खिजि रुस्तुम तत्तारखान उमड़ावत आये।

सूर जमाम कमाम सेख आरब उफनाये।

खानकुतब खुरसानखान रसबीर रचाये॥२॥

मीरमुहब्बत मोजदीन सहन्याज सजाये।
हाजी तिम गाजी हुसैन बाजीद बढाये।
मत्त मतंगज मंडलीन कुलगिरि कंपाये।
भू डगमग्गी हयन भार दृग नाग दुराये॥३॥

शाहबुद्दीन ने कुपित हो कर अपनी चतुरंगिनी सेना को चहुवान पर चढ़ाई के लिए सज्जित किया। इसमें रुस्तम खां, तत्तारखां आदि योद्धा खीज कर रणोत्साहित हो कर आए। जमाम, कमाम, शेख, आरब आदि सभी उपटंक वाले वीर एकत्रित हुए। कुतुबखान, खुरसान खान जैसे वीर रस के पगे बढ़े। मीर मुहब्बद, मोजदीन, शहनाज, हाजी गाजीहुसैन आदि ने अपने घोड़े बढ़ाए। मस्त हाथियों की मंडली कुलाचल पर्वत को कंपायमान करती बढ़ी। घोड़ों के पोड़ों (पावों) के प्रहार के भय से भूमि डोलने लगी और यकायक एक जगह भार बढ़ने से शेपनाग ने अपनी आँखें बंद कर ली (अतिरिक्त भार बढ़ने से एक ही ठौर पर पृथ्वी का संतुलन बिगड़ गया उस संतुलन को साधने के लिए शेपनाग की यह दशा हुई)।

इम हंकत गजनी अधीस छोनी दल छाये।
रोध बचन खुरसानखान कर जोर कहाये।
रन निब्बल हिंदुन हराय भ्रम अप्प भुलाये।
चहुवानन के चंद्रहास पहिलें नन पाये॥४॥
कहिहै पीछैं होन कोउ साह न समुझाये।
तमकि उठ्यो तत्तारखान नय बैन न भाये।
बुल्ल्यो हिंदुन जबर जानि खुरसान खिसाये।
डरि अप्पन सबकों डरान अब मन्त्र उपाये॥५॥
बहुरि कही खुरसान बीर तुम लोभ लुभाये।
अब देर न तत्तार यार चलि चक्खहु चाये।
है बरजोर कि निबल हिंदु रन लखहु रिसाये।
उपजत पीछैं ते उदंत जै पुब्ब न पाये॥६॥

इस प्रकार गजनी के शाह की आज्ञा पा कर पृथ्वा पर उसका सैन्य

दल बढ़ा। इस समय खुरसान खान ने हाथ जोड़ कर यवनेश से प्रार्थना की कि वह अपनी सेना को रोके क्योंकि हम इस भ्रम में हैं कि हम उन निर्बल हिन्दुओं की सेना को हरा देंगे। क्या पहले हमने चहुवानों की तलवारों का लोहा नहीं माना है ? मैं इसलिए निवेदन कर रहा हूँ ताकि कोई बाद में यह न कहे कि किसी ने शाहबुद्दीन को उस समय अच्छी तरह समझाया नहीं था। खुरसान खान के इस प्रकार के नीतियुक्त वचन सुन कर तत्तारखान क्रोध में तिलमिला उठा। वह बोला कि क्या इस प्रकार हिन्दुओं को बलवान मान कर खुरसान खां सहित सभी लोग खिसिया गए हैं ? यह खुरसान खान तो स्वयं डर गया है इसलिए यह हम सभी को डराने का उपक्रम कर रहा है। इसको सुन कर क्या सभी खुरासानी वीरों के मन में प्राणों का लोभ समा गया है ? मैं कहता हूँ हम सभी तातारी योद्धाओं को अविलम्ब चल कर अपनी जीत का स्वाद चखना चाहिए। हम बलवान हैं कि हिन्दू इसका निर्णय तो रणभूमि में होगा। वहाँ लड़ी गई बाजी को देखने पर यह फैसला होगा। बाद में जो वृत्तान्त होगा उसका हम पहले से कैसे अन्दाजा लगा सकते हैं ?

आरबहू खुरसान ओर रहि रोध रचाये।
बुल्ल्यो नांहि दरोग बैन खुरसान खुलाये।
आयो मैं लखि चाहुवान भट हूर लुभाये।
सरनागत दैहैं न सेर अपनी पर आये ॥७॥
जंहं पिक्खें तंहं जोरदार नहिं रंच रुकाये।
सिर पक्खै धर समुख सज्जि जिन फील जकाये।
मैं धर पुंगल लूट मंडि कति हिंदु कुपाये।
इत उतके सब इक्क होय सुनि लूट सजाये ॥८॥
जिम अंकत मंडन जनून इम मो सिर आये।
अैस घर घर हिंदु आहि ठांठा रन ठाये।
जिन बीरन तैं रचन जंग नहिं ठाम ठठाये।
जो लक्खन धन जल गिराय पय पिट्ठि लगाये ॥९॥

इस समय आरब खान ने भी खुरसान खां के सुर में सुर मिलाते हुए

फौज को रुकवाने का मशविरा दिया। उसने कहा कि अभी जो खुरसान खान ने कहा वह झूठ नहीं है। मैं स्वयं अपनी आंखों से देख कर आ रहा हूँ कि वे चहुवान योद्धा सचमुच हूरों को लुभाने वाले हैं अर्थात् युद्ध में जान देना जानते हैं। वे सिंह रूप वीर जब अपनी पर आ जाएँ तो हुसैनखां को हरगिज नहीं टेंगे। मैंने देखा है वे बलशाली वीर तनिक भी रोके नहीं रुकेंगे क्योंकि वे अतुलनीय रण-बांकुरे अपना कटा हुआ मस्तक धरती पर रख कर युद्ध भूमि में हाथियों को गिराने वाले हैं। मैंने स्वयं पुंगल देश में लूट-पाट करते समय यह अच्छी तरह जान लिया कि इससे कई हिन्दू कुपित हो गए। इधर-उधर के रहने वाले सारे हिन्दू योद्धा इस लूट का सुन कर वहाँ लड़ने को आ एकत्र हुए थे। वे अपना निशाना मुझे बना कर क्रोध में बिफरे हुए मुझ पर चढ़ आए थे और ऐसे हिन्दू वहाँ घर-घर में हैं जिन्होंने गाम-गाम (कदम-कदम) पर युद्ध किया है। उन बहादुरों से युद्ध ठानना कोई हँसी-ठठ्ठा नहीं है। वे अपना लाखों का द्रव्य डुबो कर भी शत्रुओं की पीठ खूंदने से नहीं चूकते।

तो अप्पन रहि हैं कितेक बाजी बल आये।
असुभ सकुन चढतैं अनेक द्रुत आनि दिखाये।
आरब को हु उदंत एह सुनि द्वै हि रिसाये।
मिलि हाजी तत्तार मीर दिल दुहुँ न दृढाये॥१०॥
अक्खी तुम गजनी अधीस छम बीर कहाये।
कुमर कंठ पटकैं कमान बल बाहु बढाये।
ए आरब खुरसान अज्ज सुनि समर सिटाये।
ए न लरैं तो हम अनेक सिर दैन सजाये॥११॥
भूरिमायु भजतैंहु सिंह डरिहै न डराये।
हाजरि कै आयो हुसैन अखिलहि कै आये।
दिन हिंदुन पलटन निदान सुलतान रिसाये।
दल दर कुंचन हुकम देहु यातैं हठ आये॥१२॥

उसने आगे कहा कि हम तो हैं ही कितने और युद्ध की बाजी में कितनी देर ठहर सकेंगे? फिर यह देखो, चारों ओर से हमें अपशकुन और

हो रहे हैं। आरबखान की बात सुनते ही गजनी के वीरदल में से दो वीरों को गुस्सा आ गया। हाजी और तत्तारखान दोनों ने मिलकर अपने दिल को दृढ़ बनाया और पूरी दृढ़ता के साथ कहने लगे कि आप गजनी के अधिपति और हम वीर कहलाते हैं। ये दोनों बातें कोई मामूली नहीं। हम निश्चय ही अपने बाहुबल से उस चहुवान कुमार के कंठ को अपने धनुष की कमान से भींच डालेंगे। ये आरबखां और खुरसान खां युद्ध की बात सुनते ही डर गए लगते हैं। ये यदि नहीं लड़ना चाहें तो क्या, हम अनेक अपना सिर देने को तत्पर हैं। एक गीदड़ के भागने से सिंह नहीं भागते, वे डराए हुए नहीं डरते। हम सभी जा कर हुसैनखां को अर्जित न कर सकें तो लानत है। हम सभी गए तो उसे शर्तिया आना पड़ेगा। इस समय हिन्दुओं के दिन पलटने के लिए सुल्तान कुपित हुआ और उसने अपनी सेना को हठपूर्वक दर-कूच-दर मंजिल आगे बढ़ने का हुक्म दिया।

इम हाजी तत्तार अक्खि भय सबन भुलाये।
जे नाहर पहिलैं बजोर पुनि पक्खर छाये।
साह कटक बैंडे सिपाह इम रन उमगाये।
रचि दरकुंचन जवनराज चतुरंग चलाये॥१३॥
इम दुतन नागोर आय क्रम वृत कहाये।
संभरवारन सुनत सीस सुरलोक लगाये।
सुनत बत्त सोमेसनंद निज बीर बुलाये।
करन कनक कैमास कन्ह आदिक सब आये॥१४॥
निहचै रनमंडन निहारि कटिबंध कसाये।
अब्बन पक्खर भटन अंग बकतर बिलसाये।
मंजु बिरुद दैदै कुमार मन सबन मुदाये।
प्रतिभट मुत्तिन भुजन पुञ्जि लहि हित उर लाये॥१५॥

इस प्रकार वीरोचित वचन बोल कर तत्तारखान और हाजी खां ने अपने [illegible] का भय दूर किया। वे सिंह की तरह बलशाली तो थे ही ऊपर से इनके वालों ने सिंह पर जैसे पाखर (घोड़े का बख्तर) का आवरण

और चढ़ा दिया। शाही कटक के बावले सिपाही यह सुन कर युद्ध के लिए अतिरेक उत्साह से भर उठे। दर कूच दर मंजिल यवनराज की चतुरंगिनी सेना आगे बढ़ी। इधर (भेदिया) दूतों ने नागौर में आ कर शाहबुद्दीन की सेना के कूच के समाचार कह सुनाए। सारे चहुवानों ने जब यह सुना तो गर्व से उनके सिर आकाश को जा लगे। अर्थात् वे दर्प से भर उठे। यह बात सुनते ही राजा सोमेश्वर के पुत्र ने अपने योद्धाओं को बुलवाया। कुमार का आदेश पाते ही करन (कर्ण), कनक, कैमास, कन्ह चहुवान आदि सारे आ वहाँ एकत्र हुए और युद्ध करने का निश्चय कर उन्होंने अपनी कमर कसी। घोड़ों के ऊपर पाखर और वीरों के अंगों पर कवच शोभायमान हुए। फिर ऊपर से कुमार पृथ्वीराज ने अपने सारे वीरों को जोश दिलाया। उसने अपने लड़ने वाले सारे वीरों की भुजाओं की मोतियों से पूजा की।

भाखी अज्जन अवनि भार तुम भुजन तुलाये।
बीरन के असिधार बट्ट पय तुम प्रबिसाये।
गहिली सिर जिम घट गयेहि पच्छे नन पाये।
कर सहगामिनि नालिकेर बलि न दृग बताये॥१६॥
इम जय पक्खें तुम अमोघ मन कहुँ न मुराये।
विंटुलिगढ़ तुम पयन बंधि लंगर लटकाये।
लग्गी गर अजमेर लज्ज छक इच्छित छाये।
इक इक लिन्नी सबन आंट जय दर्प जनाये॥१७॥
सफल करन तिनकों सबेग ए बासर आये।
मन सामंतन अतुल मोद बिरुदाइ बढाये।
इम कुमार नागोर उज्झि चतुरंग चलाये।
सह हुसैन मह सम्भरीन मन पहन न पाये॥१८॥

और कहा कि वीरो! इस आर्यावर्त की भूमि का भार अब तुम्हारी इन्हीं भुजाओं पर है। यह जान लो कि तुमने अपने पैर जान-बूझ कर तलवारों के वारों से भरी राह में जबरन बढ़ाए हैं। बावरी (पागल) स्त्री के सिर पर

धरा हुआ घड़ा कब सुरक्षित वापस आता है अर्थात् नहीं आता है उसे तो फूटना ही पड़ता है। भला सती के हाथ वाले नारियल को कभी किसी ने फिर से देखा है ? अर्थात् नहीं, उसे तो उसके साथ जलना ही पड़ता है। जिस प्रकार बावली स्त्री के सिर का घड़ा और सती के हाथ का नारियल वापस नहीं लौटता है उसी प्रकार विजय के पक्ष में बँधे वीर भी युद्धभूमि से मुड़ते नहीं है। अजमेर का दुर्ग गढ़बिंटली तुम्हारे पाँवों में लंगर की तरह बँधा है इसलिए हे वीरो! यदि अजमेर की प्रतिष्ठा को ठसक लगी तो यह तुम्हारे लज्जित होने की बात है। अपने कुमार की बात सुन कर सारे चहुवान योद्धाओं ने एक-एक कर प्रतिज्ञा की और विजय के दर्प का प्रदर्शन किया। अपने वीर, जीवन को सफल करने के दिन आए हैं। ऐसी कई बातें कह कर नाना प्रकार से कुमार ने अपने साथियों का साहस बढ़ाया जिससे हुसैन खां सहित सारे चहुवान वीरों के मन युद्ध के आवेश से भरे रहें। वे किसी प्रकार भयभीत न हों और इसके बाद कुमार ने नागौर से अपनी सेना सज्जित कर उसे मुकाबले के लिए बढ़ाया।

दल सारुड़ा अचलद्रंग अन्तर उफनाये।
अज्जन सह गंगोद इष्ट चरनोद अचाये।
गायत्री जपि सहंस नाम गीता मुख गाये।
तुररे मंजर तौलसेय टोपन टंकाये॥१९॥
दैदे समुचित द्विजन दान बसु आढ्य बनाये।
करि निमाज कलमां कुरान उत प्रनुत पढाये।
इत हरि संकर उत इलाह रब रटन रिझाये।
कटक भागत्रय करि कुमार बिच बीर बटाये॥२०॥
अप्प रहिय मध्यम अनीक भर ए तंहं भाये।
गुहिलपुत्र गोविंद देव बग्गरि बिकसाये।
ख्यात कनक खिच्ची प्रसंग सह कन्ह सजाये।
बाम अनीक हुसैन बीर तस भीर तुलाये॥२१॥

चहुवान कुमार का सैन्य दल अचल नगर सारूड़ा तक उफनते हुए

जोश के साथ पहुँचा। वहाँ सारे आर्य वीरों ने गंगाजल पिया फिर अपने-अपने इष्ट देव का पूजन-अर्चन कर उनका चरणामृत लिया। फिर सभी वीरों ने अपनी-अपनी पगड़ी अथवा शिरस्त्राण पर तुलसी मंजरी के तुर्रे टाँके। इसके बाद ब्राह्मणों को बुला कर उन्हें दान दक्षिणा दे कर उन्हें धनवान बनाया अर्थात् दान पुण्य किया। उधर यवन दल में वीरों ने नमाज पढ़ी फिर कुरान और कलमा पढ़ कर विशेष प्रार्थना सहित अपने इष्टदेव को याद किया। इधर आर्यों के दल से हर-हर महादेव और उधर अल्लाह के रटने की ध्वनि मुखरित हुई। इधर चहुवान कुमार ने स्वयं को सेना के मध्य भाग में रख कर आस-पास दूसरे योद्धाओं को तैनात किया जिनमें गुहिलोत गोविन्द और बग्गरदेव थे। प्रसिद्ध योद्धा कनक, प्रसंग खीची और कन्ह चहुवान को भी मोर्चे पर लगाया। अपनी सेना की बाँई ओर के दल में हुसैन खां सहित कई वीरों को तैनात किया।

कासिमखान कमामखान रूमी छकछाये।
खिजर करीम दलेलखान सहसूर सुहाये।
तिन ढिग गुज्जर प्रातिहार जदु सम्भर जाये।
राम महन जाम रु प्रसंगसुत लरन लुभाये ॥२२ ॥
इम तीजे दाहिन अनीक अक्खैं कति आये।
दाधिम पुंडीर रु प्रमार भट तोमर भाये।
चामुण्ड रु कैमास चंद दुस्सह दरसाये।
प्रथित सिंह सलख रु पहार बलभार बटाये ॥२३ ॥
पंच अनी सज्जित पठान उतहू अनखाये।
बाम अनी खुरसान बीररस बीर रचाये।
तिम अनीक दक्खिन तुरंग तत्तार तुलाये।
इम हाजी गाजी इमाम अग्गैं उफनाये ॥२४ ॥
अबल जमाम कमाम आदि चंदोल चढाये।
मध्य अनी मिच्छन महीप रहि रंग रिसाये।
जत्थ हुजाब निजाब नूह रक्खे रनभाये।
.. ॥२५ ॥

कासिमखान, कमामखान, खिजरखां, करीमखां, दलेलखां आदि सारे वीर क्रोध में उफनते हुए अपने-अपने मोर्चे पर आ डटे। इनके साथ ही गुज्जर, प्रतिहार, यादव, चहुवान आदि वंश के राम, महनसिंह, जाम और प्रसंगसुत लड़ने को उतावले हुए। इस प्रकार तीसरे दल में दाहिनी ओर दाधिम, पुंडीर, प्रमार और तंवर योद्धा तैनात हुए। इनमें चामुण्डराज, कैमास, और चन्द जैसे दुस्सह वीर थे। प्रसिद्ध सलख और पहाड़सिंह जैसे बलवान योद्धा भी इसी भाग में तैनात हुए। उधर सामने वाले शत्रु पक्ष ने कुपित हो अपनी सेना को पाँच अंगों में सजाया। इनमें से एक दक्षिण दिशा वाले दल में तत्तारखां अपने घुड़सवारों के साथ आ डटा। इनके साथ ही हाजीखां, गाजी खां और इमाम हुसैन क्रोधित हो अग्रिम पंक्ति में रहे। अबल, जमाम कमाम जैसे यवन योद्धा चंदावल वाली दूसरी पंक्ति में तैनात हुए। सेना के मध्य भाग वाले दल में स्वयं यवनेश शाहबुद्दीन गौरी रहे जिन्होंने अपने साथ हुजाब, निजाब और नूह जैसे वीरों को तैनात रखा।

हुजम महिम रोसन रहीम प्रतिपैज पत्याये।
फेनी रुस्तुम मुस्तफा हु ठांठां जय ठाये।
पंच रु त्रय क्रम बटि पठान चहुवान चलाये।
पहिलैं बानन हय सिपाह गय निचय निराये॥२६॥
सलभ बेग़ बिसिखन प्रसार छुटि अंबर छाये।
रारि तदनु सेलन रचाई धुर धीर धपाये।
पुनि कोसन अैंचे कृपान चिर सान चटाये।
चलि चपलागति चन्द्रहास दुहुँ ओर दिपाये॥२७॥
बज्ज्यो संकुल प्रखरबाढ बहु गाढ बिताये।
खिजि हुसैन तत्तारखान मिलतहि मुरराये।
मांडलिकाख्य प्रसंगपुत्र खां गज्जन खाये।
सिर बिनु खिच्ची सिवहिं सीस चालीस चढाये॥२८॥

यवन सेना के अन्य भाग में हुजम, महिम, रोसन, रहीम, फेनी, रुस्तम और मुस्तफा खां जैसे लड़ाकों को रखा जो कुमार को पकड़ने की होड में

अपने आप को समझ रहे थे। इस प्रकार यवन सेना ने अपने आप को पाँच भागों में बाँटा। वहीं चहुवानों ने अपनी सेना के तीन सैन्य दल बनाए। दोनों ओर के दल आमने-सामने बढ़े। उन्होंने प्रतिपक्ष के घोड़ों, सिपाहियों और हाथियों के समूह को अपने बाणों की जद में लिया। फिर युद्ध शुरू हुआ जिसमें दोनों ओर टिड्डियों के वेग से छूटे बाणों से आकाश छा गया। भालों के आपसी प्रहारों से कई वीरों ने प्रतिपक्ष के वीरों को घायल किया। इसके बाद अपनी-अपनी म्यांनों से सान पर चढ़ाई गई चमचमाट करती कृपाणें निकलीं फिर दोनों ओर से बिजली की गति वाली चपल तलवारें चमकीं। उस समय लगातार (अवकाश रहित) प्रखर धार वाली तलवारें चली जिससे कई वीरों का गाढ़ चुक गया अर्थात् धैर्य जवाब दे गया। कुपित हुसैन खां और तत्तारखां दोनों पहली ही झड़प में ढेर हो गए। उन्हें प्रसंग के वी॰ पुत्र मांडलिक नामक वीर ने गर्जना कर खा लिया अर्थात् मार गिराया। इसी तरह वीर खीची ने स्वयं के कबंध होने के बाद भी महादेव को उसकी मुंडमाला हेतु चालीस कटे हुए शत्रुओं के मस्तक सौंपे।

सा‌ग्रज इत चामुंड सूर मह पूर मचाये।
अब्ब सहित खुरसान ऊरु छम संगि छिकाये।
झोरी करि तिहिं गिरत झेली पर केक पलाये।
अनी उभय मुरतहि असेस जंहं साह जुराये॥२९॥
होत इकट्ठे जवन हंकि इतके बढि आये।
चंद जाम चामुंडराज कैमास धकाये।
जवनराज हय कट्टि जाम दृढ हत्थ दिखाये।
बिक्खे साह अनेक बाह पै चढन न पाये॥३०॥
जवन चंद कैमास जाम रनबंटि रुकाये।
इहिं अंतर चामुंडराज ढिग द्विरद ढराये।
गौरी के गल चाप गेरि बल आप बताये।
कलह तत्थ सामंत काम इतके त्रय आये॥३१॥

बड़े भाई सहित शूरवीर चामुंडराज ने रणोत्सव मनाते हुए खुरसान खां

की जंघा को उसके घोड़े सहित अपनी बरछी के एक भरपूर प्रहार से चीर डाला। उसे जमीन पर गिरते हुए को झोली में झेल कर कितने ही यवन शत्रु रणभूमि से भाग छूटे। दोनों सेनाओं के भिड़ते ही सारे यवन योद्धा वहाँ आ गए जहाँ शाहबुद्दीन स्वयं था। यवनों को यों आते देख कर इधर बढ़ कर चंद, जाम, चामुंडराज और कैमास भी आ गए। इसी बीच जाम ने आगे बढ़ कर अपनी तलवार के एक प्रहार से शाहबुद्दीन के घोड़े को काट डाला। इस अप्रत्याशित आक्रमण से घबरा कर शाह की यह हालत हो गई कि उसे कई वाहन नजर आए पर वह किसी वाहन पर आरूढ़ न हो सका। इसी बीच कई यवनों ने दल बनाकर अलग-अलग चंद, कैमास और जाम को आगे बढ़ने से रोके रखा। इसी क्षण एक हाथी पर आरूढ़ होते शाहबुद्दीन के सामने झपट कर बढ़े चामुंडराज ने गौरी के गले में अपने धनुष की प्रत्यंचा फंसा कर उसे अपना बल बताया। इस झड़प में चहुवानों के तीन सामन्त काम आए।

प्रबल मांडलिक सुतप्रसंग खिच्ची बहु खाये।
सह खल गज्जन बिनुहि सीस असु अरिन उडाये।
बिक्रम राम प्रमार बीर खरबाढ चखाये।
गौरी के ढिग गजन गाहि सुरलोक सिधाये॥३२॥

साह रहत भग्गे असेस रुकि अल्प रहाये।
उतके तत्थ अमीर पंच प्रानन बिनु पाये।
ज्यान जमाम कमाम खान बपु टूक बनाये।
आरब गाजी पहलवान हक निमक चुकाये॥३३॥

उत घायल खुरसान आदि प्रतिपंथ पलाये।
इत हुसैन आदिक अनेक घन घाय घुमाये।
सोम कुमर ते सब सिराहि सुखपाल सुहाये।
सहंस बीस इत उत सिपाह पलचारन पाये॥३४॥

चहुवान पक्ष के काम आने वाले योद्धाओं में एक प्रसंगसुत मांडलिक खीची था जिसने अपना मस्तक कट जाने के बाद भी भीषण युद्ध कर कई यवनों को काल का ग्रास बनाया। उसने सिरविहीन हो कर भी कई शत्रुओं

के प्राण हर लिये और गौरी के पास कई हाथियों को मार कर स्वर्गलोक की राह लेने वालों में प्रमार वीर राम और विक्रम थे। जिन्होंने अपने शत्रुओं को अच्छी तरह अपनी तलवार के प्रहारों का स्वाद चखाया। शाहबुद्दीन के इस प्रकार घिर जाने पर थोड़े से यवन योद्धाओं को छोड़ कर शेष सारे म्लेच्छ योद्धा भाग छूटे। इस झड़प में यवनों की ओर से मरने वाले पाँच अमीर थे जिनमें ज्यानखां, जमाम, कमाम, आरबखां और गाजीखां थे। इन पाँचों योद्धाओं ने अवश्य अपना हक अदा किया। अपने मालिक के ये नमक हलाल कट कर वहाँ टुकड़े-टुकड़े हो कर गिरे। उधर घायल खुरसानखां ने तो उल्टा मार्ग लिया अर्थात् भाग छूटा और इधर हुसैनखां जैसे वीरों ने घावों से छक कर भी रणभूमि में घूमना नहीं छोड़ा और अन्त में सोमेश्वरराज के कुमार द्वारा सराहना पा कर घायल ही पालकी में सवार हो अपने शिविर को गया। दोनों पक्षों के बीस हजार वीर योद्धा इस युद्ध में कट मरे जो अन्त में मांसभक्षी पक्षियों गिद्ध आदि का भोजन बने।

रवि उग्गत संभरकुमार जवनेस जुराये।
उभय मुहूरत रहत अक्क प्रतिफल तिन पाये।
संग्रहि गौरी संभरीक इम डेरन आये।
सत्रु सिबिर उपहार सर्ब लुटवाइ लिवाये॥३५॥
पंच दिवस अरि रक्खि पास अब करुन अघाये।
कथित मन्नि कैमास केर बंधुन बिछुराये।
मंजन छादन मंडनादि क्रम ठीक ठनाये।
अंतिक बुल्लि रु अभय अप्पि पच्छे पलटाये॥३६॥
सुत हुसैन करि साह संग प्रतिमग्ग पठाये।
अक्खी बलि आवहु इतैं न अबही जिम आये।
पहिलैं रन इम पातसाह गौरीस गहाये।
इम पच्छे नागोर आइ त्रबक त्रहकाये॥३७॥

दूसरे दिन के सूर्योदय पर चहुवान कुमार और यवनेश आमने-सामने आ डटे पर दो घड़ी सूर्य के रहते यवनेश शाहबुद्दीन ने इस युद्ध का प्रतिफल

पाया। चहुवान कुमार ने उसे बंदी बना लिया और उसे पकड़ कर वह अपने शिविर में आया। इसके बाद कुमार की आज्ञा पा कर चहुवान सेना ने शत्रु दल के डेरों को लूट लिया। सारी उपहार योग्य वस्तुएँ लूट ली गई। इसके बाद पाँच दिन तक शत्रु शाहबुद्दीन को कुमार पृथ्वीराज ने अपनी कैद में रखा पर अपने विश्वासपात्र कैमास के कहने पर दया दिखाते हुए गौरी को छोड़ दिया। उसे कारागार से निकाल कर स्नान करवाया फिर नये वस्त्र और आभूषण पहनने को इनायत किए। फिर कुमार ने उसे अपने सामने बुला कर पहले उसकी कुशल-क्षेम पूछी और अभय दे कर उसे वापस अपने वतन जाने के लिए छोड़ दिया। यही नहीं अपने शरणागत हुसैन खां के पुत्र को साथ दे कर उसे अपने देश की राह थमाई और कहा कि अब कभी भूल कर भी अभी की तरह इधर आने के लिए मुँह मत करना। इस प्रकार कुमार पृथ्वीराज ने पहले युद्ध में यवनेश शाहबुद्दीन गौरी को युद्ध बंदी बनाया और इसके बाद वापस नागौर लौट कर अपनी विजय दुंदुभि बजवाई। अपनी जीत के बाजे बजवाए।

दोहा

करि रन इम पित्थल कुमर, बरस त्रयोदस बेस।
गजनीपति छोर्यो गहि रु, बिस्तरि सुजस बिसेस॥३८॥
प्रनम्यों नृप सोमेस पय, आइ बहुरि अजमेर।
जनक थप्पि सुत अंस जंहं, कहिय वाह हियकेर॥३९॥

इस प्रकार घनघोर संग्राम कर कुमार पृथ्वीराज चहुवान ने गजनीपति शाहबुद्दीन को बंदी बना कर उसे फिर स्वतंत्र कर अपनी कीर्ति का जगत में प्रसार किया। जब कि कुमार इस समय मात्र तेरह वर्ष की वय का था। इतनी छोटी सी उम्र में ऐसे पराक्रम का प्रदर्शन कर जब कुमार ने अजमेर जा कर अपने पिता को प्रणाम किया तो चहुवान राज सोमेश्वर ने अपने वीर पुत्र के कंधे थपथपाए और कहा कि पुत्र! तुमने इतना साहसिक कार्य किया इसके लिए सचमुच मेरा हृदय तुम्हें शाबासी देता है। तुम्हारी वाह वाही करते हुए मुझे तनिक भी संकोच नहीं अपितु गर्व है।

षट्पात्

अबलों रहि अमजेर गहिय पहिलैं यह गोरिय।
इतरहु समर अनेक हुलसि मंडे जिम होरिय।
जंपहिं कति जित्त्यो सु पीर अजमेर कुमर पन।
कति तिन्ह जित्त्यो कहत पाय दिल्लिय अजपत्तन।
किय नन प्रबंध बिच चंदकवि पूर्बा पर सूचन प्रथित।
इहिं हेतु हमहु नृपराम यंहं क्रमबिहीन भूत सु कथित॥४०॥[१]

कुमार पृथ्वीराज ने अद्यतन अजमेर प्रवास कर कई वीरोचित कार्य संपन्न किए जिनमें पहला कार्य गौरी को बंदी बनाना था। इसके अतिरिक्त भी कई छोटे-मोटे युद्ध रचे और उन में विजय पाई। होली के दिनों में होने वाले गेहर नृत्य के नृतकों की तरह उसने कई बार अपनी तलवार के जौहर दिखलाए। कुछ लोगों का कहना है कि जब पृथ्वीराज अपनी कुमारावस्था में अजमेर में था तब पीर (ख्वाजा मुइनुद्दीन चिश्ती) ने अजमेर के इस युद्ध में विजय पाई। (दूसरे अर्थ में कुमार पृथ्वीराज ने अपनी कुमारावस्था में पीर अर्थात् यवन शाहबुद्दीन पर अजमेर में विजय पाई) और कुछ लोग ऐसा भी कहते हैं कि पृथ्वीराज के दिल्ली जाने के बाद उसने अजमेर पर फतह पाई। चूँकि चंद बरदाई ने अपने ग्रंथ (पृथ्वीराज रासो) में कौन-सी घटना पहले

---

१. ग्रंथकार की यह टिप्पणी ऐतिहासिक तथ्यों पर आधारित नहीं प्रतीत होती। इस युद्ध में (ख्वाजा चिश्ती) पीर की विजय का प्रश्न ही नहीं उठता। अव्वल तो ख्वाजा मुय्यनुद्दीन योद्धा के रूप में नहीं बल्कि एक सूफी दरवेश के रूप में अजमेर आए थे। एक क्षण के लिए यह मान भी लें तो ग्रंथकार के स्वयं के दिये हुए विवरण में गौरी के योद्धाओं में कहीं पीर अथवा मुय्यनुद्दीन जैसा नाम नहीं आया है। सच में सूर्यमल मीसण का ऐसे वर्णन में इतनी ही गलती है कि उसने पृथ्वराज रासो से वृत्तान्तों का चयन कर लिया है। यद्यपि ग्रंथकार ने स्वयं को इस आरोप से बचाने के लिए लिखा है कि कुछ लोग कहते हैं (जंपति कति...) जैसे पद का प्रयोग किया। फिर भी ऐसे आख्यानों के चयन में असावधानी का आक्षेप तो ग्रंथकर्ता पर लगाया ही जा सकता है। चूँकि यहां प्रसंग ख्वाजा मुय्यनुद्दीन चिश्ती का नहीं है अन्यथा संपादक अपनी ओर से इसका प्रामाणिक जानकारी देने का यत्किंचित प्रयत्न करता है। पर यहाँ इतना अवश्य साफ कर देना चाहता हूँ कि एक सूफी संत कभी आक्रांता अथवा विजेता हो कर इतना लोकप्रिय नहीं हो सकता है इसलिए अजमेर फतह करने का तो प्रश्न ही नहीं उठता है। एक संभावना यहाँ दूसरे अर्थ की यह है कि यहां 'पीर' शब्द वर्णमैत्री (वयन-सगाई) अलंकार के लिए प्रयुक्त हुआ हो तब यह पीर शब्द यवन के लिए प्रयुक्त हुआ होगा क्योंकि कवि को 'कुमरपन' शब्द की वर्णमैत्री के लिए 'प' वर्ग के वर्ण की आवश्यकता हुई होगी और उसने यवन अर्थक 'पीर' शब्द का प्रयोग किया होगा।-सं.

हुई और कौन सी बाद में घटित हुई इस बाबत क्रमशः खुलासा नहीं किया है इसीलिए हे राजा रामसिंह! मैं भी इस बीती हुई बात को बिना क्रम के यहाँ लिख रहा हूँ। (इसमें मेरा दोष नहीं माना जाए)।

दोहा

साह ग्रहन पुब्बहि सकल, सूर सुभट सामंत।
भावीबस इक्कत भये, जुद्ध त्रितय परजंत॥४१॥

शाहबुद्दीन गौरी को बंदी बनाने से पूर्व में चहुवानों के सभी उमराव, सामन्त वीर, और योद्धा देवयोग (संयोग) वश ही एकत्रित हुए थे और यह एकता तीन युद्धों तक चली। अर्थात् सभी योद्धाओं की यह एकता अधिक नहीं चल पाई।

पादाकुलकम्

मंडनगढ आनंद महीपति, अनुज तास जयराज बली अति।
अरु दुव कुमर तरुन बय आवत, हम्मीर रु गंभीर महामत॥४२॥
ए हु भये सामंतन अग्ग, पच्छो कबहु न दिय स्वप्नहु पग।
परनि द्रंग अजगढ़ सपरिग्रह, इम जयराज गयो पहिलैं वह॥४३॥
पुनि हम्मीर कुमर लोचनपुर, अप्पन करि रु दाहि दहियन उर।
पाइ मान पहुँच्यो पित्थल यंहं, तदनु बुलाइ लयो अनुजहु तंहं॥४४॥
गढमंडन सन तब गंभीर हु, पहुँचि कियो सु कुमर पित्थल पहु।
तनय लह्यो जयराज हु तत्थहि, अक्खयराज नाम जय अत्थहि॥४५॥

अब हम (ग्रंथकर्ता) चहुवानों की दूसरी शाखा का वर्णन करते हैं जिसमें बूंदी के महाराव राजा मुख्य माने जाते हैं। मांडलगढ़ का राजा आनंदसिंह था जिसका छोटा भाई जयराज नामक दुर्द्धर्ष वीर और बलवान था। इस राजा आनंदसिंह के दो कुमार थे एक हम्मीर और दूसरा गंभीर। ये दोनों कुमार अत्यन्त बुद्धिमान थे। ये तीनों जयराज, हम्मीर और गंभीर कुमार पृथ्वीराज के सामंतों में अग्रगामी हुए जिन्होंने कभी स्वप्न में भी अपने पाँव पीछे की ओर नहीं बढ़ाए। जयराज ने अपना विवाह रचाया और वह अपने परिजनों सहित पहले अजमेर आया। इसके बाद कुमार हम्मीर ने नैणवा नगर पर

अधिकार कर दहिया जाति के क्षत्रियों का दिल जलाया। इसके कारण वह इज्जत (मान) पा कर पृथ्वीराज के राज में पहुँचा फिर उसने अपने छोटे भाई गंभीर को भी अजमेर ही बुलवा लिया। मांडलगढ़ से तब गंभीर ने भी जा कर चहुवान कुमार पृथ्वीराज को अपना स्वामी माना। यहीं अजमेर में ही रहते हुए जयराज को एक पुत्ररत्न की प्राप्ति हुई जिसका नाम विजय के अर्थ अक्खयराज रखा गया।

हड्डे इम सामंत च्यारि हुव, भिरि भिरि जिन्ह बाढी पित्थल भुव।
इतरहु पुब्ब कथित क्रम आये, सोम तनय सामंत सुहाये॥४६॥
पकर्‌यो जाहि बरस गजनीपति, वाहि बरस बैभव बढिगो अति।
मातामह दिल्लीपति तोमर, नाम अनंगराज कुरुकुल नर॥४७॥
सुत अभाव जावन बन सज्जिय, उर तस झूठी बिरति उपज्जिय।
पृथ्वीराज कुमर अज पत्तन, बर दौहित्र जानि जसबत्तन॥४८॥
दैंन बिचारि ताहि पुर दिल्लिय, पत्रदूत अजपुर तिहिं पिल्लय।
बंचि पत्र जनकहिं सुत बुल्ल्यो, तुमरे स्वसुर दाय इत तुल्ल्यो॥४९॥
जो प्रभु छत्र धरहु चल्लहु जंहं, तो निजदास चलैं संगहि तंहं।
यह मन जो न तोन मम आदर, स्वर्गहु होहु मैं न तिम सादर॥५०॥

इस तरह ये चारों हाड़ा (चहुवान) कुमार पृथ्वीराज चहुवान के सामन्त बने जिन्होंने युद्धों में शत्रुओं से भिड़-भिड़ कर उन्हें काटा और अपने स्वामी की भूमि का क्षेत्र बढ़ाया। पूर्व में क्रम से कहे गये वंश में वे राजा सोमेश्वर के पुत्र कुमार पृथ्वीराज की पसंद के सामन्त हुए। जिस वर्ष में गजनीपति शाहबुद्दीन को बंदी बनाया उसी वर्ष से चहुवानराज का राज्य वैभव बहुत बढ़ गया। उधर कुमार के नाना जो दिल्लीपति कुरु कुल के तंवर वंशीय राजा अनंगराज थे उनके कोई पुत्र नहीं था पर वानप्रस्थ आश्रम की अवस्था आने पर उनके मन में विरक्ति उपजी। उन्होंने अपने दोहित्र कुमार पृथ्वीराज की जब प्रसिद्धि सुनी तो मन में विचार किया कि क्यों न उसे ही दिल्ली का उत्तराधिकारी बनाया जाए। यह सोच कर राजा अनंगराज ने एक पत्र लिख कर दूत के साथ अजमेर भेजा। पत्र को पढ़ कर इस कुमार पृथ्वीराज ने अपने पिता राजा से कहा कि यह दिल्ली का राज्य आपके

श्वसुर का है इसलिए यह आपका दायभाग है। यदि आप इसे स्वीकार कर दिल्ली का छत्र धरने को चलें तो मैं आपका सेवक भी साथ चलूँगा। इस पर राजा सोमेश्वर ने कहा कि बेटा! जिस मन में मेरे लिए आदर न हो वह राज्य तो क्या मैं स्वर्ग के बुलावे को भी ठुकरा दूँ। मैं वहाँ जाना भी स्वीकार नहीं करूँगा।

बदिय सुतहिं नृप तोहि बुलावत, भू विपुलहु मोहि न इम भावत।
जनक सुत न यह बाद मच्यो जब, तत्व कहिय कैमास कन्ह तब ॥५१॥
अब तो प्रभु चल्लहुस्वीकरि यह, समुझैहैं कुमरहिं पुनि नय सह।
उभय घाँहिं संबोधि सुभट इम, तात तनय किय सज्ज चलैं तिम ॥५२॥
पुर अजमेर मच्चि मह पूरन, अब जान्यों सब अरि अंकूर न।
बिक्रम सक बसु दृग सिव बित्तत, गढ दिल्लिय सुत सहित सोम गत॥
कुमरहिं तब सोमेस दयो कहि, मातामह तुमकों अप्पत महि।
सो तुम लेहु करहु मम सासन, पुनि कुल रीति चलहु पटुतासन ॥५४॥
पित्थल तब दिल्लिय प्रभुताई, पंचमि मग्गमास सित पाई।
गंगाद्वार प्रांत तोमर गय, भूपसोम दिल्लिय हुव निर्भय ॥५५॥
पृथ्वीराज चरित जो प्रकटन, सो हम अत्थ कह्यो बिस्तरसन।
खिल चरित्र जग में जे ख्यातहिं, क्रम समास ते पुनि दैहैं कहि ॥५६॥
जु हम्मीर गंभीर चरित जंहं, तक्कहु नृप संक्षिप्त सेस तंहं.
तत्थहु ख्यात कतिक दैहैं तजि, भूपराम समसन संगति भजि ॥५७॥

इसके बाद आगे अपने पुत्र को कहने लगे कि पुत्र! दिल्लीराज ने तुम्हें बुलाया है पर इस संदर्भ में इतना कहना चाहता हूँ कि मेरे पास भी भूमि बहुत है इसलिए तेरा इस तरह दिल्ली की भूमि को ताकना मुझे कतई अच्छा नहीं लग रहा। पिता और पुत्र में दिल्ली जाने और न जाने को ले कर जब विवाद हो गया तब कन्ह चहुवान और मंत्री कैमास ने बीच-बचाव करते कहा कि हे स्वामी! आप दिल्ली जाना स्वीकार कर लें। आगे हम कुमार को नीति की बात कह कर समझाने का यत्न करेंगे। दोनों सामन्तों ने दोनों ओर (पिता और पुत्र) ऐसी स्थिति पैदा की कि पिता और पुत्र दोनों दिल्ली जाने के लिए तैयार हो जाएँ। यह देख कर अजमेर नगर में उत्सव मनाया गया कि अब शत्रु का अंकुर भी नहीं पनप पाएगा। विक्रमी संवत् ग्यारह सौ अठाईस के बीतते

समय अपने पुत्र सहित अजमेर के राजा सोमेश्वर ने दिल्ली को गमन किया। वहाँ पहुँच कर चहुवान राज ने अपने कुमार से कहा कि बेटा! दिल्ली की भूमि (राज्य) तुम्हारे नाना तुम्हें सौंपना चाहते हैं। वह तुम ले लो और मेरा राज्य भी तुम संभालो पर अपने कुल की रीति के अनुसार पूरी सावधानी और चतुराई से तुम्हें राज करना पड़ेगा। यह पिताज्ञा सुन कर कुमार पृथ्वीराज ने माघ मास के शुक्ल पक्ष की पंचमी तिथि के दिन दिल्ली का निर्भय राजा होना स्वीकार किया। दिल्ली का राज अपने दोहित्र पृथ्वीराज चहुवान को सौंप कर तंवर राजा हरिद्वार (गंगाद्वार) के क्षेत्र में चले गए और पीछे से सोमेश्वर के अधिकार में दिल्ली का राज आया। हे राजा रामसिंह! मैंने (ग्रंथकर्ता) यहाँ पृथ्वीराज का चरित्र जो प्रसिद्ध नहीं है उसे उजागर किया है वह भी थोड़ा विस्तार के साथ! और जो प्रकट है उसे संक्षेप में आगे कहूँगा। इसके अतिरिक्त जो चहुवान हम्मीर और गंभीर का चरित्र है उसे यहाँ अभी मैं संक्षेप में आपसे कह रहा हूँ। सो आप जानें! इस विषय में भी जो बातें ज्ञात हैं उसे मैं छोड़ दूँगा पर हे राजा रामसिंह! संक्षेप में अवश्य उसका वर्णन करूँगा।

दोहा

कुल तंहं पृथ्वीराज को, पीढी सप्त प्रमान।
लिखिहैं नृप हम्मीर लग, जंहं रनथम्भहु जान॥५८॥
न हम्मीर पीछैं नृपति, कुल तस प्रकट्यो कोहु।
निम्मरान द्रंग रु निकट, जनन सुनैं अब जोहु॥५९॥
पहु चहुवानन पट्टपति, यह डिड्डुर कुल आहि।
पित्थल लग यातैं प्रकट, बरन्यों रीति निबाहि॥६०॥
याकुल सों लघु रन अतुल, ओरन सों गुर एह।
उरथ बंस कहियत अखिल, ग्रन्थ हेतु जस गेह॥६१॥

हे राजा रामसिंह! मैं पृथ्वीराज के कुल को सात पीढ़ियों तक कहूँगा और वह भी राजा हम्मीर पर्यन्त और उसे भी रणथंभोर तक लिखूँगा। चूंकि इस राजा हम्मीर के बाद उसके कुल में कोई प्रसिद्ध नहीं हुआ हाँ, अवश्य नीमराणा नगर में और उसके आसपास पृथ्वीराज के वंशज सुने गए हैं। हे

राजा रामसिंह! चहुवानों का पट्टपति (पाटवी) कहलाने वाला यह डिड्डुर कुल है वह पृथ्वीराज तक प्रसिद्ध रहा इसलिए मैंने उसका वर्णन किया। इस महान डिड्डुर कुल से थोड़ा छोटा पर युद्ध में अतुलनीय यह उरथ का वंश है। मैं अब उसी वंश का वर्णन करता हूँ। जो इस ग्रंथ के बनने का कारण और कीर्ति का घर है।

इतिश्री वंशभास्करे महाचम्पूके पूर्वायणे चतुर्थ राशौ वीतिहोत्र-चण्डासि बीज्यविरोचनडिड्डुर कुलकोटीरशाकम्भरेशपृथ्वीराज चरित्रे शरणागतनिमित्तसाहससमरसौमि सहाबुद्दीन सम्मिलन राम मथन जाम माण्डलिक सहायसमर्थहुसैन प्रहततत्तार पलायन विमूर्द्धप्रासङ्गिखिच्चि-माण्डलिक गज्जनखाना दिचत्वारिंशन्महाम्लेच्छमारण चामुण्डराज शक्तितुरङ्गखुरसानखानोरुद्वय वेधन पुण्डीर यादव दाधिमत्रस्तैकी भूत-सपत्नसैन्यसमभिषेणन पातितपीलुचाणुण्डराज जाम पद्वीकृतयवनेन्द्र कन्धराधनुर्द्धरण कुमारसामन्तत्रय म्लेच्छराजभटपञ्चक शूरशय्याशयन सायुष्कप्राप्तप्रहारहुसैन मूढीभवन विंशतिसहस्त्र सैन्यद्वय संस्थासमादान कुमारपृथ्वीराज विहितबैभवबिशिष्टयवनेन्द्रस्वशिबिरानयन षष्ट दिनका-रानिष्कासितसमाश्वासितगोरिसहाबुद्दीनहौसेनिहस्तगजनीप्रतिप्रेषण सोमेश्वर प्रत्यागतप्रणतस्वकुमारश्लाघन किय दनुक्तयुद्धादिवृत्तान्तपौर्वा पर्य निर्णयनिरसन तृतीय प्रघनप्रारम्भपर्यन्तप्राक्समयसम्रस्तसामन्त-समागमपुनः सूचन तदवसरक्रमसमागतजयराज हम्मीर गम्भीर जायराग्यक्षयराज हड्डुसामन्तचतुष्टय सौमि समाराधनसूचन म्लेच्छराज प्रथमग्रहणांनंतरतद्वर्षसहोवदातपञ्चमी समयसामन्तसोम सम्बोधित-कुमारपृथ्वीराजार्थदत्तदिल्लीकतोमराऽनङ्गपालगङ्गाद्वारगमन तदवध्य-परिचितपृथ्वीराज चरित्रबिस्तरवर्णन शेषहम्मीर गम्भीर समाचार-सङ्गतवर्तिष्यमाणताविख्यापन सौमिपर्यन्तचंडासि पट्टधरभरत वंशबर्णना-ऽन्तरतदनुजोरथ कुलक्रमकथनसन्धास्वीकरणमेकोनविंशो मयूखः ॥१९॥ आदितोऽष्टाविंशत्त्युत्तरशततमः ॥१२८॥

श्रीवंशभास्कर महाचम्पू के पूर्वायण की चौथी राशि में अग्निवंशी चंडासि हैं कारण और सूर्य जिसका ऐसे डिड्डुरकुल के मुकुट सांभर नगर के पति पृथ्वीराज के चरित्र में शरणागत के निमित्त बादशाह के युद्ध में सोम के पुत्र (पृथ्वीराज) का शहाबुद्दीन से मिलना, राव मथन जाम मांडलिक की

सहायता से समर्थ होकर हुसैन का तत्तार को मारकर भगा देना, बिना मस्तक प्रसंग के पुत्र खिच्ची मांडलिक का गज्जनखां आदि चालीस म्लेच्छों को मारना, चामुंडराज का शक्ति से खुरसान और खान दोनों के घोड़ों को मारना, और दोनों की साथल (जंघा) बेधना, पुंडीर यादव और दाहिमा तीनों का एक होकर शत्रुओं की सेना को मारना, हाथी को पटककर चामुंडराज और जाम का बादशाह को पैदल करना, और उसके गले में धनुष डालना, और कुमार के तीन सामन्तों तथा बादशाह के पाँच उमरावों का मारा जाना, बाण का प्रहार पाकर हुसैन का मुर्छित होना, दोनों तरफ की बीस हजार सेना का मारा जाना, बादशाह के डेरों को वैभव सहित लूटकर कुमार पृथ्वीराज का बादशाह को अपने डेरों में लाना, छठे दिन कैद से निकाल कर आश्वासन लेकर गौरी शहाबुद्दीन को हुसैन के पुत्र के हाथ गजनी को भेजना, सोमेश्वर के पास प्राण को पूर्ण किये हुए अपने कुमार की तारीफ करना, कितने कई युद्धादि वृत्तान्त के पौर्वापर्य निर्णय का मिटाना, तीसरे युद्ध के प्रारंभ के पहले समय समस्त सामंतों के मिलने का फिर बताना, उस समय में क्रम से आये हुए जयराज, हम्मीर, गंभीर, जयराज का पुत्र अक्षयराज हाडा इन चारों का पृथ्वीराज की आराधना करने का विवरण, बादशाह को प्रथम पकड़ने के बाद उसी वर्ष मार्गशीर्ष सुदी पंचमी को सामन्त और सोमेश्वर के समझाने से कुमार पृथ्वीराज के अर्थ दिल्ली का राज देकर तोमर अनंगपाल का गंगाद्वार जाना, उस समय तक अप्रसिद्ध पृथ्वीराज चरित्र का विस्तार से वर्णन करना, बाकी हम्मीर गंभीर के समाचारों के साथ वर्तमानता कहना, पृथ्वीराज पर्यंत चहुवानों के पाटवी भरत वंश के भीतर उसके छोटे भाई उरथ के कुल का कथन करने की प्रतिज्ञा करने का उन्नीसवाँ मयूख समाप्त हुआ। और आदि से एक सौ अट्ठाईस मयूख हुए।

प्रायो ब्रजदेशीय प्राकत मिश्रित भाषा

दोहा

हरि कमला ईश्वर उमा, गनपति बानी गाई।
अक्खहिं ग्रंथनिमित्त अब, उरथ बंस अधिकाई॥१॥
सुत कनिष्ट नृप सोम कै, उरथ भयो चहुवान।
याही तैं कुल रावरो, भूप राम कुलभान॥२॥

करन भूप पुर कालपी, जद्दव कुल अभिजात।
सुगुना आनी तस सुता, व्याहि उरथ विख्यात॥३॥
सुगुना मैं हुव पंच सुत, बिदित उरथ सन बीर।
चक्रपानि तिनमैं चतुर, धुरधर अग्रज धीर॥४॥

मैं ग्रंथकर्ता (सूर्यमल मीसण) भगवान विष्णु, लक्ष्मी, शिव, पार्वती, गणेश और माँ सरस्वती की स्तुति कर इस ग्रंथ के रचने के कारण रूप में जो उरथ वंश है उस पर प्रमुखता से ध्यान दे कर उसका वर्णन करता हूँ। पूर्व में वर्णित राजा सोम के जो दो पुत्र हुए उनमें से बड़ा भरत था और उससे छोटा उरथ नामक चहुवान हुआ। हे कुल के सूर्य राजा रामसिंह! इसी उरथ से आपका वंश अस्तित्व में आया। कालपी नामक राज्य का राजा करण हुआ जो यादव वंशी था। इस राजा की सुगुणा नामक पुत्री से उरथ ने विवाह रचाया। इस सुगुणा की कोख से उरथ को पाँच वीर पुत्र हुए। उनमें धुर को धारण करने वाला धीर चक्रपाणि नामक सबसे बड़ा पुत्र था।

पादाकुलकम्

अबरदेव अरु गोष्टपाल इम, जाम रु बकुट अनुज ए क्रम जिम।
मातामह सन मिलन धारि मन, पंच हि गये कालपी पत्तन॥५॥
मातुल तंहं इनके चूड़ामनि, भूप करन के तनय दईभनि।
जो युद्धेष्ट भरत सुत जानों, प्रभु सुहि राजकुमार प्रमानों॥६॥
अनुगन बजहु जाइ तुम बाके, रहहु इहां सुख लेहु रसाके।
मातुल सन यह सुनत अनखि मन, बदैं कुमर नृप होते बिलंब न॥७॥

इस धीर-वीर चक्रपाणि के चार छोटे भाई अबरदेव, गोष्टपाल, जाम और बकुट थे जो इसी क्रम से उत्पन्न हुए। ये पाँचों भाई एक बार अपने नाना से मिलने के लिए अपने ननिहाल कालपी नगर को गए। वहाँ उसका मामा जो राजा करण का पुत्र था ने चक्रपाणि और उसके भाइयों से कह दिया कि भरत पुत्र युद्धेष्ट को अपना स्वामी मानों और उसे ही राजकुमार जानो। बाद में जा कर इसके चाकर (सेवक) कहलाओगे इसलिए थोड़े दिन यहाँ रह कर भूमि का स्वाद चख लो (जागीर का राज्य सुख भोग लो)। अपने मामा से

यह सुनते ही मन में कुपित हो कर कुमार चक्रपाणि ने कहा कि हे मामा! राजा होने में क्या विलम्ब लगता है। अर्थात् राजा होने में कौन सा वक्त लगता है।

षट्पात्

चक्रपानि लहि चैंकि कुमर सानुज इतीक कहि।
सज्जि सजव निज सत्थ चढ्यो नृपता भुग्गन चहि।
दिय जिहिं बचन प्रतोद बहुत ताके कुलबंधव।
मैंनपुरी बिच मारि लयो वह पुर लग्यो न लव।
करि बहु अनीक गढ सज्ज करि मातुल प्रति लिखि मुक्कलिय।
युद्धेष्ट भ्रात तावक अवनि बंधुन हनि भुग्गत बलिय॥८॥

चक्रपाणि ने अपने छोटे भाइयों से खीझ कर वहाँ से शीघ्र ही वापस रवाना होने के लिए कहा। वे अपने ननिहाल से ही राजा बनने की मन में धारणा कर चढ़े। जिसने वचन रूपी चाबुक लगाया था अर्थात् दुखते शब्द कहे थे उसी के कुल के कई बांधव जो मैनपुरी पर काबिज थे। इन भाइयों ने सर्वप्रथम उन्हें मार कर मैनपुरी पर अपना अधिकार कर लिया और इस कार्यवाही में उन्हें नाम मात्र का समय (क्षण भर) लगा। इसके बाद चक्रपाणि और उसके भाइयों ने अपनी सेना बनाई और गढ़ लेने को आमादा हो कर अपने मामा को कहलवाया कि युद्धेष्ट के भाइयों ने तुम्हारे कुल की भूमि को तुम्हारे ही बांधवों को मार कर अपनी भुजाओं के बल पर अर्जित कर लिया है।

पराजितन पुनि पहुँचि द्रुतहि मुख जाय दिखाये।
चूडामनि लखि चैंकि बहुत दल सज्ज बनाये।
जनक करन बरज्योहु रुक्यो तदपि न गुनराजस।
जंबुक सिंह जगाई त्वरित बसभूत भयो तस।
बल कों भजाई अरि मारि बहु बहुल जाइ भीरुक बनिक।
निजगेह पकरि लायउ निडर चक्रपानि चूडामनिक॥९॥

हारे हुए बांधव शीघ्र ही भाग कर अपने स्वामी के पास गए। उनके उतरे हुए उदास चेहरे देख कर चूड़ामणि क्रोध में बिफर गया उसने तुरन्त ही

अपनी सेना को सज्जित होने का आदेश दिया। अपने पुत्र को इस प्रकार युद्ध की तैयारी करते निरख पिता राजा करण ने उसे ऐसा करने के लिए मना किया पर वह रजोगुणी वीर नहीं रुका। गीदड़ जैसे सिंह को जगा देता है पर तुरन्त ही वह वन के राजा के वशीभूत हो उसका दास बन जाता है उसी तरह अपनी सेना को ताबड़तोड़ ढंग से वहाँ ले कर गया जहाँ झड़प होते ही चक्रपाणि ने उसकी सेना को खदेड़ दिया। उसने अपने कई शत्रुओं को मार गिराया। वह राजकुमार चूड़ामणि तो मात्र एक भीड़ साथ ले जा कर बनिये की तरह कायर सिद्ध हुआ। परिणामस्वरूप वह निडर चक्रपाणि उस चूड़ामणि को बंदी बना कर अपने घर ले आया।

चूड़ामनि सुभचित्त बदिय अच्छिय गिनि बंधव।
इन कुमरन अति गब्ब प्रकट सुहि मन्नि पराभव।
मातुल कुल बहु मारि इतर बहु ठानि पलायित।
मैंनपुरिय निज अमल कियउ कलि भाव जाइ कित।
मातुल बहोरि करि कैद इम दर्प अतुल बलि छोरि दिय।
कछु दब्बि समस्थलिका निकट राज्य बिरचि उद्धत रहिय ॥१०॥

यद्यपि चूड़ामणि नें तो अपने संबंधी मान कर कालपी में शुद्ध मन से यह बात कही थी कि भानजो! कुछ दिन यहाँ रह कर राज्य सुख का स्वाद चखो। परन्तु इन पाँचों भाइयों ने इसे अलैदा लिया। इन कुमारों ने अपने गर्व के कारण इस बात को सीधा अपना निरादर माना और इस बात से उत्तेजित हो कर अपने ही मामा के कुल बांधवों का संहार कर डाला। शेष बांधवों को वहाँ से खदेड़ कर भगा दिया और मैनपुरी पर अपना अधिकार जमा लिया। इसे कलियुग का प्रभाव ही कहा जाएगा अन्यथा कलि का प्रभाव और क्या होता है कि उन्होंने अपने मामा को ही कैद कर लिया। अपने मामा के बांधवों का नाश कर अपने ननिहाल के राज्य की भूमि को ही दबा लिया। यह भी एक तरह से उचित रहा कि उन्होंने अपने दर्प में चूर हो कर अपने मामा को जीवित अवश्य छोड़ दिया। इस पाँचों बांधवों ने समस्थली के पास का क्षेत्र हथिया लिया और इसी से अपने राज्य की रचना कर वे अनम्र बने रहे।

दोहा

यह उदंत सुनतहि उरथ, बुल्यो सुतहि कुबुद्धि।
किय बिरोध अच्छिय कहत, सु अब होइ किम सुद्धि ॥११ ॥
यह बिचारि तजि गेह इम, दंपति गय उद्यान।
भव बिरक्त दुव जोग भजि, सहित गये सुरथान ॥१२ ॥
याहि समय मेवार इत, मोरी संभर मारि।[१]
असिबल राउल बप्प लिय, चित्रकूट रचि रारि ॥१३ ॥

यह वृत्तान्त जब चक्रपाणि बंधुओं के पिता उरथ ने सुना तो उसने अपने पुत्रों को अत्यन्त कुबुद्धि कहा। यह क्या, अच्छी भले की बात कहने पर इस हद तक विरोध और विनाश, अब अपने पुत्रों के इस कार्य का प्रायश्चित कैसे हो? ऐसा विचार कर उसने अपना घर-बार त्याग दिया और उरथ दम्पत्ति विरक्त हो कर वन में चले गए। दोनों पति-पत्नी ने संसार से लगाव और प्रीति को तोड़ कर योग साधना की और अपनी देहों का त्याग कर अन्ततः स्वर्गलोक को गए। इसी समय मेवाड़ में मोरी वंश के चहुवानों को मार कर अपनी तलवार के बल के सहारे युद्ध कर बापा रावल ने चित्तौड़ पर अपना अधिकार जमाया।

मैनपुरिय इत हुव महिप, चक्रपानि रनचंड।[२]
कियउ राज्य निज खग्ग करि, अंतरवेदि अखंड ॥१६ ॥

टिप्पणी : १. यहाँ पर ग्रन्थकर्ता ने चक्रपाणि के मैनपुरी लेने का सम्वत् नहीं लिखा कि जिससे बापा रावल का ममकालीन होना पाया जावे, इसलिये यहाँ पर लिखा जाता है कि बापा रावल ने विक्रमी सम्वत् ७९१ में चित्तौड़ का प्रसिद्धि किला मान मोरी से अपने अधिकार में किया था और ८१० के सम्वत् में बापा रावल ने मेवाड़ में एकलिंगेश्वर के मंदिर से उत्तर की तरफ एक कोस की दूरी पर समाधि ली थी वह स्थान अब भी बापा रावल के नाम से प्रसिद्ध है। उस ममय चक्रपाणि ने अन्तर्वेदी का राज्य लिया हो इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता। ग्रंथकर्ता ने इन मोरियों को चहुवाण माना है सो बड़वाभाटों की पोथियों में देखकर लिख दिया होगा। परन्तु बहुधा लोग इन मोरियों को मुरु के वंश के मानते हैं।

२. यहां ग्रंथकर्ता ने अपनी मूल प्रति में भी दो छप्पयों अथवा छंदों की जगह खाली छोड़ दी है। संभवतः सूर्यमल इन छंदों में समय संबंधी अपनी शंका का प्रकटन करना चाहते रहे हों अथवा यह भी संभव है कि वे मोरी वंश को चहुवान मानने का अपना तर्क देना चाह रहे हों। पर अधिक कुछ कहा नहीं जा सकता क्योंकि कुछ लिखा नहीं गया है मात्र दो छंद १४ व १५ की संख्या वाले लिखने की जगह छोड़ दी है। मैं भी यह सब कुछ मात्र कयास लगा कर ही कह रहा हूँ क्योंकि ऐसी स्थिति में कयास ही लगाया जा सकता है। - सं.

जंहं चालुक बलराज को, सुत घुग्घुल कहुँ जुद्ध।
मन असंक अप्रज मर्यो, मन्न्यों पितर प्रबुद्ध॥१७॥

वह रणभूमि में अपनी वीरता का भयंकर प्रदर्शन कर मैनपुरी को हस्तगत कर वहाँ का राजा बना। इस वीर चक्रमणि ने अपनी तलवार के बल पर अन्तर्वेद का क्षेत्र अपने अधिकार में किया और दोनों जगहों को मिला कर अपना अखंड राज्य स्थापित किया। यहाँ के युद्ध में बलराज चालुक्य का निडर पुत्र घुग्घलु युवावस्था में ही बहादुरी से लड़ता हुआ शहीद हुआ। चूंकि वह नि:संतान मारा गया इसलिए उसके वंशजों ने उसे पितर माना।

षट्पात्

कालंजर नृप कन्ह वंस प्रामार बिरोचन।
तनया स्यामा तास धरनिनायक किन्नी धन।
अनुज अबरदेव सन भये अबरा संभर भुव।
गोष्टपाल सन गुट्ठवा जाम जजाम हि हुव।
कुल बकुट जात बउडा कहत उरथ वंस चउ भेद इम।
नृप चक्रपानि मुख्यसु निडर, तत्थ रहित जय पाइ तिम॥१८॥

कालंजर देश के प्रामार वंशीय राजा कन्ह का वंशज राजा विरोचन था इसकी पुत्री श्यामा को राजा चक्रपाणि ने अपनी ब्याहता रानी बनाया। इसके अन्य छोटे भाइयों के नाम से अलग-अलग वंश चहुवानों में चले। छोटे भाई अबरदेवं की संतानें अबरा चहुवान कहलाई। गोष्टपाल के वंशज गुठ्टवाल कहलाए। इसी तरह तीसरे भाई जाम से उत्पन्न सारे जाम ही कहलाए। बकुट के वंशज बछड़ा कहलाए। राजा उरथ के वंशजों में ये चार मुख्य भेद हुए। सबसे बड़ा पुत्र निर्भय चक्रपाणि विजय प्राप्त कर वहाँ का राजा बना।

सोरठा

बहुत हि राज्य बढाई, रन अनेक जित्ति रु रसिक।
स्यामा सह सम लाइ, चक्रपानि सुरपुरचल्यो॥१९॥

अपने राज्य की सीमा का बहुत विस्तार कर नृपति चक्रपाणि ने कई युद्धों में विजय प्राप्त की। वह एक रण रसिक राजा की अपनी भूमिका

अदा कर अपनी सहधर्मिणी श्यामा के साथ राग द्वेषादि से रहित हो स्वर्गलोक को गया।

दोहा

अबरदेव कुल में अडर, भो इक नृप भगवान।
जिहिं दिय बंदिय जल्ह कों, सासन सट्ठि सुजान॥२०॥
गोष्टपाल कुल बिच सुगुन, भूप नाम भगवंत।
पुरभरेह भो अति प्रबल, रन मन लरन दुरंत॥२१॥
नीलकंठ द्विज ग्रंथ किय, इक भास्कर अभिधान।
बिदित प्रतिज्ञा लिन्न बलि, नृपन सुनाइ निदान॥२२॥
जु नृप मदीय नृजान कों, बहैं खंध धरि बीर।
कारयिता या ग्रंथ को, ध्रुवहि लिखों वह धीर॥२३॥

अरबदेव चहुवा : के वंशजों में एक निर्भय राजा भगवान हुआ जिसने अपने आश्रित जल्ह नामक भाट को साठ गाँवों की जागीर प्रदान की। इसी तरह गोष्टपाल के कुल में भगवंत नामक एक गुणवान राजा हुआ जो अपने राज्य को समृद्ध बनाने वाला अति प्रबल राजा था जो रण और मन (अर्थात् वदान्यता) में दुरंत (भयंकर) था। इसी के समय में नीलकंठ नामक ब्राह्मण ने भास्कर नाम से एक ग्रंथ की रचना कर प्रसिद्ध प्रतिज्ञा ली। इसी प्रतिज्ञा को इसके लेखक ने सारे राजाओं के सामने प्रकट की। वह प्रतिज्ञा इस प्रकार थी कि जो राजा मेरी पालकी को अपने कंधे पर उठा कर चलेगा मैं उसी राजा को इस ग्रंथ को बनवाने वाले के रूप में प्रसिद्ध कर दूँगा। मैं उसी धीर को इस ग्रंथ को रचवाने का श्रेय दूँगा।

पन द्विज को यह सुनि पहुन, भई बहुन छबि भंग।
कलि मैं जस अच्छो कहुँक, सब्रठां न हित प्रसंग॥२४॥
नृप भगवंतहि एह सुनि, खमि सिबिका निज खंध।
अभिधा कलि बिच अप्पनी, रक्खी सुपहु सुसंध॥२५॥
जाम जनन जगतेस भो, अतिबल अतुल उदार।
जिहिं पौरानिक जैत कों, दिय गज सत जवदार॥२६॥

बकुट बंस बुधसेन नृप, हुव गुज्जरधर हेलि।
मारे जिहिं महमूद के, ठाये भट सब ठेलि॥२७॥

ब्राह्मण नीलकंठ की इस प्रतिज्ञा को सुन-सुन कर कई राजाओं की छवि बिगड़ गई क्योंकि कलियुग में यश सभी को प्रिय नहीं लगता। कीर्ति तो किसी-किसी को ही लुभाती है। गोहवाल वंशीय राजा भगवंत ने जब नीलकंठ की प्रतिज्ञा सुनी तो वह तुरन्त उसकी पालकी को कन्धा लगाने को तत्पर हुआ। उसने ब्राह्मण की इच्छानुसार अपने कंधे पर उसकी पालकी ढो कर कलियुग में अपना नाम किया। तीसरे भाई जाम के वंश में उत्पन्न जगतेस नामक अतुलनीय बलवान पर उदार राजा हुआ जिसने अपने पौराणिक जैतसिंह नामक चारण को एक सौ अच्छी गति से चलने वाले हाथी प्रदान किये। बकुट के वंश में उत्पन्न बुधसेन नामक राजा हुआ जो गुजरात देश का सूर्य कहलाया जिसने बादशाह महमूद के सारे उमराव योद्धाओं को खदेड़ कर मार गिराया।

षट्पात्

नृपति देवकीनंद सुमति हुव चक्रपानि सुत।
पुंगल नृप प्रतिहार देव तनया व्याह्यो द्रुत।
निपुन सुभद्रा नाम सबन गुन रूप सिराहिय।
भुग्गि मिथुनं चिर भुम्मि चित्त छोरन तिहिं चाहिय।
जसोदानंद निज सूनु जब कुमर पट्ट अभिसिक्त किय।
बन बिच बिताय निज आयु बपु जोगरीति दोउन तजिय॥२८॥

राजा चक्रपाणि के सुमतिवान पुत्र देवकीनन्द हुआ। इस राजा देवकीनन्द ने पुंगल के प्रतिहार राजा देव की सुपुत्री से विवाह किया। राजा देव की कन्या सुभद्रा अत्यन्त गुणवती और रूपवान थी। इस जोड़े ने बहुत काल तक राज सुख को भागा। इसके बाद इनके मन में विरक्ति आई तब इन्होंने अपने पुत्र कुमार जसोदानंद का राज्याभिषेक कर सारा राज्यभार उसे सौंप दिया और वे दोनों वन को चले गए। जहाँ उन्होंने अपनी शेष आयु योग-साधना में बिता कर अपनी-अपनी काया का परित्याग किया।

दोहा

नृपति जसोदानंद हुव, अति बल रन उद्दाम।
सत्तलपुर नृप संभु कै, तनया हुव इक ताम॥२९॥
जद्दवकुल अभिजात जो, नाम सुभद्रा नारि।
व्याही भूपति निगमबिधि, बहुधन त्याग बिथारी॥३०॥

राजा देवकीनन्द का उत्तराधिकारी यशोदानन्द (जसोदानन्द) बहुत वीर और बलवान राजा हुआ। रणोत्सुक इस राजा ने सत्तलपुर के यादव वंशी राजा शंभु की पुत्री सुभद्रा को अपनी रानी बनाया। इस राजा यशोदानन्द ने अपने विवाह के अवसर पर बहुत सारे धन का वितरण किया अर्थात् दान किया।

सचरणगद्यम्

राजा जसोदानंद हू बुध बिप्र बेनीदत्त कों बीस लक्ख पौरानिक प्रताप कों पंच राजतीमुद्रा दई। अरु बंदी धर्मदत्त कों पंच सासन दै रु कलिमें कमनीय कित्ति लई।

सो जसोदानन्द इंद्रप्रस्थ के अधीर तोमर भुवनपाल सों कलह करि बहुत बैरिन की बधून के बलय बिहीन बाहु बिरचि रंगस्थल कों रुधिर सों रंगि काम आयो।

अरु रानी सुभद्रा हू सती के सील को सीलन साधि सहगमन करि पइहर पिउहर को आभिजात्य दिखायो॥३१॥

राजा यशोदानन्द ने पंडित ब्राह्मण बेनीदत्त को बीस लाख रजत मुद्रा (चांदी के रुपये) का दान दिया और अपने चारण प्रताप को पाँच लाख रजत मुद्रा प्रदान कीं और भाट धर्मदत्त को पाँच गाँवों की जागीर दे कर इस राजा ने कलियुग में सुन्दर कीर्ति अर्जित की। इसी राजा यशोदानन्द ने दिल्ली (इन्द्रप्रस्थ) के राजा तंवर भुवनपाल से युद्ध लड़ा जिसमें उसने अपने कई शत्रुओं की ब्याहताओं के हाथ चूड़ी विहीन कर रणभूमि को रक्तरंजित करते हुए स्वर्ग की गति ली अर्थात् मारा गया और इसकी रानी सुभद्रा ने सतीत्व के शील को साध कर सहगमन किया। इस प्रकार रानी ने आत्मोसर्ग कर अपने पीहर और ससुराल दोनों कुलों की कुलीनता प्रदर्शित की।

जसोदानंद के तनय नंदनंदन भद्रासन बैठि अंतर्वेदी के आधि

पत्य को अभिषेक लह्यो।

अरु अपनें सूरबीरन कों सज्ज करि कलह में दावानल होइ तूलरूप तोमर को अनीक दह्यो।

तोमर भुवनपाल हू चंडासिराज नंदनंदन के निस्त्रिंस सों पलायित होई नीठिनीठि इंद्रप्रस्थ लीनों।

अरु राजा नंदनंदन अवाप तंत्र के बिचारपूर्वक अपनें राज्य को प्रबंध करि कें अजेय कीनों॥३२॥

यशोदानन्द के पुत्र नंदनंदन ने राजगद्दी पर बैठ कर अन्तर्वेदी राज्य के राजा का अभिषेक कराया और अपने वीर योद्धाओं को सज्जित कर युद्ध में स्वयं दावानल की तरह हो तंवर राज की सेना को रुई की तरह जला कर भस्म कर डाला। तंवर राजा भुवनपाल ने चहुवान नंदनंदन की तलवार के त्रास से भाग कर बमुश्किल तमाम अपने इन्द्रप्रस्थ की राह ली। फिर राजा नन्दनंदन ने विचारपूर्वक अपने राज्य की शत्रुओं से सुरक्षा करने के उपाय के अच्छे प्रबन्ध कर अपने राज्य को निरापद बनाया।

नरेस्वर नंदनंदन कों अति दुस्सह बैर बालन देखि जसोदानंद कै बैर में तो तोमर भुवनपाल हु अपनी कन्या भानुमती बिबाही।

अरु बहुत ही भय आनि यौतक मैं द्वै परगनां दै रु सेवक धर्म कैसी रीति निबाही।

राजा नंदनंदन को आंतक वा समय काहू भूपाल सों सह्यो न गयो। अरु चक्रपानि नैं लीनों ताहू सों चतुर्गुन अपनैं राज्य को बढावत भयो॥३३॥

राजाधिराज नंदनंदन को इस प्रकार दुस्सह वैर लेने में प्रबल देख कर उसके पिता यशोदानन्द के बैर को मिटाने के लिए तंवर राजा भुवनपाल ने अपनी कन्या भानुमती को उसे ब्याह दिया। और डरते डरते तंवरराज ने अपनी पुत्री के दहेज रूप में अपने राज्य के दो परगने दे कर सचमुच सेवक जैसा धर्म निभाया। इस राजा नंदनंदन के बल का इतना आतंक था कि कोई भी राजा उसे पचा नहीं पाता था पर करे क्या? इस तरह उसके पूर्वज राजा चक्रपाणि ने अपने राज्य की स्थापना में जितना क्षेत्र दबाया था उससे चौगुना

क्षेत्र दबा कर इस राजा ने अपने राज्य का चौगुना विस्तार किया।

चंडासिराज नंदनंदन सौं रानी भानुमती मैं कुमार केसवराज जन्म लयो।

जाके महोत्सव मैं मदनपुरी के महीप कवि पंडितन कों सप्तसहंस सुवर्ण को संघात दयो।

राजा नंदनंद सपत्नीक ही पंच बेर श्रीजगदीस की यात्रा करि छट्टी बेर जावत श्री कासी महापुरी मैं देह तज्यो।

अरु भानुमती हू सप्त कील मैं स्नान करि परलोकहू मैं स्वामी को सहवास भज्यो ॥३४॥

चहुवान राजा नन्दनन्दन की रानी भानुमती की कोख से केशवराज जैसे पुत्र ने जन्म लिया। पुत्र जन्म के उत्सव में मैनपुरी के इस राजा ने अपने राज्य के कवियों, पंडितों को सात हजार स्वर्ण मुद्राओं का दान दिया। यह राजा नंदनंदन अपनी पत्नी सहित पाँच बार जगदीश की यात्रा को गया और उसने छठी बार यात्रा प्रवास पर जाते हुए बीच राह में काशी नगरी में अपनी देह त्यागी। रानी भानुमती ने अग्नि स्नान कर परलोक तक अपने स्वामी का साथ निभाया अर्थात् वह जल मरी।

दोहा

भूपति केसवराज भो, मदनपुरी नय मंडि।
अहंति मग्गन इभ्य करि, खग्ग अरिगन खंडि ॥३५॥

अपने पिता के देहावसान के बाद केशवराज मदनपुरी (मैनपुरी) का राजा बना जिसने नीति और दान के मार्ग पर चल कर याचकों को तो धनवान बनाया पर अपने शत्रुओं का दमन अपनी तलवार से किया।

सचरणगद्यम्

केसवराज रामपुर के नरेस रट्ठोर भीमसेन की कन्या इंदुमती बिबाहि लई।

तामैं राजकुमार मोहन को जन्म होत बिप्रन कों अनेक अपूर्व समृद्धि दई।

केसवराज तों बिजयपुर के नरेस प्रामार चंद्रराज सों संग्राम करि

वीरसज्जा मैं सोवत भयो।

अरु मोहन नरेश अभिषिक्त होइ पंचसिख पट्ट पाय अंतर्बेदी को आधिपत्य लयो॥३६॥

रामपुर के राठौड़ वंशीय राजा भीमसेन की कन्या इंदुमती से इस राजा केशवराज ने विवाह किया जिसकी कोख से राजकुमार मोहन का जन्म हुआ। राजा ने पुत्रोत्सव के अवसर पर कई ब्राह्मणों को धनाढ्य बनाया। राजा केशवराज विजयपुर के प्रामार वंशीय राजा चन्द्रराज से हुए युद्ध में अपने प्राण गंवा कर रण शय्या पर सोया। अपने पिता की युद्ध में हुई मृत्यु के बाद मोहन राजगद्दी पर बैठा। राज्याभिषेक से वह अन्तर्वेद का अधिपति बना।

दोहा

पट्टनि चालुक भीम को, लघु सुत चंद्र तृतीय।
ताके बंस कटारिया, चालुक बजिग बलीय॥३७॥
भ्रात बडो या चंद्र को, गहिल कर्ण नृप जास।
बसि गब्भहि बारह बरस, सिद्धराज सुत आस॥३८॥
महिला आनी मोहन हु, विजया नाम बिबाहि।
बधुपुर प्रभु प्रभु बैस की, चतुरसुता हित चाहि॥३९॥
सुत समुद्रराज़ सु जन्यों, मोहन बिजया मांहिं।
कीनों उच्छव रीझ करि, नांहिं रही जंहं नांहिं॥४०॥

अनिहलपुर पट्टनि के प्रतापी राजा चालुक्यराय भीम का तीसरा बेटा चंद्र चालुक्य हुआ जिसके वंशज कटारिया चालुक्य के उपटंक वाले हुए। इस चन्द्र का बड़ा भाई जिसका पुत्र गुहिलकर्ण नामक राजा हुआ। इसके पुत्र सिद्धराज ने अपनी माँ के गर्भ में बारह वर्ष की अवधि तक निवास किया था। अन्तर्वेद के राजा मोहन ने बुधपुर के बैस वंशीय राजा प्रभु की चतुर कन्या विजया से विवाह कर उसे अपनी रानी बनाया। इसी रानी विजया के गर्भ से राजा मोहन को समुद्रराज नामक कुमार की प्राप्ति हुई। अपने पुत्र के जन्म उत्सव की खुशी में इस राजा ने नकार की ना रखी अर्थात् इस अवसर पर राजा ने किसी बात की मनाही नहीं रखी। याचकजन को मुँहमाँगा इनाम दिया।

षट्पात्

जब मोहन तजि देह स्वर्ग पत्तो बिजया सह।
संभर तबहि समुद्रराज हुव भूप महामह।
ईश्वर नृप आनंद हुतो जद्दव भुजपत्तन।
तनया गंगा तास परनिआनी प्रबीररपन।
गोपाल भयो ताकै तनय गाइग्वाल हु नाम तस।
जो होत बित्त लक्खन बितरि जग किन्नों चहुवान जस॥४१॥

जब राजा मोहन अपनी देह त्याग कर सपत्नीक स्वर्गपुर को गया तब उसका उत्तराधिकारी कुमार चहुवान समुद्रराज पूरे उत्सव के साथ राजगद्दी पर बैठा। इसने वीरता के साथ भुज नगर के यादव वंशी बड़े राजा आनन्द की सुपुत्री गंगा से विवाह किया और उसे अपनी रानी बनाया। रानी गंगा की कोख से राजा को गोपाल नामक पुत्र जन्मा जिसका अवर नाम गाइग्वाल भी था। इस पुत्र के जन्म के उपलक्ष्य में चहुवान राजा समुद्रराज ने लाखों रूपयों का दान दे कर अपनी कीर्ति का प्रसार किया।

दोहा

तजि समुद्रराज हु तनू, गो जब ही सुरगेह।
गंगा किन्नों सहगमन, अधिप कुमर भो एह॥४२॥

चहुवान राजा समुद्रराज अपनी देह का त्याग कर जब स्वर्गलोक को गया तब उसकी रानी गंगा ने उसके साथ सहगमन किया अर्थात् सती हुई और कुमार गोपाल राजा बना।

षट्पात्

प्रभु संभर गोपाल भयउ अंतरबेदी भुव।
आहव अरिन अजेय धीर हरभक्त बीर धुव।
नृप गोभिल भटनैर जपत जयमल्ल नाम जस।
परन्यों नृप गोपाल नाम लच्छी तनया तस।
मख दान अमित करि करि महिप सिव सेवन मद्धिय सतत।
संगर अनेक जित्तिय सहज तूर बजत आनद्ध तत॥४३॥

अन्तर्वेद राज्य के सिंहासन पर तब गोपाल आरूढ़ हुआ जो युद्ध में अपने शत्रुओं का नाश करने वाला वीर, धैर्यवान और हरिभक्त था। भटनेर के गोहिल वंशीय राजा जयमल्ल की सुपुत्री लक्ष्मी (लच्छी) से इस चहुवान राज गोपाल ने विवाह किया। इस भक्त राजा गोपाल ने कई यज्ञों का आयोजन कर बहुत दान-दक्षिणा दी और भक्ति कर महादेव को रिझाया। इसने अपने जीवन काल में कई युद्ध किए और उनमें अपनी विजय के वाद्य यंत्र (ढोल-नगारे) बजवाए।

दोहा

सोमनाथ सिव कों सतत, भजत भयो यह भूप।
किन्नैं भक्ति अनन्यकरि, ईस कृपा अनुरूप॥४४॥

इस राजा गोपाल के सोमनाथ (महादेव) का बड़ा इष्ट था। वह निरन्तर शिव की भक्ति में तल्लीन रहा और उन्हीं महादेव की कृपा से अनन्य भक्ति को प्राप्त हुआ।

सचरणगद्यम्

चक्रपानि सों गोपाल पर्यंत आठ ही पीढिन में केही प्रबीर अंतर्वेदी मैं बढती बढती आन फेरत ही गये।

अर कालपी के जद्दव करन के समय सों अद्यावधि बंधुन के बिनासको अरु मदनपुरी के जयबे को बैर वालन मैं छिद्र हेरतही गये।

गोपाल के समय पर्यंत चंडासि के कुल कों चंड ही जानि कालपीके नरेस जद्दव प्रतापसेन मदनपुरी को राज्य ही दैन करि करतोया के पार सों कोऊ म्लेच्छराज कों बुलावन अपनों सोदर बीरसेन पठायो।

सो जावत ही सैंतालीस सहस्त्र सेना समेत सज्ज कराई समस्थली पर आघात डारन तत्काल ही करतोया लंघि आर्यावर्त की सीमा मैं लायो॥४५॥

चक्रपाणि से लगा कर राजा गोपाल तक चहुवानों की आठ पीढ़ियों में कई राजा अपनी-अपनी आन (विजयाज्ञा) अन्तर्वेद के बढ़ते राज्य में फिरा कर गए। वे सभी कालपी के यादव कर्ण (चक्रपाणि के मामा) के समय से अद्यावधि अपने बांधवों के विनाश में और मैनपुरी को फतह करने के समय

उपजे बैर को लेने के अवसर ढूँढ़ते ही रहे। राजा गोपाल के समय तक तो चहुवान कुल को प्रचंड गिना पर बाद में कालपी के यादव राजा प्रतापसेन ने मैनपुरी का राज्य देने का लालच दे कर अटक नदी के पार से किसी म्लेच्छराज को आक्रमण के लिए बुलवाने अपने बांधव वीरसेन को भेजा। यह वीरसेन वहाँ जा कर सैंतालीस हजार की विशाल म्लेच्छ सेना को सज्जित करवा कर समस्थली पर आक्रमण कराने की गरज से अटक नदी लँघवा कर आर्यावर्त की सीमा में लाया।

लंघत ही म्लेच्छन को ग्राम लुट्टन को लोभ करि ग्रामन पैं प्रपात डारत भयो।

ताकों जद्दव बीरसेन ऐसें उत्पात कियें तो अनेक आर्य अंतर्बेदी के सहाय जैहैं प्रत्यागमहू दुराप परि जैहैं ऐसें कहि निवारत भयो।

तब तो वे म्लेच्छ दरकुंचन अंतर्वेदी को ही उद्देस करि चलाये।

अरु पुंगल के अधीस प्रतिहार महनसिंह पट्टालय के नरेस बिंद बलभद्र लाहोर के अधिराज गोभिल विजयपाल कंगूर के भूप जावल कर्मसेन श्रीनगर के महीप टंक चाहुवाण रंगमल्ल प्रमुख अनेक आर्यावर्त के छितिपाल रोकत भये तथापि तिनकों जीति अग्गही आये॥४६॥

अटक नदी को पार कर आर्यावर्त की सीमा में घुसते ही यहाँ के गाँवों को लूटने के लोभ में म्लेच्छ सेना ने उन पर धावा बोला। यादव वीरसेन को इस म्लेच्छ सेना के जोर पर इस तरह के उत्पात करते देखा तो अनेक आर्य अन्तर्वेद राज्य के पक्ष में लामबंद हो कर वहाँ गए और जा कर इस सेना के वापस जाने को दुर्लभ बना कर कहने लगे कि घुसना तो आसान है सकुशल वापस कैसे जाओगे? ऐसा कह कर वे सेना को समझाने लगे पर म्लेच्छ सेना ने तो दर कूच दर मंजिल अन्तर्वेद की ओर बढ़ने के अपने उद्देश्य को साधा। इधर पुंगल के राजा प्रतिहार महन सिंह, पट्टालय के नरेश बिंद वंशीय बलभद्र, लाहोर के गोहिल राजा विजयपाल, कांगड़ा के नृप जावल कर्मसेन और श्रीनगर के राजा रंगमल्ल टांक (चहुवान) आदि आर्यावर्त के प्रहरी प्रमुख राजाओं ने सेना को रोकने का यत्न किया पर म्लेच्छ सेना इनको जीतती हुई आगे ही आगे बढ़ती गई।

या संग्राम मैं बिंद बलभद्र जावल कर्मसेन प्रमुख रजपूती राखि मारे गये।

अरु गोभिल बिजयपाल प्रमुख जीवत खेत परे अरु प्रतिहार महनसिंह चहुवान रंगमल्ल प्रमुख पलाय गये अैसें यह जंगजीति जवनन के जाल संभरराज गोपाल कों सत्वर ही समीप करत भये।

तहां श्रीसोमनाथ सिव नैं स्वप्न मैं चंडासिराज सों कही इहां कल्हि के दिन म्लेच्छन को अनीक आइ अमल करिहैं।

अरु तैरे अप्रज के रहैं सो भावी पराभव मैं उरथ को अन्ववायी है तिनकी हेतिन मैं पतंग होइ जरिहैं॥४७॥

आक्रान्ता म्लेच्छ सेना को जगह-जगह पर रोकने के उपक्रम में हुई झड़पों में बिंद बलभद्र, जावल कर्मसेन जैसे राजा वीरता का प्रदर्शन कर दृढ़ता के साथ मुकाबला करते मारे गए और गोभिल विजयपाल मृत्युशय्या पर पड़े। इनके अतिरिक्त प्रतिहार महनसिंह, चहुवान रंगमल्ल जैसे प्रमुख भाग छूटे। इस प्रकार यह युद्ध जीत कर यवनों के सैन्य दल ने अन्ततः चहुवान राज गोपाल को शीघ्र ही आ घेरा। तब सोमनाथ महादेव ने राजा को स्वप्न में दर्शन दे कर कहा कि इस कलियुग के समय में निश्चय ही म्लेच्छों के दल आकर यहाँ अपना अधिकार करेंगे और तू जो निःसंतान रहते भविष्य में होने वाली हार में उरथ का वंशज बचा है वह भी उन शत्रुओं के शस्त्रों की अग्नि में जल मरेगा।

यातैं मेरे लिंग समेत दक्खिन देस मैं प्रयानकरि गोदावरी के समीप जाय उहां को आगामि आधिपत्य पाइ तत्रत्य मंकुवाण कों मारि आसेर दुर्ग में मोकों स्थापित करि प्रभु सक्ति के प्रभाव वाही जनपद मैं अमोघ आज्ञा करो।

तब गोपाल कही प्रभु को निदेस सिर पर हैं यातैं भजि चलिहों परंतु सत्रुन कों सस्त्रन को संपात दिखायें बिनां क्षात्रधर्म खोई प्रान राखिबो तो जीवत ही मृतक तुल्य ह्वैबो यातैं आप आहव मैं बचाई पीछैं दासानुदास के सीस सासन को संभार धरो।

सोमनाथ संभु नैं कही सोही स्वीकार कीनी।

अरु दूजे दिन दूतन सत्रु की सेना के सामीप्य की सुद्धि दीनी ॥४८॥

इसलिए मेरे इस लिंग विग्रह को साथ ले कर तू दक्षिण दिशा में प्रयाण कर जा। गोदावरी नदी के तट पर जा कर वहाँ का भावी राजा हो कर वहाँ झाला शासक को मारना फिर आसेर के दुर्ग में मेरा विग्रह स्थापित कर प्रभुशक्ति के प्रभाव से उस जनपद पर निर्विघ्न राज्य करना। वहाँ अपनी आज्ञा चलाना। यह सुन कर चहुवानराज गोपाल ने कहा कि प्रभु आज्ञा हमारे सिर पर है इसलिए यहाँ से भाग कर पलायन करना ही शुभ है परन्तु अपने घर आए शत्रुओं को बिना हाथ दिखाए (युद्ध में सामना किये बिना) क्षात्रधर्म को खो कर मात्र प्राणों को बचाना तो जीते जी मरे हुए के समान होना है। इसलिए हे प्रभु! आप हो सके तो मुझे इस युद्ध में बचाना जिससे आपका दासानुदास अपने सिर पर आपकी आज्ञा का भार झेल सके। राजा की प्रार्थना को सोमनाथ ने सुन कर स्वीकार किया। और दूसरे ही दिन राजा के दूतों ने आ कर खबर दी कि शत्रुसेना हमारे एकदम समीप आ गई है।

दोहा

आवत सुद्धि अनीक की, संभर निज बल साजि।
गिरिस लिंग नृप बंधि गर, बीच दये तब बाजि ॥४९॥
भजिय कंप तिहिंबेर भुव, भीरु लजिय गतभान।
ललचि छये कौतुक लखन, बिबुधन व्योम विमान ॥५०॥
बीरसेन जद्दव बहुरि, इक जवनेस वजीर।
संभर हनि बहु सेन सह, पहुँच्यो पार प्रबीर ॥५१॥
देह बिलग्गे घाय दस, फोजन या बिधि फारि।
कढ्यो नृपति हनि बहु कटक, तुमुल झारि तरवारि ॥५२॥
स्वीय सकल सूर रु सचिव, परिकर इतर उपेत।
प्रथम कढ्ढि अवरोध पहु, गो दक्खिन हर हेत ॥५३॥

आक्रान्ता शत्रुसेना के पास आने की खबर मिलते ही चहुवानराज ने अपनी सेना को सज्जित होने का आदेश दिया और स्वयं ने अपने इष्टदेव

महादेव के लिंग विग्रह को गले में बाँध कर अपने घोड़े को बढ़ा क
शत्रुसेना के मध्य झोंका। इस समय पूरी पृथ्वी कंपायमान हो उठी। काय
मूर्च्छित हो गिर पड़े और आकाशमार्ग से देवताओं ने इस भीषण संग्राम क
देखने की इच्छा से अपने विमान बढ़ाए। सामने वाली शत्रुसेना में एव
वीरसिंह यादव और एक यवन वजीर आगे थे। चहुवान राज ने उन्हें मार क
बहुत बड़ी सेना का ध्वंश कर डाला और सेना को चीरते हुए उस पार पहुँचे
इस झड़प में राजा के शरीर पर दस गहरे घाव लगे पर वह विद्युत गति से सेन
को चीरता हुआ अपनी तलवार के प्रहारों से शत्रुसेना को काटता हुआ आ
निकल गया। इसके बाद चहुवानराज अपने उमराव योद्धाओं, मंत्री औ
परिकरों सहित सामने खड़े शत्रुसेना रूपी अवरोध को पार करता हुआ अप
इष्ट महादेव की आज्ञानुसार दक्षिण दिशा की ओर गया।

षट्पात्

गोदा के उपकंठ नगर आसेर निवेसन।
मंकुवान हम्मीर धरत जंहं छत्र धराधन।
पहुँचि तत्थ गोपाल मारि, हम्मीर महीपति।
अमल ठानि अप्पन रु किये इतरहु अधीन कति।
कढि सेस त्रस्त हम्मीरकुल तबहि देस आनर्त गय।
मोरवी मारि कठ्ठिन लहि रु तत्थ रहिय सब बीतभय॥५४॥

दक्षिण दिशा में गोदावरी नदी के तट पर बसे आसेर नगर में झाला राजा हम्मीर का शासन था। वह वहाँ का छत्रपति था। वहाँ पहुँच कर चहुवानराज गोपाल ने झाला राजा को मार कर इस राज्य पर अपना अधिकार कर लिया। उसने इसके अतिरिक्त आसपास के क्षेत्र को भी हड़प लिया और वहाँ के शासकों को अपने अधीन किया। शेष रहा राजा हम्मीर का कुल वहाँ से भयग्रस्त हो भाग कर आनर्तदेश में गया। इसके बाद चहुवानराज गोपाल ने मोरवी राज्य के काठियों को मार कर मोरवी पर भी अपना अधिकार जमा लिया और वह निर्भय हो कर वहाँ राज करने लगा।

दोहा

इत गोपाल नरेस यह, अधिप भयो आसेर।
किय अपुब्ब गिरिदुर्ग इक, जो कबहु न व्है जेर॥५५॥

वह तबतैं आसेरगढ़, बहुधा हुव बिख्यात।
साकंभर तंहं थप्पि सिव, बिबिध दये बसु ब्रात॥५६॥
इक्क छत्र लै वह अवनि, उरथ बंस अधिराज।
प्रतप्यो जंहं गोपाल पहु, सजि बल अतुल समाज॥५७॥

जब से चहुवानराज गोपाल आ कर आसेर दुर्ग पर काबिज हुआ तभी से आसेरगढ़ प्रसिद्धि को प्राप्त हुआ। इस राजा ने तब वहाँ की पहाड़ी पर एक विशाल सुदृढ़ किला बनवाया जो किसी से भी जीता ना जा सके। इस दुर्ग के बनने के बाद से ही आसरेगढ़ विशेष कर विख्यात हुआ। जब चहुवानराज ने वहाँ अपने इष्टदेव शिव के लिंग विग्रह की स्थापना की और इस अवसर पर याचकगणों को बहुत सारा धन दान में दिया। पृथ्वी पर एक छत्र शासन करने वाले उरथ वंशीय उस चहुवानराज गोपाल ने वहाँ काफी समय तक राज किया और अपने सैन्य दल का राज्य सहित विकास किया।

इतिश्री वंशभास्करे महाचम्पूके पूर्वायणे चतुर्थ राशौ वीतिहोत्र-चण्डासिबंशबर्णने शाकम्भरेन्द्रसोमेश्वर कनिष्टपुत्रोरथ यादवीसुगुणा परिणयन तदौरसचक्रपाणि प्रमुखपुत्रपञ्चक मातुलबान्धवबिनाशन जिततन्न गरमदनपुरीस्वकीयस्कन्धावारीकरण श्रुतैतदुदन्तोरथ सुगुणा वैखानसीभावप्रापण गृहीतयोगतद्दम्पतिसहदेहत्यजन विभ्रष्टदाक्षिणात्य-बैराटदुर्गरूपापरनामराजकुलगृहा दित्यसुतशीर्षोद्दवप्पमौरिक चाहुवाणमारण पुरस्सरचित्रकूटदुर्गसमासादन चालुक्यनृपबलराजपुत्र घुग्गलानपत्यभावरणमरण हेतुस्वकुलपितृत्वप्रसिद्धीकरण चक्र-पाणि प्रामारी श्यामो पयमन तदऽनुजाबरदेवा ऽऽदिचतुष्टयौ रसाऽबरा दिचतुष्क चाहुवाणभेदाविर्भवन तत्तद्वीज्यभगवत्सिंह समरसिंहा ऽद्युत्क-र्षकथन चाक्रपाणिदेवकीनन्द प्रातिहारीसुभद्रा पाणिपीडन समभिषिक्तकुमार-यशोदानन्द तद्दम्पति योगरीतिबर्ष्मविहान यशोदानन्दयादवीसुभद्रा बिबहन तन्महौ दार्याभिदान तोमरभुवनपालसङ्गरयशोदानन्दवीरशय्याशयन सुभद्रा सहगमन समात्तभद्रासनतत्कुमारनन्दनन्द त्रासपलायिततोमरभुवन-पालस्वपुत्रीभानुमती परिणायन कृतवैरशुद्धिनन्दनन्द स्वराज्यवृ-द्धीकरण कुमारकेशवराज जन्मोत्सवसुबर्णसहस्रासप्तक बितरण।

श्री वंशभास्कर महाचम्पू के पूवार्यण की चतुर्थ राशि में अग्निवंशी

चहुवान वंश में सांभर के इन्द्र सोमेश्वर के छोटे पुत्र उरथ का यादवी सुगुणा से विवाह करना, उसके उदर से पैदा हुए चक्रपाणि आदि पाँच पुत्रों का मामा के भाइयों का नाश करके उनकी विजय की हुई मैनपुरी को राजधानी बनाने का वृत्तान्त सुनकर उरथ का सुगुणा के साथ वानप्रस्थ होना, और योग ग्रहण करके उन पति पत्नियों के साथ ही देह त्यागना, दक्षिणवालों का राज्य भ्रष्ट करके बैराट्गढ़ रूप दूसरे नाम वाले राजकुल ग्रहादित्य के पुत्र सीसोदिया बापा का मोरी चहुवाणों को मारकर इसी समय में ही चित्तौड़गढ़ को जीतना, सोलंकी राजा बलराज के पुत्र घुग्घल का बिना संतान युद्ध में मरने के कारण उनके कुल में पितृपन प्रसिद्ध करना, चक्रपाणि का प्रमार वंश की पुत्री श्यामा से विवाह करना, उसके कुल में पितृपन प्रसिद्ध करना, उसके छोटे भाई अबरदेव आदि चारों पुत्रों के भूमि पर अबरा आदि चहुवानों में प्रथम ही चार भेद होना, और उनके वीर्य भगवतसिंह समरसिंह आदि का उत्कर्ष कहना, चक्रपाणि के पुत्र देवकीनन्द का प्रतिहारी सुभद्रा से विवाह करना, कुमार यशोदानन्द का अभिषेक करके उन स्त्री पुरुष का योगरीति से शरीर छोड़ना, यशोदानन्द का यादवी सुभद्रा को विवाहना उस बड़े नाम वाले का तोमर भुवनपाल के युद्ध में यशोदानन्द का काम आना, और सुभद्रा का सती होना, उसके कुमार नन्दनन्द का सिंहासन ग्रहण करने के भय से भागकर तंवर भुवनपाल का अपनी पुत्री भानुमती को विवाह देना, इस प्रकार वैर की शुद्धि करके नन्दनन्द का अपने राज्य की वृद्धि करना, कुमार केशवराज के जन्मोत्सव पर सात हजार सोने की मोहरें बांटना।

पश्चाद्वावारणसीसंहननसंस्थान भानुमती सहगमन चण्डासिराज-केशवराज राष्ट्रकूटीन्दुमती पाणिग्रहण पश्चात्प्रामारचन्द्रराजरणकेशव-राज मरण प्राप्तराज्यतत्कुमारमोहन वैसबंशीयविजयाविवहन कृतराज्यतद्दम्पतिसंस्थान मौहनिसमुद्रराज यादवीगङ्गो पयमन भुक्तबैभव-सहगामिनीगङ्गा समेतपरलोकप्रस्थापन भद्रासनोपविष्टपरिणीतगोभिली लक्ष्मीक सामुद्राजिगोपाल सोमनाथशिवाराधन प्रस्थापितसोदर-बीरसेनप्रत्यन्तराजकटकाऽऽकारण तद्रोधकार्यनृपबलभद्र कर्मसेन रणमरण बिजयपालाऽऽद्याघातप्रापण मथनसिंह रङ्गमल्लाऽऽदिपलायन यवनानीकसमस्थल-बिजयन शिवसूचितस्वप्ननिश्चितप्रस्थानकृतरणाशस्त्रपूतसेव्यगोपाल दक्षिणप्रस्थान तद्रणमं

कुवाणहम्मीरमरणशिष्टतत्कुलाऽऽनर्तपलायन गोपाल गोदोप-कण्ठाऽऽसेरनामकमहादुर्गनिर्म्माण तन्मध्यप्रतिष्टापितशिवशाकम्भर-राजतत्रत्यराज्यसमासादनं विंशतितमो मयूखः ॥२०॥ आदित एकोन-त्रिंशदुत्तरशततमः ॥१२९॥

इसके बाद काशी में शरीर छोड़ना, भानुमती का सती होना, चहुवानों के राजा केशवराज का राठौड़ वंशीय इन्दुमती से विवाह करना, तत्पश्चात् पंवार चन्द्रराज के युद्ध में मारा जाना, उसके कुमार मोहन का राज्य प्राप्त करके वैस वंश की विजया को विवाहना, और राज्य करके उन स्त्री पुरुष का मरना, मोहन के पुत्र समुद्रराज का यादवी गंगा से विवाह करना, और वैभव का भोग करके साथ जलने वाली गङ्गा के साथ परलोक को जाना, सिंहासन पर बैठकर गोभिल वंश की लक्ष्मी से विवाह करके समुद्रराज के पुत्र का जिसका दूसरा नाम गोपाल था सोमनाथ का आराधन करना, और अपने भाई वीरसेन के द्वारा म्लेच्छराज की सेना को बुलाना, उसको रोकने के लिए राजा बलभद्र और कर्मसेन का युद्ध में मरना, विजयपाल आदि को घात पहुँचाना, मथनसिंह आदि का भागना, यवन सेना का अन्तर्वेद देश विजय करना, शिव के बताए हुए स्वप्न से निश्चयानुसार युद्ध कर महादेव के लिंग को गले में बांधकर दक्षिण में जाना, वहाँ के युद्ध में झाला हम्मीर का मारा जाना, और उसके बाकी के वंश का अर्न्तदेश में भागना, और गोपाल का गोदावरी के पास आसेर नामक बड़ा गढ़ बनाना, उसमें शिव की प्रतिष्ठा करना, चहुवानराज का वहाँ राज्य निर्माण का बीसवाँ मयूख समाप्त हुआ और आदि से एक सौ उनतीस मयूख हुए।

प्रायो ब्रजदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

दोहा

अवनि नही थिर इक्क कै, निरखहु राम नरेस।
रह्यो प्रथम कुल रावरो, दिल्ली अंकित देस॥१॥
पौंड्र सहित कर्णाट पुनि, आक्रमि रहिय अधीस।
बलि साकंभर बसि बनैं, अंतरबेदी ईस॥२॥
अब गोदा उपकंठ रचि, अतुल दुग्ग आसेर।
निडर तत्थ गोपाल नृप, बिजय किन्न बहु बेर॥३॥

लच्छी तंहं गोपाल सों, जन्यों कुमर अभिजात।

भौमचंद्र तस नाम भुव, काव्यन बिदित कहात॥४॥

नाम चंद्रसेन हु नियत, अपर याहि को आहि।

सस्त्र सास्त्र सिक्ख्यो सकल, आगमन समुझि उमाहि॥५॥

हे राजा रामसिंह! यह पृथ्वी चंचला है यह किसी एक राजा के अधिकार में सदा नहीं रही। आप देखें कि आपका कुल पहले दिल्ली से चिह्नित हो कर रहा इसके बाद आपका चहुवान कुल पौण्ड्र देश फिर कर्णाट देश को घेर कर वहाँ का स्वामी बना। फिर सांभर में रह कर आपका कुल अन्तर्वेद क्षेत्र का मालिक रहा। और अब गोदावरी नदी के समीप आसेरगढ़ बना कर वहाँ काबिज हुआ। वहाँ भी निर्भय राजा गोपाल ने बहुत बार महादेव के प्रताप से विजयश्री का वरण किया। रानी लक्ष्मी की कोख से राजा गोपाल को पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई जिसका नाम भौमचन्द्र था। यह कई काव्यों में विख्यात है। इस कुमार का अवर नाम चन्द्रसेन भी था। इस कुमार चन्द्रसेन ने शस्त्र और शास्त्रों की विद्या का अच्छा अध्ययन किया। वह वेदों को समझने वाला हुआ।

अनिहलपट्टनि नैर इत, जनपद गुज्जर जत्थ।

गहिलकर्ण चालुक्य कै, सुत जो कहिय समत्थ॥६॥

सोहु जनक जब स्वर्ग गो, भो तब पट्टनि भूप॥

जास नाम ज़यसिंह जिहिं, राज्य करिय अनुरूप॥७॥

क्रम पढि मात्र कलंदिका, जोग रीति सब जानि।

सिद्धराज यह नाम जिहिं, पायो उचित प्रमानि॥८॥

जहं सक बिक्रमराज को, ससि चउ बेद समत्त।

जनम तत्थ जयसिंह को नृप जानहु अनुरत्त॥९॥

गुजरात में अनिहलपुर पट्टनि नामक जनपद विख्यात है वहाँ के शासक गहिलकर्ण चालुक्य का सुपुत्र बड़ा सामर्थ्यवान था। अपने राजा पिता की मृत्यु के बाद वह पट्टनि (पाटण) का राजा बना। इसका नाम जयसिंह था और वह अपने नाम के अनुरूप ही राज्य करने वाला हुआ। इस राजा ने भी क्रम से सारी विद्याओं का अध्ययन किया। योगशास्त्र में निपुण उसने योगसाधना की सारी विधियाँ जानी। इसी कारण से उसका अवर नाम

सिद्धराज प्रसिद्ध हुआ। इस सिद्धराज जयसिंह का जन्म विक्रम संवत् चार सौ इकतालीस में हुआ सो हे राजा रामसिंह! आप प्रेमपूर्वक जानें।

सचरणगद्यम्

गर्भाधान सों द्वादस बरस पर्यन्त माता के उदर मैं असम्पूर्ण रहि बिप्रनके कहैं सो श्रीसिव को आराधन करत ही चालुक्यराज गोहिल कर्णकै पुत्र जयसिंहदेव नैं जन्म लयो।

यातैं परंपरा सूं आस्था जैनमत ही ताकों बिहाई गोहिलकर्ण तो आस्तिकन कों ही मानत भयो।

ताके मरत ही जयसिंहदेव प्रच्छन्न आस्तिक रहि प्राकट्य मैं पीछो जैन सासन ही को स्वीकार कीनों।

अरु स्वेतांबर जैन हेमचन्द्रासूरि कों गुरु मानि सर्ब विद्या पढि अपनैं कुल के परपुरुख कुमारपाल की आज्ञा ही मैं चित्त दीनों॥१०॥

अपने गर्भाधान के बारह वर्ष पर्यन्त वह अपनी माँ के गर्भ में असम्पूर्ण रहा। फिर ब्राह्मणों के कथनानुसार शिव की आराधना करने से चालुक्यराज गोहिलकर्ण के इस पुत्र जयसिंहदेव ने जन्म लिया। इस कुल में परम्परा से जैन मत को मानने का प्रचलन था पर अपनी परम्परा को छोड़ कर गोहिलकर्ण ने तो आस्तिकों (वेदानुयायी) के धर्म का ही अनुसरण किया। अपने पिता की मृत्यु के वाद प्रछन्न रूप से तो जयसिंह वेदानुयायी रहा पर प्रकट रूप में वापस जैन मत को स्वीकार करने वाला हुआ और श्वेतांबर जैन संप्रदाय के आचार्य हेमचन्द्र सूरि को अपना गुरु बनाकर उससे सारी विद्याएँ सीखने का अभ्यास किया। इस प्रकार जयसिंहदेव ने अपने पूर्वज चालुक्य कुमारपाल की आज्ञा में ही अपने चित्त को लगाया अर्थात् जैन धर्म को सर्वोपरी मान कर उसका अनुगामी हुआ।

जैन हेमचंद्र तो विद्याबल सों दिग्विजय करि अपनैं मत सों उत्कृष्ट और सासन आर्यावर्त मैं रहन न दयो।

अैसें ही चालुक्यराज जयसिंहदेव नैं समस्त ही कुमारिका क्षेत्र कों जीति अनेक अधीसन सों दंड लयो।

विष्णुस्वामी बल्लभ संप्रदाय के अनुमंता गद पंडित नैं तो

संप्रदायप्रदीप ग्रंथ कीनों तामैं जैन हेमचंद्र के समकालीन चालुक्यराज कुमारपाल ही कह्यो।

सो हैमकोस मैं वाको नाम जानि एक काल बिचार्यो परंतु हैमी-प्रक्रिया के अष्टम अध्याय के अंत मैं हेमचंद्र नैं तो अपनौं सेवक सिद्धराजजयसिंह ही लिख्यो यातैं हम तो इनही दोउन के सामकालीन्य लह्यो ॥११॥

जैन आचार्य हेमचन्द्र ने तो अपनी विद्या के बल पर सारी दिशाओं को जीत कर अपने जैन मत से उत्कृष्ट अन्य मत का शासन आर्यावर्त में नहीं रहने दिया। ऐसे ही चालुक्यराज जयसिंहदेव ने पूरे कुमारिका क्षेत्र (जहाँ वर्ण व्यवस्था प्रचलित थी उस क्षेत्र को कुमारिका क्षेत्र कहते थे) को जीत कर वहाँ के सारे राजाओं से राज्य-कर लिया। विष्णु स्वामी जैसे वल्लभसंप्रदाय के अनुमंता (सबसे आगे सम्मति देने वाले अर्थात् प्रवक्ता) गद (गद काव्यक्तायां वाचि) के बनाए हुए 'संप्रदाय प्रदीप' नामक अपने ग्रंथ में जैनाचार्य हेमचन्द्र के समकालीन चालुक्यराज कुमारपाल को लिखा है। इसलिए हेमकोश में उसका नाम जान कर काफी विचार मंथन किया पर 'हैमी प्रक्रिया' ग्रंथ के अष्टम अध्याय के अन्त में जो उसने स्वयं को सिद्धराज जयसिंह देव का ही सेवक लिखा है इससे निर्णय कर हमने (ग्रंथकर्ता सूर्यमल मीसण) इन दोनों अर्थात् आचार्य हेमचन्द्र और सिद्धराज जयसिंह देव को समकालीन माना है।

ऐसें चालुक्यराज जयसिंह सर्ब बिद्या को संचय करि योगादिक सिद्धि पाय सिद्धराज नानुपायो।

अरु पीछैं तो बेद बिमुख होई जैनन के जोर करि आस्तिकन के अध्वर अध्ययनादिक को आरंभ ही उडायो।

आर्यावर्त ही मैं आतंक पर्‌यो यातैं अनिहलपुर मैं तो वैष्णव शैव शाक्तिक सौर गाणपत स्मार्त प्रमुख आस्तिक कोऊ न रह्यो।

अरु जयसिंमह नें रानी सोलह बिबाही तिनमें तृतीया शाकंभराधीस सिंहदेव की तनया जयक्रमदेवी अनन्य वैष्णव ही तानैं पतिके आतंक सों प्रच्छन्न भूगृह मैं जाई ब्राह्ययमुहूर्त मैं विधिपूर्वक श्रीविष्णु को सेवन निर्बह्यो ॥१२॥

ऐसा चालुक्यराज जयसिंह देव जिसने सभी प्रकार के विद्या अध्ययन

से ज्ञान अर्जित कर योग साधना में सिद्धि पा, स्वयं का नाम सिद्धराज प्रसिद्ध किया पर बाद में तो उसने वेदों से विमुख हो जैनों के जोर से आस्तिकों के यज्ञ और वेदाध्ययन पर आरंभ से ही रोक लगा दी। पूरे आर्यावर्त में भय छा गया इससे अनिहलपुर पट्टनि में तो कोई वैष्णव, शैव, शाक्त, सौर, गाणपत, स्मार्त आदि प्रमुख संप्रदायों का अनुयायी नहीं रहा। सभी वहाँ से भाग छूटे। इस राजा जयसिंहदेव ने सोलह विवाह किये। इसकी सोलह रानियों में से तीसरी रानी जो चहुवानराज सिंहदेव की पुत्री जयक्रम देवी थी वह परम वैष्णव थी। इस रानी ने अपने पति के धार्मिक आतंक से डर कर अपने देव श्री विष्णु की मूर्ति को तहखाने में ले जा कर स्थापित किया और वहीं दो घड़ी रात रहे जा कर प्रच्छन्न रूप से पूजा करने की आदत डाली।

जा समय गौड देस में अर्क को अंस द्विज देवप्रबोध अरु जैमिनि को अंसावतार भट्टाचार्य ए द्वै ही महापंडित भये ते आस्तिक धर्मको ह्रास जानि अनिहलपुर आये।

अर पंडितराज हेमचंद्र के छात्र बनि गुरु सेवन मैं सावधानी राख्रि जैनमत ही की पुष्टि करि एक ही हायन मैं अखिल छात्रनसों अधिक हेमचंद्र के विश्वासपात्र कहाये।

एक समय हेमचंद्र नैं जैनी देवता पद्मावती को आराधन करते स्तोत्रपाठ के समय निगम की निंदा करी सो सुनि दोउन कै नेत्रन में नीर आयो। सो भट्टाचार्य सों तो न रुक्यो अरु देवप्रबोध नैं प्रसभ करि छिपायो ॥१३॥

इसी समय गोड़ देश में सूर्य का अंश कहलाने वाला एक ब्राह्मण देवप्रबोध और एक ब्राह्मण जैमिनि का अंशावतार भट्टाचार्य हुए। ये दोनों ही बहुविज्ञ महापंडित थे। जब इन दोनों ने यह सुना कि वहाँ आस्तिक धर्म का ह्रास हो रहा है तो वे दोनों चल कर अनिहलपुर को आए और पंडितराज हेमचन्द्र के छात्र (शिष्य) बन कर उन्होंने गुरु सेवा में सावधानीपूर्वक जैन मत की ही पुष्टि करते हुए एक वर्ष का समय बिताया। वे कुशाग्र बुद्धि के थे इसलिए इस एक वर्ष की अवधि में ही वे अपने गुरु के पट्टशिष्यों में हो गए। एक बार हेमचन्द्र ने जैन देवी पद्मावती की आराधना में स्त्रोत-पाठ करते हुए वेदों की निंदा की। इस निंदा को सुन कर इन दोनों शिष्यों की आंखों में अश्रु छलक आए। फिर भट्टाचार्य के लिए तो वहाँ और रुकना दूभर हो गया

इसलिए वह तो चलने को हुआ पर देव प्रबोध ने हठपूर्वक अपने आग्रह को गुरु से छिपा लिया।

तब हेमचंद्र कही भट्टाचार्य तो निश्चय करि बिप्र है रु बध्य है परंतु हमारै तो अहिंसाधर्म यातैं अपनैं सप्त भूम प्रासाद के ऊपर के खंड में कीलित करो।

अरु देवप्रबोध हू याही को स्वाध्यायी है यातैं बिप्र ही मानि भूगृह मैं धरो यहै कहत ही देवप्रबोध अतित्वर पलायित होय दूर जाय जैन सेवन को प्रायश्चित करि श्रीनृसिंह प्रसाद पाय अनेक छात्रन कों आस्तिक कर्म पढावत भयो।

अरु हेमचंद्र के हर्म्य के अनंतर ही राजप्रसाद हे तहां रानी जयक्रमदेवी द्वै घरी रात्रि रहत विष्णु पूजन करि पद्यार्ध कह्यो ताकों सुनत ही भट्टाचार्य निस्संक होय वैसे ही पद्यार्ध मैं तारस्वर ही सों उत्तर दयो ॥१४॥

यह देख कर हेमचन्द्र ने कहा कि वह भट्टाचार्य तो वास्तव में निरा ब्राह्मण ही निकला। वह यों तो वाध्य है पर हमारा धर्म तो अहिंसा को मानने वाला है इसलिए उसे ला कर अपने सप्त खंडी महल के सबसे ऊपर वाले सातवें खंड में कैद करो। फिर यह उसका साथी देवप्रबोध भी तो ब्राह्मण ही है इसलिए इसको महल के भू-गृह (तहखाने) में डाल दो। आचार्य के मुँह से यह सुनते ही देवप्रबोध वह्मँ से पूरे वेग के साथ भाग छूटा और इस नगर से दूर जा कर उसने जैन मत की शिक्षा लेने का प्रायश्चित किया। इसके बाद श्री नृसिंह भगवान की कृपा का प्रसाद पा कर उसने अनेक विद्यार्थियों को आस्तिक धर्म की शिक्षा देने का कार्य आरंभ किया। इधर हेमचन्द्र के घर के पीछे ही राजप्रासाद थे वहाँ रानी जयक्रम देवी ने दो घड़ी रात रहते अपने इष्ट देव की पूजा कर एक बार एक श्लोक का अर्ध भाग कहा जिसे हेमचन्द्र के सप्तखंड महल की सातवीं मंजिल पर कैद भट्टाचार्य ने सुनते ही निडरतापूर्वक वैसे ही पद्यांश अर्थात् श्लोक का अर्धभाग ऊँचे स्वर में पढ़ा। जैसे यह रानी की जिज्ञासा का प्रत्युत्तर हो।

जयदेवी को बचन तो 'किङ्करोमि क्वगच्छामि को वेदानुद्धरिष्यति' यह बिबुधबानी की अनुष्टुप को अर्द्धरूप प्रश्न ठयो।

अरु 'मा विषीद वरारोहे भट्टाचार्योस्मि भूतले' यह वाही पद्य उत्तरार्थ प्रत्युत्तररूप बीच बयो।

जयक्रमदेवी तो प्रच्छन्न अपनें मन सों कहत ही सो भट्टाचार्य के श्रवन परत ही यानैं उच्चस्वर करि अपनों उत्कर्ष जनायो सो सुनत ही प्रासिक पारश्वध नैस्त्रिंशिक शाक्तीक याष्टीक धानुष्क प्रमुख चालुक्यराज के प्रबीर मारिबे कों दोरे यह जानि भट्टाचार्य सप्त भूप हैमहर्म्य के शिखर सों झंप लै रु आम्नायन पैं आस्था न धारि प्रान राखिबे कों पलायन काज परयो।।

अरु पात के प्रारंभ मैं गीर्वाण गिरा करि

'यदि वेदाः प्रमाणं स्युर्न मृत्युः पतनेन मे।'

अैसो पद्यार्थ कहि अवनि पर आयो परंतु संदेह को सद्म यदि शब्द कह्यो तानैं जैसें पहिले समय मैं सुधन्वा नरेन्द्र कै समक्ष गिरि सों गिरते भट्टाचार्य कुमारिल्ल को एक दृग फोरयो।

तैसें याहू भट्ट को एक नेत्र निकासी काण करयो॥१५॥

रानी जयक्रमदेवी ने तो अपने कथन को संस्कृत भाषा के अनुष्टुप छंद में निबद्ध कर यह प्रश्न उछाला कि *'किङ्करोमि क्वगच्छामि को वेदानुद्धरिष्यति'* अर्थात् क्या करूँ और कहाँ जाऊँ वेदों का उद्धार कौन करेगा? इसी अर्द्धश्लोक के उत्तर में भट्टाचार्य ने कहा *माँ विषीद वरारोहे भट्टाचार्योस्मि* भूतले अर्थात् हे सुन्दरी! भय मत कर मैं भट्टाचार्य पृथ्वी पर विद्यमान हूँ। इस उत्तर से तो मानों फिर से वेदमत के उद्धार का बीज बोया गया। रानी जयक्रम देवी तो प्रच्छन्न रूप से मन ही मन चिंता करती हुई बोली थी पर भट्टाचार्य ने इसे सुन कर खूब ऊँची आवाज में इसका प्रत्युत्तर दिया। जिसे सुनते ही राजा के सेवक वीर प्रासिक (भाला धारी), पारश्वध (फरसाधारी), नैस्त्रिंशिक (तलवारधारी), शाक्तीक (बरछीधारी), याष्टीक (दंडधारी), धानुष्क (धनुर्धारी) चारों ओर से दौड़े। यह देख कर भट्टाचार्य हेमचन्द्र के सप्तखंडी महल की सातवीं मंजिल से वेदों में श्रद्धा नहीं रखने की अपेक्षा प्राण देना बेहतर है यह सोच कर भागने के लिए कूद पड़ा। पर गिरने से पूर्व उसके मुँह में बराबर संस्कृत भाषा का यह वाक्य निकल गया - 'यदि वेदाः *प्रमाणं स्यर्नु मृत्युः पतनेन मे।'* अर्थात् 'यदि वेद प्रमाण है तो गिरने से

मेरी मृत्यु नहीं होगी।' इस प्रकार का अर्द्ध पद्य कह कर वह भूमि पर आ पड़ा पर उसने संदेहभरा 'यदि' शब्द का भी साथ में उच्चारण किया था इसलिए पूर्व में जिस प्रकार राजा सुधन्वा के रूबरू पहाड़ से गिरते कुमारिल भट्ट की एक आँख फूट गई थी उसी प्रकार इस भट्टाचार्य की भी मात्र एक आँख फूट गई और वह काना हो कर भी सुरक्षित (जीवित) जमीन पर आ रहा।

नेत्र के नास ही करि प्रान रहि गये सोही महानिधान मानि काहू नट की शिक्षा करि वय बपु के बेस बदलि वाही पुर के परिसर मैं बर्षन लों बिचरत एक दिन काहू आराम मैं तुलसी को स्तंब निहार्यो।

अरु बिना रक्षक कोऊ बस्तु न रहैं यातैं यह तुलसी जाकी लगाई है ताहू को इहां आगम नियत हैं अैसो संकल्प बिचार्यो।

तहां रात्रि के समय जैन बेसकियें एक मालाकार आइ तुलसी पत्र मंजर लै जात भट्ट नैं पूछी तू कोन काज अैसो अन्याय करि या तरु के गुल्म कों लुंचि कोन ठाम जैहै। तब माली कहीं जैन धर्म मैं अहिंसा ही उत्तम है अरु आप जैन हो यातैं चालुक्यराज सों कदापि कहोगे तो मेरे प्रान अरु पिंड भिन्न व्हैहै॥१६॥

अपनी एक आँख खो कर प्राण बच गए इसे ही बड़ी बात (बड़ा प्रसाद) मान कर भट्टाचार्य ने किसी एक नट से उसकी नट विद्या ग्रहण की फिर अपनी आयु और रूप को छिपाने वाला भेष बना कर इसी नगर के परिसर में वर्षों तक विचरण करता रहा। इसी बीच एक दिन उसने किसी बाग में तुलसी का झाड़ देखा। यह देख कर उसने सोचा कि बिना रक्षक के कोई वस्तु रहती नहीं। इस कारण यह तुलसी जिसकी रोपी (लगाई) हुई है उसका आगमन इस स्थान पर निश्चय ही होगा यह सोच कर उसने मन में उसे देखने का संकल्प किया। वहाँ रात के समय जैन व्यक्ति का भेष बनाए हुए एक माली आया और आ कर वहाँ से तुलसीपत्र और तुलसी मंजरी तोड़ कर ले जाने लगा। यह देख कर भट्टाचार्य ने पूछा कि हे मानव! तू किस कारण से ऐसा अन्याय कर रहा है? इस गाछ के गुल्म तोड़ कर कौन से स्थान पर जाएगा? इस पर उस माली ने कहा कि जैन मत में अहिंसा ही उत्तम है और आप जैन हो! यदि आप यह बात चालुक्यराज को कभी कह दोगे तो वह राजा मेरे प्राणों को मेरी देह से विलग कर देगा।

तब भट्टाचार्य चउबीस ही तीर्थंकरन की शपथ कही मैं महीप सों कदापि न कहोंगो परंतु इहां अैसो आतताई[1] नास्तिक कोन है जो अैसो अनर्थ करैं।

यह सुनि शपथ सों बिश्वास पाइ मालाकार कही तीजी रानी जयक्रमदेवी च्यारि नाडी रात्रि रहत नित्य अपने आलय मैं परमेश्वर के प्रसाद निमित्त अर्चन में अनेक अैसे उपहार धरैं।

तब भट्ट नैं पूर्बोक्त ही पूर्णपद्य पत्रीमैं लिखि माली कों सोंपि कही तेरी पत्नी के पानि दै कें यह पत्री रानी के पास पठाइ देहु। तब मालाकार नैं सोही स्वीकार करि अपनी अंगना के साथ पठाइ दई पत्री एहु॥१७॥

इस पर जैन धर्म के चौबीस तीर्थंकरों की शपथ ले कर भट्टाचार्य ने कहा कि मैं कदापि यह बात राजा को नहीं बताऊँगा पर मुझे यह तो बता कि यहाँ ऐसा (इस नगरी में) कौन आततायी[1] आस्तिक (वेदानुयायी) है जो वह अनर्थ करता है? यह सुनकर भट्टाचार्य की शपथ पर विश्वास करते हुए माली ने कहा कि राजा की तीसरी रानी जयक्रम देवी है वह अपने इष्टदेव श्री विष्णु की पूजा में चार घड़ी रात रहते नित्य अपने ही घर में स्थापित विग्रह के समक्ष ऐसे पदार्थ चढ़ाती है। यह सुन कर भट्टाचार्य ने अग्रिम रूप से पद्य में लिखा पत्र माली को दे कर कहा कि तू मेरा यह पत्र अपनी पत्नी (मालिन) के हाथों रानी तक पहुँचाने का प्रयत्न करना। यह सुन कर माली ने भट्टाचार्य को आश्वस्त किया कि वह उसका पत्र अपनी पत्नी के साथ रानी तक अवश्य पहुँचाएगा।

जयक्रमदेवी हू काचनका तोरि पत्री बंचि मालिनी द्वारा ही जैन बेस भट्टाचार्य कों अपनैं अधीस की आज्ञा पाई अवरोध मैं बुलाई सोही पद्य प्रत्यय कों प्रच्छन्न पढायो।

अरु ताके सम्मत करि अपनैं अधीस के अंगद मैं जैनमत को बसीकरन मंत्र हेमचंद्र नैं मढाइ बांधि दयो हो तैसो ही भुजबंध बनवाई तामैं अथर्ब को आभिचारिक मंत्र मढायो।

रानी सों भट्ट कही निद्रा मैं तेरे पति के बाहुसों वह अंगद खोलि

---

[1] आततायी का अर्थ द्रोह करने वाला है पर यहाँ अर्थ वेदों से द्रोह रखने वाला है।
अग्निदोगरदश्चैव शस्त्र पाणिर्धनापहः) । क्षेत्रदारापहारी च षड़ेते आततायिनः ॥

यह केयूर बंधि देहु यातैं चालुक्यराज कों कालज्वर ह्वैहैं सो द्विजन कों दान दयें ही मिटिहै याही तैं तेरे प्रिय की आस्तिकन मैं आस्था होइ तो वैदिकधर्म वृद्धि पावैं।

अरु नही तो यह हेमचंद्र जिततित जैनमार्ग ही की पुष्टि बढावैं ॥१८॥

रानी जयक्रम देवी ने लिफाफा फाड़ कर पत्रिका को पढ़ा फिर अपने पति की आज्ञा ले कर मालिन के हाथों ही जैन भेष में भट्टाचार्य को जनाने में बुलवा कर उस पद्यमय पत्र को पढ़वा कर सुना। इसके बाद भट्टाचार्य की सलाह से अपने स्वामी के भुजबंध में जैन मत का वशीकरण मंत्र जो आचार्य हेमचन्द्र ने मंडवा कर बंधवाया था उसी के जैसा नया भुजबंध बनवा कर उसमें अथर्ववेद के मंत्र से अभिमंत्रित एक मंत्र मंडवाया। इसके बाद रानी से भट्टाचार्य ने कहा कि जब तुम्हारे पति नींद में गाफिल सो रहे हों तब उनके हाथ पर बंधा वह भुजबंध खोल कर उसकी जगह यह नया भुजबंध बांध देना। इससे तुम्हारे स्वामी चालुक्यराज को कालज्वर का रोग होगा। वह ब्राह्मणों को दान देने से ठीक हो जाएगा। पर इस भुजबंध में मंडे मंत्र के कारण तेरे पति की फिर से आस्तिकों (वेदानुयायी) में आस्था हो जाएगी और वैदिक धर्म फिर से वृद्धि पाने लगेगा। नहीं तो वह जैनाचार्य हेमचन्द्र प्रत्येक जगह अपने धर्म को बढ़ा कर स्थापित करता रहेगा।

साकंभरी नैं तैसैं ही करि कालज्वर होत जयसिंह सों कही द्विजन कों दान देहु जातें ज्वर को निश्चित ही नास होय सोही करि चालुक्यराज बिज्वर भयो।

अरु कछुक निगमन के प्रामाण्य मैं निश्चय मान्यों याही समय मैं श्रीनृसिंह प्रभु को प्रसाद पाइ बसुधा मैं बिचरत सिबिकारूढ अनेक छात्रन उपेत देवप्रबोध हू अनिहलपुर गयो।

एक उपबन मैं उतरे तहां देवप्रबोध के सदन महानस कर्म को प्रारंभ कियो तिनकी सुद्धि पाइ हेमचंद्र के अंतेबासिन आइ उद्धानन को अग्निविध्मात कर्यो।

तहां देवप्रबोधाचार्य नालिकेरन की वृष्टि करी तासों हेमशिष्यन के शिर शीर्ण होन लगे तब ही मंत्रमूक होय भजे याके अनंतर ही चुल्हीन मैं पावक प्रजर्यो ॥१९॥

चहुवान रानी जयक्रम देवी ने वैसा ही किया। फिर राजा जयसिंह को कालज्वर होने पर कहा कि हे स्वामी! ब्राह्मणों को दान करें। इससे ज्वर का निश्चित ही नाश होगा। चालुक्यराज ने ऐसा ही किया और तुरन्त ही वह स्वस्थ हो गया। तब कहीं जा कर वेदों को प्रामाणिक मानने का निश्चय किया। इसी समय में श्रीनृसिंह प्रभु की कृपा पा कर पूरी पृथ्वी पर इधर-उधर विचरण करता हुआ पालकी पर आरूढ़ अपने कई शिष्यों सहित आचार्य देव प्रबोध भी अनिहलपुर में आया। आ कर उपवन में विश्राम के लिए उतरा। वहाँ देवप्रबोध के रसोइयों ने भोजन बनाना आरंभ किया। इस बात की खबर पाते ही हेमचन्द्र के शिष्यों ने वहाँ आकर तुरन्त ही सारे जलते हुए चूल्हों को बुझा दिया। इस पर आचार्य ने आकाश मार्ग से नारियलों की वर्षा की जिनसे हेमचन्द्र के शिष्यों के घुटे हुए सिर फूटने लगे और वे मूक हो कर वहाँ से भाग गए। तब जा कर कहीं फिर चूल्हों की अग्नि चेतन हो पाई।

सो सुद्धि सिद्धराज जयसिंह पाइ श्रौत सूरिन को संघ समज्ज्या मैं बुलायो। अरु भट्टहू पहिली रात्रि मैं प्रच्छन्न निकसि देवप्रबोध सों जाइ मिल्यो हो यातैं सभा मैं संग ही आयो।

आशीर्बाद करि बैठे तहां तिनमें काहू गणकराज पंचांग सुणायो वा दिन अमा ही ता पर हेमचंद्र कही है अमा ही परंतु आज पूर्ण चंद्र सहित राका है जाई तो तुमारे पुस्तक उदपान मैं गिरावैं। अरु अमाही रहैं तो हमारे पुस्तक हू यहै ही व्यवस्था पावैं ॥२०॥

यह खबर जब राजा सिद्धराज जयसिंहदेव को हुई तो उसने वेद के पंडितों के समूह को राजसभा में आमंत्रित किया। इसी बीच रात्रि में ही भट्टाचार्य ने गुप्त रूप से उपवन में जा कर देवप्रबोध से मुलाकात की। इस कारण वह भी पंडितों के समूह में साथ आया। राजा को आशीर्वाद दे कर सभी ने अपना आसन ग्रहण किया। इसी समय एक ज्योतिषी ने अपना पंचांग देख कर घोषणा की कि हे राजा! आज अमावस्या तिथि है। उस दिन सचमुच अमावस्या ही थी पर यह सुन कर जैनाचार्य हेमचन्द्र ने कहा कि यों तो आज अमावस्या ही है पर आज यदि पूर्ण चन्द्र अपनी पूरी चांदनी सहित प्रकट हो जाए तो पंडितो! तुम्हें अपने सारे शास्त्र ग्रंथों को कुएँ में डालना होगा और यदि अमावस्या का अंधेरा ही बना रहे तो हमारे धर्म ग्रंथ भी इसी गति को प्राप्त हों! अर्थात् मैं उन्हें कुएँ में डलवा दूँगा।

ऐसी प्रतिज्ञा करि अपनें अपनें स्थान आई हेमचन्द्र तो जैनी देवता पद्मावती कों प्रत्यक्ष करि वाको एक कुंडल मांगि संध्या होत ही आकास मैं चढायो।

तासों अनिहलपुर के समीप बारह बारह योजन पर्यंत अंधकार रहन न पायो।

बिप्रन कही चंद्रोदय होयगो तो अर्ध भूमंडल के बासिन कों सर्बत्र चंद्रिका ही जानि परैंगी यातैं दूर दूर के देसवासिन कों बुलाई पूछि निश्चय करिये।

चंद्र होइ तो हमारे न होइ तो जैनन के समस्त पुस्तक कूप मैं धरिये ॥२१ ॥

ऐसी प्रतिज्ञा (शर्त) बद कर सभी अपने-अपने स्थान को गए। घर आ कर हेमचन्द्र ने जैन देवी पद्मावती का प्रत्यक्ष आह्वान कर उससे एक कुंडल माँगा जिसे उसने संध्या होते ही आकाश में चढ़ा दिया। उसकी चमक से अनिहलपुर पट्टनि के आसपास के बारह बारह योजन पर्यन्त अंधकार ही नहीं रहा। यह देख कर ब्राह्मणों ने कहा कि चन्द्रोदय हो गया तो आधे भूमंडल के निवासियों को सर्वत्र चांदनी ही नजर आएगी। इसलिए राजा ! आप दूर-दूर के निवासियों को यहाँ बुला कर उनसे पूछ कर निश्चय करें की चन्द्रोदय हुआ कि नहीं ? यदि चन्द्रोदय हो गया तो हमारे अन्यथा जैन मत के सारे शास्त्र ग्रंथों को आप कुएँ में गिरवाइये।

तब सोहि करत अर्मा को निश्चय भयो जानि हेमचंद्र के समस्त पुस्तक कूप मैं डारे तहां गद तो संप्रदायप्रदीप मैं ऐसी लिखी हेमचंद्र पद्मावती के आराधन मैं मद्यपान करत हो ता प्रत्ययजुत ख्याति मैं लाई पुस्तकपुंज हू कूप मैं हेमचंद्रसहित अरु शिष्यन सहित ही गिरायो।

परंतु हेमचंद्र को प्राधान्य देखि वाके बनाये सटीक अष्टाध्यायी एकार्थनाममाला अनेकार्थनाममाला षट्काण्डशेष वनस्पतिनिघंटु परिशिष्टपद्धति योगसार धर्मवृत्ति लिंगानुशासन प्रमुख ग्रंथ देखि वाके प्रभाव को सर्वत्र प्राकट्य जानि चालुक्यन के जैनधर्म परम दैवत मानि और ग्रंथन मैं ऐसो लेख न जानि पुस्तकन केहु गिराइबे में अन्यत्र कोऊ प्रमान न पायो।

अरु अमा की रात्रि में चंद्र को प्रकास कियो अैसो उदंत तो केही ग्रंथन में जानि नियतही लिखि दयो।

अैसें चालुक्यराजसिद्धराज जयसिंह बिशिष्ट बैभव पाई सबन पैं सासन करि मंडलेश्वर भयो॥२२॥

इस शर्त से निश्चय करने पर अमावस्या ही ठहरी। तब हेमचन्द्र के सारे ग्रंथों को कूप में डलवा दिया गया। वहीं गद ने तो *संप्रदाय प्रदीप* में ऐसा लिखा है कि हेमचन्द्र पद्मावती की आराधना में मद्यपान कर रहा था। गद ने सबूत सहित यह प्रसिद्ध किया कि पुस्तकों के समूह के साथ हेमचन्द्र और उसके शिष्यों को भी राजा ने कूप में गिरवाया। परन्तु हेमचन्द्र का विद्वता में प्रधान्य देख कर उसके द्वारा रचित सटीक *अष्टाध्यायी, एकार्थनाममाला, अनेकार्थनाममाला, षट्काण्ड शेष, वनस्पतिनिघंटु, परिशिष्ट पद्धति, योगसार, धर्मवृत्ति, लिंगानुशासन,* जैसे प्रमुख ग्रंथ और इन ग्रंथों के प्रभाव और प्रसिद्धि देख कर चालुक्यराज ने जैन धर्म के देवताओं को परमदेव माना पर दूसरे ग्रंथों में इस आशय का लेख नजर नहीं आया और उसके ग्रंथों को कूप में डलवाने का अन्य प्रमाण नहीं मिला। रही बात कि अमावस्या की रात्रि में चन्द्रमा का प्रकाश कर दिया ऐसा वृत्तान्त तो कई ग्रंथों में विशेष रूप से लिखवाया लगता है। ऐसा चालुक्यराज सिद्धराज जयसिंह विशिष्ट वैभव पा कर सभी दूसरे राजाओं पर अपनी आज्ञा चलाने वाला मंडलेश्वर हुआ।

जाके रानी जयक्रमदेवी राजकुमार गोभिलराज पंडितराज जैन हेमचंद्र पंडितराज खौटिक सौतेय महावदान्य बंदी मदन श्रीकलशनाम गजेन्द्र कुलिसकूट करवाल सप्त ही रत्न वसुधा मैं बिख्यात जानैं।

अरु पौरानिक महाबदान्य कों आनर्त को आधिपत्य मागध सामंत कों सहस्त्र संबसथ बंदी स्यामदास कों बग्गड के छप्पन ग्राम बंदी मदन कों दसकोटि रजत मुद्रा इत्यादिक अनेक बड़े दान किये ते रसामें रोमांचक मानें।

याके गोभिलराज हर्षल पूर्णमल्ल व्याघ्रराज तेजसिंह मंडन बडभीबल नील अष्ट पुत्र भये।

तिनमें पट्टपकुमार गोभिलराज तो सिद्धराज के अनंतर अनिहलपुर को आधिपत्य धारि सिद्धराज संचित समृद्धिन के संघात पाये अरु हर्षल

पूर्णमल्ल अष्टम नील सहित अग्रज गये रु व्याघ्रराज बंधूगढ़ जित्ति भूप भयो ताके बंस के बघेले तेजसिंह दक्खिनदेसमें सरकोप नामक मुंडलपुर जाइ लयो ताके सरकिया मंडन रैवतगिरींद्र के उपकंठ जूनांगढ दुर्ग को जयकरि विभु बन्यों ताके अन्वय के बैरिन के बाढन करि बढैल तेही महादान करि दानी तथा धानुष्क धुरंधरता करि सरबहिया बजे रु बडभीबल स्वर्णगिरि[१] जाइ लयो ताके बंस के मागधन के ग्रंथन में बघेरवाल बनिक कहाये॥२३॥

इस राजा की रानी जयक्रमा देवी, राजकुमार गोभिलराज, पंडितराज जैन हेमचन्द्र, पंडितराज खौटिक (खिड़िया) शाखा के सौतेय (चारण) महावदान्य, बंदी (भाट) मदन, श्रीकलश नामक हाथी और कुलिसकूट तलवार, ये सातों ही रत्न वसुधा पर विख्यात हुए। इस प्रतापी राजा जयसिंह देव ने अपने पौराणिक (चारण) महावदान्य को आनर्त देश का आधिपत्य प्रदान किया। मागध (बहीभाट) सामंत को एक हजार गाँवों की जागीर, अपने भाट श्यामदास को बग्गड़ क्षेत्र के छप्पन गाँव दिये। इसी तरह भाट मदन को दस कोटि रजत मुद्राएँ जैसे अनेक बड़े-बड़े दान दिए जो पृथ्वी पर रोमांचक माने गए। इस राज्य सिद्धराज जयसिंहदेव के गोभिलराज, हर्षल, पूर्णमल्ल, व्याघ्रराज, तेजसिंह, मंडन, बड़भीबल, और नील अष्टम ये आठ पुत्र हुए।

इनमें से पाटवी कुमार गोभिलराज तो सिद्धराज के मरने पर अनिहलपुर पट्टनि का राजा बना और उसने सिद्धराज द्वारा संचित समृद्धि के समूह पाए। दूसरे भाइयों में हर्षल, पूर्णमल्ल और अष्टम नील तो नि:संतान मरे। व्याघ्रराज बंधुगढ़ को जीत कर वहाँ का राजा बना जिसके वंशज बघेले कहलाए। तेजसिंह ने दक्षिण दिशा में जा कर सरकोप नामक मुंडलपुर को फतह किया इसके वंशज सरकिया उपटंक वाले हुए। मंडन रैवतगिरि के उपक्षेत्र में जूनागढ़ नामक दुर्ग को जीत कर वहाँ का राजा बना इसकी संतानें बैरियों को बाढ़ने (काटने वाले) वाले हो कर बढैल कहलाई। वे ही महादान कर दानी और धनुष की धुरंधरता पाने के कारण सरवहिया उपटंक से प्रसिद्ध हुए। बडभीबल ने स्वर्णगिरि (जालोर) जा लिया इसलिए उसके वंशजों को बही भाटों ने अपनी पोथियों में बघेरवाल बनिक लिखा है।[१]

इतकों आसेरदुर्ग उरथ अन्वय अधीस साकंभरराज गोपाल चरम

बय पाइ देह तज्यो।

अरु पतिब्रता रानी गोभिला हू स्वामी के साथ सहगमन करि स्वर्ग को सहबास भज्यो।

गोपाल के अनंतर कुमार भौमचंद्र आसेर को अधीस होई पंच सिख पट्ट पायो।

याही समय कान्यकुब्जपुर के अधीस राष्ट्रकूट भावदेव नें बिबुध बिप्र ब्रजेश्वर कों कोटि रजतमुद्रा दै रु अपनी अभिख्या को चक्र चक्रमण कों चो तर्फ ही चलायो॥२४॥

इधर आसेरगढ़ में उरथ वंशीय चहुवान राजा गोपाल ने बड़ी उम्र पा कर देह त्यागी और उसकी पतिव्रता गोभिल रानी ने भी अपने स्वामी के साथ सहगमन कर स्वर्गलोक तक साथ निभाया। राजा गोपाल के देहावसान के बाद कुमार भौमचन्द्र आसेरगढ़ का राजा बन कर राजगद्दी पर बैठा। इसी समय कान्यकुब्ज पुर (कन्नौज) के राजा राष्ट्रकूट (राठौड़) भावदेव ने पंडित ब्राह्मण ब्रजेश्वर को एक करोड़ रजत मुद्रा दे कर अपनी (नामवरी) प्रसिद्धि रूपी सेना को बारबार चारों दिशाओं में चलाया अर्थात् अपनी कीर्ति को पूरी पृथ्वी पर फैलाने का प्रयत्न किया।

इतिश्री बंशभास्करे महाचम्पूके पूर्वायणे चतुर्थ राशौ बीतिहोत्र-चण्डासिबंशबर्णन चाहुवाणभोग्यस्थानसूचन गोपाल लक्ष्म्यौ रसचंद्रसेनाऽपराभिख्यराजकुमार भौमचंद्र सर्वविद्यासमादान गौर्ज्जराऽणिहलपुर-चालुक्यराजगोहिलतनयकर्णतनयजयसिंहजैनहेमचन्द्रसूरिशिष्यीभवन हेमचंद्र जयसिंह द्वय दिग्बिजयन सम्प्रदायप्रदीपग्रन्थोक्तहेमचन्द्र कुमारपाल मामकालीन्यनिरसन जयसिंहसर्वविद्याबलसिद्धराजोपनाम-समादान यजन पठना दिबैदिकविधानविध्वंसन चालुक्यषोडश राज्ञीबि-बहन तृतीय भोगिनीशाकम्भरीजयक्रमदेवीप्रच्छन्नबिष्णुपूजन गौडदेशीय-पण्डितराजबिप्रदेवप्रबोध भट्टाचार्य सिद्धराजन गरागमन छद्मजैनी-भूतद्विजद्वय हेमचन्द्रपद्मावती शक्तिसमाराधनसमयनिगमनिन्दाश्र-वणानन्तरपातितनेत्रजलभट्टाचार्य कारास्थापन पलायितकृतजैनसेवन-प्रायश्चित्तप्राप्तश्रीनृसिंहप्रसाददेवप्रबोध बिबिधविनेयशास्त्रपाठन

---

१. स्वर्णगिरि के नाम से चहुवान सोनगरा कहलाते हैं। -सं.

जैनस्थानसंलग्नराजप्रासाद स्थजयक्रमदेवीविष्णुपूजनाऽनन्तरश्रुत्युज्जिही-र्षुप्रश्नरूपपद्यार्धकथन भट्टाचार्यतारस्वरप्रत्युत्तरश्रावण।

श्री वंशभास्कर महाचम्पू के पूवार्यण की चौथी राशि में अग्निवंशी चहुवान वंश के वर्णन में चहुवानों ने जितने स्थान भोगे उनका बताना, गोपाल और लक्ष्मी के उदर से जन्मा हुआ चन्द्रसेन कि जिसका दूसरा नाम भौमचन्द्र था उस राजकुमार का सर्वविद्या सीखना, गुजरात देश के अनिहलपुर में सोलंकी राजा गोहिल के पुत्र करण के सुत जयसिंह का हेमचन्द्र पण्डित का शिष्य होना, हेमचन्द्र और जयसिंह दोनों का दिग्विजय करना, *संप्रदायप्रदीप* नामक ग्रन्थ में हेमचन्द्र और कुमारपाल का एक समय में होने का अभाव, जयसिंह का सर्वविद्या बल से सिद्धराज उपनाम ग्रहण करना, यज्ञ करना और पाठ करना आदि वेदों की रीति का नाश होना, सोलंकी का सौलह रानियों के विवाह कराना, जिनमें तीसरी रानी चहुवान जयक्रमदेवी का गुप्त रूप से विष्णु पूजन करना, गौड़ देश के पण्डितराज ब्राह्मण देवप्रबोध और भट्टाचार्य का सिद्धराज के नगर में आना, छल से जैनी हो कर दोनों ब्राह्मणों का हेमचन्द्र से पद्मावती देवी के पूजन समय वेदों की निन्दा सुनना, इसके बाद नेत्रों से जल पड़ते हुए भट्टाचार्य को कैद करना, जैन सेवन करते हुए देवप्रबोध का वहाँ से भागकर प्रायश्चित्त करना, और श्रीनृसिंह की प्रसन्नता से नाना प्रकार की शिक्षा पाकर शास्त्र पढ़ना, जैन हेमचन्द्र के स्थान से लगे हुए राजमहलों पर खड़ी हुई जयक्रम देवी का विष्णु पूजा के बाद वेदों का उद्धार करने की इच्छा का सूचक प्रश्न रूप आधा श्लोक कहना और भट्टाचार्य का उच्चस्वर से उत्तर सुनाना।

मारणभीतहैम-हर्म्याऽधःप्रपतितवेदप्रामाण्ययदिकथननिस्सृतैक नेत्रपर्यस्तबयो वेश भट्टाचार्य तत्पुरप्रान्तविचरण कदाचिद्दृष्टतुलसीस्त-म्बभट्ट मालाकार-मार्गतत्पद्यपत्रीराज्ञीसमीपप्रेषण तदवरोधभट्टाऽकारण तच्छिक्षाप्रबुद्धराज्ञीनिद्राणपतिपूर्बकेयूरपर्यसन द्विजदाननृपकाल-ज्वरनिरसन तत्प्रतीत-चालुक्यकिञ्चिदास्तिक्यधारण तत्समयदेव-प्रबोधागमन हैमच्छात्रतद्रस-वतीवैश्वानरावध्मान देवप्रबोधप्रयोगपुनः-पावकप्रज्वलन श्रुतैतदुदन्तचालुक्यराजतद्विप्रवृन्दाव्हयन हेमचन्द्रामादिनपूर्णिमाप्रतिश्रावण सन्ध्यासमयजैनदेवीकुण्डलब्योमवि-न्यसन गदलिखितहेमहासनिरसन चालुक्यराजबैभवविशिष्टरत्नसमक सङ्ख्यान सिद्धराजवदान्यभावव्याख्यान व्याघ्रराजादिजयसिंहपुत्रत्रिक

वंशीयव्याघ्रेल प्रभृतिचालुक्यभेदत्रयप्रकटन वयोवृद्धचण्डासि-राजगोपाल परलोकप्रस्थान राज्ञीगौभिली सहगमन कुमारभौमचन्द्र पितृपट्टप्रापण तत्समकालीनकान्यकुब्जाधिराजराष्ट्रकूटभाव-देवबिप्रब्रजेश्वरार्थकोटि रौप्यवितरणमेकबिंशतितमो मयूखः ॥२१॥ आदितस्त्रिंशदुत्तरशततमः ॥१३०॥

मारने के डर से हेमाचार्य के घर के ऊपर से नीचे गिरते समय वेद के प्रमाण होने में यदि शब्द का कहना, उससे उसका एक नेत्र निकलना, अवस्था और वेश को गिराकर अर्थात् बदलकर भट्टाचार्य का उसी पुर के समीप विचरना, किसी समय तुलसी के झाड को देख कर भट्टाचार्य का माली के द्वारा उसी श्लोक को पत्र में रानी के पास भेजना, उसके जनाने में भट्टाचार्य का बुलाना, उसकी शिक्षा से वैष्णव रानी का सोये हुए पति के पहने भुजबन्ध को उतारना, उस राजा को हुए कालज्वर का ब्राह्मणों को दान देने से नाश होना, उस प्रतीति से सोलंकी का कुछ आस्तिकता धारण करना, उस समय देवप्रबोध का आना, हेमचन्द्र के शिष्यों का रसोई की अग्नि को बुझाना, देवप्रबोध के प्रयोग से फिर अग्नि का जलना, यह समाचार सुनकर सोलंकी सिद्धराज का उन ब्राह्मणों के समूह को बुलाना, हेमचन्द्र से अमावस्या के दिन पूर्णिमा का सुनाना, सन्ध्या समय जैन देवी का कुंडल आकाश में चढ़ाना, गद के लिखे हुए *संप्रदायप्रदीप* नामक ग्रंथ में हेमचन्द्र के ह्रास अर्थात ग्रंथों का नाश होना, चालुक्यराज के वैभव की विशेषता और सात रत्नों की गणना, सिद्धराज के दान का कथन, व्याघ्रराज आदि जयसिंह के तीन पुत्रों के वंश के वाघेला आदि सोलंकियों में तीन भेद प्रकट होना, वृद्धावस्था में चहुवानराज गोपाल का परलोक जाना, गोभिल रानी का सती होना, कुमार भौमचन्द्र को पिता का पाट मिलना, उस समय में होने वाले कन्नौज के स्वामी राठौड़ का ब्राह्मण ब्रजेश्वर को करोड़ रुपए देने का इक्कीसवाँ मयूख समाप्त हुआ और आदि से एक सौ तीस मयूख हुए।

प्रायो ब्रजदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

दोहा

भौमचन्द्र भूपति भयो, इम सु दुग्ग आसेर।
मन जाको कबहु न मुर्‌यो, बितरन हित रन बेर॥१॥

उज्जइनी नृप बिंबइत, अपर जास अभिधान।
कृष्ण नाम मागध कहत, सो हुव परम सयान॥२॥
तास सुता विद्यावती, भौमचन्द्र भूपाल।
प्रामारी आनी परनि, करि बनीयक निहाल॥३॥
भौमचंद्र नृप कै भयो, प्रामारी बिच पुत्त।
भानुराज जाको भन्यों, अखिलन नाम अगुत्त॥४॥
सक जंहं बिक्रमराज को, बसुधा बारन बेद।
भौमचंद्र सुत तंहं भयो, अरिन करन उच्छेद॥५॥

अपने पिता की मृत्यु के बाद भौमचन्द्र आसेरगढ़ का राजा बना। यह एक ऐसा राजा सिद्ध हुआ जिसका मन दान देने और रणभूमि में शत्रुओं से बदला लेने में कभी आगे पीछे नहीं हुआ। उज्जयिनी के राजा बिंब जिसका कि अवर नाम कृष्ण भी था जैसा कि मागधों ने अपनी बहियों में लिखा है, यह राजा परम उदार और समझदार था। इसकी सुपुत्री विद्यावती का राजा भौमचन्द्र से विवाह हुआ। आसेरगढ़ के राजा ने इस प्रामार विद्यावती को अपनी रानी बनाया और विवाह के अवसर पर याचकगणों को निहाल कर दिया अर्थात् खूब सारा इनाम इकराम दिया। इसी प्रमार रानी की कोख से राजा भौमचन्द्र को भानुराज जैसे पुत्र की प्राप्ति हुई। जिसने अपना नाम जग जाहिर किया। विक्रमी संवत् चार सौ इक्यासी में इस राजा भौमचन्द्र के भानुराज जन्मा जो अपने शत्रुओं का नाश करने वाले के रूप में प्रसिद्ध हुआ।

षट्पात्

कुंतलपति चंद्रकुल नाम बसुसेन नरेस्वर।
हैहय अन्वय हेलि सज्जि जंहं पुत्रि स्वयंवर।
बुल्ले सब बसुधेस कहिय बिप्रन तंहं कारन।
सुता हृदय अनुसार व्याह नहि उचित बिचारन।
जिम जिम बिसेस यह अंत्यजुग स्ववयंबरहु तिम तिम सिथिल।
गोसत्र आदि कलि बर्जगन करत ओर तो करहु किल॥६॥

कुंतल देश का यादववंशी राजा वसुसेन नामक हुआ। हैहय कुल के सूर्य इस राजा ने अपनी पुत्री का स्वयंवर रचा। इस अवसर पर उसने सारे

तत्कालीन राजाओं को आमंत्रित किया। वहाँ ब्राह्मणों ने तर्क सहित कहा कि पुत्री की इच्छानुसार अर्थात् स्वेच्छापूर्वक विवाह करने का यह विचार उत्तम नहीं है क्योंकि ज्यों-ज्यों कलियुग का प्रभाव बढ़ता जाता है त्यों-त्यों स्वयंवर की प्रथा शिथिल पड़ती जा रही है। इसी तरह गोमेध यज्ञ को करने की कलियुग में मनाही है पर यदि कोई दूसरा करता है तो आप भी अवश्य करें।

विप्रन इम बरज्यो सु तदपि न रुक्यो साहस तजि।
बहु भूपन द्रुत बुल्लि सकल उपयम विधेय सजि।
सय बरमाला सोंपि त्वरित भेजी तनया तंहं।
भौमचंद्र मनभाई कंठ डारी माला कंहं।
बसुसेन बहुत यौतक बितरि कलि बिरुद्ध यह व्याह किय।
सह नेह पुग्जि दुल्लहि सहित दुल्लह कों गृह सिक्ख दिय॥७॥

ब्राह्मणों के इस प्रकार मना करने पर भी राजा ने स्वयंवर रचने के साहस का परित्याग नहीं किया उसने बहुत सारे राजाओं और राजकुमारों को आमंत्रित कर अपनी पुत्री के विवाह की पूरी तैयारी की। उसने शीघ्र ही अपनी पुत्री के हाथ में माला सौंप कर कहा कि तुम अपने अनुरूप वर को चुनो। राजकुमारी को राजा भौमचन्द्र भा गया उसने उनके गले में माला डाली। तब राजा बसुसेन ने प्रसन्न होकर दहेज में बहुत सारा धन दिया और कलियुग के विरुद्ध यह विवाह किया फिर उसने दूल्हा-दुल्हन की स्नेहपूर्वक आरती उतार कर उन्हें अपने घर के लिए विदा किया।

दोहा

संभर पाइ स्वयंबरा, जया नाम जद्दोंनि।
दब्बत भो बहु दूर लों, छत्र इक्क तर छोंनि॥८॥
जनी सुता इक जादवी, सूरा नाम सुजान।
कुलदेवी जापें करी, अनुकंपा अतिमान॥९॥
भानुराज सिसुभाव बिच, सुमति बयस्यन संग।
क्रीड़ा पुर परिसर करत, रुचि बय नाना रंग॥१०॥
जातुधान इक जिहिं समय, भ्रमत गभीरारंभ।
बनि सिसु आयउ सिसुन विच, ज्यों देवन ढिग जंभ॥११॥

चहुवानराज ने स्वयंवर से मिली हुई इस यादववंशीय जया नामक कुमारी को अपनी रानी बनाया फिर उसने अपने राज्य छत्र के नीचे बहुत सारी भूमि अर्जित की जो दूर-दूर तक फैली थी अर्थात् अन्य राजाओं की थी। इस यादव जया रानी ने एक सूरा नामक कन्या को जन्म दिया। इस सुजान कन्या पर कुलदेवी ने पूरी कृपा की और अपनी भक्ति सहित कुछ दैवीय शक्तियां भी इसे प्रदान कीं। एक बार कुमार भानुराज अपने हमउम्र बच्चों के साथ वहीं महल के परिसर में खेल रहा था। बच्चे जिस तरह अलग-अलग खेल खेलते हैं वह भी उनके संग खेलने में रमा था कि इसी बीच गंभीरारंभ नामक राक्षस भी बच्चे का रूप धर कर आया और इन खेलते बच्चों में शामिल हो गया जैसे कभी देवताओं के बीच देव वेश में जम्भासुर आया था।

षट्पात्

सरद मास इस समय उचित क्रीड़त अर्भक।
रक्खस गहिरारंभ आइ मिलिगो सु अचानक।
कछुक व्याज करि कलह सिसुन पलखाइ समस्तन।
कुमरसहित कंकाल सेस तजिगो सु त्वरासन।
पृथुकन अपल कुणपहि पतित कछुक स्वास चेतन कुमर।
कुलदेवि स्वीग्र चिंति रु कियउ आसापूरनि ध्यान अर॥१२॥

शरद ऋतु के आश्विन माह में इस तरह बालक खेल रहे थे कि वह राक्षस गंभीरारंभ आ कर अचानक खेलते बच्चों के संग बच्चा बन कर खेलने लगा। फिर थोड़ी देर बाद किसी बहाने से लड़ाई कर वह सारे बालकों का मांस खा गया और पीछे कुमार सहित सभी बच्चों के कंकाल छोड़ कर त्वरा से गायब हो गया। वे सारे बालक मांसविहीन मुर्दे बने वहीं पड़े हुए थे। कुमार भानुराज में थोड़ी चेतना और हल्के से प्राण शेष थे। कन्या सूरा को जब इसकी भनक पड़ी तो उसने शीघ्र ही कुलदेवी का ध्यान कर आशापूर्णा माँ को याद किया।

हरिय त्रास बहु हुलसि प्रकटि सुमिरत सेवक पंहं।
बसु हत्थन बरवेस जानि भक्त रू प्रसन्न जंहं।

स्वीय कमंडलु सलिल चुलुक पूरी रु किय सेचन।
उपचित व्है तब अंग बिहसिकरि उट्ठि बिबेचन।
करजोरि भानुराज हु करिय नुति अनेक पय नलिन नत।
जय महिष सुंभ आदि जइनि अनसु जिवावन चिर अरत॥१३॥

अपनी भक्त सेविका के स्मरण से प्रकट हो कर माँ ने उसका त्रास मिटाया। वह अपने आठ हाथ वाले श्रेष्ठ रूप में प्रकट हुई और अपनी भक्त पर प्रसन्न हो कर बोली कि क्यों याद किया? इस पर सूरा ने राक्षस द्वारा खाए बच्चों के कंकालों की ओर संकेत किया। देवी ने अपने कमण्डल से चुल्लू भर पानी ले कर छिड़का जिससे कुमार फिर से अपने पुष्ट अंगों वाला हो कर उठ खड़ा हुआ। तब कुमार भानुराज हाथ जोड़ कर देवी माँ के चरणों में गिर कर बोला कि हे महिषासुर और शुम्भासुर जैसे राक्षसों का संहार कर जीतने वाली माँ! तुम्हारी जय हो! अब आप इन शेष बालकों को, जिन्हें प्राणविहीन पड़े हुए बहुत समय हो गया है शीघ्र जीवित करें।

सोरठा

मोहि जिवायउ माइ, मृतक इते सिसु मित्र मम।
अनसुन इनहु उठाइ, सबके घर सम्मद करहु॥१४॥
देवी सुनत तदीय, सिसु कुणपन सिंच्यो सलिल।
बनि जे सांग बलीय, उठ्टे नुति करतहिं अखिल॥१५॥
माता कहिय समोद, इस सित छट्ठी अज्ज यह।
बिरचहु बिबिध बिनोद, मह अर्चन या दिन अमित॥१६॥

हे माँ! आपने मुझे तो जीवित कर दिया पर अभी भी मेरे इतने सारे मित्र मरे हुए पड़े हैं। प्राणहीन इन बालकों को जिलाओ तो सबके घरों में हर्ष की लहर दौड़ जाए। कुमार की ऐसी प्रार्थना सुन कर देवी ने उन शेष बालकों के कंकालों पर भी पानी छिड़का। इससे वे सारे बालक जीवित हो कर उठ खड़े हुए और देवी माँ की स्तुति करने लगे। तब देवी माँ ने कहा कि बालकों! आज आश्विन मास के शुक्ल पक्ष की छठी तिथि है जो कि मेरा दिन है। अतः तुम सभी आनन्द के साथ खेलो पर आज के दिन मेरी पूजा-अर्चना अवश्य करना!

सूरा तव भगिनी सु, मोहि सतत अर्चहिं सुमति।
इम तव कुल भूईस, अर्चहु मुंहि आसेर रहि॥१७॥
अस्थिन करि उद्दाम, किय प्रत्युत जीवित कुमर।
अस्थिपाल यह नाम, अबतैं सुत धारहु अपर॥१८॥
रंक गभीरारंभ, गहन इक्क कछु दूर गिरि।
दुर्‍यो तहां भजि दंभ, तव सहाय चलि हनहिं तिहिं॥१९॥
सक्ति इक्क इम सक्ति, कहि निज दिन्नी कुमर कर।
भानुराज मम भक्ति, बल लहि हनि आसिर बली॥२०॥

हे भानुराज! जिस तरह तुम्हारी यह बहन सूरा मेरी सतत पूजा करती है उसी प्रकार तुम्हारे वंश के राजा को भी आसेरगढ़ में रहते हुए मेरी पूजा करनी चाहिए। मैंने हे कुमार! तुम्हें अस्थियों के कंकाल से शीघ्र ही जीवित किया है इसलिए आज से तुम अस्थिपाल के दूसरे नाम को धारण करो। यह तुम्हारा अवर नाम होगा! वह गंभीरारंभ असुर यहाँ से थोड़ी दूरी पर अवस्थित एक पहाड़ की कंदरा में जा छिपा है। वह दंभी अपने आपको वहाँ सुरक्षित समझ रह रहा है इसलिए कुमार चलो, मैं तुम्हारी सहाय हूँ चल कर उस उदंड राक्षस का संहार करो। इतना कह कर शक्ति (देवी माँ) ने एक शक्ति (बर्छी आयुध विशेष) कुमार को दी और कहा कि हे भानुराज! मेरी भक्ति के बल से कर जा उस बलवान राक्षस को मार।

मैं अग्गहु इहिं मांहिं, रही मुदित चंडासि कर।
असुर हनैं बहु आंहिं, मम बल तव कुल परपुरुख॥२१॥
तिमहि दई अब तात, तव कर यह कासूतरी।
घल्लहु निर्भय घात, मैं याबिच रहि मारिहों॥२२॥
इम कहि अद्रि दिखाई, भवजननी व्यवहित भई।
कुमर सिसुन जुत जाइ, रक्खस तरज्यो कछु डरत॥२३॥

मैं शक्ति (बर्छी) रूप हो कर आगे भी सहर्ष चहुवान के हाथ में रही हूँ। मेरे प्रताप से ही पूर्व में तुम्हारे पूर्वज चंडासि ने कई असुरों का संहार किया है। वही बर्छी हे पुत्र! अब आज मैंने तुम्हारे हाथ में दी है इसलिए जा

कर इसके घातक प्रहार से उस राक्षस का नाश कर, मैं तुम्हारे साथ हूँ। इतना कह कर देवी ने संकेत से कुमार को वह पर्वत दिखलाया कि वहीं वह राक्षस है और अन्तर्धान हो गई। कुमार भानुराज ने दूसरे बालकों के साथ वहाँ जा कर डरते-डरते राक्षस को ललकारा।

दोहा

कंदर इक गिरिके कटक, तत्थ गहन कांतार।
जातुधान जाबिच हुतो, कढ्यो सुनत अघकार॥२४॥

इस पर्वत के सघन वन वाले मध्यभाग में अवस्थित कंदरा में राक्षस दुबका था। वह पापी वहाँ से कुमार की ललकार सुनते ही कुपित हो कर बाहर आया।

षट्पात्

रिसबस गहिरारंभ मरन दोरयो सु फारि मुख।
कुमरमित्र सब कुमर रहे मूर्छित परि मृतरुख।
जानी नृपसुत जबहु सबय आयो खेलन सठ।
सुहि अैहैं तब सक्ति हनि रु हनिहों निर्भय हठ।
यह चिंति तरजि बुल्ल्यो सु अरि आयो बपु धरि अद्रिसम।
दृगमीचि अस्थिपालहु दरित भो कछु व्याकुल पाइभ्रम॥२५॥

क्रोध में उफनता हुआ गभिहरारंभ अपना मुँह फाड़ कर बालकों को मारने दौड़ा जिसे देख कर कुमार के साथी सारे बालक मूर्छित हो गए। उसने आ कर देखा तो सोचा कि कुमार अपने समवयस्क बच्चों के साथ यहाँ खेलने आया लगता है। इधर कुमार ने सोचा कि वह राक्षस आएगा तो अपनी बर्छी से मैं निर्भय हो कर उसे मार डालूँगा। यह सोच कर कुमार ने ललकार दी जिसे सुन कर वह शत्रु अपने शरीर को पहाड़ के समान बना कर आया। जिसे देखते ही कुभार भयभीत हो गया और भ्रमवश अस्थिपाल की आंखें मिंच गईं।

दोहा

सक्ति कथित नुतिजुत सुमिरि, वहहि सक्ति करि अग्ग।
चित्रित जिम रहिगो चकित, सिसुपन सिथिल समग्ग॥२६॥

खावन आयो मूढ खल, परसत ही उरपार।
कढी कुमर कासूतरी, रीढक भेदि भयार॥२७॥
कासू बिच रहि कालिका खल हिय कालिक खाई।
गई जथारुचि इत गिरयो, आसुर द्रुत अरराई॥२८॥

तब कुमार अस्थिपाल ने स्तुति सहित शक्ति (देवी) का स्मरण कर देवी द्वारा प्रदत्त शक्ति (बर्छी) को आगे किया। वह बालक चित्रवत् हो कर चकित रह गया उसकी शिशुवय वाली चंचलता कहीं खो गई। इतने में सामने से वह दुष्ट असुर उस बालक को खाने दौड़ा। उसे अपनी ओर लपकते देख कुमार ने अपनी बर्छी निकाली और उसे राक्षस की रीढ़क (पीठ) में झोंका जो पीठ को चीरती हुई पार निकल गई। इसी बर्छी में देवी का निवास था इसलिए वह देवी कालिका रूप हो कर उस दुष्ट के कलेजे को खाने लगी। फिर अपनी रुचि के अनुरूप खा कर देवी तो अपने स्थान को गई और उधर वह राक्षस गंभीरारंभ अरराट की ध्वनि करता हुआ धड़ाम से जमीन पर आ गिरा।

षट्पात्

सिसुपन ही जगसल्ल कुमर देवीबल कढ्ढिय।
इतरहु बाल अचेत हुलसि उठ्टे चेतन हिय।
सबन अप्प बिस्वासि कहिय सबया यह क्रीड़न।
अप्पन बिच आयो सु परयो रक्खस जगपीड़न।
आयति उदर्क अप्पन उदित इहि कासू बसि ईश्वरीय।
इक लव बिलंब भो नहि अरहि कालिय आसिर कदन किय॥२९॥

देवी के प्रताप से उस बालक कुमार अस्थिपाल ने अपनी बाल्यावस्था में ही पूरे जगत को चुभने वाले कांटा रूप राक्षस को निकाल बाहर किया। इसके बाद कुमार के शेष साथी भी मूर्छा त्याग कर उठ खड़े हुए। तब कुमार अस्थिपाल ने अपने समवयस्क साथियों से कहा कि अपने बीच जो खेलने आया था वह जगत को पीड़ा देने वाला राक्षस यह मरा पड़ा है। मुझे लगता है कि पूर्वकाल के भाग्य के उदय होने से इस बर्छी में निवास कर एक क्षण का भी विलम्ब किये बिना शीघ्र ही देवी कालिका ने राक्षस का संहार किया।

भानुराज इस भाखि सकल बालन धरि सत्थहि।
आइ दुग्ग आसेर चित्र अक्खिय अपुब्ब चहि।
इतरहु पाक असेस जोहि बुल्लिय बित्ती जिम।
आसापूरनि एक उहां कुमरहु चिंती इम।
हम सबन कुणप कंकाल हे भानुराज के भान करि।
अर आइ सदय चिंतित उमा किये सहित सब प्रान करि॥३०॥

इस प्रकार पूरा वृत्तान्त सुना कर कुमार भानुराज ने अपने सारे बालक साथियों को साथ लिया और उन्हें ले कर वह आसेर के दुर्ग में आया और सभी को यह आश्चर्यदायक समाचार सुनाया। फिर शेष सारे बच्चों ने भी अपनी आपबीती सुनाई कि एक कुमार के स्मरण से आशापूर्णा देवी वहाँ आई ' हम सभी तो मुर्दा कंकाल मात्र थे हाँ, भानुराज में थोड़ी चेतना शेष थी। तभी शीघ्र ही आ कर चिंतित उमा (देवी) ने दया कर हम सभी को फिर से जीवित कर दिया।

अस्थिपाल अभिधान अपर कुमरहिं पुनि अप्पिय।
गो जंहं रक्खस गूढ द्रुत सु कंदर दिखाइ दिय।
कुमरहिं कासू इक्क अप्पि अक्खिय या बिच रहि।
हनिहों मैं तुम हुलसि सठहिं बुल्लहु त्रासहु सहि।
सो मन्नि कुमर हम सबन सह दुष्ट सु बुल्ल्यो कुबच दहि।
यह बीर भयो मुद्रित नयन मृतसम हुव हम लुट्टि महि॥३१॥

यही नहीं देवी माँ ने कुमार भानुराज को एक अवर नाम अस्थिपाल दिया फिर देवी माँ ने साथ जा कर उस पर्वत को दिखाया जहाँ वह राक्षस छिपा हुआ था। देवी माँ ने कुमार को एक शक्ति (बर्छी) भी प्रदान की और कहा कि इसमें मेरा निवास है। इसलिए तुम ललकार कर उस असुर को बुलाओ मैं तुम्हारे साथ रह कर उसका संहार करूँगी। इसे कुमार ने मान लिया फिर हम सभी इकट्ठे हो कर वहां पर्वत के पास गये और कुवचन बोल कर हमने उसे बुलाया पर जब वह पर्वताकार राक्षस आया तब इस वीर कुमार की आंखें मिंच गई और हम सारे मृतकवत् मूर्च्छित हो भूमि पर गिर पड़े।

दोहा

कुमर सक्ति वह अग्ग किय, पापी आवत पास।
गतजीवित बेधित गिरयो, बहु करि तरुन बिनास॥३२॥
कुमर बत्त हमसों कहिय, हम आये सब हाल।
निरखहु जो न प्रतीति मन, सुत्तो गिरि सम साल॥३३॥
बालन के सुनि सुनि बचन, चंद्रसेन चहुवान।
गो परिकर जुत जंहं गिरयो, मृत खल बपु अतिमान॥३४॥
निरखत ही सुभ गिनि नियति, ललित पुत्र उर लाइ।
आसापूरनि अंबिका, मन्नी सतत सहाइ॥३५॥
आश्विन पांडुर छट्ठि अह, यह हुव अखिल उदंत।
भौमचंद्र निज भाग्यबल, सतत सिराहिय संत॥३६॥

उस पापी के पास आते ही कुमार अस्थिपाल ने देवी प्रदत्त शक्ति को आगे किया। जिससे बेधित हो कर वह दुष्ट असुर कई पेड़ों को तोड़ता हुआ भूमि पर आ गिरा। यह सारी बात हम बच्चों को तो कुमार ने बताई फिर हम सब ने अपनी आँखों से देखा है। इस पर भी यदि आप लोगों को विश्वास न हो तो वहाँ चल कर देखो वह पर्वताकार राक्षस अभी भी मृत वहाँ पड़ा है। सारे बालकों से यह वृत्तांत सुन कर चहुवान चन्द्रसेन अपने सेवकों सहित उस स्थान पर गया जहाँ पर दीर्घकाय असुर की मृत देह पड़ी थी। उसे देखते ही चहुवान चन्द्रसेन ने देव कृपा को पक्ष में जान कर अपने पुत्र को हृदय से लगा लिया। उसी दिन से उन्होंने आशापूर्णा देवी को निरन्तर अपनी रक्षा करने वाली देवी माना। इसी से आश्विन मास के शुक्लपक्ष की छठी तिथि का यह दिन सभी के लिए शुभ दिन के रूप में प्रसिद्ध हो गया। इस दिन को देवी की कृपा का प्रसाद समझ कर राजा भौमचन्द्र ने अपने भाग्यबल को सराहा।

द्रुत नाडिंधम ताहि दिन, विदित सिल्प बुलवाइ।
दै हाटक नरदेह मित, प्रतिमा रुचिर ढराइ॥३७॥
मुक्ख्य निलय थप्पी समुझि, पहिलीसोंहु प्रधान।
बिरचि प्रतिष्ठा बेद बिधि, दै कोटिन बसु दान॥३८॥

अट्ठ भुजा प्रतिमा वहै, गढ आसेरहि गौरी।
रूपचंद्र नृपलों रहिय, बदिहैं गतहु बहोरि॥३९॥
याहीतैं कुल रावरे, इस छट्ठी अवदात।
राम नृपति अति मह रहत, बलि प्रमुखन विख्यात॥४०॥

राजा ने उसी दिन तत्काल ही सुनार को बुलवाया फिर सारे उत्कृष्ट शिल्पकारों को बुलवाया। राजा ने एक मनुष्य की देह के बराबर स्वर्ण दे कर देवी की मनोरम मूर्ति बनवाई। इससे पहले वाली जो आशापूर्णा देवी की मूर्ति थी उससे भी बड़ी बनवा कर राजा ने मुख्य मंदिर में उसकी स्थापना की। देवी प्रतिष्ठा राजा ने पूरे वेदोक्त विधि-विधान से की और इस पुण्य अवसर पर कोटि द्रव्य का दान किया। आठ भुजाओं वाली वह देवी प्रतिमा आसेरगढ़ पर राजा रूपचन्द के समय तक स्थापित रही और इसके बाद कैसे गई इसका जिक्र हम आगे यथास्थान करेंगे। हे राजा रामसिंह! इसी कारण से आसोज माह की शुक्ल पक्ष की छठी तिथि को आपके कुल में विशेष उत्सव मनाया जाता है। इस अवसर पर बलिदान देने का प्रचलन भी विख्यात है।

अखिल नगर बिच सुद्धि यह, पावत बढिग प्रमोद।
सिसु निज निज असु सह लखे, बिरचत बिबिध बिनोद॥
अधिप अब्ज चंडी कियउ, अमित द्रव्य उपहार।
बुल्लि देसदेसन बिबुध, बिप्रन के बहुबार॥४२॥
भौम हु जानी सुत भयउ, देवी इच्छित दास।
जो सब चालुक जित्तिकैं, बिरचहिं ह्रास बिनास॥४३॥
भगिनी अनुजा भानु की, अग्रज जीवत आत।
सूरा तादिनसों सतत, करि देवीपय पात॥४४॥
अैसो लाभ न और गिनि, रक्खि बितथ भव राह।
अंबाभक्त अनन्य रहि, वय जित्ती बिनु व्याह॥४५॥

पूरे आसेरगढ़ में यह खबर आग की तरह फैल गई कि राक्षस मारा गया। फिर सारे नगर निवासियों ने अपने-अपने बच्चे को सकुशल पा कर हर्ष से भरा उत्सव मनाया। राजा भौमचन्द्र ने बहुत सारा धन खर्च कर एक

अरब दुर्गापाठ करवाए और इसके लिए कई बार उसने दूर-दूर देशों से पंडित ब्राह्मण बुलवाए। राजा भौमचन्द्र ने जाना कि देवी की इच्छा से मेरे यहाँ पुत्र रूप यह देवी का दास जन्मा है जो निश्चय ही सारे चालुक्यों को जीत कर चालुक्य नाम के शब्द को ही मिटा कर रहेगा। अपने बड़े भाई भानुराज को इस प्रकार जीवित लौटा देख कर उसकी छोटी बहन सूरा ने उसी दिन से स्वयं को देवी के चरणों में समर्पित कर दिया। देवी भक्ति से बड़ा कोई पुण्य लाभ का कर्म नहीं जान कर उसने संसार से विरक्ति का मार्ग पकड़ा। वह उम्र भर देवी की अनन्य भक्त बन कर रही और इसके लिए उसने विवाह भी नहीं किया।

षट्पात्

अस्थिपाल बय बढत पाय जुब्बन प्रकट्यो पहु।
धनु असि बिद्या धारि बाजि गज नय आगमबहु।
चउदह बिद्या उचित कला चउसट्ठि स्वीय करि।
देबी बल रनदुसह भयउ विक्रांत छमा भरि।
आसेर केहु सिर पैं अतुल किन्नों जो चालुक्य कर।
जिहिं देत कुमर बरज्यो जनक अक्खिय अब तुम लेहु अर॥४६॥

धीरे-धीरे उम्र के साथ बढ़ते हुए अस्थिपाल ने यौवनावस्था पाई। उसने धनुर्विद्या और तलवार चलाने की विद्या का अभ्यास किया फिर घोड़े और हाथी की सवारी सीखी। नीति शास्त्र सहित सारे शास्त्रों का अध्ययन किया। उसने सारी चौदह विद्याओं और चौंसठ कलाओं को अपना बनाया अर्थात् वे सारी सीखीं। उस वीर पर दयालु अस्थिपाल ने देवी के बल से कई दुस्सह युद्ध किए। आसेरगढ़ के राज्य पर चालुक्य राज ने बहुत बड़ा कर लगा रखा था। उसे अदा करते समय अस्थिपाल ने अपने पिता को मना किया कि आप यह खिराज अदा न करें। इस पर पिता राजा ने कहा कि बेटा! तू चाहे शीघ्र और अवश्य ही इस कर को वापस ले लेना। हमें तो देना पड़ रहा है।

इतिश्री वंशभास्करे महाचम्पूके पूर्वायणे चतुर्थ राशौ बीतिहोत्र-चण्डासिबंशवर्णने प्राप्तपट्टभौमचन्द्र प्रामारीबिद्यावती परिणयन कुमारभानुराजो द्भवशकसूचन पुनर्भौमचन्द्र यादवीजया बिबहन

तत्पुत्रीसूरासमुद्भवन रक्षोगभीरारम्भक्रीडमानसबयस्यभानुराज पलादन मृतकुलदेवीकुमारादिसर्बकङ्कालप्रत्युज्जीवन प्राप्तशक्तिशक्तिकप्राप्ताऽस्थिपालनामकुमारगभीरारम्भमारण श्रुतैतदुदन्तचन्द्रसेन कौणपकुणपनिरीक्षण प्रत्यागतभूपाऽऽश्विनसितषष्ठी दिनमहन्मातृमहनियमबन्धन त्यक्तोपयमशूरा सततसर्बमङ्गलाराधन कारितबसु बाहुपुरटपार्वतीप्रतिमाकनृपततप्रतिष्ठासमयाब्ज चण्डीविधान समधीतकलन्दिकप्राप्तयौवनास्थिपाल चालुक्याऽर्थकरददानजनकनिवारणं द्वाबिंशो मयूखः ॥२२॥ आदितएकत्रिंशदुत्तरशततमः ॥१३१॥

श्री वंशभास्कर महाचम्पू के पूर्वायण की चतुर्थ राशि में अग्निवंशी चहुवान वंशवर्णन में पाट बैठ कर भौमचन्द्र का प्रामार विद्यावती से विवाह करना, कुमार भानुराज के जन्म के सम्वत् की सूचना करना, फिर भौमचन्द्र का यादन जया से विवाह करना, जिसके शूरा नामक पुत्री का जन्म होना, राक्षस गभीरारम्भ का खेलते हुए अपनी उम्र वाले भानुराज का मांस खाना, कुमार आदि मरे हुए सब कलेवरों का कुलदेवी द्वारा वापस जीवित करना। शक्ति से शक्ति पाकर अस्थिपाल कुमार का गभीरारम्भ को मारना, वह वृत्तांत सुनकर चन्द्रसेन का मरे हुए राक्षस को देखना, वापस आये हुए राजा का आश्विन सुदी छठी के दिन माता (देवी) का बड़ा उत्सव करने का नियम बांधना, विवाह करना छोड़कर शूरा का निरन्तर सर्व मंगल करना, आठ हाथों वाली सोने की पार्वती की मूर्ति बनवा कर प्रतिष्ठा करवाना और राजा का अरबचंडी विधान कराना और सर्व विद्या पढ़कर अस्थिपाल के युवा होने पर चालुक्य को खिराज देने से पिता को मना करने का बाईमवाँ मयूख समाप्त हुआ। आदि से एक सौ इकतीस मयूख हुए।

प्रायो ब्रजदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

दोहा

भौमचंद्र सन भाखि इम, भानुराज भट सज्जि।
पहिलैं पच्छिम ही चल्यो, गंजन चालुक गज्जि॥१॥
अनिहलपुर जयसिंह इत, पायउ मृत परलोक।
तस सुत गोभिलराज तंहं, अधिप भयो निज ओक॥२॥

कुमर अस्थिपाल हु कटक, इत करि सज्ज असेस।
प्रथम चल्यो गुजरात पर, दक्खन चालुक देस॥३॥

अपने पिता राजा भौमचन्द्र से कर न देने की कहने पर जब पिता ने कहा कि तू वापस उगाह लेना। यह सुनते ही भानुराज ने अपने वीर योद्धाओं को युद्ध के लिए सज्जित होने का निर्देश दिया फिर वह कुमार सर्वप्रथम पश्चिम दिशा में गर्जना कर चालुक्यराज को जीतने के लिए बढ़ा। उधर अनिहलपुर पट्टनि के राजा सिद्धराज जयसिंह देव का स्वर्गवास हो गया और उसका उत्तराधिकारी गोभिलराज चालुक्य राजा बना। इसी समय अस्थिपाल चहुवान अपनी सेना सज्जित कर चढ़ आया और युद्ध करने की इच्छा से गुजरात वाले चालुक्य के देश को दबाने का सोचा।

महाचर्च्चरी

महागीतिकेत्येके

अस्थिपाल कुमार सज्जि अनीक चालुक पैं चल्यो इम।
जंभ पैं सुर संघ संग प्रयान बासव को बनैं जिम।
केक चित्रबिचित्र मत्त करीन झंडन झुंड केतन।
लार जे हुव झार होरिन की हु औप जितीक लेतन॥४॥
केक हत्थिन सिंहपीठ रु मेघछत्र तपत्र केकन।
बिप्फुरे जिनकों लखैं विबुधाद्रि कैहु टिकैं विवेक न।
हल्लमैं पय टल्ल देत हमल्ल झुल्लत भू हिंडोरन।
अप्पनी छितिछांव पात चलात घात रु ओर ओरन॥५॥
पालकाप्य प्रभाव पाटव पुंज ज्यों इभपाल पिल्लत।
खूब त्यों अहिभोग जोग उठाइ पोगर खेल खिल्लत।
जात्य हाटक जात दीप्ति दिखान दो हु बिखान बंगर।
पूर्णिमा निसचंद्र कों कि बिकुप्पि बेढ़िय बक्र संगर॥६॥

चहुवान कुमार अस्थिपाल इस प्रकार अपनी फौज ले कर चला जैसे जंभासुर पर चढ़ाई करने जाते देवताओं के समूह के साथ इन्द्र हो। कितने ही

रंग रंगीले रंगे हुए मस्त हाथियों के झुण्डों पर फहरती ध्वजाओं के समूह हैं। जो होली की ज्वाला जैसी शोभा देने वाले है मानों ये ध्वजाएँ न हो कर लपलपाती ज्वालाएँ हों। कई हाथियों पर सिंह के चेहरे वाले होदे, मेघाडम्बर और तपत्र है जिनको क्रोध किए हुए देखें तो उसके आगे तमतमाता सुमेरु (स्वर्ण रंग की आभा के कारण) भी ठहर न पाए। चलते समय हाथियों के पाँवों के धक्के से और झूम कर झूमते समय भूमि इस प्रकार हिलने लगी मानों किसी हिंडोले पर चढ़ी हुई हो। सारे हाथी पृथ्वी पर पड़ती अपनी प्रतिच्छाया को अपने पांवों से खूंदते चल रहे हैं जैसे वह उनकी छाया न हो कर अन्य हाथी हों। पालकाप्य (हस्ती शास्त्र लिखने वाले मुनि) द्वारा बनाए नुस्खों के सहारे महावत पूरी सावधानी और चतुराई के साथ उनको आगे बढ़ा रहे हैं। वे हाथी चलते-चलते अपनी सूंड के अग्रभाग को इधर-उधर यों हिला रहे हैं मानों सर्प अपने फणों से खेल रहे हों। इन हाथियों के दोनों सफेद दाँतों में पहनाए हुए स्वर्ण निर्मित बंगड़ दीप्ति दिखलाते यों शोभा दे रहे हैं जैसे पूर्णिमा की रात्रि वाले चन्द्रमा को क्रोध कर युद्ध में वक्रगति वाले (राहु) ने घेर रखा हो।

भद्र मंद मृगाख्य मिश्र अनेक उद्धत भू भ्रमावत।
भेद मक्कुन बाल पोत रु बिक्क के जिन्ह चिक्क भावत।
जूहनाह प्रभिन्न मैंगल व्याल के लहि मज्झ जुब्बन।
घुम्मि कल्पित केक बुट्ठत दान के वमथून के घन॥७॥
अग्ग पिट्ठि अनेक ओ दुहुँपास के इम लग्गि आरन।
बारिबाह घटा दबात फटाफभात चले ति बारन।
तुक्कि पुक्खर के धपैं भयकार ज्यों फन फार तच्छक।
धार बाजिन पिट्ठि पारि प्रचारि हंकत कोप की धक॥८॥

भद्र, मन्द, मृग और मिश्र जाति के अनेक हाथी चंचलता से चलते भूमि को घुमाते चल रहे हों। अब इन हाथियों के भेद देखें कि इनमें कई तो मुकना (बिना दाँतों वाला) हैं कई बाल (पाँच वर्ष की वय वाला) है। कई पोत (दस वर्ष की उम्र वाले) हैं और कइ विक्क (पाठा हाथी) हैं जिनकी चिंघाड़ सुहानी लगती है। इन हाथियों में कई यूथ नाथ (हाथियों के समूह के पति) हैंम, कुछ प्रभिन्न (गर्जना करने वाले) हैं। कुछ मैंगल (मस्त हाथी) हैं

तो कई व्याल (तिरछी घात करने वाले) और कुछ अपनी ठीक युवावस्था के मध्य हैं। जो चलते-चलते ही कल्पना में ऐसी वृष्टि करते हैं जैसे ये इनकी सूंडों से उत्पन्न मेघ हों। महावतों द्वारा अंकुशों की आगे और पीछे दोनों ओर आरें (तीखी वस्तु को चुभाना) लगाई जा रही है जिससे ये मेघों की घटा की छटा को दबाते हुए स्वयं घटा रूप हो आगे बढ़ रहे हों। अपनी सूंड के अग्रभाग को ऊपर उठाए उनमें कुछ हाथी यों दौड़ रहे हैं मानों अपने फण उठाए भयंकर तक्षक नाग दौड़ रहे हों। सेना में साथ चलती घोड़ों की पंक्तियों को पीछे छोड़ते हुए ये हाथी हाँकने पर क्रोध में फुफकारते आगे बढ़े।

अप्प प्रेरक केक झंझटि झारि आसन तैं उडावत।
पोन के बल मेरू सों छुटि शृंग ज्यों टिकिबे न पावत।
ईषिका प्रतिमान गंड निजान पंजक त्यों अवग्रह।
बातकुंभ रु चूलिका बिदु आदि चित्रित देत मामह॥९॥

कई हाथी अपने अंकुश चुभाते महावतों को उनके आसन से उछाल कर यों नीचे पटकते बढ़ रहे हैं जैसे तेज हवा के झोंके से कोई सुमेरू पर्वत के शिखर से गिर पड़ा हो और बीच में कहीं टिक न पा रहा हो। इन हाथियों के विभिन्न अंगों यथा आंख के गोलों (ईषिका), प्रतिमान (दोनों दांतों) के बीच की जगह, गंड (कपोल), निजान (गला) पंचक (पूंछ का मूल प्रदेश), अवग्रह (ललाट), बातकुंभ (कुंभस्थल के नीचे का भाग), चूलिका (कानों का मूल भाग) और बिदु (कुंभस्थल का मध्य भाग) पर तरह तरह की चित्रकारी की हुई है। इससे वे बड़ी शोभा दे रहे हैं।

गात्र त्यों अपरा न इक्खत चैंकि धावन मैं चमू गन।
पद्मजाल प्रसिद्ध पारत ज्यों प्रतीत तजै बलीपन।
उल्लसे कई जाइ कंदुक भाइ अंदुक कों उछंटत।
बेग के बिथराई वट्टहिं जे जरे त्रिपदीन बंटत॥१०॥
तोत्रअग्र अपष्ट मन्नत के न जुब्बन जोर तंडत।
मोचिकाफल लोभ के अति छोभ के डक अग्ग मंडत।
कच्छिका अवनद्ध के उरझात बाहक पै कलापन।
पीलु हंकिय यों जिन्हें पर भीलु पिक्खिहु पाइ पापन॥११॥

तीसरे प्रहर के बाद होने वाली काली सांझ के रंग को देख कर वे भड़क कर दौड़ने लगे जैसे सामने अन्य कोई हाथियों के समूह आ गए हों। पर उनके मुँह पर तो रंगों से चित्रकारी हो रखी है इसका अर्थ यह कि वे युद्ध के हाथी हैं अपने इस दर्प से बढ़ते हाथी मानों सामने वाले खाली माली काले रंग वाले हाथियों का बल क्षीण कर रहे हों। कई हाथी उल्लासित हो कर गेंद की तरह अपनी सांकलों को उछालते हुए बढ़ रहे हैं। कई अपनी गति को तेज करते हैं तो इस प्रयत्न में उनके पाँवों में बंधी बेड़ियों (सांकल) पर जोर पड़ रहा है। भाले के तीखे अग्रभाग को और अंकुश की तीखी धार को वे अपने यौवन के जोर से नकार कर गर्जना करते बढ़ रहे हैं। वे अपने पाँव निरन्तर आगे बढ़ा रहे हैं मानों उन की कल्पना में केले के फलों-पत्तों का लोभ हो अथवा कि क्रोध के वशीभूत हो जल्दी-जल्दी डग बढ़ा रहे हो। नावों के बेड़े को खेने वाले केवट जिस प्रकार झुक कर दोहरे हो जोर लगाते हैं इसी प्रकार अंकुश मारने को हाथियों की गरदनों में महावत उलझे से दोहरे हो रहे हैं। हो न हो इन हाथियों को हांकने में ये भीरू से दिखने वाले महावत मानों पूर्व जन्म के पापों से मिले हाथियों से मिले हों।

बाजि केक चले तुले रचि राजि आजि खुले दु बंधन।
खूब सोहत व्यालजाल विसाल याल बिनम्म्र खंधन।
मीन लों पलटैं अटैं रु नटैं मनों पय भुम्मि दज्झहिं।
हत्थि वृंदन जात बिज्झु चलात ज्यों लहि मेध मज्झहिं॥१२॥
बेग मैं पटके किते लटके फिरैं नट के बटा गति।
इष्ट जे भटके रु उब्बट के करैं बटके कटा गति।
लेत के पखराल चाल अराल ज्यों नखराल पातुरि।
जात के चमराल लूमन हाल पैं बलिहार ह्वै जुरि॥१३॥

इन हाथियों के साथ कई घोड़े बढ़े जिनकी लगामें वीरों के हाथ में है और पंक्तिबद्ध हो कर ये आज ही जैसे युद्ध के लिए अपने-अपने बंधनों से छूटे हों। उनके कंधों पर पड़ी अयाल तेज वेग से लगती हवा से झुकी हुई सर्पजाल की तरह शोभित हो रही है। वे मछली की तरह कभी पलटते हैं, इधर फिरते हैं उधर फिरते हैं अर्थात् पूरी मीन गति से चल रहे हैं मानों गर्म

पृथ्वीतल पर उनके पाँव दाझ रहे हों। कभी ये घोड़ों के समूह चलते-चलते हाथियों के दल में चले जाते हैं तो ऐसा लगता है मानों काली घटा में बिजली सलावा भर रही हो। ये घोड़े दौड़ते-दौड़ते अपने वेग से कई सवारों को पटक रहे हैं। कई सवार जवान नट की तरह संतुलन बनाने को लटके हुए हैं। कुछ घोड़े अपनी गंतव्य राह से भट कर उजड़ राह पर बढ़ते हुए रास्ते को वक्र गति से काटते बढ़ रहे हैं। कई पाखर वाले घोड़े अपनी तिरछी चाल से यों चल रहे हैं जैसे कोई नखराली पातुरिया चलते हुए कई घोड़ों की कलंगी के नृत्य पर बलिहारी जा रही हो।

झुंड चंपत रान के अतिमान झंडन लंघि झंपत।
के बरच्छिन आनजान उडान के क्रम भुम्मि कंपत।
परसीक रु कच्छ बाल्हिक के बनायुज जात प्रध्वर।
आइके अहिभार बक्र जिताइ जे हयमेध अध्वर॥१४॥
बातचक्र बनाव के करि आवजाव थरक्कि रच्चहिं।
नर्तकी पलटाव ज्यों करि हावभाव फरक्कि नच्चहिं।
के मलंगत राह पच्छन राह लै गजगाह फैलहिं।
जानि लंघन चाह छोरत दाहसों रविबाह गैलहिं॥१५॥
ऊप्फनैं जव मैं घनैं उडिजात बात बनैं पटी पर।
इक्र लंघत इक्ककों जिम हानि जानि नटी नटी पर।
इक्क जीह कहों किती द्रुत दीह दोरत लीह लग्गत।
जानि सद्दिय जीत वानिक बानि तक्किय जीह जग्गत॥१६॥

वीर सवारों के अपनी थोड़ी रान दबाते ही घोड़े बड़े नाप के ऊँचे झंडों को भी कूद कर लाँघ रहे हैं। कहीं संकरी राह आ जाने पर चलते हुओं को बलात रोकने और फिर एकदम बढ़ाने से बढ़ने में वे घोड़े पृथ्वी को कंपायमान करते बढ़ रहे हैं। फारस देश के (पारसीक) कच्छ देश के (काछी), बाल्हिक देश और वनायु देश में जन्मे अच्छी नस्लों के ऐब रहित घोड़े बढ़े। ये घोड़े अपनी वक्रगति से शेषनाग का भार बढ़ाने वाले और अश्वमेघ यज्ञ में विजय पा कर उसे सफल बनाने वाले हैं। ये घोड़े थिरक

कर अपने आवागमन से हवा में वातचक्र (बगूले) बनाने वाले हैं। कभी-कभी ये एकदम पलट कर यों बढ़ते हैं मानों गणिका अपने पलटा जैसे भाव दिखाती घूमर नाच रही हो। कई घोड़े एक राह से कूद कर दूसरी पकड़ रहे हैं पर कभी-कभी आगे आ जाती हाथियों की पंक्तियों में उनकी झूलें इन घोड़ों को रुकावटों की मानिन्द लगती हैं क्योंकि ये घोड़े तो डाह से कूद कर सूर्यरथ की राह पकड़ने का हौंसला रखते हैं। अपनी गति की शीघ्रता से बढ़ते-कूदते वे राह पर पवन बन जाते हैं। अर्थात् पवनवेग से चलने लगते हैं। कभी लाँघ कर एक आगे हो जाता है तो कभी दूसरा मानों अपनी हानि जान कर एक नटनी दूसरी नटनी को फांद रही हो। ग्रंथकर्ता (सूर्यमल मीसण) कहता है कि इस दृश्य का भला कोई कैसे वर्णन करे मुझे लाज लगती है क्योंकि जीभ तो एक है वह जितना कहती है उससे तेज गति से दौड़ कर दृष्टि और अधिक देख लेती है अर्थात् ज्यों-ज्यों जीभ अपनी गति बढ़ाती है कि दृष्टि की अपनी देखने की गति और बढ़ जाती है जैसे वानिका (वैयाकरण) की विजय जान कर तार्किक (नैयानिक) की जीभ की गति बढ़ जाती है।

उच्छटैं नभमैं अनेक अटैं मनों प्रतिमल्ल इक्खन।
पिट्ठि पोन प्रचार ज्यों अनुचार पंच हि धार सिक्खन।
के करैं पलटा चलावत अंखि ज्यों कुलटा निरच्छिय।
आत जात अनेक ब्रात नई नई गति लेत अच्छिय॥१७॥
भुम्मि बत्थन घल्लि डारत पिट्ठि झारत अग्गि नालन।
होत जे खुरघात ते कसकात आलुक के कपालन।
पिक्खि जे निज छांहं कों झझकैं पलट्टत कर्म केतक।
अस्थि ह्वै न निगाल में गल यों नमैं सुखमा उपेतक॥१८॥
के फुरैं बहुफाल घोरन की हिंडोरन की लरैं जिम
बग्ग मोरन की छटा मनि बिंब दोरन की करै किम।
अष्टमंगल पंचभद्र रु चक्रवाक अनेक उद्धत।
मल्लिकाक्ष छये नये बय मैं बहैं रय मैं रहैं रत॥१९॥

युद्धातुर प्रयाण करते इन घोड़ों को देखने ऊपर आकाश में सूर्य के सप्ताश्वों का मेला लग गया मानों वे अपने बराबरी वाले इन घोड़ों (प्रतिद्वंद्वी) को अच्छी तरह देखना चाह रहे हों। जिनके चलते समय उनकी पीठ पर से गुजरता तेज गति का पवन उनका अनुचर (पीछे चलने वाला) उनसे उनकी पाँचों तरह की चाल सीखने को उत्सुक हो। ये घोड़े चलते-चलते अपनी वक्र गति का दाव यों दिखा रहे हैं जैसे किसी कुलटा स्त्री की अपनी तिरछी चितवन से मुकाबला करने में संलग्न हों। घोड़ों के ये समूह अपने आने जाने की क्रिया में नई-नई तरह की अच्छी चाल का प्रदर्शन कर रहे हैं। ये घोड़े बढ़ते हुए जैसे पृथ्वी को अपनी बाहों (आगे के पैरों) में भर कर पीछे धकेल रहे हैं और पीछे छूटती धरती पर अपने पांवों में लगी लोहे की नालों से अग्नि झाड़ते हुए बढ़ रहे हैं। ये घोड़े अपनी टापों के प्रहारों से शेषनाग के कपाल में पीड़ा देते हुए बढ़ रहे हैं। केवड़े के पुष्प जैसे कान वाले ये घोड़े अपनी प्रतिच्छाया को देख कर दौड़ते हुए बिदक रहे हैं। चलते हुए ये घोड़े अपनी गर्दन को आगे-पीछे करते इस प्रकार शोभा दे रहे हैं मानों इनके गले में जैसे कोई हड्डी ही न हों। बड़े-बड़े फाल (चोकड़ी भरते) ले कर दौड़ते इन घोड़ों की पंक्तियाँ ऐसी लग रही है मानों किसी हिंडोले (झूले) की लड़ें हों। इनके सवार इनकी लगाम मोड़ते हैं तब ऐसा लगता है मानों चमकते रत्नों के बिंब दौड़ रहे हों। इन घोड़ों के समूह में कई घोड़े अष्टमंगल है (अर्थात् उनके चारों पाँव, पूँछ, ललाट, मद्दू और अयाल सभी श्वेत रंग के हैं)। कुछ घोड़े पंचभद्र हैं (अर्थात् जिनके चार पाँव श्वेत और ललाट, पर तिलक भी सफेद रंग का हो) कुछ घोड़े चक्रवाक् हैं (अर्थात् जिस घोड़े का रंग पीला पर उसके पाँव और नेत्र श्वेत हो) ऐसे अनेक चंचल (घोड़े) बढ़ रहे हैं। कुछ शुभ्र वर्ण के घेरे से घिरी आंखों वाले नई उम्र के मल्लिकाक्ष घोड़े वेग से चलने में प्रीति रखने वाले हैं जो राह में बढ़ रहे हैं।

बीर के करि पैज इक्क सु इक्क अग्ग बढात बाजिन।
जीन पक्खर के जवाहिर चित्र मंडत रोचि राजिन।
भेट होतहि बेग मैं जिन्ह फेट हत्थिन कों भ्रमावत।
भीत्ति दै सफ घात की उडिआत पुब्बहि भू नमावत॥२०॥
चित्र धावन लीन के पटु पान पिंड खलीन चट्टत।
बक्र धाव अधीन के दृग मीन कों करि दीन दट्टत।

गम्य गंजि गह्योहि जानहु अग्ग ह्वै जब बग्ग उठ्ठिय।
मग्ग चाल अराल ह्वै कति फग्ग काल गुलाल मुठ्ठिय ॥२१॥
के अरोहक हीन भृत्यन हत्थ फांदत उप्फनैं क्रम।
केक सादिन हिठ्ठ सत्रुन जिठ्ठके दव ज्यों बनैं जिम।
अब्ब या गतिके चले रु मिले भले तिनके अरोहक।
सत्रु डोहक सिंह जे मनमत्त अच्छरिवृंद मोहक ॥२२॥

रणभूमि की ओर जाते हुए वीर योद्धा आपस में होड़ करते हुए अपने-अपने घोड़े को आगे निकालने के प्रयत्नों में रत हैं। इन घोड़ों के पाखर और काठी (जीण) पर लगे रत्नों से प्रकाश झिलमिला रहा है। ये घोड़े आगे निकलने में अपनी टक्कर से हाथियों को विचलित कर रहे हैं। ये घोड़े अपनी टापों (खुर) के आघात का भय दिखा कर पृथ्वी को पहले ही झुका रहे हैं। आश्चर्यजनक ढंग से दौड़ने में लीन ये पुष्ट शरीर वाले चतुर घोड़े चलते-चलते ही अपनी लगामों को चाटते हुए चल रहे हैं। अपनी सीधी चाल में जब वक्र चाल डालते हैं तो ये ऐसा करने में वक्र गति वाली मछली और आँख को भी दीन बना कर दबा देते हैं अर्थात् इनकी वक्रगति के आगे आँख और मछली की भी क्या बिसात? ये जब किसी का पीछा करते हैं तो लगाम के उठते ही यह मान कर चलें कि अगले को पकड़ कर ही दम लेंगे अर्थात् उसे जीत कर ही रहेंगे। ये रास्ते में सर्प गति से बढ़ रहे हैं। पर कभी-कभी फाल्गुन माह में होली के अवसर पर मुट्ठी से उड़ती गुलाल की तरह उड़ लेते हैं अर्थात् कूद रहे हैं। कई घोड़े सवार से विहीन चरवादारों (नौकर) के हाथ में पकड़ी लगाम के साथ उछल रहे हैं। कई सवारों के नीचे (आसन की ठौड़) रगड़ लगने से जेठ माह की तपती अग्नि शत्रुता निकाल रही है। इस प्रकार के घोड़े बढ़े और उनके सवार भी अच्छे भले मिले। (इन पर आरूढ़) वीर सवार भी अपने शत्रुओं को ढूँढ़ कर मारने वाले सिंह के समान चित्तवाले हैं और मस्त हो कर अप्सराओं को रिझाने वाले हैं।

हुल्ल चालुक बिंद डोड कबंध जावल कुम्म हंकिय।
चावुरे दहिये रु दाधिम बैस गोभिल अैंड अंकिय।
जूह के कमनैत जोधक व्योम बानन जाल जोरत।
दाव कुंतन के करंत अलातचक्र फिराव दोरत ॥२३॥

केक द्वै बटि अस्त्र ईस दुबीस खग्गन मग्ग सद्धहिं।
चोट टारन मैं परस्पर बाह तैं रसलाह लद्धहिं।
बावरी घट कै मनों सहगामिनी कर लांगली सम।
जोर घोर जिन्हैं लखैं अरि ओर मैं तब ओर को जम॥२४॥
दोरते हय बिज्झ बेधत के तुपक्कन झारि दुद्धर।
अप्पनी नहिं दै सदा प्रभु पार की पुहवी समुद्धर।
बानकोबिद केक अर्जुन प्रान को अभिमान आनत।
पिक्खि पाटव पान को चहुवान को जग जोर जानत॥२५॥
जात यों जिनके थकैं उरझात लेसन मैं सदागति।
गोन झेलन नां सहैं रनरंग खेलन को तदागति।
बुल्लि मैं पहिलैं न मैं पहिलैं रु बैरिन बंस बंटत।
जित्ति आरन व्है जई तउ कित्तिकारन सीस संटत॥२६॥

हाला, चालुक्य, बिंद, डोड, राठौड़, जावल, कछवाहा योद्धा चले वहीं चावड़ा, दहिया, दाधिम, बैंस और गोभिल वंशीय क्षत्रिय भी अपनी अकड़ के साथ बढ़े। योद्धाओं के ये समूह आकाश में तीरों का जाल-सा तानने वाले हैं और अपने भालों को निर्बाध अलातचक्र की तरह चलाने वाले हैं। अपने स्वामी के आगे चलते वक्त दो-दो का जोड़ा बना कर योद्धा तलवार बाजी के अपने हाथ दिखा रहे हैं। ये पटा फेंकने (तलवारबाजी) के बाईस ही पैंतरों का प्रदर्शन कर रहे हैं और सामने वला जोड़ीदार इन प्रहारों को टाल कर कुशलतापूर्वक स्वयं को बचा रहा है और दोनों पक्ष वाह-वाह सुनने का आनन्द ले रहे हैं। ये रणोत्सुक योद्धा पगली स्त्री के घड़े और सती के हाथ के नारियल की तरह नष्ट होने पर आमादा हैं। भयंकर से लगने वाले ये बलशाली योद्धा जब शत्रु सेना की ओर देखते हैं तो यह आभास होता है कि साक्षात यमराज देख रहा है। चलते-दौड़ते घोड़ों पर ही निशाना (बेध) बेधने के अभ्यास में ये वीर बन्दूकें चला रहे हैं। हे राजा रामसिंह! ये योद्धा अपनी जमीन तो किसी भी किमत पर नहीं देते बस पराई भूमि को जीत कर उसका उद्धार करने वाले हैं। बाण चलाने में निष्णात कई योद्धा अर्जुन जैसा

पराक्रम धारण करने का अभिमान पाले हुए हैं। ऐसे योद्धाओं के हाथों की चतुराई (शस्त्र चालन) देख कर ही कयास हो जाता है कि पाटवी चहुवान का बल जगत प्रसिद्ध है। उसके योद्धा ऐसे हैं कि उनके भालों में उलझ कर पवन भी थक जाता है और वहाँ रह कर भी वह योद्धाओं की रणभूमि में दिखाई गई चपलता की गति को नहीं झेल पाता अर्थात् उसकी गति से भी वीरों के लड़ने की गति तेज है वह इसे कैसे सहन करें? ये योद्धा रंगभूमि में मैं पहले मारूँगा, मैं पहले मारूँगा कहते हुए शत्रुओं के वंशों का बंटवारा करते हैं। ये योद्धा युद्ध को जीत विजयी हो कर भी कीर्ति के लोभ में अपना मस्तक देने वाले हैं।

पच्छ के रु विपच्छ के जिन्ह दच्छ के बितरें बिसेसन।
हंकि जे रनपैं चलाई सहै न व्हां भर संकि सेसन।
उर्बसी सुचि मेनका रु तिलोत्तमा पटुभाव पुच्छत।
के सुकेसि घृताचि जुब्बन ज्यों सुनैं मन त्यौं धरैंमत॥२७॥
पूर्बचित्ति ऋतुस्थला सुरसा प्रमाथिनि के सिराहत।
पर्णिनी पणिनी सुबाहु रु सुप्रिया कति चित्त चाहत।
मिश्रकेसि अलंबुसा रु मरीचि जुब्बन के बखानत।
अद्रिका असिता प्रिया रु मनोरमा बिच भाव आनत॥२८॥
ईसलोक किते किते हरिलोक के बिधिलोक इच्छत।
इक्क लक्खन भैं बहै न अराति अंग रहै न बिच्छत।
घात लग्गत काचलों झरिजात पै मुरिजात नैंक न।
ढारि हत्थिन रारि पोखत चिल्लह गिद्ध सिचान ढैंकन॥२९॥

अपने पक्ष के अच्छे योद्धा सामना करने के लिए छाँटते हैं और विपक्ष के योद्धाओं को अपने भिड़ने के लिए छाँटने वाले ये चतुर नायक जब युद्ध में धावा करने बढ़ते हैं तब शेषनाग इनके भार से घबरा उठता है। उर्वशी, सुचि, मेनका, तिलोतमा आदि अप्सराएँ इन्हें प्रेम से ताकती है। इनसे प्रेमभाव की बातें करने के लिए सुकेशी, घृताचि जैसी अप्सराएँ इनको ज्यों ज्यों सुनती हैं कि इनका मन और अधिक बढ़ने लगता है। पूवचिति, ऋतुस्थला,

सुरसा, प्रमाथिनि, इनकी प्रशंसा करती हैं तो पर्णिनी, पणिनी, सुबाहु, सुप्रिया जैसी कितनी ही अपने मन से इन्हें चाहती हैं। मिश्रकेशी, अलंबुसा, मरीचि जैसी स्वर्ग की स्त्रियाँ इन योद्धाओं के योवन का बखान करती हैं तो अद्रिका, असिता, प्रिया, मनोरमा जैसी अप्सराएँ अपने भावों में इन्हें बसाती हैं। शिवलोक, विष्णुलोक और ब्रह्मलोक के लोग इन योद्धाओं की कितनी इच्छा करते हैं इन्हें चाहते हैं क्योंकि इनमें से एक अकेला वीर लाखों शत्रुओं के बीच भी भय नहीं खाता और उसके सामने कोई शत्रु बिना घाव खाए जा नहीं सकता। चोट पड़ने पर काँच की तरह किरच-किरच बिखरना इन्हें स्वीकार है पर ये मुड़ने के स्वभाव वाले नहीं। ये युद्ध में अपनी तलवार से हाथियों को मार कर युद्ध भूमि में मांस भक्षी पक्षियों गिद्ध, चील्ह, बाज, शिकरा और ढींचों का पोषण करने वाले हैं।

यों प्रबीरन ओघ अंकुरि अस्थिपाल कुमार हंकिय।
चंड जो चतुरंग चल्लत मेह ज्यों रवि खेह ढंकिय।
मग्गके नृप जित्ति संग लये सु सेन समाइ जावत।
मेघकाल मनों महानद खाल नाल प्रनाल पावत॥३०॥
बत्त गोभिलराजहू सुनिकैं चल्यो सजि सेन बित्थर।
सीम सम्मुह आतभो रु दयो न दब्बन देस गुज्जर।
संझ आगम जानि दोउ न स्वस्वसेन मिलान मंडिय।
रत्ति जाम रहंत बंदिन बैन बोधन सैन छंडिय॥३१॥
बीरबेस बनाव सूरन चाव कैं कटिबंध बंधिय।
जालिका बर बक्त्र मुक्कुन टोप बाहुल संघ संधिय।
सज्जिकैं हय हत्थि आरुहि घातपैं बढि प्रात द्वै दल।
यों मिले हरखात ज्यों मिलि जात द्वै घन बात के बल॥३२॥

ऐसे वीर योद्धाओं के समूह के बीच खड़े हो कर कुमार अस्थिपाल ने गर्जना भरी ललकार कर इन्हें कूच करने का कहा। यह सुनते ही प्रचंड चतुरंगिनी सेना चली। उसके चलने से उड़ी खेह में सूर्य इस प्रकार छिप गया जैसे वह मेघमाला के नीचे छिप गया हो। कुमार अस्थिपाल ने यहाँ तक

आते-आते मार्ग में पड़ने वाले कई राज्यों को जीत कर उनके राजाओं को भी अपनी सेना में इस प्रकार मिलाया जिस प्रकार वर्षा ऋतु में परनाले, नाले और छोटी नदियाँ महानद (बड़ी नदी) में मिलते हैं। अस्थिपाल की सेना के आने की खबर पाकर चालुक्य गोभिलराज भी (विस्तार वाली) अपनी बड़ी सेना को सज्जित कर मुकाबले के लिए बढ़ा। वह उल्टा अपने राज्य से चल कर सीमा प्रांत तक आ गया। उसने गुजरात की धरती को भी नहीं दबाने दिया। सायंकाल का समय हो जाने से दोनों पक्षों ने अपनी-अपनी सेना के पड़ाव डाले। एक पहर रात रहे भाट लोगों द्वारा जगाने के लिए उचारे गए वचनों को सुन कर वीरों ने अपनी निद्रा त्यागी। वीरों ने अपने कपड़े पहने और रण के उत्साह में अपनी-अपनी कमर कसी। योद्धाओं ने जालीदार श्रेष्ठ कवच, जँघात्राण (जाँघ पर बांधने की लोहे की जाली) टोप (शिरस्त्राण) बाहुल (बाँहों का कवच) पहने। फिर अपने-अपने हाथी घोड़ों को सज्जित कर प्रात: वेला में दोनों दल घात-प्रतिघात करने बढ़े। दोनों पक्ष इतने हर्ष के साथ मिले जैसे पवन की सहायता से दो बादल आपस में मिल रहे हों।

सक्ति बानन जाल के करवाल कालकराल चल्लिय।
होत हल्ल हमल्ल यों डगमग्गि डुंगर भुम्मि हल्लिय।
भानु उग्गत ही रुक्यो घमसान बीरन प्रान पिक्खन।
संकुले गन प्रेत खेत अपुब्ब चक्खन स्वाद सिक्खन॥३३॥
झार उड्डुत धार यों तरवारि टोपन पैं झनंकिय।
रोचि आरति दीप की नियराइ झल्लरि ज्यों रनंकिय।
उल्लटैं न हटैं कटैं भटके कटैं समभाग फंकन।
बप्प के अनु बप्प को बि हु बंधु दित्त बटैं असंकन॥३४॥
कड्ढि कालिक हू परैं कति सत्रु लोहित मुच्छ रंगत।
मत्त रुंड संसध लै कर सीस ईसहिं देत मंगत।
के कबंध असंध बाल प्रबंध भंभहभोरि खावत।
अच्छरीन छुवंत के अरि जानि गोडिन दै गिरावत॥३५॥

युद्ध के आरंभ होते ही दोनों ओर से बर्च्छियाँ, बाण और तलवारों के

विकराल घातक प्रहार होने लगे। एक दूजे पर धावा बोलते आपस में टक्करें मारते वीरों की हलचल से पर्वत और पृथ्वी हिलने लगे। सूर्य उदय होते ही था वहीं ठहर गया यह देखने को कि इस युद्ध में कितने पराक्रम के साथ योद्धाओं ने घमासान मचाया है। रणक्षेत्र में भूत प्रेतों के समूह आ जमें इस प्रत्याशा में कि नये-नये स्वाद चखने को मिलेंगे। तलवार शत्रु के टोप पर पड़ने से चिनगारी छोड़ती झनन की आवाज कर रही है मानों दीपक आरती का समय समीप आ जाने से तलवार दीपक की रोशनी और झालर दोनों का काम भी कर रही हो। अर्थात् तलवार ही प्रकाश और वाद्यों की कमी पूरी कर रही है। वीर ऐसी ही आरती तलवार से करते हैं। न उलटते हैं, न हटते हैं, न कटते हैं पर हाँ यदि कटते हैं तो कुछ वीर इस तरह कटते हैं कि उनके दोनों भाग बराबर होते हैं जैसे पिता के धन को दो भाई निःशंक बराबर-बराबर बाँटते हैं। किसी शत्रु योद्धा का कटने पर कलेजा उछल कर बाहर आ इस प्रकार गिरता है कि वह अपने रक्त से जैसे काटने वाले वीर की मूँछों को रंगे दे रहा हो अथवा रंग दे रहा हो। कोई-कोई धड़ तो जैसे प्रतिज्ञापूर्वक स्वयं का मस्तक मांगते हुए महादेव को दे रहा हो। कई धड़ प्रतिज्ञारहित होने से युद्धक्षेत्र में पड़े सरकते हैं मानों वे बच्चों का बंभाभोरी खेल खेल रहो हों। कई कबंध (मस्तकहीन धड़) अपना वरण करने आई अप्सराओं को शत्रु समझते हुए टाँग मार-कर गिरा रहे हैं।

के स्व अंत्रन तंत्र ऐंचि कुबिंद ज्यों पटजाल तानत।
के नियुद्ध रचैं उभै अरिमल्ल ज्यों प्रतिमल्ल मानत।
रुंड केक मलंगि जोधन जाल लोहित लाल मंडत।
के प्रमत्त स्वअंग घातक जानि अप्पन छिप्र छंडत॥३६॥
अच्छरीन बिमान के चढि स्वीय रूंड मलंग इक्खत।
सत्रु पैं चलि बेग केक कबंध अंधन धाव सिक्खत।
केक बंधन रत्त छुट्टत छिंछि जुग्गिनि पत्र झेलत।
के बि बाहुन व्यास कैं पर अप्प पास सु मीडि पेलत॥३७॥

कई योद्धा अपने फटे हुए पेट से अपनी आंतें खींच कर यों फैला रहे हैं जैसे जुलाहा अपना ताना-बाना तान रहा हो। कई योद्धा मल्लयुद्ध की रचना

कर दो-दो के जोड़े में भिड़ रहे हैं इनमें एक मल्ल दूसरे को पूरा शत्रु पक्ष मान रहा है मानों इस एक प्रतिद्वंद्वी को हराने से पूरी सेना को हरा देगा। कई कटे हुए रुंड वीरों को फाँदते हुए आगे जा कर रक्तरंजित जाल तान रहे हैं अथवा जाली उकेर रहे हैं जिससे वे अपना कटा हुआ अंग प्राप्त कर सकें। पर वे प्रमत्त वीर (रुंड) अपने ही अंग को प्रहार करने वाला मान कर तुरन्त ही हाथ में आए अंग को वापस छिटक (छोड़) रहे हैं। कई कटे हुए मुंड (मस्तक) अप्सराओं के विमान में चढ़ कर भी वापस अपने रुंड (धड़) से मिलने के लिए कूदने को उतावले हो रहे हैं। कई कबंध दौड़ कर शत्रु के पास यों पहुँच रहे हैं मानों वे अंधों की दौड़ का अभ्यास कर रहे हों। कई कबंधों से रक्त की लाल फुहारें छूट रही हैं जिन्हें योगिनियाँ (देवी की दासियां) पीने के लिए अपने कमण्डल में संचित कर रही हैं। कई कबंध अपने दोनों हाथ पसारे बढ़ रहे हैं जिससे उनके बाहुपाश में शत्रुपक्ष का कोई योद्धा आ जाए तो वे उन्हें मसल सके।

रुंड के गहि सुंडि हत्थिन सत्थि अच्छरि की गिनेरसि।
रूंड होत हि बत्थ के भरि डारि छेदत देत भू घसि।
केक पीवत रत्त जुग्गिनि गत्त मत्त दुलत्त मारत।
अच्छरी लहि केन लोंन रु राजिका अर ही उतारत॥३८॥
कीस ज्यों बट की जटा कति यों मतंगन अंत्र लुंबत।
माल डारत अच्छरी गहि गाढ के गल सोंहिं चुंबत।
के घनैं भटके थके इक ठोर ही नट के रचैं क्रम।
झेलि के झटके करैं बटके कबंध सु बीर विभ्रम॥३९॥

कई कटे हुए वीर कबंध हो कर आँख रहित होने से हाथियों की सूंड पकड़ कर सोच रहे हैं कि यह किसी अप्सरा की जंघा है। कई योद्धा इन रुंडों को अपनी बाँहों में भर कर जमीन पर डाल कर घिस रहे हैं जिससे निष्प्राण कबंध निष्क्रिय और निश्चेष्ट हो जाएँ। कई कबंध अपना रक्त पीती योगिनियों को प्रमत्त हो कर लातें मार रहे हैं। कई वीर योद्धाओं की मृत देहों पर अप्सराएँ जल्दी-जल्दी राई लूण (नमक और राई) उतार रही हैं। (लूंणराई उतारने के पीछे मान्यता यह है कि उसे किसी की नजर न लग जाए)। कई

घायल हाथियों के पेट से लटकती आंतों से यो लटकते हैं जैसे बन्दर वट वृक्ष की जड़ों (तन्तुओं) से लटकते हैं। कई कटे हुए वीरों के कबन्ध जिन्हें अप्सराएँ वरने के लिए गलमालाएँ डालती हैं वे मस्तकहीन होने से अपने गले ही से उनका चुंबन ले रहे हैं। कई वीरों के कबंध थक कर एक ठौर ही खड़े नट की तरह हाथ पाँव चला रहे हैं आश्चर्य है कि कई रुंड अपने हाथ की तलवार से शत्रुओं के टुकड़े कर रहे हैं।

जानि जुग्गिनि अच्छरी कति बांह लों गलबांह डारत।
रुंड दै कति फेट सादिन कों निसादन कों उतारत।
केन पैं हयखंध कट्टि लगैं बनैं हयग्रीव डंकत।
सूर कातर सुद्धि नां मिलिगो सु मारि हडड्डु हंकत॥४०॥
अंघ्रि हत्थ बिहीन बाहन सर्प लों कति रुंड लुट्टहिं।
पंचधा जिन्ह पिंड तैं छलि रत्त छिंछि छुलक्कि छुट्टहिं।
केन के बर माल्य डारत सीस कट्टि समाल्य जावत।
घुम्मि छेदक कों सिराहत ज्यों न अच्छरि जी सुहावत॥४१॥

कई योद्धाओं के मस्तक कट जाने पर उनके धड़ अप्सराओं के भ्रम में रणक्षेत्र में भटकती योगिनियों के गले में अपनी बाँहें डाल रहे हैं। कोई-कोई कबन्ध अपने कन्धों से टक्कर दे कर हाथी-घोड़ों के सवारों को नीचे पटक रहे हैं। कहीं-कहीं घोड़ों के कटे गले कबंधों पर लग कर हयग्रीवावतार बन कर कूद रहे हैं। कुछ कबंध कायर और वीरों की जानकारी से रहित जो मिले उसे टक्कर मार कर धकेल रहे हैं। कई वीर योद्धा युद्ध में अपने हाथ-पाँव खो कर बिना किसी वाहन के सर्प की तरह रणभूमि में सरक रहे हैं जिनके कटे शरीरों से रक्त के फव्वारे पाँचों ही दिशाओं (चार दिशाएँ और पाँचवीं आकाश दिशा) में पिचकारियों की तरह छूट रहे हैं। कई वीरों को वरने के लिए अप्सराएँ उनके गले में माला डालती है कि तभी माला सहित उनके सिर कट पड़ते हैं। ऐसे वीर जब मुंड़ कर अपने प्रहारक को सराहना की दृष्टि से देखते हैं तो उनका इस प्रकार देखना अप्सराओं के जी को नहीं सुहाता है।

चित्रजुद्ध कबंध यों बिरचैं अनेक स्वकित्ति चाहत।
सूत मागध बंदि दै विरुदावली तिनकों सिराहत।

है उडाइ रु कुद्दि के अरि हत्थि होदन मैं प्रहारत।
सस्त्र तुट्टत केक पानिन पान कै गजदंत पारत॥४२॥
के गदा फटकारि हत्थन भद्रहत्थिन मत्थ फोरत।
बुट्ठि मुत्तिन की झरैं करका कि बारिद स्याम छोरत।
बीर बत्थन के मिलैं पल पिंड पैं कि बिरोध बग्घन।
अप्प सोनित अंजली भरि केक अक्कहिं देत अग्घन॥४३॥

कई वीरों के कबंध विचित्र युद्ध इसलिए रच रहे हैं कि वे अपनी कीर्ति चाहते हैं क्योंकि कबंध होने पर ऐसा विचित्र युद्ध करने वालों को वीरता के विरुद के साथ चारण, भाट और बंदीजन प्राय: बखानते हैं अर्थात् यह सोच कर वे कबंध चित्र-विचित्र युद्ध करतब कर रहे हैं कि उनकी भी सराहना होती रहेगी। कई वीर योद्धा अपने घोड़े को उड़ा कर हाथियों की ऊँचाई तक ले जाते हैं जिससे वे हाथी के होदों में बैठे योद्धाओं पर झुक कर अपनी तलवार का प्रहार कर सके। कई वीर अपने शस्त्रों के टूट जाने पर अपने हाथों के बल से मरे हाथियों के दाँत उखाड़ रहे हैं जिनसे शस्त्र का काम ले सकें। कई वीर अपनी गदा के प्रहार से भद्रजाति के हाथियों का मस्तक विदीर्ण करते हैं जिससे फटे हुए हाथियों के सिरों से गज मोतियों की यों वर्षा हो रही है मानों काले मेघों से सफेद रंग के ओले बरस रहे हों। कई वीर योद्धा आपस में यों लत्थोबत्थ हैं जैसे दो बाघ किसी एक मांस पिंड के लिए लड़ रहे हों। कई वीर अपने हाथों स्वयं के लहू से अंजुरी भर कर सूर्य को अर्घ्य दे रहे हैं।

केक कुंतन पार कैं असवार बारनवार ढारत।
जानि कोपित इंद्र के पविपात अद्रिन कूट पारत।
अस्वार विहीन बाजिन खीन के जरजीन खुल्लत।
बाय ज्यों नयपाय केन विहंड कायन घाय बुल्लत॥४४॥
के चमू चहुवान की बिच पैठि चालुक पार पावत।
यों प्रहारत खग्ग छक्कत ओ छकावत बार आवत।
सूर संभर के भिरैं इम पैठि कैं अरि ओघ अंदर।
मंथकाल असज्ज अैंचित ज्यों पयोनिधि मज्झ मंदर॥४५॥

कई वीर योद्धा अपने भाले का प्रहार कर शत्रु पक्ष के हाथी घोड़ों पर सवार योद्धाओं को बींधकर उन्हें ऐसे गिरा रहे हैं मानों कुपित इन्द्र अपने वज्र के प्रहार से पर्वतों के शिखर गिरा रहा हो। कुछ लोग सवारविहीन घोड़ों के कटे हुए जरी के जीण (काठी) खोल रहे हैं। कई योद्धाओं के लगे गहरे घावों से हड्डियाँ यों बोलती हैं जैसे ताने-बाने में कट-कट की आवाज के साथ सटकनली (आड़ा धाका डालने के लिए चलने वाली धागेदार नली) बोलती हो। इधर चहुवान की सेना के झुण्ड के भीतर से इसी नली की तरह चालुक्यराज के योद्धा आ जा रहे हों। वे घनघोर रूप से तलवार चलाते हुए शत्रुओं को घाव देते और स्वयं खाते हुए सेना के मध्य हो कर उस पार पहुँच रहे हैं। इसी तरह चहुवान सेना के वीर भी निःशंक हो कर चालुक्य सेना के भीतर जा कर असह्य वार करते यों भिड़ रहे हैं मानों समुद्रमंथन के समय मथानी बना मन्दराचल पर्वत असह्य घर्षण कर रहा हो।

बीथिका पुर ज्यों परैं दलपंथ के कमनैत बानन।
पार बुल्लत के कढैं जिम सोक तित्तिर पैं सिचानन।
खेत खुल्लत सुंडि के गहि मन्नि गोमुख प्रेत फुंकत।
नच्च गावन रासमैं चउसट्ठि बावन हास हुँक्कत॥४६॥
केक बीरन् अंत्र की बरमाल मंडि रु अच्छरी सन।
मैं बर्यो अब ओर ढुंढत क्यों कहैं रु गही चहैं मन।
के पिसाच स्वसीस दै गजसीस ईस कृपा उमंगहिं।
योंहि के गिरिजा गरैं लगि त्रस्त ह्वै तजि जात अंगहिं॥४७॥

किसी नगर में जिस प्रकार की सरणियाँ और पतली-पतली गलियाँ होती हैं वैसी ही गलियाँ वीर अपने बाणों के प्रहार से शत्रु सेना में बना रहे हैं। उनके तीर शत्रु योद्धाओं के शरीरों को बींधते हुए ऐसी आवाज कर रहे हैं जैसी आवाज बाज पक्षी के तीतर पक्षियों पर झपटते वक्त आती हैं। रणभूमि में हाथियों की कटी हुई सूंडों को प्रेतगण गोमुख वाद्ययंत्र मान कर उन्हें फूंक मार-मार बजाने का असफल प्रयत्न कर रहे हैं। रणांगण में प्रसन्न हो कर मस्त चौंसठ योगिनियों और बावन भैरवों ने रास मांडी है। वे हँसी और हुंकार के साथ नाच-गा रहे हैं। कई वीर अपनी आंतों को गले में पहन कर

अप्सराओं से मजाक कर रहे हैं कि देखो! मैं तो पहले से ही वर लिया गया हूँ तुम किसी और को ढूँढ़ो। वह कहने को तो यह कह रहा है पर मन से उसी अप्सरा को ग्रहण करना चाहता है। कई पिशाच अपना मस्तक काट कर उसकी ठौर रणभूमि में कटे हाथी का सिर यह सोच कर लगा रहे हैं कि अब उन्हें इस नये गणेश रूप में महादेव की कृपा अधिक मिलेगी। वे इसी रूप में पार्वती के गले से लगते हैं पर तुरन्त ही भयभीत हो कर भवानी को छोड़ देते हैं।

भूत के दुव दूतव्है भट द्वै इतैं रु उतैं भिरावहिं।
गूद चक्खत पुष्ट के द्रुत दोरि दुर्बल के गिरावहिं।
केक लोहित पान सों तजि भान मर्कट मान कुद्दहिं।
मन्नि आवत कालिका कृत छद्म के नत नैंन मुंद्दहिं ॥४८॥
केक भैरव जुग्गिनी भट अच्छरीन हसात नाटक।
भार के पल के बहैं भनि अद्ध याबिच देहु भाटक।
बाजिहीन कितेक बीरन के स्वपिट्ठि चढाइ है बनि।
गै बिहीन किते निसादिन त्यों चढाई विनीत गै बनि ॥४९॥

रणभूमि में कई भूत अपने दो स्वरूप कर दूत हो दोनों पक्षों के वीरों को आपस में भिड़ा रहे हैं। युद्धभूमि में मरे किसी हृष्ट-पुष्ट वीर की मज्जा खा कर पुष्ट हो दुर्बलों को गिरा रहे हैं। कई प्रेत रक्तपान से बेभान हो कर बन्दरों की तरह उछल-कूद करने लगे हैं और कभी कालिका को आती देख अपने नेत्रों को नीचा कर बन्द कर लेते हैं। कई भैरव, और योगिनियाँ नाटक रच कर वहाँ उपस्थित वीरों और अप्सराओं को हँसा रहे हैं। युद्धभूमि से कई भूत मांस की गठरियाँ उठाए जा रहे हैं और अधिक भार जान कर दूसरे भूत उनसे कह रहे हैं कि थोड़ा हमें दे दो। हम यह भार भाड़े पर उठाने को तैयार हैं। कई भूत घोड़ाविहीन सवारों का घोड़ा बन कर उन्हें अपनी पीठ पर बिठा रहे हैं। इसी तरह हाथी विहीन सवारों के लिए शिक्षा पाए हुए हाथी बन कर उन्हें अपने पर आरूढ़ कर रहे हैं।

पैठि कैं अवमर्द मैं तिन्ह प्रान पिंड प्रभिन्न पाचत।
बेस स्वीय बनाई लोहित आद्य पंच हि खाद्य खावत।

च्यारि जाम रचक्कलै दुव चक्क अक्कहिँ सिक्ख अप्पिय।

हेरि घायल पाइ डेरन लाइ स्वस्व मिलान थप्पिय॥५०॥

उस भयंकर पीड़ादायक संग्राम भूमि में घुस कर भेष बदले हुए भूत आगे कई वीरों के प्राण और पिंड विदीर्ण हुए देखते हैं पर भूख लगने पर अपने निज रूप में आ कर रक्त आदि पाँच प्रकार की खाद्य सामग्री को खा रहे हैं। चार प्रहर की जोरदार भिड़ंत ले कर दोनों पक्ष वाली सेनाओं ने सूर्य को सीख दी (विदा किया) अर्थात् इस भयंकर संग्राम को देखने आकाश में सूर्य ठहरा हुआ था उसे दोनों पक्षों ने विदा किया। सांझ पड़ जाने पर सूर्य के अस्त होते समय दोनों पक्षों ने रणभूमि से अपने-अपने घायलों को ढूँढ़ा और मिलने पर उनका उपचार करने के लिए उन्हें अपने-अपने डेरे (शिविर) में लाए। युद्ध बंद हुआ तो सारे वीरों ने अपने शिविरों में विश्राम किया।

दोहा

इम रन दिन छट्ठे अवधि, भो द्वै दिस जस भाइ।

सप्तम दिन संभरकुमर, जित्त्यो गोभिल जाई॥५१॥

कुंजरमनि जो श्रीकलस, कुलिसकूट करवाल।

दंड दम्म दुवकोटि लहि, पुनि हुव अरिन कृपाल॥५२॥

गोभिलराजहु गेह निज, अतुल कुमार हिं आनि।

पंच दिवस रक्ख्यो प्रनमि, मंडि बिबिध महिमानि॥५३॥

गोभिल हित गुज्जरधरा, दै कुमार खिलदेस।

थानां अप्पन थप्पिकैं, अग्ग बढ्यो द्रुत एस॥५४॥

इस भीषण संग्राम के चलते छह दिन पूरे हो गए और इन दिनों में दोनों पक्षों के वीर योद्धाओं ने वीरता से लड़ कर यश अर्जित किया पर सातवें दिन चहुवान कुमार अस्थिपाल ने चालुक्य गोभिलराज पर विजय पाई। हाथियों में मणि रूप श्रीकलश नामक हाथी और कुलिशकूट नामक तलवार के साथ दो करोड़ रुपयों की दण्ड राशि ले कर चहुवान कुमार अस्थिपाल अपने शत्रु पर प्रसन्न हुआ। कृपा कर पाँच दिन तक अतुलनीय महिमावान कुमार आदर के साथ मँहगे मेहमान की तरह उसके घर रहा और छठे दिन गोभिलराज को गुजरात की भूमि सहित कुमार ने उसे अपना राज्य

वापस सौंपा। वहाँ अपना थाना स्थापित कर कुमार आगे बढ़ा।

अधिप देस आनर्त के, लरि जित्ति रु पय लाइ।
कुमर बढ्यो इम लेत कर, नीरधितट नियराइ॥५५॥
मंकुवान पुर मोरवी, पठये जब गोपाल।
दै कर पय लग्गे दरित, कुमरहिं मन्नत काल॥५६॥
पुब्बहि जनु निज पौत्रहित परिचारक पठवाइ।
सुत सुतको सतकार सब, दिन्नों सबिधि सधाई॥५७॥
कुमरहिं झल्ल कुबेरहु, नमि लायउ निज गेह।
दायज सर्ब समेत दिय, निज तनया करि नेह॥५८॥
कन्या भूप कुबेर की, उमा नाम जस आहि।
ललित मंकुवानी लई, कुमरानी बिधि व्याहि॥५९॥

चहुवान कुमार अस्थिपाल वहाँ से आगे गया। उसने वहाँ आनर्त देश को जीत कर वहाँ के राजा को समर्पण के लिए मजबूर किया। इस प्रकार देश जीतते हुए कुमार ने समुद्र का किनारा समोप लिया। वहाँ से आगे बढ़ते हुए चहुवान कुमार ने मोरवी नगर के झाला के पास अपने वीर गोपाल को भेजा तो वहाँ का शासक डर कर कुमार के चरणों में आ गिरा और उसने खिराज दे कर साक्षात काल स्वरूप कुमार को किसी प्रकार टाला। अपने पोते को अग्रिम रूप से सेवक रूप में भेजा तब कुमार ने दोनों का सर्वविधि से सत्कार किया। कुमार को झाला कुबेर बाअदब अपने घर लाया। राजा कुबेर ने सारे दहेज के साथ अपनी पुत्री स्नेह के साथ उसे दी। राजा कुबेर झाला की पुत्री जो उमा नाम से विख्यात थी उस सुन्दर झाला कन्या को पूरे विधि-विधान के साथ कुमार ने अपनी कुंवरानी बनाया।

जकन बैर पर जुद्ध की, बेरहु झल्ल कुबेर।
समय सोधि दिन्नी सुता, सुगुन सुरूप सुबेर॥६०॥
उमाभक्त दयिता उमा, इम लाहकैं बढि अग्ग।
भुज नृप जद्दव भीम कों, जित्त्यो असह उदग्ग॥६१॥

जोजन चउ भुजनैर सय, मंदिर मंजु बनाइ।
आसापूरनि अंबिका, प्रतिमा दिय पधराइ॥६२॥
भाखी जद्दव भीम सों, मम कुलदेवी मानि।
सद्धहु तुम अर्चन सदा, उपहारन यंहं आनि॥६३॥
देवीपूजन को द्रुतहि, इम प्रबंध करि अप्प।
चल्लिय भेट चढाई बहु, दलत अरातिन दप्प॥६४॥

यों तो कुबेर झाला के लिए यह अपने पिता का बैर लेने का समय था पर उसने नाजुक समय देख कर अपनी सुन्दर, गुणवान कन्या देने में ही अपना हित समझा। पार्वती की प्यारी भक्त, राजा की पुत्री, उमा से विवाह कर कुमार अस्थिपाल आगे बढ़ा। उसने आगे भुज के यादव वंशीय राजा भीम को जीता। इस विजय की खुशी में कुमार अस्थिपाल ने भुज नगर से चार योजन की दूरी पर एक भव्य और सुन्दर मंदिर बनवाया फिर इस मंदिर में अपनी इष्ट देवी आशापूर्णा की सुन्दर प्रतिमा की प्रतिष्ठा की। इसके बाद यादव राजा से कहा कि हे राजा भीम! यह मेरी कुलदेवी है। इसकी पूजा अर्चना की आप अच्छी व्यवस्था करना। कुछ भेंट उपहार की सामग्री मैं उपलब्ध करवा रहा हूँ। अपनी कुल देवी आशापूर्णा की पूजा-अर्चना की पूरी व्यवस्था हो जाने के बाद कुमार ने कई शत्रुओं का दर्प चूर किया।

षट्पात्

क्रमि समुद्रतट कुमर परसि प्रभु द्वारकेस पय।
न्हान दान सब सद्धि भेट लक्खन किय निर्भय।
तंहं सुनि देवी हिंगुलाज निकटहि जगरानिय।
अंबा भक्ति अनन्य मन्नि हंकिय तित मानिय।
कहि मिच्छदेस बरज्यो कतिन कहिय तदपि चल्लन कुमर।
जननी निकेत राजत जहाँ बदहु देस सुहि तित्थबर॥६५॥

इस क्रम में चहुवान कुमार ने समुद्र तट तक जा कर द्वारिका प्रभु के दर्शन कर चरण स्पर्श किए। स्नान कर इस अवसर पर उचित दान-दक्षिणा दे कर लाखों रुपयों की वहाँ भेंट चढ़ाई। वहीं कुमार को यह पता चला कि

पास ही में हिंगलाज देवी का स्थान है। देवी शक्ति को अनन्य मानने वाले कुमार ने वहाँ जाने का कार्यक्रम बनाया। यहाँ से आगे बढ़ने के कुमार के प्रस्ताव को कुछ लोगों ने यह कह कर निलम्बित करवाने का प्रयास किया कि आगे म्लेच्छ देश है वहाँ जाना मना है पर कुमार ने उनकी दलील को नहीं माना। कुमार ने कहा जहाँ देवी का निवास स्थल है वहाँ तो तीर्थ हुआ और इसलिए पवित्र देश हुआ।

चढि पोतन इम अक्खि पत्त खड्डियतट पच्छिम।
किय अग्गहु दरकुंच अतुल पृतना उपेत इम।
जवन खलन मग जित्ति कतिन अंकन अंकित करि।
हिंगुलाज गय हुलसि भेट उपहार घनें भरि।
पय पुज्जि जननि अग्गें प्रनमि कनक लक्ख तंहं भेट किय।
कति कहत मिलिय कुमरहिं सकति कतिन तत्थ न मिलिय कहिय॥

चहुवान कुमार अपने सेवकों सहित वहाँ से जलपोत में सवार हुआ और पश्चिम में खाड़ी के तट पर पहुँचा। वहाँ से आगे कुमार ने अपनी सेना सहित प्रस्थान किया। दर कूच दर मंजिल बढ़ते हुए रास्ते में पड़ने वाले कई यवनों को जीता और उन पर अहसान किए। ऐसा करता हुए कुमार कई भेंट उपहार ले कर हुलसता हुआ हिंगुलाज तीर्थ पर पहुँचा। चहुवान कुमार अस्थिपाल ने वहाँ हिंगलाज देवी के चरणों की पूजा संपन्न कर एक लाख स्वर्ण मुद्राओं का चढ़ावा चढ़ाया। कुछ लोग कहते हैं कि कुमार को वहाँ शक्ति (देवी) मिली कुछ कहते हैं कि देवी उन्हें वहाँ नहीं मिली थी।

दोहा

आसापूरनि देबि को, तत्थहु निलय बनाइ।
प्रतिमा इक तंहं थप्पि पुनि, मिच्छन जय मनलाइ॥६७॥
अरब आदि ढिग जानि यह, उमग्यो जित्तन अग्ग।
भट सचिवन तब असुचि भनि, मोरयो पुनि प्रतिमग्ग॥६८॥

आशापूर्णा देवी का एक मंदिर कुमार ने वहाँ बनवाया और उसमें आशापूर्णा देवी की मूर्ति की प्रतिष्ठा कर मन में म्लेच्छों पर विजय पाने का सोचा। वहाँ से आगे अरब देश जान कर कुमार का मन उमगा कि उसे जा कर

जीता जाए पर साथ के सेवकों और मंत्रियों ने उस देश को अपवित्र बताया। फिर अच्छी तरह समझा कर कुमार को अपने देश लौटने वाला मार्ग पकड़ाया।

युग्मम्

तिम प्रतिप्रस्थित आइ तरि, जब खड्डिय प्लव जोर।
पुज्जि सबिधि रनछोर पय, किय मन उत्तर ओर॥६९॥

चहुवान कुमार अपने सेवकों सहित वापस लौटने वाले मार्ग से आ कर समुद्र तट पर पहुँचा। वहाँ से नावों द्वारा अपने देश रवाना हुआ। द्वारिका पहुँचकर कुमार ने फिर से रणछोड़ राय की विधि-विधान सहित पूजा की। इसके बाद उत्तर दिशा में प्रयाण करने का मन बनाया।

षट्पात्

चल्लिय उत्तर ओर अनखि संभरकुमार इम।
सोरठ्ठ रु मरु सिंधु जित्ति नत किय पहिलैं जिम।
बहुदेसन बलि दब्बि लेत कर भृत्य लिखावत।
क्रम लंघत कसमीर सबन अक्खिय सकुचावत।
अब है समीप सरिता अटक करतोया जाकों कहत।
तिहिं लंघि ब्रात्यव्है अज्ज तिम मरजाद न लोप्पहु महत॥७०॥

द्वारिका से उत्तर दिशा की ओर बढ़ते हुए कुपित कुमार ने सौराष्ट्र, मारवाड़ और सिंध देश को जीत कर वहाँ के शासकों को झुकाया। इस तरह कई देशों (राज्यों) को दबाते हुए कुमार ने उनसे 'हम आपके सेवक हैं' ऐसा लिखवा कर लिया। इस जीत की शृंखला में जब कुमार काश्मीर तक पहुँचा तो उससे आगे जाने के लिए लोगों ने निवेदन किया कि हे कुमार! यहाँ से एक वह नदी करीब है जिसे अटक नदी कहा जाता है और पूर्वजों की बाँधी हुई मर्यादा यह है कि इस नदी को नहीं पार किया जाए क्योंकि इसे लाँघने वाले संस्कारहीन हो जाते हैं। इसलिए यहाँ से वापस लौट जाने का निवेदन है।

दोहा

मुरि यह सुनि ज्वालामुखिय, आय बिरचि उपहार।
किय अर्चन निगमोक्त क्रम, पुनि किय अग्र प्रचार॥७१॥

चहुवान कुमार सयाने लोगों की यह बात मान कर लौटने को मुड़ा।

वहीं से लौटते हुए कुमार ने ज्वालामुखी देवी के स्थान पर जा कर भेंट चढ़ावा चढ़ा कर पूजा अर्चना की और वह भी पूरे विधि-विधान के साथ । इसके बाद कुमार आगे बढ़ा।

षट्पात्

पुनिकरि अग्ग प्रचार मंडि जय कुमर महाबल।
तीरथ गंगाद्वार आय किय कृत्य अशृंखल।
सुनि यह तोमर सेनपाल दिल्लीस उदंतहि।
बुल्लन पठयो सचिव दैन अप्पन दुहिता चहि।
सुनि कुमर स्वीय पुच्छिय सबन अक्खिय यह उपयम उचित।
सुहि मन्नि आइ दिल्लिय सहर हुव दुल्लह लहि अखिलहित।।७२।।

यहाँ से आगे बढ़ते हुए महाबली चहुवान कुमार अस्थिपाल फिर से रास्ते में पड़ने वाले देशों को जीतता हुआ हरिद्वार पहुँचा। वहाँ पहुँच कर परम्परा के कथनानुसार कुमार ने स्नान दान किया। कुमार के इस प्रकार लौटने के समाचार जब दिल्ली के तंवर राजा सेनपाल ने सुना तो उसने अग्रिम रूप से अपने सचिव को भेज कर कहलवाया कि आप मेरी पुत्री को स्वीकार करें। यह सुन कर कुमार ने अपने मंत्री और उमरावों से पूछा कि क्या यह विवाह करना उचित रहेगा? अपने आदमियों के हाँ कहने पर कुमार दिल्ली में दोनों पक्षों का हित सोच कर दूल्हा बना।

दोहा

मंजु सुता मदनावती, सेनपाल नृप स्वीय।
कुमर हिं व्याहिय रीतिक्रम, गिनि कुल तेज गरीय।।७३।।

दिल्ली के तंवरवंशीय राजा सेनपाल की सुन्दर पुत्री मदनावती नामक थी। कुमार अस्थिपाल ने उसके कुल को कुलीन गिन कर उससे विवाह संपन्न किया।

षट्पात्

स्वसुर हिंतु लै सिक्ख प्रांत उत्तर जित्तत पहु।
मिथिला लग जवमंडि पत्त बलि लेत बढ्ढि बहु।

दक्खिन पूरब दिसन जत्थतत्थहि जय जानिय।
इम सम्मुह उपहार नृपन मुक्कलि हित ठानिय।
संभरकुमार तब जय सहित कुमरानी दुव ब्याह करि।
आसेरदुग्ग आइउ असह प्रनमि तात पयकंज परि॥७४॥

अपने श्वसुर दिल्ली के राजा से विदा ले कर कुमार उत्तर के प्रांत जीतते हुए आगे बढ़ा। वह जनकपुर तथा तिरहुत देश तक पूरे वेग से पहुँचा। पूर्व और दक्षिण दिशा में भी जहाँ तहाँ कुमार की विजय के समाचार पहुँचे तो वहाँ के राजा खिराज और नजराना ले कर कुमार की सेवा में आए। कुछ ने उपहार भेजे। इस प्रकार चहुवान कुमार अस्थिपाल विजयश्री के साथ दो-दो कुंवरानियों को ब्याह कर साथ लाया और आसेरगढ़ आ कर उसने अपने पिता के चरणकमलों में प्रणाम निवेदन किया।

दोहा

संभर मिलत सुपुत्र सों, लेत छाइ हिय लाइ।
मह निजपुर किन्नों महत, अद्भुत बिबिध बढाई॥७५॥
पुनि कुलदेवी पय परन, पब्बइ आलय पत्त।
सूरा तंहं भगिनी सतत, पिक्खी पूजन रत्त॥७६॥
भ्राता भगिनी मिलि भये, मोद पयोनिधि मीन।
किय अंबा को सद्धि क्रम, अर्चन भक्ति अधीन॥७७॥
कुलिसकूट अरु श्रीकलस, किय नृप भेट कुमार।
संभर अक्खिय सुंघि सिर, बिलसहु तुमहि बहार॥७८॥
करि आसा जय इम कुमर, अस्थिपाल गृह आइ।
भौम चंद्र नृप चित्त मैं, मोद न तास समाइ॥७९॥

अपने ऐसे सपूत पुत्र को चहुवान राजा ने अपनी छाती से लगाया फिर एक बड़ा उत्सव मनाने की आज्ञा दी। जिसके फलस्वरूप पूरे नगर में हर्ष के साथ उत्सव मनाया गया। इसके बाद अपनी कुल देवी के चरणों में धोक देने को कुमार पार्वती के मंदिर में गया। वहाँ कुमार ने अपनी बहिन सूरा को पूरी देवी भक्ति में लीन देखा। वह निरन्तर देवी की आराधना में संलग्न थी। भाई

और बहिन दोनों मिल कर मोद रूपी समुद्र के मच्छ बन गए फिर दोनों ने मिल कर देवी की पूजा-अर्चना कर देवी भक्ति में अपने को लगाया। कुमार ने चालुक्यराज से प्राप्त कुलिशकूट नामक तलवार और श्रीकलश नामक हाथी अपने पिता राजा को भेंट किया तब चहुवान राजा ने अपने वीर पुत्र का सिर सूंघ कर अपनी प्रीति का प्रदर्शन किया। इस प्रकार अपनी आशा के अनुरूप दिग्विजय कर कुमार अस्थिपाल अपने घर आया।

इतिश्री बंशभास्करे महाचम्पूके पूर्वायणे चतुर्थ राशौ वीतिहोत्र-चण्डासिबंशबर्णने विजितपश्चिमदिक्कुमाराऽस्थिपाल गौर्ज्जरचालुक्य-गोभिलराजमानमर्दन तदीयदण्डद्रम्मकोटिद्वय सहित गजरत्नश्रीकलश खड्गरत्नकुलिशकूटा ऽऽदान दत्ततद्देशजितानर्तकुमारमौरवीशमंकुवाण-कुबेरपुत्रि कोमा परिणायन तदनन्तरभुजपत्तनभूपयादवभीमदमन तत्पुरप्रान्तकुलदेव्याशापूरणीमन्दिरनिर्माण कृतद्वारकाधीशार्चनतीर्णा-र्णवांशप्राप्तप्रत्यंतकुमारहिंगुलाजाख्यदेवी समर्चन तन्मन्दिर समीप निर्मित नवमन्दिर स्वकुलदेवी प्रतिमाप्रतिष्टापन स्वपरिकर-प्रत्यन्तजिगीषु-कुमारप्रत्यानयन पुनः पूजितद्वारकेशजितसौराष्ट्र मरु सिन्धु क्रमप्राप्तना-नाजनपदलंघितकाश्मीरज्ञातानुचितसदानीरोल्लंघतप्रतिप्रस्थितकुमार-भानुराज ज्वालादेवीदर्शन कृततदर्चनप्राप्तगंगाद्वारकुमारदिल्लीशतोमर-सेनपालस्वगृहाकारण परिणीततत्तोकतोमरीमदनावती कविजितोदक-प्रान्तमिथिलागतकुमारार्थप्राच्या ऽऽवाच्य नृपगणोपदाप्रेषण तदनन्तर-प्राप्तस्वपत्तनवन्दितजनकसमर्चितकुलदेवीकभगिनीशूरा शक्तिसमाराधन-हृष्टुभानुराज गज खड्ग रत्नजनकार्थनिवेदन सुतचतु र्दिग्जयप्रकटित-प्रमदभौमचन्द्र रत्नद्वय कुमारार्थप्रत्यर्पणं त्रयोविंशो मयूखः ॥२३॥ आदितो द्वात्रिंशदुत्त-रशततमः ॥१३२॥

श्री वंशभास्कर महाचम्पू के पूर्वायण की चतुर्थ राशि में अग्निवंशी चहुवान वंशवर्णन में पश्चिम दिशा को जीत कर कुमार अस्थिपाल द्वारा गुजरात देश के सोलंकी गोभिलराज का मान मर्दन किया जाना, उससे दो करोड़ रुपयों सहित हाथियों में रत्न श्रीकलश और खड्गों में रत्न कुलिशकूट का लेना, उस का देश वापस देकर कुमार का काठियावाड़ देश को जीतना, मोरवी के पति झाला कुबेर की पुत्री उमा को ब्याहना, इसके बाद भुज नगर

के राजा यादव भीम को दण्ड देना, उसके पुर के समीप कुलदेवी आशापूर्णा का मन्दिर बनाना, द्वारकाधीश का पूजन करके समुद्र के अंश (खाडी) का उतरना, कुमार का म्लेच्छ देश में जाकर हिंगलाज नामक देवी का पूजन करना, उसके मंदिर के समीप नवीन मंदिर बनाकर अपनी कुलदेवी की मूर्ति की प्रतिष्ठा करना, अपनी परिगह से म्लेच्छ देश को जीतने की इच्छा करने वाले कुमार का वापस आना, फिर द्वारकेश की पूजा करके सौराष्ट्र मरु, सिन्धु में क्रम से प्राप्त होकर अनेक देशों को लाँघकर काश्मीर में जाते हुए अटक नदी का उल्लंघन करना अनुचित जानकर कुमार भानुराज (अस्थिपाल) का वापस आ कर ज्वालामुखी देवी का दर्शन करना, उसका पूजन करके कुमार का गङ्गाद्वार जाना. दिल्ली के राजा सेनपाल का कुमार को अपने घर बुलाना, उसके घर में तोमर मदनावती को विवाह कर उत्तर दिशा को जीतकर मिथिला प्रान्त में गये हुए कुमार के लिए पूर्व और दक्षिण के राजाओं का नजराना भेजना, इसके बाद अपने पुर में आकर अपने पिता को प्रणाम कर कुलदेवी की पूजा करके शूरा नामक बहिन को देवी की पूजा करने से भानुराज का प्रसन्न होकर हाथी और खड्ग रूपी रत्न पिता के अर्थ भेंट करना, चारों दिशा की विजय सुनकर आनन्द प्रकट कर भौमचन्द्र का दोनों रत्न कुमार को देने का तेईसवाँ मयूख समाप्त हुआ। और आदि से एक सौ बत्तीस मयूख हुए।

प्रायो ब्रजदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

दोहा

भौमचन्द्र बय चरम भजि, किय परलोक प्रयान।
जरि विद्यावति अरु जया, थिर पत्ती पतिथान॥१॥
अस्थिपाल धरि छत्र इम, हुव आसेर अधीस।
बसुधाबिच जो बरबिभव, सब भुग्गिय सबसीस॥२॥

आसेरगढ़ के नृपति चहुवान भौमचन्द्र ने अच्छी वय पा कर परोलक गमन किया। राजा की मृत्यु पर उसकी रानियाँ विद्यावती और जया दोनों पतिव्रत धर्म से अपने पति के स्थिरधाम अर्थात् स्वर्गलोक तक साथ निभाते हुए वहाँ साथ पहुँची। राजा के स्वर्गवास के बाद उनका श्रेष्ठ उत्तराधिकारी

कुमार अस्थिपाल आसेरगढ़ का राजा बना। उस छत्रधारी ने पृथ्वी पर उपलब्ध सारे सुन्दर भोगों को भोगा।

गोदा के उपकंठ इक, अस्थिपालपुर नाम।
करि अंकित निजनाम करि, रच्यो नगर अभिराम॥३॥

राजा अस्थिपाल ने एक नगर जो उसके नाम से जाना जाए ऐसा गोदावरी नदी के तट पर बनवाया। इस सुन्दर नगर का नाम अस्थिपालपुर रखा।

सचरणगद्यम

याही समय मेवार मैं चित्रकूट को अधीस शीर्षोद्ध गुहिल्लपुर नरबाहन को तनूज राउल उत्तमदेव जाकों अंबाप्रसाद तथा कीर्तिब्रह्म हू कहैं सोहू विख्यात भयो।

सब तीर्थन समेत च्यारि ही धाम करि कबहू जुद्ध सों न डिगनों अैसो जानैं पन लयो। इतकों आसेर के अधीस चंडासिराज अस्थिपाल सों रानीमदनावती मैं राजकुमार पृथ्वीपाल नें जन्मपायो।

सोही धारपाल सोही चंडकिरन सोही चन्द्रराज इन च्यारि ही नामन करि बिख्यात कहायो॥४॥

इसी समय में मेवाड़ देश में चित्तौड़गढ़ का राजा सिसोदिया गुहिलोत नरवाहन का पुत्र रावल उत्तमदेव जिसे अन्य नामों से लोग अंबाप्रसाद और कीर्तिब्रह्म भी कहते थे बहुत प्रसिद्ध हुआ। सारे तीर्थ स्थानों की यात्रा सहित चारों धामों के दर्शन कर उसने युद्ध में कभी विमुख नहीं होने का प्रण लिया। इधर आसेरगढ़ का राजा चहुवानराज अस्थिपाल था उसके रानी मदनावती की कोख से कुमार पृथ्वीपाल ने जन्म लिया। इस पृथ्वीपाल के अवर नाम धारपाल, चंडकिरन, चन्द्रराज थे। यह कुमार अपने चारों ही नामों से प्रसिद्ध हुआ।

दोहा

पाइ जरा पत्तो नृपत्ति, भानुराज सुरभोन।
उभय उमा मदनावती, सद्धि गई सहगोन॥५॥
पृथ्वीपाल हु सर्ब पढि, जनक छत्र धरि जत्थ।
प्रतपि दुग्ग आसेर पहु, सो हुव सबन समत्थ॥६॥

उत्तम राउल की यहै, तनया रंभा नाम।
परन्यों गढचित्तोर नृप, अंहति रचि उद्दाम॥७॥

लंबी उम्र पा कर राजा भानुराज (अस्थिपाल) स्वर्गलोक को गया तो उसकी दोनों रानियों उमा और मदनावती ने अपने पति के साथ सहगमन किया अर्थात् सती हुई। इधर कुमार पृथ्वीपाल सारी शिक्षा प्राप्त कर अपने पिता के छत्र का उत्तराधिकारी हुआ। यह सर्व समर्थ प्रतापी राजा पृथ्वीपाल आसेरगढ़ का स्वामी बना। इस चहुवान राजा ने चित्तौड़गढ़ के रावल उत्तमदेव की पुत्री रंभा से विधि-विधान पूर्वक विवाह किया। विवाह के अवसर पर उचित दान दे कर इस उद्दाम राजा ने कीर्ति पाई।

सचरणगद्यम्

इतकों चंडासिराज पृथ्वीपाल के सालक चित्रकूट के अधीस उत्तम के अंगज राउल भैरवदेव जाकों दूजे तीजे नाम करि नरब्रह्म तथा निर्भय हू कहैं तानैं मालव के प्रामारन कों जीति समरसिंह सों मंडू अरु मुंज सों दसपुर द्वै ही दुर्ग द्रंग छुराई लये।

अरु चंडासिराज पृथ्वीपाल हू बंदी जयदत्त कों दसलक्ख द्रम्मन समेत दस ही गजेन्द्र दये।

पृथ्वीपाल के रानी रंभा मैं कुमार सेनपाल जन्म लह्यो।

सोही लोकपाल सोही आज्ञाकीर्ति तीन ही नामन करि मागधलोकन मैं विख्यात कह्यो॥८॥

चहुवानराज पृथ्वीपाल के साले चित्तौड़गढ़ के राजा उत्तमदेव के पुत्र रावल भैरवदेव ने जिसके अवर नाम नरब्रह्म और निर्भय भी थे ने मालवा प्रदेश के प्रमारों को जीत कर समरसिंह के अधिकार वाले मांडू राज्य को अपने अधीन किया। इसी प्रकार राजा मुंज से दशपुर (मन्दसौर) जीत कर दबाया। और चहुवान राज पृथ्वीपाल ने भाट जयदत्त को दस लाख रुपए के साथ दस हाथी इनाम में दिए। इस राजा पृथ्वीपाल के रानी रंभा के गर्भ से कुमार सेनपाल ने जन्म लिया। इस सेनपाल के अपने अन्य नामों यथा लोकपाल और आज्ञाकीर्ति सहित तीनों नामों से मागधजनों ने अपनी बहियों में विख्यात किया अर्थात् ये तीनों नाम मागधों ने कहे।

याही समय धारापुरी के अधीस प्रामारराज सिंधुल नें मेदपाट को मद मारि मंडू दसपुर द्वै ही छुराई अपनें बंधुन कों दये। या सिंधुल कै अंगज भोजराज महावद महावदान्य भयो ताके वृत्त को बर्णन कितोकतो प्रामारन के बंस के व्याख्यान ही मैं लिखि गये।

तथापि भोजराज को चरित्र बिसेसही अवसेस जानि इंहा लिखिबे को अवसर आयो।

तहां मुंज के तपोबन गमन के अनंत ही भोजराज हू मालव को आधिपत्य पाइ अपनैं औदार्य पांडित्य के पाटव को प्रभाव चोतर्फ ही चलायो ॥९ ॥

इसी समय में धारानगरी (धारावर्ष) के स्वामी प्रभारराज सिंधुल ने मेवाड़ का दर्प चूर कर मांडू और दशपुर (मन्दसौर) दोनों ही राज्य उससे वापस छीन कर अपने बांधवों को प्रदान किए। इस प्रमारराज सिंधुल का पुत्र भोजराज महावक्ता (अनेक ग्रंथों की रचना करने वाला) और महावदान्य हुआ जिसका कुछ वृत्तान्त तो हम (ग्रंथकर्ता) प्रमार वंश के इतिवृत में लिख आए हैं पर इस महान राजा का कुछ चरित्र चित्रण यहाँ शेष रह गया और यहाँ उचित प्रसंग भी आ गया है इसलिए थोड़ा वर्णन यहाँ भी करेंगे। जब राजा मुंज के तपोवन में जाने का समय आया तो श्रेष्ठ उत्तराधिकारी भोजराज मालवा का आधिपत्य पा कर अपनी उदारता, पांडित्य और चतुराई का प्रभाव चारों दिशाओं में फैला कर प्रसिद्ध हुआ।

बिद्या को गाहक कविता को रिझवार जानैं कोउक कलिंग देस के कवि कों छोटे ही पद्य पर एक लाख मुद्रा दई। अरु कोउक पुलिंद गायक कों पांच लाख एक कवि कों लाख छ कविन कों आठ लाख मुद्रा दै रु काव्यन मैं मढी कमनीय कीर्ति लई।

या औदार्य करि गोविंद पंडित के ईरखा आई जानि वाकी दानाध्यक्षता उतारि उन कविन कों बहोरि द्वै लाख देतभयो। अरु आपुनैं स्कन्धावार धारापुरी मैं जो जो जन मूर्ख जन्यों सो सोही सीखिबे कों निकासी दयो ॥१० ॥

यह विद्या का गाहक और कविता पर रीझने वाला था। उसने कलिंग देश के एक कवि को छोटे से पद्य की रचना पर एक लाख मुद्रा का पुरस्कार

दिया। इसी प्रकार एक म्लेच्छ कलावंत (गायक) को पाँच लाख की राशि दी। एक कवि को एक लाख और छह कवियों को आठ लाख मुद्राओं का इनाम दे कर इस राजा ने काव्य निर्मित सुन्दर कीर्ति पाई। अपनी इस उदारता पर गोविंद पंडित को ईर्षा हुई देख कर राजा ने उसे दानाध्यक्ष के पद से उतार दिया और उन कवियों को दो लाख की राशि प्रदान की। इस राजा ने अपनी राजधानी धारापुरी में जिसे मूर्ख और अनपढ़ देखा उसे शिक्षा पाने के लिए अपनी नगरी से देश निकाला दे दिया।

तब तो बररुचि सुबंधु बाण मयूर रामदेव हरिबंस संकर कर्पूर बिनायक मदन बिद्याबिनोद कोकिल चंद्र प्रमुख पंचसत पंडितन को प्रकर आश्रित ही आनि रह्यो।

अरु कालिदास की कविता को अद्भुत माधुर्य चाखि नरेन्द्र नैं या हीकों कवींद्र कह्यो।

एक समय संकर कवि नैं सभा में आय 'राजन्नभ्युदयोस्तु' कह्यो ताही कों सार्दूलविक्रीडित वृत्त मैं उठाई नरेन्द्र नैं जेजे प्रश्न किये तिनके उत्तर संकर नैं वाही पद्य की समाप्ति पर्यंत दैकैं रिझायो ताके अधीन बारह लाख मुद्रा करी।

अरु द्रविड़देस के लक्ष्मीधर नाम कवि के त्रिष्टुप पद्यपर प्रत्यक्षर लक्ष मुद्रा दै रु दधीच कर्ण की कीर्ति हरी॥११॥

इस विद्वान राजा के आश्रय में बररुचि, सुबंधु, बाण, मयूर, रामदेव, हरिवंश, शंकर, कर्पूर, विनायक, मदन, विद्याविनोद, कोकिल, और चन्द्र जैसे पाँच सौ विद्वान पंडितों का समूह आ कर रहा। और कालिदास की कविता के अद्भुत माधुर्य को चख कर इसी राजा ने उसे कवीन्द्र का उपटंक दिया अर्थात् उसे कवियों का राजा बताया। एक बार इस राजा की राजसभा में शंकर कवि ने आ कर 'राजन्नभ्युदयोस्तु' कहा अर्थात् कहा कि हे राजा! आपका अभ्युदय हो, प्रताप बढ़े। इन ऊपर कहे हुए संस्कृत शब्दों को शार्दूलविक्रीड़ित छन्द में निबद्ध कर राजा ने जो जो प्रश्न किए उनके उत्तर शंकर कवि ने उसी पद्य की समाप्ति पर्यन्त दे कर रिझाया। इसके फलस्वरूप भोजराज ने उसे बारह लाख मुद्राओं का पुरस्कार दिया। इसी प्रकार द्रविड़ देश के लक्ष्मीधर नामक कवि के त्रिष्टुप छन्द (ग्यारह अक्षरों की वृत्ति के

छन्द को त्रिष्टुप कहते हैं इसके चार पदों के कुल चवालीस अक्षर होते हैं) में निबद्ध पद्य पर प्रति अक्षर लाख मुद्राएं दे कर इस राजा ने दधीचि और दानी कर्ण की कीर्ति चुराई।

लक्ष्मीधर के राखिबे कों भोज अमात्य सूं कही कोऊ अनक्षर होई ताकों निकासी वाको गृह इनके अर्थ देहु।

तब अमात्य नैं दूत भेजे तिननें एक कुबिंद अपभ्रंस बोलत जानि कह्यो इहां तैं निकसि और पत्तन कों पंथ लेहु।

तब ही कुबिंद भोज की सभा के समीप आइ कमनीय कविता बनाय केही उक्ति प्रत्युक्ति करि प्रामारराज सों लक्ष मुद्रा लै गयो।

अरु भोज नरेन्द्र हू रात्रि के समय सुख दुक्ख वारे नरन के निश्चय कों अपनैं पत्तन मैं प्रचार करत भयो॥१२॥

यहाँ नहां राजा भोजराज ने अपने अमात्य को बुला कर आदेश दिया कि हमारी नगरी में जो निरक्षर अनपढ़ हो उसे निकाल कर उसका घर इस लक्ष्मीधर को प्रदान करो। इस पर अमात्य ने अपने दूत भेजे जिन्होंने एक जुलाहे को अशुद्ध भाषा (अपभ्रंश) बोलते जान कर उससे कहा कि यहाँ से निकल जाओ और किसी दूसरे नगर में अपना ठिकाना ढूँढ़ो। यह सुन कर उस जुलाहे ने राजा की राजसभा के पास आ कर सुन्दर कविता बना कर जोर से पढ़ी। जिसमें उक्ति प्रत्युक्ति का अच्छा समावेश था तब प्रमारराज भोज ने उसे बुला कर एक लाख मुद्राएं इनाम में दी। एक बार राजा भोज रात्रि के समय अपने प्रजाजनों के सुख-दुःख की खबर लेने नगर में गया।

एक समय अपनें अतिमान्य बान पंडित के गृह ढिग जाइ वा आलय को दुर्गत भाव देखि कछु काल दंपती को संल्लापन सुनत रह्यो।

तहां बान की बधू कह्यो हे कांत धाराधीसके सभ्यहो तथा पि कोऊ पूर्बकर्म के परिनाम करि अपनैं अैसो दरिद्रभाव आयो ताको भार सदा ही सीस बह्यो।

प्रामारराज तो अनेक याचकन की आसा पूरत यातैं तुमहू जाइ अपनें निर्बाह के उचित स्वापतेय मंगि लेहु।

तब बान कह्यो मंगिबे सों तो बहुत ही मिलत परंतु प्रार्थना के रस

मैं मूढ कीहु जिव्हा मूढ होत तो मैं पंडित होई कैं कैसे कहों देहु ॥१३॥

वहाँ वह अपने राज के अतिमान्य बाण नामक पंडित के घर के पास पहुँचा तो उसके घर की दुर्गति देख कर थोड़ी देर के लिए अपने कान दे कर भीतर पति-पत्नी की बातचीत सुनी। वहाँ बाण की पत्नी कह रही थी कि हे नाथ! आप धारा नगरी के अधिपति की सभा के सभ्य हो कर भी गरीब हैं। मुझे लगता है अपंने किसी पूर्व जन्म के पाप के परिणामस्वरूप ऐसे दारिद्र्य का भार हम पर आ पड़ा है और उसे हम चुपचाप ढोये चले जा रहे हैं। प्रमारराज भोज तो अनेक याचकों की आशा पूर्ण करने वाले हैं। ऐसे में तुम्हें भी वहाँ जा कर अपने गुजारे के लिए राजा से धन माँगना चाहिए। अपनी पत्नी की बात सुन कर बाण पंडित बोला कि माँगने पर बहुत कुछ मिलता है परन्तु क्या तुम नहीं जानती कि प्रार्थना (अनुनय) के रस में तो मूढ़ पुरुष की भी जीभ मूढ़ हो जाती है फिर मैं तो पंडित हूँ। वहाँ जा कर यह कैसे कहूँ कि दो।

निर्धन पंडित हू दरिद्र न कहावैं रु याचक ही कहावैं तातैं निधर्नभाव को संताप नहीं पैं बैश्वदेव के समय आये अतिथिन कों बिमुख जाते देखि संताप होत है इतीक सुनि राजा अपनैं कार्य मैं बिचरत भयो

अरु प्रात ही सभामैं बुलाई बान कवि के दुर्गतभाव कों हरत भयो।

एक समय ऐसें ही भोज रात्रि में बिचरत लोप्त्रक समेत मराल शकुंत नामक चौर द्वय को संलापन सुनिबे लग्यो तहां मराल कह्यो रे शकुंत तू कोटिद्वय मुद्रा मूल्यमित मनिगनकों लैजाई कहाकरिहै।

तब शकुंत कही धारापुरी के उत्तरद्वार बेद बेदांग पारग सदा संतुष्ट महादरिद्र विष्णुसर्मा नाम बिप्र है ताकों यह मनिगन बिप्र बेस करि मैं जाई दैहों सो वाको दुस्थभाव हरिहै ॥१४॥

फिर निर्धन पंडित भी दरिद्र न कहला कर याचक ही कहलाता है। इससे मुझे अपनी गरीबी पर पश्चात्ताप नहीं है पर वैश्वदेन यज्ञ के अवसर पर अपने अतिथियों को हमसे विमुख हो कर जाते देख संताप अवश्य होता है। दोनों पति-पत्नी की वार्तालाप सुन कर चुपचाप वहाँ से आगे बढ़ गया पर प्रात: होते ही राजा ने सर्वप्रथम उस दीन पंडित बाण को अपनी राजसभा में बुलवाया और उसके दारिद्र्य को मिटाया। एक बार इसी तरह रात्रि विचरण

में राजा भोज ने चोरी के धन सहित मराल और शकुंत नामक दो चोरों की बातचीत सुनी। वहाँ मराल चोर ने कहा कि हे शकुंत! तू ये दो करोड़ के मूल्य वाली मणियाँ ले जा कर इनका क्या करेगा? इसके प्रत्युत्तर में शकुंत बोला कि मैं इसी धारा नगरी के उत्तर दिशा वाले द्वार पर रहने वाले वेद, वेदांग में निष्णात उस महादरिद्र को जो सदा संतुष्ट रहने वाला है, उस विष्णु शर्मा नामक पंडित को ये सारी मणियाँ विप्र वेश में जा कर दे दूँगा। इससे उसकी गरीबी दूर हो जाएगी अर्थात् इन मणियों से मैं उसकी गरीबी का हरण करूँगा।

शुद्ध प्राकृत भाषा

सचरणगद्यम्

सउंतो वि पुच्छइ अव्वो मराल तं पि एत्तिलमित्तेण वइरपहुडिर-यणगणेण किं काहिसि इअ सोऊण मरालो कहइ सहे सउंत कासीवासी को वि वह्मणो धाराए आयओ तेण में पियरं पडि वाणारसीवासफलं बड्डयरपुण्णं वण्णिअं तस्स सवणकालम्मि च्चिअ पिअरो हीरपुरीपया-णपारंभं करेइ परं महादलिद्दो धणपाहेआउ विणा ण सक्कइ गमिडं णिआउ हेउओ लुत्तमिणं धणं चोरिऊण आणिअं देस्सामि पिअरस्स एदिणा कासीवासं सुहेण सो लहइ कणम्मि काऊण दो एहं पि तक्खराण वयणं लुत्तं पि धणं परमत्थणिमित्तमिअ मुणिऊण बहुदब्बदाणेणताणं दुत्थिअभावमवणेऊण जंपिअं पामारराएण हरे मलिम्मुआ अलाहि काहित्था थिण्णं जइ पुणो वि तया छेच्छंतुमाणं सिराइं एआउ दिअहाउ अम्हदिण्णदव्वेण अणु चिट्ठह सब्बवावारं सक्कय सिलोअसंलावणेण चोरिअवसुणा वि सग्गमग्गमज्जणेण यतुट्ठो हं तुम्हे चिअंते आमि त्ति कहिऊण मरालसउता णिअणिअघरं पठ्ठाविआ अड्ढीकिआ चाएण॥१५॥

तब शकुंत ने पूछा कि हे मराल! तू इतने हीरे आदि रत्नों का क्या करेगा? इस पर मराल ने जवाब दिया कि मित्र शकुंत! एक काशी का निवासी ब्राह्मण हमारी धार नगरी में आया। उसने मेरे पिता से बहु पुण्य दायिनी काशी में रहने का क्या फल मिलत है उसका विस्तृत वर्णन किया। उसके वर्णन को सुनते ही मेरे पिता ने तुरन्त ही काशी जाने का विचार किया पर हम लोग घर से दरिद्र हैं। यही सोच कर चोरी करने गया था अब यह जो चुरा कर धन लाया हूँ उसे मैं अपने पिता को दे दूँगा जिसके सहारे वे

सुखपूर्वक काशी प्रवास पर जा सकें और वहाँ रह सकें। इस प्रकार दोनों चोरों का वार्तालाप सुन कर राजा भोज ने चुराए हुए धन को परमार्थ के निमित्त जान कर छोड़ दिया। यही नहीं उन्हें बहुत सा द्रव्य और दिया। उनकी सारी आवश्यकताओं की पूर्ति करने के बाद राजा भोज ने कहा ओ चोरो! चोरी क्यों करते हो? यह बुरा काम मत करो! भविष्य में यदि चोरी की तो मैं तुम्हारा सिर कटवा दूँगा। आज के बाद मेरे द्वारा प्रदत्त धन से तुम सब अच्छे काम करो। तुम दोनों का संस्कृत वार्तालाप और वह भी श्लोकों में सुन कर मैं प्रसन्न हुआ फिर तुम चुराए हुए धन से भी स्वर्गलोक पाने का उपाय कर रहे हो यह जान कर मैं तुम पर प्रसन्न हुआ। इसलिए तुम लोगों को चोर होते हुए भी जीवित छोड़ रहा हूँ। इतना कह कर राजा ने उन्हें और धन दे कर धनवान बनाया।

एमेअ कया वि विहरतो णिसीढआले धाराउरीपत्ताण पिअर पुत्ता ण महाविउहाण विप्पाण हणुमन्तमन्दिरे सुत्तपबुद्धाण परोप्परं अप्पणय-दुव्विहत्तणं चवन्ताण ववत्थं सुणिऊण किवालुणा भोएण णिअदेहत्तो अहिलाईं आहरणाइं उत्तारिऊण समप्पिआईं ताणं। कीलाचंदकइस्सवि साउकव्वसवणेण वितरिआ पञ्च गामी बीसा अ तुरंगाणं। केत्थसमये रामेसरो कई समाग ओ तस्स कव्वेण वि तुट्ठो पच्चक्खरैं लक्खं समप्पीअ। एक्कसिअंसहासमाग्रयंकलिदासंपण्णप्पमयारसणुमण्णंजाणिअ अब्भुच्चि-ट्ठंतो भिउडिभंग करंतो भोओ गोट्ठीठिआए बहुवम्हणीए सीआए बहुसु गुणेसु दोसो वि चंदम्मि कलंकव्व लुद्धलोअणपेच्छणीओ होइ त्ति संबोहिओवि ण छड्डीअ अवण्णं कालिदासो वि तुलोवमं रायाणं जाणाविअ गओ विलासवईघरं राया वि सहंसमाविऊण अप्पणो कयं कालिदासा-णायरं तण्णायं मुणिअ सविसाओ कयप्पभोअणो केलीघरागओ तस्स कइंदस्स अच्चायरं चिंतमाणो पत्थरणम्मि उवइट्ठो पत्तपच्छत्तावो ण लहेइ णिद्दं लहिऊणंपि सेज्ज दुद्धफेणसवण्णं॥१६॥

इसी तरह एक बार रात्रि को नगर में विचरण करते हुए राजा ने एक बाप और बेटे का आपसी संवाद सुना जो दोनों विद्वान पंडित थे। हनुमान जी के मंदिर में रात्रि विश्राम के लिए ठहरे हुए वे दोनों सोते-सोते बातें कर रहे थे। वे अपने दारिद्र्य का दुखड़ा रो रहे थे। उन दोनों गरीब ब्राह्मण पिता-पुत्र

की व्यथा कथा सुन कर दयालु राजा भोज ने अपने शरीर के सारे आभूषण उतारकर उन दोनों को प्रदान किए। क्रीड़ाचन्द्र की सुन्दर कविता सुन कर उसे पाँच गाँवों की जागीर और बीस घोड़े पुरस्कार स्वरूप दिए। एक बार राजा की सभा में रामेश्वर नामक कवि आया उसका उत्तम काव्य सुन कर राजा ने उसके श्लोक के एक एक अक्षर पर एक लाख का द्रव्य दिया। एक अवसर पर सभा में कालिदास को वेश्या पर आसक्त जान कर अभ्युत्थान देते हुए राजा भोज ने अपनी भौंहे टेढी कीं। तभी सभा में उपस्थित एक विदुषी ब्राह्मणी सीता ने कहा कि हे राजा! जिसमें बहुत गुण हों पर यदि एक आध दोष भी साथ में है तो उसे चन्द्रमा के कलंक की नाई बुरा नहीं कहा जा सकता। यह कह कर उसने राजा को सावधान किया तब भी राजा ने कालिदास की अवज्ञा करना नहीं छोड़ा। तो कालिदास भी अपने राजा को तुलावत घटते-बढ़ते देख कर सारा अभिप्राय समझ कर उसी विलासवती वेश्या के घर चला गया। भोज राजा भी सभा से लौट कर अपने महल में आया तब उसे अपने द्वारा हुए कालिदास के अपमान का विचार आया। राजा ने यह भी जान लिया कि कालिदास भी इस अपमान को समझ गया और आहत हो कर वहाँ से चला गया। यह सोच कर राजा को मन ही मन खेद हुआ। भोजन के पश्चात् अपने शयनकक्ष में आ कर भी राजा को कवीन्द्र कालिदास की विद्वता के बाबत अत्यन्त आदर के साथ सोचते हुए चैन नहीं आया। उसे दूध के झाग के समतुल्य श्वेत कोमल शय्या पर भी निद्रा नहीं आई। वह उठ कर बिछौने पर बैठ गया।

एआरिसववत्थो णिअकंतो णवरि अप्पवाससज्जाए दइअस मीवसमागयाए लीलावईराणीए विसाअकारणं पुच्छिओ जहाहुअं कहीअ वत्तं देवीए वि भणिअं हंदि पाणनाह कयविघडिअसिणेहत्तो अकयसिणेहो वि वरं जह फुट्टिअणयणो जूरइन तह जम्मणधो जह य कलाणिही दोसागरो वि वंको वि कलंकिअहिअओ वि मित्तस्स अंदसणे कयपुण्णोअओ वि भयवंतस्स भूअणाहस्स भालधारणीओ होइ त्ति सो कइंद्दो अयरणिज्जो सामिणा गुरुअं च्चिअ गुणतत्तं णवरि जहतह समाविआए रयणीए कयणिच्चकिच्चो पट्ठाविअदूएण समज्जाए दडवडहक्कारिअं कालिदासं पए पए संकमाणं पेच्छमाणो अब्भुट्ठिओ पंचसत्तपयाणि सम्मुहागओ सम्हिओ रत्तिचरिआकुसलं पुच्छंतो नरिंदो कइंदहत्थं घेत्तूण अप्पाणेण

सह णेऊण अप्पणए अद्धभट्टासेण पइट्ठाविअ संतुट्ठं काहीअ कइंद्दं तद्दंसणेण ईसालुणो सव्वे वि सूरिणो बिलंबमसहमाणा समज्जाणंतरं पासायाउ बाहिरं नीसरंता कुमंतं मंतिऊण वहुत्तरोसा रण्णो तंबोलवाहिणीए तरंगवईनामहे आइ दासीए इक्कं महामोल्लमुत्ताहारं रहसि समप्पिऊण भणिअं च तं तए सुहए पाविणो कालिआसस्स देवीए समंरमणाहिसावं णिएण विअड्ढत्तणेण जाणाविअ पामरराओ तहेअ कायव्वो जहा तं दुट्ठं मारेइ नरिंदों निक्खासेइ अहव देसाउ इअ सुणिअ हारलुद्धाइ तरंगवईए विप्पडिवन्नं तहा णवरि ईसालुसूरिसंघो वि सव्वो हरिसवारिहिविलीणो गओ अप्पणयालयं हंदि हंदि हद्धी पेच्छह छुच्छगुणाण मच्छरित्तणं कासरा कासारे कीलमाणं पि निसग्गमूढत्तणेण न सहंति गइंदं ॥१७॥

इसी समय अपने महल से आ कर रानी ने जब अपने स्वामी को खिन्नमना देखा तो उसने राजा की उदासी का सबब पूछा। इस पर राजा ने पूरा वृत्तान्त कह सुनाया। पूरा वृत्तान्त सुनकर रानी ने पूरी विनम्रता के साथ कहा कि हे नाथ! एक बार स्नेह कर उस सम्बन्ध को तोड़ देने से तो अच्छा यह रहता है कि ऐसा स्नेह किया ही न जाए। आदमी की अपनी स्वस्थ आँख हो और वह फूट जाए तो उसे एक जन्मांध की अपेक्षा अधिक कष्ट होता है। हे स्वामी! चन्द्रमा दोषों का खजाना है उसका नाम भी दोषाकर है। वह कलंक वाला है और अपने मित्र (सूर्य) के परोक्ष उगने वाला है। फिर भी चन्द्रमा भूतनाथ (महादेव) के सिर पर स्थापित है। महादेव ने उसे शिरोधार्य कर रखा है। इसलिए वह कवि कालिदास भी अपने छोटे-मोटे दोषों के साथ आपसे आदर पाने योग्य है। वह गुणों की सम्पदा के कारण बड़ा है। रानी के इस प्रकार समझाने के बाद तो राजा को रात्रि व्यतीत करना दूभर हो गया। प्रात: होते ही नित्य कर्म कर राजा ने अपना दूत भेज कर कालिदास को बुलवाया। दूत द्वारा राजा का सभा में बुलवाने का समाचार सुन कर राज प्रासाद की ओर कालिदास भीतर ही भीतर भयभीत सा कदम-कदम पर ठिठकता बढ़ा। राजा उसे इस प्रकार अन्यमनस्क देख कर पाँच-सात कदम स्वयं चल कर कालिदास के सामने गया। फिर मुस्कराते हुए उसका हाथ पकड़ा और रात्रि की कुशल पूछी। फिर उसे अपने साथ ला कर आधे सिंहासन पर बिठाया और कालिदास को प्रसन्न किया। राजा द्वारा कालिदास को दिया गया इतना आदर सभा में उपस्थित दूसरे ईर्ष्यावान कवि पंडितों से

देखा न गया। वे जलभुन उठे। सभा की समाप्ति पर महल से निकलते हुए अविलंब सभी ने मिल कर मंत्रणा की। उन्होंने राजा तक पान पहुँचाने वालीदासी तरंगवती को बुलवाया और एकान्त में ले जा कर अपने मोतियों के हार दे कर अपना मंतव्य उसे समझाया। हे सुभगे! तुम हमारा एक काम कर दोगी तो हम तुम्हें और अधिक धन दे कर मालामाल कर देंगे। हमारा काम बस इतना है कि किसी भी प्रकार अवसर देख कर राजा के कानों तक यह तुझे पहुँचाना होगा कि पापी कालिदास का रानी के साथ अनैतिक रागात्मक सम्बन्ध है। यह सुनते ही राजा कुपित हो कर उस दुष्ट कालिदास को या तो मरवा देगा या देश निकाला दे देगा। तरंगवती ने हार के लोभ से उनकी बात मान ली। उधर सारे ईर्ष्यालु पंडित भी मन ही मन खुश होते अपने अपने घर गए। शोक और धिक्कार है ऐसे ओछे मनुष्यों की ईर्ष्या को। ऐसे लोग ठीक उस भैंस की मानिन्द होते हैं जो तालाब में नहाते वक्त साथ ही नहाते हाथी को नहीं देख पाती, देखती है भी तो वह मूढ ईर्ष्यावश हाथी नहीं समझती।

चंडी वि सा एक्कसिअं एकल्ले नरिंदे केलीघरे पासुत्ते तस्स चलणसंबाहणं कुणंती पुरुषपाणिपाडणेण जग्गाविअं सामिअंणाउंण छलनिद्दाइ घुम्मन्ती सुणाविअ तं बोल्लीअ छिच्छी हद्धी सहि मयणमालिए दुरप्पा सो कालिआसो दासीवेसेण अंतेउरे आगमिऊण निसीढआले देवीए लीलावईए समं रममाणो आमणाओ मएण वि सीहवंटऊसुओ सिआलो व्व परं रायवीहिआ किं पि कहिउं न सक्केमि हद्धी परच्छंदत्तणं इअ चविअ मऊणमासरिअं तत्तो तमिणं तरंगवईवयणं सुणिअ कोवप्पलित्तो भोओ जइवि कालिदासकव्वलुद्धो तहा वि असज्झमसहमाणोजाणिअ सच्चं वुत्तंतं समाविअनिसो विइज्ज वासरे कयज्जरच्छलो अंतेउरे च्चिअ ठ्ठिओ लीलावइं आणाविअ हक्कारिअं कालिदासं जिमावणत्थमुववेसिअं परिवेसिअभोअणवंजणोवहारं पडिसीरंतरेण राणीए सहोवइट्ठो रायणो वि वितुसमुग्गदालीकारणं पुच्छीअ कालिदासो वि कहिअ *भत्तबल्लह-समीवगया अंगिआरहिअव्व बहुअ त्ति* सुणिऊण राणी वि विण्णायसिलो-अत्था सम्हेरा हेट्ठमुही हूआ तं दट्ठूण तरंगवईकहिअं सच्चं ति मुणिअ कई पडि भणिअं कालिदास अम्हकेर देसत्तो तीसरसिग्घं मारइस्सं न जइ त्ति इत्थीचरिअं कुच्छीअ कालिदासो निधारेसजणवयच्चाअं पडिसुणिअ सिग्घमागमिअ विलासवईघरं जंपीअ पिए रुट्ठो नरिंदो मं देसाउ निक्खासइ

गच्छेमि तम्ह त्ति सुणंती पणबहू बोल्लीअ सुहेण पच्छन्नं ठासु में णिलए भूहरम्मि किंते रायाणेण रायदत्तेण वित्तेण वा जिअंतीए मए भुंजसु दासीए मम घरविहवं समग्गं ति संलाविअ ठाविओ भूहरे कालिदासो तीए लीलावईए वि देसनिक्खासणहेउं पुच्छिओ राया सव्वं मणसंकप्पिअं चवीअ राणीए॥१८॥

एक बार राजा जब अकेले अपने कलिगृह में सो रहे थे और यह दासी तरंगवती उनके पाँव दबा रही थी कि उसने राजा को जागते देख छद्म किया। उसने राजा को सुनाते हुए आँखें बंद कर नींद में होने का अभिनय करते हुए स्वप्न में बड़बड़ाने की तरह बोलना आरंभ किया। सखी मदनमालिका! देख तो यह कितने शर्म और धिक्कार की बात है कि वह दुष्ट कालिदास दासी का वेश बना कर आधी रात के समय अन्त:पुर में आता है। वह रनिवास में आकर रानी लीलावती के साथ अशोभनीय हरकतें करता है। सिंह के खाद्य को चाहने वाले गीदड़ के आशय वाली इस बात को मैंने जान लिया है पर राजा के भय से किसी से कुछ कह नहीं सकती। हाय रे! यह परतंत्रता! इस गुलामी को धिक्कार है। आज इसीलिए हे सखी! यह सभी कुछ मात्र तुझसे ही कह रही हूँ। इतना बोल कर तरंगवती दासी चुप हो गई। दासी का यह बड़बड़ाना सुनते ही राजा क्रोध से भर उठा। कालिदास की कविता पर बहुत रीझे हुए होने पर भी राजा से यह असहनीय बात सही न गई। मन ही मन इस वृत्तान्त को सत्य मानते हुए राजा ने पूरी रात जाग कर बिताई। दूसरे दिन राजा ज्वर का बहाना बना कर रनिवास में ही रहा। फिर राजा ने रानी लीलावती को बुला कर कालिदास को बुलवाया। राजा ने आसन लगवा कर कालिदास को भोजन के लिए बिठाया फिर एक थाल में विविध व्यंजनादि सामग्री परोसवा कर मँगवाई। इसके बाद स्वयं अपनी पत्नी के साथ पर्दे की ओट में बैठ गया। वहीं से राजा ने वार्तालाप के मध्य कालिदास से दाल के छिलका रहित हो जाने का कारण पूछा। इस पर कालिदास ने कहा *भत्रवल्लभ समीपगता अङ्किकारहिता बभूवेतिश्रुत्वा* अर्थात् भात रूप पति के पास आने से यह अंगिया रहित हो गई है। रानी यह सुन कर श्लोक का अर्थ समझकर मुस्करा दी। रानी को इस प्रकार मुस्कराते देख कर राजा को दासी तरंगवती की बात सत्य प्रतीत हुई। उसने स्त्री चरित्र की निंदा करते हुए कालिदास से कहा कि तत्काल मेरे देश की सीमा से बाहर हो जा

अन्यथा मरवा डालूँगा। कालिदास भी भोज राजा के देश को छोड़ने का मन ही मन निश्चय कर शीघ्र ही महल से निकल कर विलासवती के घर आ गया। आते ही कहा प्रिये! राजा अप्रसन्न हो कर मुझे अपने देश से निकालता है इससे मैं जाता हूँ। यह सुन कर वेश्या बोली कहीं जाने की जरूरत नहीं मेरे घर के तहखाने में जा छिपो। तुम्हारा राजा से अथवा उसके धन से क्या प्रयोजन है? मुझ दासी के जीते जी मेरी समग्र धन सम्पदा का चाहो जैसे उपभोग करो। इतना कह कर वेश्या विलासवती ने कालिदास को अपने घर के तहखाने में छिपा कर रख लिया। उधर महल में रानी लीलावती ने जब अपने स्वामी से कालिदास को दिये देश निकाले का कारण पूछा तो राजा ने अपने मन की पूरी बात रानी को बता दी।

तत्तो वज्जरिअदेवीए धण्णा हं देव तए महाबुहकइंदभत्तारेण परं जइ मइ सीलखंडणं संभाविज्जइ कारसु तो दिब्बं जइ न तो मे विसकवलणं च्चिअ वरं। तदो नरवइणा आणविएण कालमुअंगेण कारिएण य तत्तेण लोहगोलएण तिण्णि दिव्वाइं काऊणअखण्डसीला परिक्खिआ सा वि सुद्धा संती महादुम्मणा हुवीअ अरं। रायपराएण वि वाराकारणाए वि वरिसाणि सिंगारमकुणंतीए पइसेज्जमणागच्छन्तीए सामिणाए अविरयदुम्मणंभावं दट्ठूण तरंगवईए णिअहारउवयाहालपहुडि वाणाइणो दुच्चरिअं समग्गं कहिअं। राणीए वि रायाणस्स सपच्चयं जाणाविअ सईवल्लहाकलंकक्खेवदुम्मणस्स महाकइबिरहखिज्जमाणस्स सिंगारं कुणंतीए अप्पवारं सुंसुणंतीए आगमिअ पिअस्स सेज्जं कंतेण रममाणाएपसायत्तणं गहिअं॥१९॥

तदनन्तर रानी ने कहा हे नाथ! आप जैसे कवियों और पंडितों के स्वामी की रानी हो कर मैं बहुत बड़भागिनी हूँ पर यह जो मेरे असद चरित्र की बात आई है तो आप इसकी दिव्य परीक्षा लें। अन्यथा मुझ बदनसीब को जहर खाना अच्छा रहेगा। तब राजा ने काला सर्प और विष मँगवाया। एक लोहे का गोला तपवा कर लाल करवाया और इनसे तीन बार रानी के चरित्र की दिव्य परीक्षा की। इस प्रकार अग्नि परीक्षाएँ देने पर रानी का चरित्र शुद्ध सिद्ध हुआ। पर राजा की मिथ्या शंका से रानी बहुत उदास हो गई। उसने शृंगार करना छोड़ दिया। राजा के पास नहीं गई। रानी की इस घनघोर उदासी

को देख कर दासी तरंगवती का मन पसीज गया। उसने आ कर रानी को बाण आदि कवियों द्वारा हार देने के साथ और भी प्रलोभन की पूरी बात बता दी। दासी ने रानी के सामने सारे पंडित कवियों का कच्चा चिट्ठा खोल दिया और उनकी ईर्ष्या का पूरा चरित्र बखान कर दिया। यह सुन कर रानी ने राजा को पूरा वृत्तांत अच्छी तरह विश्वास दिला कर कहलवाया। यह जान कर कि उसने अपनी रानी के चरित्र पर नाहक ही कलंक लगाया। राजा उदास हो गया। इधर अपने विद्वान मित्र कालिदास के वियोग में व्यथित राजा के पास उसकी रानी पूरा शृंगार कर पहुँची।

तत्तो धारेसो विणा कइंदं न सुहं भुंजइ न निद्दाइ न संलवइ तत्तो एक्कसिअं णिअवासअपहायसमए पइणो पुव्वं पबुद्धा लीलावई सयणाउ हेट्ठोवइठ्ट्टा वल्लई णेऊण पढम गामसुइसंदब्भेण भइरवझंकारेण जग्गावइ दइअं राया वि जग्गिअ वहुलचउद्दसी उग्गिअससिलेहं पिआमुहं च दट्ठूण *'ओली ताव ण अणुहरइ गौरीमुहकमलस्सं'*, इअ दोहद्धं रइअं। तत्तो कयणिच्चकच्च रज्ज कज्जेण ओसरम्मि कारिअ समज्जं आकारिअ वाणाइणो पंडिअकइणो तं चेअ दोहद्धसमासं वि सुणिऊण पुच्छिअं राएण एसा समासा पूरेह कइंदा न जइ निक्खासइस्सं देसाउ तेसु वि कयट्ठ दिणावहीसु पच्चागएसु तत्पुत्तिमलहमाणेसु वाणेण सव्वे भणिआ अम्हेहिमहो विज्जालवमएण सुअमत्थकईहिं दुग्गमत्थकइंदो कालिआसो छलेण निक्खासिओ देसत्तो अत्तो भुंजह तप्फ लं ति सुणंतेसु मऊर-पहुडीहिं कहिअं अज्जे अ सिअट्ठमी निसीहाउ णवरि अत्थमिए चंदम्मि घणंधयारे भरिअणिअवित्तसयढेहिं पलाइअव्वं ति कयमंता सव्वे वि निसीढाणंतरं भग्गा विलासवईघरसमीवमग्गेण तदो तद्दासीहिं मुणिअ पलाइए कालिआसो कुसीलववेसेण अरुद्धद्वारनयरवाहिंगओ पुच्छीअ पलायण कारणं भीआ तुम्हे कत्तो नरेसाउ॥२०॥

तदनन्तर धारा नगरी के अधिपति भोजराज को कालिदास के बिना

१. पूरी समस्यापूर्ति इम प्रकार थी

प्राकृत दोहा : ओली ताव ण अणुहरइ गोरीमुह कमलस्स।
कीस अदि ट्ठी वणिअइ तडि पहिली चंदस्स॥

संस्कृत में रूपांतरण : रेखा तावन्नानुहरति गौरमुख कमलस्येति।
की दृश दृष्टि वर्ण्यते तदा प्रतिप चन्द्रस्य॥

एक भी दिन चैन से नींद नहीं आई। न किसी से बात करना अच्छा लगता। वह अपने में खोया रहने लगा। इसी समय एक रात्रि को राजा से पहले जाग कर रानी लीलावती शय्या से उठी और नीचे आसन पर बैठ कर वीणा बजाने लगी। रानी ग्राम और श्रुति के साथ भैरव की झंकार से अपने पति को जगाने लगी। राजा जागे और कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी वाली उस रात में उगे हुए चन्द्रमा की रेखा के साथ रानी के मुख की ओर देख कर 'गौरी के मुख कमल की रेखा से भी उसकी होड़ नहीं होती'। इस आशय का आधा दोहा रचा। इसके बाद प्रात:काल के नित्यकर्म से निवृत्त हो कर राजा ने अवकाश पा कर बाण आदि कवि पंडितों को सभा में बुलवाया। उनके आने पर स्वरचित उस आधे दोहे की समस्या दे कर कहा कि हे कविवरो! इस समस्या की पूर्ति करो। यदि यह समस्या पूर्ति न कर पाए तो तुम सभी को देश निकाला दे दूँगा। इस पर विद्वत् मंडली राजा से आठ दिन का समय माँग कर अपने- अपने घर आई। जब किसी तरह किसी कवि से यह समस्यापूर्ति न होते देखी तो बाण ने कहा कि हम लोग जो सीधी-साधी कविता करने वाले हैं ने ऐसी कठिन समस्या की पूर्ति करने वाले कवि कालिदास को छल-छद्म से देश निकाला दिलवा दिया। अब यह असंभव कार्य उसके बिना कौन करे? अपने किये हुए का फल भोगो। बाण का उलाहना सुन कर मयूर आदि कवियों ने मंत्रणा की कि आज शुक्ल पक्ष की अष्टमी तिथि है इसलिए आधी रात के बाद चन्द्रमा अस्त हो जाए तब अपना धन-माल गाड़ियों में भर कर मुँह अंधेरे हमें यहाँ स भाग जाना चाहिए। ऐसी सलाह कर सारे पंडित कवि रात को विलासवती के घर के पास वाले मार्ग से हो कर जा रहे थे। उन्हें विलासवती की दासी ने देख लिया। दासी द्वारा सारे कवियों का पलायन करना जान कर कालिदास एक चारण का वेश बना कर बाहर आया। उसने नगर द्वार के बाहर जा कर भागते हुए पंडितों से इस प्रकार अचानक पलायन करने का कारण पूछा और पूछा कि तुम लोग अपने राजा से इतने डरे हुए क्यों हो?

तत्तो वज्जरिए जहत्थपच्चुत्तरे कहिअं कइंदेण *कीसअदिट्ठी वण्णिअइ तडि पहिली चंदस्स* इअ एअ पुण्णसमासं भणह तुम्हे सहाए गमिअ अहयं पि चालणो महादलिद्दो धणत्थी जसकव्वसावणेण पामारराइणं पसन्नीकाऊं वाणारसीए समागओ अणुघेत्तव्वो तुम्हेहिं वि

आकारणीओ सोरायाणं जाणाविऊण गोट्ठीए अदिवावणीओ जह कव्वं सावएअं ति उप्पालिअ कालिआसो पि हि अप्पा अप्पकेरसहिल्लीए गणिआए णिलयभूहरे दडवड गओ ते वि सव्वे वाणाइणो पाउवाइभासा-पंचअ पमत्ता णायसमासत्था लद्धुत्तरद्धा हरिससमद्धा पच्चागमिअ पुरे समाविऊण रत्तिं पच्चूसे च्चिअ लद्धावसरे सहाए समागमिअ सव्वे वाणमुहेण सुणावीअ जहाहिप्पायसमासुत्तरद्धं णवरि राएण वि निम्मायारं निण्णेउं दम्मलक्खपंचअं दत्तं वाणस्स तत्तो अप्पत्तवंटईसालुएहिं कप्पूर मऊर पहुडीहिं इअरकईहिं समत्तसमज्जाओसरेहिं लंघिअरायपउट्ठेहिं पच्चागमिअ पच्छन्नं वारवालमुहेण जाणाविअ नरिंदस्स पत्ता अप्पप्पघरं तओ तत्तो चिरकालं बिलासवईणिलओवकंठं गूढदूअदूईओ बिठाविअ तेहिं पच्छन्नं गणिआचरिअं निण्णेऊण रयणीए सुत्तं विलासवइं अपेच्छमाणेहिं वीओ वायं मिलाविअ तज्जणेहिं राईए कालिदासेण समं भूहरे सुअंति दंड जाणिअ पच्चूसे च्चिअ पउर समच्च सामंत सहिओ णिवो पायचारि च्चिअ कइंदं पच्चाणेउं आगओ विलासवईघरं सा वि गणिआ अजाणिअरायहिअया णिअकंतगउरव भंससंकिरी किंकरीपमुहेहिं अप्पणयजणेहिं समुवेआ पलित्तज लणोवरिं चिणिऊण कट्ठसंघायं पडणारंभं करंती दिट्ठा णिवेण सम्माणिआ महुरवयणेहिं वारिआ य परिअणेण गेण्हाविअ करं॥२१॥

तब पंडितों ने यथार्थ वृत्तांत कह सुनाया। इस पर कालिदास ने कहा कि तुम अपने राजा से यह 'तब प्रतिपदा के चन्द्र की कैसी दृष्टि का वर्णन करना' समस्यापूर्ति जा कहो। मैं चारण हूँ और अपने दारिद्र्य को दूर करने के लिए धन पाने की इच्छा से तुम्हारे राजा को प्रसन्न करने की सोच कर काशी से आया हूँ। इसलिए मैं भी तुम्हारे साथ ही राजसभा में चलूँगा। आप लोग मुझ पर कृपा कर मुझे भी राजा के पास बुलवाना और ऐसा माहोल बनाना कि मैं कविता पढ़ सकूँ और राजा से कुछ इनाम पा सकूँ। इतना कह कर कालिदास अपनी प्रिया विलासवती के घर के तहखाने में चला गया। उधर वे सारे कवि पंडित (बाण आदि) लोक प्राकृतादि भाषा के जानकार भी थे। इस कारण गर्वित समस्या का अर्थ जान कर उसका उतरार्द्ध पा प्रसन्न होते हुए वापस नगर में दाखिल हुए। फिर रात्रि व्यतीत कर सवेरे ही राजा के पास गए। वहाँ जा कर बाण ने समस्यापूर्ति के उतरार्द्ध को साभिप्राय सुनाया।

इस पर प्रसन्न हो कर राजा ने बाण को पाँच लाख मुद्राओं का इनाम दिया पर आगे कर्पूर, मयूर आदि कवियों ने इनाम में से अपने हिस्से की राशि नहीं मिलने पर बाहर आ कर द्वारपाल के माध्यम से राजा को समस्यापूर्ति का पूरा वृत्तांत कहलवा दिया। यह सुन कर राजा ने विलासवती के घर के पास अपने गुप्त दूत और दूतियों को तैनात कर दिया। दूतों ने वहाँ सब पता लगा लिया कि रात्रि में विलासवती अपने स्थान पर नहीं सोती और वहाँ मंडे पदचिह्न देख कर उन्होंने कयास लगा लिया कि हो न हो कालिदास यहीं है और विलासवती भी उसके साथ तहखाने में सोती है। दूतों ने राजा को पूरी खबर दी। यह सुनते ही सवेरे राजा भोज अपने मुसाहिबों और उमरावों को साथ ले कर पैदल-पैदल कालिदास को लिवा लाने के लिए विलासवती वेश्या के घर गया। उधर विलासवती ने जब राजा को पूरे लवाजमे सहित आते देखा तो वह डर गई कि राजा कालिदास की प्रतिष्ठा बिगाड़ने पर आमादा है। यह सोच कर वेश्या विलासवती ने अपनी दासी और सेवकों से कह कर काठ की ढेरी लगवाई और उसमें अग्नि प्रज्वलित कर स्वयं उसमें कूदने का उद्योग करने लगी। राजा तुरन्त समझ गया उसने शीघ्र ही मीठे वचनों से विलासवती को सांत्वना प्रदान की और अपने सेवकों को आदेश दे कर चिता को हटवाया।

तत्तो णंतरं नरिंदो हम्मिऊण भूहरे पाविअ अंतेमणं कालिदासं खमाविअ णिआवराहं वोलाविअ वाहिरं चडाविअ पट्टतुरंगं आणिओ रायभवणं लीलावई वि सत्त सिहसुद्धसोलह वण्ण सुवण्णंव्व सविसे-ससोहिआ सव्वजणसंतोसुंतो अवहत्थिऊण सीलसंदेहसंकं किलिकिंचीअ वल्लहेण समं सुणंती सव्वपुरयण परिअण वण्णिअं अप्पसइत्तणत्थवणं वाणइणो वितत्तो चत्तम च्छरिआ लुत्तदप्पा पुढवीपुलोअणा सवि-सेसयद्धभद्दासणनिसण्णकालिआसगउरवं पिक्खंता णाया मिव कड्ढाविअमणिण्णो हुवीअ मो वि कइंदो ते सव्वे अच्चायरेण विणीए काऊण पडिमि लणं पणमावंतो दूरीहूअकलंको भोअस्स बुद्धि विज्जा वयन्न तत्णं कव्वेहिं णाणाविहेहिं थुवीअ॥२२॥

तदनन्तर राजा चल कर तहखाने तक •।या। वहाँ जा कर उसने कालिदास से क्षमा माँगी अपना अपराध क्षमा करवाया। इसके बाद कालिदास को बाहर ला कर अपने घोड़े पर आरूढ़ करवाया और उसे ले कर अपने महल तक

लाये। उधर रानी लीलावती भी अग्नि में तपाए हुए स्वर्ण की तरह शोभित हो कर सभी मनुष्यों के मन से अपने चरित्र बाबत संदेह को निकला देख कर हर्ष की मुद्रा में रही। वह स्वयं राजा भोज और सारे पुरवासियों के मुँह से अपने सतीत्व की प्रशंसा सुन प्रमुदित होती। इसके बाद बाण आदि कविगण भी अपनी ईर्ष्या का त्याग कर झूठे अभिमान से रहित हो पृथ्वी की ओर ताकने लगे। वे कालिदास को राजा के साथ आदरपूर्वक सिंहासन पर बैठा देख कर और उसकी प्रतिष्ठा निरख मन ही मन में अवश्य जलते पर कालिदास अवश्य अपने पर लगे मिथ्या कलंक से मुक्त हो कर राजा भोज की बुद्धि, विद्या और उदारता की प्रशंसा अपने काव्य में करता रहा।

इतिश्री वंशभास्करे महाचम्पूके पूर्वायणे चतुर्थ राशौ बीतिहोत्र-चण्डासिवंशबर्णने सहगामिनीविद्यावती जया सहितभौमचन्द्र परलोक-प्रस्थान नृपास्थिपाल गोदोपकण्ठनिजनामनगरनिर्माण सेवितसर्बतीर्थ-चित्रकूटेशशीर्षोद्दराउलोत्तमदेवरणाऽपलायननियमनिर्वहण नृपास्थिपाल मदनावत्यौ रसकुमारपृथ्वीपालो द्गमन चरमवयस्कनृपास्थिपाल परलोकप्रापण तत्पत्नीद्वय सहगमन हड्डेन्द्रपृथ्वीपाल चैत्रकूटीगौहिल-पुत्रीरम्भो पयमन जितप्रामारतच्छालकराउलभैरवमंडू दशपुरा क्रमण नृपपृथ्वीपाल बन्दिजयदत्तार्थद्विरददशक समुपेतमुद्रालक्षदशक दान पार्थ्वीपालिराम्भेयकु मारसैन्यपालो द्भवन धारेश्वरनृपसिंधुलगतदुर्गद्वय प्रत्याक्रमण समर्जितसर्बविद्यमहोदारतत्तनयभोजनरेन्द्रबररूचि बाणा दिपण्डितपञ्चशती स्वाश्रितीकरण समादृतकालीदासनृपशंकर लक्ष्मीधरा र्थद्वादश प्रत्यक्षर लक्षार्पण तन्निमित्तनिष्कास्यमानकुविन्दार्थलक्ष मुद्रादान रात्रिचर्याज्ञातदुस्थीभूतबाण चौरद्वय विपद्विध्वंसन सपुत्रैकबुधबिप्रार्थ-सर्वस्वाभरणार्पण क्रीड़ाचन्द्रार्थहयविंशति युतपञ्च ग्रामीविश्राणन रामेश्वरार्थप्र त्यक्षरलक्षोत्सर्जन वेश्याप्रसङ्गकुत्सनानादृतकालिदासपश्चा त्तप्तनृपसमाकारितकालिदासस्वार्द्धासनोपवेशन तदीर्ष्याव दन्यक-विगणस्वासह्योपरिशुद्धान्तगमनाभिशापपातन निश्चिततद्वृत्तभोज-स्वपुरनिष्कासितकालिदासप्रच्छन्नतद्वेश्यालयभूगृहनिवेसन ज्ञातैत-दुदन्तकृतदिव्यत्रय शुद्धीभूतस्वस्वामिनीराज्ञी लीलावतीचिरदुर्मनी-भावप्रत्युतस्वयंपश्चात्तापखिन्नदासीतरङ्ग वतीयथातथपापप्रकाशन

बुद्धतद्वृत्तनृपदत्तसमस्यापूरककविगणनिष्कासनाङ्गीकरण दयालुकालिदासदत्तसमस्यापूर्तिकभग्नतत्कविगणप्रतिप्रेषण बाणमुखश्रुततत्पूर्तिकनृपतदर्थपञ्चलक्ष मुद्रावितरण तदीर्ष्यावत्कर्पूरादियथा तथविज्ञापन तदनुमन्त्रिनृपनिश्चितकालिदासप्रत्यानयनाखिलकविपश्चात्तापनं चतुर्विंशो मयूखः ॥२४॥ आदितस्त्रयस्त्रिंशदुत्तरशततमः ॥१३३॥

श्री वंशभास्कर महाचम्पू की चौथे राशि में अग्निवंशी चहुवान वंशवर्णन में रानी विद्यावती और जया सहित भौमचन्द्र का परलोक जाना, राजा अस्थिपाल का गोदावरी के समीप अपने नाम का नगर बसाना, सब तीर्थों का सेवन करने वाले चित्तौड़ के पति सिसोदिया राउल उत्तमदेव का युद्ध में न भागने की प्रतिज्ञा का निबाहना, राजा अस्थिपाल के मदनावती के उर से कुमार पृथ्वीपाल का पैदा होना, अन्तिम अवस्था वाले राजा अस्थिपाल का परलोक जाना, उसकी दोनों स्त्रियों का साथ जाना अर्थात् सती होना, हड्डेन्द्र पृथ्वीपाल का चित्तौड़ के गुहिलोत्त राजा की कन्या रंभा को ब्याहना, प्रमारों को जीतकर उस (पृथ्वीपाल) के साले राउल भैरव का मांडूगढ़ और मंदसोर पर हमला करना, राजा पृथ्वीपाल का स्तुतिपाठक जयदत्त के लिए दस हाथी समेत छः लाख रुपए देना, पृथ्वीपाल के पुत्र रंभा के औरस पुत्र कुमार सैन्यपाल का पैदा होना, धारा के स्वामी राजा सिंधुल का अपने गये हुए दो किलों पर वापस हमला करना, सर्वविद्या पढ़कर बड़े उदार सिंधुल के पुत्र महाराजा भोज का वररुचि बाण आदि पाँच सौ पंडितों को अपने आश्रित करना, कालिदास का आदर करके शंकर कवि को बारह लाख और लक्ष्मीधर को प्रति अक्षर लक्ष रुपये देना, उसके निमित्त निकाले जाते जुलाहे को लक्ष रुपए देना, रात्रि में विचरते समय जिनकी दुर्दशा जान ली है ऐसे बाण और दो चोरों की आपदा का मिटाना, पुत्र सहित एक पंडित ब्राह्मण के लिए अपना समग्र भूषण देना, क्रीड़ाचंद्र के लिये बीस घोड़े सहित पाँच गाँव देना, रामेश्वर के लिए प्रति अक्षर लाख रुपए देना, वेश्या के प्रसंग से कालिदास की निंदा और अनादर किये जाने पर पश्चात्ताप करके राजा का कालिदास को बुलाकर अपने अर्द्धासन पर बिठाना, उस (कालिदास) से ईर्ष्यावाले दूसरे कवि लोगों का असहनता से अंतःपुर में जाने का कलंक लगाना, उसके वृत्तांत को निश्चित जानकर भोज के अपने पुर से निकाले हुए कालिदास का गुप्त रीति से वेश्या के घर में तहखाने में रहना, इस वृत्तांत को जानकर तीन दिव्य

(परिक्षणों) से शुद्ध हुई अपनी स्वामिनी रानी लीलावती का बहुत काल तक उदास रहने से पीछा खुद पश्चात्ताप से खेद करती हुई दासी तरंगवती का जैसा का तैसा पाप प्रकट करना, उस (कालिदास) का वृत्तांत जानने वाले राजा की दी हुई समस्या को पूर्ण नहीं करने वाले कवि लोगों का निकलना स्वीकार करना, दयालु कालिदास की दी हुई समस्यापूर्ति से भागे हुए कवियों को वापस पुर भेजना, बाण आदि से उस समस्या की पूर्ति सुनकर राजा का उनके लिये पाँच लाख रुपए देना, उस (बाण) से ईर्ष्यावाले कर्पूर आदि का यथार्थ वृत्तांत निवेदन करना, तदनंतर मंत्रियों के साथ राजा का कालिदास को वापस लाने के निश्चय करने का चौबीसवां मयूख समाप्त हुआ। और आदि से एक सौ तैंतीस मयूख हुए।

शुद्ध प्राकृत भाषा

सचरणगद्यम्

एक्कसिअं हयारूढो नरिंदो अडवीए गच्छंतो करंकभायणस्स दलिद्दविप्पस्स कव्वेण संतुट्ठो दत्तपच्चक्खरलक्खो समागमिअ रायभवणे समज्जाठिओ सुअदारगयपंडिअकुडुंबदिओ सिंघलदीव निवेण उवयाए पेसिए सदिव्वसोलह मणिणो सवाय। गइंदे पुलइउं वाहिरमागओ कम्हारदेसीअकइतंडुलदेवणत्थदिण्णपंच दिरओ दुइअकइअत्थदत्तदह गओ इक्कस्स दिअपुत्तस्स अप्पिअइहतीसो विज्जकुडुंबपंडिअं दट्ठूण सचमक्कओ दत्तसमासो णवरि पढमत्थपूरिअसमासस्स तस्स दत्तबहुत्तवित्तसहदह गओ दुइअत्थपूरिअसमासाए विज्जकुंडुबबहूए दिण्णतम्मणिसोलहओ तइअत्थभरिअसमासस्स तप्पुत्तस्स अप्पिअसत्तसिंधुरो चोत्थत्थसमाचिअसमासाइ तहुहिआइ समप्पिअभाणुमईभूसणो पंचमत्थसाहिअसमासाअ तस्स सुण्हाअ लालावईए समत्तआहरणाइंमग्गाविअ देहीअ अहो दाणसोंडत्तणं दायारम-उलिमणिस्स पामारपज्जोअणभोअभूवालस्स एक्कइआ को वि नाडिंधमो कत्तो वि कुह वि किमवि खणंतो पउमरायजडिअं सुवण्णघडिअं घडं लहिऊण रायभवणमागमिअ कव्वचाउरीए अप्पीअ भूवस्स एसो वि तक्कव्वतुट्ठो तं च्चेअ णिवं णिवो दिव्वदव्वजाएण परिपूरिअ पडिअप्पीअ तस्स च्चिअ कलायस्स अवहत्थिअलोहजालस्स एक्कसि आहेडरसरत्तो

विसमरण्णपत्तो एक्कल्लो एकल्लकोलपिट्ठपरीघत्तिअघोडओ पाडिअपोत्तिओ दिम्मोहम्मि मग्गमलहमाणो दट्ठूण छेत्तवालवालिअं संपन्नकेआरसालिंरक्खंतिं पुच्छीअ मग्गं धाराए तए वि नवल्लकव्ववंधेण सद्धरापज्जेण पयासिअं पुरप हुँ पाविअ तीए समप्पिअलक्खो नयरं समागच्छंतो दट्ठूण एक्कं सहवच्चमाणं विप्पवडुअं पच्छन्नभूवभावो निम्माणाविअ तेण केआरकलमसंवद्धकव्वं दत्तप्पसव्वाहरणो अग्गम्मि च्चेअ तत्तो पुत्तो पुरं पेल्लिअतुरंगो पंचम धाराए फाराए॥१॥

एक अवसर पर राजा भोज अपने घोड़े पर सवार हो कर वन में जा रहा था कि राह में फूटे पात्र (ठीकरा) वाले दरिद्र ब्राह्मण ने अपना काव्य सुनाया। राजा ने उसके काव्य पर प्रसन्न हो कर प्रति अक्षर दो लाख मुद्राओं का इनाम दिया। वन से वापस आ कर राजा अपनी राजसभा में बैठा कि तभी द्वार पर एक पंडित के कुटुम्बियों सहित आने का समाचार मिला। राजा ने पूछा क्या काम है ? उसने कहा दरिद्र है और राजा से सहायता चाहते हैं। राजा भोज को सिंहल द्वीप के राजा ने उपहार स्वरूप सोलह उत्तम मणियां और सवा सौ अच्छी नस्ल के हाथी भेजे थे उन्हें देखने के लिए राजा बाहर आए। इसी समय कश्मीर के कवि तंडुलदेव को पाँच हाथी, एक अन्य कवि को दस हाथी, एक ब्राह्मण को तीस हाथी प्रदान किए फिर अपने द्वार पर आए उस पंडित कुटुम्ब को देख कर आश्चर्य प्रकट करने वाली एक समस्या पूर्ति दी। उस पंडित ने एक अर्थ से उस समस्यापूर्ति को पूरा कर दिया तब राजा ने उसे बहुतसा धन और दस हाथी प्रदान किए। इसी बीच उस पंडित की स्त्री ने दूसरे अर्थ से समस्यापूर्ति कर सुनाई इस पर राजा बेहद प्रसन्न हुआ और सिंहल द्वीप से उपहार में आई हुई सारी सोलह उत्तम मणियां उस पंडित की स्त्री को इनाम में दी। तभी पंडित के पुत्र ने तीसरे अर्थ से समस्यापूर्ति कर दी उसे राजा ने सात हाथी दिए। पंडित की पुत्री ने जब चौथे अर्थ से समस्यापूर्ति कर अपना पद्य सुनाया तो राजा ने अपनी रानी भानुमती के सारे आभूषण इनाम में दे डाले। इसी समय पंडित की पुत्रवधु ने पाँचवे अर्थ से समस्यापूर्ति का काव्य सुनाया जिसे सुन कर राजा भोज ने अपनी दूसरी रानी लीलावती के सारे गहने पंडित की पुत्रवधु को पुरस्कार में दे दिए। प्रमार वंश के दीपक राजा भोज की उदारता कुछ इस तरह की

अचंभित करने वाली थी। उसके राज्य के एक सुनार को जमीन खोदते वक्त भूमि में दबा पद्मराग (माणिक रत्न) से जड़ित एक स्वर्ण कलश मिला। वह सुनार उसे ले कर राजा के पास गया। राजा ने उसकी ईमानदारी और लोभहीनता पर प्रसन्न हो कर उसी घड़े को बहुत सारी अशर्फियों से भर कर सुनार को इनायत कर दिया। एक बार राजा भोज शिकार खेलने के सबब वन में गए। वहाँ एक जंगली सूअर का पीछा करते हुए मार्ग से भटक गए। नई राह पर बढ़ते हुए राजा को अपने खेत में धान की रखवाली करती हुई एक किसान की लड़की नजर आई। राजा ने उससे धार नगरी का रास्ता पूछा। उस किसान पुत्री ने संस्कृत भाषा के स्रग्धरा छन्द में उत्तम काव्य रच कर छन्द ही में राजा को मार्ग बताया।[1] राजा सुन कर आश्चर्यचकित हो गया और तत्काल उस स्त्री को एक लाख मुद्राओं का पुरस्कार दिया। फिर राजा नगर की ओर रवाना हुआ। रास्ते में अपने पीछे आते एक ब्राह्मण बालक को देखा। राजा ने उससे अपनी पहचान छिपा ली। जब उस बालक ने भी खेत के धान की कविता संस्कृत में सुनाई तो राजा भोज ने अपने सारे पहने हुए आभूषण उतार कर उस बालक को दे दिए। इसके बाद वह अपने घोड़े को सरपट भगा कर अपनी राजधानी में पहुँचा।

तत्तो पच्छइ विप्पवडुओ वि सणिअं सणिसमागओ रायवा रवाहिरं ठक्ने हुवीअ तं रायर्दसणकामं मुणिऊण वेत्तहारिणा विण्णाविओ णरिंदो तुम्हेच्चयभूसणजायं धारंतो पओलीवाहिं वट्टए जइ आणवेइ देवो आणिज्जइ सो भवईअभूसणभूसिओ सहा णेण सहाए। राइणा वि पच्चहिजाणिओ केआरकलमकव्वकत्तारो महीसुरमाणवओ हक्कारिओ पुच्छिओ अ अव्वो विप्पवालअ कत्तो लद्धाइं एरिसभूसणाइं तए त्ति सोऊण तेण वि वज्जरिअं धुत्तत्तो तुमत्तो च्चिअ कलमकव्वं निम्माणाविअ सुणंतत्तो पसन्नीहूअत्तो कलमकंपण कइत्तकहाए। तत्तो पुणो वि णिअभूसणाईं तस्स समप्पिअपे-सिओ घरं वसुहाविउहवडुओ तस्साणंतरं एक्केण कुलालमिहुणे ण समागमिअ विण्णाविअं देव मट्टिआखणिं खणंतेहिं अम्मेहिं एसो णिहाणकलसो लद्धो भवईअंभडाआरे ठाविअव्वो त्तिपिहाणं पेल्लिअ

---

१. इस कथा को राजस्थानी के प्रसिद्ध कथाकार विजयदान देथा ने बहुत ही सुन्दर ढंग से अपनी भाषा में 'राजा भोज अर डांकरी री बात' शीर्षक से थोड़े इतर कथानक के साथ लिखा है। श्री देथा की यह कथा अद्‌भुत है इसलिए पठनीय है। - संपादक

पेक्खाविओ मज्झट्ठिअमहामोल्लमणिसमूहो कहिअं च कव्वेण नरनाह रायाणं भयवंतं भूमिट्ठिअं पोक्खिअ विरहमसहंतमुडुमंडल एक्कीहूअं सेव्विउं समागयं भवंतं त्ति सुणिअ तक्कव्वतुट्ठो अप्पीअ तन्निहाणनिवं निवो कुलालकए। एक्कइआ विहावरीए विचरंतो एक्कघरे कवाडछिद्देण इत्थीपुरिसे एक्कसज्जाए सुवंते पेक्खिअ निवेण चिंतिअं को वि एसो रायसेव्वाइ निअंत खिज्जमाणगत्तो रायभवणाउ चिरेण समागमिअ सवसणा उहो च्चिअ अणासिलिट्ठजुवईओ सोवइ त्ति चिंतमाणेण णिवेण को विड्डइअ पुरिसो वाहिरओ तं च्चिअ घरं नीसंक अहिपच्चुअंतो कुड्डुंतरनिलीणेण दिट्ठो सो वि वारसुवगमिअकररग्गेण सणिअमररसद्दं काहीअ तेण पबुद्धा सा इत्थी कवाण माणेउं उट्ठिआ सणिअं कोमलचलणन्नासं कुणंती सावहाण पडव्वए॥२॥

उधर वह ब्राह्मण बालक भी चल कर धार नगरी में आ पहुँचा और राज प्रासाद के द्वार पर जा कर खड़ा हो गया। जब द्वारपाल ने पूछा कि यहाँ क्यों खड़ा है ? क्या चाहिए ? तो ब्राह्मण बालक ने राजा को देखने की अपनी इच्छा दर्शायी। द्वारपाल ने अन्दर जा कर निवेदन किया कि हे राजा! बाहर एक बालक आपके गहने पहन कर खड़ा है और आपेक दर्शन करना चाहता है। आज्ञा हो तो उसे आने दिया जाए। राजा तुरन्त समझ गया कि यह केदार कलम (खेत के धान) की कविता सुनाने वाला बालक है। राजा ने तुरन्त उसे बुलवाया और पूछा कि हे विप्र बालक! तेरे पास ये राजसी आभूषण कहाँ से आए? ये आभूषण देने वाले आप ही धूर्त हैं जिन्होंने केदार कलम वाली कविता सुन कर मुझे मालामाल किया है। यह सुन कर राजा ने फिर से अपने पहनने के गहने उस ब्राह्मण बालक को देकर घर भेजा। ऐसी उदारता थी राजा भोज के स्वभाव में। एक बार एक कुम्हार और उसकी स्त्री कुम्हारिन ने आ कर राजदरबार में निवेदन किया कि हे राजा! हमें मिट्टी की खदान खोदते समय यह खजाने जैसा भरा हुआ घड़ा मिला सो इसे राज्य के कोश में जमा कीजिए। राजा ने जब उस घड़े का ढक्कन उघाड़ कर देखा तो उसमें बहुमूल्य हीरे-मोती थे। यह देख कर राजा से कविता में कुम्हार ने कहा। कि हे नरनाथ! आपका रूप चन्द्रमा को भूमि पर अवस्थित देख कर ये सभी तारागण (हीरे-मोती) आपके वियोग को असह्य समझ कर आपके पास रहने को आए हैं। राजा भोज ने कुम्हार से यह पद्यांश सुन कर वह पूरा भरा

हुआ घड़ा उसी कुम्हार को दे दिया। एक बार रात्रि में वेश बदल कर प्रजाजनों के सुख-दुःख की परीक्षा लेने को निकले राजा भोज ने एक घर के किवाड़ के छेद में से एक पलंग पर स्त्री-पुरुष को सोते देख कर विचार किया कि यह कोई राज की नौकरी से थका हुआ आया लगता है जो अपने वस्त्र और शस्त्र सहित अपनी पत्नी को बिना आलिंगन में लिये सो रहा है। राजा यह सोच ही रहा था कि तभी बाहर से एक आदमी निःशंक उसी घर में जाता हुआ नजर आया। राजा ने दीवार की ओट ले कर देखा कि वह पुरुष दरवाजे के पास आ कर खड़ा हो गया फिर उसने बहुत धीरे-धीरे दरवाजा खटखटाया। इस खट-खट की आवाज से स्त्री भी अपने कदम धीरे-धीरे रखती हुई उठी।

तओ सा उग्घाडिअ कवाडं अब्भंतर णऊण णिअपाणनाहं तस्स न्हाणपमुहपरिचरिअं करंती पिएण बज्जरिआ अव्वो पिए मम सेव्वावावडाए तव सिंजिअसद्देण माइं होउ विजयस्स निद्दाभंगोति अलं परिचारिआए निम्माणसु भोअणं सणिअसणिअ मारव बिहूण तदो मलयसिंघसुंदरीए सिद्धीकए भोअणे मलएण जग्गावि ओ विअओ दोण्णि वि अप्पप्पपीढट्ठिआजेमिउं लग्गा तहच्चिअ समए णिओविअणग्गलवारेण अब्भतरं पइट्ठो बोल्लीअ अहं रायमग्गगामी पुरिसो अप्पिवासो उअयत्थमागओ दिज्जउ मे जलं। इअ सोऊण विअएण बोल्लिअं सहे मलयसिंघ असणओसरे पत्थमइहिं रायपुरिसं पि जेमावसु तओ मलएण तहच्च भणिआए तप्पिआए तस्स वि आसणत्थमासणं रयण कंवलमइअं पसारिअ तंबपारी पूरिअजला दत्ता णिवहत्थे तेण विपक्खालिअ हत्थपाए महापिवासुच्छलेण पीअपाणिएण व्व जंपिअं ना हं वुहुक्खू परं पुच्छेमि तुम्हाणं को णाम जिट्ठो सोअरो त्ति सुणिअ भणिअं मलएण एस महापुरिसो विजओ णाम ण में कणिट्ठसोअरो परं तत्तो वि अच्चहिओ अच्छहिट्ठो मित्तसिरोमणी मे जं विणा जीविएण वि अलं इअ सोऊण महच्छरिज्जचमक्कओ भोओ रायभवणमागओ पहाए कयणिच्चकच्चो हक्कारिअ सवहुअं मलयसीहं विजयं च तं अप्पणो उट्ठीअसमज्जाए रहसि पएसे णेऊण ते मग्गाविअ तत्तलोहगोलअ कालभुअंग कालऊडे मलयववत्तीए विअएण य करा विअ दिव्वत्तयं अग्गिरूवअयपिंडग्गहणेण कण्हसप्पक्कमणेण हलाहलकवलणेण वेण्णि वि अव्वाउले अइपसन्ने अहिसोहिअमुहे सीलसुद्धे मलयं च महगहीरासयं जाणिअ तिण्हं पि

पायपडिओ णरिंदो कहीअ तुमं मलयसिंघ वसिट्ठो तुमं पि मलयपाणप्पिए अरुंधई तुवमं विअय जीवंतमुत्तो वासस्स नंदणों सुअदेवो व्व सइसुद्धो इअ जंपिअ धारेसो ताणं तिण्हं पि तिण्णि सयाइं गामे समप्पीअ पच्छत्ता-वपरायणो अप्पप्पपत्थं पेसीअ पउद्धो ॥३॥

फिर उस स्त्री ने धीरे से किवाड़ खोल कर अपने पति को भीतर लिया। अन्दर जा कर वह पतिव्रता स्त्री अपने पति की सेवा-सुश्रुषा में लग गई। उसने अपने पति को स्नान करवाया। इसी समय उसके पति ने हिदायत दी कि काम करते हुए सावधानी रखना कहीं तेरे आभूषणों की खट खट हुई तो विजय की नींद खुल जाएगी। अब मेरी सेवा बन्द कर और रसोई में जा कर बिना बर्तन बजाए भोजन बना। जब भोजन बन गया तब मलयसिंह (स्त्री का पति) ने जा कर धीरे से विजय को जगाया। उठो! भोजन तैयार है। फिर उसने दो आसन लगाए और दोनों अपने-अपने आसन पर बैठ कर भोजन करने लगे। इसी समय राजा ने भी खुले दरवाजे से भीतर प्रवेश लिया और बोला कि मैं राहगीर हूँ मुझे प्यास लगी है। मुझे पानी पिलाओ! यह सुन कर विजय ने कहा हे मित्र मलयसिंह! भोजन के समय आए हुए इस अभ्यागत राजा के नौकर को भी भोजन कराओ। तब मलयसिंह की आज्ञा से उसकी स्त्री ने रत्नजड़ित आसन बिछा कर राजा के हाथ में जल से भरी झारी थमाई। तब राजा ने हाथ-पैर धो कर प्यासे की तरह मात्र पानी पी कर कहा कि मैं भूखा नहीं हूँ। हाँ, पर मैं यह अवश्य जानना चाहता हूँ कि तुम दोनों में से बड़ा भाई कौन है ? यह सुन कर मलयसिंह ने कहा कि यह विजय नामक सज्जन मेरा छोटा भाई नहीं है परन्तु भाई से भी अधिक हितकारी और मेरे प्रिय मित्रों में से एक है। जिसके बिना मेरा जीना भी व्यर्थ है। मलयसिंह से यह अप्रत्याशित उत्तर पा कर राजा आश्चर्यचकित हो गया। इसके बाद राजा अपने महल में आया और प्रात:काल में अपने नित्यकृत्य से निवृत्त हो कर राजा ने मलयसिंह और उसकी स्त्री को विजय सहित वहाँ बुलवाया। उनके आने पर राजा सभा से उठ कर एकान्त में चला गया। वहीं उनको बुलवाया और विजय और मलयसिंह की स्त्री की तपते लोहे के गोले से दाग कर दिव्य परीक्षा ली। यही नहीं उन दोनों को काले सर्प से डसवाया फिर विषपान करवाया पर इन तीनों प्रकार की दिव्य परीक्षा में वे दोनों खरे उतरे। उन दोनों का कुछ नहीं बिगड़ा। वे उसी तरह प्रसन्नचित्त मुस्कराते रहे। तब

राजा को पूरा विश्वास हो गया कि ये दोनों उत्तम चरित्र वाले हैं। राजा ने तब गंभीर समझ वाले मलयसिंह और सद्‌चरित्र विजय सहित मलयसिंह की स्त्री इन तीनों के चरणों पर गिर कर अपने कृत्य के लिए क्षमा माँगते हुए कहा कि हे मलयसिंह! तू तो साक्षात वसिष्ठ है और यह तेरी स्त्री अरुंधती का प्रतिरूप है। फिर राजा ने विजय से कहा कि हे युवक! तू इस देह में जीवन्मुक्त व्यास पुत्र शुकदेव है इसलिए स्वतः शुद्ध है। इतना कह कर राजा ने उन तीनों को सौ-सौ गाँवों की जागीर प्रदान की फिर पश्चाताप की अग्नि में जलते राजा ने उन तीनों को पूरे आदर सहित घर पहुँचाया।

तत्तो इक्ककइस्स दत्तलक्खो पुणो कया वि आहेडरसिओ पच्चे-अपउरपोत्तिआपिट्ठलग्गपइण्णसिंत्र जोहजूहो सयं पि पणट्ठपुत्तिओ समाउलो ओअरीअ आसाउ कस्स वि रुक्खस्स छाहीए निसण्णो उंघणघुम्मिरो पसुत्तो काऊण खेडओहाणं। सेणिआ य तस्स कंतारविअडविसमवणेसु वाइवीहिं विक्खंता पुरं पत्तो भविस्सइ त्ति पट्टणपइट्ठा रायाण मलहंता हालाहलहूणा विअभुअङ्गा णरिन्दवीहिआ परोप्परं परुट्ठा पुहवीसं पेक्खिउं पडिपहं पणट्ठा ताण एक्को वि निवुड़ं न पावीअ पडिमग्गमग्गंताणं। इत्तो पामारराओ वि जामजुए जग्गीअ उट्ठिअ अवरण्हे तरलतक्खं चडिओ पुरपरिसरे पत्तो एक्क मित्थं ढक्किअपलहत्थं पेक्खिअ भूएण भणिअं 'का तं पुत्ति' तीए भणिअं 'नरिंद लुद्धअवहू' निवेण 'हत्थे किमेअं' ताए 'पलं' निवेण 'खामं किं' ताए सहयं ववीमि जइमं अच्चायरापुच्छ से *तुब्भाराइपिअंसुवाहिणियडे गायंति सिद्धंगणा गीअज्झाणवसा चरंति न मआ तेणं पल दुब्बलं।*[१] ति. तक्का लकयउत्ति पच्चुत्ती हिं आहेडिणीए सिलोए संपज्जमाणे चाउरी चारुत्तणचमक्कओ सिंधुलसुओ ताए पच्चक्खरलक्खं अहिलाइं अप्पाहरणाइं तुरअं च तं देऊण जणजणजाणिओ पत्तपरिअणजणो अत्तअन्नसा हरणो पहुपासायं समागओ। अन्नया कालिदासकव्वोत्तारणए दत्तलक्खो कस्सा वि कइस्स कए दत्तपंच लक्खो पुणो वि मअव्वणणो रण्णे एक्कं दलिद्दवुहवम्हणं कट्ठभारं वहमाणं लंघिअणइअं उम्मत्थिअं दट्ठूण तं भोएणं भणि अं किं *पमाणं जलं विप्प* विप्पेण '*जाणुअग्घ णराहिव*' निवेण '*एरिसी किमवत्था*

---

१. तवारिप्रियाश्रुवाहिनी तटे गायंति सिद्धांगना।
गीतध्यानवशाश्चरंति न मृगास्तेन पलं दुर्बलम्॥

ते' विप्पेण *सव्वे तुम्हारिसा ण हि।*[1] त्ति. तदिएण वि मेत्तट्ठाणे दग्घं कहिअ सज्जो संपज्जमाणे पज्जे पउरपसन्नो अंगुलिमुद्दिअं देऊण तस्सं भणिअं सुहअ तुमे इमं दंसाविअ लक्खं मग्गिअव्वो मम भंडाआरिओ त्ति कहीअ णि वो वि लद्धलक्खो पुरम्मि समागओ विप्पो वि पाविआहिआरिणं जाणाविअ पच्चयं मग्गीअ लक्खं तओ।

एक बार राजा भोज अपनी राजसभा में आए एक कवि को एक लाख मुद्राएं दे कर शिकार खेलने गया। जंगल में एक सूअर का पीछा करते हुए वह अपने साथ वाले सवारों से बिछड़ गया। सूअर भी हाथ न आया और राजा थक कर चूर हो गया। वहीं एक सघन वृक्ष की छाया में जा कर विश्राम लेने के लिए बैठा। थोड़ी देर में नींद सताने लगी तो राजा अपनी ढाल का तकिया बना कर वहीं सो गया। राजा के सेवक राजा के घोड़े के पदचिह्न देखते हुए राजा को खोजते रहे पर वे भी अन्त में यह सोचकर कि हो सकता है राजा राजधानी को लौट गए हों वे भी धार नगरी में आ गए। वहाँ राजा को न पा कर वे विषहीन सर्प की तरह उदास हो गए। फिर राजा के भय से आपस में झगड़ते हुए कि तुमने अच्छी तरह नहीं ढूँढ़ा होगा वे वापस जंगल में आ कर राजा को तलाशने लगे। पर राजा उन्हें कहीं नहीं मिला। वे ढूँढ़ते रहे और प्रमार राज भोज अपराह्न दो प्रहर सोने के बाद जाग कर अपने घोड़े पर सवार हो धार नगरी की ओर रवाना हुआ। अपनी राजधानी के समीप पहुँचने पर उसे एक स्त्री नजर आई जो अपने एक हाथ से एक मृत जानवर के मांस को ढके हुए थी। राजा ने उससे पूछा कि तू कौन है बाला! इस पर उसने जवाब दिया कि राजा! मैं अहेड़ी की पत्नी हूँ। राजा ने तब पूछा यह तेरे हाथ में क्या है ? उसने कहाँ मांस है। राजा ने पूछा पर यह मृत जानवर इतना दुर्बल क्यों हैं ? यदि आप सचमुच जानना चाहते हो तो मैं सत्य-सत्य बताऊँ ? राजा के हाँ कहने पर उस स्त्री ने बताया कि हे राजा! तुम्हारे शत्रुओं की स्त्रियों के आँसुओं की बहती हुई नदी के किनारे सिद्धों की स्त्रियाँ गायन करती हैं। उस गायन को सुनने में लगे रहने से मृग अच्छी तरह चरते नहीं है। इसलिए उनका मांस दुर्बल है।

प्रमार राजा भोज अहेड़ी की स्त्री से इस प्रकार का उत्तर सुन कर और

---

1. **प्राकृत दोहा** – किं पमाणं जलं विप्प, जाणु अग्घं साराहिव। ऐरिसी कियवत्था ते, सव्वे तुम्हारिसा ण हि॥
संस्कृत श्लोक में रुपान्तरण – कियमान्यं जलं विप्र जानुदघ्नं नराधिप। ईदृशी किमृवस्था ते सर्वयुष्मादृश न हिं॥

वह भी संस्कृत के श्लोक में निबद्ध। उस स्त्री की इस बुद्धिमता को देख कर राजा बहुत प्रसन्न हुआ और उसने अहेड़ी की स्त्री को उसके श्लोक के प्रत्येक अक्षर पर एक लाख मुद्राओं के हिसाब से इनाम दिया। इसके अतिरिक्त अपने पहने हुए आभूषण और घोड़ा भी प्रदान किया। इतने में राजा को वन में तलाशने गए सारे सेवक सवार भी आ पहुँचे। राजा उनके साथ महल में आया। एक बार राजा भोज ने कवीन्द्र कालिदास को एक लाख मुद्राएं दीं तभी वहाँ दूसरा कवि आ गया उसको पाँच लाख मुद्राओं का पुरस्कार दिया। एक बार शिकार के लिए वन में घूमते हुए राजा को एक दरिद्र ब्राह्मण अपने सिर पर लकड़ियों का गट्ठर उठाए मिला जो अभी नदी पार कर आया था। राजा ने उससे पूछा हे ब्राह्मण! जल कितना गहरा है? ब्राह्मण ने कहा हे राजा! जानु घुटने तक है। राजा ने आगे पूछा तेरी यह दशा क्यों है। ब्राह्मण ने जवाब दिया सभी तुम्हारे जैसे नहीं होते। यहाँ मात्र की जगह दघ्न कहने से शीघ्र ही उत्तम श्लोक बना देख राजा ने प्रसन्न हो कर उसे अपनी अंगूठी खोल कर दी और कहा कि मेरी यह निशानी दिखा कर मेरे कोषपाल से एक लाख मुद्राएँ माँग लेना। इतना कह कर राजा शिकार खेल कर अपने समय पर राजधानी लौटा। उधर वह ब्राह्मण राजा के भंडारी (कोषपाल) के पास आया और अंगूठी दिखा कर एक लाख मुद्राएं माँगी।

अहिआरी वि सिलोआभा सं भणंतं तं मुरुक्खवेसं विक्खीअ अक्खीअ तव मुत्ती लक्खंक यावि ण अरिहइ संपयमाहेडसमसुत्त-सामिअस्स मुद्दिअं चोरिअ आगओ त्ति दढवंधं बंधिअव्वो अम्हेच्च-यजणेहिं सोऊण त्ति विप्पो विसाअविसण्णो रायवारमागमिअ पडिहारमुहेण जाणाविआण लद्धलक्खो णिवेण पुणो वि लक्खजुअलं पत्थसु त्ति पेसिओ तह च्च तेण पट्ठाविओ लक्खत्तयं लेहि त्ति भणिओ पुणो वि पडिप्पेसिओ रायसेवअं सत्थे काऊण पच्चागओ तिण्णि लक्खाइं दह य गइंदे पाविअ गओ, कोसाहिआरिएण वि लेहघरे लेहाविअं तं ति *लक्खं लक्ख उणो लक्खं मत्ता य दस दंतिणो समप्पिअं ति भोएण जाणुदग्घप्पभामण।*

खजांची ने उस श्लोक का अर्थ सुन कर उसके मेले कुचैले वेश में देख कर कहा तेरी सूरत तो मुझे लाख मुद्राएँ पाने वाले के जैसी नहीं लगती। शिकार के दौरान राजा के वन में विश्राम करते समय तू हमारे स्वामी की

अंगूठी चुरा कर ले आया लगता है। इसलिए हम लोगों को तुझे पकड़ कर कैद कर लेना चाहिए। यह सुन कर ब्राह्मण उदास हो राजद्वार पर आया और द्वारपाल के माध्यम से राजा को निवेदन करवाया कि आपके कथनानुसार मुझे मुद्राएँ नहीं मिलीं। राजा ने इस पर उसे कहलवाया कि फिर से जा कर भंडारी से एक लाख मुद्राएँ माँगे। ब्राह्मण तब फिर से कोषपाल के पास गया पर वहाँ से पहले वाला उत्तर सुन कर ब्राह्मण राजा के पास निराश लौटा। इस पर राजा ने कहा कि इस बार जा कर भंडारी से तीन लाख मुद्राएँ माँग। वह वापस खजांची के पास गया पर फिर से वह खाली हाथ लौटा तब राजा ने अपना एक सेवक भेज कर तीन लाख मुद्राएँ और दस हाथी उस ब्राह्मण को दिलवाए। इस घटना का हिसाब लिखते वक्त भंडारी ने अपनी बही में लिखा लक्ष लक्ष लक्ष और दस हाथी भोज राजा ने जानुदघ्न कहने वाले ब्राह्मण को दिलवाए।

इअ कयकज्जं कइआ वि पामारपइं दुवारिओ कयसज्जं विण्णवीअ देव ज्ज का वि सुअदेवणामा कई समागओ वारि ठ्ठाइ त्ति सोऊण वाणो वज्जरिओ तं पि सुअदेवं जाणसि त्ति वाणेण वि बोल्लिअं सुअस्स सूरित्तणे सक्खित्तणसमत्थो कालिदासो च्चिअ नन्नो तओ सो वि साहिओ कालिआसो अहेइ ***सुकइ व्विअयं भूव णिहिले वि महीअले। भववूई सुओ एस वम्मीई तइओ ह वा।*[1]** **इस सुणिअ सीआए वि सलाहिओ मऊरेण वि महत्तणं मुणाविओ आकारिओ सुओ सब्भुट्ठाणमालिंगिओ** ***सुणावीअ कव्वं भोअप्पयावभीईए भाणू मित्तत्तणं गओ। वाडवत्तणमुव्वो वि खणरोइत्तणं तडी।*[2]** **इअ कव्वतुट्ठो मणिपूरिअं कणयकलसं दह य दंतिणो देऊणपुणो वि वीअ पज्जपढणमणं सुअं णाऊण भणिअं भोएण एक्कस्स वि पज्जस्स उत्तारणयं अप्पिउं ण समत्थो हं डुइअस्स कि त्ति।**

एक दिन राजा अपने प्रात:काल के नित्यकर्म से निवृत हो कर सभा में आ कर बैठा कि तभी द्वारपाल ने आ कर निवेदन किया कि हे राजा! आज एक शुकदेव नामक कवि आया है जो द्वार पर है। यह सुन कर राजा ने बाण कवि से पूछा कि क्या तुम शुकदेव कवि को जानते हो? बाण ने प्रत्युत्तर में कहा हे राजा! इस शुकदेव की विद्वता की बराबरी कालिदास कर सकता है

१. सुकविद्वितयं भूप निखिलेपि महीतले।
भवभूति: शुकश्चैष वाल्मीकिस्तृतीयो षवा॥

२. भोज प्रतापभीत्येव भानुर्मित्रत्वं गत:।
वाडवत्वमौर्वोपि क्षणरोचिष्कखं तड़ित्॥

और नहीं भी। तब राजा ने कालिदास से पूछा तो कालिदास ने कहा हे राजा! मैं इस पूरी पृथ्वी पर दो तीन सुकवि मानता हूँ एक भवभूति, दूसरा शुकदेव और तीसरा वाल्मीकि। यह सुन कर राजा ने सीता से पूछा जब उसके द्वारा भी वह कवि सराहा गया। इस क्रम में मयूर ने भी तब शुकदेव की बढ़ाई की तब शुकदेव कवि को दरबार में बुलवाया गया। राजा ने अभ्युत्थान पूर्वक आलिंगन दे कर शुकदेव का स्वागत किया। शुकदेव ने तब कविता सुनाई जिसका भाव इस प्रकार था कि भोज के प्रताप से डर कर मानों सूर्य उसका मित्र हो गया। (सूर्य का एक नाम मित्र भी है) और समुद्र की अग्नि बाडव (ब्राह्मणी) हो गया और बिजली क्षण भर की चमकवाली (क्षणरोचि: बिजली का नाम है) हो गई। राजा ने इस काव्य पर प्रसन्न हो कर शुकदेव को हीरों से भरा हुआ एक स्वर्णकलश और दस हाथी प्रदान किए। शुकदेव जब दूसरा श्लोक कहने को हुआ तब राजा ने कहा कि मैं आपको एक श्लोक का भी पूरा पुरस्कार नहीं दे सका इसलिए दूसरे की तो बात ही क्या है? यह कह कर भोज ने शुकदेव को विदा किया।

इअ कहिअ सुअम्मि पट्ठाविए अन्नो को वि कई गोट्ठिमाकारिओ मेहताप्पयेण थुणइ णिवं पज्जेण तं जहा जं *चिंतामणि कप्परुक्ख सुरगावी हिं न साहिज्जए जं ण च्चेअ परोवयार णिरएहिं थूल सण्हे हिं वि तं मेहेण तए महिं वसुजलेणं सिंचमाणेण दे धारेएण वहंतएण धुरिअं सव्वे जिअंते सई।*[1] त्ति सुणिअ तस्सा वि दत्तवहुत्तलक्खमणुदिण्ण पुणो कोसवसुवंदव्वयवसणिणं विहुँ विक्खीअ अमच्चमउली निवनम्मनिलए खडिआए पज्जेण लेहं लिहिअवंतो तं ति रक्खंति विवयाए सं णिवेण वि सुरयसमूसुएणं कइ वि सविसेसजग्गंतेण मयणवत्तीपयासे खडीलिहिए दीहक्खरे झाऊण वीअं चलणं खड़ीए लिहिअं तं ति *इब्भाणं विवया कओ* कया वि उणो अमच्चेण आगमिअ तत्थ पडिमल्लं पयं पेक्खिअ तइअं पि लिहिअं ति *कया वि दिव्वकोवाउ* तं पेक्खिअ मेइणीमहिंद्दो पुणो वि चउत्थ पयं लिहिअवंतो त्ति *संचिअं पि विणस्सइ।*[2] त्ति पुणो वि पेक्खिअ अमच्चउत्तिमो पाएसु पडिओ मंतुं खमावीअ।

---

१. यच्चिंतामणि कल्पवृक्ष सुरगींर्वीभिर्न साध्यते यन्नेव परोपकार निरते: स्थूलसूक्ष्मैरपि।
तन्मेवे त्वया महीभिव सुजलेन सिंचसानेन धोयेरेण बहता धुरां सर्वं जगच्चेष्टते॥

२. रक्षन्ति विपदर्थं स्वं इभ्यानां विपद: कुत:।
कदापि दैवकोपात् संचितमपि बिनश्यति॥

तभी राजद्वार पर एक अन्य कवि आया उसे जब राजा ने सभा में बुलाया तो उसने एक बड़े श्लोक द्वारा राजा की स्तुति की। उस श्लोक का आशय था – जो काम चिन्तामणि, कल्पवृक्ष और कामधेनु से सिद्ध नहीं होता उसे हे राजा! मेघ के समान पृथ्वी को उत्तम जल से सींचने वाले और राज्य का भार उठाने वाले आप सिद्ध करते हैं। आप से यह सारा संसार जीवित है! राजा ने यह सुन कर उसे भी बहुत सारा द्रव्य इनाम में दिया। राजा की उदारता और वदान्यता से नित्य खाली होते जाते खजाने की चिंता में राजा के प्रधान अमात्य ने राजा के शयनकक्ष की दीवार पर खड़िया से श्लोक का एक चरण लिख दिया कि विपत्ति के लिए धन को रख छोड़ते हैं। जब राजा की इस इबारत पर नजर पड़ी तो उसने मोमबत्ती की रोशनी में खड़िया से बड़े अक्षरों में लिखा जो श्लोक का दूसरा चरण भी था कि धनवानों के विपत्ति कहाँ से हो। थोड़े दिनों बाद अपने लिखे चरण के अगले चरण को वहाँ लिखा देखा तो उसने तीसरा चरण लिख दिया कि कभी देव कोप से विपत्ति आ जाए तो? राजा ने इसका प्रत्युत्तर देते हुए वहीं पर चौथा चरण लिख दिया कि इकट्ठा किया हुआ भी नष्ट हो जाता है। राजा का ऐसा लिखा देख कर अमात्य भोज के चरणों में गिर पड़ा और अपने अपराध की क्षमा माँगी।

एक्कइआ ससयणसुत्तपउद्धो णिवो पसुत्तपिअजणो अलद्धणिद्दो सं विहवं भाऊण वसंततिलअपज्जेण वोल्लिअवंतो तच्चलणत्तयं ति, *इत्थीउ संतहरणी अणु ऊलवग्गो मित्ताण बंधवजणाण य किंकराण* उप्फा लरंघरसिआ सुहया गया वि इअ पाओणपज्जं निम्माणिअ चोत्थ चलणं णिम्माणिउमूसुओ चिंतइ जा ता भंडाआरपइट्ठो दासुद्दिओ चोत्थं चवीअ तं ति *सम्मीलिएसु नयणेसु न किं पि अत्थि*[1] इअ सुणिअ पज्जरिअं पहुणा तं को सि त्ति तेणं च अहयं जइ देहि अहयं अक्खेमि णिवेण च आगच्छ अहयं ते त्ति पयडिओ पडिरोहओ पि सुणीअ देव हंदि हंदि अउत्तो जूअहारिअसव्वासो रित्थत्थी पहुरित्थपत्थपइट्ठो जं जं चोरिउं चिंतेमि तं तं चेरिआदुरिअदरिओ चयंतो चिट्ठेमि ता ताहे पहुणा पाओणपज्जं पडिअं चउत्थ चवणे चिरअंतं चिंतिअ चोत्थं चवीअ तओ सदएण सामिणा देऊण अहयं अहयं आकारिओ आगओ त्ति पयंपणपसन्नेण भोएण भणिअं इमत्तो अ[illegible]इ पुणो वि जूअआरी चोरिअचारी

---

१. स्त्रियः स्वान्तहारिण्यः अनुकूलवर्गः मित्राणां बांधवजनानां च किंकराणां।
उत्फालरंहोरसिका सुहया गजा अपि सम्मीलितेषु नयनेषु व किंचितदप्यति॥

भविस्सइ भवंतो तत्तो उज्झिअ अ्सुं करिस्सं त्ति कहिअ हारिअहणं पसायलक्खं च पच्चप्पीअ पेसिओ पहाए त्ति सुणिअ सइवेण सीसिअं मारिअब्वस्स वि महीमहिंदेण दिज्जइ दव्वं ति तओ सामिणा साहिअं कलाविसेसं विक्खिअ दिण्णं दव्वं एमअं लेहावसु लेहघरे त्ति तेण वि लेहाविअं तत्थ पज्झं तं ति, कलावंतस्स चोरस्स जूए जं हारिअं धणं। पसाएणं च लक्ख पि अहो भोएण अप्पिअं। त्ति. पहाणो वि पुच्छणेण अहिप्पायं पावीअ ।।५ ।।

एक अवसर पर राजा भोज रात्रि में सोये हुए थे पर उन्हें नींद नहीं आ रही थी। आसपास सारे कुटुम्बी नींद में सोये पड़े थे। ऐसे वक्त में राजा ने अपनी संपत्ति पर ध्यान लगाया। कि मेरे पास क्या क्या चीजें है? उन्होंने संस्कृत के वसन्ततिलका छन्द में इसका सुन्दर वर्णन किया जिसका आशय था कि 'मनोहर स्त्रियाँ, अपने चित्तानुसारी मित्र वर्ग, बांधवगण, नौकर चाकरों के साथ मेरे पास तेज गति वाले घोड़े और हाथी भी हैं।' इस प्रकार श्लोक के तीन चरण पूरे कर चौथा चरण का विचार कर रहे थे कि इतने में खजाने में घुसे एक चोर ब्राह्मण ने चतुर्थ चरण पूरा कर दिया। 'आँख मिंचने पर कुछ भी नहीं है।' यह सुन कर राजा ने पूछा तू कौन है। चोर ने कहा कि पहले अभयदान दें तो कहूँ। राजा ने अभय दे कर बुलाय तब वह चोर बोला कि हे राजा! दुर्भाग्य से बड़ा अयोग्य हूँ। जुए में सब कुछ हार जाने के बाद धन की गरज से आप के खजाने में चोरी करने आ घुसा पर जिस किसी वस्तु को चुराना चाहता हूँ कि मन कहता है उसे चुराना पाप है। इसलिए मैं किसी भी चीज को चुरा नहीं पा रहा था कि तभी आपके मुँह से श्लोक के तीन चरण सुने। चौथा चरण जब थोड़ी देर में सुनाई नहीं दिया तो मैंने उसे पूरा कर दिया। अब आपने अभय दे कर मुझे यहाँ बुलाया तो हे स्वामी! आपके समक्ष हाजिर हूँ। भोज ने कहा कि आज से यदि कभी जुआ खेला अथवा चोरी की तो तेरा सिर कलम करवा दूँगा। हाँ, मैं तेरी विद्वता पर प्रसन्न हुआ इसलिए ले यह राशि जो तू जुए में हारा और एक लाख मुद्राएँ तुझे पुरस्कार स्वरूप प्रदान करता हूँ। इनाम दे कर राजा ने चोर को रवाना किया। यह बात सारे लोगों ने सुनी तो कहने लगे कि यह राजा तो मारने योग्य अपराधी को भी द्रव्य देता है। राजा के इस प्रकार चतुराई पूर्वक चोर से चोरी छुड़वाने के कार्य को देख कर भंडारी ने अपनी बही में हिसाब एक श्लोक के रूप में लिखा जिसका आशय था कि चोर के तईं जुए में हारा सब धन और एक

लक्ष इनाम में राजा भोज ने दिया। इस तरह अमात्य ने भी राजा से पूछ कर इनाम देने का अभिप्राय जाना।

इतिश्री वंशभास्करे महाचम्पूके पूर्वायणे चतुर्थ राशौ बीतिहोत्र-चण्डासि बंशवर्णनान्तर्गतप्रामारराजधारेश्वरभूपभोजदेवचरित्रे करङ्कभा-जनकव्यर्थप्रत्यक्षरलक्षदान द्वारागतबिद्वत्कुटुंबश्रवण सिंहलद्वीपभूप-दिव्यमणिषोडशक सहितसपादशत पीलूपदाप्रेषण तद्दिदृक्षुभो-जबहिरागमन काश्मीरकवितण्डुलदेवनार्थपंच पील्वर्पण द्वितीया र्थदंति-दशक दान तृतीयार्थत्रिंश द्वारणवितरण पूरितसमस्यविद्वत्कुटुम्बविप्रा-र्थद्विपदशक दान तत्पत्न्यर्थषोडश मणिसमर्पण तत्तनयार्थसप्त सिन्धु-रविश्राणन तद्दुहित्रर्थभानुमत्याभरणराण तत्स्नुषार्थलीलावतीभूषण-समुत्सर्जन तदनन्तरैकस्वर्णकारार्थतदानीतपद्मरागजटितजात्यकनककल-शप्रत्यर्पण मृगयारममाणव्यापादितवराहदिङ्मूढनृपक्षेत्रपालबालिकाप-द्यापृच्छन तन्नृपकीर्तिकलितकाव्यप्रत्युत्तरपुरपदवीपरिचायन तत्तुष्टधारे-श्वरतदर्थलक्ष मुद्राविश्रणन मार्गमिलितकलितकलमकाव्य विप्रवटु-कार्थसमर्पितसर्वालङ्करणपार्थिवप्राक्पत्तगामन चिरसमागततद्विप्रव-टुकार्थभूयोभूषणसमर्पण खनिलब्धनिधानकलशकवयत्कुलालार्थतन्नि-धिनिपप्रतिवितरण रात्रिसमयपुरपर्यटत्प्राप्तमलयसिंह तत्पत्नी विजय शीलसन्देहप्रत्यागतव्यतीतविभावरीकपार्थिवप्राप्ततत्त्रया कारण रहःकारितदिव्यत्रय ज्ञातशुद्धशीलतत्पादपतितनृपतत्त्रिका र्थग्रामत्रिशती ढौकन तदनन्तरैककव्यर्थदत्तलक्षमृगव्यरसरक्तनष्टघोणिकश्रमश्रान्त-नृपशाखिशैत्यशयन प्रत्या गतपार्तनिकज्ञाताऽप्राप्तप्रभुप्रेक्षणार्थपुनःप्रति-पथप्रसरण प्रबुद्धपुरस्थितपदवीप्राप्तपृष्टपापर्धिपत्नीप्रत्युत्तरपद्यप्रसन्न-प्रभुतदर्थस्वसप्ति भूषण प्रत्यक्षरलक्ष समर्पण तदनन्तरकृतमुद्रालक्ष कालिदासकाव्योत्तारणकपरकविप्रापितपञ्चलक्ष पापर्धिप्रस्थितप्र-भुपद्याप्रतिप्राप्तप्रोल्लङ्घितापगापानीयप्रमाणपृष्टप्रत्युक्तप्रमितिप्रत्ययपर्याय-पटुपण्डितपृथ्वीत्रिपिष्टप्यर्थपंक्ति पीलूपेतलक्षत्रितय वितरण शुकदेवक-व्यर्थमणिसम्भृतकनककलशसमर्पण कृतनृप मेघ तादात्म्याऽपर कव्यर्थवितीर्णबहुलक्षप्रभूप्रीतिप्रस्त्याऽमात्यदानव र्जनपद्यपादलिखन पुनर्लिखन प्रति-लिखन परास्तप्रधानप्रभुपादपतन रात्रिसमयान्तर-सुप्तप्रबुद्धपार्थिवपादो नविरचितवसन्ततिलकवृत्तस्वविभववर्णन स्वको-

शप्रविष्टदस्युद्विजचरमपादपठन तदर्थद्यूतहारितद्रव्य प्रसादलक्ष समर्पण प्रभुप्रतिषिद्धतद्दानप्रधानपात्रसम्प्रदानत्वप्रतिशिक्षणं पञ्चबिंशो मयूख ॥२५॥ आदितश्चतुस्त्रिं-शदुत्तरशततमः ॥१३४॥

इति श्रीवंशभास्कर महाचम्पू के पूर्वायण की चतुर्थराशि में अग्निवंशी चहुवाण वंशवर्णन के अंतर्गत प्रमारराज धारेश्वर राजा भोजदेव के चरित्र में कृपापात्र कवि के लिए प्रत्यक्षर लक्ष रुपए देना, द्वार पर आये हुए पंडित के कुटुंब का सुनना, सिंहलद्वीप के राजा का सोलह दिव्य मणि सहित सवा सौ हाथी भेंट भेजना, उसको देखने की इच्छा से भोज का बाहर आना, कश्मीर के कवि तंडुलदेव के अर्थ पाँच हाथी देना, दूसरे को दस हाथी देना, तीसरे को तीस हाथी देना, समस्या पूर्ण करने वाले पंडित कुटुंबवाले ब्राह्मण को दस हाथी देना, उसकी स्त्री को सोलह मणि देना, उसके बेटे को सात हाथी देना, उसकी बेटी को भानुमती के गहने देना, उसके बेटे की बहू को लीलावती के गहने देना, उसके अनंतर एक सोनार को उसके लाये हुए माणिक से जड़े हुए सुवर्ण कलश का वापस देना, शिकार खेलते हुए सूअर को मारने में दिशा भूलने वाले राजा भोज का खेत की रक्षक स्त्री को मार्ग पूछना, उस (भोज) राजा की कीर्ति से युक्त काव्य से प्रत्युत्तर देने में पुर का मार्ग बतलाना, उससे प्रसन्न हुए भोज का उसको लाख मुद्रा देना, मार्ग में मिले हुए कलम का कांव्य बनाने वाले ब्राह्मण बालक को सब गहने देकर राजा का उससे पहले नगर में आना, देरी से आए हुए उस ब्राह्मण बालक को फिर गहने देना, खोदते मिले हुए खजाने का कलश लाकर कविता करने वाले कुम्हार को वह निधान का घड़ा वापस देना, रात्रि के समय नगर में घूमते मिले हुए मलयसिंह उसकी स्त्री और विजय के शील में संदेह आने से लौटकर रात्रि को व्यतीत कर राजा का उन तीनों को बुलाना, एकांत में की हुई तीन दिव्य परीक्षाओं से जिनका शुद्ध शील जान लिया है। ऐसे उन तीनों के पैरों में पड़कर राजा का उन तीनों के लिए तीन सौ गाँव देना, इसके बाद एक कवि को लक्ष देकर शिकार के रस में रंगे हुए राजा का सूअर के खोजने पर श्रम से थक कर एक वृक्ष की छाया में सोना, पीछे से आये हुए सेना के लोगों का मालूम करने पर मालिक न मिलने से स्वामी को तलाश करने के लिए फिर पगडंडी होकर जाना, जागरूक राजा का पुर को जाने वाली पगडंडी के बीच मिली हुई अहेरिन के प्रत्युत्तर के पद्य (श्लोक) से प्रसन्न

होकर उसको अपना घोड़ा गहने और प्रति अक्षर लक्ष देना, उस पीछे कालिदास को काव्य का लक्ष मुद्रा इनाम देकर दूसरे कवि को पाँच लाख इनाम दिये बाद शिकार को रवाना हुए राजा के मार्ग में आई हुई नदी को उल्लंघन करते समय उसके पानी का प्रमाण पूछने पर मात्र प्रत्यय की जगह दघ्न प्रत्यय पर्याय में कहने वाले चतुर पंडित को दस हाथी सहित तीन लाख देना, शुकदेव कवि को मणियों से भरा हुआ सुवर्ण का घड़ा देना, मेघ की उपमा देकर राजा का वर्णन करने वाले दूसरे कवि को बहुत लक्ष देने पर राजा के कृपापात्र मुख्य अमात्य का दान के वर्जन विषय में श्लोक का चरण लिखना, फिर लिखने पर वापस लिखने से हारे हुए प्रधान का राजा के पैरों में गिरना, रात्रि के समय सोकर जागे हुए राजा का पौण वसंततिलका छंद से अपने वैभव का वर्णन करने पर अपने (राजा के) खजाने में घुसे हुए चोर ब्राह्मण का चौथा चरण कहना, उस चोर को जुए में हारा हुआ धन और लक्ष रुपए इनाम देना, राजा का मना किये हुए उसके दान के प्रधान पात्र को संप्रदान सिखाने का पचीसवाँ मयूख समाप्त हुआ। और आदि से एक सौ चौंतीस मयूख हुए।

प्राकृत भाषा

अचरणगद्यम्

एक्कसिअं आहेडरसिओ अरण्णोणिवुद्देसागएण धनवालकइणा परिचेऊण मग्गमिलिओ भोअभूवालो भणिओ पज्जेण तं जहा ***रिउणो न हणिज्जंति, दठ्ठदंतग्गत्तणा। सइसुद्धतणाहा रा, मारिज्जंति कहं पसू।***[1] **इअ सोऊण कइत्तणपवीणं णाऊण णिवेण पुच्छिअदेसजाइणामेण पिसुणिअं पज्जद्धेण तं जहा,** ***उड्डेंति खं मयगणा कह कोत्थ हेऊ, कोला विकारण-महो किमिलं खणंति।*** **तं पि सुणीअ धणवालो उत्तरद्धं पि सुणीअ तं ति,** ***जाइप्पहाणाणिअभिं ति तवत्थ भीआ, एक्के मयंकमय माइवराह मन्ने।***[2] **इअ कब्बतुट्ठो पट्टणपत्तो पहू धणवालस्स रयणपूरिअं कत्तासरकलसं समप्पीअ त्ति भोअस्स अहो ुभारत्तणं॥१॥**

---

१ रिपुवो न हन्यते दष्टदंताग्रक तृणाः।
स्व विशुद्धतृणाहारा मार्यन्ते कथं पशवः॥

२ उड्डियन्ते खं मृगगणाः कथय कोत्र हेतुः कोला विकारणमहो किमिलां खनन्ति।
जातिप्रधानं निजमिति तवास्त्रभीताः एके मृगांक मगमादि वराह मन्ये॥

एक बार प्रमारराज भोज आखेट के लिए वन में गए। वहाँ राजा से मिलने आए कवि धनपाल ने राजा के मिलने पर रास्ते में ही यह श्लोक सुनाया जिसका आशय था 'आप दाँतों में तृण ले कर आए हुए शत्रुओं को नहीं मारते हो फिर आप केवल तृण खाने वाले पशुओं को कैसे मारते हो।' यह सुनते ही राजा ने उसे अच्छा कवि समझ कर निवास स्थान और जाति पूछी। कवि धनपाल के बताने पर राजा ने आधे श्लोक की समस्या पूर्ति पूछी जिसका अर्थ था कि 'आकाश की ओर मृग किसलिए उड़ते हैं और व्यर्थ भूमि को सूअर क्यों खोदता है?' राजा द्वारा दी गई इस समस्या की तुरन्त पूर्ति करते हुए कवि धनपाल ने कहा 'मृग तो आपके शस्त्रों के भय से डर कर अपनी जाति के मुख्य मृग के पास जाना चाहते हैं अर्थात् चन्द्रमा की गोद में मृग है इसलिए उसके पास जाने हेतु मृग दौड़ते हुए उछलते (उड़ते) हैं। और वराह आदि वराह (वराह अवतार) के पास जाने को पृथ्वी खोदते हैं।' राजा धनपाल की इस सुन्दर समस्यापूर्ति पर राजा बहुत प्रसन्न हुआ और राजधानी में आ कर राजा ने धनपाल को रत्नों से भरा स्वर्णकलश प्रदान किया। आश्चर्य है कि कोई व्यक्ति राजा भोज की तरह उदार भी हो सकता है।

एक्कइआ उच्चआवासआसीणो किंकरीकरव्वयणवाएण विसुस्संतवडीरविलेवणो समज्जसंगयं दामोअरकइं कहीअ को हेऊ तालवेंटवाएणंगरायसोसणम्मि त्ति कण्णे काऊण कहिअं कइण वि जेण पज्जेण जहा, *अम्हं रिवूणं ससणासणाणं, देहीअ दे चंदणओ णिवासं इअ व्व रोसा वयणस्स वाऊ, लेवं पि से साहइ सोससुक्कम्।*' तस्स वि लक्खं समप्पीअ धरे सधरेसो ॥२ ॥

एक अवसर पर प्रमार राजा भोज उच्चासन पर आसीन थे और दासी अपने हाथों राजा को पंखा झल रही थी। पंखे के पवन से चंदनलेप को सूखता हुआ देख कर राजसभा में बैठे दामोदर कवि से राजा ने पूछा कि तालपत्र के वन से चन्दन सूखने का कारण क्या है? राजा के इस प्रश्न की जिज्ञासा को मिटाते हुए कवि दामोदर ने नया श्लोक रच कर सुनाया जिसका

प्राकृत १ अम्हं रिवूर्ण ससणासणाणं देहीअ दे चंदणओ णिवासं।
इअ व्व रोसा वयणस्स वाऊ, लेवं पिसे साहइ सोसुक्कम॥

संस्कृत १ अस्माकं रिपूणां श्वसनाशनानां ददात्योन्सौ चंदनको निवासं।
इतीव रोषाद्व्यजनस्य वायुः लेपप्रपि स साधयति शोषशुष्कम्॥

आशय था कि हे राजा! यह चंदन (वृक्ष) हमारे शत्रु सर्पों को रहने के लिए स्थान देता है इसी क्रोध से मानों पंखे (ताल पत्र से बना) का पवन चन्दन लेप को सुखा देता है। राजा ने प्रत्युत्तर सुन कर दामोदर कवि को एक लाख मुद्राओं का इनाम दिया।

इक्कइआ भूवो भद्दासणभूसिओ वलयवासिणा विण्णाविआ हो देव तवकालधवछाहिं विव वसणं वसाणो वारोवेसिओ आजा णआएसं इच्छइ त्ति जाणिअ जयईजारेण वि जंपिअं पविसावसु तं तओ वेत्तिणा वि अत्थाए आणिओ खे मंडिअमहप्पमेहं वण्णिउं बोल्लिओ दुग्गयदियो वि तोअयतायप्येण वग्जरंतं विहुँ वत्तेण वण्णइ तं जहा सालेएसु सिलायलेसु अचलाभो एषु गड्डेसु दे, सीखंडे सु वहेडएसुअ तहा रित्तेसु पुण्णेसु वि। वासं वारिअसव्वसम्म वरिसंतेणं तए णज्जए णायं अंघइसव्वभोम णणु ते वीसोवआरिव्वयम्। इअ पज्जपसन्नेण पहुणा पामारपदीवेण तस्स वि पच्चक्खरलक्खमप्पिअम्॥३॥

एक बार राजा राजसभा में सिंहासन पर विराजमान थे तब द्वारपाल ने आ कर अर्ज किया कि गर्मी की ऋतु में धौ वृक्ष के समान मैले वस्त्र पहने एक कवि ड्योढी पर बैठा है और दरबार में आने की इजाजत चाहता है। यह सुन कर राजा ने कहा उसे भीतर लाया जाए। इस पर जब द्वारपाल उस कवि को ले कर सभा में आया तब राजा ने उससे आकाश में छाए मेघ का वर्णन करने को कहा तो उस कवि ने मेघ के तात्पर्य को ग्रहण करते हुए राजा का वर्णन श्लोक में इस प्रकार किया। धान के खेतों में शिलाओं पर पर्वतों-गढ़ों में, चंदन-बहेड़ा सहित सारे रीते और भरे हुओं पर समान भाव से बरसता हुआ तू गरजता है। दान करने में सबसे बड़ा तू है तेरा संसारोपकारक व्रत जान लिया। श्लोक के इस आशय को समझ कर प्रमार कुल के दीपक भोज ने उस कवि को भी प्रति अक्षर एक लाख मुद्राओं के हिसाब से पुरस्कार दिया।

एक्कसि अद्धरत्तीए अप्पणो अहिट्ठाणे अट्टमाणो कस्सा वि दुग्गयदियस्स दारम्मि दिट्ठदासू पासट्ठिओ पच्छन्नं पिक्खइ परक्ख

---

१. सालेयेषु शिलातलेषु अचला भोगेषु, गर्त्तेषु तं श्रीखंडेष, विभीतकेषु च यथा रिक्तेषु पूर्णेष्वपि। वर्षं वारिदसर्वसाम्यं वर्षता त्वयानघते ज्ञातं अर्हतिसार्वभौम ननु ते विश्वोपकारि व्रतम्॥

न्दिपउत्तिं ता पबुद्धा तव्वम्हणबहू पुढवीपिट्ठे पलालपत्थरपसुत्तं पइं पज्जेण पज्जरीअ तंजहा, *वातुं गिण्हसु जुण्णनत्तयमिणं वंके बुहुक्खुं सिसुं, पत्थारेण पलालकुट्टिमकलासेज्जाइ सोवावसु। सोऊणं इअ दम्पईण वयणं अन्नप्पलद्धं तओ, सव्वं सोल्लिअ तक्खरो वि तइआ गेहं रुअन्तो गओ।* इअ दुक्खदुहिअस्स गेहं गच्छमाणस्स चोरस्स महासंतावसूसिअमणस्स चित्ते चिंतं चिंतिऊण सामिणा वि सहगंतूण घेत्तूण करं कहिअ महयं पि मलिम्मुओ कया वि पहुपसाएण पत्तेक्ककडओ तुं दयालुं रोविअ दुग्गय-दलिद्ददिओवरि सोल्लिअसव्वासं मुणिअ मिलिओ अप्पेमि इणं आवावं तं मं किंकरीकाऊण गेण्हसु त्ति देऊण पलोट्टंते प हुम्मि पलोट्टिअ दासू वि दयालू तं च्चेअ कडअं पि तस्स च्चिअ दिअस्स दत्तवंतो त्ति मलिम्मुआण मवि अहो परदुक्खकायरत्तणं ।।४।।

एक बार आधी रात के समय अपनी राजधानी में गुप्त वेश में प्रजाजनों के सुख-दुःख को जानने की गरज से घूमते हुए राजा भोज ने एक दरिद्र मनुष्य के दरवाजे पर एक चोर को देख कर दीवार की ओट ली। वहीं से राजा उस चोर जैसे संदिग्ध व्यक्ति की चेष्टाओं को ध्यानपूर्वक देखने लगा। इतने में गृहस्वामिनी ब्राह्मण स्त्री ने जाग कर पास ही जमीन पर पुआल बिछा कर सोये हए अपने पति से श्लोक में कहा उसका आशय था कि जीर्ण चिथड़े वाले भूखे बालक को अपने पास लो और पुआल के बिछौने पर सुला दो। घर के भीतर स्त्री-पुरुष के इस वार्तालाप को सुन कर वह चोर जो दरवाजे पर खड़ा था और दूसरी जगह से कुछ चुरा कर लाया था। वह चुराया हुआ माल उस दुःखी ब्राह्मण के घर के सामने छोड़ कर रोता हुआ अपने घर रवाना हुआ। इस प्रकार दारिद्र्य से दुःखित ब्राह्मण के घर में घुसने से दुःखितचित्त चोर की पर दुखकातरता देख कर राजा भी उसके साथ हो लिया और थोड़ा आगे जा कर उसका हाथ पकड़ कर कहने लगा कि मैं भी चोर हूँ। तुम जो इतने दयालु हो कि उस दरिद्र, दुखी और दीन ब्राह्मण को अपना सब कुछ दे आए हो। यह देख कर मैं तुम्हारे पास आया हूँ। एक बार मेरे

संस्कृत १ पातुंग्रहणीष्व जीर्णनक्तकमिमं स्वांके बुभुक्षं, शिशुं।
प्रस्तारेण पलाल कुट्टियकला शय्यायां स्वापय।
श्रुत्वा इति दंपत्यो: बचनं अन्यप्रलब्धं ततो सर्वं।
प्रक्षिप्य तस्करोपि तस्या गेहूं मदनगत: ॥

स्वामी की कृपा से मैंने यह एक कड़ा पाया था उसे मैं तुम्हें देना चाहता हूँ, कृपा कर इसे स्वीकार करो। इतना कह कर राजा ने अपने हाथ का कड़ा (स्वर्णनिर्मित) खोल कर उस चोर को दे दिया और वहाँ से चल कर अपने महल को आया। पीछे से वह चोर यह कड़ा ले जाकर उस दीन ब्राह्मण को दे आया। चोर भी दूसरे के दुःख को देख कर इतना कातर हो सकता है यह एक आश्चर्य की बात है राजा ऐसा सोचता हुआ सो गया।

तओ पहाए सो च्चिअ दलिद्ददिओ सामिणा समाकारिओ तव्वलयव्वएण महग्घवसण भूसण भूसिओ दिठ्ठो पुट्टो अ पहुणा अहो विप्प झो रत्तीए तारिसदालिद्ददुक्खिओ तुमं पत्थरत्थं पला लपूलं पि पिहुलं न पावीअ गोसम्मि गेहाउ आगओ एरिसाइं विभूसण वसणा इं वसाणो त्ति कत्तो लद्धाइं तए दुग्गयदिएण इअ सोऊण वलयवयन्नवट्टं विप्पेण वि [illegible]ज्जेण पज्जरिअं महामेहरूवएण तं जहा, '*भेएहिं जह मच्छ कच्छव कुलीरे हिं पि सुक्कं सरे, चिक्खिल्ले वि गए तवंतसमए मेहेण जं चेट्टिअं। तो ताहे च्चिअ तत्थ कुञ्जरकुलं कुम्भग्गकल्लोलियं, कीलन्तं परिपिज्जइ त्ति पहुणा जं पुच्छिअं जुम्पिअम्।*'[1] इअ सुणिअ पुणो वि पच्चक्ख रलक्खं समप्पीअ तस्स णिवो तंच तक्खरं आकारिअ काहीअ महड्डं मालवमहीमिहिरो त्ति अहो उआरत्तणं भोअभूवइणो ॥५ ॥

तदनन्तर सवेरे उठते ही राजा ने उस ब्राह्मण को अपनी सभा में बुला भेजा। उधर वह ब्राह्मण चोर द्वारा प्रदत्त कड़े को बेच कर उसके बदले में अच्छे वस्त्र और कुछ आभूषण ले आया। वह राजसभा में महँगे वस्त्र और कुछ गहने पहने हुए आया। उसे देखते ही राजा ने पूछा हे ब्राह्मण! रात को तो तू इतना कंगाल था कि तेरे बिछाने के लिए पूरा पुआल भी नहीं था और अभी ऐसे नये कपड़े और गहने पहने आया है? यह सब कुछ तुझ दरिद्र ने कहाँ से और कैसे पाया? तब उस ब्राह्मण ने मेघ का रूपक बना कर एक श्लोक में कहा जिसका अर्थ था जिस तालाब के (कीचड़ तक) सूख जाने से मेंढ़क, मछलियाँ, कछुए और केकड़े भी छोड़ कर चले गए उसी तालाब पर मेघ ने ऐसी कृपा की कि अब हाथियों का दल अपनी सूंडों से कलोल करता हुआ उसी में जल पीता है। स्वामी ने जो पूछा उसका यही उत्तर है। ब्राह्मण का ऐसा कवित्व भरा उत्तर सुन कर राजा ने श्लोक के प्रत्येक अक्षर के हिसाब

संस्कृत १ भेकैः यत्र मत्स्यकच्छपकुलीरे : अपि शुष्कं सरसि चिकिलेगते तावति समये मेघेन यच्चेष्टितं। तत्रैव तत्स्थकुंजरकुलं कुम्भाग्रकल्लोलितं क्रीड़त् परिपिवति इति प्रभुणा यत्पृष्टं तज्जल्पितम्॥

से एक लाख मुद्राओं का इनाम दिया। इसके बाद उस चोर को बुला कर मालवा प्रदेश के सूर्य रूप राजा भोज ने बहुत-सा धन दिया। ऐसी आश्चर्यजनिक उदारता थी राजा भोज की।

अन्नया केण वि महादलिद्देण विण्हुणामकइणा समागमिअ सहाएसीसिअो सिलोओ सो जहा, '*रे धारेस धरेसधुज्जगणणे लेत्तुं खडीखण्डयं, तो पुव्वं पउमासणेण लिहिआ तन्नामलेहा ण्णहे। सा होहीअ सुरावया पुण तओ तुम्हारिसाभावओ, वत्तं चारु हुवीअ हो हरवहूताओ तुसारायलो।*'[१] इअ सिलोअं सोऊण सोमणा हसुकइणा सीसिअं सलाहणिज्जं सुकइस्स कव्वं परमिमेण दालिद्दुहिएण कया वि कुह विन हि रायसहा-समिक्खिअा अत्तो गामि ल्लगोट्ठीगरिठ्ठं रे त्ति संबोहणं तिसामिणा वि सुणिअ साहिओ सोमहो सिलोएण सो जहा, *अणवज्जं सुपज्जं किं, कलाकुच्छंकरि जए। बिक्खुहत्थे अहो उच्छू, कया विकडुओ कहम्।*'[२] इअ सीसिअ सामिणा संते विसाहिअ मस्स कइस्स सं सो समप्पइस्सं ति संठावीअ समज्जा समाविआ तओ नीसरंता वाणाइणा विण्हुकइं जाणावीअ जहा सोमणाहसूइअसण्णाए सामिणा सुकइस्स पसाएण पोप्फलं पि पच्चप्पिअं ण हि त्ति हाहा खलखलत्तणम्॥६॥

एक अवसर पर राज दरबार में महादरिद्र विष्णु नामक कवि ने आकर राजा को यह श्लोक सुनाया जिसका अर्थ था कि 'रे धारेश! पद्मासन ब्रह्मा ने पहले समय में राजाओं में मुख्यों की गणना करने की खड़िया ले कर आकाश में तुम्हारे नाम की इबारत लिखी वह आकाश गंगा बनी फिर तुम्हारे समान अन्य राजा नहीं होने से वह खड़िया गिरा दी उससे पार्वती का पिता सुन्दर हिमालय पर्वत बना।' इस श्लोक को सुन कर राजसभा में उपस्थित सोमनाथ कवि ने कहा कि कवि की कविता तो प्रशंसनीय है परन्तु कवि ने अपनी दरिद्रता के कारण चूँकि राजसभा नहीं देखी इसलिए गँवारों की गोष्ठी में कहने योग्य रे का संबोधन किया। राजा ने विष्णु कवि के श्लोक को सुन कर कवि सोमनाथ से श्लोक में कहा जिसका आशय था कि उत्तम श्लोक

१. रे धारेश धरेशधुर्यगणने गृहीत्वा खटी खंडकं तत्पूर्व पद्मासनेन लिखिता त्वन्नामलेखा नभसि।
सा भूता सुरापगा पुनः ततः त्वादृशाभावतः व्यक्तं चारू बभूव भो हरवधूतातस्तुषाराचलः॥

२. अनवद्यं सुपद्यं किं कलाकुत्सां कार्यते।
भिक्षुहस्ते अहो इक्षुः कदापि कटुकः कथम्॥

की चतुराई की निंदा क्यों करते हो? भिक्षु के हाथ में यदि गन्ना हो तो वह कड़वा नहीं होता। राजा ने यह कह कर मन में सोचा कि इस कवि को कल सवेरे अच्छासा पुरस्कार दूँगा और अपने इस निश्चय के साथ सभा समाप्त की। सभा से उठ कर बाहर निकलते कवि पंडितों ने तब विष्णु कवि के कान भरे कि इस सोमनाथ के चुगली करने के कारण तुम्हारे जैसे उत्तम कवि को राजा ने प्रसन्न हो कर सुपारी तक नहीं दी। इस दुष्ट सोमनाथ की तनिक दुष्टता तो देखो।

सो वि सोऊण संसयणं समागओ तओ निम्माणिअ नवपज्जपत्तं सोमनाहपंडिअपत्थे पट्ठाविअं तम्मि जं लिहिअं तेण वि पढिअं तं ति, ***'एएसु तिन्दुतरुभाभरिएसु भो भो, दावानलेण दलिएसु दुमेसु दुट्ठ अव्वो न पेल्लसि पओहर पाणिअं तो, मा पेल्ल पेल्लसि पुणो कह विज्जुलिं तम।'***[1] **इअ सिलोअं सुणिऊण सोमनोहेण णिअणिहिलमणि कयण भूसण वसण हय गय पमुहं सव्वं पि सईअं सजायं समप्पिअं विण्हुकइस्स सो सो च्चिअ एरिससंपत्तिसमड्ढो घरुद्देसेण धाराए नयरीए निक्खसंतो विण्हू कयाहेडकीलणेण पच्चागएण पामारपहुणा वि पेक्खिओ पुच्छिओ अ कहसु सुकइसिरमणे मए तव भोअणमित्तं पि न दत्तं तह वि हु तव कत्तो पत्ता एरिससंपत्ति त्ति सुणिअ सीसिअं सुकइणा वि सामिअस्स सब्भसूरिणा सोमणाहेण सव्वा संपि मम समप्पिअं तत्तो एरिसीए इद्धीए अलंकयो गच्छेमि गेहं इअ आकण्णिअ इलाईसेण तस्स झो पढिअपज्जस्स पच्चक्खरलक्खं पच्चप्पिअ पट्ठाविओ पत्थं सयं पि संसउहं समागमिअ सोमणाहं समाकारिअ तेण वि जं जं विण्हुस्स वितरिअं तं तं सव्वं पि तस्स दत्तवंतो त्ति अहो उआरत्तणं भोअभूवस्स॥७॥**

वह विष्णु कवि बाण आदि कवियों की ऐसी बातें सुन कर मन ही मन जलता-कुढ़ता अपने डेरे पर आया। यहाँ आ कर उसने एक नया श्लोक लिखा और उसे पंडित सोमनाथ के पास भेजा। उसमें लिखे श्लोक को सोमनाथ ने पढ़ा, उसका आशय था कि 'हे मेघ! इस तिंदुक वृक्ष की गर्मी से भरे हुए और दावाग्नि से जले हुए वृक्षों पर जल न बरसाए तो भले ही मत बरसा परन्तु दुष्ट कम से कम बिजली तो मत गिरा।' पत्र में लिखे श्लोक को

---

[1] एतेषु तिन्दुतरुभी भरितेषु भो भो दावानलेन दलितेषु द्रुमेषु दुष्ट हंत।
न प्रेरयसि पयोधर पानीयं तन्मा प्रेरयसि पुनः कथमपि विद्युतं ताम्॥

पढ़ते ही सोमनाथ कवि ने अपने सारे रत्न, स्वार्णाभूषण, वस्त्र, घोड़े और हाथी आदि जो कुछ उसके पास था वह सारा विष्णु कवि के घर भेज दिया। इसे ले कर जब विष्णु कवि धारानगरी से जा रहा था कि रास्ते में उसे राजा भोज शिकार से लौटते समय मिला। राजा ने उसे देखते ही पहचान लिया और पूछा हे सुकवे! मैंने तो तुझे भोजन का भी नहीं पूछा अर्थात् कुछ नहीं दिया फिर तुम्हारे पास यह सम्पत्ति कहाँ से आ गई? यह सुन कर प्रत्युत्तर में विष्णु कवि बोला हे राजन्! आपकी सभा के पंडित सोमनाथ ने अपनी सारी सम्पत्ति मुझे समर्पित कर दी। इससे यह समृद्धि ले कर आपकी नगरी से अपने घर जा रहा हूँ। यह सुन कर राजा उसे अपने साथ लिवा लाया और कल सभा में सुनाए उसके श्लोक के प्रत्येक अक्षर पर एक लाख मुद्राओं के हिसाब से इनाम दे कर विदा किया। इसके बाद सभा में पंडित सोमनाथ को बुला कर जो कुछ उसने विष्णु कवि को दिया था उसकी भरपाई कर दी। ऐसी विलक्षण उदारता थी राजा भोज की।

एवं अणुदिणदिज्जमाणवसुवुंदव्वएण रित्तेसु संसचिअकोसेसु अमच्चेण संबोहिअदारवालेण साहाविओ सामी साहिओ दुवारि एणं पि जहा हे नाह पहाणामच्चेण विण्णविअं नाह निहिलं पि कोसजायं बहुत्तवित्तव्वएण अत्थि सुन्नसव्वासं तम्हा जह आणा होइ तह करिज्जइ त्ति मं च मुणाविअं तए वि अत्थ आगओ को वि कई ण णिवेअणिज्जो णिवस्स अत्तो मए वि समा गयसुकइणो न निवेइज्जं त्ति महाकई वि एक्को अणुअहं आगमिअ रायद्दारे चिट्ठइ तस्स वि अणिवेअणावराहो सोढव्वो सामिणा इअ सुणिअ भूवेण भणिअं पविसावसु सिग्घं सुकइं तं तओ वेत्तिणा वेसिओ उवइट्ठो बत्तेण वज्जरइ तं जहा '*सीअंतेण वि सन्तयं णहयले अव्वो अणालम्बणं, चञ्चुं फाडिअ चायएण चइअं हुत्तं चिरं चिन्तिअम्। ऊसारो कुहतो वि तोअय तए विन्दू वि वुट्ठो न तो, मा विन्दुं विअरेसु देसु सवणे गज्जं गरीरं हरे।*'[१] सोउण सिलोअमेअं सामिणा संते सोहिअं हद्धी मम मुणंतमडयस्स पत्थं पाविअ संतयसंकडसिक्कयसोसिआ सलिलसुन्नसरसुक्कसहर सधम्माणो सूरीणो सीअंति इअ आलोइअ तस्स सुअइअस्स सइ असव्वाहरणाइं समप्पिअवंतो

---

१. सीदतापि सततं नभस्थले हन्त अनालम्बनं चंचुंविस्तार्य चातकेन चकितं भूतं चिरं चिन्तितम।
आसारः कुतोपि तोयद त्वया बिन्दुरपि वृष्टः नतु मा बिन्दुं विकर देहि श्रवणे गर्जं गभीरं हरे॥

त्ति ऊ इलेसस्स उआरत्तणम्॥८॥

इस तरह नित्य प्रति बहुत सारा द्रव्य देने से जब राजा का खजाना खाली हो गया तो प्रधान आमात्य ने द्वारपाल के हाथों राजा से निवेदन करवाया। द्वारपाल ने जा कर राजा से कहा हे नाथ! खर्च की अधिकता के कारण खजाने में अब कुछ नहीं बचा सो अब भविष्य के लिए आपका क्या आदेश है? मुझे भी यह हिदायत दे दी गई है कि अब कोई कवि आए तो उसकी खबर राजा तक नहीं पहुँचाई जाए। इसलिए मैंने भी नए कवियों की खबर आप तक पहुँचाना बन्द कर दिया है जो मेरा अपराध क्षमा किया जाए। यह सुन कर राजा भोज ने द्वारपाल को आज्ञा दी कि तुरन्त नये आए कवि को सभा में भेजा जाए। इजाजत पा कर वह नया कवि सभा में आ कर बैठा फिर उसने एक श्लोक पढ़ा जिसका अर्थ था कि 'कष्ट पाते हुए चातक पक्षी ने आकाश मे निरालंब चोंच फाड़ कर आश्चर्य से बहुत देर तक विचार किया कि हे मेघ! वर्षा की झड़ी तो आगे की बात यहाँ तो एक बूंद तक नसीब नहीं।' बूंद भी न दे तो न दे पर अपना कर्णप्रिय गर्जन तो सुना। श्लोक सुनते ही राजा को पसन्द आया। राजा ने मन ही मन सोचा कि मुझे धिक्कार है क्योंकि मैं ही इस राज्य का जीवन्मृत मेघ हूँ। मेरे राज्य में आकर भी यदि निरंतर उसांसों से सूखे हुए जल शून्य तालाब की मछली की भांति पंडित लोग कष्ट पाते हैं। तो यह अच्छी बात नहीं। यह सोच कर राजा ने अपने पहने हुए सारे आभूषण उतार कर उस कवि को दे दिए। यह थी उदारता राजा भोज की।

तओ भूवेण भंडाआरिणं भणिअं सुन्नं मम कोसजायं जइ तो मह पुव्वपुरिसेहिं संचिअकोसेसु संपेक्खिअ इक्कतो आणेसु सुमणिसज्ज-सुवण्णकलससहासं ति सुणिअ तेण वि तहा कए पडिहारेण पयंपिअं देव कम्हारेसुंतो समागओ मुउकुंद कई चिट्ठइ दारे त्ति णिसामिअ णरिंदेण समज्जाए समाकारिओ जंपीअ पज्जेण जहा, '*अहिक्खाअण्णवे तुब्भं, वुडुंतेण णहेण दे। चंदक्कबिंबवाएण, लद्धं लाऊइजामलम्*'[१] इमेण वि पज्जेण पच्चक्खरलक्खं लहिअं तहा वि सो मुउकुंदो महालोहमो हमारिअमई

संस्कृत १ अभिख्यार्णवे तव मज्जता नभसा ते।
चन्द्रार्कबिम्बव्याजेन लब्धमलाबूयुग्मकम्।

मुरुक्खो सव्वाइ वि सहाए सलाहसुन्नीकयसंखावंतसंतो सब्भत्तणे संतो वि असंतो पुणो वि पज्जेण वज्जरीअ वराओ हद्धी जहा '*वारिअ वप्पीहेण, अब्भत्थण उज्झिआइं अंसूइम्। ते तेत्तिआइं विन्दूइं वि चञ्चूए ण चत्ताइम।*'[१] इमीए वि अज्जाए सुणाविआए सदयहियो पुणो वि पहू एक्क संय अव्वाणे अप्पीअ महादलिद्दो स पेसिओ पत्थं अन्नेसु वि कईसु अप्पप्पपत्थं पत्तेसु आतवत्तधारओ भणीअ भूवं पज्जेण जहा '*भो धारेस भवंतओ सयलभूभूवालजचूडामणे, रत्तीए वि रमेउ रायअइरे छत्तेण हु च्छाइओ। जं मा होउ तवासविक्खणवसा वीडाविलक्खो विहू, मा एसा वि अरुंहई भयवई सीलव्वए वीहिआ।*'[२] इमेण वि पज्जेण सईअच्छत्तधारअस्स वि दत्तपच्चक्खरलक्खो अन्नया सहाए समाकारिअस्स कुंडिणपुरवासिणो गोवालदेवस्स भूवालो कहिए वि कव्वे णवरि अणप्पंतो गोवालेण मेहतायप्पेण मुणाविओ महीसो पज्जं च जहा '*तं तुम मेह खणेणं पि, करसे सायरं सरम् किन्तु जाओगणो तत्तो, पत्तो यं माससंसयम्।*'[३] इअ सोऊण सईअसव्वा हरणाइं सोलहय सिंधुरे से सूरिस्स समप्पीअ सिंधुलसुओ ॥९ ॥

तदनन्तर राजा भोज ने अपने खजांची को बुला कर कहा कि यदि मेरा खजाना खाली हो गया है तो तुम मेरे पूर्वजों द्वारा संचित एक खजाने से रत्नों से भरे एक हजार कलश निकाल लो। यह सुन कर कोषपाल ने वैसा ही किया। इसी समय द्वारपाल ने आ कर निवेदन किया कि हे राजन्! कहीं से कोई मुचुकुंद नामक कवि आया है और द्वार पर खड़ा है। वह आपके दर्शन चाहता है। राजा ने तुरन्त कहा उसे भीतर आने दो। सभा में पहुँचते ही मचुकुंद ने एक श्लोक सुनाया जिसका तात्पर्य था कि 'हे भोज! तुम्हारे यश रूपी समुद्र में डूबते हुए आकाश को सूर्य और चन्द्र ये दो तूंबे (जो पानी में तैरते है) मिल गए जिससे यह आकाश डूबने से बच गया।' सुन कर राजा ने उसी प्रकार श्लोक के प्रति अक्षर लाख मुद्राएँ इनायत की। इस पर भी उस

संस्कृत १ वारिद दात्यूहेन अभ्यर्थन उज्झितान्य श्रूणि।
तावतन्मिता विन्दवः अपि चञ्च्वां न त्यक्तानि।
२ भो धारेश भवतः सकल भू भूपाल चूडामणे रात्रावपिरन्तुं राजाजिरे छत्रेण खलुच्छादितः।
यन्मा भवतु तवास्यवीक्षणवशाद्व्रीडाविलक्षो विधुः मा एषापि अरुंधती भगवती शीलव्यये भीता॥
३. त्वं तु मेघ क्षणेनापि कुरुषे सागरं सरः।
किंतु यादोगणस्ततः प्राप्तोयं श्वाससंशयम्॥

कवि मुचुकुंद का लोभ समाप्त नहीं हुआ तो उसने मूर्खता से भी सभा में पंडितों की निंदा करता हुआ सा, स्वयं सभ्य हो कर भी मूर्ख की तरह फिर से, एक आर्या श्लोक पढ़ा (धिक्कार है ऐसी लालचपूर्ण मूर्खता को) जिसका अर्थ कुछ इस प्रकार था कि हे मेघ! चातक के जल माँगने में जितने आँसू की बूंदें गिरीं, हा उतनी बूंदें भी चातक की चोंच में न पड़ सकीं। इसको सुन कर भी दयालु राजा ने मुचुकुंद को एक सौ घोड़े और प्रदान कर उसे अपने घर के लिए विदा किया। फिर दूसरे कवि भी अपने-अपने निवास को गए। इसी समय राजा को अकेले पा कर राजा के सिर पर छत्र रखने वाले छड़ीदार ने राजा के समक्ष यह एक श्लोक कहा जिसका आशय है कि सम्पूर्ण पृथ्वी के राजाओं में चूड़ामणि स्वरूप हे भोज राजा! आप राजमहल के भीतर रात्रि में भी छत्र धारण किया करें क्योंकि छत्र की छाया में नहीं रहने पर आपका मुख देख कर कहीं चन्द्रमा लज्जित हो उदास न हो जाए और यह जो भगवती अरुंधती के नाम वाला तारा है वह आपको देख लेगा तो भगवती अरुंधती दुश्चरित्र की कलंकिनी न हो जाए। इस श्लोक को सुन कर राजा ने अपने छड़ीदार को भी वैसा ही प्रति अक्षर एक लाख मुद्राओं का इनाम दिया। एक बार राजसभा में कुण्डिलपुरवासी गोपाल कवि ने एक श्लोक सुनाया। इसे सुन कर राजा ने जब कुछ भी देने की आज्ञा नहीं दी तो गोपाल कवि ने उलाहने का एक मेघ के रूपक वाला दूसरा श्लोक पढ़ा जिसका तात्पर्य था 'हे मेघ! तू तो क्षणभर में ही तालाब को समुद्र बना देता है फिर भी बिना जल के कष्ट पाने वाली मछलियों का प्राणसंकट तो ज्यों का त्यों है।' इसे सुन कर सिंधुल पुत्र राजा भोज ने गोपाल कवि को अपने सारे आभूषण खोल कर दिए और साथ में सोलह हाथी भी प्रदान किए।

अन्नया रत्तीए पुरे विहरंतो कुह वि सुत्तपबुद्धाण परोप्परपुच्छिअ गोत्तनामाण भक्खर सायल्ल नामाण पुहवीसपत्थणाए पत्ताण संलावं सुणइ सयं ताहे भक्खरेण भणिअं पज्जं जहा, *नो पीलन्ति बुहुक्खुणो खु सिसुणो नो जज्जरी गग्गरी, नो चुल्ली वि किसाणुलेसरहिआ काडङ्गरो संथरो। इत्थीए अइजज्जराई चलणीए गुप्फणे पत्थिआ, सूइं पच्चइ पाडिओसिपमया छिच्छी कु णंती जहा,*' इमं सिलोअं सणंतेण निवेण

संस्कृत १ न पीडयन्ति बुभुक्षवः खुल, शिशवः नो जर्जरा गर्गरी,
नो चुल्ली अपि कृशानुलेशरहिता काडंगरः संस्तर।
स्त्रिया अति जर्जरायाः कंचुक्या गुम्फने पार्थिता सूर्चौ,
प्रत्यपि प्रतिवंशिनः प्रमदा छी छी कुर्वती यथ ॥१॥

पायडीहूएण सव्वाहरणाइं समप्पिअ भक्खरो वि पेसिओ पत्थं पहाए सहाए एक्कसालापुरवासी सायल्लो वि समाकारिओ पज्जेण पज्जरइ तं जहा *भू उद्धरिआ दलिओ, देसिउरो वलिसिरी समक्कंता। एक्कम्मि जम्मणे तइ, जम्मणतिअए हु जं कयं हुरिणा।*[1] इमेण सिलोएण से सायल्लस्स वि समप्पिअ लक्ख अन्नया गंगातीरनिवासिणीएबुड्डीबम्हणीए समज्जास-मागयाए पज्जेण पज्जरिअं जहा *पयावअग्गी तवऊ अपुब्बो, जग्गेइ धारेस धरावईसु। जम्मि प्पइट्ठे परपत्थिवाणं दंतेसु उग्गंति तणाइं जुद्धे।*[2] इमेण पज्जेण पसन्नो समप्पीअ ताए वि रयणपूरिअं निवं निवो त्ति. अहो उआरत्तणं भोअस्स॥१०॥

एक बार गुप्तवेश में रात्रि को शहर में घूमते हुए राजा को एक स्थान पर सो कर जगे हुए दो ब्राह्मण आपस में एक दूसरे से गोत्र पूछते हुए मिले। राजा ने भास्कर और शाकल्य नामक दोनों ब्राह्मणों की बातचीत सुनी। लेटे हुए भास्कर ने श्लोक पढ़ा जिसका आशय था कि 'बालक भूख से बिलबिलाते हैं इससे मुझे अधिक कष्ट नहीं होता, घड़ा फूटा हुआ है चूल्हा ठंडा है और भूसे का बिछौना है इसका भी मुझे विशेष कष्ट नहीं। मेरे लिए इससे भी अधिक कष्टदायी बात यह है कि जब गृहिणी अपनी फटी कञ्चुकी को सीने के लिए सुई माँगने जाती है और पड़ोसी की स्त्री छी: छी: कर नाक भौंह सिकोड़ती है।' यह श्लोक सुन कर राजा ने चुपचाप अपने गहने उतारे और भास्कर को दे कर उसे अपने घर भेजा। दूसरे दिन प्रात:काल अपनी सभा में शिलापुरवासी दूसरे ब्राह्मण शाकल्य को बुलवाया। उसने भी एक श्लोक सुनाया जिसका आशय था कि 'पृथ्वी का उद्धार किया, शत्रुओं का हृदय जलाया और बलि (बलवान राजाओं तथा बलि नामक दैत्य) की लक्ष्मी हरण की। तू ने एक ही जन्म में वह सब किया जिसे करने को विष्णु भगवान ने तीन अवतार लिये।' शाकल्य को राजा ने उसके श्लोक के लिए एक लाख मुद्राएँ दीं। इसी तरह एक बार गंगा के तट पर बसने वाली एक वृद्ध ब्राह्मण स्त्री ने राज सभा में आकर यह श्लोक सुनाया जिसका अर्थ था कि 'हे धारेश! अहो आपका प्रताप रूप अग्नि दूसरे राजाओं पर कैसा विलक्षण प्रभाव पैदा करता है कि जिसके प्रवेश से युद्ध समय में उन शत्रु राजाओं के

संस्कृत १ भूरुद्धृता दलितं द्वेष्युर: बलिश्री: समाक्रान्ता।
एकास्मिन जन्मनि त्वया जन्मत्रितये खलु यत्कृतं हरिणा॥१॥
२ प्रतापाग्निस्तवाहो अपूर्व: जागर्त्ति धारेश धरापतिषु।
यस्मिन प्रविष्टे परपार्थिवानां दन्तेषु रोहन्ति तृणानि युद्धे॥२॥

अपने दांतों में घास उग आता है।' इस श्लोक को सुन कर राजा भोज ने उस वृद्ध ब्राह्मण स्त्री को रत्नों से भरा कलश प्रदान किया। राजा भोज की वदान्यता और उदारता दोनों धन्य है।

इति श्रीवंशभास्करे महाचम्पूके पूर्वायणे चतुर्थ राशौ वीतिहोत्र-चण्डासिबंशवर्णनान्तर्गतधाराधीशभोजभूपचरित्रे धनपाल कव्यर्थरत्न-कलशप्रदान दामोदरकव्यर्थलक्षमुद्रावितरण तदन्यकव्यर्थप्रत्यक्षरल-क्षप्रदान तस्करस्वाहृतलोप्त्रदरिद्रद्विजपस्त्यप्रक्षेपण तत्तुष्टनृपचौरार्थ-स्ववलयविश्राणन तच्चौर तद्द्विजार्थतदावापार्पण प्रातराकारिततद्द्वि-जार्थ पद्य प्रसन्नपार्थिव वप्रत्यक्षरलक्षदान प्रतिग्राहितमहैश्वर्यतत्त-स्करतास्कर्यतिरस्करण सोमनाथस्वदूषितकाव्यविष्णुकव्यर्थसर्वस्व-समर्पण गृहजिगमिषुविष्णु-कव्यर्थपूर्वश्रावितपद्यप्रसन्ननृपप्रत्यक्षरलक्ष-समुत्सर्जन सोमनाथार्थसमर्पितसमानसर्वस्वसमर्पण नृपामात्यप्रतिदिन-वर्द्धमानश्चानरिक्ती भूतस्वसञ्चितकोशविज्ञापन तदनन्तरसमागतैक-सुकव्यर्थसर्वस्वकीयाभरणसमर्पण नृपपूर्वपुरुषसञ्चितकोशसुमणिसज्ज-सुवर्णकलशसहस्त्र समाहरण प्राप्तप्रत्यक्षरलक्षमहादरिद्रमुचुकन्दपुनः-प्रार्थितनृपतदर्थशता श्वाविश्राणन छत्रवाहकपद्यप्रसन्ननृपतदर्थप्रत्यक्षर-लक्षार्पण कुण्डिनपुरागतगोपालकव्यर्थषोडश सिन्धुरहसितसर्वाभरण-समर्पण रात्रिचर्यारममाणश्रुतभास्करपद्याभिप्रायनृपतदर्थपुनः सर्वा-भरणसमुत्सर्जन शाकल्य कव्यर्थलक्षमुद्रावितरण वृद्धब्राह्मण्यर्थ-रत्ननिचितनिपप्रदान षड्विंशो मयूखः ॥२६॥ आदितः पञ्चत्रि-ंशदुत्तरशततमः ॥१३५॥

श्रीवंशभास्कर महाचंपू के पूवार्यण की चौथी राशि में अग्निवंश चहुवान वंशवर्णन के अंतर्गत धारापति भोजराज के चरित्र में धनपाल कवि के लिए रत्नकलश का देना, दामोदर कवि के लिए लाख रुपए देना, उससे अन्य कवि को प्रति अक्षर लक्ष देना, चोर का अपना लाया हुआ चोरी का धन दरिद्री ब्राह्मण को देकर नगर भेजना, उससे प्रसन्न राजा का चोर के लिए अपना कड़ा देना, उस चोर का उस ब्राह्मण के लिए उस इनाम का देना, सवेरे बुलाये हुए उस ब्राह्मण के लिए श्लोक से प्रसन्न राजा का प्रति अक्षर लक्ष देना, चोर को बाद में बड़ा ऐश्वर्य देकर उसका चोरी करना मिटाना, सोमनाथ का आपने जिसके काव्य को दूषित किया है ऐसे विष्णु कवि के लिए सर्वस्व देना, घर जाने की इच्छा वाले विष्णु कवि को पहले सुनाये हुए

श्लोक से प्रसन्न हो कर राजा का प्रति अक्षर लक्ष देना, सोमनाथ के लिये जितना धन दिया था उसके बराबर धन देकर सर्वस्व देना, राजा के मंत्री का प्रतिदिन बढ़े हुए दान से अपने संचय किये हुए खजाने का खाली होना निवेदन करना, उस पीछे आये हुए एक सुकवि को अपने सब गहने देना, राजा के पूर्वजों के संचय किये हुए खजाने में से उत्तम मणियों से भरे हुए सुवर्ण के हजार कलश लाना, जिसने प्रति अक्षर लक्ष पालिया है ऐसे महादरिद्री मुचुकुंद को फिर प्रार्थना करने पर उसको राजा का सौ घोड़े देना, छत्र धारण करने वाले के श्लोक से प्रसन्न होकर राजा का उसको प्रति अक्षर लक्ष देना, कुंडिनपुर से आये हुए गोपाल कवि को सोलह हाथी और दैदीप्यमान सब गहने देना, शाकल्य कवि को लाख रुपये देना, वृद्ध ब्राह्मणी को रत्नों से भरा घड़ा देने का छब्बीसवाँ मयूख समाप्त हुआ। और आदि से एक सौ पैंतीस मयूख हुए।

प्रायो ब्रजदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

अचरणगद्यम्

एक समय कोऊ पोतबाह नैं बिज्ञप्ति करी अहो देव सिंहलद्वीप मैं एक अंबिका के मंदिर राजकन्या अर्चन कों आवत तानैं मो सों मालव की महिमाजुत प्रभु की प्रसंसा सुनि उपदा कों चंदन कों खंड दयो जाके गंध करि जिततित सों सर्प दोरे आत सो यह श्रीखंड खंड लै आयो ताहि प्रभु की परिचर्या मैं राखिये अैसैं कहि देत भयो ताहू कों प्रामारराज एक लक्ष मुद्रा दीनी ॥१॥

एक बार किसी पोतवाहक केवट ने आ कर प्रमारराज भोज से निवेदन किया कि हे देव! मुझे सिंहलद्वीप (श्रीलंका) में एक देवी मंदिर पर अर्चना करने आई राजकुमारी मिली। उसने जब मेरे मुँह से मालवा प्रदेश के महिमावान राजा की प्रशंसा सुनी तो उसने मुझे उपहार स्वरूप चन्दन के काष्ठ का एक खंड दिया जिसकी सुगंध से यहाँ वहाँ के सर्प दौड़े चले आते हैं। मैं वही चन्दन का खंड अपने साथ लाया हूँ और उसे आप स्वामी की सेवा में समर्पित करना चाहता हूँ यह कह कर उस केवट ने श्रीखंड (चन्दन) का खंड राजा को भेंट किया। इस पर प्रसन्न हो कर प्रमारराज ने उसे एक लाख मुद्राओं का इनाम दिया।

याही प्रमान दामोदर कवि कों दई रु कोऊ वर्धकी की बधू नैं आय संस्कृत पद्य करि अरज कीनी हे देव पातालबासी बलि नीचो

कियो तामैं आश्चर्य नहीं परंतु स्वर्गबासी कल्पद्रुम नीचो कियो या उदारता कों कोन कहि सकैं अैसे अभिप्राय को काव्य सुनि ताहू कों लक्ष मुद्रा देत भयो ॥२॥

इसी प्रकार दामोदर कवि को राजा ने दस हजार मुद्राएँ दान में दी। एक बार एक सुथार की स्त्री ने राज सभा में आ कर संस्कृत भाषा में स्वरचित पद्य सुना कर निवेदन किया कि हे राजा! पाताललोक को बलि ने नीचा किया इसमें आश्चर्य की क्या बात? आश्चर्य की बात तो यह है कि आपने स्वर्गलोक के कल्पवृक्ष को नीचा किया (झुकाया) आपकी इस उदारता का वर्णन कौन कर सकता है? ऐसे अभिप्राय वाले काव्य को सुन कर राजा भोज ने उस सुथारिन को एक लाख मुद्राएँ प्रदान कीं।

काहू उद्यान मैं मिले मल्लिनाथ कवि कों अपनों आवाप दयो जिते मैं एक मांत्रिक पंडित आई कही हे देव पूर्बसागर के समीपवर्ती उत्कलदेव सों आपकी उदारता जानि मंत्रविद्या को चमत्कार दिखाइबे कों चल्यो आयो सो जा मूर्ख के मस्तक पर कर करौं सो सोही सरस्वती के सर्बस्व करि महासमर्थ सूरि होई, अैसी सुनि नृप नैं काहू ग्राम सों महामूर्ख दासी बुलाइ ताके सिर पैं हाथ दिवायो ताके अनंतर ही किंकरी नैं कही जाकी आज्ञा होई ताही को बर्णन करूं सो सुनि नृपनें खड्ग दिखायो ताही को बर्णन शुद्ध संस्कृत करि कर्यो सो काव्य सुनत ही महाचमत्कार मानि वा मांत्रिक बिप्र कों सुमणिसज्ज सुवर्ण कलसन को पंचक अप्यो ॥३॥

एक अवसर पर राजा ने अनायास ही एक उद्यान में मिल गए कवि मल्लिनाथ को अपने हाथ का कङ्कण (कड़ा) उतार कर दे दिया। इसी समय वहाँ एक मांत्रिक (मंत्रवादी) पंडित आया। उसने आ कर राजा से कहा हे देव! पूर्व सागर के समीपवर्ती उत्कलदेव (ओडिसा के राजा) से आपकी उदारता के चर्चे सुन कर अपनी मंत्रविद्या का चमत्कार दिखाने आपकी सेवा में हाजिर हुआ हूँ। मैं किसी वज्रमूर्ख के सिर पर हाथ रख दूँ तो वह मूर्ख भी सरस्वती का सर्वस्व पा कर समर्थ पंडित बन जाए। उस मांत्रिक से यह सुन कर उसकी परीक्षा करने की गरज से पास ही एक गाँव से एक अनपढ़ दासी को बुलवाया और उसके सिर पर मांत्रिक का हाथ रखवाया। इसके तुरन्त बाद ही उस दासी ने निवेदन किया कि अब प्रभु की आज्ञा हो उस का वर्णन करूँ। यह सुनते ही राजा ने अपने हाथ के खड्ग की ओर संकेत किया।

अनपढ़ दासी ने तत्काल शुद्ध संस्कृत भाषा में खड़ग पर काव्य रच कर सुना दिया। राजा ने सुनते ही मांत्रिक के इस चमत्कार को देख कर उस मांत्रिक ब्राह्मण को पाँच रत्नों से सज्जित स्वर्ण कलश प्रदान किए।

अैसें ही महेस्वर कामदेव सीतभीरू सांभवदेव हारीत भवभूति जयदेव हरिवर्म प्रमुख अनेक ही कवि आये तिनकों बहुत ही लक्ष दै कैं केही कमनीय कविता की माधुरी के मधु को पान कानचसक करि करत भयो।।४।।

ऐसे ही महेश्वर, कामदेव, सीतभीरू, सांभवदेव, हारीत, भवभूति,. जयदेव, हरिवर्मा आदि अनेक कवि इस राजा की राजसभा में समय-समय पर आए। इनको लाखों मुद्राओं का पुरस्कार दे कर राजा ने काव्य माधुरी के मधु का पान अपने कानों की चुस्की से किया।

भवभूति कालिदास के पद्यहू तुला मैं तुलाये तहां कालिदास को काव्य ऊंचो रहत अकस्मात ही वाके ऊपर पुंडरीक पुष्कर को पराग पर्‍यो तासौं गरिष्ट भयो देखि भवभूतिहू का लिदास की स्तुति कर सिधायो।।५।।

इस राजा ने भवभूति और कालिदास के पद्यों की पांडुलिपि को तुला पर तुलवाया। इसमें कालिदास का काव्य ऊँचा गया (अर्थात् तुला पर ओछा उतरा) कि अकस्मात् इसके ऊपर श्वेत कमल का पराग जा गिरा, इससे वह काव्य भारी तुल गया। यह देख कर भवभूति वहाँ से कालिदास की स्तुति कर चलता बना।

एक समय श्रीसैल सों कोऊ महा बीतराग ब्रह्मचारी आयो ताके पयन परि नृप नैं गार्हस्थ्र्य धारन करावन की प्रभूत ही प्रार्थना करी सो न मानी रु कह्यो हे नृप हमकों कछु देबे की इच्छा है तो तेरे सभ्य सूरिन समेत कासीपुरी पूगिजैबो चाहत है जातैं बाग्बिलास के आलंबन करि पंथ को परिश्रम न जानैं सो सुनत ही नृप नैं सर्बही स्वकीय कवि पंडितन कों ब्रह्मचारी के संग दये ते याकों सुख संबाद मैं राखि सिवपुरी पहुँचाइबे कों गये।।६।।

एक बार हिमालय पर्वत से चल कर कोई वीतराग ब्रह्मचारी सन्यासी धारा नगरी में आया। राजा ने उसके चरणों में गिर कर उससे गृहस्थी होने की

प्रभूत प्रार्थना की पर उसने राजा की एक न मानी और कहा कि हे राजा! यदि तुम्हें हमें कुछ देने की ही इच्छा है तो इतना भर दे कि तू अपने इन पंडित कवियों के साथ मुझे काशी भिजवा दे। इन विद्वानों के संग साथ में इनसे कथा-वार्ता सुनने के आलंबन से मार्ग का श्रम नहीं महसूस होगा अर्थात् राह सुगमता से कट जाएगी। ब्रह्मचारी के मुँह से यह सुनते ही राजा ने अपने सभी कवि पंडितों को आदेश दिया कि वे महात्मा के साथ जाएँ। राजाज्ञा पा कर धारानगरी की राजसभा के सारे पंडित उस साधु को काशी तक पहुँचाने गए।

अरु कालिदास ब्रह्मचारी के संग न गयो तासों आज्ञाभंग की अवज्ञा अवनीस कै आई जानि कालिदास धारा सों निकसि राजा अल्लाल के आश्रित जाइ रह्यो तहां हू काव्य के प्रत्यक्षर लक्ष लक्ष पाई समस्त ही सूरिबर्ग को सिरोमनि रह्यो परंतु ताके प्रच्छन्न कढि जैबे करि धारा धीस कों तो याकी उत्कंठा अैसी भई कि कोऊ भाग्यपदार्थ कों प्रीतिपूर्वक न भोगत भयो।।७।।

पर एक कालिदास उस ब्रह्मचारी के साथ नहीं गया। राजा को अपनी आज्ञा की अवज्ञा की खबर पड़ेगी ही इस भय को सोच कर कालिदास धारानगरी से खिसक लिया और जा कर अल्लाल राजा का आश्रित हो गया। कालिदास को वहाँ भी अपने काव्य के प्रति अक्षर पर लाख-लाख मुद्राओं का पुरस्कार मिलने लगा। वह इस नये राज्य में भी वहाँ के सारे पंडितों का शिरोमणि बन गया पर कालिदास के इस तरह छिप कर भाग जाने से धारानगरी के राजा भोज की उससे मिलने की उत्कंठा इतनी बढ़ी कि उसके मारे उसे कोई भी भोग्यवस्तु रुचिकर नहीं लगती थी।

ताके अनंतर गुर्जरदेस[१] सों महाबद महाबदान्य माघनामा बिप्र सदा सर्बस्व दान करि दुर्भिक्ष मैं दरिद्रीभूत प्रबुद्ध पत्नी समेत धारापुर के समीप आई उतर्‌यो अरु अपनी अंगना को आगमन जनाइबे कों नृप के निकट भेजत भयो सो सुनत ही सभा मैं बुलाई प्रमारराज नैं प्रनाम करि कही प्रातः काल ही पधारिबे सों पंथ मैं परिश्रम पायो यातैं आतुरता जानि परी अब आत्मज पैं आज्ञा कीजिये तब माघ पत्नी नैं प्रभात ही को

१. माघ पंडित गुजरात प्रान्त के किनारे पर बसे राजस्थान के जालौर का निवासी था इसलिए सुकवि ने गुजरात देश से लिखा है। कदाचित् उनके लिखने का आशय यह रहा होगा कि वह गुजरात की दिशा से आया। सं.

बर्णन करि कही याहू समय मैं अर्क के उदय करि कमलचक्र चक्रवाकन कै प्रमोद इंदु के अस्तकरि कुमुदबन कौशिकन कै दुक्ख है यातैं सदासुखी कोऊ न जानों अैसे अभिप्राय के पद्य मैं चमत्कार पाई माघपत्नी कों मुद्रा को लक्ष त्रय तो महिमानी के अर्थ दयो अरु कह्यो दूजे दिन आपके स्थान अैहों ॥८॥

इसके थोड़े दिनों बाद गुजरात देश से बड़ा वक्ता, (महामति) महावदान्य माघ नामक एक पंडित अपने राज्य में पड़े महादुर्भिक्ष के समय अपना सर्वस्व दान कर दरिद्री बना, अपनी विदुषी पत्नी सहित धारानगरी के समीप आ उतरा। उसने अपनी पत्नी को अग्रिम रूप से राजा के पास यह कहने के लिए भेजा कि आपकी नगरी में पंडित माघ आए हैं। राजा ने विदुषी महिला का आना सुनते ही अविलम्ब अपनी राजसभा में बुलवाया। आने पर राजा ने उस महिला को प्रणाम निवेदन कर कहा कि सवेरे-सवेरे ही आपने यहाँ तक आ कर मार्ग का परिश्रम पाया जिससे कोई शीघ्र ही का कार्य आ पड़ा लगता है। अब आप अपने पुत्र के समान मुझ राजा को आज्ञा कीजिए कि मैं आपकी क्या सेवा करूँ? यह सुनते ही माघ की पत्नी ने प्रभात का ही वर्णन करते कहा कि इसी समय में सूर्य के उदय होने से कमल पुष्पों के समूह और चक्रवाक पक्षियों के आनन्द (हर्ष) है और चन्द्रमा के अस्त हो जाने से रात्रिविकासी कमल पुष्पों (कुमुदनी) सहित उलूक पक्षियों को दुःख है। इससे हे राजा! सदैव किसी को सुखी मत जानो। इस आशय का पद्य निर्मित कर सुनाया। पद्य में उक्ति चमत्कार को देख कर राजा ने तुरन्त उसे तीन लाख का पुरस्कार तो मात्र उसकी मेहमानवाजी के निमित्त प्रदान किया और कहा कल मैं आपके निवास (डेरे) पर आऊँगा।

यहै सुनि सीख लैकैं माघ पत्नी राजद्वार के बाहिर आई तहां सों ही अनेक अर्थीजन माघ को औदार्य सुनि सुनि उत्सक हे तिन्ह माघ ही के गुन बर्णन करि करि प्रार्थना करी तिनकों तीन ही लाख दैकैं रीते हाथन ही डेरे पर पहुँची तथापि जिनकों न मिल्यो अैसे औरहू अनेक अर्थीजन महादुर्भिक्ष करि दुर्गत संग ही आये ते सब महादरिद्रभाव देखि कपर्दक हू इनके पासि न जानि विमुख ही फिरि गये॥९॥

माघ की पत्नी राजा के यहाँ से विदा ले कर राजद्वार से बाहर आई। उसे वहाँ अनेक याचना करने वाले मिले जो माघ की उदारता का बखान सुन

कर उत्साहित थे। उन्होंने माघ का यशवर्णन कर याचना की इस पर माघ की पत्नी ने राजा द्वारा प्रदत्त तीन लाख मुद्राएँ उन याचकों में बांट दी और स्वयं रीते हाथों अपने डेरे पर आई। यहाँ पर जिन याचकों को कुछ नहीं मिला ऐसे कई याचक, दरिद्री माघ की भार्या के पीछे-पीछे माघ के डेरे पर आ पहुँचे पर वहाँ यह जान कर कि माघ के पास तो कौड़ी भी नहीं है सारे उससे विमुख हो वहाँ से खाली हाथ जाने लगे।

तिन मांहिसों एक कह्यो हे महामेघ माघ संसार के समस्त गिरि नगर बन उपबन नदी नद कासार कूप पूरन करि रीतो भयो तोहू बलि करन दधीच की सोभा लहि संतोष धारि हमारे बिमुख जाइबे सों मन मैं दुक्ख न मानों॥१०॥

जाते-जाते उनमें से एक याचक ने कहा हे महामेघ माघ! संसार के सारे नगर, बन, उपवन, नदी, नद, तालाब और कूपों को तू भरते-भरते रीत गया है तब भी राजा बलि, दानी कर्ण और दधीचि की कांति लिये तू संतोष धारण कर हमारे इस प्रकार विमुख हो कर जाने का अपने मन में दुःख मत कर।

यहै सुनि माघ हू पत्नी सौं कह्यो मांगिबे मैं लज्जा अपघात मैं नरक यातैं प्रान ही कढि चलैं तो भली है दरिद्रभाव को संताप तो संतोष बारिकरि बुझायो परंतु जाचकन की आसा के बिघात को अंतर्दाह मृत्यु जैसे मित्र बिना मिटै नहीं ऐसी कहत याही महादुक्ख सों माघ पंडित के प्रान कढि गये ऐसी किंबदंतीहू सुनी अरु लिखीहु जानी याही तैं आश्चर्यकारी अनेक बात प्रबंध मैं डारी सो न भई तो मिथ्याकथन को दोस पहिले प्रबंधन मैं लिखिबेवारेन कों लगहु॥११॥

यह सुनते ही पंडित माघ ने अपनी पत्नी से कहा कि माँगने में लज्जा है और आत्महत्या करने में नरक की प्राप्ति है। इससे अच्छा तो यह है कि मेरे प्राण ही निकल जाएँ। मैंने अपने दारिद्र्य के संताप को तो जस तस संतोष के जल से बुझा लिया पर याचकों की प्रत्याशा के विघात (नाश) की जलन तो मृत्यु के बिना मिटती नहीं लगती। इतना कह कर इसी महादुःख के आघात से माघ पंडित के प्राण छूट गए। मैंने (ग्रंथकर्ता) ऐसी किंवदन्ती सुनी इसलिए लिख दिया है। इस तरह की कई आश्चर्यजनक बातें जो इस ग्रंथ में

लिखी हैं यदि वे सत्य में घटित न हुई हों तो इसका दोष मुझसे पहले के प्रबन्ध कताओं (प्रबन्ध काव्य लिखने वाले) को लगेगा, मुझे नहीं।

अैसें माघ को मृत्यु सुनि विप्र संतक समेत नरेस हू बाहन बिहीन उहां आयो तासों माघ पत्नी कह्यो माघ को मृत्यु इहां भयो सो अपनैं घर ही भयो यातैं अब नरेस उत्तरकर्म अच्छो होई तो अच्छी है अैसी कहि नर्मदा के निकट लै जाई चिता पैं चढि आपहू सहगमन करत भई॥१२॥

ऐसे वदान्य पंडित माघ की मृत्यु का समाचार सुन कर राजा अपने सौ विद्वान पंडितों के साथ पैदल चल कर वहाँ आया। राजा को देख कर माघ की पत्नी ने कहा कि हे राजा! पंडित माघ की मृत्यु इस राह में हुई ऐसा लोगों को प्रतीत न हो तो अच्छा है। ऐसा लगना चाहिए कि पंडित ने अपनी देह अपने घर में त्यागी है। इसके लिए पंडित का क्रियाकर्म अच्छे ढंग से होना चाहिए। इतना कह कर माघ की पत्नी ने नर्मदा के तट पर अपने पति का दाह कर्म करने के लिए चिता बनवाई और स्वयं भी उसमें बैठ कर उसने पति के साथ सहगमन किया।

अरु भूप हू औरस पुत्र के प्रमान दाहादिक अखिल ही उत्तरक्रिया करत भयो तदनंतर दुर्भिक्ष के दरिद्रन की बुंबन करि विमनीभूत कोऊ कवि पंडितन कों अपनें पास न पाय प्रतिदिन दुर्बल भाव करि पांडुर प्रतिपदा की चंद्रलेखा समान भयो॥१३॥

और राजा भोज ने भी पंडित माघ के औरस पुत्र की भांति सारे दाहकर्म और उत्तर क्रिया अपने हाथों संपन्न की तदनन्तर दुर्भिक्ष के दरिद्रों की तरह कूक कर उदास हो गया। इसके अतिरिक्त अपने कवि पंडितों का साहचर्य न पा कर दिन-दिन राजा शुक्ल पक्ष की प्रथमा तिथि के चन्द्रमा की क्षीण रेखा के समान होता गया।

यह जानि सचिवन अधीस को आसय लहि प्रच्छन्न ही पत्र लिखि अल्लाल नृप के नगर सों कालिदास बुलायो इतनैं मैं ब्रह्मचारी कों बाराणसी पुरी पहुँचाइ औरहू अपनें आश्रित सुकविन को समाज आयो॥१४॥

उसके अमात्यों ने राजा की उदासी और दुर्बलता का सबब जान गुप्त रूप से पत्र भेज कर अल्लाल राजा के नगर से कालिदास को बुलाया। इसी

समय में ब्रह्मचारी को काशी पहुंचाने गए सारे कवि-पंडित भी लौट आए।

नरेसहू कालिदास को अपनें उद्यान में आयो जानि प्रीतिपूर्वक समुख जाई सत्कार करि संग लायो तदनंतर कोऊ सायांत्रिक नैं आइ एक मदनपट्टिका दिखाई कारन पूछैं कही हे देव में केही स्वापतेय संभृत पोतन समेत द्वीपांतर सों अर्णव के अंस को उल्लंघि आवत आवन में चतुर्थास सेस हो तहां कोऊ कारन करि मेरो एक बहित्र बूडि गयो ताके चो तर्फ ही जिहाजन कों लगाई लंगर डारि मरजीवा डारे सो जितितित करि बहित्र कों काढि लाये॥१५॥

कालिदास को अपने उद्यान में आया सुन कर राजा ने प्रीतिपूर्वक सम्मुख जा कर सत्कार स्वागत किया फिर कालिदास को अपने साथ ले कर अपने महल को वापस आया। थोड़े दिनों बाद एक पोतवणिक जो जहाजों से व्यापार करता था राज दरबार में आया और उसने एक मोमपट्टिका दिखाई। राजा ने जब पूछा कि यह क्या है। तो उसने प्रत्युत्तर में बताया कि हे देव! मैं अपने जहाजी बेड़े को माल असबाब से भर कर एक द्वीप पार कर अगली समुद्री खाड़ी को लांघ कर आगे बढ़ रहा था। इस समुद्री खाड़ी का चतुर्थांश पार करना शेष था कि अज्ञात कारणवश मेरा एक जहाज वहाँ डूब गया। मैंने उस ठोर के चारों ओर लंगर डाल कर अपने जहाज खड़े किए फिर गोताखोरों को डाला वे किसी तरह तल में यहाँ-वहाँ से सारा सामान निकाल लाए।

तिननैं कही जल के तल पैं कोऊ देवालय सो दीस्यो तामें फसि गयो बहित्र निकास्यो वा देवालय के कोऊ प्रदेश मैं एक बहुत बड़े खुदे अक्षर की सिला जानी मैं तो अैसी सुनत ही मदन पट्टिका दैदै कैं बहुत ही मरजीवा बहोरि हु डारे तिनमें कोई या पट्टिका कों सिला सों चिपाइ लायो तामैं प्रकटतो यह पुष्पिताग्रा को पूर्वार्ध उघर्यो पायो अैसी सुनतही प्रमोद पाई आप ही पट्टिका लैकैं पढत भयो सो बिबुधबानी मय पद्यार्थ यह - इह खलु विषमः पुराकृतानां, विलसति जन्तुषु कर्मणां विपाकः। या पद्यार्द्ध कों पढ़त ही नरेन्द्र वा सिला मैं श्रीहनुमंतकृत श्रीरघुनाथ चरित्र मंडित महानाटक खुद्यो जानि वा सांयात्रिक कों कोटि मुद्रा दैकैं अपनें कविन तैं याको उत्तरार्द्ध बनावत भयो ताहू सों तुष्टि न जानि

दक्खिन समुद्र के तीर जाई वाही के अनुमत करि उहां ही पहुँचि बड़े प्रयत्न करि मदनपट्टिका दै दैकैं सहस्त्रन मरजीवा डारे ते अनेकबार अनेक पट्टिकान मैं अनेक वृत उघारि लाये तिनकों जितमित जोरि कैं हनुमान्नाष्टकनाम प्रबंध धाराधीस भोज ही पुहवी मैं प्रकट कियो अरु कोऊ कहत वह समग्र ही सिला निकसाई आनी तामैं केही पद्य समग्र खुदे जानैं अरु वाही पूर्बार्द्ध समेत वाही पुष्पिताग्रा को उत्तरार्द्धहू कोऊ पट्टिका मैं अवच्छिन्न उघर्‌यो जान्यों सो इहिं रीति -

इह खलु विषमः पुराकृतानां, विलसति जन्तुषु कर्मणां विपाकः।
हरिशिरसि शिरांसि यानि रेजुः, शिवशिव तानि लुठन्ति गृध्रपादैं॥

ऐसैं यह उत्तरार्द्ध मिलिबे तैं अपनें उपाय को फल पाई राजाभोज अैसे अैसे अनेक आनंद में आपु बितावत भयो॥१६॥

उन गोताखोरों ने पानी से बाहर आ कर मुझे बताया कि गहरे पानी के तले उन्हें मंदिर जैसी कोई चीज नजर आई। हमारा डूबा हुआ जहाज उसी मंदिर में फंसा हुआ था जिसे निकाला इसी मंदिर के एक भाग में उन्हें एक बड़ी चट्टान नजर आई जिस पर बड़े-बड़े अक्षरों में कोई इबारत खुदी हुई थी। यह सुनते ही मैंने कई गोताखोरों को मोम से बनी पट्टिकाएँ दे कर फिर से पानी में उतारा। कई बार भेजा तब उनमें से गोताखोर एक इस पट्टिका को उस चट्टान से चिपंका कर (उन अक्षरों की छाप इस पर ले कर) लाया। इसमें प्रकट रूप से तो पुष्पिताग्रा नामक छन्द के एक श्लोक का पूर्वार्ध उघड़ा हुआ लगता है राजा ने यह सुनते ही तुरन्त जिज्ञासावश उस पट्टिका को हाथ में ले कर पढ़ा। उस पट्टिका पर संस्कृत भाषा में उघड़ा हुआ पद्यांश इस प्रकार था इह खलु विषमः पुराकृतानां विलसति जन्तुषु कर्मणा विपाकः। इस पद्यांश को पढंते ही राजा ने जान लिया कि हो न हो उस पानी वाली चट्टान पर हनुमान कृत *श्री रघुना चरित्र* नामक नाटक अवकीर्ण है। इस पर राजा ने उस पोतवणिक को एक करोड़ मुद्राएं प्रदान की। फिर अपने कवि पंडितों से कहा कि इस श्लोक का उतरार्द्ध रच कर बताओ। कई तरह से कवियों ने समस्यापूर्ति की पर राजा एक भी उतरार्द्ध से सन्तुष्ट नहीं हुआ तब राजा उसी पोतवाहक की सहायता से दक्षिण दिशा में उसी समुद्री खाड़ी पर गया। वहाँ जा कर राजा भोज ने हजारों गोताखोरों को मोम पट्टिकाएँ दे कर पानी में

उतारा। जो अनेक बार कई पट्टिकाओं पर कुछ छन्द उघाड़ कर लाए। उनको तब राजा ने जैसे तैसे कर क्रमबद्ध करवाया और अन्ततः *हनुमानाष्ट* नामक प्रबंध को धारानगरी के उस विद्वान राजा भोज ने पृथ्वी पर प्रसिद्ध किया। कोई यह भी कहते हैं कि राजा ने सारी चट्टानों को पानी से निकलवाया जिन पर कई छन्द अवकीर्ण थे। इनमें से एक चट्टान पर पूर्व में मिले पद्यांश का उतरार्द्ध भी खुदा हुआ मिला। इस पूरे पद्य का आशय इस प्रकार था कि 'इस संसार में निश्चय ही पूर्वजन्म के किये हुए कर्मों का फल प्राणियों में बड़ा विषम रूप से दिखाई देता है। जो मस्तक (रावण के) महादेव के सिर पर शोभा देते थे वही सिर शिव! शिव!! गिद्धों के पैरों तले पड़े हैं।'

इस तरह पूर्व में मिले पद्यांश का उतरार्द्ध मिल जाने से राजा को अपने किये उपायों का फल पाने का हर्ष हुआ। प्रमारराज भोज इस प्रकार के कई हर्षों से डूबी आयु बिताता रहा।

अैसें चंडासिराज पृथ्वीपाल के समय महाबुध महाउदार मालवेंद्र धारापुरी को अधीस प्रामारराज भोज भयो अरु नरेस पृथ्वीपाल को तनूज राजकुमार सैन्यपाल हू सस्त्र सास्त्र प्रमुख सर्ब विद्या को संग्रह करि किसोरवय पाई कोऊ समय मातुलगृह चित्रकूट गयो ॥१७॥

ऐसे चहुवानराज पृथ्वीपाल के समय में महापंडित, अत्यन्त उदार मालवा प्रदेश का स्वामी और धारा नगरी का अधिपति प्रमार राजा भोज हुआ। इस राजा पृथ्वीपाल का पुत्र राजकुमार सैन्यपाल शस्त्र और शास्त्र दोनों की विद्या प्राप्त कर बचपन में एक बार अपने ननिहाल चित्तौड़गढ़ गया।

तहां आपुनें मातुल निर्भय को पुत्र किरणादित्य जाकों कृष्ण देव हू कहैं तास हित आखेट क्रीड़ा मैं रमत कृष्ण को कलंब सिंह पै सच्चो न जानि वाही इभारि को कट्टार सों कदन करि कृष्णदेव सों कही सच्ची सस्त्रविद्या होती तो प्रामार जनसूर को मध्यमपुत्र सिंहधुल मातुलके लये मंडू रु दसपुर द्वै ही दुर्ग क्यों छुराइ लेतो परंतु बीरविद्या को बल नहीं यातैं सीखिबे को सामर्थ्य होइ तो मैं सिखाऊं अैसी सुनि किरणादित्य कही सिखाईबै में समर्थ हो सोही पैले की पोली प्राशन करैं यह सुनत ही कृष्ण के केश पकरि स्वकीय सायक के भल्ल सों पंच शिख करि अपनें

दुर्ग आसेर आयो ॥१८॥

वहाँ अपने मामा निर्भय के पुत्र किरणादित्य जिसका अवर नाम कृष्णदेव भी था के कहे अनुसार आखेट क्रीड़ा करने गया। शिकार के वक्त एक सिंह पर चलाया गया कृष्णदेव का तीर जब निशाने पर नहीं लगा तो तत्काल ही राजकुमार सैन्यपाल ने उसी सिंह को अपनी कटार से चीर डाला। इसके बाद सैन्यपाल ने अपने ममेरे भाई कृष्णदेव से कहा कि यदि सच्ची शस्त्र विद्या सीखी होती तो प्रमार जनसूर के मध्यम पुत्र सिंधुल ने अपने क्षेत्र मांडू और दशपुर के दुर्ग यों ही आसानी से नहीं छीन लिये होते। तुम में वीरों की विद्या का बल नहीं। यदि सीखने की सामर्थ्य हो तो मैं सिखाने के लिए तत्पर हूँ। यह सुन कर किरणादित्य ने वक्रोक्ति में कहा कि हाँ, सिखाने वाले ही पराई रोटी खाते हैं। यह सुनते ही सैन्यपाल ने कुपित हो कर कृष्णदेव के केश पकड़ कर अपने तीर के तीखे फाल से उसका मुंडन कर डाला और वहीं से चहुवान कुमार अपने राज्य आसेरगढ़ आ गया।

चंडासिराज कुमार लोकपाल कों विजयपुर के नरेस रठ्ठोर सारंगदेव नें अपनी अंगजा लीलावती बिबाही ताके दूजे ही दिन आसेर के अधीस चंडासिराज चंडकिरण के मृत्यु की सुद्धि सुनि दुल्ही सहित दुल्ह आज्ञाकीर्ति अपनें दुर्ग आसेर आई पंचशख पट्ट पाई अपनें देस को आधिपत्य लह्यो ॥१९॥

चहुवान राजकुमार लोकपाल (पृथ्वीपाल) को विजयपुर के राठौड़ वंशीय राजा सारंगदेव ने अपनी पुत्री लीलावती ब्याही (विवाह किया) इस विवाह के दूसरे ही दिन आसेरगढ़ के राजा चहुवान चंडकिरण की मृत्यु की खबर आई जिसे सुन कर दूल्हा-दुल्हन अपने आसेरगढ़ को लौटे। जहाँ दूल्हे ने उत्तराधिकार में आसेरगढ़ का आधिपत्य पाया।

याही समय के समीप कान्यकुब्ज के अधीस राष्ट्रकूट जयदत्त नैं पचासकोटि सुवर्णमय बसुधा बनाई द्विजन को दैकैं गंगा मैं तनुकों तजत भयो जाके जसकरि अखिल ही अवनीतल प्रसन्नपन पायो ॥२०॥

इसी समय के आसपास कन्नौज के राठौड़ राजा जयदत्त ने पचास कोटि स्वर्णमय पृथ्वी बनाई अर्थात् पचास कोटि स्वर्ण की मोहरें बिछा कर स्वर्णमय पृथ्वी बना कर उसे ब्राह्मणों को दान दी (पुराणों में पृथ्वी को भी

पचास कोटि योजन के प्रमाण वाली माना है इस अर्थ में पूरी पृथ्वी का दान किया) और पवित्र गंगा नदी में अपना शरीर त्यागा। इस यश से पूरे पृथ्वीतल को प्रसन्नता हुई।

इतकों आसेरदुर्ग के अधीस साकंभरराज सैन्यपाल कै राष्ट्रकूटी लीलावती मैं कुमार शत्रुशल्य प्राकट्य पाइ आपुनैं अन्ववाय को अयन अधीन आनि अमरपुर के अधीस दाधिम दुर्जन दम की दुहिता शीलवती विवाह्यो तामैं राजकुमार शत्रुशल्ल्य सों राजकुमार कुमार[1] दामोदर जन्म लह्यो याही समय के समीप प्रत्यंतदेशन के अंतर्गत अर्बदेस मैं मुसलमानन के मत को प्रवर्तक जाकों आखरी जमां कहैं सो मुहुम्मद रसूल जन्म लेत भयो ॥२१॥

इधर आसेरगढ़ के राजा चहुवान सैन्यपाल के राठौड़ रानी लीलावती के गर्भ से कुमार शत्रुशल्य का जन्म हुआ। जिसने अपने वंशजों के स्थानों को अपने अधीन किया और अमरपुर के दाहिमा वंशीय राजा दुर्जन दम की पुत्री शीलवती से विवाह रचाया। इसी शीलवती की कोख से कुमार शत्रुशल्य को कुमार दामोदर जैसे पुत्र की प्राप्ति हुई। यह वह समय था जब म्लेच्छ देशों के अन्तर्गत अरब देश में मुसलमानों के मत के प्रवर्तन करने वाले जिसे आखिरी इमाम कहते हैं उस मुहम्मद रसूल ने जन्म लिया।

ताके अबूबक्र उरम हैदर उस्मान ए च्यारि ही मुख्य शिष्य भये तिनकरि म्लेच्छनके अनेक मत उडाइ केही प्रत्यंतनमैं रोजा राखिबे कलमां निमाज पढिबे प्रमुख कुरान को मत प्रवृत्त कीनों रु अपनैं शिष्य हैदरकों स्वीय सुता फातमां विबाही ताकै अमांमहसन अमामहुसैन द्वै पुत्र भये तिनके ताबूत जवनलोक अबहू निकासैं जात अैसैं आखरीजमां के अनुसार अर्ब रूम ईरान प्रमुख प्रत्यंतन मैं पुरातन कों प्रच्छन्न करि नूतन मत प्रवर्त्त भयो ॥२२॥

उस रसूल के अबूबक्र, उरम, हैदर और उस्मान ये चार मुख्य शिष्य बने। जिन्होंने म्लेच्छों के अनेक मतों को हटा कर यवनों में रोजा रखने, कलमा, नमाज पढ़ने आदि कर्मों को कुरान के मतानुसार प्रमुख बनाया। रसूल ने कुरान आधारित मत को प्रबल बना कर प्रचलित किया और अपने

टिप्पणी : १. यहां ग्रंथकार ने 'राजकुमार कुमार' लिखा है इसका मुख्य कारण यह है कि दादा (पितामह) की विद्यमानता में पौत्र को राजकुमार नहीं कहते उसे कुमार ही कहा जाता है। -संपादक

शिष्य हैदर को स्वयं की बेटी फातिमा ब्याही। इस फातिमा से हैदर को दो पुत्र हुए एक अमाम हुसैन और दुसरा अमाम हसन। इन दोनों हसन-हुसैन के ताबूत आज भी यवन लोग निकालते हैं। इस प्रकार आखिरी इमाम के अनुसार अरब, रोम, इरान आदि प्रमुख यवन प्रदेशों में पुराने धर्म को छिपा कर इस नूतन मत का प्रवर्तन हुआ।

इतकों चरम अवस्था पाई आसेर को अधीस सैन्यपाल देह तजत भयो तब शत्रुशाल भूप भयो ताके राजकुमार दामोदर को दसपुर के अधिराज प्रामार मुंजराज नें अपनी अंगजा बिरोचना बिबाही तदनंतर सत्रुसाल के स्वर्ग जावत ही रानी शीलवती हू सहगमनकरि पतिके पास पहुँची रु आसेर के आधिपत्यके छत्र चामर दामोदर धारत भयो तासों विरोचना में राजकुमार नृसिंह नै प्रादुर्भाव पायो ॥२३॥

इधर अपनी वृद्धावस्था पा कर आसेरगढ़ के राजा सैन्यपाल ने अपनी देह त्यागी। अपने पिता के देहावसान के बाद शत्रुशल्य (शत्रुसाल) राजा बना। इसके राजकुमार दामोदर को दशपुर (मन्दसौर) के प्रमार वंशीय राजा मुंजराज ने अपनी पुत्री विरोचना ब्याही। इसके बाद राजा शत्रुसाल के स्वर्ग सिधारने पर उसकी रानी शीलवती ने अपने पति के साथ सहगमन किया। तब आसेरगढ़ के छत्र चंवर को धारण करने वाला दामोदर हुआ जिसके रानी विरोचना के गर्भ से राजकुमार नृसिंह जन्मा।

इति श्रीवंशभास्करे महाचम्पूके पूर्वायणे चतुर्थ राशौ बीतिहोत्र-चण्डासि वंशवर्णने तदन्तर्गतस्वसम्भवसमयधाराधीश भोजसिंहलेश्वर-पुत्रीप्रेषितश्रीखण्डखण्डप्रापण तदानेत्रर्थलक्ष मुद्रोत्सर्जन दामोदरकव्य-र्थलक्ष द्रम्मवितरण वर्द्धकिबध्यर्थलक्ष रौप्यसमर्पण मल्लिनाथ कव्यर्थक-टकत्यजन परीक्षितमान्त्रिकपण्डितार्थसुमणिसम्भृ तसुवर्णकलशपञ्च-कार्पण महेश्वरादिकविकलापार्थविविधवित्तव्रातवितरण कालिदास भवभूति काव्यतुलनासमयपातितपुण्डरीकपरागपुञ्जवाग्देवीकालिदास पद्यगुरुकरण श्रीशैलवास्तव्यब्रह्मचारिसार्थीकृतस्वकीयसूरिवर्गकाशीप्र स्थापन तदनङ्गीकृतकालिदासाल्लालनृपाश्रितीभवन तदुत्कण्ठितधारे-शदुर्मनीभावधारण दुर्भिक्षदुस्थीभूतधारासमागतमाघकविकान्तार्थत्रिलक्ष द्रम्मदान प्रतिबलि तमाघपत्नीतत्सर्बबित्तबनीयकबातार्थबितरण दत्तसर्व-स्वबी क्षितविमुखवनीयकवारयाचकाशाभङ्गभीरुमाघकविमरण तत्पत्नी-

सहगमन स्वयंधारेशतत्प्रेतकर्मसाधन ज्ञातकवि विरहितभूपविमनीभावस-चिववर्गकालिदासप्रत्यानयन ब्रह्मचारिप्रापितकाशीपुरधारेशसभ्यसक-लकविकलापप्रत्यागमन नृपसत्कृतकालिदाससभासमानयन सांयात्रिक-सचितनृपसिन्धुनिमग्नशिलाखनितहनुमत्कृतश्रीरामचरित्रमयमहानाट कसमुद्धरण तत्सांयात्रिकार्थकोटि मुद्राबितरण तत्समकालीनचण्डासि-राजपृथ्वीपाल कुमारसैन्य पाल मातुलगृहचित्रकूटगमन स्वकट्टारपातित-पञ्चास्यमुण्डितमातुलपुत्रप्रत्यागतकुमारसैन्यपाल राष्ट्रकूटीलीलावती परिणयन श्रुतमृतजनकप्रत्यागतलोकपाल पितृपट्टप्रापण तत्समयसामीप्य-वर्त्तिदत्तपञ्चाशत्कोटिसुवर्णमयमहीमूर्त्तिककान्यकुब्जनरेशराष्ट्रकूटजय दत्तगङ्गाप्रवाहतनुत्यजन सैन्यपाल लीलावती प्रसूतकुलपर्यायप्रगल्भ-राजकुमारशत्रुशल्य दाधिमीशीलवती पाणिपीडन तदौरसकुमारदामोदर द्भवन तत्समयसमीपार्बदेशसमुद्भूतशिष्यचतुष्टय समेतयवनाचार्य-मुहुम्मदरमूलमुसल्मानमतस्थापन चण्डासिराजसैन्यपाल मरणानन्तर-प्राप्तपितृपट्टनरेन्द्रशत्रुशल्य कुमारदामोदर प्रामारीविरोचना बिबहन स्वर्गप्राप्तशत्रुशल्य राज्ञीशीलवती सहगमन धारितनृपलक्ष्मदामोदर विरोचनौ रसराजकुमारनृसिंहोद्भवनं सप्तबिंशो मयूखः ॥२७॥ आदितः षटत्रिंशदुत्तरशततमः ॥१३६॥

श्री वंशभास्कर महाचम्पू के पूर्वायण की चौथी राशि में अग्निवंशी चहुवान वंशवर्णन के भीतर अपने समय में जन्म लेने वाले धारा नगर के पति भोज के अर्थ सिंहलदेश के पति की पुत्री का भेजा हुआ चन्दन का टुकड़ा आना, उसके लाने वाले को लाख रुपए देना, दामोदर कवि को लाख रुपए दान देना, सुथार की स्त्री को लाख रुपए देना, मल्लिनाथ कवि को कङ्कण (कड़ा) देना, परीक्षा किये हुए मन्त्र जानने वाले पण्डित के अर्थ अच्छी मणियों से जड़े हुए सोने के पाँच कलश देना, महेश्वर आदि कवियों के समूह के लिए नाना प्रकार के धन का समूह दान करना, कालिदास और भवभूति के काव्य तोलने के समय श्वेत कमल के पराग का समूह गिरकर सरस्वती का कालिदास के श्लोक को भारी करना, हिमालय से आये हुए ब्रह्मचारी का ब्रह्मचर्य सार्थक करके अपने पण्डितों के समूह सहित उसको काशी भेजना, उसके साथ जाना अस्वीकार करके कालिदास का अल्लाल राजा के आश्रय में होना, उसकी चाहना से भोज का उदास होना, दुर्भिक्ष से दरिद्री होकर धारा नगर में आये हुए माघ कवि की स्त्री के अर्थ तीन लाख

रुपये देना, बाद में फिरती हुई माघ की स्त्री का वे सभी रुपये याचक लोगों के समूह के अर्थ देना, सर्वस्व देकर याचकों के समूह को खाली जाते हुए देखकर याचकों की आशा भङ्ग से कायर माघ कवि का मरना, उसकी स्त्री का सती होना, खुद भोज का उसके प्रेतकर्मों का करना, कवियों के विरह से राजा का उदास होना जानकर मंत्रियों का कालिदास को वापस लाना, ब्रह्मचारी को काशी पहुँचाकर भोज के सभासद कवि समूह का वापस आना, राजा का सत्कार के साथ कालिदास को सभा में लाना, जहाजों से व्यापार करने वाले बनिये की सूचना करने से राजा का समुद्र में डूबी हुई शिला में खुदे हुए हनुमान के बनाये हुए श्रीरामचरित्रमय महानाटक का उद्धार करना, उस बनिये को करोड़ रुपए देना, उस भोज के समय में होने वाले चहुवान राजा पृथ्वीपाल के कुमर सैन्यपाल का मामा के घर चित्तौड़ जाना, अपनी कटार से सिंह को मारकर मामा के पुत्र का मुंडन करके वापस आये हुए कुमार सैन्यपाल का राठौड़ लीलावती से विवाह करना, पिता की मृत्यु सुनकर वापस आकर लोकपाल का पिता के सिंहासन पर बैठना, उसके समय के समीपवर्ती पचास करोड़ सुवर्णमयी भूमि देकर कन्नौज के राजा राठौड़ जयदत्त का गङ्गा के प्रवाह में शरीर छोड़ना, सैन्यपाल से लीलावती में जन्म पाये हुए कुल की पीढ़ियों में होशियार राजकुमार शत्रुशल्य का दाहिम शीलवती से विवाह करना, उसके उदर से कुमार दामोदर का जन्म होना, उसके समय के समीप अरब देश में पैदा हुए चार शिष्यों सहित यवनों के आचार्य मुहम्मद पैगंबर का मुसलमान मत की स्थापना करना, चहुवान राजा सैन्यपाल के मरे पीछे पिता के पाट बैठकर नरेन्द्र शत्रुशाल के कुमार दामोदर का प्रमार विरोचना से विवाह करना, शत्रुशाल के स्वर्ग जाने पर रानी शीलवती का सती होना, राजा का चिह्न धारण किये हुए दामोदर से विरोचना के उदर से राजकुमार नृसिंह का जन्म होने का सत्ताईसवाँ मयूख समाप्त हुआ। और आदि से एक सौ छत्तीस मयूख हुए।

प्रायो ब्रजदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

सचरणगद्यम्

इतकों चित्रकूट को अधीस हंसराज को पुत्र राउल जोगराज महापातक में मोद मानि मूढ नित्य ही ब्रह्महत्या करत भयो।

ताकों ताही को पुत्र बैरिजित जाकों इतर नामन करि बैरि राज

तथा वैराड हू कहै सो मारि विप्रन कों अभय दैकैं चित्रकूट को आधिपत्य धरत भयो।

याही समय के समीप कान्यकुब्ज के नरेस राष्ट्रकूट धीरजय के पुत्र भूपति नं अपनी श्रद्धा के अनसुार समीप के देशन मैं हय कों फिराई एक अश्वमेध अध्वर कीनों।

अरु आसेर के अधीस दामोदर के राजकुमार नृसिंह हू बिद्याबल पाई माहिष्मती के अधीस चापोत्कट चंद्रराज की पुत्री भावती बिवाहि पिता के अनंतर आसेर को आधिपत्य लीनों ॥१ ॥

इधर चित्तौड़गढ़ के राजा हंसराज का पुत्र रावल जोगराज पाप करने में मोद का अनुभव करने वाला हुआ। वह मूर्ख नित्य ही ब्रह्महत्या करने लगा। इस रावल जोगराज को उसी के पुत्र वैरीजीत जिसके अवर नाम वैरीराज और वैराड़ भी कहे जाते हैं ने मार कर ब्राह्मणों को अभयदान दिया। वह तब चित्तौड़गढ़ का राजा बना। इसी समय के आसपास कन्नौज नरेश राठौड़ धीरजय के पुत्र भूपति ने अपनी ताकत के अनुसार समीप के देशों में फिराने के लिए अश्वमेधी घोड़ा रवाना किया और बाद में अश्वमेध यज्ञ भी संपन्न किया। उधर आसेरगढ़ के अधिपति चहुवानराज दामोदर के राजकुमार नृसिंह ने भी विद्या अर्जित कर माहिष्मती के चावड़ा वंशीय राजा चन्द्रराज की पुत्री प्रभावती से विवाह किया और अपने पिता के देहावसान पर आसेर राज्य का राजा बना।

नृसिंह सों प्रभावती मैं राजकुमार हरिवंस नै प्राकट्य पायो। सो कोल के नरेस जादव जयमल्ल की दुहिता दया बिबाहि जनक के मरन के अनंतर ताको छत्र धारि देस देसन मैं दुर्जय कहायो।

हरिबंश सों दया मैं राजकुमार हरिजस जन्म पाई सर्बविद्या को संग्रह करत भयो। सो दोसा के नरेस बडगुज्जर तेजपाल की तनया हंसावती बिबाहि हरिवंस के अनंतर पंचशिख पट्ट धरतभयो ॥२ ॥

हरिजस सों हंसावती में राजकुमार सदाशिव जन्मलह्यो जानें चंद्रबाट के अधीस गोभिल बलभद्र की पुत्री पद्मावती परनि पिता के अनंतर आसेर को आधिपत्य गह्यो ॥३ ॥

राजा नृसिंह चहुवान के उसकी रानी प्रभावती की कोख से कुमार

हरिवंश ने जन्म लिया। जिसने कोल के यादव राजा जयमल की पुत्री दया से विवाह किया फिर अपने पिता का स्वर्गवास होने पर आसेरगढ़ का छत्रपति बन कर सभी जगह जुर्दय कहलाया। हरिवंश को रानी दया के गर्भ से हरिजस नामक पुत्र हुआ जो सभी प्रकार की विद्याओं का जानकार था। इस हरिजस ने दोसा के बड़गुज्जर नरेश तेजपाल की पुत्री हंसावती से विवाह किया। वह अपने पिता हरिवंश के मृत्युपरान्त आसेर के राजसिंहासन पर बैठा। इसके सदाशिव नामक पुत्र हुआ। जिसने चन्द्रबाट के गोहिल वंशी राजा बलभद्र की पुत्री पद्मावती से विवाह किया। यह सदाशिव अपने पिता के मरने पर आसेरगढ़ का राजा बना।

सदासिव सों पद्मावती मैं राजकुमार रामदास नै प्रादुर्भाव पायो। अरु पद्मावती हू सदासिव के संग ही सहगमन करि स्वर्ग के नानाबिध विलासन को ब्रात बिलसायो। तब चंडासिराज रामदास हू पिता को पट्ट पाई कान्यकुब्ज के अधीस कबंध पुंजराज की पुत्री प्रेमवती बिबाहिआनी।

अरु याही पुंजराज के धर्मब्रह्म प्रमुख तेरह पुत्र प्रकटे जिनतैं रट्ठोरन के तेरह भेद भये तिनमें प्रथम धर्मब्रह्म नवम उग्रप्रभ द्वै ही की संतति जगती मैं जाहिर जानी।।४।।

अपनी रानी पद्मावती की कोख से सदाशिव के कुमार रामदास ने जन्म लिया। और पद्मावती ने अपने पति राजा सदाशिव की मृत्यु पर उसके साथ सहगमन कर स्वर्ग के नानाविध विलासों के समूह को भोगा। तब चहुवानराज रामदास अपने पिता की गद्दी पर बैठा और उसने कन्नौज के राठौड़ राजा पुंजराज की पुत्री प्रेमवती से विवाह रचा कर उसे अपनी रानी बनाया। कन्नौज के इसी राजा पुंजराज के धर्मब्रह्म आदि तेरह पुत्र हुए जिनसे राठौड़ वंश में तेरह भेद हुए। इन तेरह भाइयों में से प्रथम धर्मब्रह्म और नवम उग्रप्रभ इन दोनों के वंश ही आगे पृथ्वी पर प्रसिद्ध हुए।

याही समय के समीप इतकों अवंती कै अधिराज उदयादित्य के पट्टप पुत्र प्रामारराज जगद्देव सों भट्टनि कंकाली अपनी कविता सों रिझाई बहुतही बित्त लैकैं ओर हू नृपन सों यथोचित रीझ पाई अंतर्वेदी मैं अपने गृह गई।

सो कितेक बरस बिताई पश्चिम के भूपन सों दान लैबै कों ब

होरिहु आवतभई। तानें राजधानी प्रति फिरत फिरत गौर्जरदेश मैं जगद्देव को औदार्य अद्वितीय कह्यो।

तहां मूलराज हू जगद्देव के दयें सों दस गुनों दैहों ऐसी कहि अत्यंत गर्ब बह्यो ॥५॥

इसी समय के आसपास अवंती के अधिपति उदयादित्य के पाटवी पुत्र प्रमारराज जगदेव को कंकाली नामक भाटनी ने अपने काव्य से रिझा कर बहुत सारा धन इनाम में पाया। वह इसी प्रकार दूसरे अन्य राजाओं से भी यथोचित रीझ (इनाम) पा कर अन्तर्वेद नामक अपने वतन में गई। फिर बीच में कई वर्षों का अन्तराल दे कर पश्चिम क्षेत्र के राजाओं से दान लेने को फिर से आई। जब वह इधर-उधर के राजाओं के पास जाती घूम रही थी तब उसने कहा कि गुजरात के राजा जगदेव पंवार की उदारता का कोई सानी नहीं। उस जैसा वदान्य अन्य राजा नहीं है। उसके मुँह से यह सुन कर राजा मूलराज ने कहा कि मैं तुझे जगदेव द्वारा दिये गए इनाम से दस गुना धन दूँगा। और अपने दर्प का प्रदर्शन किया।

बंदिनी कह्यो जगद्देव के दान कों कोऊ नृप कदापि न पावै ऐसे बिबाद बढत ही कंकाली मालव को मार्ग गह्यो अरु मूलराज हू सर्बस्व ही दैबै कों तयार होई रह्यो।

बंदिनी तो जावत ही अवंती अनिहलपुर के अंतर में एक एक कोस प्रति अस्वन की डाक जगद्देव सों बनवाई ताको मस्तक ही मांगत भई।

सो सुनतही उदयादित्य के अंगज महामुदित ह्वैकैं बलि दधीच सिवि कर्ण बिक्रम भोज को बामधुर धारि स्वकीय सय करि अपनों उत्तमांग उतारि दयो ताकों थाल मैं लैकैं पुष्पन सों ढांकि अस्वन की डाक मैं अनिहलपुर पहुँचि समज्ज्या पाइ मूलराज कों जगद्देव को दान दिखाई कह्यो दोऊ दानिन मैं कोन जई ॥६॥

राजा मूलराज के मुँह से ऐसी गर्वोक्ति सुन कर कंकाली भाटनी ने कहा कि जगदेव की वदान्यता को कोई राजा नहीं पहुँच सकता। इस पर विवाद बढ़ा तो उस कंकाली नाम वाली भाट की स्त्री ने मालवे जाने का मार्ग लिया यद्यपि मूलराज भी उसे अपना सभी कुछ देने को तैयार हो गया था।

बंदिनी कंकाली ने जाते ही अवंती और अनहिलपुर के बीच में जिसने एक-एक कोस की दूरी पर घोड़ों की डाक के स्थान बनवाए थे उसी जगदेव का मस्तक माँगा।

बंदिनी कंकाली की मांग सुनते ही उदयादित्य के पुत्र ने प्रसन्न हो कर बलि, दधीचि, शिवि, कर्ण, विक्रमादित्य और राजाभोज की तरह वाम धुर धार (वह वृषभ जो बाई ओर जाता जाता है और जिसके कंधे पर अधिक भार आता है) स्वंय के हाथ से अपना मस्तक उतार दिया। उसे एक थाल में ले कर और उसे पुष्पों से ढक कर राजा जगदेव द्वारा स्थापित घोड़ों की डाक से जल्द ही अनिहलपुर पहुँच कर कंकाली सीधी राजसभा में गई। उसने वहाँ जाते ही राजा मूलराज को जगदेव द्वारा प्रदत्त दान की बानगी दिखा कर कहा कि अब बोलो राजा आप दोनों दानियों में कौन जीता?

प्रामारराज को मस्तक देखत ही मूलराज मुख बिगारि सरबस्व दे लग्यो।

ताको अनादर करि कंकाली कह्यो दीन होत सोहू दीन सों न मांगत यातैं मेरे कुल को तेरे कुल के सों कदापि न लैहैं ऐसो पन धारि अवंती आई जगद्देव के देह को सीस सहित दाह करायो। अरु कितेक कहत यासों देवी प्रत्यक्ष होत ही तासों अबंती आय तत्काल ही जिवायो।

कितेक मागध कहत उदयादित्य के छ पुत्रन मैं पहिलो रनधवन दूजो जगद्देव हो सो अग्रज को निकास्य सपत्नीक ही अनिहलपुर मूलराज के आश्रित जाइ रह्यो उहां ही यह उदंत भयो।

अरु कितेक कहत उदयादित्य के बडो जगद्देव ही हो परंतु वाके मृत्यु के अनंतर वाही के पुत्र कों निकासि दयो ताको बंस तो अद्यावधि गौर्जरदेस में बिद्यमान है अरु वाके पितृव्यक रनधवल राज्य लै लयो ताकों बंस मुख्य तामैं अग्रज को औरस क्यों कह्यो गयो।।७।।

प्रमारराज का कटा हुआ मस्तक देखते ही मूलराज का चेहरा उतर गया फिर उसने अपनी सम्पूर्ण सम्पत्ति कंकाली को देने का प्रस्ताव किया। इस प्रस्ताव का अनादर करते हुए कंकाली ने कहा कि जो दीन व्यक्ति होता है वह दीन से कभी नहीं माँगता। इसी नियम के अन्तर्गत आज से मेरे भाट कुल में जन्मा कोई व्यक्ति तुम्हारे कुल के किसी वंशज से कभी भी कुछ भी

ग्रहण नहीं करेगा। ऐसा प्रण ले कर कंकाली वापस अवंती में आई और जगदेव की देह का मस्तक सहित दाहसंस्कार करवाया। कुछ लोग ऐसा भी कहते हैं कि कंकाली को देवी प्रत्यक्ष थी (देवी की पूरी साधना करने वाले को देवी प्रतिक्षण उपलब्ध होती है इसे प्रत्यक्ष होना कहते हैं।) इसलिए उसने अवंती में आ कर देवी कृपा से जगदेव प्रमार को फिर से जीवित कर दिया। कई भाट लोगों का कहना है कि राजा उदयादित्य के छः बेटों में से पहला रनधवल और दूसरा जगदेव था। इस जगदेव ने अपने बड़े भाई रनधवल को सपत्नीक वहाँ से निकलवा दिया था तब रनधवल इसी राजा मूलराज का आश्रित हो कर रहा। यह वृत्तांत तभी हुआ था। कई भाट कहते हैं कि नहीं राजा उदयादित्य का पाटवी पुत्र जगदेव ही था पर राजा की मृत्यु के बाद राजा के पुत्र जगदेव को वहाँ से निकाल दिया (पर इसका वंश तो अद्यावधि गुजरात में विद्यमान है) और उसके चाचा रनधवल ने राज्य ले लिया। पर सवाल उठता है कि जगदेव के वंश को ममुख्य कहा गया क्योंकि वह अपने पिता राजा का औरस पाटवी पुत्र था।

अरु हे बुंदींद्र कान्यकुब्ज के अधिराज कार्मध्वज पुंज कै पहिलैं तेरह पुत्र कहे तिनमैं तेरह भेद राष्ट्रकूटनके कहे ते सुनिबे कों श्रवनन देहु।

बडो पुत्र धर्मब्रह्म सोही बडे दान करि दानेश्वर कहायो ताके अन्वय के दानेश्वरा रट्ठोर भये तिनमें मुख्य तो मरुदेस में स्वामी को स्वसुरसदनन मंडपपुर पूर्वक जोधपुर एहु।

दूजो पुत्र भानुदीप भयो ताके अन्वय के अभयपुर के आधिपत्यकरि अभयपुरा रट्ठोर कहाये। अरु तीजे पुत्र वीरचंद्र के बंस के कपाली के प्रसाद करि कापालिक सुनिबे मैं आये॥८॥

अब हे बूंदीपति रामसिंह! कन्नौज के राजा कार्मध्वज (राठौड़) पुंजराज के मैंने पूर्व में तेरह पुत्र होना कहा और उनसे राठौड़ वंश के तेरह भेद होना बताया। अब मैं विस्तार से उन्हें कहता हूँ सो आप सुनें! राजा पुंजराज का सबसे बड़ा पुत्र धर्मब्रह्म हुआ जो बड़े-बड़े दान करने के कारण दानेश्वर के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इसके वंशज दानेश्वर राठौड़ कहलाए। जिनमें मुख्य तो मारवाड़ में, हे स्वामी! आपके श्वसुर का कुल ही है जो मंडोवर सहित

जोधपुर में विद्यमान है। कन्नौज के राजा पुंजराज का दूसरा पुत्र भानुदीप हुआ जिसके वंशज अभयपुर के राजा होने के कारण अभयपुरा राठौड़ कहलाते हैं। तीसरे पुत्र वीरचन्द्र के वंशज (कापाली) महादेव को प्रसन्न करने के कारण कापालिक राठौड़ कहलाए।

चोथे पुत्र अमरबिजय के अन्ववाय के कुरहगढ के स्वामित्व करि कुरहा सुनें।

अरु पंचम पुत्र सज्जनबिनोद के जल खट प्राय देस करि तथा जलप्रायखेट करि जलखड़िया तथा जलखेडिया जानें अर छट्ठे पद्म के बंस के बुगलान देसकरि बुगलानां सुनें।

सप्तम अहर के अहर अष्टम वासुदेव के पारकेश्वर पिनाकी के प्रसादकरि पारक तथा पारकेस ख्याति मैं आये।

अरु नवम पुत्र उग्रप्रभ के अन्वयके कोऊ कारन करि चंदेल दसम मुकुटमनि के बंसके वीरत्व करि बीर एकादसम भरत के कोऊ निदान करि बरियाव तथा बरियावर द्वादसम कृपासिंधु के कुलके रिपुन कों क्षयरव दैबे करि खैरवद तेरहमे पुत्र चंद्र के कुलके जयकरि जयवंत कहाये ॥९ ॥

चौथे पुत्र अमर विजय के वंशज कुरहगढ़ का स्वामित्व प्राप्त कर कुरहा उपटंक वाले हुए। पाँचवें पुत्र सज्जन विनोद के वंशज जलखट (जिस प्रदेश में छह नदियाँ उसे जलखट कहा जाता है) क्षेत्र पर अधिकार कर जल से घिरे हुए खेड़े (जलप्रायखेट) के निवासी होने के कारण जलखड़िया अथवा जलखेड़िया के नाम से जाने गए। छठे पुत्र पद्म के वंशजों ने बुगलान देश का राज्य पाया इसलिए वे बुगलाना कहलाए। सातवें पुत्र अहर के वंशज अहर राठौड़ और आठवें पुत्र वासुदेव के वंशज पारकेश्वर महादेव को प्रसन्न करने के कारण पारक अथवा पारकेस राठौड़ के उपटंक से प्रसिद्ध हुए। इसी तरह कन्नौज के राठौड़ राजा पुंजराज के नवमे पुत्र उग्रप्रभ के वंसज किसी कारण से चंदेल राठौड़ कहलाए और दसवें पुत्र मुकुटमणि के वंशज अत्यंत वीर होने से वीर राठौड़ के उपटंक वाले हुए। राजा के ग्यारहवें पुत्र भरत के वंशज किन्ही कारणों से वरियाव तथा वरियावर नामों से जाने गए। बारहवें पुत्र कृपासिंधु के वंशज अपने शत्रुओं को क्षय का रव (मारो-मारो

ऐसा) देने के कारण खैरवद राठौड़ के उपटंक से प्रसिद्ध हुए। राजा के अन्तिम तेरहवें पुत्र चन्द्र की संतति विजय प्राप्त करने के कारण जयवंत राठौड़ कहलाई।

इनके अन्वय के ग्रंथन मैं मागधन के मत करि जिन जिन हेतुन करि जो जो उपटंक जान्यों सो सो सबही चित्त में न आयो। यातैं इच्छानुसार नाम को फलितार्थ देखि चित्त में संभव के उचित दीस्यो तैसैं ही कहि दिखायो।

इनमैं चंदेलन को तथा बरियावरन को कोऊ युक्ति करि सार्थ लिखिबे में मिथ्यासाहस दीसैं। अरु औरन के हू उपटंक लिखे तिनहू मैं जो जो कारन करि जे जे भेद लिखे तिनहू की व्युत्पत्ति में असंगति पाइ जैसी तुली तैसी बिचारि कही दीसैं॥१०॥

इन वंशों के नाम बहीभाटों के मत से जो जो कारण बता कर बताए गए हैं। इन पोथियों में जितने उपटंक गिनाए यह सब मुझ ग्रंथकर्ता (सूर्यमल मीसण) के गले नहीं उतरता क्योंकि उन्होंने अपनी मन मरजी से नामों का फलितार्थ दे कर वैसे ही वंशों के नाम लिख दिये लगते हैं। विशेष कर बही भाटों ने जो यह चंदेल और बरियावर वंश के उपटंक दिए हैं ये तो कतई युक्ति युक्त नहीं प्रतीत होते। मुझे तो यह मागधों (भाटों) का मिथ्या साहस (झूठा हठ) लगता है। इनके अतिरिक्त भी जो खिताब लिखे हैं और उन उपटंकों के बनने के जो जो कारण दे कर जो जो भेद लिखे। उनकी व्युत्पत्ति में भी असंगति दिखलाई पड़ती है। इनमें भी जैसी अपनी मति से उपजा वही लिख लिया लगता है।

अरु इतकों चंडासिराज रामदास सों राष्ट्रकूटी रानी प्रेमवती मैं राजकुमार रामचंद्र नैं जन्म लहि सर्वविद्या को संग्रह करि देवपुर के अधीश मंकुवान मल्लिनाथ की कन्या कोकिला बिबाहि पिताकेअनंतर पट्टपायो।

ताके राजकुमार भागचंद्र भयो तानैं पठंतापुर के प्रभु प्रामार प्रतापसेन की पुत्री जयदेवी बिबाहि पिताके अनंतर पट्टपाइ अपनों जस चोतर्फ ही चलायो।

भूप भागचंद्र कै राजकुमार रूपचंद्र भयो सो अमरपुर के अधीस

वघेल चालुक्य विजयभानु की सुता स्यामा बिबाहि पिताके अनंतर पट्ट पावत भयो। अरु भागचंद्र के संग रानी जयदेवी हू सहगमन करि स्वर्ग्गवास लयो ॥११॥

इधर चहुवानराज रामदास के रानी प्रेमवती की कोख से राजकुमार रामचन्द्र ने जन्म लिया। जिसने सभी प्रकार का विद्याध्ययन कर देवपुर के झाला वंशीय राजा मल्लिनाथ की कन्या कोकिला से विवाह किया और अपने पिता की मृत्यु के बाद आसेरगढ़ का आधिपत्य प्राप्त किया। इस राजा रामचन्द्र के भागचन्द्र नामक पुत्र हुआ जिसने पठंतापुर के प्रमार राजा प्रतापसेन की पुत्री जयदेवी से विवाह किया और अपने पिता का उत्तराधिकारी बन कर चारों दिशाओं में यश अर्जित किया। राजा भागचन्द्र के राजकुमार रूपचन्द्र जन्मा। जिसने अमरपुर के बघेला चालुक्य विजयभानु की सुपुत्री श्यामा से विवाह किया और अपने पिता की मृत्यु के बाद राजगद्दी पर बैठा। उधर राजा भागचन्द्र का देहावसान होने पर उसकी रानी जयदेवी ने अपने पति का सहगमन कर साथ दिया।

रूपचंद्र सो स्यामा मैं राजकुमार मंडन भयो सो पिता के अनंतर पट्ट पाइ अनिहलपुर के अधीस चालुक्य चंद्रपाल की सुता सौभाग्यदेवी बिवाह्यो।

तासौ अवंती के अधीस प्रामारराज लल्ल नें आसापूरनी दुर्गा की हाटकमय अष्टभुज प्रतिमा प्रमुख वैभव समेत आसेरदुर्ग लैकैं अपनैं बंधु वारड प्रामार अभयराज कों दै दयो सो आखेटक्रीड़ा मैं सुनत ही देस काल विचारि चंडासिराज मंडन चित्रकूटके राउल तेजसिंह के समयमें मेवारदेस की सीमापर आइ अपनें पराक्रम करि कछु देस दबाई मंडनगढ नाम दुर्ग जाकों अब मंडिलगढ़ कहैं सो बनाई उहां को अधीस बनि अपनों नरेनन्द्रपनों निबाह्यो।

या समय मैं राउल तेजसिंह चउसट्ठि बरस के बय मैं मरुदेशीय मंडपपुर के अधीस प्रतिहार अजरान सों एक हायन मैं जुद्ध जीति वाहीकी पुत्री पिंगला जाडेचन की दौहित्री परन आयो। तानैं आवत ही अपनें देस की प्राची दिसा को प्रांत दबाइ चंडासिराज मंडन राज्य करत ही पायो ॥१२॥

राजा रूपचन्द्र के अपनी रानी श्यामा की कोख से राजकुमार मंडन ने जन्म लिया जो अपने पिता की मृत्यु के बाद आसेरगढ़ का राजा हुआ। जिसने अनिहलपुर के चालुक्यराज चन्द्रपाल की पुत्री सौभाग्यदेवी से विवाह किया। इस राजा मंडन से अवंती के प्रमारराज लल्ल ने आशापूर्णा देवी की स्वर्णमय मूर्ति सहित पूरे वैभव के साथ आसेरगढ़ दुर्ग को छीन कर अपने भाई वारड प्रमार अभयराज को दे दिया। जब शिकार खेलते समय राजा मंडन को इस बात का पता चला तो उसने सुनते ही देशकाल का विचार (अपनी हालत का आकलन कर) कर चित्तौड़गढ़ के रावल तेजसिंह के समय में मेवाड़ देश की सीमा पर जा कर अपने पराक्रम से सीमा प्रांत के कुछ गाँवों को दबा वहाँ अपने नाम से मंडनगढ़ नामक किला बनवाया और आज के समय में मांडलगढ़ कहलाते इसी किले का स्वामी बनकर नृपता धारण की। इसी समय में चित्तौड़गढ़ के रावल तेजसिंह ने अपनी चौंसठ वर्ष की आयु में मारवाड़ देश में मंडोवर के प्रतिहार राजा अजरान से एक वर्ष लम्बे चले युद्ध में विजय पा कर वहीं से अजरान की पुत्री और जाड़ेचा की भानजी रानी पिंगला से विवाह कर लौटा। उसने लौटते ही देखा कि अपने देश मेवाड़ के पूर्व दिशा वाले प्रान्त को हड़प कर चहुवानराज मंडन राज कर रहा है।

सो सुनत ही दुलही कों चित्रकूट पठाइ मंडनगढ़ आई महा तुमुल कर्यो। परंतु देस तो लूटि लयो अरु दुर्ग को न दाबि सक्यो तब अपने चित्त में चित्रकूट जाइ मंडपपुर के रन मैं मरी सेना के सम्मित बहुरि बनाई त्वरित लै लैहों ऐसी आलोचि चित्रकूट आई बहुरि चण्डासिराज मंडन के ऊपर चढाई पैं चित्त धर्यो।

इतकों याही समय सों कछु पहिलैं नरउर के नरनाह कछवाह को बंधु ईश्वरीसिंह ढुंढाहर के पूर्वप्रांत मैं बडगुज्जरन के अमल मैं आइ रह्यो हो ताकै पुत्र सोढदेव भयो ताके कुमार दुर्लभराज नैं वा अवनी के अधीसन कों मारि प्रामारराज के गुन नेत्र नभ चंद्र मित संवत में कार्तिक कृष्ण दसमी के दिन अपनें पिता कों वा प्रांत में दोसा भांडारेज को आधिपत्य दैकैं सुपुत्र कहायो।

याही दुर्लभराज सों मांची कै रन मैं देवी जंबुवाई प्रसन्न भई सोही अपनी कुलदेवता मानि ताके प्रसाद करि ग्वालेर को दुर्गहू अपनैं अधीन

करि द्यौसा आयो ॥१३॥

यह देखते ही उसने अपनी दुल्हन को तो चित्तौड़गढ़ भेज दिया और स्वंय ने अपने योद्धाओं सहित मंडनगढ़ पर आक्रमण कर भयंकर युद्ध किया वह देश तो पहले ही लूट चुका था पर मंडनगढ़ को फतह न कर सका। तब अपने मन में यह सोच कर कि मंडोवर के युद्ध में मारी गई सेना की जगह नई सेना बना कर वह शीघ्र ही मंडनगढ़ को ले लेगा वह चित्तौड़गढ़ आया। यहाँ आते ही उसने चहुवानराज मंडन पर चढ़ाई करने की योजना बनाई। इधर इस समय से कुछ पहले नरवर के कछवाहा राजा के भाई ईश्वरी सिंह के ढूँढ़ाड़ का पूर्वी हिस्सा जो अब तक बड़गुज्जर के अधिकार में था उसे ईश्वरी सिंह के पुत्र सोढदेव के कुमार अर्थात् ईश्वरीसिंह के पौत्र दुर्लभराज ने उस धरती के स्वामी बने राजाओं को मार कर विक्रमी संवत एक हजार तेईस के कार्तिक माह के कृष्णपक्ष की दसवीं तिथि के दिन अपने पिता को उस जीते हुए प्रांत के दौसा और भांडारेज क्षेत्र का आधिपत्य भेंट किया और सुपुत्र कहलाया। इसी दुर्लभराज से मांची गाँव के जंगल में देवी जंबुवाई प्रसन्न हुई। उसे कुमार ने अपनी कुल देवी माना। इसी देवी की कृपा से दुर्लभराज ग्वालियर के किले को फतह कर दौसा आया।

ता पीछै मरहट्टन के कटक को घेरा सुनि कुमार दुर्लभराज द्योसासों ग्वालेर जाइ वाही जुद्द मैं कुमरपनैं ही अप्सरा बरतभयो ताके पुत्र कालिक हो सो अपनैं पितामह सोढदेव के अनंतर आमैर नाम नगर बसाइ पिताके जीते प्रांत सहित उहांको राज्य करतभयो इतकों चित्रकूटके राउल तेजसिंह बडी बरूथिनी लैकैं मंडनगढ आइ चंडासिराज मंडन सों बहोरि च्यारि मास लर्‌यो। तथापि दुर्ग कों न दाबिसक्यो तब मंडपपुर सो जयपायो तैसें मंडनपुर सों पराजय पाय द्वै ही बेर दर्पहीन होइ चित्रकूटमैं प्रवेस कर्‌यो ॥१४॥

इसके बाद मरहठों (यहाँ मरहठों से आशय किसी दक्षिण देश के राजा से रहा होगा) की सेना का आ कर ग्वालियर को घेरे जाने की खबर पा कर दुर्लभराज दौसा से ग्वालियर गया और वहाँ के युद्ध में बहादुरी से लड़ते हुए इस कुमार ने अप्सरा का वरण किया अर्थात कट मरा। इस कुमार दुर्लभराय का पुत्र काकिल था जो अपने पितामह सोढदेव की मृत्यु के बाद

आमेर नगर बसा कर अपने पिता द्वारा फतह किए गए प्रांतों सहित वहाँ राज करने लगा। इधर चित्तौड़गढ़ के रावल तेजसिंह ने अपनी एक बड़ी सेना का गठन किया और उसे ले कर मंडनगढ़ पर चढ़ाई की। उसने चहुवान राज मंडन से लगातार चार माह तक युद्ध किया फिर भी दुर्ग नहीं जीत पाया तब मंडोवर पर विजय प्राप्त करने वाला रावल मंडनगढ़ से पराजित हो कर पिछली बार की तरह दर्पहीन हो चित्तौड़गढ़ को लौट आया।

इतिश्री बंशभास्करे महाचम्पूके पूर्वायणे चतुर्थ राशौ बीतिहोत्र-चण्डासि बंशबर्णनान्तर्गतस्वसम्भवसमयचित्रकूटाधीशराजकुलयोग-राजनित्यब्रह्महत्याकरण तत्पुत्रवैरिजिन्निजजनकमारण कान्यकुब्जभूप-तिकलिबर्जहयमेधकरण परिणीतचापोत्कटीप्रभावतीक चण्डासिराज-कुमारनृसिंह पितृपट्टप्रापण तदौरसहरिबंश यादवीदया विवहन धृतच्छत्र-हरिवंश पुत्र[illegible]रियशो वार्हद्रौर्जरीहंसावती पाणिपीडन तदौरसकुमारसदाशिव गोभिलीपद्मावती परिणयन तदौरसकुमाररामदास पितृपट्टप्रापण सदाशिव सहधर्मिणीपद्मावती सहगमन रामदास राष्ट्रकूटीप्रेमवत्यु पयमन कान्य-कुब्जाधिराजपुञ्जपुत्रत्रयोदशो द्भूतदानेश्व रान्द्रिराष्ट्रकूटकुलत्रयोदश भेद-प्रकटन बिशालेश्वरप्रामारराज जगद्देवकङ्कालीबन्दिन्यर्थस्वशिरोदान रामदास प्रेमवत्यौ रसकुमाररामचंद्र मांकुवाणीकोकिलोद्वहन तदौरसभाग-चद्र प्रामारीजयदेवी पाणिपीडन तत्पुत्ररूपचन्द्र चालुकीश्यामा परिणयन भागचन्द्र सहधर्मिणीजयदेवी सहगमन रूपचन्द्र श्यामो रसकुमारमण्डन पट्टप्राप्तयनन्तरचालुकीसौभाग्यदेवी विवहन प्रामारलक्ष्मण्डन राज्यसमा-क्रमण तत्पलायितमण्डन मेदपाटसीमाप्रान्तस्वनामदुर्गनिर्भाण चित्रकूट-राजराज कुलतेज सिंहसमासमरपरास्तमण्डपपुरेणप्रतिहाराऽजराणपुत्री पिङ्गलापरिणयन प्रत्यागतमण्डन परास्तराजकुलतेजः सिंहचित्रकूटागमन नलपुरनृपबन्ध्वीश्वरीसिंहढुण्ढाड़पूर्व प्रान्तागमन समाक्रान्तद्योसादिराज्य-प्राप्तदेवीजम्बुमातृप्रसाद तत्पुत्रदुर्लभराजग्वालेरयुद्धवीरशय्याशयन तत्पुत्रकाकिला मैरनगरनिर्माण महीपमण्डन रणराजकुलतेजःसिंहपुनःपरा-भवन मष्टाविंशो मयूखः ॥२८॥ आदितस्सप्तत्रिंशदुत्तरशततमः ॥१३७॥

श्री वंशभास्कर महाचम्पू के पूर्वायण की चौथी राशि में अग्निवंशी चहुवान वंशवर्णन के भीतर अपने सम्भव समय में चित्तौड़ के अधीश राउल

योगराज का नित्य ब्राह्मण को मारना, उसके पुत्र बैरिजित का अपने पिता को मारना, कन्नौज के राजा का कलियुग में मना किये हुए अश्वमेध का करना, चावड़ी प्रभावती का विवाह करके चहुवान राजकुमार नृसिंह का पिता के पाट बैठना, उसके औरस पुत्र हरिवंश का यादव वंशीय दया को ब्याहना, छत्र धारण कर हरिवंश के पुत्र हरियश (हरिजस) का बडगुज्जरी हंसावती को ब्याहना, उसके उर से पैदा हुए कुमार सदाशिव का गोभिल वंशीय पद्मावती को ब्याहना, उसके औरस कुमार रामदास का पिता के पाट बैठना, सदाशिव के साथ उसकी विवाहित स्त्री पद्मावती का सती होना, रामदास का राठौड़ वंशीय प्रेमवती को ब्याहना, कन्नौज के स्वामी पुंज के तेरह पुत्र होना, दानेश्वरा आदि राठोड़ों के कुल में तेरह भेद प्रकट होना, बड़े ऐश्वर्य वाले प्रामारराज जगत्देव का कङ्काली नामक भाटनी के अर्थ अपना मस्तक दान करना, रामदास प्रेमवती के औरस कुमार रामचन्द्र का झाला वंशीय कोकिला को ब्याहना, उसके औरस पुत्र भागचन्द्र का प्रमार जयदेवी से विवाह करना, उसके पुत्र रूपचन्द्र का सोलंकी श्यामा के साथ विवाह करना, भागचन्द्र की विवाहिता स्त्री जयदेवी का सती होना, जयचन्द्र और श्यामा के औरस कुमार मंडन का पाट बैठने के बाद सोलंकी सौभाग्यदेवी से विवाह करना, प्रामार लल्ल का मंडन के राज्य को घेरना, उससे भागकर मंडन का मेवाड़ की सीमा प्रान्त पर अपने नाम का किला बनाना, चित्तौड़ के राजा राउल तेजसिंह का एक वर्ष युद्ध करके हारे हुए मंडोवर के प्रतिहार अजरान की पुत्री पिंगला से विवाह करना, वापस आकर मंडन से हार कर राउल तेजसिंह का चित्तौड़ आना, नरवर के राजा के भाई ईश्वरीसिंह का ढुंढाड़ के पूर्वी प्रान्त में आना, देवी जंबुवाइमाता की प्रसन्नता से दोसा आदि को घेरकर राज्य प्राप्त कर उसके पुत्र दुर्लभराज का ग्वालियर के युद्ध में काम आना, उसके पुत्र काकिल का आमेर नगर बसाना, राजा मंडन से युद्ध में राउल तेजसिंह की फिर से पराजय होने का अट्ठाईसवाँ मयूख समाप्त हुआ। और आदि से एक सौ सैंतीस मयूख हुए।

प्रायो ब्रजदेशीय प्राकत मिश्रित भाषा

सचरणगद्यम्

इतकों याही समय के समीप प्रत्यंतन मैं खुरासान देस मैं गजनी

सहर को अधीस स्वकीय स्वामी के सासन के अनुसार अलब भयो।

जाकों अपनैं प्रभु नैं स्वकीय परिचर्या मैं प्रगल्भ पेखि रज्जु-पुत्तलिका ज्यों जानि आवन जावन मैं विलंब न बिक्खि सुबुक्तगी को खिताब दयो।

सोहू स्वामी के सासन समान आर्याबर्त्त की सीमा करतोया के परतट पर्यंत प्रत्यन्त मैं प्रागल्भ्य प्रसारि उतके आवाप सों अपनैं अधिपति के आनन्द आनि अटक के पार कों आधिपत्य सम्हारि रह्यो।

या समय मैं बुखारे को बादसाह अमीर मनसूर बडे प्रताप करि केही बिलायत को अधीस भयो ताको गुलाम यह अलब हो ताकों स्वामिधर्म मैं सावधान जानि खुरासान को अधीस कियो तानैं स्वामी के सासन करि सहर गजनी को आधिपत्य लह्यो॥१॥

इसी समय के आसपास यवनों में खुरासान देश में गजनी शहर का अधिपति अपने स्वामी की आज्ञा से अलब हुआ। जिसे उसके मालिक ने अपनी परिचर्या में प्रगल्भ देख कर और उसे एक रस्सी से बंधी पुतली की तरह जो आने जाने में तनिक भी विलम्ब नहीं करती जान कर सुबुक्तगीं का खिताब दिया। उसने अपने मालिक के शासन की तरह आर्यावर्त की सीमा पर बहती अटक नदी के उस पार के तट पर्यंत यवनों में होशियारी का प्रसार कर वहाँ के शत्रुओं को हटाने की चिंता से अपने मालिक को निजात दिलाई और अटक के उस पार का राज्यभार संभालता रहा। इस समय में बुखारा का बादशाह अमीर मनसूर अपने प्रताप और बुद्धिमता से विलायत के कई देशों का राजा बना। इस अमीर मनसूर का गुलाम यह अलब था। जिसे स्वामी धर्म में सावधान जान कर खुरासान का राजा बनाया तब अलब ने अपने स्वामी की आज्ञा को शिरोधार्य कर गजनी का आधिपत्य ग्रहण किया।

या अलब कै पुत्र नासरुद्दीन भयो तानें पिता के अनंतर खुरासान को आधिपत्य पाइ बुखारे को सासन सदा ही सीस पैं धारि तीन सैं सतसट्ठि के हिजरी संवत मैं अपनें पुत्र महमूद सहित अटक नदी के वार आइ लाहोर के राजा जयपाल सों जंग करि मुलतान लमगान द्वै ही देस दाबि लये तहां अपनें मत के देवालय बनाय अपनें हाकिम राखि गजनी गयो।

तापीछे जयपालहू जवन के जीते द्वै ही देस पीछे लैकैं अपनें अधीन करत भयो।

यहै सुनत ही साहबजादे महमूद सहित सुलतान नासरुद्दीन सुबुक्तगीं बहोरि करतोया लंघि आयो।

जासों जयपालहू घनें दिन जंग करि अपनी अभिधा को अर्थ अलभ्य जानि जवनेस सों अैसो बचन कहायो ॥२॥

इस अलब के एक पुत्र नासरुद्दीन नामक हुआ जो अपने पिता की मृत्यु के बाद खुरासान का आधिपत्य पा कर बुखारा के बादशाह का हमेशा ही आज्ञाकारी रहा। उसने हिजरी सन् तीन सौ सड़सठ में अपने पुत्र महमूद सहित अटक नदी को पार कर लाहौर के राजा जयपाल से युद्ध कर उसने मुलतान और लमगान नामक दोनों देश दबा लिये। यही नहीं अपना अधिकार हो जाने पर उसने अपने धार्मिक मत के अनुसार देवालय (मस्जिद) बनाए और वहाँ अपने हाकिम तैनात कर वापस अपने मुल्क को गया। इसके बाद लाहौर के राजा जयपाल ने यवनों द्वारा जीते गये दोनों ही देश वापस ले कर अपने अधीन कर लिये। इस बात की खबर जब खुरासान पहुँची तो सुनते ही शाहबजादे महमूद सहित सुल्तान नासरुद्दीन सुबुक्तगी फिर से अटक नदी को पार कर यहाँ आया। इन यवनों के साथ बहुत दिनों तकँ युद्ध लड़ कर अपने नाम के अर्थ को अलभ्य जान कर (उसका नाम जयपाल था इस अर्थ में विजय का पालन न होता देख कर) उसने यवनेश से यह वचन कहलवाया।

देस तो हमरे हमही कों दैकें इन को महसूल दरसाल मरजी होइ सो लैबो करो।

यह बात जवनेस के पुत्र महमूद तो न मानी ताकों मनाई नासरुद्दीन कहाई दर साल दस हजार द्रम्म पचास हस्ती दैबो करो।

सोही स्वीकार करि बादसाह को कुंच पीछो कराई जयपाल नैं महसूल दैबे को बहानों करि वाके भृत्य लाहोर मैं लाई कैद करे।

यहै जानत ही जवनेस हू बहोरि आइ जंग करि जयपाल कों भजाई सिंधु नदी जाकों नीलाब हू कहै ताके परतट पर्यन्त अपनों अमल करि मुद्रा मैं अपनें नाम को सिक्का खुदवाई तुरकमान म्लेच्छन कों उहां हाकिम राखि लाहोर की सीमा के अनेक सहर लूटि गजनी लैगयो केही

करभ बित्त भरे ॥३॥

हे यवनेश! आप ये हमारे देश तो हमें ही सौंप दो। हम इसके बदले आपको प्रत्येक वर्ष खिराज देंगे। आप अपनी मरजी से खिराज तय करें। जयपाल की इस शर्त को यवनेश के शहजादे महमूद ने नहीं माना पर उसको नासुरुद्दीन ने मना लिया और जयपाल से कहा कि ठीक है हमें तुम्हारा प्रस्ताव स्वीकार है। तुम्हें अपने इन देशों के एवजाने के रूप में दस हजार द्रम्म (मुद्रा) और पचास हाथी प्रतिवर्ष हमें देना होगा। इसे जयपाल ने स्वीकार किया और जैसे-तैसे बादशाह की फौज को वापस लौटाने के लिए कूच करवाया। इसके बाद जयपाल ने वह खिराज देने के बहाने बादशाह के नौकरों को लाहौर में ला कर कैद कर लिया। इस बात का पता चलते ही यवनेश फिर से अपनी सेना सहित आया और उसने जयपाल को भगा कर सिंधु नदी जिसे नीलाब भी कहा जाता है के तट पर्यन्त अपना अधिकार जमाया और प्रचलित मुद्रा पर अपना नाम खुदवाया। अर्थात् अपने नाम के सिक्के चलाए और तुर्कमान जाति के मुसलमान को वहाँ का हाकिम नियुक्त किया। इसके बाद लाहोर की सीमा के अनेक शहरों को लूट कर गजनी गया। वह लूट का माल कई ऊँटों पर लाद कर ले गया।

जाही समय मैं बुखारे के बादसाह सामानी पठान अमीर मनसूर के पुत्र अमीर नूह नें उमराव बदले जानि सहाय मांगिबे कों वकील अबूनसर गजनी पठायो।

ताकी सुनत ही नासुरद्दीन बडी फोज लै कैं बुखारे कों गयो ताकों सुनि अमीर नूह सम्मुह आयो जाकों देखत ही अलब को अंगज अस्व सों उतरि चरन चुंबन कों गयो ताकों उर सों लगाई पीछो हय चढाय अमीर नूह बुखारे में आयो।

पीछैं याकें संग ही अमीर नूह माबरुन्नहर सहर के मालिक अपनें उमराव समजूरी पठान अबूअली सों जाइ जंग कियो अबूअली भाजि कुलात गयो इनहू उहां जाइ जोर दियो अबूअली कुलात के हाकिम द्वै ही पलाइ नैसापुर के हाकिम फकरुद्दोला के पास गये उहां हू इननें जाइ घेरे तब फकरुद्दोला सहित तीन ही भजि बदक्षां गये तहां हू जाई जंग करि जय पाइ बदहाकिम सहित च्यारिन कों कैद करि बुखारे आवत ही तीन

सत सत्त्यासी मित हिजरी संबत में छप्पन बरस को बय पाइ नासरुद्दीन मर्‌यो।

याको बडो पुत्र महमूद संग ही हो ताको अनुज इस्माईल गजनी हो सो पिता के मृत्यु सुनत ही अनय करि गद्दी बैठि गयो ताकी सुनि महमूद महागंभीर संपन्न संतुष्ट नैसापुर ही रहि गयो जितेक में तो जरूर ही याके अनुज की अनीति करि गजनी को लोक जाइ पुकार्‌यो तब महमूद लिखी गद्दी दैबो मंजूर है पे रव्यत कों खराब कियें तो जरूर कैद करूँगा सोहू न मानि वाही राह परिरह्यो सुनि सुलतान महमूद नें गजनी आई अपनें अनुज इस्माईल कों कैद करि नासुरुद्दीन के बस मैं हो सो सब अपनें अधीन कर्‌यो ।।४।।

इसी समय में बुखारा के बादशाह सामानी पठान अमीर मन्सूर के बेटे अमीर नूह ने अपने उमरावों को विरुद्ध हुआ जान कर अपने एक वकील अबूनस्त्र को सहायता की प्रार्थना के साथ गजनी भेजा। वकील अबनस्त्र से मदद करने की बात सुनते ही नासुरुद्दीन एक बड़ी सेना ले कर तुरन्त बुखारा गया। नासुरुद्दीन का आगमन सुन कर अमीर नूह उसके सामने गया। उसे देखते ही अलब (सुबुक्तगीं) का पुत्र अपने घोड़े से उतर गया और उसने अमीर नूह के पांव चूमे। अमीर ने उसे उठा कर अपने गले लगाया और उसे फिर से घोड़े पर बिठा कर अपने साथ ले अमीर नूह बुखारा गया। इसके बाद अमीर नूह ने नासुरुद्दीन के साथ जा कर माबरुन्नहर नामक शहर के मालिक और अपने उमराव समजूरी पठान अबूअली से जा युद्ध किया। अबू अली भाग कर कुलात चला गया। इन्होंने उसका पीछा करते हुए कुलात में जा कर अपना बल प्रदर्शन किया परिणामस्वरूप अबूअली और कुलात का हाकिम दोनों ही वहाँ से भाग कर नैसापुर के हाकिम फकरुद्दोला के पास चले गए। इन्होंने तब भी उनका पीछा नहीं छोड़ा और अपनी सेना सहित नैसापुर को जा घेरा तब तीनों ही वहाँ से भाग कर बदक्षां चले गए। अमीर नूह के साथ नासुरुद्दीन ने उन्हें वहीं जा घेरा। युद्ध हुआ। उसमें विजय हासिल कर बदक्षां के हाकिम सहित चारों को कैद कर (अबू अली, कुलात का हाकिम, फखरुद्दोला और बदक्षां का हाकिम) बुखारा पहुँचे। बुखारा पहुँचते ही थोड़े ही दिनों में हिजरी संवत् तीन सौ सत्तासी में अपनी छप्पन वर्ष की आयु पूरी कर नासुरुद्दीन मरा।

नासुरुद्दीन का वड़ा पुत्र महमूद तो इस विजय प्रयाण में साथ ही था पर उसका छोटा फाई इस्माइल गजनी में था। उसने ज्योंही अपने पिता के इंतकाल की खबर सुनी तो वह अनाधिकार अनीतिपूर्वक पिता की गद्दी पर काबिज हो गया। जब यह समाचार महमूद ने सुना तो उसने गंभीरतापूर्वक विचार कर सब्र करने में अच्छाई समझी और जसापुर में ही रह गया पर थोड़े ही समय में इस्माइल की अनीति के आगे गजनी की रैयत ने महमूद के पास जा पुकार की। यह सुनकर महमूद ने अपने छोटे भाई को लिखा कि तुम्हें गद्दी देना मुझे स्वीकार है पर यदि इस प्रकार प्रजा पर अत्याचार करोगे तो मैं तुम्हें कैद कर लूँगा। इस्माइल ने अपने भाई की राय और धमकी को अनसुना कर रैयत के साथ वैसा ही सलूक रखा तब सुल्तान महमूद गजनी आया। उसने वहाँ आ कर अपने भाई और वहाँ के शासक इस्माइल को आ कर कैद कर लिया और अपने पिता नासुरुद्दीन के अधिकार में जितना क्षेत्र था उस पूरे क्षेत्र को अपने अधिकार में ले लिया।

याही की हाकिमी मैं सीस्तान मैं सुबर्ण की खानि निकसी ता पीछैं अमीरनूह नैं फिरि लिखी उहां का बंदोबस्त करि इहां आवो अब तुमको बल्क हिरात की हू हाकिमी दैहैं अैसो हुक्म स्वामि को सुनि महमूद हू चल्यो जितनें बल्क के पहिले हाकिम बक्तोजन नें बुखारे जाई अमीरनूह सों अपनी ही हाकिमी पीछी पाई स्वामी को हुक्म महमूद पैं यहै पठायो कि बल्क पें तो बक्तोजन ही रहैगो सो सुनि महमूद नैसापुर ही मुकाम राखि अपनों वकील अबुलहसन् भेजि कहाई पहिलें क्यों बुलायो सो अबुलहसन् जाई कही तहां वक्तोजन के कहें सो अमीरनूह नें महमूद को वकील हू भेदडारि उतसों फोरि अपनों वजीर करि लयो।

ता पीछैं वक्तोजन बल्क सों अैसी लिखी अपनी नैसापुर की जमीन महमूद लेता है सो सुनि नूह चढि आयो ताकी जानि स्वामी सों लरिबो अनुचित मानि महमूद मुरगाब की तरफ टरि गयो जानि नूह नैसापुर आयो तहां बक्तोजन नैं नूह को पहिलो वजीर फायक दूजो नयो वजीर महमूद को वकील अबुलहसन् इन दोउन कों मिलाई मालिक के नेत्र निकासि डारे सोतो वाही बेदना सों मरि ही गयो अरु वाके अनुज अब्दुलमुल्क कों बुखारे की गद्दी बैठारि वक्तोजन मुरगाब के समीप

महमूद हो तापैं चढि आयो तहांहु महमूद बडो जंग करि जबरदस्त भयो ताके डरसों फायक तथा अबुलहसन जो अब्दुलमुल्क कों लैकैं बुखारे में जाई बैठे अरु वक्तोजन नैसापुर आयो सुनि मुरगाब सों महमूदनें आई मार्यो अरु उत कों सगर को बादसाह ईलक बुखारे आइ फायक अबुलहसन सहित अब्दुलमुल्क कों मारि बुखारे को अधीस भयो ॥८॥

इसी महमूद की हाकिमी के समय सीस्तान में सोने की खान निकली। इसके बाद अमीर नूह ने फिर से चिट्ठी लिख कर कहलवाया कि वहाँ का पूरा प्रबन्ध अच्छी तरह कर यहाँ आओ। अब तुम्हें बलख और हिरात इन दो प्रांतों की हाकिमी देंगे। अपने स्वामी का ऐसा हुक्म सुन कर महमूद रवाना हुआ। इस बीच बलख प्रांत के पुराने हाकिम बक्तोजन ने बुखारा जा कर अमीर नूह से अपनी हाकिमी वापस पा ली। इसके बाद स्वामी (अमीर नूह) ने महमूद को यह संदेश भेजा कि बलख पर तो हाकिम बक्तोजन ही रहेगा। यह सुन कर महमूद स्वयं तो नैसापुर में ही रहा पर उसने अपना एक वकील अबुलहसन को भेज कर कहलवाया कि आपने फिर मुझे पहले क्यों बुलवाया था? जब अबुलहसन ने यह समाचार कहा तब बक्तोजन के कहने पर अमीर नूह ने महमूद के वकील अबुलहसन को अपनी ओर मिला लिया और महमूद से विमुख कर उसे अपना वजीर बना दिया।

इसके बाद बक्तोजन ने बलख से सन्देश भेजा कि हे स्वामी! अपनी नैसापुर की जागीर पर वह महमूद काबिज हो रहा है। यह सुन कर अमीर नूह ने चढ़ाई की। इस चढ़ाई का समाचार सुन कर और यह सोच कर कि अपने ही स्वामी से लड़ना अनुचित कर्म है महमूद मुरगाब की ओर निकल भागा। इधर जब नूह नैसापुर पहुँचा तो बक्तोजन ने नूह के पूर्व वाले वजीर फायक और नये वजीर महमूद के वकील अबुलहसन को अपने पक्ष में मिला कर अमीर नूह की आँखें निकलवा दीं। नूह इसकी पीड़ा से मर गया। तब बक्तोजन ने नूह के छोटे भाई अब्दुल्मुल्क को बुखारे की गद्दी पर बिठा दिया। फिर वह मुरगाब के पास जहाँ महमूद था उस पर चढ़ाई करने गया पर आगे महमूद ने भयंकर युद्ध किया जिससे डर कर फायक और अबुलहसन दोनों अपने साथ नये अमीर अब्दुल्मुल्क को ले कर बुखारा में जा घुसे और बक्तोजन नैसापुर आया। यह समाचार सुन कर मुरगाब से महमूद ने आ कर उसे नैसापुर में मार डाला। इधर सगर के बादशाह ईलक ने बुखारा पर

आक्रमण कर फायक और अबुलहसन सहित अब्दुल्मुल्क को मारा और स्वयं बुखारा का राजा बना।

यहै सुनत ही महमूद बल्क में अमल करि हिरात कों अधीन आनि सीस्तान् सासित करि नभनंद गुन मित हिजरी सन् मैं गजनी आई अपनें वकील अबूतय्यब कों बुखारे भेज कहाई हमारो मालिक मारि मालिक भयो यातैं अब जोर होइ तों जंग देहु ऐसी सुनि ईलकमहमूदकों बडो बहादुर जानि ताबैदारी कुबूल करि वकील के साथ केही तोफा भेजि गजनीपति महमूद प्रसन्न कर्यो। ता पीछैं ही भू निधि राम मित हिजरी सन् में महमूद बहुरिहू अटक उलंघि पेसोर देस पर्यन्त आई एक मास जंगकरि लाहोर के अधीस जयपाल कों पकरि पठंत के दुर्ग में कैद करि उहांही अपनें मुकाम राखि सीतकाल पर्यंत रहि जयपाल सों कर देबो लिखाइ लाहोर भेज दयो सो आवत ही महमूद के डरसों अपनें पुत्र आनंद पाल को राज्य दैकैं ज्वलन मैं जर्यो ।।६ ।।

यह सुनते ही महमूद ने बलख पर अपना अधिकार कर हिरात को अपने अधीन किया। इसके बाद सीस्तान पर अपनी आज्ञा चलाते हुए हिजरी सन् तीन सौ नब्बे में गजनी आ कर अपने वकील अबूतय्यब को बुखारा भेजा। उसके साथ कहलवाया कि हमारे मालिक को मार कर मालिक बने हो, यदि ताकत है तो मेरा मुकाबला करो। वकील अबूतय्यब से यह सुन कर ईलक ने महमूद को बड़ा पराक्रमी समझ कर उसकी ताबेदारी (सेवा) में वकील के साथ कई तोहफे, उपहार भिजवा कर गजनीपति ने महमूद को प्रसन्न कर उसका मातहत होना स्वीकार किया। तत्पश्चात हिजरी सन् तीन सौ इक्यानवे में एक बार फिर अटक नदी को पार कर महमूद पेशावर देश तक आया और वहाँ आ कर उसने एक माह तक लाहौर के राजा जयपाल से युद्ध किया। अन्ततः उसने राजा जयपाल को पठंता के दुर्ग में कैद कर लिया फिर उसने अपना मुकाम भी पूरे शीतकाल के बीतने तक वहीं कर राजा जयपाल से खिराज देना लिखित में ले कर उसे लाहौर भेजा। जयपाल जब लाहौर पहुँचा तो महमूद के डर से उसने अपने पुत्र आनन्दपाल को राज्य भार सौंप दिया और स्वयं अग्नि में जल कर मर गया।

ता पीछैं त्रि नंद गुन मित हिजरी साल में सुलतानमहमूद सुबुक्तगीं

बहोरिहु अटक उल्लंघि मुलतान की सीमा में सहर भतनें के भूप विजयराज सों तीन अथवा च्यारि दिन जंग कीनों विजयराज भज्यो ताकों पृतना पठाई घिराइ लयो तब विजयराज आत्महत्या करि मरत भयो ताको सिर काटि महमूद के सुभट मालिक पास लाये ता पीछैं महमूद भतनैं को लूटि गजनी गयो। अरु कितेक कहत बुखारे को बादशाह अलब को स्वामी तो अमीरनूह हो अरु वाकै पुत्र अमीरमनसूर भयो।

ता पीछैं सुलतानमहमूद गजनवी नैं आर्यावर्त मैं बहोरि आइ सोमनाथ सिव को लिंग तोरिबो बिचारयो ताकों सुनि बहुत ही आर्याबर्त के अधीसन आइ सुबुक्तगीं सों जंग रच्यो। परंतु दैव प्राबल्य करि पचास हजार आर्यन मांहिं सो एक न बच्यो।

तब तो जवन कों जबर जानि इहां के भूपन नैं नम्रतापूर्बक महमूद सों कहाई हमसों आठकोटि रुपय्ये उपदा के लैकैं महरबान होइ हमारे पर दैवत को लिंग तोरिबे को इरादो छोरि देहु। सोहु न मानि सोमेश्वर के लिंग को करपत्र सों चिराई तामांहिं सों निकसे रत्न आठ कोटि मुद्राहू सों अधिक अर्घ के हे तिनकों लैके बहुत ही आर्यन को बिनास करि सोमेश्वर के मंदिर के कपाटन सहित गजनी लै गयो एहु।

या रन मैं अनिहलपुर के अधीस चालुक्य विजयपाल भुज पुर के भूप जाडेचा कर्मसेन मौरवी के महीप मंकुवान धीरदेव सिरोही के अधीस देवड़ा महीराज जालपुर के अधीस सोनगिरा रनधवल बाक्षेत्र के स्वामी संचोरा जयदेव नगरकोट के महीप जादव नारायण ऊमरकोट के अधिराज सोढा सत्रुसाल जैसलमेरु के अधीस भट्टी मूलराज ईडर के नरेस गोभिल चंद्रसेन रैवत के अधिराज सरबहिया सूरराज प्रमुख पश्चिमके प्रांत के छोटे रू बड़े अनेक राजा मरे।

अरु अपनें धर्म की रक्षा करन संचोर को अधीस संचोरा चहुवान रनधीर तथा याके सोदर जयमल्ल त्रिलोचन अरु उरथ बंसीय बकुट चहुवान बुधसेन जंगलू को प्रामार अल्हन इत्यादिक महाबीर जावते महमूद की सेना पैं सोतिक दैकें म्लेच्छ कों भजाइ घायन परे॥७॥

इसके बाद हिजरी सन् तीन सौ तिरानवे में एक बार फिर अटक नदी को पार कर सुलतान महमूद सुबुक्तगी ने मुलतान की सीमा में जा कर भटनेर

के राजा विजयराज से तीन चार दिन तक युद्ध किया। इस जंग में विजयराज रणभूमि छोड़ कर भाग गया जिसे महमूद ने अपनी सेना द्वारा घेरा डलवा कर पकड़ने का आदेश दिया तब विजयराज ने आत्महत्या कर अपने प्राण छोड़ दिये। इसका सिर काट कर महमूद के योद्धाओं ने अपने मालिक को ला भेंट किया। इसके बाद भतनैं (भटनेर) शहर को लूट कर महमूद वापस गजनी गया। कुछ लोग यह भी कहते हैं कि बुखारा का बादशाह और अलब का स्वामी तो अमीर नूह ही था और उसके अमीर मन्सूर नामक पुत्र हुआ। इसके बाद सुलतान महमूद गजनवी ने आर्यावर्त (भारत) में फिर से आ कर गुजरात में सोमनाथ महादेव का लिंग-विग्रह तोड़ने का विचार किया। इस बात को सुन कर आर्यावर्त के कई राजाओं ने आ कर सुबुक्तगीं से युद्ध रचाया पर दैवयोग (भाग्य की प्रबलता के कारण) से पचास हजार आर्यों में से एक भी जीवित नहीं बच पाया। जब यवन पक्ष की सेना को इतना प्रबल देखा तो यहाँ (आर्यावर्त) के राजाओं ने महमूद को आठ करोड़ रुपयों की राशि का नजराना देने की पेशकश करते हुए निवेदन किया कि मेहरबानी कर हमारे देवाधिदेव का लिंग विग्रह तोड़ने का इरादा त्याग दें। पर महमूद ने एक न सुनी उसने सोमनाथ के लिंग को करोत (बड़ी आरी) से चिरवा कर उसमें से निकले आठ करोड़ रुपयों से अधिक मूल्य के हीरे जवाहरात को ले कर मंदिर के कपाटों सहित गजनी को रवाना हुआ। इस युद्ध में उसने कई आर्यों का विनाश किया।

इस युद्ध में अनहिलपुर पट्टनि का चालुक्य नरेश विजयपाल, भुज का जाड़ेचा राजा कर्मसेन, मोरवी का महीप झाला धीरदेव, सिरोही का देवड़ा राजा महीराज, जालपुर (जालोर) का सोनगिरा राजा रनधवल और बलोत्र (बालोतरा) का स्वामी सांचोरा जयदेव मारे गए। इनके अतिरिक्त इस मोर्चे पर मरने वालों में नगरकोट का यादव राजा नारायण, ऊमरकोट का सोढ़ा राजा शत्रुसाल, जैसलमेर का भाटी राजा मूलराज, ईडर नरेश गोभिल चन्द्रसेन सहित रैवत का अधिपति सरबहिया सूरराज प्रमुख थे। इनके साथ पश्चिम प्रांत के कई छोटे राजा भी मरने वालों में थे। अपने धर्म की रक्षार्थ जूझने वालों में साँचोर का अधीश सांचोरा चहुआन रनधीर और उसके भाई जयमल, त्रिलोचन भी थे। इनके अलावा उरथवंशीय बकुट, चहुवान बुधसेन, जांगलू प्रदेश का प्रामार अल्हन इत्यादि सभी योद्धा जाती हुई महमूद

गजनवी की सेना पर रात्रि को हमला कर म्लेच्छों को भगा कर स्वयं घावों से लकदक हो मारे गए।

इतिश्री बंशभास्करे महाचम्पूके पूर्वायणे चतुर्थ राशौ बीतिहोत्र-चण्डासि बंशबर्णनान्तर्गतप्रत्यन्तचरित्रे बुखारेश्वराऽमीरमन्सूरस्वदासा-ऽलबार्थखुराशानाधिपत्य सहितसुबुक्तगीं पद प्रदान तन्मरणानन्तरतत्पुत्र-नाशुरुद्दीनपरास्तलाहोरनृपजयपालदेशद्वय समाक्रमण तत्स्थानस्थापित-स्वमतोचित देवालयम्लेच्छराजगजनीगमन पश्चात्जयपालम्लेच्छजित-स्वदेशद्वय प्रत्याक्रमण श्रुततदुदन्तप्रत्यागतससुतनासुरुद्दीनपरास्तजय-पालतद्देशद्वय पणीकृताऽयुत रौप्यकपञ्चास द्रूजप्रतिबर्षढोकनाङ्गीकरण तत्प्रस्थानानन्तरजयपालत द्भृत्यकाराप्रेक्षेपण श्रुततद्वृत्तपुनरागतयवन-राजभीतजयपाल पलायन प्रत्यन्तराजसिंधुसरित्परतटपर्यन्तसमाक्रान्तत-द्देशस्वनामाङ्कितम्लेच्छमतमुद्राव्यवहारप्रबतर्न बुखारेश्वरप्रतीपस्वभट-समाक्रमणसहायार्थसमाहूतनासुरुद्दीनबुखारागमन दमितततत्सामन्तचतुष्क नासुरुद्दीनमरण तत्सुतमहमूदस्वानुजार्थस्वाधिपत्यसमर्पण पश्चात्श्रुतत-दनयसमागतकाराक्षिप्तानुजमहमूदस्वराज्यसमासादन तद्राज्यसङ्गतसी-रतानप्रान्तसुवर्णखनिनिष्कसन पुनः स्वामिसमाहूतमहमूदनैशापूर-पर्यन्तगमन सूचकवक्तोजनशिक्षितस्वामीतदागमनिवारण प्रत्युतमहमूद-प्रेषितवकीलाऽबुलहसन्स्वसचिवीकरण तत्पराभवार्थस्वयमभिषेणान निजस्वामिनूहप्रतिसल्लत्वकातरमहमूदमुरगापलायन फायका बुलहसन सहितवक्तोजन निजनाथनूहनेत्रनिष्कासन नूहानुजाऽबदुलमुलकत द्रद्दि-कोपवेशन पश्चादेकीभूतदुष्टचतुष्टयमहमूदमारणोपायरणरचन महमूदत्र-स्तेतरत्रय बुखाराप्रद्रवण वक्तोजन नैशापुरबपलायन श्रुततदुदन्तनैशापुरा-गतमहमूदवक्तोजनविध्वंसन बुखारागतसगरदेशीयम्लेच्छराजेलकफाय-का बुलहसन सहिताऽबदुलमुल्क निपातन समाक्रान्तबल्क हिरात सीस्तान महमूदबुखारेश्वरीभूतेलकसमीपस्वामिवैरवालनयुद्धार्थस्वकीलाऽबुत-य्यबप्रेषण श्रुतैतदीलकमहमूदाश्रितीभवन लङ्कितकरतोयापुनरागत-महमूदपराजितबन्दीकृतजयपालपठन्तादुर्गप्रस्थापन स्वीकृतभृत्यत्वमुक्त-लाहोरसमागतदत्तपुत्रार्थपट्टजयपालपावकप्रविशन गजनीगतमहमूदपुन-रार्यावर्त्तसीमागमन घातितभतनेश्वरबिजयराज यवनराजपुनःप्रतिगमन

बुखारेश्वर पौर्वापर्यसंशयसूचन पुनरागतयवनेन्द्रमहमूदसोमनाथशिवलिङ्ग बिदारण तन्निवारणस्वीकृताष्टकोटिद्रम्मचालुक्यबिजयपाल सूरराज यादवकर्मसेन नारायण मूलराज मंकुवाणधीर चाहुवाणमहीराज रणधवल जयदेव प्रामारशत्रुशल्ल्य गोभिलचन्द्रसेन प्रमुखपाश्चात्यपार्थिवगण-सहितपञ्चाशत्सहस्रार्यगणतद्रणमरण खिलानेकार्यप्रकरप्रहारप्रापण यवनेन्द्रशिवालयकपाटद्वय सहिततल्लिङ्गनिष्कासितमणिजातगजनी-समानयन मेकोनत्रिंशो मयूखः ॥२९॥ आदितोष्टत्रिंशदुत्तरशततमः ॥१३८॥

इति श्रीवंशभास्कर महाचम्पू के पूर्वायण की चतुर्थ राशि में अग्निवंशी चहुवान वंशवर्णन के भीतर यवनों के चरित्र में बुखारे के बादशाह अमीर मनसूर का अपने नौकर अलब के लिए खुरासान के मालिकपन के साथ सुबुक्तगी का खिताब देना, उसके मरे बाद उसके पुत्र नासुरुद्दीन का हारे हुए लाहौर के राजा जयपाल के देशों को घेरना, उस स्थान पर अपने महजब की मस्जिद बनाकर बादशाह का गजनी जाना, पीछे जयपाल का म्लेच्छ के विजय किये हुए अपने दोनों देशों का वापस लेना, यह वृत्तांत सुनकर नासुरुद्दीन का अपने पुत्र सहित वापस आकर हारे हुए जयपाल के दोनों देशों को खिराज युक्त करके दस हजार रुपए और पचास हाथी हर साल नजराना देने को मंजूर करना, उसके गये बाद जयपाल का बादशाह के नौकरों को कैद करना, ये समाचार सुनकर फिर आये हुए बादशाह के भय से जयपाल का भागना, बादशाह का अटक नदी के परले किनारे से लेकर उन देशों में अपने नाम से जाना जाए ऐसे म्लेच्छों के मत के रुपये बर्ताव में जारी करना, अर्थात् अपने नाम का सिक्का चलाना, बुखारा के बादशाह के प्रतिकूल हुए उमरावों पर चढ़ाई करने के सहाय के लिये नासुरुद्दीन का बुखारा जाना, उनके चार उमरावों को दण्ड देकर नासुरुद्दीन का मरना, उसके पुत्र महमूद का अपने छोटे भाई के लिए गद्दी देना, बाद उसकी अनीति सुनकर वहाँ आ छोटे भाई को कैद करके अपना राज्य लेना, उस राज्य के साथ सीस्तान प्रान्त में सोने की खान का निकलना, फिर मालिक के बुलाये हुए महमूद का नैशापुर तक जाना, चुगली खाने वाले बक्तोजन के सिखाये हुए स्वामी (नूह) का महमूद को आगे आने से उलटा मोड़कर महमूद के भेजे हुए वकील अबुलहसन को फोड़ कर अपना मंत्री बनाना, उसको हराने के लिए नूह का खुद जाना, अपने स्वामी नूह के प्रतिकूल होने से कायर महमूद का मुरगाब

भागना, फायक, अबुलहसन और बक्तोजन का अपने स्वामी नूह की आँखें निकलवाना और अनुलहसन का नूह की गद्दी पर बैठना, पीछे फिर चारों दुष्टों का एक होकर महमूद को मारने के लिए युद्ध करना, महमूद से डरकर तीनों का बुखारा भागना, और बक्तोजन का नैशापुर भागना, यह समाचार सुनकर नैशापुर में जाकर महमूद का वक्तोजन को मारना, बुखारा में जाकर सगर देश के बादशाह ईलक का फायक और अबुलहसन सहित अब्दुलमुल्क को मारना, बलक, हिरात, सीस्तान लेकर महमूद का बुखारे के मालिक हुए ईलक के पास अपने मालिक का बैर लेने को युद्ध के लिए अपने वकील अबूतय्यब को भेजना, यह सुन कर ईलक का महमूद का ताबेदार होना, अटक नदी लांघकर महमूद का फिर से आकर हारे हुए जयपाल को पठन्ता के गढ़ में रखना, खिराज देना मंजूर कर छूटके लाहौर आकर पुत्र को पाट बिठाकर अजयपाल का अग्नि में प्रवेश करना, गजनी गये हुए महमूद का फिर आर्यावर्त की सीमा में आना, भतना (भटनेर) के राजा विजयराज को मारकर बादशाह का वापस जाना, बुखारे के बादशाहों में पहले कौन हुआ पीछे कौन हुआ इस संदेह का बताना, फिर आये हुए महमूद का सोमनाथ महादेव के लिंग को तोड़ना, उसको मना करने के लिए आठ करोड़ रुपए देना स्वीकार करके सोलंकी विजयपाल, शूरराज यादव, कर्मसेन, नारायण, मूलराज झाला, धीर चहुवान, महीराज, रणधवल, जयदेव प्रामार, शत्रुशल्य गोहिल, चन्द्रसेन्न आदि पश्चिम देश के राजाओं के समूह सहित पचास हजार आर्य समूह का उस रण में मरना, बाकी के आर्यों के समूह का प्रहार पाना, बादशाह का शिव के मंदिर के दोनों किवाड़ों सहित उस लिङ्ग से निकले हुए मणियों को गजनी ले जाने का उनतीसवाँ मयूख समाप्त हुआ। और आदि से एक सौ अड़तीस मयूख हुए।

प्रायो ब्रजदेशीय प्राकत मिश्रित भाषा

सचरणगद्यम्

इतकों मंडनगढ के अधीस चंडासिराज मंडन सों रानी सौभाग्यदेवी मैं राजकुमार आत्माराम जन्म लयो।

सो ईडर नरेस गोभिल चंद्रसेन की पुत्री प्रतापदेवी कों परनि पिता के अनंतर मंडनगढ को अधीस भयो।

नरेन्द्र आत्माराम सों रानी प्रतापदेवी मैं राजकुमार आनंदराज जयराज द्वै ही सोदर जन्म पायो।

तिनमें अग्रज आनंदराज तो दिल्ली के अधीस तोमर अनंगपाल के सामंत राजकोट के राजा प्रतिहार पूर्णमल्ल की दुहिता अरु कमला की सखी अैसी दयावती कों बिबाहि जनक के अनंतर मंडनदुर्ग को अधीस कहायो ॥१ ॥

इधर मंडनगढ़ (मांडलगढ़) के चहुवान राजा मंडन के रानी सौभाग्य देवी की कोख से राजकुमार आत्माराम का जन्म हुआ। जिसने ईडर के गोभिल राजा चन्द्रसेन की पुत्री प्रतापदेवी से विवाह किया और अपने पिता की मृत्यु के उपरांत मांडलगढ़ का राजा बना। इस राजा आत्माराम के रानी प्रतापदेवी के गर्भ से कुमार आनन्दराज और जयराज दो पुत्रों ने जन्म लिया। इनमें से अग्रज आनन्दराज ने तो दिल्ली के राजा तंवर अनंगपाल के सामन्त राजकोट के प्रतिहार राजा पूर्णमल्ल की पुत्री दयावती जो राजकुमारी कमला की भी सहेली थी से विवाह किया और अपने पिता के देहावसान पर मांडलगढ़ का राजा बना।

इतकों चित्रकूट के अधीस राजकुल तेजसिंह के प्रतिहारी पिंगला मैं पुत्र समरसिंह भयो।

तासों बत्तीस बरस पीछैं अजमेर नगर के अधीस चंडासिराज सोमेस्वर सों तोमरी रानी कमला मैं राजकुमार पृथ्वीराज जन्म लयो।

या समय के समीप इतकों गजनी के बादसाह महमूद सुबुक्तगीं के अनंतर गोरदेस के गौरीपठान अफगान सहाबुद्दीन बडे बल करि खुरासान को आधिपत्य पाई गजनी की गद्दी बैठि केही बिसायत अपनें आदेस के अधीन करि आर्यावर्त्त मैंहू अनेक बेर आयो।

ताहू को संक्षेप चंडासिराज पृथ्वीराज के चरित्रमैं कहि दिखायो ॥२ ॥

उधर चित्रकूट (चित्तौड़गढ़) के रावल तेजसिंह के अपनी प्रतिहार रानी पिंगला की कोख से कुमार समरसिंह का जन्म हुआ। इस कुमार के जन्म के बत्तीस वर्ष उपरान्त अजमेर के चहुवानराज सोमेश्वर की अपनी तीसरी तंवर रानी कमला के गर्भ से राजकुमार पृथ्वीराज का जन्म हुआ।

इसी समय के आसपास वहाँ गजनी के बादशाह सुबुक्तगी के बाद गोर देश का गौरी पठान अफगान शाहबुद्दीन अपनी ताकत के बल पर खुरासान का शासन पा कर गजनी के तख्त पर बैठा। उसने कई क्षेत्रों को अपनी आज्ञा के अधीन किया और आर्यावर्त में भी कई बार आया। जिसका संक्षिप्त विवरण चहुवान राजा पृथ्वीराज के चरित्र में दे दिया गया है।

या समय सों कछु पूर्ब कान्यकुब्ज के अधीस राष्ट्रकूट अभयचंद्र के पुत्र नरेन्द्र बिजयचंद्र दक्खिन बिहीन आर्यावर्त में दिग्बिजय करि बंदी अमरकों एक अब्ज रजत मुद्रा दई।

या बिजयचन्द्र के पुत्र जयचंद्र भयो सोहू बंदिन कों द्वै अब्ज दै रु अपनें प्रताप प्रपन्न पृतना के प्राचुर्य करि पंगु पद पाइ आर्यावर्त्त में कहायो एक जई।

याही समय के समीप अनिहलपुर के अधीस चालुक्यराज विजयपाल के पुत्र भोलारायभीम पिता के अनंतर पंच सिख पट्ट।

लयो अरु इतकों मंडपपुर के महीप प्रतिहार अजरान को पुत्र नरेस नाहरराज तीर्थगुरु पुष्कर के प्रसाद करि अपनें कुष्ट बिहाई पुष्कर के मध्य कुंड कै सर्बही धातुमय सोपान बनावत भयो ।।३ ।।

इसी समय से थोड़ा पहले कन्नौज के राठौड़ राजा अभयचन्द्र के पुत्र राजा विजयचन्द्र के एक दक्षिण दिशा के प्रांतों को छोड़ शेष पूरे आर्यावर्त पर विजय पा कर अपने भाट अमर को एक अरब चाँदी के रुपयों का दान दिया। इस राजा विजयचन्द्र के जयचन्द्र नामक पुत्र हुआ। जिसने भाट लोगों को दो अरब रुपयों का दान देने से और अपनी बड़ी सेना के प्रताप से प्राप्त की हुई विशेषता के सहारे, चरणविहीन (पंगु) का पद पा कर आर्यावर्त में एकछत्र विजयी कहलाया। इसी समय के आसपास अनहिलपुर के स्वामी चालुक्यराज विजयपाल का बेटा भोलाराय भीम अपने पिता की मृत्यु हो जाने पर पिता का उत्तराधिकारी हो कर अनहिलपुर के राजसिंहासन पर बैठा और इधर मंडोवर के राजा प्रतिहार अजरान के पुत्र नरेश नाहरराज ने अपना कुष्ठ रोग ठीक हो जाने के सबब प्रसन्न हो कर तीर्थगुरु पुष्कर के मध्य कुंड में धातु (चाँदी) की सीढ़ियाँ बनवाईं।

इतकों द्योसा के अधीस कूर्म जन्हडदेव को पुत्र पज्जुण्ण अपनें

पुत्र मलयसिंह सहित स्वकीय अल्प राज्य को प्रबंध करि बडे पटा के लोभ तथा पूर्बप्रोक्त प्रसंग करि अजमेर राजकुमार पृथ्वीराज के आश्रित गयो।

अरु कान्यकुब्ज के नरेस जयचंद्रहू आर्यावर्त के दिग्विजय करि दक्खिन के प्रयान में प्रामारराज नृसिंह के पुत्र अमान सों मालव छीनी अवंती सोंहु निकासि दयो।

चंडासिराज आनंदराज को अनुज जयराज अपने मातुल गृह ईडर गयो हो तहां हीं अजयगढ़ के अधीस चालुक चतुर्भुज की पुत्री पुष्पावती परनि सपत्नी कही अजमेर के अधीस चंडासिराज सोमेस्वर के आश्रित पहिलें ही जाइ रह्यो हो सोतो नरेन्द्र सोमेश्वर नैं दिल्ली के अधीस तोमर अनंगपाल को सहायकरि कान्यकुब्ज के नरेस दिग्विजई बिजयचंद्र कों बाहुबल करि पराभव दयो।

अरु ताको पुत्र अक्षयराज सोहू सोमेश्वर पृथ्वीराज द्वै ही पितापुत्रन बड़े सत्कार सहित राख्यो तानें चालुक्य भोलाराय के रन प्रमुख अनेक ही जंगन में स्वामी कों जय दै रु प्रामार सलख नैं सहाबुद्दीन पकर्यो। ताही तुमुल मैं लोंन उज्जवल करि अप्रज ही जनक जयराज के पास गयो ॥४॥

इधर दौसा के अधीस कछवाहा जन्हड़देव का पुत्र पज्जुण अपने बेटे मलयसिंह को अपने छोटे से राज्य का राजभार सौंप कर स्वयं कोई बड़ी जागीर पाने के लोभ से और पूर्वप्रोक्त (पहले कहे गए) प्रसंग (ढूँढ़ राक्षस के वरदान वाला प्रसंग) से राजकुमार चहुवान पृथ्वीराज का आश्रित बन कर अजमेर आया। उधर कन्नौज के राजा जयचन्द्र ने आर्यावर्त पर दिग्विजय करने के लिए अपने दक्षिण दिशा के प्रयाण में प्रामारराज नृसिंह के पुत्र अमान से मालवा का प्रदेश छीन कर उसे उज्जैन से ही निकाल दिया।

इधर चहुवान राजा आनन्दराज का छोटा भाई जयराज अपने ननिहाल ईडर नगर को गया। उसने वहीं अजयगढ़ के चालुक्य राजा चतुर्भुज की पुत्री पुष्पावती से विवाह कर लिया और पत्नी सहित अजमेर आया। यह चहुवान जयराज चहुवान राजा सोमेश्वर का मातहत पहले से ही था। जब राजा सोमेश्वर ने दिल्ली के तंवर राजा अनंगपाल की सहायता करते हुए कन्नौज

के दिग्विजयी राजा विजयचन्द्र को युद्ध में अपने बाहुबल से परास्त किया तब भी जयराज उसकी सेना में था।

इस जयराज चहुवान के पुत्र अक्षयराज को दोनों पिता-पुत्र राजा सोमेश्वर और राजकुमार पृथ्वीराज चहुवान ने अपने पास पूरे आदर के साथ रखा। इस अक्षयराज ने चालुक्यराज भोलाराय के साथ वाले युद्ध सहित कई युद्धों में वीरतापूर्वक अपनी भूमिका निभा कर अपने स्वामी को विजय दिलवाई। जिस युद्ध में प्रामार सलख ने शाहबुद्दीन गौरी को पकड़ कर बंदी बनाया था उसी युद्ध में अपने नमक का कर्ज अदा करते हुए वह चहुवान अक्षयराज निःसन्तान ही अपने पिता जयराज के पास गया अर्थात् स्वर्गलोक को गया।

अरु चंडासिराज आनंदराज सों प्रातिहारी रानी दयावती में राजकुमार हम्मीर गंभीर द्वै ही सोदर जन्म लेत भये।

अरु बयवृद्धि के अनुसार सबही उचित बिद्या को संग्रह करि अपनें अन्वय कै अभीष्ट सस्त्रविद्या को बिसेस साधन करि खुरली मैं अद्वितीय ही बढि गये।

जिमजिम अपनें पितृव्यक के पुत्र अरु पृथ्वीराज के सुभट अक्षयराज की समरपंडितपन की कीर्ति सुनी।

तिमतिम सर्ब ही सस्त्रन कों समग्ग साधि मंडनपुर ही अपनें पिता को खलूरिक मैं करि दिखाई चो गुनीं ॥५॥

चहुवान राजा आनन्दराज के अपनी प्रतिहार वंशीय रानी दयावती की कोख से दो पुत्र जन्मे जिनमें बड़ा राजकुमार हम्मीर और छोटा गम्भीर था। ये दोनों कुमार अपनी बढ़ती उम्र के साथ सारी उचित विद्या का अध्ययन करने के बाद अपने कुल की मर्यादा के अनुरूप सारी शस्त्र विद्या सीख कर बाण विद्या में पारंगत हो गए। इन राजकुमारों ने ज्यों-ज्यों अपने चाचा के पुत्र और कुमार पृथ्वीराज चहुवान के सामन्त अक्षयराज की शस्त्र विद्या की कीर्ति सुनी त्यों त्यों इन्होंने भी सभी शस्त्रों को चलाने का अभ्यास किया और शस्त्र विद्या में पारंगत हो कर अपने पिता के समक्ष मांडलगढ़ की शस्त्र शाला (अखाड़ा) में अपनी धनुर्विद्या का प्रदर्शन किया जो अक्षयराज की अपेक्षा चार गुणा बेहतर था।

तहां बड़े राजकुमार हम्मीर तो मंडनगढ़ के समीप हम्मीरपुर नामक ग्राम बसाई मंडू के अधीस मुंकवान नृसिंह की नंदिनी नवश्री बिबाहि पीछे अपनें भुजबल की खट्टी भुम्मि भोगिबो बिचारि मंडनपुर सों अचानक आइ दहिया रनधीर कों मारि जासों नैनवा कहैं सो नयनपुर आनि लयो।

ताके प्रांतमें निरंकुस राज्य जमाई कुमारपन मैं ही अपनें जनक आनंदराज कौं आनंद दयो।

यहै सुनत ही अजमेर सों राजकुमार पृथ्वीराज नैं सचिव संग बड़े सत्कार को पत्र दै रु राजकुमार हम्मीर बुलायो।

तानैं जावत ही बीरविद्या को बढ़तो प्रताप देखि पृथ्वीराज की आज्ञा पाई अपनें अनुज गंभीर के बुलाइबे कों मंडनगढ़ नरेस आनंदराज प्रति विज्ञसिपत्र पठायो ।।६ ।।

इनमें से बड़े राजकुमार हम्मीर ने तो मांडलगढ़ के समीप हमीरपुर नामक गाँव बसा कर मांडू के अधीस झाला नृसिंह की पुत्री नवश्री से विवाह किया। इसके बाद वह अपनी अर्जित की हुई भूमि को भोगने का विचार कर मांडलगढ़ आया। यहाँ से अचानक आक्रमण कर दहिया रणधीर को मारा और जिसे वर्तमान में नैनवा कहते हैं उस नयनपुर पर अधिकार कर लिया। फिर इसी प्रान्त में निर्भय हो कर अपना राज्य जमाया और कुमारपन में ही अपना स्वतंत्र राज्य बना कर अपने पिता आनन्दराज को आनन्दित किया। जब इस बात का समाचार अजमेर के राजकुमार पृथ्वीराज ने सुना तो उसने अपने सचिव के साथ पत्र भेज कर बड़े सत्कारपूर्वक कुमार हम्मीर को अजमेर बुलवाया। इस कुमार के अजमेर जाने के बाद राजकुमार पृथ्वीराज की आज्ञा ले कर इन दिनों अपने शस्त्र ज्ञान के कारण बहुचर्चित अपने छोटे भाई कुमार गंभीर को अजमेर बुलवाने के लिए राजा आनन्दराज के पास अर्जी भिजवाई।

नरेस नें गंभीर सों अजमेर जैबे की जंपी तहां कुमार कर जोरि कही आपको रु अग्रज को आदेस तो सदा ही सिर पर है परंतु मोहू पैं पृथ्वीराज ही पत्र पठावैं तो आदर जान परै।

नहीं तो स्वान के समान अनादर को जैबो चाहुवान कुल की कमनीय कीर्ति हरैं।

ऐसे ही उत्तर अजमेर लिखाइ राजकुमार गंभीर सावर के अधीस दाधिम दुर्गभानु की दुहिता जसोदा बिबाह्यो।

तामें कुमर रनधवल कों उत्पन्नकरि एक अब्द पर्यन्त पृथ्वीराज पास जैबे मैं साहसही निबाह्यो ॥७॥

पिता राजा ने पत्र का हवाला दे कर जब कुमार गंभीर से अजमेर जाने की कही तब कुमार ने पूरी विनम्रता के साथ हाथ जोड़ कर निवेदन किया कि पिता और मेरे बड़े भाई आप दोनों का आदेश तो मेरे लिए सदा ही से शिरोधार्य करने योग्य रहा है। हाँ, यदि यह पत्र मुझे स्वयं चहुवान पृथ्वीराज लिखते तो आदर सहित जाता पर हे पिता! उनके स्वयं के पत्र के बिना और बिना बुलाये कुत्ते की तरह अनादरपूर्वक जाने में तो चहुवान कुल की सुन्दर कीर्ति का नाश होता है। यही उत्तर अजमेर भिजवा कर कुमार गंभीर सावर के अधीस दाहिमा दुर्गभानु की पुत्री यशोदा से विवाह करने सावर गया। कुमार गंभीर के अपनी इस पत्नी कुंवरी यशोदा के गर्भ से कुमार रनधवल नामक पुत्र हुआ। कुमार गंभीर ने इसी तरह एक वर्ष की अवधि तक अजमेर पृथ्वीराज चहुवान के पास नहीं जाने का हठ निभाया।

कारन यह भयो कि गंभीर को पत्र अग्रज के पास अजमेर गयो ताही समय दिल्लीके अधीस तोमर अनंगपाल अपनी इला दौहित्र कों दैबो बिचारि कुमार पृथ्वीराज बुलायो।

तानें जनक पितृव्यक सामंतन के सम्मत करि तेरह अब्द की अवस्था मैं दिल्ली आइ मातामह को राज्य पायो।

पहिलैं द्वापर के अंत मैं चंडासिराज सहदेव सौं कौरवराज संतनु नैं दिग्विजय करि इंद्रप्रस्थ लै लयो।

सो तबकों गयो एक सत एकोन चालीस पुरुखन मैं अब चंडासिराजकुमार पृथ्वीराज कै बहोरि आवत भयो ॥८॥

इसका मुख्य कारण यह रहा कि कुमार गंभीर का भेजा पत्र जब अजमेर अपने बड़े भाई के पास पहुँचा उस समय तक पृथ्वीराज दिल्ली के राजा तंवर अनंगपाल के बुलावे पर दिल्ली चला गया था क्योंकि उसके नाना राजा अनंगपाल ने अपने दौहित्र (स्वयं पृथ्वीराज) को राज्य देने को बुलवाया था और पृथ्वीराज ने अपने पिता, चाचा और सभी सामन्तों से पूरी मंत्रणा कर

उनकी सहमति से मात्र तेरह वर्ष की आयु में दिल्ली आ कर अपने नाना का राज्य पाया। पूर्व में द्वापर युग के अन्त में चहुवान राजा सहदेव से कौरवराज शान्तनु ने दिग्विजय कर दिल्ली का राज्य छीन लिया था। सो तब का चहुवानों से गया हुआ दिल्ली का राज्य एक सौ उनचालीस पीढ़ियों के अनंतर राजकुमार पृथ्वीराज चहुवान ने वापस पाया।

प्रामारराज बिक्रमके संबत ग्यारहसै अट्ठावीस के मार्गसिर मास की पांडुर पंचमी के दिन पृथ्वीराज दिल्ली को पट्ट लह्यो।

अरु अनंगपाल आत्मजके अभाव करि आकुलीभूत हठपूर्बक दृढ उपराम धारि गंगाद्वार के उत्तर के प्रांत में जाई रह्यो।

कुमार पृथ्वीराज अपनैं जनक नरेन्द्र सोमेश्वर को गद्दी दैन लग्यो सो न लीनीं तब स्वसुर के दैवज्ञ हरिज्ज्योति जगज्ज्योति अपनें गुरु रामदेव अनुज कृष्ण सामंत सलख कैमास प्रमुख सबन के आग्रहपूर्बक कहि बेकरि गद्दी लई।

याही बरस कैमास चामुंडराज द्वै ही दाहिमैं नाहरराज के तनूजन स्वकीय स्वसा पृथ्वीराज कूं बिबाहि दई॥९॥

विक्रम संवत् के वर्ष ग्यारह सौ अट्ठाईस के मार्गशीर्ष माह के शुक्ल पक्ष की पंचमी तिथि के दिन पृथ्वीराज चहुवान ने दिल्ली का राज्य पाया और राजा अनंगपाल पुत्र नहीं होने के कारण व्याकुल हो, हठपूर्वक दृढ़ विरक्ति अपना कर, गंगा द्वार (हरिद्वार) के उत्तर प्रांत में जा कर रहने लगा। राजकुमार पृथ्वीराज चहुवान ने यह दिल्ली की राजगद्दी अपने पिता राजा सोमेश्वर को देनी चाही पर जब उन्होंने इस प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया तब श्वसुर (राजा अनंगपाल) के राज ज्योतिषी हरिज्योति और जगज्योति सहित अपने गुरु रामदेव, छोटे भाई कृष्ण चहुवान, सामन्त सलख और कैमास आदि सभी के आग्रहपूर्ण अनुरोध पर गद्दी लेना स्वीकार किया। इसी वर्ष में नाहरराज दाहिमा के पुत्रों कैमास और चामुंडराज ने अपनी बहिन का विवाह पृथ्वीराज से किया।

यातैं गंभीर कै आव्हान मैं एक अब्द को अंतर पर्‍यो जानि राजकुमार पृथ्वीराज सचिव के संग करि प्रीतिपत्र दैकैं पितृव्यक आनंदराज सों कहाई मंडनगढ़ सों गंभीर हूकों दिल्ली बुलाई द्वै भ्रातन कों बड़े पटा दये।

अरु हम्मीर गंभीर अक्षयराज ए तीन ही हड्डे आहव आहव की अनी अनी मैं अग्रग भये।

द्वै ही सोदरन मुंकवानी दाहिमी द्वै ही कुमरानी दिल्ली बुलाई लई।

अरु नरेस आनंदराज नैं अपनों पौत्र रनधवल तो उपमाता कों अप्पि मंडनगढ ही राखि अर्भक की अवस्था के उचित शिक्षा दई ॥१०॥

इन कारणों से कुमार गंभीर को बुलाने में एक वर्ष का व्यवधान आया। जब पृथ्वीराज चहुवान को इस पत्र का पता लगा तो उसने अपने सचिव के साथ अपना लिखा पत्र काका आनन्दराज को भिजवा कर कहलाया कि मांडलगढ़ से कुमार गंभीर को भेजें। इस तरह पृथ्वीराज ने दोनों भाइयों कुमार हम्मीर और कुमार गंभीर को दिल्ली बुलवा कर बड़ी-बड़ी जागीरें प्रदान की। इसीलिए कुमार हम्मीर, गंभीर और अक्षयराज ये तीनों हाडा प्रत्येक युद्ध में लड़ने वाली सेना में अगुवा हो कर लड़ते रहे। दोनों हम्मीर और गंभीर की झाला वंशीय और दाहिमा वंशीय पत्नियाँ भी अपने-अपने पति के बुलावे पर दिल्ली गई और राजा आनन्दपाल ने अपने पौत्र रनधवल को धाय माँ की देखरेख में सौंप कर मांडलगढ़ में ही रखा जहाँ उसकी आरंभिक शिक्षा-दीक्षा की व्यवस्था की।

राजकुमार हम्मीर कैहू कुमरानी मंकुवानी मैं कुमार सुमेरू जन्म लीनों। अरु चतुर्दस वर्ष के बय मैं राजकुमार पृथ्वीराज कुंगुरे के अधीस के अनुज जद्दव हाहुलीराय हम्मीर की पुत्री को पानिग्रहन करि जाचकन कों त्याग मैं नानाविध बित्त दीनों। यह हम्मीर हू बडो पटा पाई आपुनें जामाता के सामंतन में ही रह्यो।

अरु याही समय मेवात के कोऊ मुगल को उपद्रव जानि पिताके अनुमत करि कुमार पृथ्वीराज नैं अपनों भावी स्वसुर सोलंकी सारंगदेव सालक कच्छवाह बलिभद्र द्वै ही भेजे तिनमैं अनेक म्लेच्छन कों मारि वहै ही धाटि को मालिक मुगल जाइ गह्यो ॥११॥

राजकुमार हम्मीर की झाला वंशीय कुँवरानी की कोख से कुमार सुमेरु ने जन्म लिया। उधर अपनी चौदह वर्ष की आयु में राजकुमार पृथ्वीराज चहुवान ने कांगड़ा के राजा के छोटे भाई यादव हाहुलीराय हम्मीर की पुत्री के साथ विवाह किया और इस विवाहोत्सव के उपलक्ष में याचकों को तरह-तरह का दान दिया। यह हाहुलीराय हम्मीर भी बाद में बड़ी जागीर पा कर

अपने जामाता पृथ्वीराज का सामन्त हो कर रहा। इसी समय में मेवात क्षेत्र के किसी मुगल का उपद्रव करना पृथ्वीराज ने सुना तब उसे शान्त करने के लिए अपने पिता की आज्ञा ले कर अपने होने वाले श्वसुर सोलंकी सारंगदेव और अपने साले कछवाहा बलिभद्र दोनों को मेवात भेजा। जिन्होंने वहाँ जा कर कई म्लेच्छों को मार कर इस घाटी के स्वामी उस मुगल को बंदी बनाया।

इतिश्री वंशभास्करे महाचम्पूके पूर्वायणे चतुर्थ राशौ बीतिहोत्र-चंडासि बंशबर्णने नरेन्द्रमण्डन कुमारात्माराम गोभिलीप्रतापदेवी परिणयन नरेन्द्रात्माराम तनुजकुमारानन्दराज जयराज सोदरद्वय समुद्भवन ज्येष्टानंदराज प्रातिहारीदयावती पाणिपीडन पश्चात्पितृपदप्रापण चित्रकू-ट॥४९।जतेजसिंहतनयसमरसिंहसमुद्भवन तद्द्वात्रिंशद्वर्षाऽनन्तरसोमेश्वर-कुमारपृथ्वीराज प्रसवन प्राप्त खुराषाणाधिपत्य गोरिपठान सहाबुद्दीन गजनी गद्दिकोपविश्न जितदिक्त्रय कान्यकुब्जाधीशबिजयचन्द्रामर-बन्द्यर्थरौप्यकाब्ज वितरणसूचन तत्पुत्रजयचन्द्रातिप्रताप्रख्यापन चालुक्य-बिजयपाल पुत्र भीमगौर्जराधिपत्यग्रहण पुष्करप्रसादनिष्कुष्टप्रतिहारन-खधरराजतत्तीर्थकुण्डसर्बधातुसोपानसर्जन सपुत्रद्योसेश्वरकुर्मप्रद्युम्न-पृथ्वीराजाश्रितीभवन दिग्जयप्रस्थितकान्यकुब्जनरेन्द्रजयचन्द्रपलायित-प्रामाराऽमानत्यक्तावन्तीमण्डितमालवसमाक्रमण परिणीतचालुकीपुष्पा-वती कसपत्नीकसमाश्रितसोमेश्वरहड्डाधिराजाऽनुजजयराज भूतपूर्ब-कान्यकुब्जरणमरणज्ञापन तत्पुत्राऽक्षयराज भाविसलखयुद्धमरणद्योतन हड्डाधिराजानन्दराज दयावत्यौ रसकुमारहम्मीर गम्भीर सोदरद्वय खुरलीपटूभवन व्यूढमंकुवाणीनवश्री कनिर्मापितनिजनामनिव-सथहतदभिकरणधीरहम्मीर नयनपुर राज्यसमाक्रमण पृथ्वीराजप्रेरित-तदाश्रितहम्मीरा ऽऽह्रूयमानगम्भीर तद्गमनाऽनूरीकरण तदनन्तरगम्भीर दाधिमीयशोदो द्वहन तदौरसकुमाररणधवल जनन तोमरराजाऽनङ्गपाल-समाहूतस्वदौहित्रपृथ्वीराजार्थदिल्लीराज्यसमुत्सर्जन स्वयंप्रामोदकप्रदेश-बकयोगसमाराधन पृथ्वीराजदिल्लीभद्रासनस्वजनकस्थापन तदनन्तर-परिणीतदाधिमीककुमारपृथ्वीराजसपत्नी कसप्रजावतीककुमारगम्भीरा ऽऽकारण नृपानन्दराज निजपौत्ररणधवनल स्वसमीपरक्षण हम्मीर नवश्र्यो रससुमेरू समुद्भवन पृथ्वीराजयादवहाहुलिराजहम्मीरपुत्रीपाणिग्रहण तद्भावि श्वसुरसामन्तसारङ्गदेव श्यालकबलिभद्र मेवातदेशघाटि

धरमुगलबन्धनं त्रिंशत्तमो मयूखः ॥३०॥ आदित एकोनचत्वारिं-शदुत्तरशततमः ॥१३९॥

श्री वंशभास्कर महाचम्पू के पूर्वायण की चतुर्थ राशि में अग्निवंशी चहुवान वंशवर्णन में राजा मण्डन के कुमार का गोभिल प्रतापदेवी से विवाह करना, नरेन्द्र आत्माराम के पुत्र कुमार आनन्दराज और जयराज दोनों सगे भाइयों का जन्म होना, बड़े आनन्दराज का प्रतिहार दयावती से विवाह करना, फिर पिता का पाट पाना, चित्तौड़ के स्वामी तेजसिंह के पुत्र समरसिंह का जन्म होना, उसके बत्तीस वर्ष बाद सोमेश्वर के कुमार पृथ्वीराज का जन्म लेना, खुराशान का मालिकपन पाकर गौरी पठान सहाबुद्दीन का गजनी की गद्दी पर बैठना, तीन दिशाओं को विजय करके कन्नौज के राजा विजयचन्द्र का अमर नामक भाट को अरब रुपये देना, उसके पुत्र जयचन्द्र का अत्यन्त प्रताप प्रसिद्ध करना, सोलंकी विजयपाल के पुत्र भीम का गुजरात का स्वामी होना, पुष्कर के प्रसन्न होने से कोढ़ मिटे हुए प्रतिहार नाहरराज का उस तीर्थकुण्ड के सब धातुओं की पैड़िये बनाना, पुत्र सहित दौसा के स्वामी कछवाहा प्रद्युम्न का पृथ्वीराज के आश्रित होना, दिग्विजय पर गमन करने वाले कन्नौज के राजा जयचन्द्र से भागे हुए पंवार अमान को मालव देश छीन कर उज्जैन से निकालना, चालुक्य वंशीय पुष्पावती से विवाह करने स्त्री सहित जाते हुए सोमेश्वर के आश्रित हड्डाधिराज का छोटा भाई जयराज पहले ही जा रहा·जिसके कन्नौज के युद्ध में मारे जाने का सुनाना, उसके पुत्र अक्षयराज का होने वाले सलख के युद्ध में मरने को बताना, हड्डाधिराज आनन्दराज की दयावती के औरस कुमार हम्मीर और गम्भीर दोनों सगे भाइयों का वाणविद्या में चतुर होना, झाला वंशीय नवश्री को विवाह कर अपने नाम का ग्राम बसाकर डाभी क्षत्रियों को मारकर धीर हम्मीर का नैणवा पुर का राज्य लेना, पृथ्वीराज के भेजे हुए उसके आश्रित हम्मीर के बुलाने को उस गम्भीर का अस्वीकार करना, इसके बाद गम्भीर का दाहिमा वंशीय यशोदा से विवाह करना, उसके उदर से कुमार रणधवल का जन्म होना, तंवरों के राजा अनङ्गपाल के बुलाये हुए अपने दोहितं पृथ्वीराज के लिए दिल्ली का राज्य देना, अपने उदक दिये हुए देश के अर्थं बुगले का योग (बुगला पक्षी के समान झूठी समाधि) साधना, पृथ्वीराज का दिल्ली के सिंहासन पर अपने पिता को बैठाना, कुमार पृथ्वीराज का स्त्री सहित और

अपने भाई की स्त्री सहित गम्भीर को बुलाना, राजा आनन्दराज का अपने पौत्र रणधवल को अपने पास रखना, हम्मीर के स्तुति योग्य औरस कुमार सुमेरु का जन्म होना, पृथ्वीराज का यादव हाहुलीराज हम्मीर की पुत्री से विवाह करना, उसके आगे होने वाले श्वसुर सामन्त सारङ्गदेव और साले बलिभद्र को भेज कर मेवात देश की भूमि में मुगल को कैद कराने का तीसवाँ मयूख समाप्त हुआ। और आदि से एक सौ उनतालीस मयूख हुए।

प्रायो ब्रजदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

सचरणगद्यम्

याही समय चित्रकूट के राजकुल समरसिंह दिल्ली आई पृथ्वीराज की सोदर स्वसा पृथा बिबाही।

अरु याही समय पंद्रहम वर्ष कै बय मैं कुमार पृथ्वीराज बडगुज्जर राम की पुत्री को पानिग्रहन करि प्रीति निबाही।

पीछैं चहुवान कन्ह दाधिम कइमास कछवाह बलिभद्र बाहुप्रकार-उद्दिक भट्टीभानु बग्गडीदेवराज जद्दवजाम खिच्चीप्रसंगराज इन अट्ठ ही सामंतन कों पिता के पास दिल्ली राखि कुमार पृथ्वीराज उत्तर दिशा के बिजयपर तथा मातामह के मिलनपर छोटे बड़े अनेक अवनीसन सों उपदा लेत गंगाद्वार सों पैले प्रांत मैं तोमरराज के पयन प्रनाम करि बिजय के लोभ श्रीनगर के स्वामि कों सासित करि अग्ग बढ्यो।

अरु इतकों अनिहलपुर के अधीस चालुक्यराज भीम यहै छिद्र पाइ कन्ह के मारे अपनैं पितृव्यक के सप्त ही पुत्रन कां बैर चित्त मैं लाइ बडी बरूथिनी बनाइ नागराज के भोगन कों नमावत मार्ग के महीसन सों लंचा लेत दिल्ली पर चढ्यो॥१॥

इसी समय में चित्तौड़गढ़ के रावल समरसिंह ने दिल्ली आ कर पृथ्वीराज चहुवान की बहन के साथ विवाह किया और इसी समय अपनी पन्द्रह वर्ष की आयु में पृथ्वीराज चहुवान ने बड़गुज्जर राम की पुत्री से विवाह कर उसके साथ प्रीत निभाई। इसके बाद चहुवान कान्ह (कृष्ण), दाहिमा कैमास, कछवाहा बलिभद्र, बाहुप्रकार उद्दिग (आजानुबाहु), भाटी भानुराज, बग्गड़ी देवराज, यादव जाम, खीची प्रसंगराज आदि अपने आठों ही सामन्तों

को अपने पिता के पास दिल्ली छोड़ कर पृथ्वीराज चहुवान ने उत्तर दिशा की विजय के लिए और अपने नाना अनंगपाल से मिलने के लिए प्रस्थान किया। वह रास्ते में पड़ने वाले छोटे-बड़े अनेक राजाओं से उपहार नजराने लेता हुआ हरिद्वार के उधर वाले प्रान्त में गया। जहाँ जा कर उसने अपने नाना तंवरराज के चरणों में प्रणाम किया। यहाँ से आगे श्रीनगर के अधीस को अपना मातहत बना कर और आगे बढ़ा। इधर अनहिलपुर के राजा चालुक्यराज भीम ने यह उचित अवसर देख चहुवान कान्ह (कृष्ण) द्वारा मारे गए अपने चाचा के सातों पुत्रों का वैर लेने का सोचा। उसने अपनी भारी सेना को सज्जित किया और शेषनाग के फन को लचकाता हुआ, धरती रौंधता चला। राह में पड़ने वाले छोटे राजाओं से नजराना लेता हुआ दिल्ली पर चढ़ आया।

सो सुनतही चंडासिराज सोमेश्वरहू अष्ट ही सामंतन समेत दिल्ली सों कितेक कोसन पर जाइ डेल्यो।

अरु बड़ो अवमर्द करि द्वै ही पृतना के प्रबीरन स्वामिन नें चाह्यो सो सोही खेल खेल्यो।

प्रारब्ध के प्रभाव करि कन्ह कैमास सहित अष्ट ही सामंत अरातिनके अनेक आघ डारि लोह छक होई अचेत खेत परे।

अरु अपनैं अनीक कों आकुल जानि चंडासिंराज सोमेश्वर बारन सों बाजी पर आई तरनि कों तुमुल को तमासों दिखाय बार्धक के बीरत्व मैं बडो बाहुबल करि गौर्जरदेस की अनेक बीरपत्निन के बाहु प्रकोष्ट बलय बिहीन करे॥२॥

यह सुनते ही चहुवानराज सोमेश्वर ने अपने आठों ही वीर सामन्तों को मुकाबला करने भेजा। जिन्होंने दिल्ली से कई कोस पहले ही चालुक्यराज की सेना को रोका। फिर दोनों ही पक्ष के वीर योद्धाओं ने भयंकर युद्ध आरंभ कर अपने-अपने स्वामी की इच्छा के अनुसार खुल कर तलवार बजाई। प्रबल भाग्य के प्रभाव से कन्ह, कैमास सहित आठों ही राजा सोमेश्वर के सामन्त शत्रुओं के शरीर पर अनेक घाव दे कर और स्वयं भी रक्तरंजित हो अचेत से रणभूमि में गिर पड़े। अपनी सेना को व्याकुल समझ कर चहुवान राज सोमेश्वर ने हाथी से उतर कर घोड़े पर सवार हो कर सूर्य को भयंकर युद्ध का नजारा दिखलाया। यही नहीं अपनी वृद्धावस्था में भी असीम शौर्य

का प्रदर्शन करते हुए गुजरात के अनेक बड़े योद्धाओं की वीरांगनाओं की कलाइयाँ और हाथ चूड़ियों से विहीन किए अर्थात् उन्हें विधवा बनाया।

काल कों प्राबल्य काहू सों न टार्‌यो जाय यातैं नरेन्द्र रामसिंह जानें दिल्ली को सहाय करि कान्यकुब्ज के अधीस विजयचन्द्र कों पलायित करि तोमरराज कों जय दिवायो सो पूर्वोक्त केही जुद्धन को जई चंडासिराज सोमेश्वर बार्धक मैं बीरतल्प सोयो।

यहै जानतही पारावत भीम सिचानक पृथ्वीराज के अचानक आय परिबेको आतंक आनि आपुनैं घायल खेत मैं ही तजि गौर देश में दरकुंच जाय स्वास्थ्य पाई बंदिन के बिरुदन मैं गिनायो सप्त ही बंधुन को बैर धोयो।

इतकों दिल्ली के अवशिष्ट सुभट सचिवन रंगस्थल कों ढंढोलि अपनें रु चालुक्य के सहस्त्रन घायलन सहित अष्ट ही अचेत सामंतन कों नृजानन मैं डारि दिल्ली लाई वैद्यन के अनुमत करि समस्त के ही दाहो पनाह प्रमुख क्षतन की पूर्ति के साधनसहित उल्लाघभाव आनिबे को उपचार कर्‌यो।

यहै सुनत ही पृथ्वीराजकुमार दरकुंचन दिल्ली आई बिधिपूर्वक प्रेतकर्म करि पिता को छत्र धर्‌यो॥३॥

हे राजा रामसिंह! समय की प्रबलता से होने वाले होनहार को कौन टाल सका है? जिसने दिल्ली राज्य की रक्षार्थ कन्नौज के राजा विजयचन्द्र को रणभूमि से भगाया हो। जिसने अपने बाहुबल से तंवरराज को विजय दिलवाई। इनके अतिरिक्त पूर्व में हुए कई युद्धों का विजेता रहा वही चहुवानराज सोमेश्वर अपने बुढ़ापे में जा कर वीरशय्या पर सोया अर्थात् युद्ध में मारा गया। यह सुनते ही कपोत रूपी चालुक्यराज भीम अपने पर बाज रूप पृथ्वीराज के अचानक आ टूट पड़ने के आतंक से अपनी सेना के घायल योद्धाओं को रणभूमि में ही छोड़ कर अपने गुजरात देश की ओर दर कूच दर मंजिल प्रयाण कर गया। फिर कुछ अंतराल के बाद, स्वयं स्वस्थ हो कर, उसने बंदीजनों के विरुद में गिनाया हुआ, अपने सात ही बांधवों का वैर लिया। इधर दिल्ली के बचे हुए योद्धाओं और मंत्रियों ने रणभूमि में ढूँढ़ कर अपने पक्ष के और चालुक्यराज के हजारों घायलों को पालकियों में डाल कर

दिल्ली में अपने वैद्यों की सलाह से जलते घावों पर मरहम पट्टी आदि लगा कर उनके घावों को भरने के उपाय कर उन्हें फिर से निरोग करने के प्रयत्न किए। यही नहीं उन्होंने चहुवानराज के आठों घायल सामन्तों की भी शुश्रुषा कर उन्हें स्वस्थ बनाया। अपने पिता की मृत्यु का समाचार पाकर कुमार पृथ्वीराज ने दिल्ली आ कर अपने पिता का दाहकर्म विधि-विधान पूर्वक संपन्न किया और बाद में अपने पिता की राजगद्दी पर बैठा।

घायन परे जे अष्ट ही सामंत पटुप्राय होय समज्जया में आये।

तहां अति लज्जाकरि सोमेश्वर के बीरतल्प शयन को स्मृति में आनि पितृव्यक कृष्ण ने नरेन्द्र सों नेत्र न मिलाये।

तदनंतर नरेन्द्र के सामंत भोलाराय पैं जावत ताके पितृव्यक बर सिंह को पुत्र हरिदुर्ग को अधीस बालुकराय गुज्जरदेस में पैठत ही सम्मुह आइ जुरयो सो मारि लयो।

अरु द्वारकेस की यात्रा को व्याज करि चालुक्यराज पश्चिम समुद्र की सीमा लों टरि गयो ।।४ ।।

चहुवानराज के आठों सामन्त जब पूर्ण रूप से स्वस्थ हो गए तब वे राजसभा में आए पर वहाँ राजा सोमेश्वर के रणभूमि में निशे:ष हो जाने की बात याद कर बहुत लज्जित हुए। पृथ्वीराज के चाचा कन्ह ने तो लाज के मारे राजा से आंख भी नहीं मिलाई। तदनन्तर राजा पृथ्वीराज के वे आठों सामन्त जब चालुक्यराज भोलाराय पर चढ़ाई करने जा रहे थे तो चालुक्यराज के चाचा वरसिंह का पुत्र बालुकराय जो हरिदुर्ग का राजा था, इन सामन्तों का सामना करने की गरज से उनके गुजरात प्रवेश के समय सामने आया। उसे इन्होंने मार गिराया। यह सुनते ही चालुक्यराज स्वयं द्वारिका की यात्रा का बहाना बना कर पश्चिम में समुद्र की सीमा तक भाग गया।

पलायित की पीठि जैबो अनुचित जानि सामंतन कों पीछे बुलाई याही समय सोलहै वर्ष के बय में नरेन्द्र पृथ्वीराज समुद्रसिखर के अधीस जादवनृप की पुत्री पद्मावती रानी जुद्ध जीति आनी।

अरु पीछे आवत सहाबुद्दीन कों पकरि दिल्ली आई छोरि बिरुदन में कहायो एक मानी।

तदनंतर ही अपनें घायलन के बैर पर मुहब्बा के राजा चंदेल कबंध परमाल सों जुद्ध जीत्यो तहां संयमराज से इतके आल उद्दल से उतके अतिवीर परे।

अरु सत्रहम अब्द की अवस्था में देवगिरि के नरेस राजधन की कन्या को जुद्ध जीति लायो ताके उपयाम के उत्सव मैं आये बनीयकन के बित्त करि भौंन भरे।।५।।

युद्ध से पलायन करने वाले के पीछे जाने का विचार अनुचित समझ कर पृथ्वीराज ने अपने सामन्तों को ऐसा करने से रोका और उन्हें वापस बुलाया। इस समय चहुवान राजा पृथ्वीराज की उम्र सोलह वर्ष की थी इसी समय में उसने समुद्र शिखर के यादव राजा की पुत्री पद्मावती से विवाह किया। असल में उसने इसे यादव राजा को युद्ध में जीत कर हासिल किया था। यहाँ से वापस लौटते हुए पृथ्वीराज ने शहाबुद्दीन को पकड़ा पर उसे दिल्ली आकर छोड़ दिया। इस कर्म से उसने गुमान वाले राजा का विरुद पाया। इसके बाद पृथ्वीराज ने अपने घायलों का वैर लेने के लिए महुब्बा के चंदेल राजा कंबध परमाल से जा युद्ध किया और विजय प्राप्त की। इस युद्ध में संयमराज से इधर के, आल (आल्हा) और उदल से भिड़ने वाले उधर के कई वीर मारे गये। चहुवानराज पृथ्वीराज सत्रह वर्ष की उम्र में देवगिरि के नरेश राजधन की कन्या को युद्ध में जीत कर लाया फिर उससे विवाह किया। इस विवाह के अवसर पर आए याचकों के घर उसने धन से भर दिए।

पीछैं अनिहलपुर पैं चढाई करि गुजरात को अधीस चालुक्यराज भीम मार्‌यो।

अरु याही समय तोमरराज अनंगपाल प्रच्छन्न पत्र भेजि सहाबुद्दीन कों सहाय लै रु कटुंब के कहे सों बांत को बुभुक्षु बन्यों जानैं दौहित्र कों दई दिल्ली पर पीछो चित चलाई राज्य के लोभ मैं ग्रस्त व्है दरकुंचन आई जुद्ध ही प्रसार्‌यो।

तहां चंडासिराज अपने प्रबीरन सों कही मातामह के ब्रिचार मैं म्लेच्छ कों न लाई दिल्ली को मंगिबो प्रीतिपूर्वक होतो तो अजमेर साकंभर सहित देतो परंतु सत्रुन कों संग लाई जुद्ध जीति लैबो ही उचित दीस्यो यातैं अपनें हू चित्त मैं जुद्ध सों पराभव पाई पीछैं दैबो ही भायो।

सोही मंत्र दृढ धारि महा अवमर्द करि सहाबुद्दीन कों पकरि छोरयो रु अनंगपाल पलायो ॥६ ॥

तदनन्तर अनिहलपुर पर चढ़ाई कर गुजरात के अधीश चालुक्यराज भोलाराय भीम को मारा और इसी समय में तंवर राजा अनंगपाल ने गुप्त पत्र भेज कर शाहबुद्दीन की सहायता ली। अपने कुटुम्बियों के कहने से वह वमन कर डाली हुई वस्तु को फिर से खाने वाला बना। जिसने अपने दोहित्र को दिये हुए दिल्ली के राज्य को लाभग्रस्त हो वापस लेने की इच्छा से दर कूच दर मंजिल आ कर युद्ध रचाया। यह देख कर चहुवान राज पृथ्वीराज ने अपने सामन्तों से कहा कि नाना यदि इस म्लेच्छ को साथ न लाते और स्नेह पूर्वक मुझसे दिल्ली का राज्य वापस माँगते तो मैं उन्हें दिल्ली के साथ अजमेर और सांभर का राज्य भी सहर्ष देता पर शत्रु को साथ ले कर उन्होंने युद्ध में जीतना उचित समझा इसलिए मेरे मन में भी अब दिल्ली के राज को युद्ध में हार जाने के बाद ही देने की बात आई है। ऐसी मंत्रणा अपने योद्धाओं के साथ कर, मन में दृढ़ता धार, भीषण युद्ध किया जिसमें शाहबुद्दीन को पकड़ कर छोड़ा और राजा अनंगपाल युद्ध भूमि से भाग गया।

पीछै अट्ठारहै वर्ष के वय मैं मलय सिंह की बैमात्रेयी अरु बलिभद्र की सोदर भगिनी कूर्म प्रद्युम्न की पुत्री को पाणिपीडन करि तदनंतर अपनें बहिनिवई चित्रकूट के राजकुल समरसिंह को संपन्न मैं सीरी राखि कैमास के बुद्धिबल करि खट्टू के प्रांत मैं धरा के अंतर सों धन निकास्यो।

अरु एकोनबीस वर्ष के बय मैं धीर की भगिनी रु पुंडीरचंद्र की पुत्री को पानिग्रहन करि बिसमबान् को बैभव बिकास्यो।

बीसमैं बर्ष में दक्खिन देस सों जुद्ध जीति ससिब्रता आनी।

अरु एकबीसमैं अब्द में अैसें ही जयकरि बिबाह्यो हंसावती रानीं ॥७ ॥

इसके बाद अठारह वर्ष की आयु में मलयसिंह की सौतेली बहन और बलभद्र की सगी बहन जो कछवाहा राजा प्रद्युम्न की पुत्री थी से विवाह किया। इसके बाद अपने बहनोई चित्तौड़गढ़ के रावल समरसिंह को मिलने वाली सम्पत्ति में हिस्सा देने का वचन दे, साझीदार बना कर, कैमास के बुद्धिबल की सहायता से खाटू प्रांत की जमीन में गड़ा हुआ धन निकाला।

अपनी उन्नीस वर्ष की उम्र में धीर की बहन और पुंडीरचन्द्र की पुत्री से शादी कर पृथ्वीराज ने कामदेव के वैभव में बढ़ोतरी की। अपने बीसवें वर्ष में पृथ्वीराज ने दक्षिण देश को फतह कर शशिव्रता नामक कन्या से विवाह किया। इसी प्रकार इक्कीस वर्ष की आयु में ऐसे ही युद्ध में विजय प्राप्त कर हंसावती से विवाह कर उसे अपनी रानी बनाया।

बावीसमैं बर्ष मैं अपने सामंत सोलंकी सारंगदेव की अंगजा इंद्रावती को पानिग्रहन कर्यो।

अरु तुल्ल्यभार सुबर्ण कों संटि पातुरि कार्णाटी लई ही ताके पास प्रच्छन्न आवत निशीथ के निविड़ अंधकार में अजानैं एक आसुग करि कैमास को प्रान हर्यो।

कितेक काल पीछैं दाहिमी को औरस पृथ्वीराज को पट्टप कुमार रत्नसिंह अरु चामुंडराज द्वै ही मातुल भागिनेय अति प्रीति करि सुरन के बैद्यन लों सहचारी रहत भये यह जानि सूचक जनन नरेन्द्र सों बारबार कहि बिरोध की दृढ़ता दिखाई सो सोमसुत हू संका आनि निश्चित ही करि लई।

अरु ताही भगिनी के पुत्र को पट्टपतिभाव अरु अग्रज कैमास को बैर द्वै ही दुस्सह देखि वृथा ही बध्य बनि अनागस चामुंडराज के चरनन में बेरी डारि दई ॥८ ॥

अपनी बाईस वर्ष की वय में चहुवान पृथ्वीराज ने अपने ही सामन्त सोलंकी सारंगदेव की पुत्री इन्द्रावती से पाणिग्रहण कर उसे अपनी रानी बनाया। इसके अतिरिक्त पृथ्वीराज ने एक कार्णाटी नामक गणिका को उसके भार के बराबर स्वर्ण दे कर प्राप्त किया। इसके बाद गुप्त रूप से रात्रि के अंधकार में जाते हुए एक बाण से अपने ही मंत्री योद्धा कैमास को अनजाने में मार गिराया। कई वर्षों बाद दाहिमा चामुण्डराज की बहन का पाटवी पुत्र रत्नसिंह और उसके मामा स्वयं चामुण्डराज दोनों मामा भानजे बहुत स्नेह से अश्विनीकुमारों की तरह साथ-साथ रहते थे। राजा पृथ्वीराज के गुप्तचरों ने जा कर बार-बार अपने मालिक के कान भरे कि यह मामा-भानजे का साथ हमारे लिए अच्छा नहीं है क्योंकि चामुण्डराज कैमास का छोटा भाई है और वह घात कर सकता है। इस तरह बार-बार कहे जाने पर सोमेश्वर के पुत्र

चहुवान पृथ्वीराज ने भी अपने मन में यह बात मान ली कि हाँ, ऐसा हो सकता है। अपने मन के इसी भय के निवारणार्थ चहुवानराज ने कैमास का वैर और उसके भानजे के पट्टपति होने के अहंभाव को जान कर व्यर्थ ही बध्य बन कर निर्दोष चामुण्डराज के पाँवों में बेड़ी डलवा दी।

ता पीछैहूँ जुद्ध जुद्ध में जय करि गौरी सहाबुद्दीन कों पकरि पकरि छोरयो।

अरु ओरहू अनेक अवनीसन सों जुद्ध जीते सो सर्वही वृत्तांत रासे में विदित जानि वृथा ही बिस्तार मानि हमनैं पृथ्वीराज के चरित्र मैं न जोरयो।

बंदी चंद नैं अपनें ग्रंथ रासे में बिबाहन के अनुक्रम बिनां इतर चरित्रन के पौर्वापर्य कहाँहू न लिख्यो यातैं जा जाको जहाँ जहाँ संभव दीस्यो सो सो तहां तहां कह्यो परंतु अवसेस घनैं चरित्रन के समय को निश्चय न पायो या निदान करि सामान्य लिखे तासों पृथ्वीराज के चरित्र के वृत्तांतन मैं पूर्वापर भाव न जानिये।

अरु असंभूत हु अनेक उदंत लिखे तिनहुमैं मोकों टारि बंदी चंद प्रमुख पुरातन लेखकारकन को ही अन्यथा बाब्दित्व मानिये।

इसके बाद पृथ्वीराज ने युद्ध पर युद्ध लड़े और सभी में विजय पाई। उसने शाहबुद्दीन गौरी को कई बार कैद किया पर हर बार छोड़ दिया। पृथ्वीराज ने कई अन्य राजाओं को भी युद्ध में हराया था पर यहाँ हम (ग्रंथकर्ता सूर्यमल) इन वृत्तांतों का अधिक वर्णन करना युक्तियुक्त नहीं मानते क्योंकि वह सभी कुछ पृथ्वीराज रासो में विस्तारपूर्वक पहले ही वर्णित है और यही सोच कर हमने कई वृत्तांतों को पृथ्वीराज के चरित्र में सम्मिलित नहीं किया है। चंदबरदाई ने अपने ग्रंथ *पृथ्वीराज रासो* में पृथ्वीराज के विवाह का अनुक्रम देते समय इस बात का जरा सा भी ध्यान नहीं रखा कि पहले कौन सा हुआ और बाद मे कौन सा हुआ? बस, उसने तो बिना ही पड़ताल किए जहाँ अवसर मिला वहीं उस विवाह का होना लिख दिया है। रासो में वर्णित कई वृत्तांत तो पृथ्वीराज के समय के ही नहीं है। इस कारण से हमने भी उन्हें जस का तस तो नहीं पर हाँ, अपने ग्रंथ में पृथ्वीराज के चरित्र का इतिवृत लिखते समय उन्हें दे दिया है। पाठक कृपया इसमें पूर्व एवं पर्वा का

दोष मुझ पर न मढ़ कर रासो के रचियता चंद भाट को ही इस दोष का भागी मानें। उसे मिथ्यावादी गिनें।

अैसैं अनेक बिजय करत बिक्रम के ससि सर सिव सम्मित संबत्सर के चैत्रके प्रथम पक्ष मैं चंडासिराज पृथ्वीराज छ मास अधिक छत्तीस बर्ष के बय मैं कान्यकुब्ज जाई चउसट्ठि सामंतन को बीरतल्य पौढाई राष्ट्रकूटराज जयचंद्र की सुता संयोगिता आनीं।

ताही तुमुल मैं सहोदर हम्मीर गंभीर केही गजन को गिराई कासी के नरेन्द्र से अनेक अरातिन की बनितान कों बैधव्य दैकैं भद्रकाली को धपाई द्वै ही कुमार बीरतल्य सोये महामानीं।

सो जानि मुंकवानी नवश्री दाहिमी जसोदा द्वै ही स्व स्व स्वामिन के साथ गई सो सुनत ही उपराम आनि मंडनगढ़ के अधीस आनंदराज अपनैं पट्टप पुत्र को पुत्र सुमेरु बुलायो सो बडो पटा बढ़ाई पृथ्वीराज नें न भेज्यो अरु गंभीर को पुत्र रनधवल हू दिल्ली बुलायो।

तब याहू कों पितामह नें न भेज्यो रु याही के अभिषेक करि अपनें योगसाधन के बल अवसान मैं परमपद पायो ॥१०॥

इस प्रकार की अनेक फतह हासिल करते हुए विक्रमी संवत् ग्यारह सौ इक्यावन के चैत्र माह के पहले पखवाड़े में चहुवानराज पृथ्वीराज ने अपनी छत्तीस वर्ष छह माह की आयु में कन्नौज में चौसठ योद्धाओं को रणभूमि में नि:शेष किया और राठौड़ राजा जयचन्द की पुत्री संयोगिता का हरण किया। इसी भयंकर युद्ध में पृथ्वीराज के भाई हम्मीर और गंभीर जो कई हाथियों का संहार कर, काशी के राजा सहित, कई शत्रुओं की स्त्रियों का वैधव्य देने वाले बने। उन्होंने अपने शत्रुओं का आहार दे कर रणभूमि में भद्रकाली को तुष्ट किया और अन्तत: दोनों वीर रणशय्या पर सोये। अपने पतियों हम्मीर और गंभीर के रणभूमि में काम आ जाने का समाचार सुन झाला वंशीय नवश्री और दाहिमा वंशीय जसोदा (यशोदा) अपने-अपने पति के साथ सती हुई। अपने पुत्रों के वीरगति पाने की खबर पाते ही विरक्ति से भरे मांडलगढ़ के राजा आनंदराज ने अपने पाटवी पुत्र के बेटे सुमेरु को मांडलगढ़ बुलवाया पर सुमेरु को और अधिक जागीर दे कर पृथ्वीराज चहुवान ने अपने पास ही रख लिया, भेजा नहीं और गंभीर के पुत्र रणधवल

को भी दिल्ली बुलवाया। तब पितामह (दादा) आनन्दराज ने रणधवल को नहीं भेजा और अपनी मांडलगढ़ की गद्दी उसे सौंपी। इसके बाद आनन्दराज ने अपने अन्त समय में योग साधना कर परमपद पाया।

इतिश्री बंशभास्करे महाचम्पूके पूर्बायणे चतुर्थ राशौ बीतिहोत्र चण्डासि बंशबर्णनबीजहड्डाधिराडस्थिपाल बंश्या नुबंश्यव्याख्यानव्या-हार्यससूनुनृपानन्दराज चरित्रे चित्रकूटाधिराजकुलसमरसिंहसोमीपृथाप-रिणयन पृथ्वीराजवृहद्गौर्ज्जररामदुहितोद्वहन पितृपार्श्वस्थापितकृष्णादि-सामंताऽष्टक पृथ्वीराजोदग्विजयन प्राप्तच्छिद्रचालुक्यराजभीमदिल्लीनरे-न्द्रसोमेश्वरनिपातन मूर्छितीकृताष्ट सामन्तत्यक्तरङ्गनिपतितस्वयोधसौमि-त्रस्तभीमस्वपुरप्रतिगमन गवेषितरङ्गसोमसुभट सचिव प्राप्तप्रहारसजीव-दिल्लीसमागतसाधिताऽऽयतिकर्मपृथ्वीराजपितृपट्टप्रापण लज्जितकृष्णा-दिनृपसामन्तचालुक्यराजबन्धुबालुकराजबिध्वंसन कृतद्वारकेश्वर-वीक्षणव्या जभीमपश्चिमपाथोधिपुलिन सन्नद्धप्रत्यागतसामन्तसौमिबा-हुबलबिजितसमुद्रशिखराधीशयादवनृपपुत्रीपद्मावतीपाणिपीडन प्रत्या-गच्छत्पृथ्वीराजसमभिषेणयतशहाबुद्दीनकीलन मोचन तद्रणाघातऽसम-र्थसामन्तप्रतारणप्रकुपितपृथ्वीराज महुब्बाधीशचंदेलराष्ट्रकूटपरमाल-विजयन संयमराज ऽऽलोहल प्रमुखस्व पर सुभटतद्रणमरण सप्तदश वर्षीयसौमिदोर्जितदेवगिरिनरेशराजधनदुहितोद्वहन तदनन्तरससामन्तसन्न-द्धसौमिचालुक्यराजभीमप्रतिघातन।

श्रीवंशभास्कर महाचम्पू के पूर्वायण की चतुर्थ राशि में अग्निवंशी चहुवान वंशवर्णन के कारण हड्डाधिराज के वंश्यानुवंश्य व्याख्यान के कथन में पुत्र सहित आनन्दराज के चरित्र में चितौड़ के स्वामी राउल समरसिंह का सोमेश्वर की पुत्री पृथा से विवाह करना, पृथ्वीराज का बडगुज्जर राम की पुत्री से ब्याहना, पिता के पास कन्ह आदि आठ सामंतों को रखकर पृथ्वीराज का उत्तर दिशा को विजय करना, छिद्र पाकर सोलंकी राजा भीम का दिल्ली के नरेन्द्र सोमेश्वर को मारना, आठ सामन्तों को मूर्छित करके युद्धभूमि को और अपने पड़े हुए योद्धाओं को छोड़कर सोमेश्वर के पुत्र से डरकर भीम का अपने पुर में जाना, युद्ध में अनुसन्धान किये हुए सोम के सुभट और सचिव घायल होकर सजीवित अर्थात् उनमें केवल जीव ही बाकी था ऐसे दिल्ली आये और उत्तरकाल के कर्म करके पृथ्वीराज का पाट बैठना,

लज्जित हुए कन्ह आदि राजा के सामन्तों का चालुक्यराज के बन्धु बालकराज को मारना, द्वारकेश्वर के दर्शन करने का बहाना कर भीम का पश्चिम में समुद्र की ओर भागना, सजे हुए पृथ्वीराज का वापस आकर सामन्तों के साथ बाहुबल से शिखर के अधीश समुद्र को विजय करके उस यादव राजा की पुत्री पद्मावती से विवाह करना, फिर से आये हुए पृथ्वीराज से सामना करने से उस शहाबुद्दीन गौरी को कैद करके छोड़ना, उस रण में ठगे जाकर घायल हुए असमर्थ सामन्तों के कारण गुस्साए हुए पृथ्वीराज का मुहब्बा के स्वामी चन्देला राठोड़ परमाल को विजय करना, संयमराज और आल्हा उद्दल आदि अपने और पराये सुभटों का उस युद्ध में मरना, सत्रह वर्ष की अवस्था में सोम के पुत्र का अपने बाहुबल से विजय किये हुए देवगिरि के राजा राजधन की पुत्री से विवाह करना, फिर सामन्तों के साथ सज्जित होकर पृथ्वीराज का सोलंकी भीम को मारना।

सहायीकृतसहाबुद्दीनस्वपरिकरशि-क्षितवान्तासितोमराऽनङ्गपाल-पुनर्दिल्लीप्राप्तिनिमित्तरणप्रारम्भण पृथ्वीराजस्वमातामहसहायीभूतशहा बुद्दीननिग्रहण मोक्षण तत्रस्ततोमरराजपलायन पश्चादष्टादंश बर्षीयपरिणीतकौर्मीप्रद्युम्नीकसम्मेलितस्वसृपतिसमरसिंहसौमिकैमास-बुद्धिविविक्तखट्टपुरप्रान्तनिधिनिष्कासन पश्चादेकोनविंशति वर्षा-वस्थसौमिधीरभगिनीपुण्डीरचन्द्र पुत्रीपाणिग्रहण विंशति बर्षावस्थ-सौमिदोर्जित दाक्षिणात्यपार्थिवपुत्रीशशिब्रतोद्वहनै कविंशति हायन-बयोराजकन्याहंसावतीहरण द्वाविंशत्यब्दस्थितिसोलंखि शारङ्गदेव-सुतेन्द्रावत्युपयमन पश्चात्पृथ्वीराजतुल्ल्यस्वर्ण मूल्यक्रीतवारवनिता-कार्णाटीप्रसंङ्गाऽपराधितमोऽज्ञातनिजमन्त्रि कैमासनिपातन तदनन्तर-पिशुनप्रेरितपृथ्वीराजभ्रातृवधदु:खि तभागिनेयरत्नसिंह रतदाधिम चामुण्ड-राजचरणन्यसन प्रोक्ते तरसमयानेकवारयवनेन्द्रग्रहण मोक्षण सहित-सकल सम्परायविजयसूचन बन्दिचन्द्रग्रथितसौमिसर्बचरित्रपौर्वापर्यद्वा परदर्शन कविमिथ्याकथनस्वदोषनिवारण सार्द्धषट्त्रिंश द्वर्षवयस्क-पृथ्वीराजमण्डलेश्वरकान्यकुब्जाधिराजका मध्वजजयचन्द्रसुतासमाहरण तद्रणनिपातितकाशीनरेन्द्रा द्यनेकसपत्नसंघहड्डाधिराजकुमारहम्मीर गम्भीर सोदरद्वय शूरशय्याशयन तत्पत्नीमंकु वाणीनवश्री दाधिमीयशोदा स्वस्वस्वामिसहगमन श्रुतैतदुदन्तज्ञाताऽऽहूताऽनागतस्वपौत्रसुमेरु कमण्ड-नराज्यसमभिषिक्तगाम्भीरिरणधवल कप्राप्तोपरामयोगचर्यारतहड्डाधिराजा-

ऽऽनन्दराज परलोकप्रापण मेकत्रिंशो मयूखः ॥ आदितश्चत्वारिंशदुत्त-रशततमः ॥१४०॥

सहायक होकर शहाबुद्दीन का अपने परिकर सहित सिखाये हुए वमन की हुई वस्तु को खाने की इच्छा वाले अनङ्गपाल का फिर दिल्ली लेने के लिये युद्ध का आरम्भ करना, पृथ्वीराज का अपने नाना के सहायक सहाबुद्दीन को पकड़कर छोड़ना, उससे डरकर तंवर राजा का भागना, इसके बाद अठारह वर्ष की अवस्था में कछवाहा प्रद्युम्न की पुत्री से विवाह करके अपनी बहन के पति समरसिंह को शामिल रखकर कैमास के बुद्धिबल से खाटूपुर के प्रान्त में पृथ्वीराज का धन निकालना, फिर उन्नीस वर्ष की अवस्था में पृथ्वीराज का धीर की बहिन और पुण्डीरचन्द्र की पुत्री से विवाह करना, बीस वर्ष की अवस्था में पृथ्वीराज का भुजों के बल से विजय की हुई दक्षिण देश के राजा की पुत्री शशिव्रता से विवाह करना, इक्कीस वर्ष की अवस्था में राजकन्या हंसावती को हरना, बाइसवें वर्ष की स्थिति में सोलंकी सारंङ्गदेव की पुत्री इन्द्रावती से विवाह करना, इसके बाद बराबर के तोल का सोना देकर पृथ्वीराज की मोल ली हुई कर्नाटी नामक वेश्या के प्रसंङ्ग से बड़े अपराधी, बिना जाने अपने मंत्री कैमास को मारना, चुगलखोरों की प्रेरणा से पृथ्वीराज के भाई को मारने से दुखी और भानजे रत्नसिंह से प्रीति रखने वाले दाहिमा चामुण्डराज को कैद करना, कहे हुए अनेक समय में अनेक बार बादशाह को पकड़कर छोड़ने सहित सब युद्धों में विजय बताना, भाट चन्द्र के बनाये हुए पृथ्वीराज के चरित्रों में पहले कौन हुआ और पीछे कौन हुआ इस का सन्देह दिखाना, कवियों के झूठ कहने में अपना (ग्रंथकर्ता सूर्यमल्ल का) दोष मिटाना, साढ़े छत्तीस वर्ष की अवस्था में पृथ्वीराज का मण्डलेश्वर कन्नौज के स्वामी राठौड़ जयचन्द्र की पुत्री को हरना, उस युद्ध में काशी के राजा आदि अनेक शत्रुओं के समूह को मारकर हड्डाधिराज के कुमार हम्मीर और गम्भीर दोनों सगे भाइयों का मारा जाना, उनकी स्त्रियों नवश्री और यशोदा का अपने अपने पति के साथ सती होना, यह वृत्तान्त सुनकर बुलाने पर नहीं आने वाले अपने पोते सुमेरु को जानकर मांडलगढ़ के राज पर गम्भीर के पुत्र रणधवल का अभिषेक करके, संसार से विरक्त होकर, योग साधन करके, हाडों के राजा आनन्दराज के परलोक प्राप्त होने का इकतीसवाँ मयूख समाप्त हुआ। और आदि से एक सौ चालीस मयूख हुए।

प्रायो ब्रजदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

सचरणगद्यम्

हड्डाधिराज रनधवल किल्हनपुर के अधीस जाडेचा जद्दव लक्षधर की पुत्री पद्मदेवी बिवाही।

अरु बहोरिहु नरेन्द्र पृथ्वीराज बुलायो तथापि न गयो रु मंडनगढ़ रहि पितामह की ही आज्ञा निबाही।

रनधवल सों पद्मदेवी मैं राजकुमार भयो सो प्रतिमल्लन के सरन के दारन करि सरदार नाम कहायो।

अरु इतकों दिल्ली द्रंग नरेन्द्र पृथ्वीराज निगमबोध के घट्ट पर धातुमय बेध्यरूप जयस्तं भरोपि कान्यकुब्ज के रन मैं मरे सामन्तन के पुत्रन को बल देख्यो तहां पुंडीरचंद्र के पुत्र धीर हेमतुल्य हय पैं आरूढ होई आधुनी कासू करि वह स्तंभ बेधि स्वामी सों सत्कार की सर्व सामग्री समेत हिंसारदुर्ग पायो ॥१ ॥

हाडा राजा रनधवल ने किल्हनपुर के यादव वंशी जाड़ेचा राजा लक्षधर की पुत्री पद्मदेवी से विवाह किया। इसी समय चहुवान नरेश पृथ्वीराज ने फिर रणधवल के लिए बुलावा भेजा पर वह नहीं गया और मांडलगढ़ में ही रह कर उसने अपने दादा की आज्ञा का निर्वाह किया। इस राजा रनधवल को पद्मदेवी की कोख से राजकुमार जन्मा जो शत्रुओं के बाणों का विदारण करने वाला होने से सरदार नाम से प्रसिद्ध हुआ। और उधर दिल्ली नगर के राजा पृथ्वीराज चहुवान ने निगमबोध घाट पर धातु से बना निशाना लगाने के लिए एक जयस्तंभ बनवाया और कन्नौज के युद्ध में मारे गए अपने सामन्तों के पुत्रों को बुला कर उनके बल और शस्त्रविद्या की परीक्षा ली। इस परीक्षा में पुंडीरचन्द्र के पुत्र धीर ने अपने हेमतुल्य घोड़े पर सवार हो अपनी बरछी से जयस्तंभ को बेध डाला। इस उत्कृष्ट प्रदर्शन के लिए स्वामी पृथ्वीराज से इनाम की पूरी राशि पाई और साथ में हिसार दुर्ग की जागीर भी प्राप्त की।

यहै दुर्ग पहिलैं स्वकीय स्वसुर सलख कों दयो हो सो पुंडीरन के पटा के प्रांत के समीप हो यातैं धीर की रुचि जानि प्रामार कों पट्टालय दुर्ग दै रु हिंसार धीर कों दयो।

अरु भगवती के भक्त धीरहू प्रसन्न होइ स्वामि कों सुनाईं सहाबुद्दीन कों बहोरि गहि देबे कों पन लयो।

कलियुग के प्रभाव करि आर्याबर्त मैं अनीति बढी।

अरु बडे बडे बीरन असूया की ही पाटी पढ़ी ॥२॥

यह हिसार दुर्ग की जागीर पहले राजा ने अपने ससुर सलख को दे रखी थी पर पुंडीरचन्द्र के पुत्र धीर की इसी क्षेत्र में जागीर लेने की इच्छा को देखते हुए पृथ्वीराज ने अपने ससुर सलख प्रामार को पट्टालय दुर्ग की जागीर दी और उससे हिसार ले कर धीर को प्रदान किया। इसके बदले में देवीभक्त धीर ने भी प्रसन्न हो कर अपने स्वामी पृथ्वीराज को सुना कर यह प्रतिज्ञा की कि हे स्वामी! मैं एक बार फिर शाहबुद्दीन गौरी को पकड़ कर दिखाऊँगा। यह वह समय था जब कलयुग के प्रभाव से आर्यावर्त में अनीति का बोलबाला बढ़ा और बड़े-बड़े वीरों ने असूया का पाठ पढ़ा।

यातैं हिंसार हू सों अधिक पट्टालय जैसो दुर्ग पायो।

तथापि प्रामार जैत पुंडीरन मैं प्ररूष्ट होई कारा मैं जाइ मंत्र करि दाधिम चामुंडराज कों सहाय लै रु प्रभु सो प्रच्छन्न पातसाह पैं पत्र पठायो।

तीमैं लिखी इहां पुंडीर धीर नैं नरेन्द्र सों तुमारे गहि दैबे की प्रतिज्ञा करी है यातैं जब हम कहावैं तब ही जगदंबा जालप्या के मंदिर सों याकों पकराइ गजनी बुलाई आजन्म कारा में धरहु।

अरु हमारे नरेन्द्र की आसक्ति गाधिपुर के अधीस की अंगजा मैं अत्यंत जानि करतोया के समीप को आर्याबर्त को कितोक प्रांत लैबे को प्रारंभ करहु ॥३॥

यों तो हिसार से बड़ा पट्टालय जैसा दुर्ग प्रमार को दिया गया था पर फिर भी जैत प्रमार पुंडीरचन्द्र के पुत्र से खफा हो गया। उसने दाधिम चामुंडराज के साथ गुपचुप एकान्त में जा कर मंत्रणा की फ़िर चामुण्डराज की सहायता ले कर अपने स्वामी पृथ्वीराज से गुप्त एक पत्र बादशाह को भिजवाया जिसमें उसने लिखा कि यहाँ पुंडीर के पुत्र धीर ने चहुवानराज के सामने तुम्हें बंदी बना कर लाने का प्रण किया है। इसलिए जब हम संकेत भेजें तब ही तुम आ कर जगदंबा जालप्या के मंदिर से धीर को पकड़ कर

गजनी ले जाना और उसे आजीवन कारावास में डाल देना। और इधर हमारे स्वामी पृथ्वीराज की आसक्ति गाधिपुर के राजा की पुत्री से अधिक है इसलिए तुम्हारे लिए एक अच्छा मौका है कि तुम अटक नदी के पास वाले आर्यावर्त के क्षेत्र को हड़प कर अपने अधिकार में करने की प्रक्रिया आरंभ कर दो।

ऐसी ईरखा करि स्वामिद्रोह को बीज बोइ प्रामार दाधिम दोउन पुंडीर पैं पाप बिचार्‌यो तदनंतर बर्षाकाल के व्यतीत होत आश्विन के पांडुर पक्ष को आगम जानि नरेन्द्र को निदेस पाइ भगवती को अनन्यभक्त धीर जालंधर जाइ नवरात्र को अनसनब्रत धारि ध्यान लगाई ज्वालात्मा के मंदिर मैं स्वस्तिकासन करि दुर्गासत्तसई के जप करत भयो।

ताकी सुद्धि दाहिम प्रामार दोउन प्रत्यंतराज पैं प्रच्छन्न पठाई सो सुनि शहाबुद्दीन आठ हज्जार गक्खरी म्लेच्छन कों फकीरी बेस बनाइ जालप्या भेजि धीर कों पकराइ गजनी मंगाइ लयो।

धीर के अनेक सुभट मारे गये जा कलह के कोलाहल मैं पकरिबे सों हू व्युत्थान न पाइ कैदी भयोहु महाधीर धीर ध्यान ही लगायें जप करत गयो तानें करतोया के पार प्रत्यंत के प्रांत मैं पहुँचते जपन की समाप्ति जानि अंखि उघारि सय संज्ञा करि ग्राहकन की छुप्ति छुराइ आपुनैं अनुग सों उदक मगाइ कीलित ही आचमन स्नान करि व्रत के समापन की दक्खिना मैं आपुनें चरन के पंच सेरी प्रमित जात्य हाटक के शृंखल को एक एक कटिका द्विजन के अभाव दीनन कों दई।

पीछैं गजनी जावत जवनेस नैं निगड़ित ही स्पक्ष बुलाइ आपुनैं पकरि दैबे की पूछी तहांहु निस्संक पुंडीरराज कही मैं सुपर्ण सामंतनाथ की सभा मैं तोकों पन्नग लों पकरि देवे की प्रतिज्ञा लई ॥४॥

ऐसी भारी ईर्ष्या से स्वामीद्रोह का बीज बो कर प्रमार जैत और दाधिम चामुंडराज दोनों ने पुंडीर धीर के लिए पाप से भरा यह कृत्य सोचा। थोड़े दिनों बाद वर्षा काल के व्यतीत होते आश्विन मास के शुक्ल पक्ष का आगमन जान कर अपने स्वामी पृथ्वीराज की रजा पा कर भगवती का अनन्य भक्त धीर जालंधर गया और वहाँ नवरात्रि के उपवास रख कर ज्वाला देवी के मंदिर में स्वस्तिक आसन की मुद्रा में बैठ दुर्गा सप्तसती के श्लोकों का

जाप करने लगा। इस बात की खबर कि अभी धीर ज्वालादेवी के मंदिर में हैं दाहिमा और प्रमार जैत दोनों ने बादशाह के पास गुप्त रूप से भिजवाई। जिसे सुन कर शाहबुद्दीन गौरी ने अपने आठ हजार गक्खरी (गक्खर देश के निवासी मुसलमान) योद्धाओं को फकीर वेष में ज्वालादेवी के मंदिर पर भेजा और वहाँ से पुंडीर चन्द्र के पुत्र धीर को पकड़ कर गजनी मँगवा लिया।

इसे अंजाम देने में धीर के कई योद्धा मुकाबला करते मारे गए। इस कलह के कोलाहल में भी वह निर्भीक योद्धा धीर, देवी का ध्यान लगाए रहा। यहाँ तक कि पकड़ लिए जाने पर भी वह महाधैर्यवान धीर ध्यानमग्न जप करने में निमग्न रहा। अटक नदी को पार कर जब गक्खरी फकीर उसे म्लेच्छ प्रांत में ले जाने लगे तब जा कर उसका जप पूरा हुआ। उसने अपनी आँखें खोल कर देखा कि वह कहाँ है? इसके बाद उसने अपने हाथ के संकेत से उसे पकड़े म्लेच्छ योद्धाओं से उसका हाथ छोड़ने को कहा फिर अपने सेवक के हाथों पानी मँगवाया और कैद में ही आचमन स्नान आदि से निवृत हो कर अपने व्रत के समापन के अवसर पर दक्षिणा स्वरूप उसने अपने पाँव में पहने हुए पाँच सेर (लगभग चार सौ तोला) वजन के स्वर्णनिर्मित लंगर के टुकड़े-टुकड़े किये। इसके बाद इन कंचन के टुकड़ों को ब्राह्मण की अनुपलब्धि की दशा में दीन-हीन लोगों में बाँटा। तत्पश्चात गजनी पहुँचने पर बंदी अवस्था में ही जब धीर से यवनेश शाहबुद्दीन ने पूछा कि क्या तुमने मुझे बंदी बनाने का प्रण किया था? इस पर पुंडीरराज धीर ने कहा कि हाँ, मुझ गरुड़ ने राजाधिराज पृथ्वीराज की सभा में यह प्रतिज्ञा ली थी कि एक दिन तुझ सर्प को अवश्य पकड़ कर उन्हें पेश करूँगा।

सो गौरव के साथ कारा सों कढि जैबो बनि जैहैं रु तू तस्कर लों ताकत अटक आपगा कों उल्लंघि अैहैं तो अबके आहव में तोसे कंगाल के कंठ मैं कमान डारि सच्ची करि दिखैहों।

अरु पहिलें केही बेर कारा में सह्यो ताहू सों बिसेस संकलन को भार सहिबो सिखैहों।

अैसी अनेक कहत हू धीर कों यवनेंद्र दैव के प्राबल्य करि प्रसन्न होइ अंदुक उतारि बंध प्रबंध बिहीन करि इभ अश्व अलंकार आच्छादन दैन लग्यो ते न लये रु कही।

तोहि पकरे पीछैं साहस के साहस मैं इतोक ही उपायन अधीस कों दिवाइ दैहों रु दीन पैं दया दिखाई तेरे ही तंत्र में राखि देहों म्लेच्छ मलिन मही ॥५॥

यदि गर्व के साथ किसी तरह मेरा कैद से निकलना संभव हुआ और उसके बाद यदि कभी तू तस्कर (चोर) अपनी ताकत (सेना) के साथ अटक नदी को पार कर आया तो उस युद्ध में मैं तुझ जैसे कंगाल के कंठ (गले) में अपनी धनुष की कमान डाल कर अपने प्रण को सच्चा कर दिखा दूँगा। यों तो तू कई बार हमारी कारा में बंदी हो कर रहा है पर अब की बार तुझे अधिक जंजीरों के भार को सहन करना सिखाऊँगा। ऐसी अनेक बातें निर्भय निशंक उस धीर के मुँह से सुन कर भी भाग्य के बल से बादशाह प्रसन्न हुआ। उसने उसकी जंजीरें खुलवाईं। धीर को बंधन मुक्त कर बादशाह जब उसे हाथी, घोड़े आभूषण और वस्त्र प्रदान करने लगा तो वह उन्हें अस्वीकार करते हुए कहने लगा कि तुझे पकड़ने के बाद हठ करने के दंड में इतना (यह) नजराना तो मैं अपने स्वामी को नजर कर दूँगा और तुझ जैसे दीन पर दया करवा कर उनसे तेरी म्लेच्छ देश की मलिन भूमि तेरे अधिकार में ही रखवा दूँगा।

ऐसी अनेक कहत हू धीर कों प्रत्यंतराज स्वकीय सुभट सचिवन के बर्जन सों बहिर्भूत बनि दिल्ली कों सीख देत भयो।

अरु धीरहू जालप्या आइ बिधेय ब्रत कों बहोरि बनाइ प्रस्थितपथ इंद्रप्रस्थ पाइ सभा मैं सांकभरराज के समक्ष गयो।

याको कीलन सुनि नरेन्द्रहू अत्यंत अंतर्मना हो यातैं देखत ही दोरि उरसों लगाइ अंबुक मैं अंबु लाइ असाधारन सत्कार करि सिराह्यो।

यातैं दाधिम प्रामार दोउन के चित्तमैं चुभ्यो रु बहोरि हू बिसेस ही बिरोध चाह्यो ॥६॥

इस तरह की कई बातें कहने पर भी धीर को म्लेच्छराज शाहबुद्दीन ने अपने मंत्री और सामन्तों के मना करने के बावजूद भी छोड़ दिया और दिल्ली के लिए विदा किया। धीर ने सर्वप्रथम ज्वाला देवी के स्थान पर आकर अपना व्रत विधि-विधान पूर्वक संपन्न किया। इसके बाद वह चल कर दिल्ली आया और चहुवानराज की राजसभा में गया। इस धीर को बंदी

बनाए जाने के समाचार सुन कर चहुवानराज अत्यन्त खिन्नमना थे। वे उसे देखते ही दौड़ कर आए और आ कर धीर को गले से लगाया। राजा की आँखों में अश्रु ढुलक आए। उन्होंने असाधारण सत्कारपूर्वक उसका स्वागत किया। यह सब कुछ देखना प्रमार जैत और दाहिमा चामुंडराज के हृदय में कांटे की तरह चुभा और धीर के प्रति उनके मन में जितना विरोध था उससे अधिक बढ़ गया।

तबही चामुंडराज जैत पुंडीर के प्रानन पैं पाटच्चर लों प्रकुप्पि प्रभु को प्रचुर प्रमाद लिखाइ प्रच्छन्न पत्र दैकैं प्रत्यंत पुरंदर कों समयोचित स्वापतेय समप्पि बुलायो।

सो खुरासान को बीबध बाहुन सों बंधि प्रचुर पृतना कों प्रसारि अटक कों उल्लंघि आसु ही आयो।

चंडासिराज हू सम्मुख ही झेलि पहिलैं बेरबेर पकरिबे को बिस्मरन बताइ प्रघात को प्रारंभ रच्यो वाही अवमर्द मैं आपुनी प्रतिज्ञा अुर्जन सी अमोघ दिखाई बहुन बीबोन कों बलय बिहीन करि पुंडीरराज सहाबुद्दीनकों पकरि नरेन्द्र के समक्ष कीनों।

अरु थोरे ही दिनन में अल्प ही दंड दिवाइ अग्गें छोरिबे सों अधिक इज्जत रखाइ छुराइ दीनों ॥७॥

उन दोनों ने धीर पर कुपित हो चोर की तरह छुप कर अपने स्वामी के प्रति लापरवाही बरतते हुए गुप्त रूप से पत्र भेज कर यवनेन्द्र को समयोचित धन दे कर बुलाया। पत्र पाते ही खुरासान की कावड़ अपने कंधों पर बाँधे बड़ी भारी सेना के साथ अटक नदी लाँघ कर शीघ्र ही आ पहुँचा। चहुवानराज ने उसके सम्मुख जा कर मुकाबला किया। पहले कई बार उसे बंदी बनाए जाने को विस्मृत कर युद्ध की रचना की। इसी भीषण यंत्रणादायक संग्राम में अपनी प्रतिज्ञा को अर्जुन की तरह अमोघ मानने वाले पुंडीरराज धीर ने कई यवन स्त्रियों को वैधव्य प्रदान कर अन्तत: शाहबुद्दीन को पकड़ कर राजा पृथ्वीराज के समक्ष प्रस्तुत किया पर थोड़े दिनों बाद ही हल्का सा दंड दिलवा कर पहले कई बार छोड़ने से जो राजा की इज्जत बढ़ी थी उसमें थोड़ा इजाफा कराते हुए शाहबुद्दीन को छुड़वा दिया।

पुनिहू पृथ्वीराज को प्रसाद पुंडीर ही पैं प्रचुर प्रकट्यो पिक्खि

मच्छरी दाधिम प्रमार के हृदय मैं न मायो।

अरु हयन के सोदागर यवन यूसफ के संग कालनमीर म्लेच्छ का प्रच्छन्नभूत द्रव्य दैकैं पठाई चूक कराइ पुंडीरराज मरायो।

अरु धीर हू मस्तक उडत ही ऊठि प्रत्याकार सों असिवर अैंचि आपुनें वार मैं आये द्वैसत जवन कितेक कालमें खंडबिहंड करि गिराये।

यह हाक होत ही पुंडीर के प्रबीरन हजारन म्लेच्छन कों मारि कातरन कों प्रतिमुख फिराये ॥८ ॥

इस घटना के बाद चहुवानराज पृथ्वीराज की प्रसन्नता धीर पर और अधिक बढ़ गई। यह देख कर चहुवानराज की प्रसन्नता दाहिम और प्रमार दोनों के हृदय में खटकी और घोड़े के सौदागर म्लेच्छ युसुफ के साथ कालनमीर यवन को गुप्त रूप से धन दे कर भेजा और धोखे से पुंडीरराज को मरवा दिया पर अपना मस्तक उड़ते ही धीर ने अपना खड़ग म्यान से खींच निकाला और अपने वार की जद में आए दो सौ यवनों को थोड़े ही समय में टुकड़े-टुकड़े कर डाला। इस हमले का हल्ला गुल्ला सुन कर पुंडीर के योद्धा लपके और उन्होंने हजारों यवनों को मार शेष बचे कायरों को रणभूमि से भगा दिया।

या समय सों पहिलैं दाधिम प्रमार दोउ न पुंडीर को प्रकल्पित असंभवी अपराध कहि गौरी के गहिबे जैसी अनेक अतुलित स्वामिसेवा बिसराइ नरेंद्र कों कुपायो सो जानि धीर दिल्ली को पटा तजि खुरासान खेत के बिशिष्टबेग बाजी बसावन कों अटक उल्लंघि प्रत्यंत मैं प्रविष्ट भयो हो।

अरु दिल्लीस सों रूस्यो जानि सहाबुद्दीन लाखन को पटा दैन लग्यो ताको तिरस्कार करि पृथ्वीराज बिनां औरन के आश्रित रहिबे कों नटि गयो हो।

तहां अपनें पिता को पटा तजि प्रत्यंत मैं आयो जानि धीर को पुत्र पाउसराय लाहोर दुर्ग को हाकिम हो सोहू वाही पत्तन कों लूटि पिता के पास गयो ताकों देखत ही धीर निस्त्रिंश निकासि मारन कों दोर्‌यो ताहि आपके रु प्रत्यंत के लोकन रोकि अंगज के अपराध की क्षमा कराई।

तब प्रत्यंतराज कैं न रह्यो रु स्वामी के सहर लाहोर की लूटतैं पुत्र

के प्रान लैन लग्यो द्वै ही असाधारन कार्य सुनि पृथ्वीपति पृथ्वीराज सविसेस सत्कार लिखि बहोरिहु बुलायो सो प्रभु के पत्र कों पिक्खत ही सीस धरि अधीस के उपायन कों एक अद्वितीय अश्व लै रु आवत हो तदनंतर दाधिम प्रामार द्वै ही दुष्टन ऐसें यह चूक कराइ पुंडीरराज मरायो इहां बंदीचंद कहुँक तो पाउसराज कों धीर को पुत्र ही लिख्यो अरु कहुँक लिख्यो भाई॥९॥

इस समय से थोड़ा पहले दाहिमा चामुंडराज और जैत प्रमार ने धीर पर असंभव अपराध का झूठा इल्जाम लगा कर, गौरी को बंधक बनाने जैसे स्वामी भक्ति के कार्य को बिसरा कर, चहुवानराज को उससे खफा करवा दिया। जिसे जान कर धीर अपना दिल्ली की जागीर का पट्टा समर्पित कर खुरासान के क्षेत्र में उत्पन्न तेज वेग वाले घोड़े प्राप्त करने के लिए अटक नदी पार कर यवनों के प्रान्त में प्रविष्ट हुआ। उसे दिल्ली के राजा से रूठा हुआ जान कर शाहबुद्दीन ने उसे लाख रुपयों की जागीर का पट्टा देने का प्रस्ताव किया पर धीर ने इस जागीर को लेने से मना कर दिया और कहा कि मुझे चहुवानराज पृथ्वीराज के अतिरिक्त किसी अन्य का आश्रित रहना स्वीकार नहीं है। वहीं जब धीर के पुत्र पाउसराय जो लाहौर दुर्ग का हाकिम था ने यहसुना कि उसके पिता अपनी जागीर छोड़ कर यवनों के देश में चले गए हैं तो वह भी कई नगरों को लूटता हुआ अपने पिता के पास गया। अपने पुत्र को देखते ही धीर ने अपनी तलवार निकाली और वह उसे मारने दौड़ा जिसे म्लेच्छ सैनिकों ने बीच बचाव कर धीर को पुत्र हत्या जैसे अपराध को करने से रोका और पुत्र पाउसराय को क्षमा दान दिलवाया।

जब धीर ने यवनराज का आश्रित होना स्वीकार नहीं किया और अपने स्वामी के शहर लाहौर को लूटने पर स्वयं के पुत्र के प्राण लेने पर उतारू हो गया इन दोनों असाधारण कार्यों की बात सुन कर पृथ्वीपति पृथ्वीराज ने विशेष सत्कार की इच्छा से पत्र लिख कर धीर को वापस बुला भेजा। उसे ज्योंही अपने स्वामी का पत्र मिला तो उसने अपने स्वामी की आज्ञा को शिरोधार्य कर तुरन्त ही एक अद्वितीय वेग वाले घोड़े पर सवार हो अपने वतन की राह ली। वह अपने स्वामी के बुलावे पर आ ही रहा था कि दाधिम चामुंडराज और प्रमार जैत दोनों ही दुष्टों ने धोखे से पुंडीरराज को

बीच राह में मरवा दिया यहाँ यह बता देना भी आवश्यक है कि *पृथ्वीराज रासो* के रचनाकार चंद बरदाई ने पाउसराय को कहीं तो पुंडीर धीर का पुत्र लिखा है और कहीं पर उसने उसका भाई होना लिखा है।

बंदी चंद नें सबही ग्रंथ रासे के प्रभूत प्रस्तावन मैं सहाबुद्दीन कों छ बेर पकर्‌यो लिख्यो अरु प्रचुर ही प्रकरनन मैं पंद्रह बेर पकर्‌यो लिखि अपनैं आगमसों अभिरूपन की आस्था ही उडाइ दई।

सों ढुंढ राक्षस सों लैकैं दिल्ली मैं जवनन को आधिपत्य भयो तहां लो त्रेता द्वापर के संभवी अनेक उदंत लिखि स्वकीय स्वांत मैं भावी जनन कों जड़ जानि जो लिखिहों सोही सत्य गिनि लैहैं ऐसी मानि महाभारत कों प्रतिभट प्रबंध बनाई वा बेला के बीरन कों बीभत्सु बैकर्तन भीष्म द्रोन से दिखाइ नर्तक की नकल आनि आधुनिक कविनकों अंध जानि आपुनें मत में तो विश्वंभर के बिग्रह व्यासावतार की ही गद्दी लई।

संयोगिता के हरण के अनंतर कितेक मासन लों पूर्ब पाटव राखि नरेंद्र तो अति ही आसक्त होय राष्ट्रकूटी के रंग ही मैं रच्यो।

अरु अष्ट ही प्रहर निरंतर ही निकटि रहि बादी के बंदर लों बसीभूत बनि परतंत्र पर्‌यो समुझि संयोगिता हू स्वामी की सावधानी की समस्त सामग्री को संहार करि देसन कों औरन के आयत्त जानि अखिलनकों उडाइ आपुनें रक्षक धरि दिल्ली पुर को प्रबंध विसेस बंधि अवरोधके प्रथम प्रकोष्ट पर बीर बेस बनाइ पंचसत प्रमदा राखि जो कोऊ आवैं ताकी लट्ठिन सों मनोहारि करि भुवन भेजहु ऐसें कहि अखिल ही इंद्रप्रस्थ कों अपनें आयत्त करि सांयसंध्या के समान साकंभर सूर कों ग्रसि गई सो जानत ही दिल्ली के राज्य मैं अनिमिसन्याय मच्यो ऐसे अनेक ही अनुचित जानि साकंभरराज को स्वसुर जद्दव हम्मीर जामाता सों कछु कहाइबे कों पहिले प्रकोष्ट पर्यंत पहुँच्यो हो ताहि तक्कत ही पंगु की पुत्री की पंचसत प्रमदा नरवेस धारि निस्संक खरी ही तिन पिक्खत ही जाइ लट्ठिन के प्रहार पटके तिन सों पग्घ गिर गई सो जानत ही महा भीरुभाव गहि हाहुलि हम्मीर अपनें आस्थान आइ सपरिकर दिल्ली कों दक दै रु स्वस्थान कंगुर गयो।

अैसें अनेक उदंतन मैं महीप कों महा प्रमत्त पाइ आजानुबाहु आदिक कितेक अवसेस सामंतन को संघ आपुनों गौरव राखिबे कों जिततित टरि विभक्त[1] भयो ॥१०॥

इसी प्रकार चंद भाट ने अपने ग्रंथ के कई प्रकरणों में शाहबुद्दीन को छह बार बंदी बनाना लिखा है और साथ ही उसने अपने बहुत से प्रकरणों में शाहबुद्दीन गौरी को पन्द्रह बार पकड़ना लिख कर विद्वान पाठकों की श्रद्धा को खोया है। इसी तरह ढूँढ़ राक्षस के वृत्तांत से ले कर दिल्ली पर यवनों का आधिपत्य हुआ वहाँ तक त्रेता और द्वापर में संभव होने वाले वृत्तांत लिख अपने मन में चंद वरदाई ने भविष्य में होने वाले मनुष्यों को निरा मूर्ख समझते हुए यह मान लिया कि मैं जो भी लिखूँगा लोग उसे सत्य मान लेंगे। उसने ऐसा सोच कर कि मैं महाभारत का मुकाबला करे जैसा ग्रंथ बना रहा हूँ उसने उस समय के वीरों को अर्जुन, कर्ण, भीष्म और द्रोण जैसा दिखा कर भांड जैसी भौंडी नकल उतारने की चेष्टा की है। उसने आधुनिक काल के कवियों को अंधे समझ (अर्थात् बुद्धिरूपी नेत्रों से हीन समझ कर) अपने विचार में तो परमेश्वर के अवतार वेदव्यास की ही गद्दी ली हो जैसे उसने मन ही मन वेदव्यास बनने में कमी नहीं रखी। संयोगिता हरण के बाद कई माह तक पहले जैसी चुतराई बरतते हुए राजा पृथ्वीराज तो आसक्त हो उस राठौड़ रानी के रंग ही में रंग गया।

वह आठों पहर अपनी रानी के पास रहने लगा उसे मदारी के बन्दर की तरह संयोगिता ने अपने वशीभूत हो परतंत्र पड़ा रहने वाला जाना और रानी ने अपने स्वामी की सावधानी (रक्षा) की समस्त सामग्री नष्ट कर अपने देश को जैसे किसी और के अधीन जान कर सभी रक्षक योद्धाओं को हटा दिया। यही नहीं उसकी जगह अपने रक्षक तैनात किए। उसने दिल्ली नगर का विशेष प्रबन्ध इस प्रकार किया कि रनिवास के प्रथम द्वार पर वीर वेष में पाँच सौ स्त्रियों को तैनात किया और उन्हें आदेश दिया कि जो कोई भी आए उनकी लाठियों की मनुहार की जाए। पीट कर उसे अपने घर भेजा जाए। इस प्रकार का निर्देश दे कर संयोगिता ने पूरे दिल्ली नगर को अपने अधिकार

टिप्पणी १. एक पांडुलिपि में 'विरक्त भयो' ऐसा पाठ है। इसका अर्थ हुआ कि वह संघ प्रीतिरहित हो गया पर मुझे यहां 'विभक्त भयो' का पाठ अधिक उपयुक्त लगा अर्थात् इधर-उधर बिखर गया। संभव है लिपिकार ने अशुद्ध लिख दिया हो। - संपादक

में ले लिया। उसने सायंकाल की संध्या के समान चहुवानों के सूर्य (पृथ्वीराज) को निगल लिया। यह जानते ही दिल्ली में मच्छगलागल न्याय मचा (एक मछली दूसरी मछली को खा जाती है वैसी स्थिति हुई) ऐसे अनेक अनुचित वाकए सुन कर चहुवानराज का श्वसुर यादव हम्मीर अपने जामाता राजा को कुछ कहने के लिए दिल्ली आया। वह अभी पहले द्वार तक पहुँचा ही था कि उसे देखते ही जयचंद की बेटी संयोगिता की रक्षक स्त्रियाँ जो नर वेष में थी ने अपनी लाठियों के प्रहार करने आरंभ कर दिए। लाठियों के प्रहार से यादव राजा की पगड़ी गिर गई। ऐसी दशा होते ही वह यादव हम्मीर कायरों की तरह अपने घर की ओर भागा और घर आ कर अपने सारे परिजनों के साथ दिल्ली को पानी दे कर (शपथपूर्वक छोड़ना) अपनी राजधानी कांगड़ा चला गया। ऐसे कई वृत्तान्तों से अपने राजा पृथ्वीराज को गाफिल हुआ जान कर आजानुबाहु आदि बाकी के सामन्तों का समूह अपने स्वाभिमान की रक्षार्थ इधर-उधर बिखर गया। अर्थात् जिसे जहाँ अपने गौरव के अनुसार जगह मिली वहाँ चला गया।

अरु इन्द्रप्रस्थ मैं ऐसो अंधकार जानि सालक कों सुनय समुझाइबे कों चित्रकूट सों लघुपत्नी पृथा सहित राजकुल समरसिंह दिल्ली आइ सेनासहित निगमबोध के घट्ट पैं पर्‌यो।

सोहू नृप न जानिबे पायो तासों सम्मुह जाइबे प्रमुख कोऊ सत्कार न बन्यों जो जानि पंगुजा के प्रधान स्वामिनी सों कहाई सो सुनि संयोगिता हू स्वामी के नाम करि ननंद ननंदवई की सेना में सादर ससत्कार महिमानि मुक्कलि बर्द्धमान बिनय दिखाय आपुनें पितामह विजयपाल बसुधा को विजय करत अवनीसन सों उपादमैं अनेक मनि भूखन आनैं जे जयचंद्र के दये याके संग आये तिनकों स्वामी की स्वसा के अर्थ भेजि दोउन को दुर्मनी भाव हर्‌यो समरसिंह को निगमबोध पैं बासरन की बीसी बीति गई तथापि नरेंद्र तो कामांध पंगुजा के प्रबंध करि जानिबे न पायो।

अरु ऐसो प्रमाद सहाबुद्दीन सुनि कायस्थ धर्मायन खत्री नातिराव द्वै ही अधिकारी प्रत्यंतराज तैं प्राभृत पाइ पृथ्वीराज तैं प्रच्छन्न पलटि रहे हे तिन सों अंग उपांग उपेत उदंत जानि पूर्व सों बिसेस बाहिनी बढ़ाइ

समस्त ही सूरन कों सज्ज करि दिल्ली पैं चलायो ॥११॥

दिल्ली नगर में ऐसा अंधकार (कुशासन अथवा अशासन) जान कर अपने साले को राज्य नीति समझाने की गरज से चित्तौड़गढ़ से अपनी छोटी रानी पृथा (जो पृथ्वीराज की बहिन थी) सहित रावल समरसिंह दिल्ली आए। उन्होंने वहाँ पहुँच कर निगमबोध घाट पर अपने परिकरों सहित पड़ाव डाला। इस बात की खबर भी राजा पृथ्वीराज को नहीं हुई जिससे अपने बहनोई के सम्मुख जा कर आदर देने जैसा कार्य भी राजा से नहीं हो पाया। उसकी ओर से कोई सत्कार न होता देख कर रावल ने यह बात संयोगिता के सचिव को कहलाई। यह सुन कर संयोगिता ने अपने स्वामी का नाम कर (अर्थात् अपने पति की ओर से) अपनी ननद और ननदोई (ननद के पति रावल समरसिंह) के सामने आदरपूर्वक मेहमानी के लिए अपने अनुचर और सामग्री भेजी। पूरी विनम्रता के साथ संयोगिता ने अपने दास राठौड़ राजा विजयपाल के विजय अभियान में भेंट आए हुए रत्न आभूषण वगैरह थे जो उसे अपने पिता जयचन्द ने दिए थे। उन रत्नों को अपने पति की बहिन और बहनोई को भेंट में भिजवाए। इस प्रकार संयोगिता ने अतिथि सत्कार में पूरी विनम्रता बरतते हुए रावल समरसिंह की उदासी मिटाई। इस तरह निगमबोध घाट पर पड़ाव डाले रावल समरसिंह को बीस दिन बीत गए पर कामांध राजा पृथ्वीराज तो अपनी रानी संयोगिता के राग रंग में ही डूबा रहा और अपने बहनोई से मिलने नहीं जा पाया। पृथ्वीराज के ऐसे प्रमाद से गिरे रहने के समाचार जब शाहबुद्दीन को मिले तो उसने कायस्थ धर्मायन और नीतिराव खत्री चहुवानराज के दोनों अधिकारियों को लालच दे कर गुप्त रूप से अपने पक्ष में कर लिया। ये दोनों भीतर की सारी खबरें शाहबुद्दीन को देने लगे। गौरी ने उचित अवसर जान कर पूर्व दिशा से अपनी बड़ी भारी सेना को सज्जित कर अपने सारे सामन्त योद्धाओं को संग ले दिल्ली की ओर कूच किया।

तहां सु कर्मसाह नामक दिल्ली को बनिक बानिज्य कों गजनी गयो हो तानैं स्वकीय सहर पैं प्रत्यंतराज को प्रस्थान जानि सजातीयन पैं पत्र पठाइ प्रस्था मैं यहै उदंत जनायो सो पत्र पिक्खत समस्त ही श्रेष्टीजन राजा के गुरु रामदेव पैं जाइ बज्रपात सो वृत्तांत निवेदत भये।

तब रामदेव हू बंदीचंद कों संग लैकैं कूकते सेठन सहित द्वै ही पंगुजा के पस्त्य के पहिले प्रकोष्ट गये।

तिनकों देखत ही पुरुखन के पट भूखन धरें पंचसत प्रमदान को प्रकर पंगुपुत्री को प्रबीर पृथ्वीराज के परिकर को प्रतिभट हो सो दोरि लट्ठीन की छांह करत भयो।

तब बिप्र बंदी रामदेव चंद्र वा हनन सों बाहिर कढि आपुनें आनन दिखाइ बिनय बिहित बिन्नती करि गौरी के आइबे को अरु अपनें आलय सों इंद्रप्रस्थ के जाइबे को पत्र लिखि स्वामी के सपथ दिवाइ पृथ्वीराज के पास पहुँचाइबे कों दयो॥१२॥

अपना व्यापार करने की गरज से यहाँ से कर्मशाह नामक एक बनिक गजनी गया हुआ था। उसने जब वहाँ यह देखा कि यवनराज शाहबुद्दीन आर्यावर्त पर आक्रमण करने अपनी सेना सहित प्रयाण कर रहा है तो उसने इस आशय का एक पत्र अपनी गुप्त शैली में लिख कर दिल्ली भेजा। जिसे पाते ही सारे राज के श्रेष्ठीजन इकट्ठे हो कर राजा के गुरु रामदेव के पास गए और उसे यह वज्रपात जैसा समाचार कह सुनाया। तब रामदेव अपने साथ चंद भाट को ले कर रोते हुए सेठों सहित जयचंद की पुत्री संयोगिता के महल के पहले द्वार तक पहुँचे। इन्हें देखते ही पुरुषभेष में रहने वाली संयोगिता की महिला रक्षक टोली जिनकी संख्या पाँच सौ थी ने उन्हें अपना शत्रु समझ सदा की नाईं अपनी लाठियाँ बरसाना आरंभ किया। तब पंडित रामदेव और भाट चंद दोनों इस मार के डर से वापस बाहर निकल आए। बाहर आ कर उन्होंने सविनय विनती की कि ओ महिला रक्षको! राज्य पर खतरा मंडरा रहा है। शाहबुद्दीन गौरी अपनी सेना सहित आक्रमण करने के लिए बढ़ा चला आ रहा है। अपने अधिकार से दिल्ली निकल जाने का खतरा है। इस आशय का एक पत्र लिख कर संयोगिता के प्रहरी को दे कर कहा कि तुम्हें अपने स्वामी की सौगन्ध है इस पत्र को तुरन्त राजा तक पहुँचाने की व्यवस्था करो।

सो पत्र किंकरीन स्वामिनी कों सुनायो तहां प्रामारी प्रच्छन्न पिक्खि आये को उद्धोस करि भित्ति के अंतर सों कांत कों कूक सुनाइ दीनी सो जानि संयोगिता हू किंकरी के कर पत्र पहुँचाइ जनावत भई।

सो जानत ही नरेन्द्र बाहिर आइ बर्तमान बीरन कों बुलाइ निगमबोध जाइ स्वसाके स्वामी सों आपुनें मंतु की क्षमा कराइ लई।

अरु आपुनें अवसेस अधिबीरन मैं प्रामार सिंह कार्मध्वज आर्य प्रतिहार सिंह महन पीप पृथाके पति कों आयो सुनि अजमेर सों आयो ऐसो आजानुबाहु लोहान बीर मल्हण जद्दव जाम बडगुज्जर राम खिच्ची प्रसंग बग्गडी देवराज प्रमार जैत कूर्म बलिभद्र अरु कन्ह को पुत्र ईश्वरदास कैमास को पुत्र प्रताप गोविंदराज को सूनु सामन्तसिंह इत्यादिक उद्भटन कों बंदी चंद्र के संग मिलाइ अधिष्ठान में आनि इक्कथाल असन करि कही मैं स्त्रीजित होइ कुलकीर्ति खोइ अन्वयको अंगार कहायो रु आपकों आयें बीस बासर भये तथापि न जानि सक्यो सो अब जानि करजोरि कहत हों स्वसा सहित आप चित्रकूट पधारिये।

तब राजकुल कही ऐसे अंधकार को अरिबर्ग अवसर ही हेरत यातें अब सहाबुद्दीन के संपातकी सुनि जैबे मैं क्षात्रधर्म की क्षिति जानि संगही मरिबो स्वीकार कियो यातैं निवारिये॥१३॥

जब दासी ने इस पत्र को पहले अपनी स्वामिनी रानी संयोगिता को पढ़ कर सुनाया तो यह सुन कर कि आक्रमण हो रहा है उसके मुँह से चीख निकल गई। उसने शीघ्र ही दासी से कहा कि भीतर जा कर यह पत्र तुरन्त अपने स्वामी को सौंप आ। यह समाचार जानते ही राजा रनिवास के महलों से बाहर आया। उसने अपने उपलब्ध सामन्त योद्धाओं को बुलवाया फिर वह सीधा निगमबोध घाट पर गया और अपने बहनोई रावल समरसिंह से अपनी गलती के लिए क्षमा माँगी। उसके बचे सामन्त वीरों में प्रमार सिंह, राठौड़ आर्य, प्रतिहार सिंह, महन, पीप, पृथा के पति रावल समरसिंह का आगमन सुन कर अजमेर से आया हुआ आजानुबाहु लोहान, वीर मल्हण, यादव जाम, राम बड़गुज्जर, प्रसंग खिची, बगड़ी देवराज, जैत प्रामार, कछवाहा बलिभद्र और अपने चाचा कन्ह का पुत्र ईश्वरदास, कैमास का पुत्र प्रताप, गोविन्दराज का पुत्र सामन्तसिंह इत्यादि वीर योद्धाओं को उसने चंद भाट के साथ अपने महल में बुलवाया। जहाँ राजा ने सभी के साथ बैठ कर एक थाल में ही भोजन किया और कहा कि मैं स्त्रीजित (अपनी स्त्री के वशीभूत हो) हो कर अपने कुल की कीर्ति को खो कर वंश का अंगार कहलाया हे

बहनोई! आपको यहाँ आए हुए पूरे बीस दिन व्यीतत हो गए और मैं जान भी न सका। अब जानने के बाद आपसे करबद्ध प्रार्थना करता हूँ कि आप मेरी बहिन सहित चित्तौड़गढ़ को पधार जाए। यह सुन कर रावल समरसिंह ने कहा कि ऐसे अंधकार पूर्ण समय में हो फिर शत्रु अवसर की ताक में अब शाहबुद्दीन के आक्रमण की सुन कर जाने में क्षत्रियधर्म की हानि होगी यह सोच कर मैंने भी आपके साथ ही मरना स्वीकार किया है इसलिए जाने की बात न कहें।

तब दिल्लीस हू स्वसा के स्वामी कों साहसी जानि पट्टपकुमार रत्नसिंह कों बुलाइ आपुनों आसन दैन लग्यो सो कुमार हू कलह को आगम जानि न लयो।

अरु पिउसिया के पति के प्रसभ पूर्बक कहें पिता को प्रस्थान प्रघातन मैं पिक्खि नीठिनीठि पीछैं रहतभयो।

राजकुल समरसिंह सालक कों समुझाइ संग लैजाइ दाधिम चामुंडराज की बेरी बिनयपूर्बक निकासि द्वै ही दलनके सत्तरि सहस्त्र सूरन कों सज्झ करि सम्मुह चलाइ सहाबुद्दीन कों सतद्रू के पार ही जाइ अटक्यो।

अरु प्रामारराज के संबत की रुद्रसत पंचावन सम्मित समाके श्रावन की अमा के दिन प्रधन को प्रारंभ रचि सूरन नैं परस्पर सस्त्रन को संपात पटक्यो॥१४॥

जब दिल्लीपति ने अपनी बहन के पति का यह साहस देखा तो उसने अपने पाटवी पुत्र रत्नसिंह को बुलवाया और उसे अपनी राजगद्दी देने लगा पर कुमार ने भी आसन्न युद्ध के आगमन को जान कर मना कर दिया। अपनी बूआ (फूफी) के पति रावल समरसिंह के हठपूर्वक कहने से पिता का भी युद्ध में जाना देख कर वह स्वयं भी बमुश्किल तमाम पीछे रहने को तैयार हुआ। रावल समरसिंह ने अपने साले को समझा-बूझा कर साथ लिया और उसे दाधिम चामुंडराज के पास ले गया। वहाँ विनयपूर्वक दोनों का द्वैष मिटाया। फिर दोनों ही सेनाओं के सत्तर हजार योद्धाओं को सज्जित कर वे शाहबुद्दीन के सम्मुख चला कर गए और अटक नदी के तट पर जा कर मोर्चा लिया। प्रमारराज (विक्रमादित्य) के संवत के ग्यारह सौ पचपनवें वर्ष के

श्रावण मास की अमावस्या के दिन युद्ध का आरंभ कर योद्धाओं ने परस्पर अपने अस्त्र प्रहारों का सिलसिला चलाया।

इतिश्री बंशभास्करे महाचम्पूके पूर्वायणे चतुर्थ राशौ बीतिहोत्र-चण्डासि बंशबर्णनबीजहड्डाधिराडस्थिपाल बंश्यानुवंश्यव्याख्यान-व्याहार्यगाम्भीरिरणधवलव चरित्रे मण्डनदुर्गमहेन्द्रहड्डाधिराजरणधवल यादवीपद्मोदेवी परिणयन तदौरसराजकुमारसरदार समुद्भवन सामन्तसन्त-तिप्राणपरीक्षकपृथ्वीराजनिगमबोधघट्ट धातुमयबेध्यस्तम्भाऽऽरोपण कासूबेधितस्तम्भप्राप्तप्रभुप्रसादहिंसारदुर्गपुण्डीरधीरयवनेन्द्रग्रहणप्रतिज्ञान तन्मत्सरिप्रामारजैत्र दाधिमचामुण्ड बर्णदूतबिज्ञापितप्रत्यन्तराजज्वाला-त्मिकाध्यानासक्तनिगडितधीराऽऽकारण प्राप्तकरतोयापारबिज्ञातब्रत जप-समाप्तिसमयकृतस्वर्णशृंखलदानम्लेच्छसभासङ्गतधीरपुनर्यवनेन्द्रग्रहण-प्रतिश्रवण नियतानाहृतम्लेच्छसन्मानतत्प्रतिमुक्तसमाराधितशक्तिपुण्डरी-राजदिल्लीद्रङ्गागमन पृथ्वीराजसभासमागतधीरसत्करण तदीर्ष्याप्ररुष्ट-दाधिम प्रामार सहाबुद्दीनसमाकारण संहृतसपत्नपुण्डीरप्रतिकीलित-प्रत्यन्तराजमोचन दाधिम प्रामार शिक्षितहयबिक्रयियवनयूसफसार्थस-ङ्गतविश्वासघातकम्लेच्छकालनमीरधीरशिरश्छेदन तत्कबन्धयवनशतद्वय संहरण पुण्डीरप्रबीरप्रभूतप्रतिपक्षनिपातन तत्समयपूर्बप्रज्ञातपिशुनद्वय प्रेरितप्रभुप्रकोप त्यक्तस्वपट्टसदश्वचिक्रीषुधीरप्रत्यन्तसीमप्रविशनसूचन शहाबुद्दीनसमर्पितसत्कारपट्टतिरस्करणज्ञापन ज्ञातप्रत्यन्तप्रविष्टपितृक-लुण्टितलाहोरद्रङ्गसमागतपुत्रप्रावृड्राजप्राणजिहीर्षुधीरपरिकरलोकनिवारण-द्योतन प्रासश्रुतैतदुदन्तपृथ्वीराजसमाह्वानपत्रतदर्थक्रीतैकमहार्घहयरत्न-प्रत्यागच्छद्धीरप्रोक्तरीतिमार्गमरण बन्दिचन्द्रोक्तबहुबाक्यवृत्तान्तबैतथ्य बिपर्यय निर्धारण नरेन्द्रपृथ्वीराजसंयोगिताऽऽसक्तमीभवन।

श्री वंशभास्कर महाचम्पू के पूर्वायण की चतुर्थ राशि में अग्निवंशी चहुवान वंशवर्णन के कारण हड्डाधिराज अस्थिपाल के बंश और वंश की शाखाओं में उत्पन्न होने वाले वंश की कथा के कहने में गम्भीर के पुत्र रणधवल के चरित्र में मांडलगढ़ के राजा हाडों के पति रणधवल का यादव वंशीय पद्मावती से विवाह करना, उसके उदर से राजकुमार सरदार का जन्म लेना, सामन्तों की सन्तान का बल देखने वाले पृथ्वीराज का निगमबोध के घाट पर धातुमय निशाने का रोपना, बर्छी से स्तम्भ को बेधकर मालिक की

प्रसन्नता से हिसारगढ़ पाकर पुण्डीर धीर की बादशाह को पकड़ ने की प्रतिज्ञा को बताना, उससे पराई सम्पत्ति को नहीं सहने वाले प्रामार जैत और दाहिमा चामुण्ड की अर्जी भेजकर बादशाह को बताकर ज्वालात्मिका देवी के ध्यान मे आसक्त धीर को बन्धवाकर मँगवाना, अटक नदी के पार जाकर प्रसिद्ध व्रत और जप की समाप्ति के समय सोने के लंगर का दान करके म्लेच्छ की सभा में जाकर फिर बादशाह के पकड़ने का कहना, निश्चय ही अनादर किये हुए म्लेच्छ से सम्मान पाकर उसका वापस आकर शक्ति की आराधना करके पुण्डीरराज का दिल्ली नगर में आना, पृथ्वीराज का सभा में आये हुए धीर का सत्कार करना, उसके द्वेष से क्रोधित होकर दाहिमा और प्रामार का शहाबुद्दीन को बुलाना, शत्रुओं का संहार करके पुण्डीर का बादशाह को कैद करके छुड़ाना, दाहिमा और प्रामार के सिखाये हुए घोड़े बेचने वाले यवन युसुफ के घोड़ों के सार्थ (पशु समूह को सार्थ कहते हैं) के साथ आये हुए म्लेच्छ कालनमीर का विश्वासघात करके धीर का मस्तक काटना, उसके कबन्ध का दो सौ यवनों को मारना, पुण्डीर के वीरों का बहुत से शत्रुओं को मारना, इस समय से पहले प्रत्यक्ष दोनों चुगलखोरों की प्रेरणा से स्वामी के कोप से अपना पट्टा छोड़कर जितेन्द्रिय भूखे धीर का म्लेच्छ की सीमा में जाने की सूचना करना, शहाबुद्दीन के दिये हुए सत्कार और पट्टे का अनादर करना, अपने पिता को म्लेच्छ देश में गया हुआ जान कर लाहौर नगर को लूटकर आये हुए पुत्र के प्राण लेने की इच्छा वाले पुण्डीर राज धीर का परिगह के लोगों को मना करने को बताना, यह वृत्तान्त सुनकर पृथ्वीराज के बुलाने का पत्र पाकर उसके लिये बहुत महंगे मोल का घोड़ा रूपी एक रत्न मोल लेकर वापस आते हुए धीर का ऊपर कही हुई रीति से मार्ग में मरना, चन्द भाट के कहे हुए बहुत वाक्यों में वृत्तान्त का मिथ्यापन और उलट पलट का निर्धारण करना, राजा पृथ्वीराज का संयोगिता में आसक्त होकर रात्रि होना अर्थात् दिल्ली में अन्धेरा होना।

पंगुपुत्रीपरिकरप्रकोष्टप्राप्तयादवहम्मीरोष्णीषपातन ज्ञातैतदुदन्त-विरक्तीभूतावशिष्टसामन्तस्वाभिमतौदासीन्यभजन ज्ञातैतदन्धकारसमागत-सपत्नीकसमरसिंहनिगमबोधस्वशिविरन्यसन संयोगितातदर्थमणि भूषणा दिसत्कारप्रेषण निर्णीतपृथ्वीराजप्रमाददिल्लीजिगीषुयवनेन्द्रशहाबुद्दीना-भिषेणन ज्ञातश्रेष्टिसुकर्मपत्रदिल्लीवणिग्गण द्विजगुरुरामदेव बन्दिचन्द्र

पंगुजाप्रकोष्टपण भर्त्सितप्रत्यभिज्ञातबन्दि बिप्र सशपथप्रभुपार्श्वपत्रप्रेषण वाचितवर्णदूतबहिरागतसखिलसामन्तपृथ्वीराज समरसिंह सम्मिलन समनादृतगृहगमन-श्यालकसहायीभूतसमरसिंहसौमिकुमाररत्नसिंहस-साहसदिल्लीस्थापन स्वसृस्वामिसम्मतविरचितबिशृंखलदाधिमसन्नद्ध-सैन्यससमर सौमि सपत्नसम्मुखसमभिषेणन पाण्डवपृशत्कशिव सम्मितबिक्रमशकश्रावणदर्श दिन रणप्रारम्भणं द्वात्रिंशत्तमो मयूखः ॥३२॥ आदित एकचत्वारिंशदुत्तरशततमः ॥१४१॥

जयचन्द्र की पुत्री की परिगह का ड्योढी आये हुए यादव हम्मीर की पगड़ी गिराना, इस वृत्तांत को जानकर विरक्त होकर बाकी के सामन्तों का उदासीन होना, यह अन्धकार जानकर आये हुए स्त्री सहित समरसिंह का निगमबोध के घाट पर अपने डेरों में रहना, संयोगिता का उनके लिये मणि भूषण आदि सत्कार भेजना, पृथ्वीराज का प्रमाद निश्चय होने पर दिल्ली को जीतने की इच्छा से बादशाह शाहबुद्दीन का युद्ध यात्रा करना, सेठ सुकर्म का पत्र जानकर दिल्ली के बनिये लोक ब्राह्मणगुरु रामदेव और चन्द भाट का संयोगिता की ड्योढी पर जाना, डराये हुए विचार पूर्वक भाट और ब्राह्मण को शपथ दिलाकर स्वामी के पास भेजना, पत्र को बाँचकर बाहर आये हुए पृथ्वीराज का बाकी के सामन्तों सहित समरसिंह से मिलना, परम्परा (आगे के समान) से आदर करके घर में आकर साला के रक्षक होकर समरसिंह और पृथ्वीराज का कुमार रत्नसिंह को हठ पूर्वक दिल्ली में रखना, बहन के पति की सलाह से दाहिमा को कैद से छोड़कर सज्जित होकर समरसिंह सहित पृथ्वीराज का शत्रु के सामने युद्ध की यात्रा करना, पांडव (पाँच) और बाण (पाँच) और शिव (ग्यारह) अर्थात् ग्यारह सौ पचपन के प्रमाण वाले विक्रम के शक में श्रावण की अमावस्या के दिन युद्ध प्रारम्भ होने का बत्तीसवाँ मयूख समाप्त हुआ। और आदि से एक सौ इकतालीस मयूख हुए।

प्रायो ब्रजदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

सचरणगद्यम्

अमा के दिन सों पंचमी पर्यंत महाअवमर्द मंडत तेरह हजार सत्रुन कों संहारि सपरिकर राउल समरसिंह बीरतल्प लयो।

अरु दाहिम चामुंडराज जद्दव जाम आजानुबाहु लोहान कूर्म

बलिभद्र प्रामार जैत सिंह खिच्ची प्रसंगराज बग्गडी देवराज बडगुज्जर रामदेव पुंडीर पाउसराज रठ्ठोर अज्ज बीर मल्लहन प्रतिहार सिंह महन पीप द्विजगुरु रामदेव सस्त्र सचिव सारंगदेव तांबूल बाहक प्रतिहार बीर प्रमुख पार्थिव पृथ्वीराज को परिकर खंडबिहंड होइ काच के करीर लों झरत भयो।

मोरी चाहुवान संकरसिंह अरु धोंधेटिक चाहुवान जगम्मनि द्वै ही भीलुकन भजि कैं चडासिराज के कुल ही के कलंक लगायो।

अरु हड्डा चहुवान हम्मीर को सूनु सुमेरु गक्खर के टंक चाहुवान चट्टा को पुत्र सारंगदेव सोलंकी भानुराज तीन ही तेरह तुरंग मारि अल्प आहव करि कढि गये परंतु स्वामी कों संकट में देखि इन पंच न मांहिं सों देह डारिबो बिचारि अधीस के अड्डो कोऊ न आयो॥१॥

अमावस्या के दिन से लगा कर पंचमी तिथि तक चले भयंकर संग्राम में तेरह हजार शत्रुओं का नाश कर अपने परिजनों सहित रावल समरसिंह रण भूमि में पूरी वीरता से लड़ते हुए वीरशय्या पर सोये अर्थात् मारे गए। उनके अतिरिक्त दाहिमा चामुंडराज, जाम यादव, आजानुबाहु लोहान, कछवाहा बलभद्र, जैत प्रामार, प्रामार सिंह, प्रसंगराज खिच्ची, बग्गड़ी देवराज, रामदेव वड़गुज्जर, पाउसराय पुंडीर, अज्जा राठौड़, वीर मल्हन, प्रतिहार सिंह, महन, पीप, पंडित गुरु रामदेव, सलहखाने (शस्त्रागार का दारोगा) का सचिव सारंगदेव, पान बीड़ा रखने वाला प्रतिहार वीर आदि राजा पृथ्वीराज के सामन्त और परिजन युद्ध भूमि में खंड-खंड हो कर कांच के टुकड़ों की तरह बिखर गए। मोरी वंश के चहुवान शंकर सिंह और धोंधेटिक चहुवान जगमणि इन दोनों ने रणभूमि से कायरों की तरह जान बचाने के लिए भाग कर चहुवान कुल को कलंक लगाया। और हाड़ा चहुवान हम्मीर का पुत्र सुमेरू, गक्खर के टंक चहुवान चट्टा का पुत्र सारंगदेव, सोलंकी भानुराज ये तीनों तेरह इक्कों (यवन सवारों) को मार कर थोड़ी देर युद्ध लड़ कर निकल गए और जब इन्हें यह पता चला कि उनका स्वामी संकट में है तो इन पाँचों में से अपनी जान देने की सोच कर राजा की सहयता को एक भी नहीं आया।

नरेन्द्र पृथ्वीराज हू समस्त ही सस्त्रन कों सफल करि बीरतल्प चाह्यो परंतु गोरि गहिबो ही दृढ करि स्वकीय सुभटन सुरसज्जा सुवावत

ढालन सों दाबि गहि गजनी लै गयो।

अरु पंचमी के दिन प्रभु के पकरिबे के दिन दिल्ली सुनत ही पंगुपुत्री नैं प्रान तजे रु एकादसी के दिन चंडासिराज के एकादस ही रानी जनन समरसिंह की सीमंतिनी पृथा सहित आप आपके प्रबीरन की पत्लिन उपेत पंचसत पानिग्रहीती प्रमदान के प्रकर ज्वलन मैं जरि स्वस्व स्वामिन को सामीप्य लयो।

हे प्रभु रासे में ठामठाम चंद भट्ट के लेख के बिरोधी वाक्यन कों अन्यथाभाव कहाँ लो कहिये।

एक एक बात बीस बीसन भेद भजत जानि ग्रंथ के ग्रथन मैं और कोऊ आलंबन न मानि भिन्न-भिन्न भाखनन मैं कोऊ तो सत्य व्हैहैं ऐसी पहिचानि इहां तो आगमन प्रमान के दुग्धोदधि मैं राजहंसता करि सारा सार टारि तात्विक ही उदंत गहिये॥२॥

चहुवान राज पृथ्वीराज ने भी अपने सारे शस्त्रों को शत्रुओं पर सफलता पूर्वक चला कर स्वयं ने भी वीर शय्या पर सोना चाहा परन्तु गौरी उसे पकड़ कर बंदी बनाने का दृढ़ विचार रखता था। उसके कहने पर उसके सामन्त योद्धाओं ने अत्यन्त घायल हो वीरशय्या पर सोने से पहले राजा को ढालों से दबा कर पकड़ लिया और शाहबुद्दीन उसे गजनी लै गया। पृथ्वीराज को पंचमी तिथि के दिन गौरी ने बंदी बनाया था यह समाचार जब श्रावण शुक्ला दशमी को दिल्ली पहुँचा तो इसे सुनते ही जयचन्द की पुत्री रानी संयोगिता ने प्राण त्याग दिए और एकादशी तिथि के दिन चहुवान राजा पृथ्वीराज की ग्यारहों रानियों रावत समरसिंह की रानी पृथा (जो पृथ्वीराज की बहन थी) ने अपने-अपने वीर स्वामियों की मृत्यु का सुन कर कुल पाँच सौ विवाहित स्त्रियों के समूह के साथ ज्वालाओं में जल कर अपने-अपने पति का स्वर्ग में सान्निध्य प्राप्त किया। हे राजा रामसिंह! पृथ्वीराज रासो में जगह-जगह चंद भाट के लिखे वर्णन और वृत्तांतों का असत्य कहाँ तक कहा जाए अर्थात् कहा ही नहीं जा सकता इतना असत्य भरा है। उसने एक-एक बात को बीसों तरह से अलग-अलग गलत तथ्यों के साथ कहा है। कदाचित् उसने यह सोचा होगा कि इसमें से कोई एक तो सत्य होगा अतः आप क्षीर समुद्र के राजहंस की माफिक झूठ-झूठ छोड़ कर सत्य के सार को सारांश रूप ही ग्रहण कीजिए।

दोहा

चविय चंद दसमी दिनहु, दिय पंगानिय देहु।
अक्खिय पुनि एकादसिय, अखिल जरी तंहं एह॥३॥

हे स्वामी रामसिंह! अब आप यहीं देख लीजिए कि चंद ने दो पंक्तियों पूर्व यह कहा कि दशमी तिथि के दिन पृथ्वीराज का समाचार आते ही रानी संयोगिता ने प्राण त्याग दिए जब कि वह अगली तीसरी पंक्ति में यह लिखने में तनिक भी संकोच नहीं करता कि एकादशी तिथि के दिन सभी ग्यारह रानियाँ अग्नि की ज्वाला में जल मरीं।

सचरणगद्यम्

यातें हड्डाधिराज नरेन्द्र रामसिंह बन्दीचंद्र के विरुद्ध बाक्यन के अन्यथाभाव की सूची तो इहां अनवसर लिखिबे करि व्यर्थ ही प्रबंध बठैं यातैं ग्रंथ की समाप्ति मैं कहि जैहैं।

अरु वाहू सूची मैं जेजे वाक्य संगत हू मैं मौढ्य करि असंगत लिखि दैहों तिनकों स्वामी के सप्रतिभ सभ्य सत्य संभवी दिखाई दैहैं तेते ही समीचीन भाव मैं रहि जैहैं।

यहै ही भट्ट जाकों पृथ्वीराज की बारहीं रानी इन्द्रावती लिखैं सोही सोलंकी सारंगदेव की सुता अद्यावधि संसार मैं सौभाग्यदेवी अैसे दूजे नाम करि बिख्यात सो बिवाह के अनंतर दाधिम कैमास की अकंस्थ पुत्री करि आनी ही ताकी सर्बही सपत्लिन मैं अति ही असूया जानि प्ररुष्ट पहिचानि याके पितृकल्प कैमास के आलय खट्टू कितेक काल मैं पहुँचाइ दई ही सो स्वकीय स्वामी के सामंत जायल दुर्ग के अधीस खिच्ची दुर्गसेन जाकों नित्य ही पंचास पल कुंकुम के उद्धर्तन सों स्नान करिबे के कारन दूजे नामकरि पीवलपंजर हू कहैं तासों प्रच्छन्न दुश्वार करि अनर्गल रहत भई ताहि जानत ही नरेन्द्र कैमास सहित खट्टू आई दम्य बलीबर्दन सों बंधाई चिराइ डारी।

अरु कैमास दुर्गसेन कों सुरुंगा में दोरि जावत गहि मुख मैं तृन लेते भल्ल सों बहुसिख सीस सहित विरव्रकरि लत्ताघात दै तार्‌यो ता मूढ नैं पीछैं कालकूट कवलन करि दुर्गति की यातना धारी॥४॥

हे हाडाओं के राजा रामसिंह! ऐसी बातों से चंद भाट के ग्रंथ में लिखी परस्पर संदिग्ध बातों की सूची तो यहाँ देने का अवसर नहीं है। बिना प्रसंग लिखने से मेरे ग्रंथ का कलेवर बढ़ जाएगा। इसलिए उस सूची की अपने ग्रंथ के अन्त में अवसर मिला तो लिखूँगा। और उस सूची में जो जो बातें मानने योग्य अर्थात् गले उतरने जैसी होंगी उसे यदि मैं मूर्खता कर असंगत लिख भी दूँ तो इन बातों को आपकी उपस्थित बुद्धि के समक्ष आपके सभासद सत्य और भरोसे योग्य दिखा देंगे अत: ऐसी बातें सत्य रूप शेष रह जाएँगी। यही चंद बरदाई है जो चहुवान पृथ्वीराज की बारहवीं रानी इन्द्रावती को लिखता है। सोलंकी सारंगदेव की पुत्री आज तक संसार में सौभाग्य देवी के नाम से विख्यात है। जिसे विवाह के बाद दाहिमा कैमास के गोद रखी पुत्री कर लाये थे। उसकी सारी सौतनों से बहुत असूया की यह बात सुन कर उसे अन्तत: पितृकल्प कैमास के घर खाटू नगर में पहुँचाया गया था। वहाँ खाटू में अपने स्वामी के सामन्त जायल दुर्ग के अधिपति दुर्गसेन खिच्ची जो नित्य प्रति पचास पल (नाप विशेष) कुमकुम के उबटल से स्नान करने के कारण अपने पीवलपंजर (पीले शरीर वाला) के दूसरे नाम से जाना जाता था। यह रानी सौभाग्यदेवी इसी पीव पंजर से गुप्तरूप से दुराचार में संलग्न हो बिना ही किसी रोकटोक वाला बरताव करने लगी। इस बात का पता पड़ते ही राजा पृथ्वीराज कैमास सहित खाटू आया और उसने दंडस्वरूप रानी के दोनों और तरुण बैलों की जोड़ी जुतवा कर उसे जीवित ही चिरवा डाला। यह देख कर दुर्गसेन खिच्ची वहाँ से भाग खड़ा हुआ पर उसे एक सुरंग में घुसते हुए कैमास ने पकड़ लिया। दुर्गसेन ने अपने मुँह में तिनके ले कर प्राणों की भीख माँगी। इस पर कैमास ने अपनी तीर के फाल से उसके सिर का मुण्डन कर डाला फिर नाक काट कर उसे नकटा बनाया और लात मार कर निकाला। इतने अपमान के बाद उस मूर्ख ने जहर खा कर अन्त समय में दुर्गति की पीड़ा सहन करते हुए प्राण त्यागे।

वा रानी सोलंखिनी को मृत्युपात्र हू चंद्र ने पहिलें न लिख्यो अरु एक पट्टरानी प्रातिहारी को ही पूर्व मरन लिखि इहां बड़ी बेरीके अंत में दसमी के दिन पतिकों पकरयो सुनत ही पंगुपुत्री को प्रान बियोग लिखि एकादसी के दिन संयोगिता सहित बारह रानिनको सहगमन लिख्यो

तिनमैं संख्या सूचना करि सोलंखिनी रानी सौभाग्यदेवी हू ज्वलन मैं जरी जनाई।

अरु बानबेध खंड के अंत मैं यवनेन्द्र कों मारि पृथ्वीराज मर्यो ताको स्वप्न दिल्ली संयोगिता कों आयो लिख्यो सोहू असंगत उदत अवसर पर लिख्यो जैहैं पर अैसैं गौरीपठान सहाबुद्दीन पृथ्वीराज पार्थिव कों गजनी लै जाई बेनीदत्त प्रमुख दस द्विजन कों परिचर्या मैं पास धरि जामिक जवनन के आयत्त करि गुप्तिगेह मैं राख्यो तानैं बासर की वावनी पर्यन्त अन्न न लयो लिख्यो सो जानत ही साह तहां जाई समुझावन लग्यो सो साकंभरराज नैं अैसी दृष्टि सों देख्यो कि हो जहाँ सो पचीस पैंड पीछो जाइ नृप के नेत्र निकसाइ आपुनी निर्दय बिरोधिता बताई।

इस सोलंकी रानी की मृत्यु का वृत्तांत भी चंद भाट ने अपने ग्रंथ में पहले नहीं लिखा उसने मात्र एक पटरानी प्रतिहार रानी की पूर्व मृत्यु लिखी। यही नहीं बड़ी बेरी के अंत में पृथ्वीराज के बंदी बनाये जाने का समाचार सुन कर दशमी तिथि के दिन जयचन्द की पुत्री संयोगिता का मरना लिखा और एकादशी तिथि के दिन संयोगिता सहित बारह (ग्यारह) रानियों का सती होना लिख दिया। यहाँ तक कि संख्या सूचना के संदर्भ में सोलंकी रानी सौभाग्यदेवी का भी अग्नि में जलना साथ ही बताया। इसी तरह अपने ग्रंथ के बानबेध खंड के अन्त में लिखा है कि यवनेश को मार कर पृथ्वीराज मरा इसका स्वप्न दिल्ली में अवस्थित संयोगिता को आया। उसके लिखे इस असंगत वृत्तांत का भी लेखाजोखा मैं (सूर्यमल) उचित अवसर पर करूँगा। उसने रासो में लिखा है कि गौरी पठान शाहबुद्दीन राजा पृथ्वीराज को बंदी बना कर गजनी ले गया। वहाँ गजनी में उसने बेनीदत्त आदि दस प्रमुख ब्राह्मणों को परिचर्या में राजा के पास रख कर सभी को यवन प्रहरियों के पहरे में दे कर तहखाने में रखा। वहाँ पूरे बावन दिनों तक पृथ्वीराज ने अन्न ग्रहण नहीं किया। चंद भाट ने लिखा है कि यह जानकारी जब शाहबुद्दीन को हुई तो वह पृथ्वीराज को समझाने गया पर उस समय चहुवानराज ने उसे ऐसी खारी नजर (क्रूर निगाह) से देखा कि शाहबुद्दीन जहाँ खड़ा था वहाँ से पच्चीस कदम पीछे सरका और वहीं से राजा की आँखें निकालने का आदेश दे कर उसने अपने विरोध का प्रदर्शन किया।

तदनंतर सोमसुत स्वप्न मैं सिव को सासन पाइ दीदिवि लैन लग्यो अरु याही अंत्य आहव के आरंभ मैं हाहुलि हम्मीर के बुलाइबे कों चंदभट्ट ही नगरकोट पठायो हो ताकों हम्मीर नैं छल सों देवी के मंदिर मैं रोकि द्वार चूनां सों चुनाइ कैद करि राख्यो हो सो भव भवानी बीर योगिनी प्रमुख खेचर यो तुमुल को तमासो देखि पीछे चले तब गिरीस के गन बीरभद्रनैं पहिलैं दिल्ली मैं परिचित जानि उहां आइ द्वार खोलि निकास्यो तानैं इंद्रप्रस्थ आइ अष्ट दिन अधिक मास द्वय मैं एकलाख ग्रंथ रासो बनाइ अंतिम आहव मैं इंद्रप्रस्थ के अधीस चंडासिराज रत्नसिंह के मरिबे दिल्ली में यवनेन्द्र कुतबुद्दीन के अमल करिबे जयचंद्र के गंगा मैं परिबे प्रमुख भावी वृत्तांत हू ईस्वर के अवतार प्रभु परासर पुत्र लों पूर्ब ही प्रकासि पीछैं चंद्र हू जोग लै रु गजनी आयो।

ऐसे उदंतन सों असंभूत असंगत अप्रमेय अर्थांस टारि जाजा कों ज्यों ज्यों संभवी सूझैं त्यों त्यों ही श्रोताजन समुझि छमा करहु सोमसुत के चरित्र संबंधी मेरे वाक्यन नैं जो अलीकपन पायो ॥५॥

इसके बाद सोमेश्वर का पुत्र (पृथ्वीराज) स्वप्न में महादेव की आज्ञा पा कर अन्न ग्रहण करने लगा। चंद बरदाई ने यह भी अपने ग्रंथ रासो में लिखा है कि युद्ध के आरम्भ में हाहुली हम्मीर को बुलाने के लिए राजा ने चंद भाट को नगर कोट भेजा था। वहाँ उसे हम्मीर ने छल-कपट से देवी के मंदिर में बन्द कर चूने की दीवार बनवा दी। चंद जब वहाँ कैद था तब महादेव, पार्वती, महादेव के गणों, योगिनी आदि विद्याधर इस युद्ध का तमाशा देख कर जब वापस जा रहे थे तब महादेव के गण वीरभद्र ने दिल्ली में उसे जाना पहचाना जान कर वहाँ आ मंदिर का द्वार खोल कर निकाला। तब चंद ने दिल्ली आ कर दो माह आठ दिन में एक लाख छन्दों वाला ग्रंथ पृथ्वीराज रासो बनाया। यही नहीं अन्तिम युद्ध में दिल्ली के राजा चहुवान रत्नसिंह के मरने, दिल्ली पर यवनेश कुतुबुद्दीन का अधिकार होने और कन्नौज के राठौड़ जयचन्द के गंगा में गिरने जैसे प्रमुख भविष्य में घटित होने वाले वृत्तांत को चंद भाट ने ईश्वर के अवतार वेदव्यास की तरह पहले ही लिख लिया और यह लिखने के बाद सन्यास धारण कर वह (चंद भाट) गजनी आया। ऐसे वृत्तांतों से अनुचित, असंभव और प्रमाणरहित समझ में न

आए जैसी बातों का अर्थांश टाल कर जिस किसी को जो जो संभव लगे वैसे-वैसे ही श्रोतागण समझ लें और मुझे (सूर्यमल को) सोमेश्वर के पुत्र पृथ्वीराज के चरित्र में मेरे लिखने में आए झूठ के लिए क्षमा करें अर्थात् इस वृत्तांत में आए किसी भी प्रकार के झूठ के आने का कारण मात्र रासो ग्रंथ है।

ऐसैं चंद गजनी आवत सहाबुद्दीन के सिपाहन कों बेध्य बेधत देखि नासा सल दै रु कमनैतन की क्रूरता दिखाई अरु सहाबुद्दीन हू राजा के भट्ट कों जोग लै रु आयो सुनि खत्री भीमराज के भवन राख्यो तहां चंद हू खत्री सों होम ही सामग्री मंगाई महामांत्रिक बिधेय बिधान बिस्तारि अंबिका कों आराधित भयो तहां पार्बती हु प्रसन्न होइ कह्यो तेरो स्वामी सब्दभेद करि म्लेच्छराज कों मारि मरिहै ताको उपाय करि इष्टसाधन करहु ऐसें पार्बती की प्रसन्नता पाइ आनंदित भट्ट हू प्रत्यंतराज को प्रसाद लयो यवनेन्द्र आइबे को हेतु पूछ्यो तहां भट्ट कही पहिलैं नरेन्द्र नैं तमिश्रा के महाअंधकार मैं नेत्रबंधि भल्लबिहीन सर करि सप्त धातुमय सप्त पूर्णचंद्र सब्द के अनुसार एक ही संग बेधे हे तब मो को अभीष्ट दैन कह्यो हो तहां मैं कह्यो हो जब ही काम परिहै तब मंगि लैहों सो बिना प्रयोजन न पाइ सक्यो इतनें मैं आप नरेन्द्र कों कीलित करि इहां आनि नेत्र निकासि अंध कर्‌यो।

सो जानि स्वामी को सीघ्र ही मरिजैबो मानि ऐबो भयो यातैं सा हनसाह को सासन होइ तो मिलें सो मांगिबो होइ ऐसी सुनी सहाबुद्दीन निर्भल्ल बान सों शब्दायमान धातुबिधु बेध मैं बिस्मय लहि वहै ही कौतुक पुनिहू पिक्खिबो प्रमानि अपुनैं अनुगन सों भट्ट कों स्वामी सह मिलाइबे को आदेश उच्चार्‌यो ।।६ ।।

यही नहीं यह लिखता है कि फिर चंद जब गजनी पहुँचा तो उसने वहाँ शाहबुद्दीन के सिपाहियों को निशाना साधते देख कर अपने नाक में सल डाल कर उनके कृत्य को कायरपन माना। आगे यह भी लिखा है कि जब शाहबुद्दीन ने राजा पृथ्वीराज के भाट (स्वयं चंद) का सन्यासी रूप में गजनी में आया सुना तो शाहबुद्दीन ने उसे भीमराज खत्री के घर ठहरवाया। जहाँ चंद ने खत्री से हवन की सामग्री मँगवा कर बड़े मंत्र जानने वाले महामांत्रिक की तरह विधि-विधान पूर्वक अपने मंत्रों से देवी अंबा का आराधन किया। तब

वहाँ पार्वती ने प्रसन्न हो कर कहा कि तेरा स्वामी शब्दबेधी बाण चला कर म्लेच्छराज शाहबुद्दीन को मार कर मरे, ऐसे वांछित फल की साधना कर। इस तरह पार्वती की कृपा पा कर आनन्दित भाट ने बादशाह को प्रसन्न किया। यही नहीं उसने यह भी लिखा है कि जब बादशाह शाहबुद्दीन ने उसे आने का कारण पूछा तब भाट स्वयं चंद ने कहा कि बहुत पहले मेरे राजा ने रात्रि के गहन अंधकार में अपनी आँखों पर पट्टी बांध कर फाल विहीन बाण से सप्त धातु के सात तवे ध्वनि के आधार पर एक ही बार में बेध डाले थे और उस खुशी में मुझसे मेरी इच्छा के अनुसार इनाम देने का कहा था। वही मैंने कहा कि जब मुझे जरूरत होगी तब मैं माँग लूँगा। वह इनाम मैं नहीं पा सका और इतने में आप राजा को बंदी बना कर यहाँ ले आए और उन्हें आँखें फोड़ कर अंधा बना डाला। जब मुझे इस बात का पता चला तो मैंने सोचा कि अब मेरा स्वामी शीघ्र ही मर जाएगा। यही सोच कर अपना इनाम माँगने शीघ्र ही यहाँ चला आया। अब आपकी आज्ञा मिले तो मेरा माँगना हो। यह सुन कर कि बिना फाल वाले बाण से और वह भी बजते हुए तवों को बेध डाला शाहबुद्दीन को आश्चर्य हुआ। उसने मन ही मन इस कौतुक को अपनी आँखों से देखने की सोच कर अपने सेवकों को आज्ञा दी कि इस भाट को ले जा कर राजा से मिलवा दो।

तब ही बंद्रीचंद साह के सिपाहन के संग जाइ उनही के अनुमत करि दस पैंड दूर रहि स्वामी कों सदा ही सुनावतो वाही बिरूद सों उच्चस्वर करि बिरुदायो।

सो सुनत ही नरेन्द्रहू आपुनैं बंदी को बिरुदावन लहि राग पैं नाग लों उर की अंखि सों अभिमुख आयो।

तहां भट्टहू स्वामी कों सानुकूल जानि कोऊ संकेतित कथन करि समुझावत भयो।

तामैं सब्द के अनुसार अग्गे उलूक बेध्यो हो सोही साकूत सुनाइ धातुविधु बेधन को स्वीकार कराई अधीस को आसय लै रु यवनेन्द्र पैं गयो ॥७॥

तब भाट चंद शाहबुद्दीन के सिपाहियों के साथ जा कर, उनकी अनुमति से, अपने स्वामी पृथ्वीराज से दस कदम दूर खड़ा हो कर, उसने

नित्य प्रति सुनाये जाने वाले विरुद को ऊंचे सुर में सुनाया जिसे सुनते ही राजा अपने भाट के स्तुति वाचन के राग पर रीझने वाले नाग की तरह हृदय की आँखों से सम्मुख आया। वहाँ भाट ने स्वामी को प्रसन्न जान कर गुप्तसंकेत में स्व कथन को समझाया जिसमें ध्वनि के आधार पर पूर्व में उल्लू को बेधा था उसी आधार पर धातु निर्मित पूर्ण चन्द्रमा के आकार वाले तवों को बेधना राजा से स्वीकार करा कर वह यवनेश के पास लौटा।

सहाबुद्दीन हू बंदी को बचन बिदित करि यहै ही कौतुक को आलंबन बिचारि वैसें ही सप्त धातु चंद्र बंधि चंद ही कों भेजि नृप बुलायो तहां नृप कही सहाबुद्दीन तीन वेर कहैं तब सब्दायमान धातुचंद्रन को बेध करों।

अरु न कहैं तो मरे को कहा मारिहै यातैं म्लेच्छ की जो जोही सासना अैहैं सो सोही स्वकीय सीस धरों।

सो सुनि भट्ट गौरी सों कही साहनसाह के फरमान को उत्सुक नरेन्द्र श्रवन मैं अमृतपान कियो चाहैं।

अरु पिट्ठि सों निदेस दियैं अग्गैं जो सब्दायमान धातुचंद्र तिनकों बेध बिसेसता करि निबाहैं ॥८॥

शाहबुद्दीन ने जब भाट द्वारा कही राजा की स्वीकारोक्ति सुनी तब उसने शब्द भेदी बाण का कौतुक देखने के लिए सात धातु निर्मित तवे बँधवाए फिर उसने चन्द भाट के साथ राजा को बुलवाया। राजा के आने पर शाहबुद्दीन ने कहा कि जब मैं तीन बार कहूँ तब बजते हुए धातु निर्मित तवों को पृथ्वीराज अपने बाण से बेधे। अब पृथ्वीराज यदि ना कहे तो मरे इसलिए म्लेच्छ की जो जो भी आज्ञा थी उसे पृथ्वीराज ने शिरोधार्य किया। इसी समय चंद भाट ने गौरी से कहा कि हे शहनशाह! अब आपके फरमान रूपी अमृत वचनों को सुनने के लिए राजा के कान उत्सुक हैं। इसके बाद चंद भाट ने राजा को निर्देश दिये कि हे राजा ! अब आपके सामने बजते धातु निर्मित तवों को आप अपने बाण से बेध कर अपनी विशेषता का प्रदर्शन करें।

सोहू सुनि सहाबुद्दीन स्वीकार कीनौं तहां तत्तारखान प्रमुख स्वकीय सुभटन रोक्यो तथापि तिन सों बिपरीत बनि बिधु बेधन मैं बिसेस आल्हाद आनि बीतिहोत्र बसुधेश्वर बीज्य बुलायो।

अरु भट्ट हू सप्त ही धातुचंद्र अगारी बंधे बताइ पिठ्ठि सों प्रत्यंतराज को जंपिबो जताई साकूत सूचना करि पहिलैं आरव पैं उलूक बेध्यो सो समुझाइ महीस के मन मैं जन्म जीतिबे को आनंद खुलायो।

यवनेन्द्र के पहिले बचन पर सर संधान करि दूजे पर आकर्ण अैंचत ही बंदी हू बिरूदन करि बीरत्व बिसेस जगायो।

अरु तीजो बचन निकसत ही पच्छो मुररि म्लेच्छ राज के मुख ही पैं बान लगायो॥९॥

यह सुन कर शाहबुद्दीन ने स्वीकार किया पर तभी तातारखान जैसे शाह के प्रमुख सामन्त ने उसे रोका कि ऐसा कौतुक देखने से आप बाज आएँ। पर अपने सामन्त की राय नहीं मान कर तवों का बेधन देखने के आल्हाद में उतावले शाहबुद्दीन ने अग्निवंशी वसुधेश्वर के राज्य वंश में उत्पन्न पृथ्वीराज को बुलवाया। तभी भाट चंद ने सामने बंधे सातों तवों के बारे में बता कर कहा कि अब पीछे से म्लेच्छराज के बोलने पर गुप्त संकेत में यह समझाया कि आपने जैसे पूर्व में उल्लू का बेधन किया था उसी तरह ध्वनि के माध्यम से अब आपके पास अपने जन्म को सफल करने का अवसर आया है उसे आनन्दपूर्वक सफल बनाए। शाहबुद्दीन के पहली बार बोलने पर पृथ्वीराज ने सर संधान किया। दूसरी बार बोलने पर उसने बाण को कान तक खींचा। इसी समय चंद भाट ने स्तुतिवाचन कर राजा के मन में वीरत्व जगाया। इसके बाद तीसरा वचन निकलते ही अचानक पीछे मुड़ कर म्लेच्छराज के मुँह पर बाण मार दिया।

कूर्चित कलंब की सलाका बदन मैं व्याप्त होत ही गोरिसहाबुद्दीन गवाक्ष सों पृथ्वी पर आइ परयो।

सो देखत ही चंद हू आपुनैं जटाजूच सों असिपुत्री निकासी स्वकीय सिर काटि नृप कों दई जातैं जंगलराज हू म्लेच्छन सों मरिबे मैं द्वापर देखि आत्मघात करयो।

गौरी की गद्दी पर अंगज के अभाव याही को क्रीत किंकर कुतुबुद्दीन बैठो जाकों कितेक सुबुक्तगीं महमूद को मोल लयो गुलाम कहत तानैं पट्ट पावत ही खुरासान को आधिपत्य सावधानी सों सम्हारयो।

ताको नाम बंदीचंद्र नैं आपुनैं ग्रंथ के भावीवृत्तांत मैं बिनयसाह

ऐसो लिख्यो ताहू नैं राज्य के अंग प्रबल पारि आर्याबर्त को अधीश ह्वैबो धाऱ्यो ॥१०॥

कुचले हुए बाण का अग्रिम हिस्सा शाह के बदन (मुख) पर लगते ही पूरे शरीर में वेदना व्याप्त हो गई और शाहबुद्दीन गौरी झरोखे से पृथ्वी की सतह पर आ गिरा। यह देखते ही चंद भाट ने तुरन्त अपनी कटारी निकाली और उससे शीघ्र ही अपना सिर काट कर कटारी राजा को सौंपी जिससे पृथ्वीराज ने म्लेच्छ मरा कि नहीं इसमें संदेह जान कर आत्मघात किया। शाहबुद्दीन गौरी की गद्दी पर उसके अपने उत्तराधिकारी पुत्र के अभाव में उसका जर खरीद गुलाम कुतुबुद्दीन बैठा जिसे कई लोग तो सुबुक्तगी का खरीदा हुआ गुलाम कहते हैं। राजगद्दी पाते ही उसने खुरासान के राज्य को पूरी सावधानी से संभाला। इस कुतुबुद्दीन के नाम चंद भाट ने अपने रासों में (भविष्य में घटने वाले वृत्तान्त में) विनयशाह लिखा है और उसके लिए यह भी लिखा है कि उसने अपने राज्य की सीमा का विस्तार कर आर्यावर्त का अधिपतित्व धारण किया।

इतकों पिता को प्रतिघातन सुनि चंडासिराज रत्नसिंह दिल्ली लाहोर अजमेर संभर के प्रभुत्व को पट्ट लयो। अरु सिंधुनदी के वार को कितोक प्रांत प्रत्यंतराज के बसबर्त्ती भयो हो तहा के गोरी के गोपन कों गंजि गहि गिराइ अटक आपगा के उपकंठ लों आपुनैं अधीन करत भयो।

सो सुनत ही कुतबुद्दीन अटक नदी कों उल्लंघि उतकी आर्य अवनी कों अपनैं ही अधीन करत आयो सो सुनि रत्नसिंह सविता लों सम्मुह जाइ बिग्रह बिरचन बिचाऱ्यो।

तहां कन्ह के अंगज ईश्वरदास कैमास के पुत्र प्रताप गोबिंद के गात्रज सामंतसिंह हम्मीर के सूनु सुमेरू पाउसपुंडीर के पट्टपति भानु मोरी साकंभर संकर टंक संभरी सारंग धोंधाटक चाहुवान जगन्मनि चालुक भानु जयसिंह बीरक न चंद्र प्रताप प्रमारराज सिंह प्रबर प्रबीरन आपुनैं बल कों बिध्वस्त जानि आरि के अनीक को आधिक्य मानि दिल्ली ही सज्ज कियें संगर को सौलभ्य समुझाइ निवाऱ्यो ॥११॥

इधर अपने पिता की मृत्यु का समाचार सुन कर चहुवान रत्नसिंह दिल्ली, लाहोर, अजमेर और सांभर राज्यों की राजगद्दी पर बैठा। राजा बनते

ही उसने सिंधु नदी के तट वाले प्रान्त का जो हिस्सा यवनेश के पास था उसे लेने के लिए उसने गौरी के हाकिमों और सिपाहियों को वहाँ से खदेड़ कर कुछ को बंदी बना कर और कुछ को मार कर अटक नदी के पास तक का हिस्सा अपने अधीन कर लिया। यह सुनते ही कुतबुद्दीन अटक नदी को पार कर आर्यों की भूमि को फिर से दबाने लगा। इसकी जानकारी होते ही रत्नसिंह चहुवान ने अपने पिता की तरह शत्रु के सम्मुख आगे जा कर युद्ध करने की ठानी। तब कन्ह चहुवान के पुत्र ईश्वरदास, कैमास के पुत्र प्रताप, गोविन्द के पुत्र सामंतसिंह, हम्मीर के पुत्र सुमेरु, पुंडीर पाउसराय के बड़े बेटे भानु, मोरी, चहुवान शंकर, टंक सारंग चहुवान, धोंधेटिक चहुवान जगन्मणि, चालुक्य भानु, जयसिंह, वीर करन, चंद्र, प्रताप, प्रामार सिंह आदि वीर सामन्तों ने अपने सैन्य बल को शत्रु के सैन्य बल से कम जान कर यह विचार दर्शाया कि दिल्ली में ही युद्ध सुलभ है इसलिए इसे बाहर अन्यत्र नहीं लड़ा जाए।

तब सब ही समर की सामग्री संचित करि दिल्ली के दुर्ग दरी मैं दुर्द्धर दंतावलदारक लों रुपि रह्यो।

अरु इत सों कुतबुद्दीन दरकुंचन आइ महापन्नगलों पलेटा लगाइ तोपन करि द्रंग दह्यो।

सात मास अरु द्वै दिन तोपन को तुमुल तनि दुर्गकों तूटत न जानि बरन को बप्रतल बारूद करि उडायो।

तहां रत्नसिंह हू रन के समय सिसुन समेत आपुनें अनुज सामंतसिंह को अवरोध उपेत प्रच्छन्न निकासि सुभटन समेत धारातीर्थ लहि परलोक पायो ॥१२॥

ऐसी मंत्रणा हो जाने के बाद युद्ध की सामग्री का संचय कर रत्नसिंह दिल्ली की गढ़ रूपी गुफा में दुर्धर्ष हाथियों को मारने वाले सिंह की तरह डटा रहा। इधर कुतबुद्दीन दर कूच दर मंजिल बढ़ता हुआ दिल्ली पहुँचा और उसने आते ही सर्प की तरह अपने घेरे में पूरे शहर को ले लिया। इसके बाद तोपों से गोले बरसा कर नगर को जलाया। पूरे सात माह और दो दिन तक घेरा रहा और तोपों के संग्राम से भी दुर्ग को नहीं टूटता देख कोट की नींव को बारूद से उड़वा दिया। तब रत्नसिंह ने युद्ध के समय बच्चों सहित अपने अनुज सामंतसिंह को स्त्रियों सहित गुप्त रूप से वहाँ से सुरक्षित निकलवा दिया और स्वयं ने अपने सामन्तों सहित धारा तीर्थ (तलवारों के प्रहारों के

मध्य) में कूद कर परलोक गमन किया

कुतबुद्दीन दिल्ली मैं अमल करि कान्यकुब्ज पर प्रस्थान कस्यो। सो सुनि जयचंद चंडासिराज को कीलन चिंति त्रिविष्टपतरंगिनी के प्रबाह मैं पैठि मस्यो।

विद्यापति मिश्र तो पुरुषपरीक्षा ग्रंथ मैं अैसी लिखि पहिली यवनेन्द्र नैं दान भेद द्वै ही उपाय करि जयचंद्र की रानी सुभदेवी कों स्वपक्ष मैं मिलाइ वाके पक्षपातिन कों स्कन्धावार के समस्त ही अधिकार दिवाइ रठ्ठोरराज कों बिद्याधर मंत्री सों बिरक्त कराइ तापीछैं गाधिपुर जाइ जुद्धकरि बिजय लह्यो।

ताही तुमुल मैं मंत्री विद्याधर तो स्वामी कों लोंन उज्वल करि पाँचे स्वांत सों सूरसज्जा सोयो रु सुभदेवी हू म्लेच्छराज नैं मारि डारी अरु जयचंद्र न जानिये कहाँ गयो ताकों निश्चय ही वा प्रबंध मैं न कह्यो॥१३॥

कुतबुद्दीन ने दिल्ली पर अधिकार कर कन्नौज पर आक्रमण हेतु कूच किया। यह सुन कर जयचन्द ने चहुवान राज पृथ्वीराज के बंदी बनाए जाने को याद कर गंगा के प्रवाह में स्वयं को झोंक दिया अर्थात् गंगा में कूद कर अपने प्राण त्यागे। विद्यापति मिश्र ने तो अपने ग्रंथ *पुरुष परीक्षा* में यह लिखा है कि यवनेश कुतबुद्दीन ने दाम और भेद इन दो उपायों की सहायता से जयचन्द की रानी शुभदेवी को अपनी ओर कर लिया। उसके (रानी के) पक्षवालों को राजधानी के सभी अधिकार दिलवा दिए फिर उसने राजा जयचन्द को उसके मंत्री विद्याधर से विमुख करवा दिया। इसके बाद गाधिपुर जा कर युद्ध में उसे जीत लिया। इस भयंकर संग्राम में स्वामी के नमक हलाल मंत्री विद्याधर ने तो सच्चे मन से जूझ कर मृत्यु का वरण किया और रानी शुभदेवी को म्लेच्छराज कुतबुद्दीन ने मार डाला और जयचन्द न जाने कहाँ गुम हो गया इस बाबत विद्यापति मिश्र ने अपने ग्रंथ में कुछ निश्चित नहीं लिखा।

इतिश्री बंशभास्करे महाचम्पूके पूर्वायणे चतुर्थ राशौ बीतिहोत्र-चण्डासिबंशवर्णनान्तर्गतपृथ्वीराजचरमचरित्रे चामुण्डाराजादिसामन्त-सहितराजकुलसमरसिंह बीरतल्पशयन चाहुवाणशङ्कर जगन्मणि पलायन प्राप्तप्रदरक्षतहड्डुसुमेरु टङ्कसारङ्गदेव चालुकभानु निष्कसन यवनेन्द्रगृही-तपृथ्वीराजतत्पुरप्रापण श्रुतैतदुदन्तप्रबीरपत्नीपञ्चशती सहगमन बन्दि-

वाक्यविरोधदृढ़ीकरण दुश्चारिणीचालुकीराज्ञीसौभाग्यदेवीपूर्वमारणसूचन कैमासतद्दुश्चारिखिच्चिदुर्गसेनविरव्वीकरणज्ञापन यवनेन्द्रद्वापञ्चाश-द्दिनावध्यशनायितपृथ्वीराजनेत्रनिष्कासन प्राप्तस्वप्नेशिवनिदेशान्धसौम्य-न्धोग्रहण रणारम्भसमयेयादवहम्मीरस्वाकारकबन्दिचन्द्रज्वालात्मिकाम-न्दिररोधन बीरभद्रनिष्कासितदिल्लीसमागतचन्द्रष्टषष्टि दिनावध्येकलक्ष ग्रन्थरासकनिर्माणलिखन लिखितानेकभावविवृत्तान्तप्राप्तयवनेन्द्रपुरभट्ट-चन्द्रखत्रिभीमराजभवनहवनकरण।

श्री वंशभास्कर महाचम्पू के पूर्वायण की चतुर्थ राशि में अग्निवंशी चहुवान वंशवर्णन के भीतर पृथ्वीराज के अंतिम चरित्र में चामुण्डराज आदि सामन्तों सहित राउल समर सिंह का काम आना, चहुवान शङ्कर और जगन्मणि का भागना, तीर का घाव पाकर हाडा सुमेर, टङ्क सारङ्गदेव, चालुक भानु का निकलना, बादशाह का पृथ्वीराज को पकड़कर अपने पुर ले जाना, यह वृत्तान्त सुनकर वीरों की पाँच सौ स्त्रियों का सती होना, भाट के विरोधी वचनों का दृढ़ करना, दुराचारिणी सोलंकी रानी सौभाग्यदेवी को पहिले मारने की सूचना करना, कैमास का दुराचारी खीची दुर्गसेन को नाक काटने का बताना, बादशाह का बावन दिन तक निराहार रहे पृथ्वीराज के नेत्र निकलवाना, स्वप्न में प्राप्त हुई शिव की आज्ञा से सोम के पुत्र पृथ्वीराज का भिक्षा लेना, युद्ध के प्रारम्भ समय में यादव हम्मीर का अपने बुलाये चन्द भाट को ज्वालात्मिका देवी के मंदिर में बन्द करना, वीरभद्र के निकाले हुए चन्द भाट का दिल्ली आकर अड़सठ दिन की अवधि में एक खास ग्रन्थ रासो बनाने का लिखना, अनेक भावी वृत्तान्त लिखकर बादशाह के शहर (गजनी) में चन्द भाट का खत्री भीमराज के घर में यज्ञ करना।

देव्याराधनप्राप्ताभीष्टसभासमाहूतयवनेन्द्रपृष्टा गमनकारणबन्दि-चन्द्रनृपपूर्बदेवीकृतदानावशेषत्वकथन श्रुतैतद्दाननिमित्तनिर्भल्लविशि-खसप्त धातुचन्द्रबेधतद्दिदृक्षुसचमत्कृतयवनेन्द्रचन्द्र पृथ्वीराज सम्मेलन स्मारितप्रागुलूकवधसाकूतस्वीकारितशब्दवेधगतप्रत्यागतचन्द्र-रङ्गस्थलनृपानयन स्वपरिकरवारणप्रतीपपृष्टप्रदेशप्रासादप्रग्रीव-प्रलग्नप्रत्यन्तराजविधुवेधवारदान पृथ्वीराजनिर्भल्लबाणबेधितमुख म्लेच्छराजनिपातन चन्द्र पृथ्वीराज शस्त्रीसमाघातस्वस्वतनुत्यजन यवने-न्द्रक्रीतकिंकरकुतबुद्दीन खुराषाणाधिपत्यप्रापण श्रुतपितृपरलोकप्राप्तत्पट्ट-

चण्डासिराजरत्नसिंहयवनाक्रान्तकरतोयाप्रान्तप्रत्याक्रमण तत्प्रकुपितवृहद्वरुथसमाक्रान्तकरतोयाप्राच्यप्रदेशकुतबुद्दीन दिल्लीद्रङ्गवेष्टन वीक्षित-बारूदबरणबिध्वंसनिष्कासितसशिशुवर्गसानुजसामन्तसिंहसमुपेतशु-द्धान्तजनधारा तीर्थपूतसपरिकररत्नसिंहस्वर्गसमारोहण श्रुतजितदिल्लीक-कान्यकुब्जजिगीषुयवनेन्द्राभि पेणनगङ्गानिमग्नजयचन्द्रबिग्रहबिहान मिश्र-विद्यापतिस्वग्रन्थपुरुषपरीक्षालिखितजयचन्द्रचरमोदन्तसमयराज्ञीशुभ-देवीदुश्चारसूचन तच्छिद्रागतयवनेन्द्रयुद्धपंगुमन्त्रिविद्याधरधारातीर्थमरण प्रत्यन्तराजदर्शितदुश्चारशुभदेवीप्रतिघातन प्रकटन तत्रस्तराष्ट्रकूटराज-जयचन्द्रप्रच्छन्नगतिप्रापणं त्रयत्रिंशत्तमो मयूखः ॥३३॥ आदितो द्विच-त्वारिंशदुत्तरशततमः ॥१२४॥

देवी की आराधना से वान्छित वर पाकर सभा में बुलाकर बादशाह के आने का कारण पूछने पर चन्द भाट का पृथ्वीराज के दिये हुए दान का बाकी रहने का कहना, उस दान का कारण सुनकर बिना भाल के बाण से धातु के साथ तवों का बेधना चमत्कार सहित देखने की इच्छा वाले बादशाह का चन्द और पृथ्वीराज को मिलाना, पहिले उलूक के मारने का स्मरण दिलाकर अभिप्राय सहित अथवा सांकेतिक शब्दों से शब्दभेद स्वीकार कराकर बादशाह के पास गये हुए चन्द का वापस आकर राजा को अखाड़े में ले जाना, अपनी परिगह के मना करने पर पीठ पीछे महल के झरोखे से लगकर बादशाह का तवे बेधने को कहना, पृथ्वीराज का बिना भाल के बाण से मुख बेधकर बादशाह को मारना, चन्द भाट और पृथ्वीराज का छुरी की घात से अपने अपने शरीर छोड़ना, बादशाह के मोल लिये हुए नौकर कुतुबुद्दीन का खुरासान का मालिक होना, पिता का परलोक जाना सुनकर उसके पाट बैठने वाले चहुवान रत्नसिंह का यवन के आक्रमण किये हुए अटक नदी के प्रान्त पर वापस चढ़ाई करना, उससे क्रोध करके बड़ी सेना से अटक नदी का पूर्व दक्षिण का देश लेकर कुतुबुद्दीन का दिल्ली नगर को घेरना, बारूद से कोट का नाश हुआ देखकर अपने छोटे भाई सामन्तसिंह सहित जनाने के लोगों को बालकों के समूह सहित निकालकर धारा तीर्थ से पवित्र होकर परिगह सहित रत्नसिंह का स्वर्ग जाना, दिल्ली को विजय की हुई सुनकर कन्नौज को जीतने की इच्छा वाले बादशाह की युद्धयात्रा से गंगा में डूबकर जयचन्द का शरीर छोड़ना, मिश्र विद्यापति का अपने ग्रन्थ *पुरुषपरीक्षा* में लिखे हुए अन्तिम समय रानी शुभदेवी का दुराचार जनाना, उस छिद्र में आये हुए

बादशाह के युद्ध में जयचन्द के मंत्री विद्याधर का धारातीर्थ में मरना, शुभदेवी का दुराचार देखकर बादशाह का उसको मारने का बताना। वहाँ पर राठौड़ राजा जयचन्द के प्रच्छन्न गति पाने का तैंतीसवाँ मयूख समाप्त हुआ। और आदि से एक सौ बयालीस मयूख हुए।

प्रायो ब्रजदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

सचरणगद्यम्

ऐसें यवनेन्द्र कुतबुद्दीन प्रामारराज बिक्रम के बसु सर संभु सम्मित सक मैं कान्यकुब्ज को जय करि जयचंद्र को पट्ट बरदाईसेन कों दैकैं इंद्रप्रस्थ कों आपुनी राजधानी राखि आर्यावर्त को पहिलो अधीस भयो।

जानें चंडासिराज पृथ्वीराज के लघुपुत्र सामंतसिंह को कुंडल नैर सों लगाई मेवातदेस को कितोक प्रांत दयो।

इतकों चित्रकूट के अधिराज सीसोद समरसिंह के पुत्र रत्नसिंह नै राज्य पायो।

अरु इतकों द्योसा के अधीस कर्म प्रद्युम्न कों नाती मलयसिंह को पुत्र बिज्जुलदेव आपुनैं प्रांत को अधीस कहायो ॥१ ॥

ऐसे यवनेश कुतबुद्दीन ने विक्रम संवत् ग्यारहँ सौ अठावन के वर्ष में कन्नौज को फतह कर जयचन्द के पाटवी पुत्र बरदाईसेन को अपने पिता की गद्दी सौंपी और स्वयं दिल्ली को अपनी राजधानी बना कर वह आर्यावर्त का पहला यवन अधिपति बना। इसी कुतुबुद्दीन ने चहुवानराज पृथ्वीराज के छोटे बेटे सामंतसिंह को कुंडलनैर से लगा कर मेवात प्रदेश का कुछ हिस्सा (जागीर में) दिया। इधर चित्तौड़गढ़ के राजा सीसोदिया रावल समरसिंह के पुत्र रत्नसिंह ने चित्तौड़गढ़ का राज्य पाया। उधर दौसा के राजा कछवाहा प्रद्युम्न के पौत्र और मलय सिंह का पुत्र बिज्जुलदेव अपने राज्य का स्वामी बना।

कितेक काल पीछैं चित्रकूट राउल रत्नसिंह के पुत्र कर्मसिंह कै माहप राहप द्वै पुत्र भये तिनमैं माहपतों भुजबल की खट्टी भूमि भोगिबो बिचारि बग्गड़ देस कों जीति डुंगरपुर राजधानी रची ताके बंस के सीसोदे तो आहड़े[1] ही कहाये।

१.उदयपुर से एक कोस की दूरी पर स्थित (वर्तमान में शहर का हिस्सा) आहड़ (आयड़) नामक नगर पर राज्य के कारण गुहिलोतों को आहाड़ा भी कहा जाता है। - संपादक

अरु राहप गुजरात के प्रतिहार रानां मोकल कों मारि रानां कहाये ताके कुलके रानाउत अैसे भेदकरि ठाये।

इतकों पातसाह कुतबुद्दीन किते ही काल के अंतर हय तैं गिरि देह तजत भयो तब थोरे काल दिल्लीस आरामसाह भयो।

ता पीछैं दिल्ली को तखत कुतबुद्दीन को गुलाम अरु जामाता ग्वालेर दुर्ग को अध्यक्ष इल्तमिश सोही समसुद्दीन नाम द्वयोपेत कहियत ताहीनैं लयो ॥२ ॥

कुछ समय बाद चित्तौड़गढ़ के रावल रत्नसिंह के पुत्र कर्णसिंह के माहप और राहप नामक दो पुत्र जन्मे। इनमें से माहप ने तो स्वयं की जीती हुई भूमि को ही भोगने का संकल्प ले बागड़ देश को जीता और डूंगरपुर को राजधानी बना कर वहाँ राज किया। इसके वंशज सिसोदिया तो आहाड़े कहलाए। और राहप ने गुजरात के प्रतिहार राणा मोकल को मारा इसलिए वह स्वयं राना पदवा वाला हुआ। इसके वंशज सिसोदिया राणावत कहलाए। इधर बादशाह कुतबुद्दीन कुछ वर्षों बाद घोड़े मे गिर कर मर गया तब थोड़े समय के लिए दिल्ली के तख्त पर बैठ आरामशाह बादशाह बना। इसके बाद दिल्ली के तख्त को कुतबुद्दीन के गुलाम बादशाह के जामाता और ग्वालियर दुर्ग के अधिष्ठाता इल्तमिश, जिसका अवर नाम शमसुद्दीन भी था, ने हथियाया।

इतको मंडनगढ़ के अधीस हड्डाधिराज रनधवल के राजकुमार सरदार राजकोटपुर के अधीस बढैल सरबहिया चालुक्य जल्हन की पुत्री पट्टिमदेवी परनि पिता के अनंतर पंच सिख पट्ट धार्‌यो।

ताके राजकुमार जोधराज भयो जाही कों मागधलोक भीमसेन कलिकर्ण चंद्र राजचंद्र वीरमदेव इन छ ही नामन करि बिख्यात कहैं तानैं तारापुर के पार्थिव गर्जी गजनदेव की सुता स्यामलदेवी बिबाहि जनक के अनंतर मंडनदुर्ग को स्वामित्व सम्हार्‌यो।

ताकै राजकुमार रत्नसिंह सोही बत्सराज सोही रेनु इन तीन ही नामनकरि बिदित जान्यों गयो।

अरु नरेस जोधराज के अवसान पर गर्जनी स्यामदेवी हू सहगमन करि स्वर्गबास लयो ॥३ ॥

इधर मांडलगढ़ के अधीश हाडा राजा रनधवल के राजकुमार सरदार ने राजकोट के बढैल सरवहिया चालुक्य राजा जल्हन की पुत्री पट्टिमदेवी से

विवाह किया और अपने पिता राजा रनधवल की मृत्यु के बाद मांडलगढ़ की राजगद्दी पर बैठा। इस हाडा राजा सरदार का पुत्र राजकुमार जोधराज हुआ जिसको बही भाटों ने भीमसेन, कलिकर्ण, चन्द्र, राजचन्द्र, वीरमदेव आदि छह नामों से विख्यात बताया है। जोधराज ने तारापुर के राजा गर्जी गजनदेव की कन्या श्यामलदेवी से विवाह किया और अपने पिता के देहावसान के बाद मांडलगढ़ की गद्दी का स्वामित्व संभाला। इस जोधराज का पुत्र रत्नसिंह हुआ जो वत्सराज, रेनु आदि तीन नामों से जाना गया। नरेश जोधराज के अवसान पर उसकी गर्जनी रानी श्यामल देवी ने सहगमन कर स्वर्ग का निवास पाया।

इत कों दिल्ली के अधीस समसुद्दीन के पुत्र अपनें भ्राता चोथे सुलतान रुकनुद्दीन फीरोज कों गद्दी सों उतारि वाही की बहिनि रजिया नाम बेगम बैठी सो पातसाहन की गणना मैं न लीनी याही तैं याके नाम पर क्रमअंक संख्या हू न राखी ताही के समय में कितेक जवनन नै स्वच्छंद होई रट्ठोरन सों कान्यकुब्ज छिन्नि लयो।

तब कान्यकुब्ज को अधीस सिंहदेव हू आखेट मैं यह उदंत सुनि देस काल देखि द्वारकाधीस के दरसन को निमित्त गहि पश्चिम की तरफ प्रयान करत भयो।

धन्वधरा सों दक्खिनदिस पल्लीपुर आवत हीँ पल्ली की प्रजान कछु दिन राखि डमरकारकन कों डराइ आपुनी रक्षा कराई।

अरु अग्ग जावत चापोत्कटन के राज्य मैं चाचोरे नरेस मूलराज आपुनैं जामाता रक्षादित्य की पुत्री बिबाहिबे को अत्याग्रह करि नीठि नीठि हुँकृति भराई।।४।।

इधर दिल्ली के स्वामी शमशुद्दीन के पुत्र सुलतान रुकनुद्दीन फीरोज को राजगद्दी से उतार कर उसी की बहन रजिया नामक बेगम बैठी। इसे हमने (सूर्यमल्ल ने) बादशाहों की गिनती में सम्मिलित नहीं किया इसीलिए हमने उसके नाम के आगे अपने ग्रंथ में क्रमांक नहीं दर्शाया है। इस रजिया बेगम के राजकाल में कई यवनों ने स्वतंत्र हो कर (अपनी मनमर्जी से स्वयं को मातहत नहीं मान कर) राठौड़ों से कन्नौज को छीन लिया। उस समय कन्नौज का राजा राठौड़ सिंहदेव शिकार पर गया हुआ था उसने जब अपने राज्य के छीने जाने का वृत्तान्त सुना तो देशकाल को देखते हुए वह द्वारकाधीस

भगवान के दर्शन करने हेतु तीर्थाटन का बहाना बना कर पश्चिम दिशा की ओर प्रयाण कर गया। उसे मारवाड़ की दक्षिण दिशा से हो कर पाली नगर में पहुँचने पर वहाँ की प्रजा ने उसे वहीं रखा जिससे डाकुओं को डरा कर वह उनकी रक्षा कर सके। थोड़े दिनों बाद पाली से आगे जाते हुए सिंहदेव को चावड़ों के राज्य में चाचोरे नरेश मूलराज ने अपने जामाता रक्षादित्य की पुत्री से विवाह का प्रस्ताव रखा। राजा मूलराज ने इस विवाह के लिए अपने जामाता रक्षादित्य को बहुत आग्रह कर राजी किया और रक्षादित्य से अपनी पुत्री के विवाह के लिए बमुश्किल तमाम स्वीकृति हासिल की।

अग्गैं कच्छ के अधिराज जड्डेचक जद्दव फुल्लराज के पुत्र लक्षधीर नैं अस्व के लोभ करि चापोत्कट मूलराज के जामाता रक्षादित्य को दूजो बिबाह करि आपुनी स्वसा दई ही।

ताके एक पुत्र भए पीछैं प्रमत्त पावत हीं रक्षादित्य कों मारि वाको हय छिन्नि सुत सहित स्वसा स्वीय सदनही राखि लईही।

वा रक्षादित्य कै चापोत्कटीमैं एक कन्या भई ही ताहि सिंहदेव को दैकैं जद्दव कों मारि स्वसुर को बैर लै दैबे की विज्ञप्ति करी।

तब सिंहदेव नैं त्रिबिक्रम की यात्रा करि पच्छे बाहुरत बिनां ही बिबाह रक्षादित्य को बैर लैबै की संधा धरी ॥५॥

पूर्व में कच्छ के जाड़ेचा यादव राजा फुल्लराज के बेटे लक्षधीर ने उसका अच्छा घोड़ा पाने के लोभ में चावड़ा मूलराज के जामाता रक्षादित्य का दूसरा विवाह अपनी बहन से किया था। अपनी इस बहन के एक पुत्र उत्पन्न होने के बाद रक्षादित्य को एक दिन गाफिल देख कर लक्षधीर ने मार डाला। मार कर उसका घोड़ा छीन लिया और अपनी बहन को भानजे सहित अपने घर में ला कर रख लिया था। इस रक्षादित्य को चावड़ा मूलराज की पुत्री से एक कन्या जन्मी थी। इसी कन्या के विवाह का प्रस्ताव राठौड़ सिंहदेव से कर मूलराज ने निवेदन किया कि यादव को मार कर आपको मेरे जामाता का वैर लेना पड़ेगा। तब सिंहदेव ने द्वारकाधीश की यात्रा कर वापस लौटते वक्त बिना ही विवाह किये रक्षादित्य का वैर लेने की प्रतिज्ञा की।

सिंहदेव कही मों वृद्ध को बिबाह तो उचित न है परंतु लक्षधीर कों मारि रावरे जामाता को बैर लैहैं।

तहां सकुनिन कही रक्षादित्य की कन्या को करग्रहन कियें स्वामी के संतान बहुत ही बढि धन्वधरा के अधीस व्है हैं।

तब दहिया रक्षादित्य की पुत्री परनि रट्ठोर सिंहदेव जद्दव लक्षधीर कों मारि मरु मैं आई डब्भी गोंहिन कों गंजि सुमियानां के समीप एकसत चालीस ग्रामन उपेत मेघपपुर दब्बि राज्य करयो।

सो सिंहदेव तो पीछैं कान्यकुब्ज पर चलावत दिल्ली के छट्ठे पातासाह समसऊद के प्रचारे पुंडीरन सों जुद्ध करि मरयो ॥६॥

सिंहदेव राठौड़ ने मूलराज से कहा कि मुझ वृद्ध की उम्र अब विवाह योग्य नहीं पर मैं लक्षधीर को मार कर आपके जामाता का वैर अवश्य लूँगा। तब वहाँ उपस्थित एक शकुनशास्त्री ने कहा कि रक्षादित्य की पुत्री से विवाह करने पर आपके संतान की श्रीवृद्धि होगी और आप मारवाड़ के राजा बनेंगे। यह सुनने के बाद सिंहदेव ने दहिया रक्षादित्य की पुत्री से विवाह किया और यादव लक्षधीर को मारा। इसके बाद मारवाड़ में पहुँच कर डाभी वंश के क्षत्रियों को मार कर सुमियाना के पास एक सौ चालीस गाँवों सहित मेघपपुर को दबाया और अपना राज्य स्थापित किया। वह सिंहदेव तो वापस कन्नौज पर चढ़ाई करने के लिए गया पर वहाँ दिल्ली के छठे बादशाह शमसुद्दीन के बुलाए हुए पुंडीरों से युद्ध कर मारा गया।

सिंहदेव कै तीन पुत्र भये तिनमैं बड़ो आस्थान तो मेघपपुर ही रहि राज्य कों बढावत भयो।

अरु दूजे पुत्र स्वर्णांग नै गोहिल नरेस बलराज कों मारि ईडरगढ लै लयो।

ताके कुल के तो समस्त ही रट्ठोर ईडरेचा उपटंक करि ठाये।

अरु सिंहदेव के तीजे पुत्र अजयपाल नैं आनर्तदेस के कछु प्रांत पाये ताके बंस के समस्त ही कबंध कोऊ हेतु करि बड्डहेल कहाये ॥७॥

राठौड़ सिंहदेव के तीन पुत्र हुए जिनमें सबसे बड़ा आस्थान था। वह तो अपने पिता के राज्य मेघपुर में ही रह कर अपने राज्य के विस्तार में संलग्न हुआ और दूसरे पुत्र स्वर्णांग ने गोहिल नरेश बलराज को मार कर ईडरगढ़ ले लिया। इस स्वर्णांग के सारे वंशज ईडरेचा राठौड़ के उपटंक वाले हुए। सिंहदेव के तीसरे पुत्र अजयपाल ने आनर्तदेश के कुछ प्रांत दबाए। इसके वंशज सारे ही राठौड़ किसी कारण से बड्डहेल (बढैल) कहलाए।

या समय लों तो आर्यावर्त मैं जवनन को प्रताप विसेस ही बढ्यो। तिनकों अटक उतारि दिल्ली को दुलही करि भोगिबे वारा कोऊ न कढ्यो।

याही समय सों आसिख प्रनाम मेटि प्रथम मिलाप मैं मुजरा प्रवर्त भयो रु आर्य भूप स्वकीय धर्म भूलि स्नान संध्या हीन होई म्लेच्छन सों आहार विहार करन लगे।

अरु घरघर ही सेरसिंह बहादुरसिंह मुहुकमसिंह बक्तावरसिंह जालमसिंह जोरावरसिंह फतैसिंह फोजसिंह सरदारसिंह दोलतसिंह नाहरखान लाडखान ताजखान प्रमुख पुत्रन के नाम धरन लगे।।८।।

इस समय तक तो आर्यावर्त में यवनों का बोलबाला कुछ अधिक ही बढ़ गया था। उनको अटक नदी के पास खदेड़ कर दुल्हन दिल्ली को भोगने वाला कोई वीर प्रकट नहीं हुआ। इसी समय से आशीष, प्रणाम जैसे प्रथम मिलाप के संबोधन लुप्त हो गए और उनकी जगह पर मुजरा कहने की प्रथा चल पड़ी। आर्य राजा अपना धर्म भूल गए। उन्होंने स्नान ध्यान संध्या जैसे कर्मों को तिलांजलि दे कर म्लेच्छों के साथ आहार विहार करना शुरू कर दिया। यही नहीं घर घर में (अर्थात् सभी जगह) शेरसिंह, बहादुरसिंह, मुहकमसिंह, बक्तावरसिंह, जालिमसिंह, जोरावरसिंह, फतेहसिंह, फौज सिंह, सरदारसिंह, दौलतसिंह, नाहरखान, लाडखान, ताजखान जैसे नाम अपने-अपने पुत्रों के रखे जाने लगे।

इत कों हड्डाधिराज रत्नसिंह ने ईडरगढ़ के अधीस ईडरिया रट्ठोर सूरराज की सुता भाग्यवती बिबाही।

ताकों अहिफेन के नसा मैं आते ही आसक्त भयो जानि मंडनगढ़ लैबो बिचारि चित्तोर के राना नागपाल नैं छळ सों बुलाई महिमानी दै रु मोघ मैत्री निबाही।

पीछैं मंडनगढ़ आई भोजन के निमित्त सर्ब ही परिकर कों दुर्ग मैं प्रविसाइ हड्डुन कों हटाइ अमल करि लयो।

तब रत्नसिंह मंडनगढ़ सों ही समीप पूर्ब को प्रदेश दाबि बंब्बावद नाम दुर्ग बनाई सोही राजधानी राखि दूजो दुग आपुनैं नाम करि रत्नगढ़ रचि द्वै ही दुर्गन के बल करि खेड़ी सिंहोली अठानों जावद निंबड़ी बेघम बिंझोली प्रमुख पुर दुर्गन मैं अमल करि राज्य सों पूर्ब सों हू बिसेस

बढाई सीसोदन को सल्ल होइ रह्यो इहां कितेक मागध कहत हड्डाधिराज रत्नसिंह कों बंबावद दुर्ग तो पिसाचन नैं प्रसन्न होई बनाइ दयो ॥९ ॥

इधर हाडा राजा रत्नसिंह ने ईडरगढ़ के ईडरिया राठौड़ राजा सूरराज की पुत्री भाग्यवती से विवाह किया। इसी राजा रत्नसिंह को अफीम के नशे में आते ही बहकते जान कर मांडलगढ़ लेने का विचार कर चित्तौड़गढ़ के राणा नागपाल ने छल कपट से अपने यहाँ बुला कर पूरी गर्मजोशी से स्वागत किया और मिथ्या मित्रता का प्रदर्शन किया। आदान-प्रदान की रस्म में राणा नागपाल ने मांडलगढ़ आ कर भोजन के निमित्त अपने सारे सामन्त योद्धाओं को दुर्ग में प्रवेश करवा दिया और अनन्तः दुर्ग को अपने अधिकार में कर हाडाओं को वहाँ से खदेड़ दिया। तब हाडा रत्नसिंह ने मांडलगढ़ के पास ही पूर्व दिशा वाला प्रदेश दबा लिया और वहाँ बंबावद नामक दुर्ग बनवाया। इसी बंबावद को अपनी राजधानी बनाई। फिर एक दूसरा किला रत्नगढ़ अपने नाम से बनवाया। इन दोनों दुर्गों के बल पर खेड़ी, सिंहोली, अठाना, जावद, निंबड़ी, बेगूं, बिंझोली आदि प्रमुख नगर और दुर्गों पर अपना अधिकार कर उसने अपना राज्य पहले से भी बड़ा कर लिया। इस तरह वह सिसोदिया के लिए कांटा बन कर रहा। यहाँ कई बही भाटों का कथन यह है कि हाडा राजा रत्नसिंह को बंबावद का दुर्ग तो भूत-प्रेतों ने बना कर दिया।

रत्नसिंह सों भाग्यवती मैं बडो राजकुमार कोल्ल्हन छोटे बिंझराज द्वै ही पुत्र भर्ग के महाभक्त भये। या बिंझराज नै पिता सों पटा मैं पुरातन हरिभक्त राजा रुक्मांगद की रानी बिंध्यावली को बसायो बिंझोलीपुर पाई बिध्वस्त जानि बहोरि बिधि सों बिसेस बसाइ सिव के स्वप्न करि सुबर्ण को निधान लहि एक सताधिक सहस्त्र महेस के मंदिर बनाई बित्त करि बनीयकन कों बदान्य करि दये।

जाचक जाचक प्रति हाटक की हुन्न दैकैं सोही दूजे नामकरि हुन्नराज कहायो।

सो फुल्लपुरपति संखुला प्रामार सहस्त्रमल्ल की सुता जांबवती बिबाह्यो जानैं रत्नसिंह पीछैं गोबध के निमित्त थोड़नगर के रंगस्थल मैं जवनन सों जुद्ध करि बिनुही संतान पर लोक पायो ॥१० ॥

राजा रत्नसिंह को अपनी रानी भाग्यवती की कोख से दो पुत्रों की

प्राप्ति हुई। बड़ा कुमार कोल्हन और छोटा बिंझराज ये दोनों ही महादेव के परम भक्त थे। बिंझराज ने अपने पिता से उत्तराधिकार में पुरातन हरिभक्त राजा रुक्मांगद की रानी विंध्यावली द्वारा बसाया हुआ बिंझोलीपुर (बिजौलियां) प्राप्त किया पर उसे पुराना और खंडित जान कर उसने इसे फिर से नए ढंग से बसाया और शिव के स्वप्न में दर्शन कर बहुत सारा स्वर्ण और धन पाया। जिसके बल पर उसने महादेव के ग्यारह सौ मन्दिर बनवाए और याचकों को बहुत सारा दान दे कर उन्हें धनाढ्य बनाया। इसने प्रत्येक याचक को स्वर्ण की मोहर प्रदान कर अपना दूसरा नाम हुन्नराज पाया। इस राजा ने फुल्लपुर के सांखला प्रमारराज सहस्रमल्ल की कन्या जांबवती से विवाह किया। इस रानी ने रत्नसिंह की मृत्यु के बाद गोवध को रोकने के लिए धोड़नगर की रणभूमि में यवनों से युद्ध कर निःसंतान ही स्वर्गलोक का निवास पाया।

या समय सों पहिलैं इतकों हड्डाधिराज रत्नसिंह के तनू तजत रानी भाग्यवती हू संग ही अंग भस्म कर्यो।

अरु कोल्हन नरेश ऊपरमालदेस के आधिपत्य उपेत बंबावद दुर्ग की गद्दी पाई छत्र धर्यो। सो बुधपुर के अधीस चालुक्यराज सत्तल की सुता चंपावती बिबाह्यो। अरु आजन्मही एकाग्रचित्त करि परम पासुपत भाव निबाह्यो ॥११॥

कुछ समय पहले हाडा राजा रत्नसिंह के देह त्यागने पर रानी भाग्यवती ने सहगमन के लिए अग्नि की ज्वाला में अपना शरीर भस्म किया। राजा रत्नसिंह के देहावसान के बाद कोल्हन ऊपरमाल (मेवाड़ देश के पूर्वी प्रांत बिंझोली के क्षेत्र को ऊपरमाल कहते हैं) के आधिपत्य सहित बंबावद दुर्ग की गद्दी पा कर छत्रपति हुआ। इसने बुधपुर के चालुक्य राजा सातल की कन्या चंपावती से विवाह किया और पूरी उम्र भर एकाग्रचित्त कर शिव की भक्ति की।

बदरिकाश्रम के समीप केदारेश्वर शिव की छ बेर यात्रा करि सप्तमीं यात्रा मैं संतत साष्टांग प्रनामकरि जैबो स्वीकारकरि एक एक कोस अति श्रम करि लंघत सोलह दिन मैं च्यारि जोजन के प्रमान बुंदीग्राम के समीप आयो।

अरु मिलान मैं भूपभाव धारत प्रयान मैं स्वकीय सेना कों कोस कोस के अंतर सों चो तरफ दूर ही राखि एकाकी ही चलायो। सत्रहम

दिन के प्रस्थान में बुंदी सों ईसानबि दिसा पर पादोन कोस के प्रमान पहुँचत बिप्र के बेस सों केदारेश्वर प्रत्यक्ष होइ 'बरंब्रूहि' कह्यो।

तहां अनन्यभक्ति के प्रभाव सों निश्चय करि नरेन्द्र हू पयन परि तात्विक रूप सों त्र्यंबक कों देखिबो चह्यो ॥१२॥

उसने बदरिकाश्रम (बद्री धाम) के पास केदारेश्वर शिव की छह बार यात्रा की और सातवीं बार निरन्तर साष्टांग प्रणाम करते हुए जाने का सोचा। इस यात्रा में उसने एक-एक कोस को बहुत श्रम के साथ पार करते हुए सोलह दिनों में चार योजन के बराबर की दूरी पार की और बूंदी ग्राम के समीप आया। वह प्रत्येक पड़ाव पर अपनी सेना को कोस-कोस दूर रखते हुए अकेला ही चलता। सत्रहवें दिन के प्रस्थान में बूंदी से ईसान दिशा में तीन चौथाई कोस ही बढ़ा था कि उसे ब्राह्मण वेश में केदारेश्वर शिव ने प्रत्यक्ष दर्शन दे कर कहा कि 'मांग क्या वरदान चाहता है'? तब राजा ने अपनी अनन्य भक्ति के बल पर मन में निश्चय कर शिव के चरण स्पर्श कर कहा कि मैं असली रूप में शिव के दर्शन चाहता हूँ। बस।

दोहा

संकर तब निज रूप सह, दुर्लभ दरसन देत।
नुति भूपहु किय पुनि प्रनमि, अवयव अष्ट उपेत ॥१३॥
सुनत भक्त नुति मुदित सिव, सिरधुनि करत सिराह।
कछु सुरधुनि धारा निकसि, परिग कलाप प्रवाह ॥१४॥

महादेव ने अपने भक्त की ऐसी दृढ़ भक्ति देख कर अपने दुर्लभ दर्शन दिए। राजा ने तब स्तुतिपूर्वक प्रणाम के आठों अंगों से नमन किया। अपने भक्त की ऐसी विनती पूर्ण स्तुति सुन कर महादेव ने अपना मस्तक हिला कर सराहना की। इससे गंगा की धारा छिटक कर बाणों के तरकश से हो कर गिरी।

षट्पात्

सरधि सरन सन स्त्रवत हिट्ठ लहि प्रचुर स्त्रोत हुव।
सिव अक्खिय झरि सरन धरनि प्रकटिय प्रबाह धुव।
सो मम बान प्रसंग बानगंगा यह बज्जहि।
जाहि छुवत अघ जनन भीत तजितजि सब भज्जहि।

तू भक्त मंगि इच्छित अतुल चविय भूप ओर न चहत।

भवभवहि भक्ति भवदीय भव मोहि रुचहु प्रतिदिन महत॥१५॥

इस पर महादेव ने कहा कि गंगा की धारा बाणों के तुणीर पर से हो कर नीचे गिरी है और उसके बाद तेज प्रवाह लिया है इसलिए बाणों के प्रसंग से यह बाणगंगा कहलाएगी। इसके पवित्र जल में स्नान करने से पाप मनुष्यों को छोड़ कर भागेंगे। तू मेरा परम भक्त है सो कोई वांछित बड़ा वरदान माँग। तब राजा ने प्रत्युत्तर दिया कि हे नाथ! मुझे और कुछ नहीं चाहिए। बस मुझे जन्म-जन्म आपकी भक्ति मिले। मेरा मन आपकी भक्ति में ही लगा रहे।

दोहा

सुनि अकाम नृपबैन सिव, अक्खिय तू अवसान।

लै है मम सामीप्य लहि, धारातीर्थ बिधान॥१६॥

कहत दयो खग्गहु किते, रुट्ठि सु गो अहिरूप।

पच्छे दिय तब पंच पय, भयकरि पिक्खत भूप॥१७॥

गिरिस बचन विस्वास गहि, पुनि फन दब्बत पानि।

अहिप भयो ततकाल असि, महिप लयो हितमानि॥१८॥

प्रभु बुल्ले तें पंचपय, पच्छे दिय भय पाइ।

पंचम इम तव कुल पुरुख, यह भुव भुग्गहिं आइ॥१९॥

पिहित भये प्रमथेस पुनि, स्व भुवन दै अवसान।

तहं पधराये ईस तब, रचि मंदिर चहुवान॥२०॥

केदारेश्वर नाथ करि, धरा बिदित यह धाम।

जानहु सरगंगा जुतहि, तबतैं भूपति राम॥२१॥

महादेव ने राजा के ऐसे वचन सुन कर कहा कि तू अन्त समय में मेरे सामीप्य को प्राप्त होगा अर्थात् तू मेरे लोक में आएगा। कुछ लोग यह भी कहते हैं कि इसी समय शिव ने राजा को एक खड्ग भी दिया पर जब राजा ने उसे स्वीकार नहीं करना चाहा तो वह खड्ग अचानक सर्प बन गया जिसे देख कर राजा डर गया और भय के फलस्वरूप वह पाँच कदम पीछे सरक गया। पर शिव के वचनों पर विश्वास कर राजा ने जब उस सर्प के फण को दबाया तो वह सर्प फिर से खड़ग में बदल गया। तब राजा ने भी अपना हित

समझ उसे स्वीकार कर लिया। तब महादेव कहने लगे कि हे राजा! तू भय से पाँच कदम पीछे सरक गया था इसलिए तेरे कुल का पाँचवा वंशज आ कर इस भूमि को भोगेगा। फिर अपने भक्त को अपने लोक में आने का वरदान दे कर महादेव अन्तर्धान हो गए। चहुवान राजा ने फिर इसी स्थान पर एक भव्य मंदिर बनवा कर शिव की मूर्ति की वहाँ प्रतिष्ठा की और इस स्थान का नाम केदारेश्वर धाम रखा। हे राजा रामसिंह! तभी से इस नदी को बाणगंगा और इस स्थान को लोक केदारेश्वर धाम कहते हैं।

सचरणगद्यम्

अैसें श्रीकेदारनाथ को बर पाइ कोल्हन नरेस बंबावद दुर्ग आयो।

अरु पहिलैं छ बेर की यात्रा हू प्रनामन सहित करी अैसोहू लेख कोऊ मागध के पुस्तक मैं पायो।

इतकों दिल्ली के अधीस दया के समुद्र आपुनैं परिश्रम के मोल के द्रव्य की भिस्सा के भोजक न्याय पथ के पथिक सप्तम यवनेन्द्र सुलतान नासुरुद्दीन महमूद के थानां आर्याबर्त्त मैं ठाम ठाम बैठि कर लैन लगे।

अरु कितेक नरेस तो दिल्ली ही आई सेवन में सावधानी दिखाइ किंकर लों नम्रीभूत व्हैन लगे ॥२२॥

इस प्रकार केदारनाथ का वरदान पा कर राजा कोल्हन बंबावद के दुर्ग में आया। कई मागधजन यह भी कहते हैं कि इस राजा कोल्हन ने अपनी पूर्व की छह बार की केदार यात्रा भी साष्टांग प्रणाम करते हुए की थी। ऐसा उन्होंने अपनी बहियों में भी लिखा है। उधर दिल्ली के स्वामी, दया के समुद्र अपने परिश्रम से कुछ रकम कमा कर उसके मूल्य के बराबर भिक्षा का भोजन पाने वालेऽ सतत न्याय के मार्ग पर ही चलने वालेऽ सातवें बादशाह सुलतान नासुरुद्दीन महमूद के थाने पूरे आर्यावर्त में जगह-जगह पर कायम हो गए। इन थानों की सहायता से खिराज और कर आदि लेने लगे। कई राजा तो दिल्ली ही आ कर सेवा चाकरी में संलग्न हो सेवक के समान झुकने लगे।

दोहा

बदत किते बाईस ही, सूबा हूव तब सोंहि।
कति अकबर बंधे कहत, इतर रचे कति योंहि ॥२३॥

कई लोगों का मानना है कि इसी समय में पूरे आर्यावर्त के बाईस सूबे बने। कई लोगों की मान्यता है कि नहीं सूबे बनने की प्रक्रिया बादशाह अकबर के समय में शुरू हुई और कुछ कहते हैं कि इन दोनों बादशाहों के अतिरिक्त तीसरे ही किसी बादशाह के समय में सूबे अथवा प्रांत बने।

पादाकुलकम्

अज्जन को इत्यादि अनादर, किते कहत तबतैं लाघव कर।
बदत किते तैंमूर सोंहि बहु, पिसुनैं कति किअ अति अकबर पहु ॥२४॥

इस समय में आर्यों का सर्वाधिक अनादर होने लगा। कुछ लोगों का मानना है कि यह अनादर की प्रक्रिया खिराज की प्रथा से ही आरंभ हो गई थी। कुछ की मान्यता है कि तैमूर के समय में कर की मात्रा और अनादर दोनों बढ़े जब कि कुछ का विश्वास है कि यह सभी कुछ खिराज आदि कर लेने की व्यवस्था अकबर के समय में परवान चढ़ी।

सचरणगद्यम्

तिनही दिनन सों अहिफेन को नसा अरु हुक्कायंत्र को पान करिबो आर्यावर्त मैं प्रबर्त भयो।

अरु हड्डाधिराज कोल्ल्हन सों चालुकी रानी चंपावती मैं कुमार आसुपाल जन्म लयो।

सो रत्नपुर के राजा रट्ठोर रामदेव की तनुजा राजलदेवी बिवाह्यो तामैं कुमार आसुपाल सों कुमार बिजयपाल प्रादुर्भाव पायो।

तदनंतर आसुपाल तो कुमारभाव में ही कोऊ असाध्य आमय करि बिग्रह बिहायो ॥२५॥

इसी काल में आर्यावर्त में अफीम सेवन और हुक्का पीने आदि नशा करने का प्रचलन हुआ। इधर हाडा राजा कोल्हन के चालुक्य रानी चंपावती के गर्भ से कुमार आसुपाल का जन्म हुआ। इस राजकुमार आसुपाल का विवाह रत्नपुर (रतलाम) के राठौड़ राजा रामदेव की पुत्री राजल देवी से हुआ। इस राठौड़ रानी की कोख से कुमार आसुपाल को विजयपाल जैसे वीर पुत्र की प्राप्ति हुई। थोड़े अन्तराल के बाद आसुपाल ने कुमारावस्था में ही किसी असाध्य रोग की चपेट में आ कर अपना शरीर त्यागा।

दोहा

मरत कुमर नृप खिन्न मन, भव बिरक्त भवभक्त।
सोवन चाह्यो रनसयन, पहु कुलधर्म प्रसक्त ॥२६॥
कहिय भूप गोबध करत, इतउत फिरत अमान।
कटक मिच्छ जानहु निकट, सुहि मुहि कहहु सुजान ॥२७॥
क्रम इन बित्तत दिन कछुक, महिप सुन्यों चरमग्ग।
मारत गोगन मिच्छ दल, लक्खैरियपुर लग्ग ॥२८॥
जंपिय कति जवनहु जवन, अप्पन सीमा आइ।
हनैं गाइ जब तब हरखि, स्वामी मरन सुहाइ ॥२९॥

अपने पुत्र राजकुमार आसुपाल के इस असामयिक निधन से राजा सांसारिक क्रिया कलापों और राजकाज से विरक्त हो कर महादेव की भक्ति में संलग्न हो गया। हे राजा रामसिंह! राजा कोल्हन ने अपने कुलधर्म का निर्वाह करते हुए किसी युद्ध में वीरगति प्राप्त कर मरना चाहा। मन में यह सोच कर राजा ने निर्देश किया कि इन दिनों अत्यधिक संख्या में गोवध होना शुरू हो गया है। म्लेच्छों की सेना यदि कही यहाँ आसपास में यह कृत्य करे तो इसकी सूचना तुरन्त मुझे दी जाए। इस निर्देश को थोड़े ही दिन बीते थे कि राजा के पास ग्वाले गुहार लेकर पहुँचे कि हे राजा ! म्लेच्छों के दल गायों के समूह का वध (लक्खेरीपुर) लाखेरी नामक स्थान पर कर रहे हैं। राजा तुरन्त लड़ने के लिए तैयार हुआ तभी कुछ लोगों ने समझाया कि यवन लोग यह कृत्य आपके राज्य की सीमा से बाहर कर रहे हैं। जिस दिन वे म्लेच्छ आपके राज्य में आ कर गोवध जैसा हीन कर्म करे उस दिन अवश्य आपको गो रक्षा के निमित्त मरना शोभा देगा।

षट्पात्

महिपति सोहु न मन्नि सबय भट समर सज्जकिय।
बिजयपाल ढिग बुल्लि द्रुतहि निज छत्र ताहि दिय।
सुत सुत कों करि सुपहु अप्पि सह भुव बंबावद।
सत्तसहंस लहि सेन हंकि रक्खन अज्जन हद।

मिच्छन अनीकपति मुस्तुफहिं पठई कहि इम दूत प्रति।
कै तजहु सर्व गोबध कुटिल कै पय मंडहु होहु कति॥३०॥

पर राजा कोल्हन ने एक न मानी और अपनी वय के अन्य योद्धाओं को इस झगड़े के लिए तैयार किया फिर अपने पौत्र राजकुमार विजयपाल को बुलवाया। उसे शीघ्र ही अपना छत्र प्रदान किया। इस प्रकार अपने बेटे के बेटे को राजा बना कर उसे बंबावद की पूरी जागीर दी। तदनन्दर सात हजार की संख्या वाली सेना ले कर वह राजा कोल्हन आर्यों की मर्यादा की रक्षा करने को बढ़ा। उसने म्लेच्छ सेना के सेनापति मुस्तफा को अपना दूत भेज कर कहलवाया कि गो वध जैसे कार्य को तुरन्त त्याग दो नहीं तो युद्ध में सामना करने को तत्पर रहो।

सचरणगद्यम्

हड्डाधिराज कोल्हन के दूतको ऐसो बचन सुनत ही म्लेच्छन के मालिक मियां मुस्तुफाअली पीछी कहाई हमारी पंद्रह हजार पृतना पर तुमनैं सात ही सहंस्त्र सेना सों चलाई मरिबो ही बिचार्‌यो तो तुमारी सीमा मैं आइ गोबध कों निवारि दैहैं।

परंतु ऐसो कोन सो सर्बत्र ही गोबध कों रोकि साहनसाह सुलतान नासुरुद्दीनमहमूद की सेना सों फैंट लैहैं।

मरिबो ही मान्यों तो हम हू कों जंग के रंग पै सज्ज होई परिपंथिन को पंथ जोवत ही जानों।

अरु नही तो घरजाई तुमारी नीति के देस काल पहिचानों॥३१॥

हाडा राजा कोल्हन के दूत से यह वचन सुनते ही म्लेच्छों के स्वामी मियां मुस्तफा अली ने वापस कहलवाया कि हमारी पन्द्रह हजार की सेना पर तुमने अपनी सात हजार की फौज झोंक कर यदि मरना ही सोच लिया है तो हम शीघ्र ही तुम्हारे राज्य की सीमा में आ कर गोवध करना रोक देंगे। पर आप भी ऐसा कौन सा सर्वत्र गोवध निषेध करवा कर शहंशाह नासुरुद्दीन महमूद की शाही सेना से टक्कर लेंगे? हाँ, यदि आपको मरने की अत्यधिक जल्दी है तो हमारे सज्जित हो कर युद्धस्थल में आने तक हम शत्रुओं की बाट निहारें और यदि मरना नहीं चाहते हो तो सब्र के साथ अपने घर जाओ और देशकाल को देख कर उसके अनुसार रहो।

दोहा

पहु अक्खिय लुट्टहु प्रजा, इतउत जानि अनाथ।
हम हड्डे सोहु न सहैं, गोबध तो हद गाथ॥३२॥

यह सुन कर राजा ने कहा कि तुम यवन लोग आर्यावर्त की भोली और अनाथ प्रजा को यहाँ-वहाँ जहाँ अवसर मिले, लूटने में लगे हो पर हम हाडा क्षत्रिय हैं हमसे यह नहीं देखा जाता फिर गोवध तो बहुत बड़ी बात है।

षट्पात्

इम कहि हयन उठाइ रिपुन दल मिलिग रैन सुव।
तुमुल बजिय तरवारि भजिय सहसा प्रकंप भुव।
लुत्थिन लुत्थि लगाई बुत्थि बुत्थिन बहु बढ्ढिय।
तुरक गाहि त्रय सहंस चाहि इम धारन चढ्ढिय।
मुस्तुफाअली हनि मिच्छ वह चउ दिस बित्थरि कित्ति चय।
कोल्हन नरेस तजि काय रन गन पुरोग सिवलोक गया॥३३॥

हाडा कोल्हन ने इतना कह कर अपने घोड़ों की लगाम उठाई और वह रत्नसिंह का पुत्र चल कर शत्रु समूह से जा मिला (भिड़ा)। दोनों ओर से भीषण युद्ध में तलवारें चलने लगी जिससे धरती काँप उठी। लाशों पर लाशें गिरने लगीं। योद्धा टुकड़े-टुकड़े हो कर गिरने लगे। यवनों की शत्रुसेना के तीन हजार योद्धा तलवार की धारों की भेंट चढ़ गए और अन्ततः हाडा राजा ने मुस्तफा अली को रणभूमि में मार कर अपनी कीर्ति को चारों दिशाओं में फैलाया। यही नहीं स्वयं हाडा राजा कोल्हन भी इस युद्ध में वीर शय्या पर सो कर अर्थात् रण में अपनी देह त्याग कर शिवलोक को गया।

दोहा

सहंस इक्क अप्पन सुभट, सह अच्छरि गय सग्ग।
तजि अच्छरि संभर तकिय, अष्टापद हिं उद्दग्ग॥३४॥

हाडा कोल्हन के पक्ष के एक हजार योद्धा रणभूमि में वीरता का प्रदर्शन करते हुए युद्ध में मर कर अप्सराओं द्वारा वरे जा कर स्वर्गलोक को गए पर उस चहुवान राजा ने तो अप्सराओं की ओर देखा भी नहीं उसने तो

अपनी दृष्टि सुमेरू पर्वत की ओर ही डाली अर्थात् वह चहुवान राजा मर कर शिवलोक को गया।

इतिश्री बंशभास्करे महाचम्पूके पूर्वायणे चतुर्थ राशौ बीतिहोत्र-चण्डासि वीज्यवर्णनबीजनृपास्थिपाल बंश्यानुबंश्यविहितव्याख्याना-वसरव्याहार्यहड्डाधिराड्रणधवला दिकोल्हण पर्यन्तकुलपुरुषपञ्चक चरित्रे सूचितशकवर्ष बरदायिसेनार्थदत्तकान्यकुब्जाल्पराज्यपार्थ्वीराज्य-सामन्तसिंहार्थदत्तमेवातदेशमितप्रान्तोपेतनारनोलनगरकृतदिल्लीस्कन्धा-वारयवनेन्द्रकुतबुद्दीना र्यावर्त्ताधीशीभवन रत्नसिंहचित्रकूटराज्य प्रापण बिज्जलदेवद्योसाधिपत्यसमासादन राजकुलकर्ण ज्येष्ठपुत्रमाहपडुङ्गरपुर-राज्यलभन प्राप्तराणोपटंकतदनुजराहपचित्रकूटराज्यकरण तुरंगपतित-दिल्लीशकुतबुद्दीन तनुत्यजन तदनन्तरद्वितीया रामसाह शीघ्रमरणा-नन्तरप्रथम यवनेन्द्र क्रीतदासजामातृसमसुद्दीनश्वशुरपट्टप्रापण परिणीत-चालुकीपट्टिमदेवी कहड्डाधिराजरणधवल कुमारशरदार मण्डनगढराज्य-गद्दीकोपविशन व्यूढगर्जि नीश्यामलदेवी कशारदारियोधराज जनकानन्तर स्वराज्यसमासादन समुद्धावितकुमाररत्नसिंह योधराजावसानश्यामलदेवी सहगमन स्त्रीरूपपञ्चम दिल्लीशसमयम्लेच्छसेनासमाक्रान्तकान्यकुब्ज-निष्कासितराष्ट्रकूट राजसिंहदेवद्वारकाधीशदिदृक्षूभवन त्रातपल्लीपुरसिंह-देवचापोत्कटनरेशमूलराजदौहित्रीपरिणिनीषास्वीकारण रक्षादि त्यहयलुब्ध-कच्छदेशाधिराजजाटेत्ययादवफौल्लराजिलक्षधीरस्वभागिनीतद्विवाहन भागिनेयजन्मानन्तरलक्षधीरहतप्रमत्तभामदभिकरक्षादित्यहयप्रापण प्रत्यागतशाकुनिकस्वीकारितपरिणीतचापोत्कटमूलराजदौहित्रीकराष्ट्रकूट-राजसिंहदेवजाटेत्ययादवलक्षधीरनिपातन।

इति श्रीवंशभास्कर के पूर्वायण की चतुर्थ राशि में अग्निवंशी चहुवान वंशवर्णन के कारण राजा अस्थिपाल के वंश और वंश की शाखाओं की कथा बनाने के समय के कथन में हड्डाधिराज रणधवल आदि कोल्हण पर्यन्त पाँच कुलपुरुषों के चरित्र में बताये हुए विक्रम के शक और वर्ष में वरदाई सेन को कन्नौज देकर छोटे राज्य पृथ्वीराज के सामन्तसिंह के अर्थ मेवात देश के थोड़े हिस्से सहित नारनोल नगर देकर दिल्ली को राजधानी बनाकर बादशाह कुतुबुद्दीन का आर्यावर्त्त का स्वामी होना, रत्नसिंह का चित्तोड़ का राज्य पाना, बीजलदेव का दोसा का स्वामीपन ग्रहण करना, राउल करणसिंह

के बड़े पुत्र माहप का डूंगरपुर का राज्य लेना, उसके छोटे भाई राहप का राणा पदवी पाकर चित्तौड़ का राज्य करना, घोड़े से गिरकर दिल्ली के बादशाह कुतुबुद्दीन का शरीर छोड़ना, फिर दूसरे बादशाह आरामशाह के शीघ्र मरे बाद पहिले बादशाह का मोल लिये हुए चाकर और जमाई शमसुद्दीन का सुसरे का पाट पाना, विवाह की हुई पट्टिम देवी में हड्डाधिराज रणधवल के कुमार सरदार का मांडलगढ़ की राजगद्दी पर बैठना, गर्जी (गर्जना करने वाले) गजदेव की पुत्री श्यामलदेवी से विवाह करके सरदार के पुत्र जोधराज का पिता के बाद राज्य ग्रहण करना, कुमर रत्नसिंह के जन्म हुए पीछे जोधराज का अन्त और श्यामलदेवी का सती होना, स्त्रीरूप (रजिया बेगम) पञ्चम दिल्लीश के समय में म्लेच्छ सेना का कन्नौज लेकर निकाले हुए राठौड़ राजा सिंहदेव का द्वारकाधीश के दर्शनों की इच्छा करना, पाली नगर की रक्षा करके सिंहदेव का चावड़े राजा मूलराज की दौहिती ब्याहने से अस्वीकार करना, रक्षादित्य के घोड़े के लोभी कच्छदेश के पति जाड़ेचा यादव फूलराज के पुत्र लक्षधीर का अपनी बहिन रक्षादित्य को ब्याहना, भानजे के जन्म होने के बाद बहन के पागल होते ही लक्षधीर का डाभी रक्षादित्य को मारकर उसके घोड़े को लेना, पीछे आते हुए शकुनियों के स्वीकार कराने पर चावड़े मूलराज की दौहती ब्याहकर राठोड़ राजा सिंहदेव का जाड़ेचा यादव लक्षधीर को मारना।

मर्वांगतहतदार्भिक गोभिल क्षत्रगणप्राप्ततद्राज्यस्कन्धावारीकृतमेघपपुरगद्दीकान्यकुब्जनिनीषुसिंहदेवशष्ट दिल्लीश शमसऊद प्रेरित पुणीर रणमरण सिंहदेव प्रथम पुत्राऽऽछान मेधररुककोपविशन समाक्रान्तेडरदुर्गद्वितीय पुत्रस्वर्णांगबंशाभिन्नोपटङ्कप्रवर्तन प्राप्ताऽऽनर्तदेशांशतृतीय पुत्राजयपालकुलपृथग्भेदाख्यापन समाक्रान्तार्यावर्त्तकरदीकृतार्यगणयवनेन्द्रस्वस्वसमयप्रताप विस्तरण म्लेच्छसंगतिलुप्तधर्मविस्तृतस्नान सन्ध्या दिनित्य कर्मराजन्यकस्वस्वसन्ततियावनीसञ्ज्ञास्वीकरण हड्डाधिराज रत्नसिंह डरगढनरेशराष्ट्रकूटशूरराजसुताभाग्यवती परिणयन छलसमाक्रान्तमण्डनदुर्गचित्रकूटराजराणानागपालमो घमैत्रीविश्वस्तनागफेनप्रमत्तरत्नसिंह निष्कसन निर्मातब म्बावद रत्नगढ दुर्गद्वय रत्नसिंहखेटिकाद्यनेकपुरा धिपत्यसमा सादन रत्नसिंह भाग्यवत्यौ रसपरमपाशुपत-

कुमारकोल्हण बिन्ध्यराज युग्म समुद्भवन पितृविभक्तलब्ध जीर्णोद्धृत-
बिन्ध्यावलीपुरस्वप्नपिनाकिप्रसादप्राप्तपुरटनिधाननिर्मातशताधिकसहस्त्र
शिवमन्दिरप्रतियाचकहाटकहुन्नदानबिदितहुन्नराजा परनामपरिणीत-
प्रामारीजाम्बवतीक निस्सन्ततिबिन्ध्यराज गोबधनिमित्तधोटपुरपरिसरयव-
नरणमरण हड्डाधिराजरत्नसिंहा वसानराष्ट्रकूटीभाग्यवती सहगमन
प्राप्ताधिपत्यपरिणीतचालुकीचम्पावती ककोल्हण केदारेश्वरयात्राष्ट्
काचरण स्वीकृतसततसाष्टांगप्रणामप्रारब्धसप्तम यात्रयाजनचतुष्क
प्रस्थितकोल्हण विप्रवेशव्योमकेशवीक्षण प्रार्थनादर्शिततात्विक-
रूपशम्भुनृपस्तुतिश्लाघाशिरोघूर्णनो च्छलत्पृशत्कपतत्रिपथगा-
स्त्रोतोवाणगंगातीर्थीभवन भक्तीतरवराऽमार्गणप्रसन्नभूतेश्वरभक्तावसान-
भाविनीसामीप्यमुक्ति संग्रामसंस्था सूचन पाक्षिकमतदत्ताहिरूपखड्गत्रस्त
पश्चाद्गनपञ्च पर्दाकविभुविश्वासितवसुधेशगृह्यमाणनागनिस्त्रिंशीभवन
प्रतीपन्यस्तपादसंख्यकुलपुरुषाऽथीन्यभावितद्भूराज्यप्राप्तिज्ञापन।

पीछे आते हुए डाभी और गोहिल क्षत्रियों के समूह को मारकर उनके राज्य को लेकर मेघपपुर को राजधानी बनाकर कन्नौज के पति होने की इच्छा से सिंहदेव का छठे दिल्लीश शमसुद्दीन के प्रेरणा किये हुए पुण्डीरों के युद्ध में मरना, सिंहदेव के (जिनको सीहा, सीया अथवा सेवा भी कहते हैं) प्रथम पुत्र आस्थान का मेघपपुर (मेघपपुर खेड़ ग्राम का नाम मालूम होता है क्योंकि आस्थान ने मारवाड़ का प्रथम राज्य खेड़ में स्थापित किया था) की गद्दी पर बैठना, दूसरे पुत्र स्वर्णाङ्ग ने ईडरगढ़ लिया जिसके वंश का जुदा पदवी से प्रवृत्त होना, काठियावाड़ के हिस्से को पाकर तीसरे पुत्र जयपाल के कुल का जुदा भेद बताना, आर्यावर्त लेकर आर्यगण को खिराज देने वाले बनाकर बादशाहों का अपने अपने समय में प्रताप फैलाना, म्लेच्छों की सङ्गति से विस्तार पाये हुए धर्म और स्नान संध्या आदि का लोप हो कर राजाओं का अपनी अपनी सन्तानों के यवन सम्बन्धी नाम अंगीकार करना, हड्डाधिराज रत्नसिंह का ईडरगढ़ के राजा राठौड़ शूरराज की पुत्री भाग्यवती से विवाह करना, चित्तौड़ के राजा राणा नागपाल का छल करके मांडलगढ़ लेने में उनकी झूठी मित्रता पर विश्वास करके अफीम के नशे में मस्त रत्नसिंह का निकलना, बम्बावदा और रत्नगढ़ दोनों दुर्ग और खेड़ी आदि अनेक पुर और गढ़ों का स्वामीपन रत्नसिंह का लेना, रत्नसिंह से भाग्यवती के उदर में शिव के परम भक्त कुमार कोल्हण और बिन्ध्यराज दोनों का जन्म लेना, पिता के

बाँटने से मिले हुए जीर्णोद्धार किये हुए बींझोली पुर में स्वप्न में शिव की प्रसन्नता से स्वर्ण का धन प्राप्त होने से ग्यारह सौ शिव मन्दिर बनाकर प्रति याचक सोने की मोहर दान देकर दूसरे नाम से हुन्नाराज प्रसिद्ध होना और प्रामारी जाम्बवती को विवाहकर बिना सन्तान विन्ध्यराज का गोवध के कारण धोवड़ा ग्राम के पास यवनों के युद्ध में मरना, हड्डाधिराज के अन्त समय में राठौड़ रानी भाग्यवती का सती होना, स्वामीपन पाकर सोलंकिनी चम्पावती का विवाह कर कोल्हण का छः बार केदारेश्वर की यात्रा करना, निरन्तर आठ अंगों सहित प्रणाम करना स्वीकार करके सातवीं यात्रा का प्रारम्भ करके चार योजन चलकर कोल्हण का ब्राह्मण के वेश में शिव को देखना, असली रूप दिखाने की प्रार्थना से राजा की की हुई स्तुति की प्रशंसा करके शिव के मस्तक घुमाने से उछले हुए बाणों के मार्ग से प्रवाह का बाणगङ्गा नामक तीर्थ होना, प्रसन्न हुए शिव की भक्ति से अन्य वर माँगने की आज्ञा देने परउस भक्त का आगामी अन्त समय पर शिव के समीप मुक्ति और संग्राम में नाश होने का बताना, दूसरे पक्षवालों के मत से दिये हुए सर्प रूपी खड्ग से पाँच पैंड पीछे देकर शिव के वचनों पर विश्वास करके ग्रहण किये हुए सर्प का खड्ग होना, उलटे पग देने की संख्या से उतनी ही (पाँच) पीढ़ियों के अधीन भावी समय में उस भूमि का राज्य प्राप्त होने का बताना।

तत्स्थाननिमित्तशिवालयहड्डाधिराजकोल्हणँ तन्मन्दिरकेदारेश्वरलिंगप्रतिष्ठापन पाक्षिकमतो क्तसप्रणामसप्त यात्राकथन सप्तम दिल्लीशयवनेन्द्रानासुरुद्दीनमहमूद पुण्यभूविशेषसमाक्रमण द्वाविंशति सूबाऽऽदिप्रबन्धसमयभेदसन्देहसूचन तत्समयोपज्ञाऽहि फेनखादन हुक्कायन्त्रपान प्रसरण कोल्हण समुद्भूत परिणीतराष्ट्रकूटीराजलदेवी कसमुत्पादितस्वौरसपुत्रबिजयपाल प्राप्तासाध्यगदकुमाराऽऽशुपाल परलोकप्रापण भवबिरक्तकोल्हण गोघ्नम्लेच्छागमशुद्धि पृच्छन श्रुतसमीपसंगतसौरभेयीसूदकसैन्यपुत्रविजयपाला र्थदत्तनृपत्व-सञ्जीकृतसवयस्कसुभटसैन्यगोवधरोधनिमित्तप्रहतयवनेन्द्रचमू-पहड्डाधिराजकोल्हण लक्खैरिपट्टरणमरण यथाक्रमत्र्येकसहस्र म्लेच्छाऽऽर्य भटशूरशय्याशयनं चतुस्त्रिंशो मयूखः ॥३४॥ आदितस्त्रिचत्वारिंशदुत्तरशततमः ॥१४३॥

इस कारण से उस स्थान पर शिव का मन्दिर बनाकर हड्डाधिराज कोल्हण का उस मन्दिर में केदारेश्वर का लिङ्ग स्थापन करना, दूसरों के मत

से प्रणाम सहित सात यात्रा का कहना, दिल्ली के पति सातवें बादशाह नासुरुद्दीन महमूद का आर्यावर्त की भूमि को विशेष लेना, बाईस सूबा आदि के प्रबन्ध में समय का भेद और सन्देह प्रकट करना, उस समय से अफीम खाने का और हुक्का पीने का प्रथम ही ज्ञान होकर फैलाना, कोल्हण के पुत्र आशुपाल का राठोड़ राजलदेवी से विवाह करके औरस पुत्र विजयपाल को प्राप्त करना, असाध्य रोग से कुमार आशुपाल का परलोक पाना, संसार से विरक्त कोल्हण का गाय मारने वाले म्लेच्छों पर सेना के साथ पौत्र विजयपाल के अर्थ राजापन देकर अपनी अवस्था के वीरों की सेना सजा कर गोवध को रोकने के लिये बादशाह के सेनापति को मारकर हड्डाधिराज कोल्हण का लक्खैरी ग्राम के प्रदेश के युद्ध में मरना, यथाक्रम से तीन हजार म्लेच्छ और एक हजार आर्य वीरों का काम आने का चौंतीसवाँ मयूख समाप्त हुआ। और आदि से एक सौ तैंतालीस मयूख हुए।

प्रायो ब्रजदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

ब्रजदेशीया प्राकृती पैशाचिकबहुलं मरुदेशीया प्राकृती अपभ्रंशबहुल मितिसर्वत्र विवेचनीयम्।

अब आगे विशेष रूप से ब्रज भाषा में प्राकृत मिली हुई भाषा है और ब्रजभाषा के साथ प्राकृत पैशाची भाषा अधिक है। मरु भाषा के साथ प्राकृत और अपभ्रंश का बाहुल्य है। पाठकगण यह जान लें।

पादाकुलकम्

पहु इत चित्रकूट गढ भूपति, राना पृथ्वीमल्ल धर्मरति।
कासिय पत्त ईस दरसन कहं, तनु रन तजिय जानि गोबध तहं॥१॥

इधर चित्तौड़गढ़ के राजा हुए राणा पृथ्वीमल जो सदा धर्मरत रहने वाले थे। वे ईश्वर (महादेव) के दर्शनार्थ काशी पुरी को गए पर वहाँ गोवध के विरुद्ध लड़ते हुए रणभूमि में निःशेष हो गए।

सचरणगद्यम्

पहिलेंहू याके पिता रानां पुण्यपाल जाकों पूर्णमल्ल हू कहैं तानें अरु याही पृथ्वीमल्ल के पितामह नागपाल नैं हू बिश्वेश्वर की यात्रा में ऐसें ही गोबध के निमित्त महा अवमर्द मैं देह डारे।

तैसें ही रानां पृथ्वीमल्ल हू कासीपुरी के परिसर में महारन रचि तनू तजत सुरभिन के संतापक सहस्त्रन म्लेच्छ मारे।

अैसें म्लेच्छन को मण्डल प्रतिदिन बलिष्ट बनि आर्याबर्त्त में थानां जमावत ठामठाम फैलि आर्यधर्म को हास करत भयो।

अरु इत कों रानां पृथ्वीमल्ल को तनूज भुवनांग जाकों दूजे नाम करि भौमसिंह हू कहैं सो चित्रकूट को आधिपत्य धरत भयो॥२॥

ऐसा प्रचलित है कि पूर्व में इनके पिता पुण्यपाल जिनका अवर नाम पूर्णमल्ल भी था और इसी राणा पृथ्वीमल के दादा नागपाल भी विश्वेश्वर की यात्रा के समय ऐसे ही गो वध रोकने के लिए गायों की रक्षार्थ हुए भीषण संग्राम में मारे गए थे। अपनी ऐसी सुदृढ़ वंश परंपरा का निर्वाह करते हुए राणा पृथ्वीमल ने काशी नगरी की सीमा में भयंकर युद्ध रच कर अपना शरीर त्यागा और गायों के संताप को हरने के निमित्त कई म्लेच्छों का संहार किया। इस समय में ऐसे ही यवनों के दल बलपूर्वक आर्यावर्त में अपने थाने कायम करने लगे और जगह-जगह फैल कर आर्य धर्म का विनाश करने लगे। इधर अपने पिता की गायों की रक्षार्थ हुए युद्ध में हुई मृत्यु के बाद राणा पृथ्वीमल का पुत्र भुवनांग जिसका दूसरा नाम भौमसिंह भी था अपने पिता की राजगद्दी पर बैठ चित्तौड़गढ़ का स्वामी बना।

इतकों बंबावद नैर के नरेस हड्डाधिराज बिजयपाल भटनैर के भूप संखुला प्रामार मंडन की पुत्री रंभावती बिबाहि आनी।

तामैं राजकुमार बंगदेव केसरखान कर्मसिंह कुंभराज बीरमदेव पंच ही भये महादानी नरेन्द्र बिजयपाल के अबसान पर प्रामारी रानी रंभावती हू सहगमन करि स्वर्गबास लयो।

अरु हड्डाधिराज बंगदेव पिता को पट्ट धारि खट रानिन कों बिबाहत भयो॥३॥

इधर बंबावद नगर के राजा हाडा विजयपाल ने भटनैर के सांखला प्रमार राजा मंडन की सुपुत्री रंभावती से विवाह कर उसे अपनी रानी बनाया। इसी रानी की कोख से राजकुमार बंगदेव, केसर खान, कर्मसिंह, कुंभराज, बीरमदेव जैसे पाँच महादानी पुत्र पैदा हुए। राजा विजयपाल के देहावसान पर प्रमार रानी रंभावती ने अपने पति के सात सहगमन कर स्वर्गलोक का निवास लिया और राजकुमार बंगदेव अपने पिता की राजगद्दी पर बैठ कर राजा बना। इस राजा बंगदेव ने छह विवाह किये।

बंगदेव के अनुज केसरखाना दिक च्यारि तो बलबय मैं अनूढ ही परलोक प्राप्त भये।

अरु इतकों चित्रकूट के अधीस रानां भुवनांग कै पुत्र भीमसिंह जीवन जाकों जीन हू कहत इन द्वै ही कुमारन प्राकट्य पायो तिनमैं भीमसिंह तो भुवनांग अनंतर चित्रकूट को आधिपत्य लह्यो रु छोटे जीन की संतति मैं चंद्रराज भयो ताके रामपुर को राज्य लहि चंद्राउत्त सीसोदे कहे गये।

नरेन्द्र बंगदेव की छ ही पत्निन मैं पट्टरानी सुजानकुमरी तो सोपुरके नरेस गोड़ अमरसहाय की सुता जानी।

अरु दूजी रानी लाडकुमरि बनहटाके स्वामी बीजाउत्त गोहिल कल्यानरायकी पुत्री प्रमानी।।४।।

तीजी सरसकुमरि नेत के नाथाउत्त दहिय कृष्ण की कन्या चोथी सोभाकुमरि पेल के प्रामार हम्मीर की अंगजा जानिबे मैं आई।

अरु पंचमी जसोदा कूर्म सरदारसिंह की तनया छट्ठी कृष्णकुमारि गहिलोत्त फतैसिंह की तनुजा ए द्वै ही इहां स्थान के निश्चय बिहीन ही मागधलोकन लिखाई।

नरेस बंगदेव कै राजकुमार देवसिंह कर्मन सिंहन नयनसिंह अर्डक बर्डक नत्थू पत्थू हिंगुलू खड्गहस्त मोहन स्वामिदास कृष्णदास ए तेरह तनूज भये।

तिनमें बिधि के बस क्रम ही करि पट्टरानी कै प्रथम द्वितीय, दूजी कै तृतीय चतुर्थ, तीजी के पंचम षष्ठ, चोथी कै सप्तम अष्टम नवम, पंचमी कै दसम सों तेरह पर्यंत च्यारि ही जानें गये।।५।।

हाडा राजा बंगदेव के केसरखान आदि चारों छोटे भाई बाल्यावस्था ही में बिना विवाह किये परलोकवासी हो गए। उधर चित्तौड़गढ़ के स्वामी राणा भुवनांग के दो पुत्र भीमसिंह और जीवन जिसे जीन भी कहते थे हुए। इन दोनों में से भीमसिंह ने तो अपने पिता भुवनांग के बाद चित्तौड़गढ़ का आधिपत्य प्राप्त किया और छोटे जीन के वंशजों में चन्द्रराज हुआ। इस चन्द्रराज ने रामपुर का राज्य हस्तगत किया जिसके वंशज चंद्रावत कहलाए। राजा बंगदेव की छह रानियों में से पटरानी सुजान कुंवरी तो सोपुर के गौड़

राजा अमर सहाय की पुत्री थी। दूसरी रानी लाड कुंवरी बनहटा के बीजाउत गोहिलराज कल्याणराय की पुत्री कही गई। तीसरी रानी सरस कुमारी नेत के नाथावत दहिया कृष्ण की कन्या थी और चौथी रानी शोभा कुंवरी पेल के प्रामारराज हम्मीर की बेटी थी। ऐसा सुनने में आया। राजा बंगदेव की पाँचवी रानी यशोदा कूर्म (कछवाहा) सरदार सिंह की बेटी थी और सबसे अन्त में छठी रानी कृष्णा कुमारी थी जो गुहिलोत फतैसिंह की कन्या थी अन्त की इन दो रानियों को इस स्थान पर मुझे मागध जनों (भाटों) ने लिखवाया है। राजा बंगदेव के राजकुमार देवसिंह, कर्मन, सिंहन, नयनसिंह, अर्डक, बर्डक, नत्थू, पत्थू, हिंगलू, खड़गहस्त, मोहन, स्वामीदास, कृष्णदास ये तेरह पुत्र हुए। इनमें से क्रमशः पटरानी के देवसिंह और कर्मन, दूसरी रानी के सिंहन और नयनसिंह, तीसरी रानी के अर्डक और बर्डक, चौथी रानी के पत्थू, हिंगलू और खड्गहस्त और पाँचवी रानी के मोहन हुए इन तेरहों पुत्रों में से मात्र चार ही जाने गए अर्थात् उनका वृत्तांत मिलता है।

दोहा

अस्थिपाल तें इन अवधि, कुल संक्षिप्त कह्यो सु।
कहियत अब बिस्तार करि, हड्डुन खिल जु रह्यो सु ।।६ ।।
तेरह बंग तनूभवन, देव प्रथम कुल दीप।
बल जस भुग्गिय राज्य बहु, महि लहि बंग महीप ।।७ ।।

हे राजा रामसिंह! चहुवान अस्थिपाल से ले कर अब तक अर्थात् देवसिंह पर्यन्त हाडाओं का वंश मैंने संक्षेप में कहा है। अब मैं आगे हाडाओं के शेष वंश का विस्तार से वर्णन करूँगा। हाडा बंगदेव के तेरह पुत्र हुए जिनमें से पाटवी पुत्र देवसिंह हुआ। अपने कुल को प्रकाशित करने वाला और बंगदेव की अर्जित भूमि को अपने बल और यश के साथ भोगने वाला यह देवसिंह बहुत समय तक राज्य करेगा।

पादाकुलकम्

प्रथम नैर कुंपाड महीपति, भोज कबंध सुता मंजुल मति।
चतुर नाम पद्मावति चाहिय, बिधिजुत देव कुमार बिबाहिय ।।८ ।।
सुपहु भीम जद्दव तनया सुनि, परन्यों बल्लभ कुमरि नाम पुनि।
गौड कृष्ण नृप सुता सुसंगति, इम व्याहिय तीजी मदनावति ।।९ ।।

तीजो बंगदेव सुत सिंहन, धीर बीर ब्याही जिहिं द्वै धन।
राजकुमरि पहिली ठकुरायनि जो चालुक सुरतान तनूजनि ॥१०॥
पुत्र यहहि सिंहन सन पैहैं, हड्डुन प्रथम भेद जिहिं क्वैहैं।
जोधराज तोमर तनुजाई, हंसकुमरि दूजी पटु पाई ॥११॥
इनमें भयो चालुकी औरस, तनुज प्रबीर नाम घुग्घुल तस।
भाखत जिहिं कुल घुग्घुलोत भुव, हड्डुन बिच यह प्रथम भेद हुव ॥१२॥
भेदन को बिस्तर सब भूपति, अष्टम रासि अंत लिखिहैं अति।
पै प्रभुचरित अवधि लग पहिलैं, क्रम बिस्तरि पट्टप कुल कहिलैं ॥१३॥
बंग तनूज नवम हिंगुलु बर, भयो रान लक्खन आश्रित भर।
ललित रान बंधव तनया लहि, रचि निज ब्याह रह्यो चित्तोरहि ॥१४॥

इस राडा राजा देवसिंह ने अपना पहला विवाह पूरे विधि-विधान से कुंपाड़ नगर के राठौड़ राजा की उत्तम मति वाली सुन्दर कन्या पद्मावती से किया। दूसरा विवाह देवसिंह ने यादव वंशीय श्रेष्ठ राजा भीम की सुपुत्री वल्लभ कुंवरी से किया। तीसरा विवाह हाडा राजा देव सिंह ने गौड़ राजा कृष्ण की अच्छे गुणों वाली पुत्री मदनावती से किया। हाडा बंगदेव के तीसरे धीर वीर पुत्र सिंहन ने भी दो विवाह किये। पहला विवाह उसने चालुक्य राज सुरतान की पुत्री राजकुमारी से किया। दूसरा विवाह सिंहन ने तंवर जोधराज की पुत्री हंसकुंवरी से किया था। इसी सिंहन से हाडाओं में वंश भेद आरंभ हुआ। सिंहन के अपनी चालुक्य रानी राजकुमारी की कोख से वीर पुत्र घुग्घुल ने जन्म लिया। इसी घुग्घुल के नाम से इसके वंशज घुग्घुलोत हाडा कहलाए और हाडाओं में पहला भेद हुआ। हे राजा रामसिंह! मैं हाडाओं के वंश भेदों को इसी ग्रंथ की आठवीं राशि में विस्तारपूर्वक कहूँगा पर उससे पहले मैं आपके चरित्र की अवधि तक पाटवी कुल का अवश्य वर्णन करूँगा। हाडा राजा बंगदेव का नौवां पुत्र हिंगलू था जो चित्तौड़गढ़ के महाराणा लक्ष्मणसिंह का आश्रित रहा और महाराणा के भाइ की पुत्री से विवाह कर चित्तौड़गढ़ ही रहा एक उमराव के रूप में।

सचरणगद्यम्

हड्डाधिराज बंगदेव को नवम पुत्र हिंगुलु चित्तोर के अधीस लक्खन के बांधव मोत्कल की सुता सुप्रियकारदेबी बिबाह्यो।

अरु रानां ही के आश्रित रहि अलाउद्दीन के आहव में अप्रज ही काच के करीर लों खंड खंड होय स्वामिधर्म निबाह्यो।

त्रित्तोर मैं अद्यावधि जाके प्रासाद बिद्यामान कहैं।

याही रीति रजपूतन के नाम रजपूती के अनुसार बिख्यात रहैं ॥१५॥

हाडा राजा बंगदेव के नौवें पुत्र हिंगुलु ने चित्तौड़गढ़ के महाराणा लक्ष्मणसिंह के छोटे भाई मोकल की पुत्री सुप्रियकार देवी से शादी की थी और महाराणा का आश्रित होकर अलाउद्दीन के युद्ध में नि:संतान ही काँच के घड़े की मानिन्द टुकड़े-टुकड़े हो कर स्वामीधर्म को निभाते हुए रणभूमि में मारा गया। अद्यावधि उसके महल चित्तौड़गढ़ में विद्यमान हैं ऐसा कहा जाता है। इसी वीरता के प्रदर्शन के कारण ही राजपूत योद्धाओं के नाम धरती पर विख्यात रहे हैं।

दोहा

सूर ग्यारहम बंग सुत, मोहन गंगा नाम।
सहंसमल्ल चालुक सुता, लायो परनि ललाम ॥१६॥
मोहनोत्त तस कुल महित, धरत बिदित अभिधान।
हड्डुन मैं यह भेद हुव, दूजो प्रथित प्रमान ॥१७॥
इतर बंग सुत नव हि इम, उज्झि तनूमय ओक।
अर्भकभाव अनूढ ही, पत्ते सब परलोक ॥१८॥

हाडा राजा बंगदेव का ग्यारहवाँ पुत्र मोहन था जिसका अवर नाम गंगासिंह भी कहा गया है। इस हाडा मोहन ने चालुक्य संहसमल की सुन्दर पुत्री से विवाह किया। इसी के नाम से इसके वंशज मोहनोत हाडा उपटंक वाले कहलाए। हाडाओं के वंश में यह दूसरा मुख्य भेद हुआ जो प्रसिद्ध है। इन चार के अतिरिक्त हाडा बंगदेव के नव ही पुत्र अपने शरीर रूपी घर को छोड़ कर बाल्यावस्था में अविवाहित ही परलोकवासी हो गए थे।

प्रायो मरुदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

सचरणगद्यम्

पहिली चंडासिराज पृथ्वीराज रो छोटो पुत्र सामंतसिंघ दिल्ली रा अवमर्द हूँ बाळक थको कढियो जिकण नूं पातसाह कुतबुद्दीन मेवात

देस रो कितोक प्रांत दीधो तिणरै पुत्र जयमल्ल तिणरै सुत सोमराज तिणरै तनूज सूरराज तिणरै जैतराज रणधीर दो ही पुत्र बीराधिबीर थिया।

जिकण में जैतराज आपरा अनुज समेत प्रामारराज बिक्रम रा बारह सै चोरासी रा सक में पहिली रा मालिक नूं मारि रणस्थंभदुर्ग में अमल करि भाई रणधीर नूं छाणि रो दुर्ग दीधो जिकण जैतराज रै अनंतर इणरै पुत्र हम्मीर रणस्थंभ रो राज पाइ कोई बडा अपराध ऊपर आपरा प्रधान बणिक टोडरमल्ल नूं मारि तिकण रा पुत्र सुरजन जयमल्ल रायपाल तीनों ही भाई नूं पाछो अधिकार दैर उर थी लगाई लिया।

इण समय थी किताक बरसां पछैं अर राजकुमार देवसिंह रा बिबाहां रै पूर्ब हड्डाधिराज बंगदेव चीतोड जीरण दसोर भाणपुर रा नरेसां नूं गंजि पुर मांडिल पानगढ सांडागढ़ हिंगलाजगढ़ खैरोली केथोली भैंसरोड़ प्रमुख छोटा छोटा चोईस दुर्ग दाबि लीधा। अर रजपूती रै उफाण राड़ि रै रसिक चोड़ै खेत चंद्रहास चखाई अनेक दोयणां रा घर घूकां नूं घुसण रै काज दीधा ॥१९॥

पूर्व में चहुवान राजा पृथ्वीराज का छोटा पुत्र सामंतसिंह दिल्ली वाले संग्राम से अपनी किशोरावस्था में निकल कर गया था और जिसे बादशाह कुतबुद्दीन ने मेवात देश का एक प्रांत जागीर में दिया। इस सामंतसिंह के जयमल, जयमल के सोमराज, सोमराज के सूरराज नामक पुत्र हुए और सूरराज के जैतराज और रणधीर नामक दो वीर पुत्र हुए। इनमें से जैतराज ने अपने छोटे भाई रणधीर सहित विक्रम संवत् बारह सौ चौरासी के वर्ष में रणथंभोर दुर्ग के स्वामी को मार कर अपना अधिकार किया। तब जैतराज ने अपने छोटे भाई रणधीर को छाणि (छांण) का दुर्ग दिया। इसी चहुवान जैतराज की मृत्यु के बाद इसका उत्तराधिकारी पुत्र हम्मीर रणथंभोर का राज्य पा कर राजा बना। राजा हम्मीर ने किसी बड़े अपराध के कारण अपने प्रधान बनिया टोडरमल को मार डाला पर उसके तीनों पुत्रों सुरजन, जयमल और रायपाल को अपने प्रधान पद का अधिकार दे गले लगा लिया। इस समय से कुछ वर्षों बाद पर राजकुमार देवसिंह के विवाहों से पूर्व, हाडा राजा बंगदेव ने चित्तौड़गढ़, जीरण, मंदसौर, भानपुरा आदि के राजाओं को हरा कर पुर, मांडल, पानगढ़, साहड़ा, हिंगळाजगढ़, खैरोली, केथोली, भैंसरोड़गढ़ आदि

छोटे-छोटे चौबीस दुर्ग अपने अधिकार में कर लिये थे। यही नहीं उसने अपने शौर्य के उफान में युद्ध रसिक की तरह रणक्षेत्र में तलवार के प्रहारों से अनेक शत्रुओं के घरों को उल्लुओं के निवास योग्य बनाया अर्थात् उनके घर उजाड़े।

इण रीति रा रजोगुण रै प्रकास उण समय रो हाडो राव किण ही न आसंगियो।

अर जिणरो पट्टन कुमार देवसिंह भी इसड़ा पिता रा प्रताप मैं जुदा ही नाम काढण रै काज पराई पुहवी लेण रा बीर रस में रंगियो।

जिण समय तीन सै घरां री बसती रा बूंदी ग्राम मैं जिकण बापी बणाइ डूम नूं दीधी तिण कारण डूमड़ाबाइ कहीजै तिकण आबू रा पोता अर जिकण री बणाई गोल्हाबाइ कहीजै तिण गोल्हा रा पुत्र उसारा जाति रा मीणां जैता रो अमल रहै।

अर बाणगंगा रो प्रवाह रोकि जिकण रो बणायो छोटे तळाव हाडां रा राज मैं राव सुर्जन री माता बडो कीधो तो भी जिणनूं अजे संसार उणरा ही नाम करि जैतसागर कहै॥२०॥

बंगदेव का पाटवी पुत्र देवसिंह अपने उद्यम से अपना नाम प्रसिद्ध करने के निमित्त पराई भूमि को स्वयं के अधिकार में करने को वीर रस के रंग में रंग गया। यह वह समय था जब बूंदी मात्र तीन सौ घरों की आबादी वाली बस्ती थी। इस छोटे से गाँव में जिसने एक बावड़ी बना कर ढोली को दी थी वह बावड़ी आज भी डूमड़ाबाव कही जाती है। उसी आबू के पौत्र गोल्हा की बनवाई हुई दूसरी बावड़ी आज भी गोल्हाबाव कही जाती है। ऐसे गोल्हा का पुत्र जैता जो उसारा जाति का मीणा था। इसी जैता मीणा का तब बूंदी पर अधिकार था। जैता मीणा ने तब बाणगंगा का प्रवाह रोक कर एक छोटा तालाब बनवाया था जिसे बाद में हाडा राजा सुर्जन की माता ने बड़ा बनवाया था। इस तालाब को आज भी उसी के नाम से जैतसागर कहा जाता है।

ओछी जाति रै बडो ग्रास हुवां बडां री ओळि में आवण री हूँस धरे।

इण कारण बूंदी समेत छोटा बडा बारह ग्रामां रो ग्राम पाइ मदकल मातंक मारण रो मन करता सियाळ रै समान छत्र धारियां रो अनुकरण करै।

दैवरा सम बिसम प्रवाह रै कारण एक जसराज नाम गोळवाळ चहुवाण इण मीणां रै प्रथान हूँतो तिकण रै दोई दुहिता सुरूप री सदन जाणि जैता रै पुत्र बिग्रहराज इंद्रद्युम्न जसा री पुत्रियां बिबाहण री बिचारी।

जरैं जसराज बंबावद आइ हाडां रा पोलिपात्र सामोर बारहठ हरसूर नूं समुझाइ या महाअनर्थ री बात कुमार देवसिंह रै कान पटकी तिको सुणतां ही जसा नूं एकांत में बुलाई पूर्बापर जांणि पहली बूंदी ही लेण री धक धारी॥२१॥

ओछी जाति वाले के बड़ी आजीविका होने पर वह बड़ों की पंक्ति में शामिल होने की इच्छा (धारणा) करता है। इस कारण बूंदी सहित छोटे-बड़े बारह गाँवों की आजीविका पा कर वह जैता भी जिस तरह गीदड़ मस्त हाथी को मारने का मन ही मन सोचता है उसी तरह राजाओं की नकल करने लगा। ईश्वर के सम और विषम समय के प्रवाह के कारण एक जसराज नामक गोलवाल चहुवान इस जैता मीणा का प्रधान था। इस जसराज के सुन्दर स्वरूप वाली दो पुत्रियाँ थी। उनकी इस जैता मीणा ने अपने दो पुत्रों इन्द्रद्युम्न और विग्रहराज के साथ विवाह करने की बात सोची। तब जसराज वहाँ से चल कर बंबावद आया और आ कर उसने अपना यह दर्द हाडाओं के पोलपात्र सामोर चारण हरसूर के आगे कहा कि अब आप महा अनर्थ की यह बात किसी तरह कुमार देवसिंह तक पहुँचाएँ। हरसूर सामोर ने जब यह बात देवसिंह के कान में डाली तो यह सुनते ही उसने जसराज को एकान्त में बुला कर पूरी बात की दरियाफ्त की। आगे पीछे की सारी बातें जान कर देवसिंह ने बूंदी को ही हथियाने का मन में संकल्प किया।

दोहा

बळ मीणां रो बूझियो, जरैं कही जसराज।
बाघ ग्राम लंगर बहै, संगर स्याळ समाज॥२२॥

जब हाडा कुमार देवसिंह ने जसराज चहुवान से पूछा कि आखिर उस जैता मीणा के पास कितना और क्या बल है? तो उत्तर में जसराज ने बताया कि हे कुमार! गाँवों में कुत्ते भी सिंह बन कर और जंजीर (लंगर) बांध कर घूमते हैं अर्थात् जिनकी जंजीर पर कोई पैर नहीं रख सकता पर वे युद्ध में गीदड़ों के समूह के समान है।

षट्पात्

बदै जसो जिणबार कंवर अग्गळ जोड़े कर।
मीणा अधम गमार घणैं छक अनड़ रहै घर।
बीरां सम्मुह बेग पूंछ पटकै मंडळ मित।
एकण खीची आई सबळ कीधा खळ संकित।
अभिधान गंग संगर असह निम्मदेव अंगज निडर।
असवार एक जडिया उठै ओखळिया भालां अरर॥२३॥

जसराज ने जिस समय करबद्ध हो कर कुमार के समक्ष यह कहा कि मीणा जाति के ओछे और मूर्ख नर अपने घर में घमण्ड से अनम्र रहते हैं पर वीरों के समक्ष वे कुत्ते के समान शीघ्र ही अपनी पूँछ दबा लेते हैं। एक अकेले खीची ने आ कर अपने बल से उन दुष्टों को भयभीत कर रखा है। उसका नाम गंग है और वह निम्मदेव का निडर पुत्र अकेला ही आया था। उस निर्भीक वीर ने बूंदी के बंद किवाड़ों पर अपने तीखे भालों के प्रहार किए अर्थात् वह वीर अप्रतिहत रूप में जब चाहे आ कर बूंदी को कंपा सकता है।

सचरणगद्यम्

गागरोणगढ रो अधीस नीमदेव रो पुत्र खीची गंगदेव एकल असवार केही बार आई बूंदी रा जड़िया कंवाड़ां रै भाला रो प्रहार करै।

अर मीणां नै जोर कीधो क नहीं इसड़ो हेलो पाड़ि कुलवंत खेत रा बाजी रै बळ उण ही दिन पाछो गागरोणि जाइ देह री नित्यचर्या साधै जिकण नूं सुणतां ही मीणां ओद्राव धरै।

तिके रंक चंडासिराज रा कुळ री कन्या किण रीति लहै।
इण कारण आपरो ऊपर हुवां म्हांरो रजपूतपणों रहै॥२४॥

गागरोनगढ़ के स्वामी नीमदेव का पुत्र खीची गंगदेव ही अकेला ऐसा सवार योद्धा है जिसने कई बार आ कर बूंदी के बंद किवाड़ों पर अपने भाले से चोट की है। वह किवाड़ ठकठका कर पूछता है ओ मीणो! अब तो कुछ बल आया तुममें कि नहीं? इतना पूछ कर वह अपने अच्छी नस्ल के घोड़े के बल पर उसी दिन वापस अपने नगर गागरोनगढ़ पहुँच कर अपनी देह की नित्यचर्या साधता है। इस खीची के नाम से ही सारे मीणा भय खाते हैं। ऐसे

दरिद्र और कायर भला चहुवान कुल की कन्या लेने की सोच भी कैसे सकते है। इसलिए हे कुमार! अब आपकी कृपा हो तभी मेरे क्षत्रियत्व की रक्षा हो सकती है अन्यथा कठिन है। जसराज ने उससे विनती की।

जसराज रा बचनां मैं मीणां रो इसो अधर्म जाणि नेत्रां मैं जळ आणि कुमार कहियो चोड़ै चढि चालियां इसड़ा अनर्थ रा करणहार अंत्यज पुळियार होइ जीवता रहि जावै।

इण कारण योही अधर्म अनुमत मैं जाणि उणां नूं मिळाइ छळ कीधां एक भी अधम जीवण न पावै।

तिण सूं गंगदेव रो आगम जाणि पहिली सूचना करि मोनूं बुलाइ गमारांनूं म्हांरो सहायकभाव दिखावणों।

जरें खीची रो भय टलियां बिश्वासपाइ धीजियां नूं रजपूत करण रै काज मीणां री चाल छोडण रो पत्र कपटकर लिखावणों॥२५॥

जसराज के वचन सुन कर कुमार को अन्दाजा हुआ कि मीणों का कैसा अधर्म भरा आतंक है। सुनते ही कुमार के नेत्र भर आए और उसने कहा हे जसराज! यदि प्रत्यक्ष चढ़ाई को हम चलें तो वे अनर्थकारी अंत्यज हमारा आगमन सुनते ही इधर-उधर भाग जाएँगे और इस तरह वे जीवित भी बच जाएँगे। इसलिए यद्यपि यह कृत्य धर्माचरण के विरुद्ध है फिर भी मैंने उसे चुना है ताकि वे सभी इकट्ठे एक ही ठौर मिल जाएँ जिससे उनमें से कोई जीवित न बचे। इसके लिए यह तरकीब आजमानी पड़ेगी कि जब कभी खीची गंगदेव का आगमन संभावित हो तब तुम मुझे अग्रिम सूचना भिजवाना जिससे मैं उन मीणों की सहायता करने का छल कर उनका सहायक बन सकूँ। इस के निमित जब खीची का भय समाप्त हो जाए तब तुम उन्हें विश्वास में ले कर उनके मन में यह विचार डालना कि तुम्हें मीणा जाति के प्रचलित रिवाजों को छोड़ना पड़ेगा यदि तुम क्षत्रियों जैसा होना चाहते हो तो और उनसे इस आशय का एक शपथ-पत्र कपट से लिखवाओ।

म्हां रै कन्यादान रा फळ री चाह जाणि गमार अत्यंत ही आणंद मैं उफणिया न मावसी।

अर अधर्म रा अघसूं अंध हुवा बुलांवां जठै ही मरण नूं आवसी।

इणरीति समुझाइ राजकुमार देवसिंह भाई गोळवाळ नूं बूंदी सीख दीधी।

जरै कुमार रा दूत नूं साथलेर जसराज भी छानैं चोड़ै आपरै खेद दिखाई घर ही रहियो अर गागरोणि गुप्त दूत राखि पाँच दिन पहली गंगदेव रा आवण री राजकुमार नूं सूचना कीधी ॥२६॥

जब वें सुनेंगे कि मैं कन्यादान करने आ रहा हूँ तो उनका आनन्द दुगुना हो जाएगा। वे इस आनन्दातिरेक में गाफिल हो जाएँगे और वे अधर्म के पाप में अंधे हुए हमारे बुलाने पर हर कहीं मरने चले आएँगे। इस तरह पूरी योजना समझा कर कुमार देवसिंह ने अपने गोलवाल चहुवान भाई जसराज को आश्वस्त कर बूंदी भेजा। तब जसराज भी कुमार के गुप्त दूत साथ ले कर, चुपचाप बीमारी का बहाना बना कर अपने घर पर (सोया) रहा और गागरोन गढ़ के गंगदेव के आगमन की सूचना दूतों के साथ पाँच दिन पहले ही कुमार को भिजवा दी।

गंगदेव रै खुरासाण खेत रो अतिबेग बाजी सुणियो जिसड़ो ही तुरंग सज्ज कराइ कुमार एकल ही असवार आखेट रो व्याज करि बंबावदा सूं ईसान दिसा री अटवी में बूंदी सों पाँच कोस परैं लग जाइ सिकार रा रमणां में पाँच ही दिन बिताइ एक मइंद दोइ बाराह गाडां घलाइ चाह करि सायंकाळ रै समय बूंदी आयो।

सो जाणतां ही मीणां साम्है आइ उचित दिखाई गाँव में आणि जसराज रै घरे.ऊतरण री इच्छा जाणि आपरो आसय सुणायो।

मीणां कहियो खीची गंगदेव फजर ही आइ भाला रो प्रहार कंवाड रै करसी अर जसराज री हवेली द्वार रे समींप इण कारण आपनूं म्हारे घर उतरणों ठीक छै।

अर कंवाड़ तूटै तो खीची रै आपण नूं मारि लेण री बात कतरीक छै ॥२७॥

गागरोनगढ़ के खीची गंगदेव के घोड़े जैसा ही खुरासान देश में उत्पन्न अच्छी नस्ल का घोड़ा सज्जित करवा कर उस पर सवार हो राजकुमार देवसिंह अकेला ही शिकार खेलने के बहाने बंबावद से पाँच दिन पहले ईसान दिशा की ओर वन में बूंदी से पाँच कोस आगे वाली जगह पर आ गया। वहाँ उसने आखेट खेलने में पाँच दिन की अवधि व्यतीत की। इस बीच उसने अपने शिकार किये हुए एक सिंह और दो सूअरों को गाड़ियों में लदवाया और जानबूझ कर सांयकाल के समय बूंदी आया। राजकुमार का

आगमन सुनते ही मीणा लोग स्वागत के लिए चला कर उसके सम्मुख आए फिर उसे आदर के साथ वे सभी गाँव में ले कर आए। जब राजकुमार देवसिंह ने गोलवाल जसराज के घर ठहरने की इच्छा प्रकट की तो इस पर मीणाओं ने कहा कि प्रातःकाल होते ही खींची गंगदेव आ जाएगा और आते ही अपने भाले से बूंदी के बंद किवाड़ों पर प्रहार करेगा चूंकि जसराज की हवेली प्रवेश द्वार के पास है इसलिए आपका हमारे घर ठहरना अच्छा रहेगा। यदि किंवाड़ टूट गए तो आपके साथ मिल उसे मारना कोई बड़ी बात नहीं होगी।

दोहा

कहियो हसि हाडै कंवर, गिणो न मो जिम गंग।
आज निसा न जड़ो अरर, रूपणों मोनूं रंग॥२८॥
साल मेटि थांरो असह, बुंदी अभय बणाइ।
इम जाऊं पुर आपरै, जय जस अतुल जणाइ॥२९॥
सुणियां आगम सत्रु रो, अरर जड़े निज अैंण।
राणी जणिया किम रहै, बिरुद धर्म कुल बैंण॥३०॥

यह सुनते ही हँसकर हाडा कुमार देवसिंह ने कहा कि क्या तुम लोग मुझे गंगदेव से कम समझते हो? क्या मैं उसका मुकाबला नहीं कर सकता? यदि नहीं तो मैं कहता हूँ आज रात को बूंदी के प्रवेश द्वार वाले किवाड़ खुले रखना। मैं युद्ध करना चाहता हूँ। मैं तुम्हारे शत्रु को मिटा कर हमेशा-हमेशा के लिए बूंदी को निर्भय बना दूँगा और तभी मैं अपने नगर को लोटूँगा। मैं विजय अर्जित करने के यश को फैलाए बिना नहीं जाने वाला। तभी प्रातः काल के समय शत्रु खींची गंगदेव को आया सुन कर सभी पुरवासियों ने अपने-अपने घरों के दरवाजे बंद कर लिये पर रानी द्वारा उत्पन्न अर्थात् वीर राजपूत यह कैसे कर सकता है कि वह भी अपने घर के किंवाड़ बंद कर ले। वह तो धर्म और अपने कुल के रक्षक का विरुद वाला होता है।

सचरणगद्यम्

इण रीति आपरी मरजी मीणां नूं मनाई राजकुमार देवसिंह सारी निसा बूंदी रा दरवाजा खुलाई गोळवाळ भाई जसराज री हवेली रहियो।

अर प्रभात ही खीची रा तोमर कपाट रै लागतां ही कुमार एकल असवार आपाऊपहरो आवतो देखि आसंग मैं अणमावतो जाणि गंगदेव

हेलो भी न देण पायो र प्राण बचावण नूं बडे वेग बाजी बहोड़ि मऊरो मार्ग गहियो।

दो ही जणां रै समता का तुरंग इण कारण पूगूं अर न पूगणद्यूं इसड़ा संकल्प सों भदाणां ग्राम रै घांटै जावतां खीची त्रास मैं मूढ होइ लागै जेरबंध ही घोड़ो चर्मण्वती का दह मैं ठेलियो।

जिकण नूं बूडतो देखि पाछैं सूं कुमार देवसिंह जेरबंध काटणों चींताइ नासादघ्न पाणी मैं पैसता नूं बाजी समेत उबेलियो ॥३१॥

खीची कुमार नूं ओळक्खियो जरैं ही पाछो आइ कही इसड़ा संकट सूं बचावै जिको मारण रो तो संकल्प भी लावै नही। अर आप जिसा राजकुमार रो इण तरह अठा लग आवणो अर्थबिहूणों खटावै नही।

कुमार कहियो जे प्रजा नूं पीड़ित करै तिकां री पूठि लागणों तो क्षत्रियां रो ही सनातन धर्म जाणीजै।

अर धाड़ो लूट करणों महामलिन मन रा अंत्यजां रो ही कर्म प्रमाणीजै ॥३२॥

इस प्रकार अपनी इच्छा मीणाओं से भी मनवा कर राजकुमार देव ने पूरी रात बूंदी के प्रवेश द्वार का दरवाजा खुला रखवाया और स्वयं अपने बांधव गोलवाल चहुवान जसराज की हवेली पर रात्रि विश्राम के लिए रुका। सुबह होते ही खींची गंगदेव का भाला जब किवाड़ पर टकराया तो उसकी खट-खट सुन कर अपने घोड़े पर झट से सवार हो द्वार की तरफ लपका। इस प्रकार एक अकेले निर्भीक और पराक्रमी वीर को अपनी ओर बेधड़क आते देख गंगदेव ने रोज की तरह मीणाों को आवाज भी नहीं दी और तुरन्त ही अपने प्राण बचाने हेतु उसने अपने घोड़े को मऊ जाने वाले मार्ग की तरफ मोड़ दिया। दोनों योद्धाओं के पास अच्छी नस्ल और तेज गति वाले समान घोड़े थे। कुमार देव सिंह ने जितना तेज अपने घोड़े को दौड़ाया उस से भी अधिक वेग से गंगदेव ने अपने घोड़े को भगाया। बहुत देर बाद भदाणा गाँव की घाटी तक पहुँचने पर खींची गंगदेव ने डर के मारे जेरबंध (बंधे हुए तंग) सहित अपने घोड़े को चम्बल नदी के गहरे जल वाले स्थान में ठेल दिया। खीची गंगदेव को इस प्रकार पीछे से नदी में डूबते हुए देख कर कुमार देवसिंह ने तुरन्त घोड़े के जेरबंध काट कर नाक तक पानी में डूबे गंगदेव को

घोड़े सहित पानी से बाहर खींच लिया। अपने बचाने वाले की ओर कृतज्ञता से निहारते ही खींची गंगदेव को पता पड़ गया कि यह तो राजकुमार देवसिंह है। उसने पहचानते हुए कुमार से कहा कि जो मुझे इस प्रकार बचा रहा है उसकी इच्छा मुझे मारने की तो कतई नहीं हो सकती है। पर आप जैसे राजकुमार का यहाँ तक पीछा करने में कोई मतलब जरूर होगा। इस पर कुमार ने जवाब दिया कि जो प्रजा को पीड़ित करे उसका पीछा करना क्षत्रियोचित प्राचीन कर्तव्य माना गया है और डाका डालना, लूटना जैसा कर्म तो महामलीन अंत्यजों का कार्य माना जाता है।

खीची कहियो प्रजानूं पीड़ा देण रो कर्म तो हूँ भी अंत्यजां रो ही जाणूं।

परंतु बुंदी में अंत्यज ठाकुर कहावै सो दर्प मेटण रै काज इण तरह आइ उणांरा बळरो अनुमान प्रमाणूं।

बळ रो निश्चय थियो जतैं आप जिसा बीर रक्षक हुवा तो अब म्हेऊ प्रदेस लेण रो संकल्प तजियो।

परंतु मीणां रै ठाकुरपणों रहियां तो रजोगुण रा छक को ह्रास ऊपजियो ॥३३ ॥

यह सुन कर खींची गंगदेव ने जवाब दिया कि प्रजा को पीड़ित करने का कार्य तो मैं भी अंत्यजों का ही गिनता हूँ परन्तु बूंदी में कोई अंत्यज ठाकुर कहलाए यह मुझसे सहन नहीं होता इसीलिए वहाँ आ कर मैं उनका दर्प मिटाने के लिए उनके बल का अनुमान लगाता हूँ। मुझे उनके बल का अन्दाजा हो गया था पर इतने में ही आप जैसा उनका वीर रक्षक आ निकला। अब मैं उस प्रदेश को दबाने का अपना संकल्प छोड़ता हूँ परन्तु मीणा लोगों का आधिपत्य रहने से रजोगुण के उत्साह का ह्रास होना तय है और यह चिन्ता का विषय है।

कुमार कहियो मीणां तो ठाकुर कहायणो सहज रो जाणि अब तो रजपूतां री पुत्रियां नूं बरण ढूका।

अर आपांरा सगोत्र गोळवाळ जसराज नूं समता रो संबंधी करण ढूका।

धर्मजुद्ध सों मारियां तो पलायन रो आलंबन पाइ इसड़ा अधर्मी समस्त ही मरण पावै नहीं।

अर छळ रा प्रपंच रै साथ बिस्वास बंधाइ आघात राळियां सूना मैं संग्रहिया जीवां जिम एक भी जीवतो जावै नहीं ॥३४॥

इस पर कुमार देवसिंह ने कहा कि ये मीणा तो ठाकुर कहलाना सामान्य बात समझते हैं। इनका हौंसला तो यहाँ तक बढ़ गया है कि ये मीणा अब राजपूतों की कन्याओं को वरण करने का सपना देखने लगे हैं। यही नहीं अपने बांधव गोलवाल चहुवान जसराज को ये जबरन समधी बनाने पर आमादा है उसकी बेटियों से अपने पुत्रों का विवाह चाहने लगे है। हे गंगदेव! यदि अब मीणा लोगों से धर्मयुद्ध किया तो इसमें पलायन का खतरा है ये भाग जाएँगे और हम इन सारे अधर्मियों को नहीं मार सकेंगे। हाँ, छल-कपट से इनका विश्वास अर्जित कर प्रहार करने से शिकार के बाड़े में पकड़े हुए जानवरों की तरह हम इन सभी को मार सकते हैं। इनमें से कोई जीवित नहीं जा सकेगा।

इण कारण कन्यादान रा फळ री ईहा दिखाइ जसराज री पुत्रियां नूं बंबावदै बुलाइ कोई राजकुमारां रै पल्लै बांधि एहा अधर्म रा संकट थी उबारूं। अर ऊणां रा विवाहण रा लोभी अंत्यजां नूं एकठा बुलाई सर्ब थाही मारूं।

खीची कहियो बंबावदै बिबाह रो बिचार कीधां बात छानैं न रहसी जैं तो अधम बायस आप आपै मतै उडि इसो ही संकल्प ओरठै भी जणावसी। अरु ऊणां रा अमलमें बूंदी रै समीप बिबाह रो बिचार कीधां बिस्वासरी पुष्टि पाइ निस्संदेह हणिया जावसी॥३५॥

यही सोच कर मैंने कन्यादान के फल की इच्छा से जसराज की पुत्रियों को बंबावदा बुला कर इनके योग्य वरों से इनका पाणिग्रहण कराने का विचार किया है। इस अधर्म के संकट से बचने का एकमात्र यही उपाय मुझे नजर आता है। मैं उन क्षत्रिय बालाओं से विवाह पर उतारू अंत्यजों को छल से विवाह करने का प्रस्ताव दे बंबावदा बुला कर इन सभी को मार डालना चाहता हूँ। कुमार की बात सुन कर खीची गंगदेव ने कहा कि बंबावदा में विवाह करने से यह बात छिपी नहीं रहेगी फिर तो भनक पाते ही ये कौए अपना-अपना अवसर देख कर उड़ जाएँगे और ये वहाँ भी यह बात फैला देंगे। इसलिए आप विवाह का स्थल बूंदी के आसपास ही रखें जिससे ये लोग भरोसा कर लेंगे और फिर तो आसानी से मारे जाएँगे।

दोहा

आयो बूंदी आपरो, अमल दरा रै वार।
बधियो रहसी जतन बिण, प्रतपण म्हांरो पार॥३६॥

खीची गंगदेव ने कहा कि जैसा मैंने निवेदन किया यदि हे कुमार! आप वैसा करेंगे तो निश्चय ही बूंदी आपके आधिपत्य में होगी। यदी नहीं तो दरा (स्थान विशेष) के इस पार आपका राज्य बिना प्रयत्नों के भी बढ़ेगा और दरे के उस तरफ हम तपेंगे अर्थात् राज्य करेंगे।

सचरणगद्यम्

इसड़ो कहि गंगदेव आपरो आथाण लीधो।

अर कुमार बूंदी आइ खीची रा वळे न आवण रा अभय दीधो।

सत्रु रो साल काढि आवता कुमार नूं मीणां सहित बूंदी रै लोक बधावणों करि आणियो।

अर आप आपरै उचित उपदा री भेट करि राड़ि रो रसिक जोरदार रक्षक जाणियो॥३७॥

इतना कह कर खीची गंगदेव अपने स्थान गागरोनगढ़ को गया और कुमार देवसिंह ने बूंदी में आ कर सभी मीणा लोगों को आश्वस्त किया कि अब वह खीची तुम्हारे यहाँ कभी नहीं आएगा। अपने शत्रु रूपी चुभते हुए काँटे को इस प्रकार निकाल देने के लिए बूंदी के सारे लोगों और मीणाओं ने राजकुमार का स्वागत किया। वे उसे हर्ष के साथ बधा (स्वागत) कर बूंदी में लाये। फिर अपनी-अपनी हैसियत के अनुसार सारे लोगों ने राजकुमार को उपहार भेंट किये। वहाँ के निवासियों ने इस रण-रसिक कुमार को अपना जोरदार रक्षक समझा।

इतिश्री वंशभास्करे महाचम्पूके पूर्वायणे चतुर्थ राशौ बीतिहोत्र-चण्डासि बंशवर्णनबीजहड्डाधिराडस्थिपाल बंश्यानुवंश्याविहितव्याख्यानावसरव्याहार्यबम्बावदाधीशनृपविजयपाल बंगदेव कुमारदेवसिंह चरित्रे चित्रकूटनरेशराणापृथ्वीमल्लगोवधनिमित्तकाशीरणमरण पूर्बतथैवतत्पितृ पितामह वाराणसीरणशय्याशयनसूचन पुण्यभूमिम्लेच्छ-मण्डलप्रतापबिशेषबिस्तारण राणाभुवनांगचित्रकूटराज्यसमासादन

हड्डाधिराजबिजयपाल प्रामारी रम्भावत्यौ रसवङ्गा दिकुमारपञ्चक समुद्भवन बिजयपाला वसानरम्भावती सहगमन बंगा ऽनुजचतुष्क बाला-ऽनूढत्वपरलोकप्रापण राणाभुवनाङ्गपुत्रभीमचित्रकूटाधिपत्यग्रहण तदऽनुजजीनाऽपर नामजीवनवीग्यचन्द्राउत्तोपटंकख्यापन बङ्गदेव व्यूढ गौडीसुज्ञानकुमारी प्रभृतिराज्ञीषट्क प्रत्येकनाम जात्या दिनिर्णयन तदौर-सदेवसिंहा दित्रयोदश कुमारप्रकटन ज्येष्ट कनिष्टादिप्रत्येकराज्ञीपृथक्पुत्र त्वसंख्यासमनसन भाविवंशविस्तितीर्षाप्रतिज्ञापन पट्टपकुमारदेवसिंह राष्ट्रकूटीपद्मावती प्रभृतिपत्नीत्रय परिणयन बङ्गदेव तृतीय पुत्रसिंहण चालुकी तोमरी द्वय बिबहन भावितदौरसघुग्घुल बंशघुग्घुलोत्त हड्डुभेद-प्राथम्य प्रख्यापन गौणभेदबंशपरम्पराऽष्टम राश्यन्तलिखनप्रतिज्ञापन।

श्री वंशभास्कर महाचम्पू के पूर्वायण की चतुर्थ राशि में अग्निवंशी चहुवान वंशवर्णन के कारण हड्डाधिराज अस्थिपाल के वंश और वंश की शाखाओं की कथा बताने के समय के वचनों में बम्बावदा के स्वामी राजा बिजयपाल बंगदेव और कुमर देवसिंह के चरित्र में चित्तौड़ के राणा पृथ्वीमल्ल का गौबध के कारण काशी के युद्ध में मरना, इसी प्रकार पहले इनके पिता और दादा का काशी के युद्ध में मरने का जताना, आर्यावर्त में म्लेच्छ मण्डल का प्रताप विशेष फैलना, राणा भुवनांग का चितौड़ का राज्य पाना, हड्डाधिराज विजयपाल से प्रामारी रम्भावती के उदर से बंग आदि पाँच कुमारों का उत्पन्न होना, विजयपाल के अन्त समय रम्भावती का सती होना, बङ्ग के छोटे चार भाइयों का बालकपन में बिना विवाह परलोक जाना, राणा भुवनांग के पुत्र भीम का चितौड़ का स्वामी होना, उनके छोटे भाई जीन और दूसरे नाम से जीवन के कारण चन्द्राउत पदवी का विख्यात करना, बंगदेव का गौड़ जातिवाली सुज्ञान कुमारी आदि छह रानियों का विवाह और प्रत्येक का नाम और जाति आदि का निर्णय करना, उनके उदर से देवसिंह आदि तेरह कुमारों का प्रकट होना, छोटे बड़े आदि प्रत्येक रानी के अलग-अलग पुत्रों की संख्या संक्षेप से कहना, आगे होने वाले वंश को विस्तार से कहने की प्रतिज्ञा करना, बडे कुमार देवसिंह का राठौड़ वंशीय पद्मावती आदि तीन स्त्रियों से विवाह करना, बंगदेव के तीसरे पुत्र सिंहण का चालुक और तोमर रुमापियाँ दोनों से विवाह करना, होने वाले औरस पुत्र घुग्घुल के वंश के घुग्घुलोत्तों का हाडा क्षत्रियों में प्रथम शाखा होने का वर्णन, छोटी शाखाओं (वंशपरम्परा) का अष्टमराशि के अन्त में लिखने की प्रतिज्ञा करना।

राणालक्ष्मणसिंहस्वसामन्तीभूतपरिणीतनिजबान्धवपुत्रीसुप्रिय-कारदेवी कबंग नवम पुत्रहिंगुलु भावियवनराडऽलाबुद्दीन रणमरणसूचन तदुदन्तप्रतिभूभूततत्प्रासादांकचित्रकूटविख्यापन परिणीतचालुकीगङ्ग बंगै कादशपुत्रमोहन बंश्यमोहनोत्त द्वितीय भेदभावितासूचन खिलनव बंग पुत्रबाल्यानूढत्वतनुत्यजन पृथ्वीराजबंशीयजैत्रराज्यरणस्तम्भराज्यसमासादन स्वानुजरणधीरार्थछाणिदुर्गप्रदान प्राप्तराज्यहतापराधिबणिक्टोडरमल्ल हम्मीरदेवसाधिकारदानद्बणिक्पुत्रत्रय समाश्वासन कुमारदेवसिंह पाणिपी-डनपूर्वहड्डाधिराजबङ्गदेव पुरमाणिडल प्रभृतिचतुर्विंशति पुर दुर्ग समा-क्रमण बुन्दीप्रमुखद्वादश ग्रामपतिमीणोपटंकान्त्य जजैत्रपुत्रस्वप्रधानगो-लबाल चाहुवाणयशोराजपुत्रीपाणिग्रहणकांक्षण।

राणा लक्ष्मणसिंह के उमराव होकर और उनके बान्धव की पुत्री सुप्रियकारदेवी को विवाह कर बङ्गदेव के नवम पुत्र हिंगुलु का आगे होने वाले बादशाह अलाउद्दीन के युद्ध में मरने की सूचना करना, उस वृत्तान्त के साक्षीभूत (जमानत देने वाले) पहले बने हुए महल के चिह्न चितौड़ पर कहना, गङ्गा नामक सोलंखिनी को विवाह कर बङ्गदेव के ग्यारहवें पुत्र मोहन के वंश के मोहनोत्त नाम से आगे होने वाले समय में हाडा क्षत्रियों में दूसरा भेद होने की सूचना करना, बङ्गदेव के बाकी के नव पुत्रों का बिना विवाह के बालक अवस्था में शरीर छोड़ना, पृथ्वीराज के वंश के जैत्रराज का रणथंभोर का राज्य लेना, अपने छोटे भाई धार के अर्थ छाणीगढ़ देना, राज्य पाकर अपराधी बनिये टोडरमल्ल को मारकर हम्मीरदेव का टोडरमल्ल के तीन पुत्रों को टोडरमल्ल का अधिकार देकर विश्वास में लेना, कुमार देवसिंह के विवाह से पहले हड्डाधिराज बंगदेव का पुरमांडल आदि चौबीस नगर और गढ़ों का लेना, बूंदी और बारह ग्रामों के पति मीणा पदवी वाले चाण्डाल जैता के पुत्र अपने प्रधान गोलवाल शाखा के चहुवान जसराज की पुत्रियों से विवाह करने की इच्छा गुप्त रखना।

प्रच्छन्नबम्बावदागतयशोराजद्वारहठहरसूरद्वारराजकुमारदेवसिंह कर्णतदृत्तविज्ञापन रहःसमाहूतष्टष्टान्त्यजबलयशोराजखिलगंगदेवत्र-स्ता।न्त्यजविव्हलीभावकथन ज्ञापितसंकेतप्रस्थापितयशोराजहूत-बान्धबदुःखापनिनीषुकापथपथिकान्त्यजजिघांसुकृताच्छोट-नव्याजकुमारबुन्द्यागमन तत्रत्यसत्कृतनिरर्गलीकारितकपाटदेवसिंह प्राप्तपलायितगङ्गदेवपृष्ठधावन निमग्ननिष्कासितबिश्वस्तप्रत्यागत ङ्गदेव

प्रत्यभिजातकुमार संलापन समुपालब्धप्रतिगामितगंगकुमारप्रत्यागमन प्रगुणीकृतनानोपायनबुन्दीप्रजासहितान्त्यजकृतविजयप्रत्यागतकुमार-वर्द्धापनं पञ्चत्रिंशो मयूखः ॥३५॥ आदितश्चतुश्चत्वारिंशदुत्त-रशततमः ॥१४४॥

बम्बावदा गए हुए जशराज का बारहठ (चारण) हरसूर द्वारा राजकुमार देवसिंह के कानों में उस वृत्तान्त की जानकारी डालना, एकान्त में बुलाये हुए यशराज से चाण्डालों का बल पूछने पर गङ्गदेव से त्रास पाये हुए सब अन्त्यजों का विह्वल होने का कहना, सङ्केत बताकर जसराज को वापस स्थापन करके जसराज के बुलाये हुए, भाई के दुख को ग्रहण करने वाले और कुमार्ग में जाने वाले चाण्डालों को मारने की इच्छा वाले कुमार देवसिंह का शिकार के बहाने बूंदी आना, वहाँ सत्कार पाकर किवाड़ों को खुले रखकर देवसिंह का भागे हुए गङ्गदेव से कुलवान् कुमार देवसिंह का बात करना, उलाहना देकर गंगदेव को वापस भेज कर कुमार का लौटना, अनेक उपायों से सीधे करके बूंदी की प्रजा सहित चण्डालों पर विजय प्राप्त करके वापस आकर कुमार का बूंदी के राज को बढाने का पैंतीसवाँ मयूख समाप्त हुआ। और आदि से एक सौ चवालीस मयूख हुए।

प्रायो मरुदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

दोहा

बिरचे एम बधावणों, आणि कंवर अति आघ।
मीणां कहियो अतुल मह, बचिया तो बळ बाघ॥१॥

स्वागत में बिछ-बिछ जाते हुए राजकुमार देवसिंह को बूंदी निवासी पूरे आवभगत के साथ नगर में ले कर आए। मीणाओं ने कहा कि आज का शुभ दिन बड़े उत्साह का दिन है। हे सिंह! हम सभी तुम्हारे बल पर सुरक्षित बचे हैं।

सचरणगद्यम्

दूजे दिन महिमानी री गोठि मैं मीणां रै सुणतां जसराज कहियो म्हांरी पुत्रियां रै साथ जैतो आपरा पुत्रां रो संबंध कियो चाहे सो राजकुमार रा आसय मैं तुलै तो कन्याकाळरो अतिक्रम जाणि अठै ही बिबाह करूं।

सो स्वामी रै सम्मत हुवां तो इसड़ो कवण सो मोनूं जाति रै

बहिर्गत करै इम कारण एक आपरो ही आतंक आणि डरूं।

कुमार कहियो आगैं भी दहिया जसराज ईंदा बळकरण गाजी नेतसिंह बीर सहंसमल्ल प्रमुख तिका ही रजपूतां पंजाब रा मेर कुलमी जाट जवन जामाता किया।

अर सोढा प्रमार अजे भी सिंधुदेस रा जवनां नूं पुत्रियां बिबाहै जिके पण जाति रै बहिर्गत किसड़ै नरेस करि दिया॥२॥

दूसरे दिन मेहमान के आदर में आयोजित महफिल में गोलवाल जसराज ने मीणा लोगों को सुनाते हुए कहा कि हे कुमार! मेरी पुत्रियों के साथ यह जैता मीणा अपने पुत्रों की सगाई करना चाहता है! यदि राजकुमार इसे ठीक मान कर आदेश करें तो मैं अपनी सुपुत्रियों के कन्याकाल (पहले दस वर्ष की अवस्था में लड़की को ब्याहने योग्य मानते थे और इससे अधिक उम्र को कन्याकाल का उल्लंघन मानते थे) का उल्लंघन जान कर ही विवाह करूं। यदि स्वामी की सहमति इसमें मिल जाए तो फिर ऐसा कौन है जो मुझे इस कारण से जातिच्युत करने की हिमाकत करे। मुझे यदि किसी का डर है तो मात्र अपने मालिक का, अन्य किसी के कुछ कहने का मुझे भय नहीं है। यह सुन कर राजकुमार देव ने कहा कि जसराज! पूर्व में भी दहिया जसराज ईंदा बलकरण, गाजी नेतसिंह, वीर संहसमल आदि कितने ही राजपूतों ने पंजाब के मेर, कुलमी जाट और यहाँ तक कि यवनों को भी अपना जामाता बनाया और सोढ़ा प्रमार तो अभी तक भी सिंध प्रांत के यवनों से अपनी बेटियाँ ब्याहते हैं। वे भी तो जाति में हैं उन्हें किस राजा ने अपने समाज से बहिष्कृत किया है।

इण कारण जिण रै जमी होइ सोही सूरबीर ठाकुर कहावै।

परंतु जैतो अब ही सों मीणां री चाल छोडि रजपूता री राह में रहण रो लेख करि सूंपै तो यो संबंध करण मैं आवै।

फेर भी कोई काळ में न्हाण संझा छोडि अखज्ज खाई मीणां नूं जळ जीमण चुवाइ नात्रो कराई नारियां नूं पड़दा बिहूण राखसी तो म्हारा कुळ री पुत्रियां समेत हणिया जावसी।

अर नहीं जैरैं दहियां ईंदा गाजियां बीरा सोढां रा संबंधियां समान एक जैता रो कुटुंब भी म्हारा कुळ रो संबंधी होई रजपूतां री राह में खटावसी॥३॥

इसीलिए जिसके पास जमीन-जागीर होगी वही शूरवीर ठाकुर कहलाएगा पर ये जैता यदि अभी से मीणाओं के अपने रिवाजों को छोड़ कर राजपूतों के मार्ग पर चलने का इकरार लिख दे तो यह सगाई हो सकती है। इसके लिख कर इकरार करने के बाद यदि इसके वंश में कोई भविष्य मैं स्नान, संध्या आदि छोड़ कर अखज (गो मांस) खाए अथवा मीणाओं के घर का खाए, पानी पीये, नाता (जीवित पति के रहते स्त्री का किसी दूसरे का घर बसाना) करे, अपनी स्त्रियों को पर्दे से बाहर रखे, तो मेरे कुल की पुत्रियों सहित इसके कुटुम्बी मारे जाएँगे। यदि नहीं तो फिर दहियों, ईंदों, गाजियों, बीरों, सोढ़ों के सम्बन्धियों की तरह एक इस जैता का कुटुम्ब भी हमारे कुल का समधी हो कर राजपूतों की लीक में समा जाएगा अर्थात् चल जाएगा।

म्हारै पण कन्या नहीं जिण थी म्हांरो धन लगाइ भाई जसराजरी पुत्रियां रा कन्यादान रो फळ लेण री म्हे हीज बिचारी।

अर बूंदी रा ही अमल मैं जैतो कहै जिण ठाम सामग्री रा संचय करि बरात बुलावण री धारी।

देवसिंह रो इसड़ो हुकम सुणतां ही गंवारां जाणियो कहिया जिकां दहियादिकां रा संबंधियां जिम म्हानूं संबंधी करण रो राजकुमार रा मन में निश्चय थियो तो म्हे तो आज ही सों मीणां री राह छोडि अधीस रा उपदेस मैं रहणों अंगीकार कीधो।

इसडो सम्मत करि काळ रा खैंचियां प्रेतपति री पुरी रा पाहुणां होइ हुकम रै प्रमाण तत्काळ ही लेख करि झिलाइ दीधो।।४।।

मेरे कोई पुत्री नहीं इससे मैंने यह निश्चय किया है कि विवाह का सारा खर्च क्यों न मैं वहन कर कन्यादान का पुण्य प्राप्त करूँ। इसलिए बूंदी की सीमा में जहाँ जैता कहे उसी जगह विवाह की सामग्री का संचय कर वहीं बारात की व्यवस्था की जाए। राजकुमार देवसिंह की ऐसी बात सुनते ही मूर्खों ने सोचा कि जैसा इन्होंने कहा कि दहिया आदि के सम्बन्धियों की तरह तो इसका अर्थ यह है कि कुमार के मन में हमें भी संबंधी बनाने की बात है। मीणाओं ने समवेत स्वर में कहा कि हमने अभी से मीणाओं के रीति-रिवाज छोड़े। हमने आज ही से कुमार के आदेशानुसार आचरण करना स्वीकार किया। इस तरह की राय प्रकट कर काल के खींचे उन्होंने यमपुरी

के मेहमान हो कर राजकुमार के निर्देशानुसार तत्काल ही जैसा कहा गया वैसा इकरार लिख कर दे दिया।

जैत कहियो कोणप कोण मैं अठा थी एक जोजन अचळ री उपत्यका रै आधार उपबसथ ऊमरथूणों मंडप रो मकान मरजी मैं मानियो जाइ तो उठै रहियां बंबावदा थी उपयम रा उपकरण रो आवणों भी सुगम रहियो।

सोही स्वीकार करि गोळवाळ री दो ही दुहितं नूं साथ लेर राजकुमार देवसिंह ऊमरथूणैं आइ पिता हूँ प्रच्छन्न आपरी प्राणप्रिया छोटी कुमराणी गोड़ि मदनावती नूं बुलाई अनेक उचित बाड़ा बणाइ आपरा अमात्य नूं बंबावदै बर्णदूत देर उपयम रै उचित उपहार एकठो कराई लग्न पूछियो जठै नाम करि देल्है द्विज गणकराज दाधीच व्यास इण रीति कहियो।

लग्न तो एक ही मास रै अनंतर आषाढ कृष्ण नवमी रो ही भलो परंतु सगोत्र री कन्या मीणा नूं देण मैं लग्न रो बिचार किसड़ो कहावै। रजपूती पाताळ मैं गई जिणरो अनुताप आपैर बदळै ओरा नूं आवै॥५॥

तब राजकुमार देवसिंह ने सुझाव दिया कि यहाँ से दक्षिण दिशा में बारह कोस दूर वाले पर्वत की तलहटी में बसा हुआ गाँव ऊमरथूणा विवाह मंडप के लिए उपयुक्त रहेगा। यदि सभी की राय हो तो यह स्थान ऐसा है जहाँ बंबावदा से विवाह सामग्री भी आसानी से लाई जा सकती है। जब मीणाओं ने कुमार का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया तब गोलवाल जसराज की दोनों पुत्रियों को अपने साथ ले कर राजकुमार देवसिंह ऊमरथूणा आया। यहाँ आ कर उसने अपने पिता से चुपके अपनी प्राणप्रिया छोटी गौड़ कुँवरानी मदनावती को बुला भेजा, फिर उसने इस गाँव में कई बाड़े बनवाए। इसके बाद बंबावदा पत्र लिख कर अपने अमात्य से विवाह के लिए सामग्री मँगवाई। फिर कुमार ने देल्हा नामक एक ब्राह्मण ज्योतिषी से लग्न निकालने को कहा। इस पर उस दाधीच व्यास देल्हा ब्राह्मण ने कहा कि लग्न तो एक माह के बाद ही आषाढ़ माह के कृष्ण पक्ष की नवमी के श्रेष्ठ है पर स्वगोत्रीय कन्याओं को मीणाओं के घर देने में भला लग्न निकालने की कहाँ जरूरत है पर यह जो राजपूती इस तरह रसातल में जा रही है इसका आपको नहीं अन्य लोगों को पछतावा है।

षट्पात्

बसु नव बारह बरस समय बिक्रम सक संगत।
सुचि नवमी कुज असित मान बसु चउ तेरह मत।
साठि गगन पूषा भ बीर सत्रह सोभन बणि।
तैतिल सोलह साठि भला कवि गुरु नअस्त भणि।
लत्ता दि दोस दस म लखो अल्प निबळ सोपण अठै।
बदियो द्विजेण सब सुभ बिफळ, कुळ दूलह समता कठै ॥६॥

विक्रम संवत् के वर्ष बारह सौ अठानवें वर्ष के आषाढ़ माह के कृष्ण पक्ष की नवमी तिथि को मंगलवार के दिन अड़तालीस घड़ी तेरह पल में रेवती नक्षत्र, साठ घड़ी पूर्ण पल, शोभन योग, बावन घड़ी सत्रह पल, तैतिल कर्म सोलह घड़ी साठ पल (यहाँ साठ पल लिखना असंगत है क्योंकि साठ पल की एक घड़ी हो जाती है कदाचित यहाँ उनसठ पल होंगे) और इस समय में शुक्र और बृहस्पति अस्त नहीं है। यह मुहूर्त अच्छा कहा गया है क्योंकि जब शुक्र और बृहस्पति अस्त होते हैं तब सामान्यत: विवाह नहीं होते। इस मुहूर्त में लता आदि दसों दोष यथा, लता, पात, युति, बंध, यामित्र, बुधपंचक, एकार्गल, उपग्रह, क्रांतिसाम्य और दग्धतिथि भी नहीं है। (ये दस दोष विवाह में वर्जित हैं फिर यदि आवश्यक हो तो तीन दोष टाल कर सात दोषों के रहते विवाह कर दिया जाता है। यहाँ इन दस से न्यून दोष है अर्थात् एक दो दोष है) जो दोष है वे भी यहाँ निर्बल हैं परन्तु उस ज्योतिषी ने कहा कि ये सारे शुभ योग निष्फल है क्योंकि यहाँ वर पक्ष बराबरी का नहीं है अर्थात् वर पक्ष शूद्र है और कन्या पक्ष क्षत्रिय है।

सचरणगद्यम्

हड्डाधिराज बंगदेव भी यो उदंत जाणि कुमार नूं बडै बेग बर्णदूत दियो।

तिणमें गोळवाळ री कन्या अंत्यजां नूं दीधां थांरो पण बास म्हांरी सीमां रै बहिर्मूत थियो।

जैरं दाधीच व्यास देल्हा नूं तत्व समुझाइ सामोर बारहठ हरसूर नूं बंबावदै भेजि आपरो हार्द पिता नूं जणायो।

अर गुजरात छूटां केड़ै सोलंखियां री केही पीढी अजमेरा में रहियां

पछै उणां रै पाटवी गोइंदराज इण ही समय रै समीप टोडा रा अधीस गोळवाळ चहुवाण सातू पातू दो ही भाइयां नूं मारि टोडा रो राजा हुवो। जिकण नूं मीणा रा मारणरो निश्चय जणाइ उणरो बडो पुत्र कुंभराज तिणहूँ छोटो कन्हड़ यां दो ही बंधवा नूं बडी बरात रै साथ बरण नूं बुलाई मीणां रै मावण जिसड़ो एक बाडो जुदो ही बणायो।।७।।

हाडा राजा बंगदेव को भी जव इस विवाह की सूचना मिली तो उन्होंने पत्र लिख कर तुरन्त दूत के हाथों कुमार को भिजवाया। इस पत्र में लिखा था कि गोलवाल चहुवानों की कन्या तू अंत्यजों को दिलवा रहा है इसलिए आज से तेरा निवास मेरे राज्य की सीमा से बाहर रहेगा। पत्र पढ़ कर कुमार ने दाधीच व्यास देल्हा को मर्म की बात समझाई अर्थात् भेद बताया और सामोर चारण हरसूर को बंबावदा भेज कर पिता तक अपना अभिप्राय पहुँचाया' गुजरात छूट जाने के बाद सोलंकियों की कई पीढ़ियाँ अजमेर प्रांत में रही। यहाँ रहते हुए उनके पाटवी गोविन्दराज ने इसी समय में टोडा के राजा गोलवाल चहुवान सातू और उसके भाई पातू दोनों को मार कर टोडा हथिया लिया और स्वयं वहाँ का राजा बन बैठा। इस गोविन्दराज को मीणा लोगों को मारने की योजना बता कर, उसके वड़े पुत्र कुंभराज और छोटे बेटे कन्हड़ इन दोनों भाइयों की बड़ी बारात के साथ विवाह के लिए आने का कुमार देव ने निमंत्रण भिजवाया। फिर उसने मीणा लोगों को ठहराने के लिए एक नया वाड़ा अलग से बनवाया।

गोइंदराज कहाई म्हे गोळवाळां नूं मारि टोडो लाधो अर आप गोळवाळ री पुत्रियां नूं बिबाहण रै काज म्हारा कंवरां नूं तेड़ो जठै सत्रुता री संका हुवै इण कारण आपरा सामोर बारहठ हरसूर नूं प्रतिभ करि अठै भेजि उणरा धर्म रो बचन दिवाइ आपरी पुत्रियां करि बिबाहो जरैं बरात आवै।

सोही स्वीकार करि कुंभराज कन्हड़ दो ही कुमग नूं बुलाया जाणि जसराज भी याही अरज कीधी जठै कुमार कहियो मीणां ही प्रसभ पूर्बक बळ ही सों बर बणता जिण बीच टोडा रा राजा समता रा संबंधी सोलंकी रा सुत सत्रु भी उचित ही खटावै।

इसड़ी कहि अंत्यजारे उचित बाड़ा मैं बारूद बिछाई जिकण मैं बरात हूँ एक प्रहर पहली संबंधियां समेत समग्र ही मीणां नूं बुलाई आसव मैं अति मत्त कीधा।

अर बरात न पूगै जिण पहली बारूद में दमंग देर उडाई दीधा ॥८ ॥

कुमार देव के निमंत्रण के प्रत्युत्तर में टोडा के राजा गोविन्दराज सोलंकी ने कहलवाया कि मैंने गोलवाल चहुवानों को मार कर टोडा हथियाया है और आप अब गोलवाल चहुवान ही की पुत्रियों से विवाह करने मेरे पुत्रों को बुला रहे हैं। हमें इसमें शत्रुघात की गंध आती है अर्थात् हमें इसमें संदेह है इसलिए आप अपने चारण सामोर हरसूर को जामिन (जमानत देने वाला) बना कर यहाँ भेजें और उससे उसके धर्म का वास्ता दिलवाएँ अर्थात् वह आ कर यहाँ ऐसा वचन दे। दूसरी बात यह कि आप उन कन्याओं को अपनी पुत्रियां बना कर विवाह करें। यदि उपरोक्त शर्तें मंजूर हो तो बारात आ सकती है अन्यथा नहीं। सोलंकी राजा गोविन्दराज की शर्तें स्वीकार कर कुमार ने कुंभराज और कन्हड़ दोनों को विवाह हेतु बुलवाया। यह जान कर जसराज ने भी यही निवेदन किया कि जहाँ आप कहें वहाँ मुझे मंजूर है। जहाँ मीणा हठपूर्वक अपने बल का प्रदर्शन कर मेरी पुत्रियों के दूल्हे बनते वहाँ उनकी जगह अच्छा है कि लाख शत्रु हों पर टोडा वाले बराबरी के समधी सोलंकियों के पुत्र दुल्हा बनें। मुझे भला यह क्यों अस्वीकार्य होगा। इसके बाद हाडा कुमार ने उस नये बने हुए बड़े बाड़े में जिसमें उन अंत्यजों को ठहराना तय था बारूद की परत बिछवाई फिर इसी बाड़े में बारात आने के समय से एक प्रहर पहले सारे संबंधियों सहित मीणाओं को बुलाया और उन्हें खूब शराब पिला कर मदमस्त कर दिया। तत्पश्चात बारात नहीं पहुँची उससे पहले ही बारूद में आग लगा कर सभी को उड़ा दिया।

बरात रा समाधान पर आपरा सुभट सचिव राखि तत्काळ ही **बूंदी आई अमल कीधो।**

जठै आपरो थाणों राखि पाछो ऊमरथूणें जाइ आषाढ कृष्ण नवमी कुज बार रा लग्न पर गोळवाळ री दो ही पुत्रियां रो बिबाह चालुकराज रा दो ही कंवरां रै साथ कर दीधो।

आपरी पुत्रियां रै समान धन भूषण बस्त्र दास दासी गज बाजि सिबिका रथ प्रमुख सामग्री देर चौथे दिन बरातनूं बिदा करि फेर बूंदी आयो।

अर निदाघकाळरा पवन रै प्रमाण सपूती रो सुजस चो तरफ ही **चलायो ॥९ ॥**

बारात के स्वागत के लिए अपने सामन्तों, प्रधानों को तैनात कर पीछे से कुमार देवसिंह ने तुरन्त बूंदी जा कर उसे अपने अधिकार में कर लिया। बूंदी पर अधिकार के बाद वहाँ अपना थाना स्थापित कर कुमार वापस ऊमरथूणा गाँव में आया और आषाढ़ माह के कृष्ण पक्ष की नवमी तिथि को मंगलवार के दिन गोलवाल जसराज की दोनों पुत्रियों का विवाह टोडा के चालुक्यराज के दोनों राजकुमारों के साथ संपन्न किया। अपनी खुद की बेटियों की तरह विवाह के अवसर पर दहेज रूप में धन, आभूषण, वस्त्र, दास-दासियाँ, हाथी, घोड़े, पालकी, रथ आदि सामग्री दी। इस तरह वह चौथे दिन बारात को विदा कर वापस बूंदी आया। कुमार ने ऐसा कर ग्रीष्म ऋतु के तेज पवन की तरह अपनी कीर्ति सर्वत्र फैलाई।

दोहा

गज नव बारह अब्द गत, सक बिक्रम संबंध।
दिन नवमी आषाढ बदि, मीणां तेड़ि मदंध॥१०॥
मारि सकल इम पाइ मधु, राखि सनातन राह।
धकि लीधी बूंदी धरा, देवै कंवर दुबाह॥११॥

विक्रमी संवत् बारह सौ अठानवे के वर्ष में आषाढ़ कृष्णा नवमी, मंगलवार के दिन मदांध मीणाओं को बुला कर कुमार ने सभी को शराब पिलवा कर मदहोशावस्था में मरवा दिया। इस तरह कुमार देव ने अपने पूर्वजों की राह पर चल कर कुपित हो कर बूंदी का आधिपत्य लिया। अपने दोनों हाथों से शस्त्र चलाने वाले हाडा वीर देव सिंह ने अपने पूर्वजों की वीरता की परम्परा को बनाए रखा।

सचरणगद्यम्

अठै अस्थिपाल रा अन्वय मैं गंभीर थीं दसमी पीढी राजकुमार देवसिंह हुवो जिकण चालुक बंस मैं भोलारायभीम थी तेबीसमी पीढी गोइंदराज टोडा रो अधीस हुवो जिकण रा अठारह अंगजां मैं बडा ही बडा कुंभराज कन्हड़ दो ही बंधवां नूं आपरा सगोत्र गोळवाळ जसराज री दो ही पुत्रियां बिबाही इण कारण मागधलोकां रा घणां ग्रंथां मैं एक ही लेख जाणि सोही प्रमाण इण ग्रंथ में राखियो परंतु पीढियां री बिसेस ही विसमता हूँ बिरोध आवै।

जठै और कोई गति न जाणियां चालुक बंस री तेवीस ही पीढियां

मैं घणां रै अंकस्थ पुत्र हुवा होइ इसड़ा ही संभव रा बिचार थी खटावै।

इण रीति बूंदी लीधी जठै पहिला स्थानां मैं गोल्हाबाई डुमड़बाइ दोइ निवाण चाळकदेवी खेड़ादेवी अर जठै तारागढ़ हुवो जिण अद्रि पर चामुंडा ए तीन ही देबियां रा स्थान सारणेश्वर सिव को मंदिर छोटे तड़ाग जैतसागर ए सात ही मुख्य आऊठाण पाया।

अर ओर सब हाडां रो राज हुवां पछैं आप आपरा बारा मैं आपआप रा धणियां बणाया॥१२॥

चहुवानराज अस्थिपाल के वंश में चहुवान गंभीर से दसवीं पीढ़ी में राजकुमार देवसिंह हुआ जिसने चालुक्य वंश के भोलाराय भीम से तेईसवीं पीढ़ी में हुए गोविन्दराज जो टोडा का राजा था जिसके अठारह पुत्रों में सबसे बड़े कुंभराज और कन्हड़ दोनों भाइयों को अपने स्वगोत्री गोलवाल जसराज की दोनों पुत्रियाँ ब्याहीं। इस कारण से मागध जनों (बही भाटों) की पोथियों में एक जैसा यही लेख मिलता है। उसी के आधार पर मैंने (ग्रंथकर्ता सूर्यमल) भी इस वृत्तांत को जस का तस रखा है पर एक शंका उपजती है यहाँ कि पीढ़ियों की शृंखला क्या इसी तरह चली थी क्या? इसे जानने का दूसरा कोई उपाय नहीं है कि चालुक्य वंश की तेईस पीढ़ियों में कई एक गोद लिये हुए पुत्र भी होंगे। ऐसा होना संभव है पर जानकारी की न्यूनता की बाधा है। कुमार देव ने ऐसी बूंदी पर अपना आधिपत्य जमाया जहाँ पुराने निर्माणों के नाम पर गोल्हाबाव, डूमड़ाबाव ये दो तो पानी के स्रोत थे। इनके अतिरिक्त चालकदेवी, खेड़ा देवी और जहाँ तारागढ़ है उस पहाड़ी पर चामुंडा देवी का स्थान था। इस तरह तीन देवियों के स्थान (मंदिर) बने हुए थे। इनके अलावा एक छोटा सा तालाब जैतसागर भी बना हुआ था। कुल मिला कर मुख्य ये सात पुराने निर्माण वहाँ अवस्थित थे। इन सात निर्माणों के सिवाय सारे निर्माण बाद के बने हुए हैं। हाडाओं का अधिकार बूंदी पर हो जाने के बाद अपने-अपने समय में अलग-अलग राजाओं ने ये निर्माण करवाए।

राजकुमार देवसिंह भी ऊमरथूणा री ऊगमणी सीमा पर पिता रा नाम थी बंगेश्वरी देवी को मंदिर बणाइ प्रतिष्ठा पूर्बक प्रतिमा पधराइ तेथ ही बापी बांगाबाइ बिरचाइ बूंदी आपरो थाणों राखि बंबावदै जाइ हड्डाधिराज बंगदेव नूं प्रणाम कीधो।

अर नरेन्द्र भी सुपुत्र नूं सुजस रै साथ उर थी लगाइ लीधो।

तदनंतर पिता रा निदेस रै प्रमाण पात्रलोकां रो पूंतारियो उरस हूँ ओघसतो राजकुमार वळे बूंदी आयो।

अर रत्नगढ़ बींझोली भैंसरोड़ तीन ही दुर्गां थी आपरी कितीक सेना बुलाइ बंबावदा बर रै बामभाग मैं बिराजै जिसड़ी बींदणी बूंदी नूं बणावण रै काज बैरियां री बसुधा रूप श्रृंगार री सामग्री लेण नूं चलायो॥१३॥

हाडा कुमार देव सिंह ने भी ऊमरथूणा गाँव की पूर्व दिशा में अपने पिता के नाम से बंगेश्वरी देवी का मन्दिर बनवाया और उसमें विधि-विधान पूर्वक देवी मूर्ति की प्रतिष्ठा की। इसके पास की बांगाबाव भी बनवा कर बूंदी में अपना स्थाई थाना स्थापित किया फिर बंबावदा आ कर हाडा राजा बंगदेव को प्रणाम किया। अपने पुत्र का सुयश सुन कर हाडा राजा बंगदेव ने उठ कर उसे अपने गले से लगाया। इसके बाद कुमार देवसिंह अपने पिता की आज्ञा ले कर चारणों का विरुदाया हुआ, आकाश से अपना मस्तक सटाता वापस बूंदी आया। यहाँ आ कर उसने रत्नगढ़, बींझोली और भैंसरोड़ गढ़ तीनों ही दुर्गों से अपनी सेना बुलवाई और बंबावदा के वाम भाग में बैठने योग्य बूंदी को दुल्हन बनाने के लिए शत्रुओं की भूमि रूप श्रृंगार की सामग्री जुटा कर लाने के लिए सेना का प्रयाण करवाया।

पहली रो प्रस्थान प्राची में ही करि खटपुर रा धणीं गोड़ गजमल्ल नूं गंजि पाटणि रा अधीस मोहिल मनोहरदास नूं मारि दो ही नैर आपरै बसीभूत किया।

अर गैणोली लाखैरी रा गोड़ां नूं गाहि हड्डाधिराज बंगदेव री आण चलाइ भरोसा रा सुभट सचिवां रै अधीन करि च्यारि ही ठाम थाणां थिर जमाइ दिया।

पहली लाखैरी सहर रै समीप गोबध रै निमित्त बंबावदा थी चलाइ दिल्ली रा अधीस सप्तम पातसाह नासुरुद्दीन महमूद रा भड़ां नूं भांजि चमू रा मालिक मुस्तुफाअली नूं मारि आपरा पितामह रो पितामह हड्डाधिराज कोल्हण खेत पड़ियो।

जिकण री छत्री रो प्रारंभ लगाइ उण ही अद्रि रो घाटो लांघि करउर नगर रै घेरो लगाइ प्राकार रै प्रमाण बरूथरो जाळ जड़ियो।

पहली हड्डाधिराज आनंदराज रा पट्टपकुमार हम्मीर रो पुत्र सुमेरू

बड़ीबेड़ी रा घमसाण थी कढियो।

जिको दिल्ली रा ही पटारो विश्वास पकड़ि चण्डासिराज रत्नसिंह कनैं रहियो।

जरैं छिद्र देखि दहिया रणधीर रै पुत्र लक्खधीर नैणवा नगर मैं कूदि हाडां रो थाणों भांजि उठा रो अधीस भाव पाछो गहियो जिकण रा बंस मैं इण समय नैणवा रो नरेस दहियो बळराज करउर रा अधीस आपरा बंधव दहिया जसकर्ण मैं भीड़ जाणि उणरो सहायक बणि आयो जठै राजकुमार देवसिंघ भी करउर सहर रै तीन हजार फोज रो घेरो राखि दोइ हजार बीरां थी दहिया बळराज नूं साम्हों झेलि ऊजळो लोह लायो॥१५॥

पहला प्रस्थान पूर्व दिशा में कर कुमार ने खटपुर के स्वामी गौड़ गजमल को हराया। इसके बाद पाटण के राजा मोहिल मनोहरदास को मार कर दोनों ही नगर खटपुर और पाटण पर अपना अधिकार किया। फिर गैणोली और लाखेरी के गौड़ों को मार कर इन दोनों गाँवों पर हाडा राजा बंगराज की आन फिराई अर्थात् अपने अधिकार में लिया। इसके बाद अपने सामन्त और सचिव को नियुक्त कर चारों जगह पर अपने थाने स्थापित किए पूर्व में इसी लाखेरी नगर के समीप गो वध को रोकने के निमित्त बंबावदा से चल कर जिसने दिल्ली के सातवें बादशाह नासुरुद्दीन महमूद के योद्धाओ को मार सेनापति मुस्तुफाअली को मारा। ऐसे अपने पितामह के पितामह हाडा राजा कोल्हण जो रणभूमि में मारे गए उनकी याद में कुमार देवसिंह ने छत्री बनवाने की नींव लगवाई। इसके बाद यहीं से पर्वत की अगली घाटी पार कर करउर नगर को सेना सहित जा घेरा। घेरा भी ऐसा कि जैसे शहर पनाह के बाहर सेना का जाल ही तान दिया हो। पूर्व समय में हाडा राजा आनन्दराज के पाटवी पुत्र हम्मीर का बेटा सुमेरू जो बड़ीबेड़ी वाले युद्ध से निकल कर गया था वह मन में दिल्ली का पट्टा मिलने की आशा से चहुवान राजा रत्नसिंह के आश्रय में रहा। उस समय इधर थोड़ी पोल देख कर दहिया रणधीर के पुत्र लखधीर ने नैणवा नगर पर हमला कर हाडाओं का थाना हटा दिया और स्वयं ने अपने नगर नैणवा का स्वामित्व लिया था। उसी लखधीर के वंश में इस समय नैणवा का राजा दहिया बलराज था। वह अपने बांधव करउर के राजा दहिया जसकर्ण पर संकट जान कर उसकी सहायता करने पहुँचा। आगे राजकुमार देवसिंह करउर शहर के चारों ओर अपने तीन हजार

योद्धाओं का घेरा डाले था। कुमार ने अपनी सेना के दो हजार योद्धाओं के साथ दहिया बलराज के सामने मुकाबला करने के लिए आ कर भीषण युद्ध में उजला लोह (प्रहार करने पर खड़ग पर रक्त न ठहरे उसे ऊजला लोह कहते हैं) चलाया।

रात्रि रा समय मैं अचाणक ऊपर पड़ि ग्राम बणसोली रै खेत बिजयरा बंब घुराइ पुळियार दहिया बळराज नूं नीठनीठ नैणवा नगर पूगण दीधो।

अर रजोगुण रा जोस मैं ऊफणतै कुमार पाछो आइ ततकाळ ही हल्लो करि दहिया जसकर्ण नूं मारि करउर मैं आपरो झंडो झुकाइ सत्रु रा स्त्रीजन नैणवा पुगाइ नरेस बंगदेव रो अमल कीधो।

इणतरह पूर्ब रा प्रस्थान मैं खटपुर पाटणि गैणोली लाखैरी करउर पाँचूं ही नगर परगणा सहित लेर राजकुमार देवसिंह बूंदी आयो।

अर इसड़ा सुपुत्र थी मिलण रै काज नरेस बंगदेव भी सूचना बिण अचाणक ही बंबावदा हूँ बूंदी चलायो ॥१६ ॥

रात्रि के समय अचानक धावा बोल कर बणसोली गाँव के पास हुई झड़प में विजय का डंका बजवा कर भगांड़े दहिया बलराज को बमुश्किल तमाम अपने नगर नैणवा तक जाने दिया। यही नहीं जोश में उफनते राजकुमार ने पलट कर आ तत्काल हमला कर दहिया जसकर्ण को मार करउर नगर पर अपना झंडा फहराया। इसके बाद शत्रु के परिजनों, स्त्रियों आदि को नैणवा नगर पहुँचाया और करउर पर राजा बंगदेव का आधिपत्य जमाया। इस प्रकार पूर्व दिशा के प्रयाण में खटपुर, पाटण, गैणोली, लाखैरी, करउर ये पाँचों ही नगर परगने सहित ले कर कुमार देवसिंह वापस बूंदी लौटा तब अपने ऐसे सपूत बेटे से मिलने के लिए राजा बंगदेव भी बिना सूचना के अचानक ही बंबावदा से बूंदी के लिए रवाना हुआ।

दोहा

ग्राम गुढा लग पूगतां, सुणे कंवर सब छोड़ि।
बिण बाहण बंगेश्वरी, देवी लग गो दोड़ि ॥२७॥

गाँव गुढ़ा तक अपने पिता का आगमन सुन कर राजकुमार देवसिंह ने अपना सारा कामकाज छोड़ दिया। वह उत्साह के अतिरेक में बंगेश्वरी देवी के मंदिर तक अपने राजा पिता की अगवानी में बिना ही वाहन दौड़ कर पहुँचा।

सचरणगद्यम्

मिळतां ही प्रणाम करि हाथ जोड़िया जठै नरेस भी नृजान ढबाइ कुळ रा दीपक असाधारण बल्लभ कुमार नूं उर थी लगायो।

अर बार बार सिराहि भोगां में आसक्त आलसी और अवनीसां रा आसय मैं सूतो बीररस जगायो।

उठै ही सुपुत्र रो बणायो बापी समेत आपरा अभिधान करि अंकित ईश्वरी रो अगार ईखि नृजान हूँ ऊतरि बेद री व्रज्या करि बंगेश्वरी रो अर्चन कियो।

अर एक ग्राम सहित अनेक द्रव्य रा संघात उपदा करि देवी रै चढाई कुमार रा जीतिया पाँचूं ही परगणां सहित बूंदी रो प्रांत कंवरपणां रा पट्टा थी बिसेस रीझ मैं राजकुमार नूं दियो॥१८॥

पिता से मिलते ही कुमार ने हाथ जोड़ कर प्रणाम किया, वहाँ राजा ने भी अपनी पालकी को रुकवा कर अपने कुलदीपक और असाधारण रूप से प्यारे बेटे को सीने से लगाया। जिससे भोगों के वशीभूत सोते हुए आलसी राजाओं में वीरता जगाने की प्रेरणा हुई अर्थात् पिता राजा ने अपने वीर पुत्र की वीरता को सराहा। इसके आगे राजा बंगदेव अपने पुत्र द्वारा निर्मित बावड़ी और पिता के नाम पर निर्मित देवी मन्दिर को देख कर अपनी पालकी से उतरा। उतर कर राजा ने वेद की चर्या (वेद विधि) से बंगेश्वरी देवी का पूजन किया। इस अवसर पर राजा बंगदेव ने एक गाँव की जागीर की आय सहित अन्य बहुत सारा द्रव्य देवी मंदिर में भेंट किया फिर अपने बेटे कुमार देवसिंह द्वारा जीते हुए पाँचों गाँवों को परगना सहित और साथ में बूंदी का कंवरपदे (कुमारों को दी जाने वाली जागीर) का पट्टा विशेष रूप से रीझ कर कुमार देवसिंह को प्रदान किया।

प्रायो ब्रजदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

दोहा

इम पहु बुंदिय आय किय, परिसर कटक प्रपात।
पानिप बिजय सुपुत्र के, अति अमोद उफनात॥१९॥
उदित रीझ माई न उर, प्रसरे उमंगि प्रवाह।
बरख्यो जिततित मुदिर बनि, बसु बिंदुन नरनाह॥२०॥

मागध हरि बंदिय मदन, आश्रित निज आकारि।
दोउ न लक्ख प्रसाद दिय, बैभव अधिक बढारि ॥२१ ॥

इस प्रकार हाडा बंगदेव (स्वामी) ने बूंदी आ कर पर्वत के समीप वाले झरने के पास वाली भूमि पर सेना सहित पड़ाव डाला और अपने वीर पुत्र के पराक्रम से प्राप्त यश के आनन्द में प्रफुल्लित हुआ। इस अवसर पर राजा के मन में उठी हुई रीझ मन में नहीं समाई और उमंग के साथ प्रवाह फैलाए ऐसा मेघ तुल्य बन कर राजा ने धन रूपी बूंदों की चारों ओर वर्षा की। हरि नामक बड़वा भाट और मदन नामक स्तुतिपाठ करने वाले भाट को बुला कर दोनों को एक-एक लाख पसाव (लाख रुपयों के मूल्य का उपहार जिसमें भूमि, आभूषण, घोड़ा आदि कई वस्तुएँ होती है) दे कर उनके वैभव को बढ़ाया।

षट्पात्

बुंदिय पुनि नृप बंग रीति नय दिवस पंच रहि।
व्यय दुलक्ख बसु बंटि द्विजन दव ओज दुजन दहि।
सुतहिं अप्पि हित सिक्ख बहुरि आयउ बंबावद।
रहि बुंदिय कुमरेस पिहुल पारिय हड्डुन हद।
गज गाम द्रविन अप्पन गहिर हेला बेल समुद्र हुव।
राजस उफान चाहत रहत भुग्गन रन परकीय भुव ॥२२ ॥

हाडा राजा बंगदेव नीतिपूर्वक पूरे पाँच दिन बूंदी में रहे इस बीच इनाम में खूब खर्च कर उन्होंने दो लाख रुपये ब्राह्मणों को दान दिए। इस प्रकार अपने प्रताप की अग्नि से राजा ने शत्रुओं को जलाया। इसके बाद अपने पुत्र कुमार देवसिंह को उसके हित की शिक्षा दे कर राजा वापस बंबावद लौटा। पीछे बूंदी में रहते हुए कुमार ने हाडाओं के राज्य की सीमा में बहुत श्री वृद्धि की और अपनी जागीर, हाथी और धन को भोगते हुए कुमार अपने लोगों के साथ समुद्र की लहर बन कर रहा (जो निर्बाध चलती है इस अर्थ में)। रजोगुण के उफान से उसके मन में सदा ही पराई भूमि को भोगने की इच्छा बलवती रही।

सुनिय बंग गय सबन देव कुमरहि रहि बुंदिय।
अवसर यह लखि अरिन कलह तिहिं हनन मंत्र किय।

पट्टनि मोहिल प्रथित हनिय पहिलें जु मनोहर।
भैसरोर भानेज हुतो वह सुजस समुद्धर।
जब बंगदेव मंडत बिजय रन संहरि चाचिक रतन।
लिय भैंसरोर रुचि खेल लगि प्रकटावत रिपु भीरुपन॥२३॥

राजा बंगदेव के बूंदी से चले जाने के बाद बूंदी में कुमार देवसिंह ही रह गया। यह अवसर देख कर उसके शत्रुओं ने राजकुमार को मारने की मंत्रणा की। राजा ने मोहिल वंश के क्षत्रिय प्रसिद्ध मनोहरदास को पाटण में मारा था। यश का उद्धार करने वाला भैंसरोड़ के राजा का भानजा था पर जब बंगदेव दिग्विजय करने को निकला तब चाचिक वंश के क्षत्रिय रत्नसिंह को युद्ध में मार कर उसने अपनी रूचि के अनुसार शत्रुओं को कायर सिद्ध कर सहज ही खेल-खेल में भैंसरोड़ को दबा लिया।

चाचिक हरि तब चकित तुमुल भय भैंसरोर तजि।
बन्यों सजव बसवान भजि रु मातुल अगार भजि।
मातुल तंहं महिपाल जेलपुर पति कुल जंगर।
मन उल्लसि जामेय पास रक्खिय नय तत्पर।
आतुर गुमाइ पट्टनि यहहु सल्ह मनोहरदास सुव।
पुर जेल पत्त संटन समय भंडहि होत बिहीन भुव॥२४॥

तब चाचिक वंश का हरि नामक क्षत्रिय इस भीषण संग्राम के भय से शीघ्र ही भैंसवाड़ा से भाग खड़ा हुआ। उसने जा कर अपने मामा के यहाँ शरण ली और वहीं मामा के घर ही बस गया। उसका मामा महिपाल जो जंगड़ कुल में उत्पन्न था और जेलपुर का शासक था। उसने भी मन को बड़ा बना कर नीति में तत्पर अपने भानजे को अपने पास रख लिया और मनोहरदास का पुत्र सल्ह कायरों की तरह पाटण नगर गँवा बैठा। इससे खीझा हुआ वह जेलपुर पहुँचा कि अपनी भूमि के जाने का बदला लेगा पर बिना भूमि के भांड से भला कोई बदला लिया जा सकता है? अर्थात् नहीं।

सम्मत किय तब सल्ह जनक मातुल हरि संजुत।
हड्डु बंग तुम पुहवि छिन्नि छिद्रन इन हुव उत।
दुसह कुमर तस देव प्रबल दब्बिय मम पट्टनि।
तुम हम बिनु भुव तुच्छ मंद हुव अहि कि हीनमनि।

तुम बंधु मम रु महिपाल तुम इष्ट गौड़ दहिया दुव हि।
जुरि इम समस्त इहिं काल जुरि धरनि लैहिं हनि अरि धुवहि ॥२५॥

तब सल्ह ने अपने पिता के मामा हरिसिंह के साथ मंत्रणा की कि हाडा राजा बंगदेव ने अवसर देख कर आपकी भूमि हथियाई है और वह अब यहाँ का राजा बन बैठा है। इसी तरह उसके वीर पुत्र देवसिंह ने अब मेरा पाटण नगर हड़प लिया। इससे हम दोनों जागीर विहीन हो गए हैं। हमारा हाल ठीक उस सर्प जैसा है जो अपनी मणि खो कर कांति रहित हो जाए। हम हतभागी और तुच्छ हो गए। इसलिए मेरे भाई तुम्हारा मामा महिपाल और तुम्हारी भलाई करने वाले गौड़ और दहिया दोनों ही मिल जाएँ तो इस बार हम सारे मिल कर युद्ध करें और शत्रु को मार कर निश्चय ही अपनी भूमि फिर से प्राप्त करें।

सल्ह रु हरि इम समुझि मंत्र महिपाल सहित सजि।
गौड दभिक बलि बुल्लि भये इक्कत सम्मत भजि।
गौड इक्क गजमल्ल पुत्र मंडन खटपुर पति।
लक्खेरिय गैनोलि हीनबल हरि मंत्रित मति।
करउर अधीस जसकर्ण सुव बल्लन दहिया लघु बयहि।
इम सब जुजुच्छु जुरि इक्क मन हंकिय हनन कुमार कहि ॥२६॥

हरि और सल्ह दोनों ने इस प्रकार की मंत्रणा कर महिपाल के साथ विचार विमर्श किया। उन्होंने गौड़ और दहिया को बुला कर उनसे भी मशविरा किया। खटपुर के स्वामी मंडन के पुत्र गौड़ गजमल के साथ लाखेरी, गैनोली के हीनबल पूर्व शासक हरि ने मंत्रणानुसार करउर के जसकर्ण के पुत्र बल्लन दहिया को जो कम उम्र का था को भी अपने साथ मिलाया। इसके बाद सभी युद्धोच्छुक वीर इकट्ठे हुए और उन्होंने कुमार देवसिंह के साथ युद्ध करने की ठानी।

मुक्तादाम

उतें महिपाल दबावन देस, रह्यो सचि जंगर जेलपुरेस।
सु हड्डुन के पहिले अरि सोधि, बन्यों मिलि जित्तनहार बिरोधि ॥२७॥

सज्यो हरि चाचिक हू तिहिं संग, रह्यो उत बीर रचावन रंग।
चले खिल देवकुमार हि चाहि, मलंगत बाजिन जंग उमाहि॥२८॥
बढे करि हड्डन भू दिस बाम, कुमार सुन्यों रन सत्रुन काम।
सु आवत मेझ नदी तट सीम, भिरयो चलि सम्मुह जुज्झन भीम॥२९॥
उतैं सुनि देव कुमारहिं आत, रुपे रिपु बानन बात रुकात।
हरी बल मंडन तीन हि गोर, जुरयो तिम मोहिल सल्ह सजोर॥३०॥
तथा दहिया भट बल्लन तत्थ, सबै इम हंकिय सम्मुह सत्थ।
यहै सुनि बंग हु हड्डु अधीस, सुपुत्र सहाय चल्यो तिन सीस॥३१॥
कियो नृप कर्मन नाम कुमार, उहां निज दुर्ग धरा रखवार।
इतैं चढिकैं दर कुंचन अप्प, दयो सुत देव सहाय सदप्प॥३२॥

जंगड़ कुल में उत्पन्न वह जेलपुर का स्वामी महिपाल अपने देश को फिर से दबाने के लिए सज्जित हो रहा था उसने हाडाओं के पुराने शत्रु खोजे और उनके साथ मिल कर वह सदा जीतने वाले अर्थात् बलवान शत्रु हाडा के विरुद को ललकारने की सोचने लगा। चाचिक वंशीय हरि उसे उपलब्ध हो गया जो स्वयं युद्धोत्सुक था। ये सारे मिल कर अपने घोड़े बढ़ा कर हाडा कुमार देवसिंह से भिड़ने चले। ये सभी हाडाओं की भूमि की पूर्व दिशा की ओर से चढ़े। जब कुमार ने सुना कि ये लोग युद्ध को उतावले हो रहे हैं तो वह भी अपने योद्धाओं को ले कर मेझा नदी के तट पर इन शत्रुओं से लड़ने को चल कर उनके सामने आया। जब इन शत्रुओं ने सुना कि कुमार देवसिंह सामने आ रहा है तो ये भी अपने बाणों से पवन रोकते हुए वहीं डट गए। हरि, बल, मंडन इन तीन गौड़ों के साथ चौथा मोहिल वंशीय सल्ह भी आ जुड़ा। इनके अतिरिक्त दहिया योद्धा बल्लन भी इनमें आ मिला। फिर सारे इकट्ठे हो कर रणभूमि में बढ़े। जब इन पाँचों के सम्मिलित होने की खबर हाडा राजा बंगदेव को हुई तो वह भी अपनी सेना सज्जित कर अपने पुत्र की सहायता करने रवाना हुआ। पीछे से राजा अपने दूसरे कुमार कर्मन को दुर्ग की रखवाली करने को छोड़ गया। राजा बंगदेव ने दर कूच दर मंजिल बंबावदा से प्रयाण किया ताकि वह अपने पुत्र देव सिंह को युद्ध में वांछित मदद कर सके।

पिता सुत ज्यों दुव भद्द पयोद, मिले इम सत्रुन पैं अति मोद।
बढे उततैं अरि लै हयबग्ग, मिले दुव मेझ नदी तट मग्ग॥३३॥

तुली कर द्वै दल के तरवारि, रुची नन बान तुपक्कन रारि।
उतैं इतके उतके इत हंकि, झुके रनचित्रन रोचि झमंकि ॥३४॥
बहे असि ज्यों छुरिका तरबूज, तक्यो सु समै कुपिता कुतनूज।
भयो घमसान प्रलै घन भाव, झरे आसि ज्यों तरिता झमकाव ॥३५॥
जितैंतित खग्ग परैं कढि जात, प्रहारन धारन पार न पात।
समै तकि है ढिग मोहिल सल्ह, गही हयबग्ग उबारन गल्ह ॥३६॥

पिता राजा बंगदेव और पुत्र कुमार देवसिंह दोनों भाद्रपद माह के मेघों की घटा की तरह उमड़-उमड़ कर अपने शत्रुओं से मिलने सगर्व बढ़े। सामने से शत्रु दल ने भी अपने-अपने घोड़े बढाए। अन्तत: दोनों दल मेझा नदी के तट पर आमने सामने हुए। दोनों ही दलों ने अपनी तलवारें उठाईं। दोनों ही ओर के योद्धाओं को बाणों अथवा बन्दूकों से युद्ध करना नहीं जँचा। उधर वाले दल ने इस दल के वीरों पर और इधर वाले दल ने उधर के योद्धाओं पर आगे बढ़ कर आश्चर्यजनक प्रकाश वाली अर्थात् चमकदार तलवारों के वार आरंभ किये। तलवारों के प्रहार इस प्रकार सामने वालों को काटने लगे जैसे छुरी तरबूज को काटती है। इस माहोल में जिन्होंने युद्ध शुरु नहीं किया और खड़े-खड़े ताकते रहे वे या तो खोटे पिता थे अथवा कपूत पुत्र। दोनों ओर से भीषण संग्राम हुआ। तलवारों के प्रहार इस प्रकार थे मानों प्रलय के मेघों में बिजुरी चमक रही हो। तलवार जहाँ पर पड़ी वही कटने लगा और वह सपाक से निकलने लगी। इस प्रकार तलवारों की धार के प्रहारों का पार नहीं पाया जा सका। इसी समय अवसर पा कर भोहिल सल्ल ने अपना घोड़ा आगे बढ़ाया। उसने यह सोच कर घोड़े की लगाम को उठाया कि कहीं कीर्ति की बातों में वह छूट न जाए।

दई नृप के हय खंध प्रदेस, पर्यो हय और भयो तब पेस।
चढ्यो तिहिं बाजि बली चहुवान, करक्खिय बिज्जुव रूप कृपान ॥३७॥
दई नृप मोहिल के गल दोरि, गिर्यो रन सल्ह रिझावत गोरि।
फबावत बीरपनों हय फैंकि, चल्यो दहिया तब बल्लन चैंकि ॥३८॥
मिल्यो तहं मोहन बंग कुमार, भयो सुत तात बटावन भार।
दयो तिहिं मोहन को हय दारि, रची बिनु है सबया सह रारि ॥३९॥

भुवाल लख्यो सुत पैं अति भार, दई दहिया उर अंसउतार।
पर्यो रनमल्लन हू तजि प्रान, चढ्यो हय मोहन नाम सिचान॥४०॥

उसने आगे बढ़ कर राजा बंगदेव के घोड़े के कंधा प्रदेश पर अपनी तलवार का भरपूर वार किया। जिससे घोड़ा कट कर गिर पड़ा और राजा सामने नजर आया। राजा ने तुरन्त विद्युत की सी तेजी से अपनी तलवार म्यान से खिंची और वह उसके घोड़े की ओर झपटा। राजा ने दौड़ कर मोहिल सल्ल के गले पर अपनी तलवार का वार किया जिससे वह वीर अप्सरा को रिझाता हुआ रणभूमि में गिर पड़ा। तभी अपनी वीरता प्रदर्शित करने के लिए दहिया बल्लन ने कुपित हो कर अपने घोड़े को ऐड़ मारी उसे रोकने के लिए हाडा राजा बंगदेव का पुत्र मोहन सम्मुख आया मानों वह युद्ध में अपने पिता के हिस्से में आये युद्ध का भार बटाने बढ़ा हो। बल्लन ने अपनी तलवार के एक प्रहार से कुमार मोहन के घोड़े को काट गिराया तब वह बिना घोड़े के ही अपने हमउम्र योद्धा बल्लन से भिड़ गया पर जब राजा बंगदेव ने देखा कि दहिया बल्लन मेरे पुत्र पर भारी पड़ा रहा है तो उसने बढ़ कर अपनी तलवार के भरपूर प्रहार से शत्रु का कंधे से उदर तक का भाग काट डाला। इस वार से वह वीर अपने प्राण त्याग कर रण भूमि में गिरा। अपना घोड़ा मर जाने के बाद कुमार मोहन एक दूसरे सिंचाण (बाज) नामक घोड़े पर सवार हुआ।

महा बिजई इत देवकुमार, हठी बढि होरिय ज्यों हुरियार।
गरज्जत लै ढिग मंडन गोर, रिझावत संभु रची रन रोर॥४१॥
दु खग्ग सु मंडन के सहि देव, वहै हनि गोर लयो जयएव।
गये भजि द्वै हि हरी बल गोर, जयो रन हड्डुन अप्पन जोर॥४२॥
भयो इत बंग सुन्यों सुतभीर, बढे उत चाचिक जंगर बीर।
मिलाइ घनेंन हरी महिपाल, मचायउ बिप्लव उप्परमाल॥४३॥
लयो पुर जावद हू जिन लुट्टि, कियो बस अप्पन के पर कुट्टि।
थिरापति बुंदिय देव हिं थप्पि, मुर्यो उत बंग मुकामन मप्पि॥४४॥
जई दरकुंचन जावद जाइ, सबै अरि गंजि दये निकसाइ।
बली पुरजावद लै इम बंग, भयो निज नैर प्रविष्ट अभंग॥४५॥

इधर महावीर कुमार देव सिंह हठ कर युद्ध भूमि में शत्रु दल की ओर यों बढ़ा जैसे कोई होली पर फाग खेलने जा रहा हो। उसने गरज कर मंडन गौड़ को ललकारा और उसके साथ महादेव को रिझाने योग्य घोरतम युद्ध किया। मंडन गौड़ की तलवार के दो प्रहारों को स्वयं झेल कर अन्ततः उसने गौड़ को मार गिरा कर ही विजय प्राप्त की। मंडन गौड़ को यों मरा देख कर शेष योद्धा हरि और बलभद्र गौड़ के साथ रणभूमि से भाग खड़े हुए और हाडाओं ने अपने बल के सहारे युद्ध को जीत लिया। इधर हाडा राजा बंगदेव को अपने पुत्र की सहायता में लड़ते देख कर उधर से चाचिक वंशीय जंगड़ वीर भी बढ़े। उन्होंने महिपाल और हरि के साथ मिल कर ऊपरमाल नामक प्रांत में जो इस समय मेवाड़ में बिजौलिया के पट्टे में है उपद्रव मचाया। इसके बाद उन्होंने मिल कर जावद नामक नगर को लूट लिया और हाडाओं के अधिकार वाले इस नगर पर अपना अधिकार कर लिया। जब यह राजा बंगदेव ने सुना तो उसने बूंदी पर अपने पुत्र देवसिंह को स्थापित किया अर्थात् राजा बनाया और स्वयं सेना सहित मुड़ कर जावद की ओर बढ़ा। दर कूच दर मंजिल वह जावद पहुँचा और वहाँ पहुँच कर उसने अपने शत्रुओं को वहाँ से निकाल बाहर किया। इस प्रकार जावद नगर को पुनः अपने अधिकार में ले कर वह वीर अभंग राजा बंगदेव अपने नगर बंबावद लौटा।

षट्पात्

व्है बिजई इम हड्डु बंग आयउ बंबावद।
देव हिं बुंदिय रक्खि हेति बल किय सु कित्ति हद।
दत घायन उपचार बिरचि उल्लाघ कुमर बनि।
जनक चरन पुनि जाइ भयो वंदत अभीष्ट भनि।
किय भेट बिबिध उपदा कुमर जावत बिजय निमित्त जंहं।
बंगहु उदार गज गाम बसु किय बितरन बहु कविन कंहं ॥४६ ॥

हाडा राजा बंगदेव इस प्रकार अपनी जावद की चढ़ाई में विजयी हो कर अपने नगर आया। उसने देवसिंह को बूंदी का राज्य दे कर अपने शस्त्रों के बल पर अतुलनीय कीर्ति अर्जित की। उधर कुमार देवसिंह ने अपने घायल योद्धाओं का उपचार करवाया और उनके पूर्ण रूपेण स्वस्थ हो जाने

पर वह अपने पिता के पास बंबावदा आया। उसने अपने राजा पिता से वांछित फल देने वाले कह कर प्रणाम किया और इस अवसर पर उनके लिए लाये हुए उपहार भेंट किये। तब राजा बंगदेव ने इस अवसर पर जावद फतह हो जाने की खुशी में कवि, पंडितों को हाथी, गाँव की जागीर और धन का दान किया।

इतिश्री वंशभास्करे महाचम्पूके पूर्वायणे चतुर्थ राशौ बीतिहोत्र-चण्डासि बीज्यबर्णनबीजहड्डाधिराडस्थिपाल वंश्यानुवश्यविहितव्याख्यानावसरव्याहार्यबुन्दीबसुधाबासवबङ्गदेव तद्राजकुमारदेवसिंह चरितेगोलवाल चाहुवाणयशोराजकन्याद्वय परिणिनीष्वन्त्यजदुश्चरित-हड्डाधिराजकुमारदेवसिंह विज्ञापन विज्ञातान्त्यजाधर्मनिश्चितस्वभ्रंश्य-गूढनिर्णीतान्त्यजनाशमोहितमैणराजकुमारदेवसिंहाऽऽज्ञादापन मैणजैत्र-कथितस्थानागतसमाकारितकनिष्टपत्नीकप्रगुणीकृतबिबाहोचितोपहार-प्रच्छन्नोपयम निमित्तनिमन्त्रितटोडापतिचालुक्यराजगोबिन्दराजपुत्रद्वय समाऽऽव्यहन तत्सूचितगोलवाल बंशवैरस्थितिनिरसन स्वपुत्रीकृतसगोत्र-पुत्रीकप्रच्छन्नाकारितचालुकरूच्यद्वय कुमारबुन्दीशान्त्यजबर्गबिध्वंसन सगोत्रकन्याद्वय चालुककुमार द्वय बिबाहन तत्रत्यगजनिधिदृगिन्दु मित-प्रामारराड्बिक्रमसंबत्सूचन चालुक हड्ड कुलद्वय परपुरुषन्यौन्याऽऽधिक्य संशयसमाधान देवसिंह समाक्रान्तबुन्दीपूर्बप्रसिद्धस्थानबिंबेचन कुमार-तदूमरथूणाभिधनिवसथसीमपितृनामांकितबापिकोपेतसुमन्दिरबङ्गेश्व-रीदेबीप्रतिमाप्रतिष्टापन।

श्री वंशभास्कर महाचम्पू के पूर्वायण की चतुर्थ राशि में अग्निवंश चहुवान वंशवर्णन के कारण हड्डाधिराज अस्थिपाल के वंश और वंश की शाखाओं की कथा बताने के समय के वचनों में बूंदी के महेन्द्र बंगदेव के कुमार देवसिंह के चरित्र में गोलवाल चहुवाण जशराज की दो कन्याओं से विवाह करने की इच्छा वाले चाण्डालों के खोटे चरित्र की हड्डाधिराज के कुमार देवसिंह से सूचना करना, अन्त्यजों का अधर्म जानकर और निश्चय ही अपने वंश को भ्रष्ट होता जानकर गुप्त रीति से निर्णय करके अन्त्यज मीणों को मोहवश करके नाश करने की कुमार देवसिंह का आज्ञा देना, जैता मीणा के कहे हुए स्थान पर आकर छोटी स्त्री को बुलाकर, मीणों को ढूंढ़ कर विवाह के उचित सामग्री मँगाकर, विवाह के लिये न्योता देकर टोडा के

पति सोलंकियों के राजा गोविन्दराज के दो पुत्रों को बुलाना, उन की कही हुई गोलवाल वंश से वैर की कथा की स्थिति मिटाना, अपने गौत्र की पुत्रियों को अपनी बेटियाँ मानकर दो सोलंकी दूल्हों को गुप्त रूप से बुलाकर बूंदी के पति कुमार देवसिंह का चाण्डालों के समूह को मारना, अपने गोत्र की दोनों कन्याओं का सोलंकी दो कुमारों से विवाह करना, वहाँ पर प्रामारों के राजा विक्रम के बारह सौ अठ्यानवें के सम्वत् की सूचना करना, सोलंकी और हाडाओं के दोनों कुलों की पीढ़ियों के ज्यादा कमती होने के संदेह का समाधान करना, देवसिंह के बूंदी लेने से पहले के प्रसिद्ध स्थानों का विवेचन करना, कुमार का ऊमरथूणा नामक ग्राम की सीमा में पिता के नाम से चिह्न वाले बावड़ी सहित श्रेष्ठ मन्दिर में बङ्गेश्वरी देवी की प्रतिमा की प्रतिष्ठा करना।

गतबम्बाबदबन्दितवसृचरणबुन्दीप्रत्यागतराजकुमारदेवसिंह षटपुर पट्टणि गैणोली लक्खैरी कर्बुर पञ्च पुर दुर्गसमाक्रमण लक्खैरी-सीमपूर्बरणशय्यासुप्तस्वप्रपितामहकोल्हण छत्रिकानिर्माणप्रारम्भण कर्बुररणदभिकबलराजसगोत्रयशःकरणसहायीभवन प्रद्रावित-बलराजसमाक्रान्तकर्बुर बुन्द्यागतकुमारसम्मिल नार्थबुन्दीयिया-सुप्रस्थितहड्डाधिराजस्वपुत्रमार्गसम्मिलन सुपुत्रप्रतिष्ठापितस्वनामांकित-सुबापी मन्दिर देव्यर्चन बुन्दीपरिसरबिहितशिविरबङ्गदेव मागधहरि बन्दिमदनार्थलक्ष लक्ष बसुबितरणपुरस्सरद्विजसंदोहार्थद्रम्मलक्षद्वय समुत्सर्जन कुमारदेवसिंह पूर्वप्राप्तपितृ दत्तपृष्ठी कृतबन्दीप्रान्तनिवसन समुषितपञ्चाहोरात्रनृपबम्बावददुर्गप्रत्यागमन श्रुतप्रत्यागतबंग राजकुमार-देवसिंह जिंघासुभूताभियातिवर्गप्रातीच्यमार्गबुन्द्यागमन दक्षिणदिक्स-माक्रमणार्थस्वज्ञातिचाचिकहरिसिंह सहितजेलपुरपतिजाङ्गडमहिपाल सज्जीभवन समभिषेणितकुमारदेवसिंह मेध्यानदीतटतुमुलरचन श्रुतैत-दुदन्तबम्बा बददुर्गरक्षार्थस्थापितकर्मण कुमारसहायीभूतहड्डाधिराज-बङ्गदेव स्वपट्टपकुमारसम्मिलन मोहिलसल्ह बङ्गाश्वबिदारण द्वितीय हयारूढहड्डाधिराजमोहिलसल्ह निपातन दभिकबल्लन कुमारमोहन बाजिविध्वंसन कृतशिशुसुतसहायनृपबंग।

बम्बावदा जाकर पिता के चरणों में नमस्कार कर वापस बूंदी आकर देवसिंह का खट्कड़ पाटण, गैणोली, लाखैरी, करवर इन पाँच नगरों और गढ़ों का लेना, लाखेरी ग्राम की सीमा में पहले काम आये हुए अपने दादा कोल्हण की छत्री बनाने का प्रारम्भ करना, करवर के युद्ध में दहिया बलराज

और उसी के सगोत्र जशकरण का सहाय होना, बलराज के भोगने पर बूंदी आये हुए कुमार से मिलने के अर्थ बूंदी जाने की इच्छा से प्रस्थान किये हुए हड्डाधिराज बङ्गदेव का अपने पुत्र देवसिंह से मार्ग में मिलना, श्रेष्ठ पुत्र के प्रतिष्ठा किये हुए अपने नाम के चिह्नवाले सुन्दर बावड़ी देखकर मंदिर में देवी की पूजा करना, बुन्दी के समीप में जिसने डेरे किये हैं ऐसे बङ्गदेव का बड़वाभाट हरि और स्तुति करने वाले भाट के लिए लाख लाख द्रव्य देने सहित ब्राह्मणों के समुदाय के लिये दो लाख रुपये देना, कुमार देवसिंह का पिता के दिये हुए पहले प्राप्त किये परगने के बाद बूंदी प्रान्त में निवास करना, अर्थात् कुंवरपदा के परगना से अधिक बूंदी के मिलने पर वहाँ निवास करना, पाँच दिन रात रहकर राजा का बम्बावदा नामक गढ़ में वापस जाना, बङ्गदेव को लौट गया सुनकर राजकुमार देवसिंह को मारने की इच्छा वाले शत्रुवर्ग का पश्चिम दिशा के मार्ग से बूंदी आना, दक्षिण दिशा से हमला करने के लिए अपनी जाति वाले हरिसिंह के साथ जेलपुर के पति जांगड़ कुल के महिपाल नामक राजा का सज्जित होना, युद्धयात्रा करके कुमार देवसिंह का मेझा नदी के किनारे पर युद्ध रचना, यह वृत्तान्त सुनकर बम्बावदा गढ़ की रक्षा के लिए कर्मण नामक छोटे पुत्र को रखकर कुमार देवसिंह की सहाय करने को हड्डाधिराज बङ्गदेव का अपने पाटवी पुत्र से मिलना, मोहिल सल्ह का बंगदेव के घोड़े को मारना, दूसरे घोड़े पर चढ़कर हड्डाधिराज का मोहिल सल्ह को मारना।

दभिकबल्लन विशसन कुमारमोहना न्यशिचाणनामहयारोहण प्राप्त-तत्खङ्गाघातद्वय राजकुमारदेवसिंह गौड़मण्डन प्रतिघातन गौड़हरिसिंह बलभद्र बिपलायन दक्षिणदिक्प्रसारितडमरचाचिकहरिसिंह जाङ्गड-महिपाल जावदपुरसमाक्रमण पुत्रपरिच्छिन्नप्रान्तरक्षार्थबुन्दी स्थापित-पट्टपकुमार प्रत्यागतनिष्कासितारातिपुनः समासादितजावदपुरबंगदेव स्व-स्कन्धावारबम्बाबदप्रबिशन बुन्दीस्थितक्षतव्ययोल्लाघीभूतबम्बाबदा-गतकुमारबन्दितजनकार्थोपदानिवेदन बंगदेव स्वबिजयसूचकबव्हर्थबहु-बसुबितरणं पट्त्रिंशो मयूखः ॥३६॥ आदित पञ्चत्वारिंशदुत्तरशत-तमः ॥१४५॥

दहिया बल्लन का कुमार मोहन के घोड़े को मारना, बालक पुत्र की सहाय करके राजा बंगदेव का दहिया बल्लन को मारना, मोहन कुमार का

सिचाण नामक दूसरे घोड़े पर चढ़ना, उसके खड्ग के दो प्रहार सहकर कुमार देवसिंह का गौड़ मण्डन को मारना, गौड़ हरिसिंह और बलभद्र का भागना, दक्षिण दिशा में उपद्रव फैलाकर चाचिक हरिसिंह और जांगड़ महिपाल का जावदपुर पर हमला करना, पुत्र के छीने हुए प्रान्त की रक्षा के लिए पाटवी कुमार को बुन्दी में रखकर पीछे आये हुए शत्रुओं को निकाल कर फिर जावदपुर को पाकर बंगदेव का अपनी राजधानी बम्बावदा में प्रवेश करना, बूंदी में रहे हुए और घावों की पीड़ा से नैरोग्य होकर बम्बावदा में आये हुए कुमार का नमस्कार पूर्वक पिता के लिए भेंट अर्पण करना, बंगदेव का अपनी विजय की सूचना देने वाले लोगों को बहुत सारा धन देने का छत्तीसवाँ मयूख समाप्त हुआ। और आदि से एक सौ पैंतालीस मयूख हुए।

प्रायो ब्रजदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

सचरणगद्यम्

तदनंतर बंबावददुर्ग के अधीस हड्डाधिराज बंगदेव आपुनैं अवसान पर परलोक लह्यो।

अरु कुमार देवसिंह पिता को पट्टपाइ अवनी को आधिपत्य गह्यो।

सो आपुनें सप्तम कुमार समरसिंह को अतिप्रिय बीर बिचारि आपकी जीती सीमा समेत बुंदी को आधिपत्य देत भयो।

अरु बंबावदेसों उत्तर पश्चिम कों प्रांत जो पूर्बपुरुखन नें लयो हो सोहू समस्त बुंदी सों लगाइ दयो॥१॥

इसके बाद बंबावद दुर्ग के स्वामी हाडा राजा बंगदेव का निधन हो गया और कुमार देवसिंह ने उत्तराधिकार में अपने पिता की राजगद्दी प्राप्त कर पूरे राज्य का अधिकार पाया। राजा देवसिंह ने तब अपने सातवें पुत्र कुमार समरसिंह को वीर और योग्य समझ कर बूंदी का आधिपत्य सौंपा। फिर उसने बंबावदा से उत्तर-पश्चिम का प्रांत जो पुरखों द्वारा अर्जित था को बूंदी की सीमा में मिला कर बूंदी की जागीर को बढ़ाया।

ऐसें बंबावद बुंदी द्वै ही राज्य बरब्बर बनाइ प्रिय पुत्र समरसिंह को प्रामारराज बिक्रम के तेरहसत सम्मित मक के माधवमास के अवदात पक्ष की तृतीया के दिन बुंदी के राज्य को अधीस कर्यो।

अरु पट्टपकुमार हरराज के अर्थ बुंदी के तुल्य ही बंबावददुर्ग को राज्य राखि आपहू कितेक बासर बिताइ बैभवसों बिरक्तभाव धर्यो।

अेसैं हड्डाधिराज देवसिंह के सप्तम पुत्र समरसिंह पिता के अनुमत करि बुंदी सों लगाइ बंबावद दुर्ग को अर्द्धराज लयो।

अरु अष्ट ही दिसा मैं आपुनीं आज्ञा कों अमोघ करत भयो ॥२॥

इस प्रकार हाडा राजा देवसिंह ने बूंदी और बंबावदा दोनों राज्यो को बराबर बना कर अपने प्रिय पुत्र समरसिंह को विक्रमी संवत् तेरह सौ के वर्ष के वैशाख माह के शुक्ल पक्ष की तृतीया तिथि के दिन बूंदी का स्वामी बनाया अर्थात उसे इस अलग राज्य का राजा बनाया। इसी तरह अपने सबसे बड़े पाटवी कुमार हरराज के लिए बूंदी के बराबर बंबावदा का राज्य आरक्षित किया फिर स्वयं थोड़े समय तक राजकाज देख कर अंत में राज्यवैभव से विरक्त भाव धारण किया। इस तरह हाडा राजा देवसिंह के सातवें पुत्र समरसिंह ने अपने पिता की अनुमति से बूंदी से लगा कर बंबावद दुर्ग तक फैले राज्य का आधा भाग लिया और तब उसने सारी दिशाओं में अपनी निर्बाध आज्ञा चलाई।

षट्पात्

बिक्रम सक जिहिं बेर सकल आवत तेरहसत।
बिसद मास बैसाख तक्कि गणकन सम्मत तत।
बनत तीज गुरुबार घटिय त्रेपन सुर पल सैह।
सट्ठि घटिय पल सून्य मग्ग उडु आत बिरचि मह।
सर सर सुकर्म नव बेद सम तैतिल जंहं इकबीस त्रय।
बुंदिय बइट्ठ सु कुमर समर सद्धि मुहूरत तिहिं समय॥३॥

विक्रमी संवत् के वर्ष तेरह सौ के वैशाख माह में राजा ने अपने ज्योतिषियों की सम्मति से शुक्ल पक्ष की तृतीया तिथि को गुरुवार के दिन तिरपन घड़ी तैंतीस पल में मृगशिर नक्षत्र के आने पर बड़े उत्सव का आयोजन किया। सुकर्मा योग पचपन घड़ी उनचास पल में तैत्तिल करण के इक्कीस घड़ी तीन पल के समय कुमार समरसिंह मुहूर्त साध कर बूंदी की राजगद्दी पर बैठा।

दोहा

रवि ख रूभ रु त्रिगुन रु त्रिचउ, गति हयसर अरु तान।
ससि कु त्रिदृग खचउ रु खगुन, द्वि दृग हय रु कृति जान॥४॥

मिलत जीव भृगु मिथुन के, उचित बास्तु दिन अत्थ।
समर कुमर बुंदिय स्वगृह, मह सह कियउ समत्थ॥५॥

इस समय स्पष्ट सूर्य, शून्य राशि में, सत्ताईस अंश तेंतीस कला तैंतालीस विकला और गति सतावन कला उनचास विकला, स्पष्ट चन्द्रमा एक राशि तेईस अंश चालीस कला और गति सात सौ बाईस कला विकला बीस जानें। चूंकि इसी दिन बृहस्पति और भृगु मिथुन राशि के मिलने पर, यहाँ वास्तु (नांगल) करने का दिन उचित समझ कर अपने घर बूंदी में कुमार समरसिंह को उत्सव के साथ प्रवेश करवाया गया अर्थात् उन्हें बूंदी के राज्य का समर्थ राजा बनाया गया।

सचरणगद्यम्

पहिलें चंडार्सिराज पृथ्वीराज के पुत्र राजा रत्नसिंह स्वकीय सिर संटि दिल्ली कुतबुद्दीन कों दई तब यवनेन्द्र याही रत्नसिंह अनुज सामंतसिंह कों कुंडलपुरसों लगाइ मेवात देसको कछु प्रांत दयो।

ताकै पुत्र जयमल्ल ताकै सुत सोम ताकै सूनु सूर ताकै जैत्र रनधीर द्वै ही पुत्रनको जकुट भयो।

तिन मैं या समय सों पहिलैं दिल्ली के अष्टम यवनेन्द्र गयासुद्दीन अपरनाम बलबन के भट भिल्लन कों मारि सेसनकों स्वकीय करि भाग्य के बल प्रामारराज विक्रमके बारहसै चौरासी के सक मैं रणस्थंभ लयो।

तदनंतर जैत्रराज आपुनें अनुज रनधीर कों पंचलक्ख के पटासहित छानि को दुर्ग देकें कितेक काल रणस्थंभपैं राज्यकरि परलोक प्राप्त भयो॥६॥

पूर्व में चहुवान राजा पृथ्वीराज के पुत्र राजा रत्नसिंह ने अपने मस्तक के बदले में दिल्ली कुतबुद्दीन को दी थी तब यवनेश कुतबुद्दीन ने इसी रत्नसिंह के छोटे भाई सामंतसिंह को कुंडलपुर से लगा कर मेवात प्रदेश तक का प्रान्त दिया था। इस सामंत सिंह के जयमल नामक पुत्र हुआ। आगे जयमल के सोमदेव, सोमदेव के सूर और सूर के जैत्र और रणधीर नामक दो पुत्रों का युग्म हुआ। इस समय से पूर्व में इसी जैत्र ने दिल्ली के आठवें बादशाह गयासुद्दीन जिसका अवर नाम बलबन भी था के सामंत भिल्लन को मार कर, बाकी के लोगों को अपने बना कर, विक्रमी संवत् के बारह सौ

चौरासी के वर्ष में रणथंभोर पर अधिकार किया। तदनन्तर जैत्रराज चहुवान ने अपने छोटे भाई रणधीर को पाँच लाख की जागीर सहित छान का दुर्ग दिया और स्वयं रणथंभोर पर कुछ समय तक राज्य कर परलोकवासी हुआ।

तब ताके तनय हम्मीर कुमार स्वकीय जनक को भद्रासन लहि रनस्थंभ को आधिपत्य पायो।

तानैं प्रजा कों सासन करत कितेक काल के अनंतर स्वामिधर्म के साधन सों विरुद्ध व्यवहार देखि बैश्यजातीय टोडरमल्ल नाम आपुनों अमात्य मारि गिरायो।

तोहू ताके तनूज सुर्जन जयमल्ल रायपाल तीन ही सोदर उनकों उर सों लगाइ सर्वस्व के सचिव करि तिनहीको विश्वास गह्यो।

अरु जवनन के जलधि मैं बाडव सो बिपक्ष बनि अनेकन कों अभय दै रु क्षात्रधर्म को निर्बाह करत रह्यो ॥७॥

अपने पिता की मृत्यु के बाद चहुवान हम्मीर अपने पिता की राजगद्दी पर बैठा और उसने रणथंभोर का आधिपत्य लिया। इसने यहाँ का शासन करते हुए कुछ समय के बाद स्वामिधर्म से विमुख होने के व्यवहार स्वरूप अपने प्रधान अमात्य वैश्य टोडरमल को मार डाला। इसके बाद उसने टोडरमल के दोनों पुत्रों जयमल और रायपाल को और उसके छोटे भाई सुर्जन को फिर से गले लगा लिया। फिर उन्हें अपना सचिव बना कर उनका विश्वास अर्जित किया। यही नहीं इस राजा हम्मीर ने यवनों रूपी समुद्र में बड़वानल रूपी शत्रु बन कर कई लोगों को अभय प्रदान किया और वह पूरे क्षात्रधर्म का निर्वाह करते हुए रहा।

हे हड्डाधिराज भूभुजंग राम कुतबुद्दीन सों इहां लग दिल्ली के अधीस जवन भये तिनके अनुक्रम सों नाम पहिलैं न कहे गये।

यातें अब एगारम खलजी जवनेस अलाबुद्दीन के प्रसंग करि अखिलन के अभिधान संख्या सहित सुनाइबे के अवसर में लये।

प्रामारराज विक्रम के सक की सैल सर संभु संख्या सम्मित समा मैं गौरी सहाबुद्दीन को गुलाम कुतबुद्दीन आर्यावर्त मैं बिजय करि दिल्ली की गद्दी बैठि पहिलो पातसाह होइ इहां को राज्य करत भयो।

सो सिंधु नदी सों पूर्व के पारावार पर्यन्त सबन कों सासन करि बार्धक मैं प्रारब्ध के प्रमान काहू बाजी सों गिरि कैं मरतभयो ॥८॥

हे हाडा राजा रामसिंह! मैंने अभी तक आपके समक्ष कुतबुद्दीन से लगा कर दिल्ली के कितने बादशाह हुए यह नहीं बताया और न ही मैंने उनके नाम क्रम से कहे हैं। इससे मैं ग्यारहवें खिलजी यवनेश अलाबुद्दीन (अल्लाउद्दीन) के प्रसंग से सभी के नाम उनकी क्रमसंख्या सहित उचित अवसर आ जाने पर सुना रहा हूँ। विक्रम संवत् ग्यारह सौ अठावन की संख्या वाले वर्ष में गौरी शाहबुद्दीन का गुलाम कुतुबुद्दीन आर्यावर्त को फतह कर दिल्ली की राजगद्दी पर बैठा। उसने आर्यावर्त का पहला बादशाह बन कर राज्य किया। इस कुतुबुद्दीन ने सिंधु नदी से पूर्व दिशा के समुद्र पर्यन्त पूरे क्षेत्र पर हुकूमत की और दुर्भाग्यवश बुढ़ापे में घोड़े से गिर कर मर गया।

दोहा

क्रीत हुतो महमूद को, गौरी को न गुलाम।
किते इमहु याकों कहत, कविन बस्तु सन काम॥९॥
जिहिं दिल्लिय नृप राम जब, लहिय पट्ट बिधि लेह।
बिक्रम कृत गज सर कु बिधु, अप्पन सक तंहं एह॥१०॥
गगन बेद खट मान गत, बिक्रम सक जिहिं बेर।
सक प्रवृत हुव जवन सम, कथित मुहुम्मद केर॥११॥
तिन जवनन अक्खिय तखत, दिल्लिय कुतबुद्दीन।
बैठो तंहं निधि नव बिसिख, अब्द रसूल अधीन॥१२॥
नभ चउ खट अंतर नृप सु, जोरयो तिन्ह सक़ जात।
नव चउ रवि सम्मित नियत, अप्पन सक तंहं आत॥१३॥[1]

कुछ लोगों का यह मत है कि कुतुबुद्दीन गौरी शाहबुद्दीन का गुलाम

टिप्पणी १. नभ चउ खट से संख्या ६४० (छह सौ चालीस) होती है अब निधि नव विसिखि से संख्या ५९९ पाँच सौ निनानवे होती है। दोनों को जोड़ने से १२३९ बारह सौ उनचालीस होती है न कि नव चउ रवि अर्थात् १२४९ बारह सौ उनचास जैसा कि छप्पय सं. १३ की अंतिम पंक्ति का अर्थ हैं। यहां नव त्रय रवि कहा जाना था पर संभवतया यह गलती इसलिए हुई लगती हैं क्योंकि ऊपर वाले चरण में नव चउ खट का पाठ है और ठीक इसके नीचे वाले चरण में नव चउ रवि आया है। यहाँ यह अशुद्धि लिपिकर्ता अथवा प्रूफ संशोधन करने वाले की असावधानी से हुई है। पाठक स्वयं नीचे लिखे अंक संकेतों से इसका निस्तारण कर लें। (नव = ९, चउ = ४, नभ = ०, खट = ६, त्रय = ३, रवि = १२, बान = ५, धृति =१८, ख =० तर्क = ६, कु १, ससि =१, खट = ६, बेद = ४, गगन = ०, बिधु = १, सर = ५, गज = ८, शिव = ११, भूत = ५) -संपादक

नहीं था वह तो महमूद का क्रय किया हुआ गुलाम था। यहाँ ग्रंथकर्ता का कहना है कि वह किसका गुलाम था इससे हमें यहाँ क्या प्रयोजन है हमें तो बस इससे मतलब है कि वह कुतुबुद्दीन आर्यावर्त का पहला बादशाह बना। हे राजा रामसिंह! विधाता के लेख से जब उसने दिल्ली का तख्त अपने अधिकार में किया तब अपने समयकाल की गणना के अनुसार विक्रम संवत् ग्यारह सौ अठावन का वर्ष था। जब विक्रम संवत् के छह सौ चालीस वर्ष व्यतीत हुए तब यवन मुहम्मद का शक शुरु हुआ अर्थात् यवनों की काल गणना का शक वर्ष आरंभ हुआ पर उन यवनों का कथन है कि दिल्ली के तख्त पर कुतुबुद्दीन जब बैठा तब हिजरी शक के पाँच सौ निनानवे वर्ष गुजरे थे। अब यदि हम छह सौ चालीस की संख्या इस उनकी बताई संख्या पाँच सौ निनानवे में जोड़े तो यह संख्या बारह सौ उनचास होती है इसका अर्थ यह हुआ कि हमारा विक्रम संवत् बारह सौ उनचास का वर्ष हुआ।

सुपहु राम भासै सु सक, अप्पन गनित अलीक।
एक नवति हायन अधिक, कहे होत सु ठीक ॥१४॥
केवल जवनन पुस्तकन, इंग्रेजन लिखि अंक।
लहि अंतर निज सक लिख्यो, त्रि नव कु ससि गत संक ॥१५॥
इंग्रेजन नन दोस यह, भुल्ले जवन बिभान।
लखि तिन्ह सक निज सक लिख्यो, मन्नें जवन प्रमान ॥१६॥
इंग्रेज न सक सन अधिक, हायन छप्पन होइ।
तब विक्रम सक सुद्धतम, ख चउ तर्क तिन्ह खोई ॥१७॥
सेस रहैं सुहि जवन सक, अप्पन सक जंहं उक्त।
ताके क्रम धृति बान तंहं, भासें तिन्ह सक भुक्त ॥१८॥

हे राजा रामसिंह! अपने गणित के हिसाब से यह बारह सौ उनचास (वस्तुत: बारह सौ उनचास होते हैं) का संवत सही प्रतीत नहीं होता क्योंकि ग्यारह सौ अठावन से इकयानवे (कायदे से इक्यासी होना चाहिए) वर्ष अधिक होते हैं। अंग्रेजों ने केवल मुसलमानों की पुस्तकें देख कर उनमें लिखे हुए संवत् को देख कर ईसवीं सन् का अन्तर (छप्पन वर्ष) घटा कर ईसवीं सन् ग्यारह सौ तिरानवे लिख दिया है इसमें अंग्रेजों का दोष नहीं यह

तो यवनों का दोष है कि उन्होंने अपने हिजरी शक को बिना ही ज्ञान के भूल कर लिख दिया है। अंग्रेजों ने तो बस उसके आधार पर गणना कर अपना ईसवीं सन् माना है। अंग्रेजों के शक से अर्थात् ईसवीं सन् से विक्रम संवत् के छप्पन वर्ष अधिक होते हैं जब विक्रमी का अत्यन्त शुद्ध संवत् होता है उनमें से छह सौ चालीस निकाले। शेष जो भी संख्या आई वही हिजरी शक अर्थात् मुहम्मद का सन् है। इसलिए गणनानुसार यदि हमारा विक्रम संवत् ग्यारह सौ अठावन है तो यवनों का हिजरी शक पाँच सौ अठारह होना चाहिए। गणित के अनुसार यही संख्या आती है।

युग्मम्

सक अप्पन गज भूत सिव, हायन छप्पन हीन।
सक इंग्रेजन द्वि नभ सिव, ईसा गनित अधीन॥१९॥
संवत निज निज सबनकै, निजनिज लिपि निहचै सु।
गौरी जंहं पित्थल गह्यो, सक सर सर सिव हैसु॥२०॥
बरस तीन खट मास बलि, बिच यह काल बिताय।
दिल्ली कुतबुद्दीन दृढ, अंगमि बैठो आइ॥२१॥
कथित रीति तनु हान किय, जब पहिले जवनेस।
पायउ दुख दिल्लिय प्रजा, सदय गिनायउ एस॥२२॥

इसी प्रकार अपने विक्रम संवत् ग्यारह सौ अट्ठावन में से छप्पन वर्ष घटा दिये तो अंग्रेजों का ईसवी सन (ईसा की गिनती के सहारे) ग्यारह सौ दो का सन् आता है। हे राजा रामसिंह! इस तरह सभी के अपने-अपने संवत् अपने-अपने लेखों में निश्चित किये हुए होते हैं। उसके अनुसार शाहबुद्दीन गौरी ने जब पृथ्वीराज चहुवान को बंदी बनाया वह विक्रम संवत् का ग्यारह सौ पचपनवाँ वर्ष था। इस वर्ष के ठीक तीन वर्ष और छह माह का समय बीत जाने के बाद ही कुतुबुद्दीन ने आकर दिल्ली का तख्त हासिल किया अर्थात् वह दिल्ली की गद्दी पर बैठा। जैसा कि पहले बता दिया गया है (कि पहला बादशाह घोड़े से गिर कर मरा) उसी रीति से पहले बादशाह ने शरीर त्यागा। इसकी मृत्यु पर दिल्ली के प्रजाजनों ने शोक मनाया इससे लगता है कि वह दयावान रहा होगा।

अैसें पहिले पातसाह कुतबुद्दीन के अनंतर आरामसाह नाम दूजो दिल्लीस भयो।

थोरे ही कालमैं ताके अवसान के पीछैं कुतबुद्दीन को किंकर इलतमिस सोही समसुद्दीन ताही को जामाता भयो हो जानैं ग्वालेरदुर्गसों आइ तीजो पातसाह होइ दिल्ली पुरी को पट्ट लयो।

यानैं हू चिरकाल प्रभुसक्ति कों प्रधान राखि पातसाही पैं सासन करत जब दिष्ट के अनुसार परलोक पायो।

तब याको मूढ बड़ो पुत्र रुकनुद्दीन दिल्ली की गद्दीबैठि चोथो पातसाह कहायो॥२३॥

दिल्ली के पहले बादशाह कुतुबुद्दीन की मृत्यु के बाद आरामशाह नामक दूसरा दिल्ली का शासक बना। थोड़े ही समय में इस दूसरे बादशाह की मौत के बाद कुतुबुद्दीन का सेवक (दास) इलतमिस (इल्तुतमिश) जिसका दूसरा नाम शमसुद्दीन भी था और जो कुतुबुद्दीन का जामाता था उसने ग्वालियर के दुर्ग से आ कर दिल्ली का तख्त प्राप्त किया। वह तीसरा बादशाह बना। इसने बहुत समय तक राजा की तीन शक्तियों में से पहली शक्ति से हुकूमत करते हुए दिल्ली पर राज्य किया और अन्त में भाग्य के अनुसार परलोकवास किया। तब इसका सबसे बड़ा मूढ़ पुत्र रुकनुद्दीन दिल्ली की राजगद्दी पर बैठ कर आर्यावर्त का चौथा बादशाह कहलाया।

दोहा

तस भगिनी लखि सिथिल तिंहि, निज मद रजिया नाम।
अग्रज अंगमि सब अधिप, अप्प भई अभिराम॥२४॥
साहन गिनती मैं सु पहु, नारि सु रक्खी नांहिं।
तातैं नाम निरंक तस, अंकित पुरुखन आंहिं॥२५॥

इस रुकनुद्दीन की बहन जिसका नाम रजिया बेगम था ने अपने भाई को ढीला और आलसी शासक देख कर अपने बड़े भाई से सत्ता हथिया ली और स्वयं शासक बन बैठी। हे राजा रामसिंह! मैंने बादशाहों की गिनती में किसी स्त्री को नहीं रखा है इसलिए मैंने अपने इस ग्रंथ में उसका नाम तो

लिखा है पर उसे कोई क्रमसंख्या नहीं दी है क्योंकि मैंने संख्या मात्र पुरुष बादशाहों के नाम के साथ ही लिखी है।

सचरणगद्यम्

यातैं रजिया के नाम पर पातसाहन के क्रम की संख्या को अंक न राख्यो रु पीछैं या भगिनी कों कितेक कहत मारि कितेक कहत बिडारि याही को कनिष्ट भ्राता बहरामसाह पंचम पातसाह होत भयो।

याही बहराम के समय मैं पहिलें मुगलजातीय जवन चंगेजखां नाम आइ आपुनी बुद्धिमत्ता करि बडी बरूथिनी के साथ चीन ख्वारजम खुरासान प्रमुख समुद्रन कों मथि कैं तीन हू सो जयरूप रत्न निकासि लयो।

इतकों दिल्ली के पंचम बादसाह बहराम के अनंतर ताही के तनूज समसुद्दीन के नाती मसऊदसाह नाम छट्ठे पातसाह आर्यखंड को आधिपत्य पायो।

अरु मसउद्द के अनंतर याही को काका समसुद्दीन को तीजो पुत्र पहिलैं कारा मैं चिरकाल कष्ट सहि कढ्यो सो कुरान के सासन को साधनहार धीर गंभीर सत्यबादी उदार नासुरुद्दीन महमूद बार्धक मैं दिल्ली को पट्ट लहि सप्तम पातसाह कहायो ॥२६ ॥

इस कारण से रजिया बेगम के नाम के साथ बादशाहों के नामों के साथ दी जाने वाली क्रमसंख्या का क्रम नहीं रखा है। इस बहिन (रजिया बेगम) के लिए कुछ लोग तो कहते हैं कि मार कर और कुछ लोगों का कथन है कि उसे पकड़ कर बंदी बनाने के बाद, उसी का छोटा भाई बहरामशाह पाँचवा बादशाह बन गया। इसी बहरामशाह के समय में सबसे पहले मुगलवंशीय चंगेजखां नामक योद्धा ने अपनी बुद्धिमता से बड़ी सेना बनाने के साथ चीन, ख्वारजम और खुरासान इन तीन प्रमुख समुद्र रूपी शासनों को मथ कर विजय रूपी रत्न निकाले थे। इधर दिल्ली के पाँचवे बादशाह बहरामशाह के बाद उसके पुत्र शमशुद्दीन का नाती मसऊदशाह नामक छठा बादशाह हुआ जिसने आर्यखण्ड का आधिपत्य पाया। इस मसऊद के बाद इसी का चाचा जो शमशुद्दीन का तीसरा पुत्र था जो बहुत

समय तक कारावास भुगत कर निकला। जो कुरान की आज्ञा के अनुसार चलने वाला, धीर, गंभीर, सत्यवादी, उदार नासुरुद्दीन महमूद अपनी वृद्धावस्था में दिली का तख्त पा कर आर्यावर्त का सातवाँ बादशाह कहलाया।

दोहा

निज ग्रंथन सम्मत निखिल, जिहिं कैदहि बिच जानि।

कछु स्वसिल्प बेतन करि रु, असन भयो भय आनि ॥२७॥

जब वह कैद में था तब उसने शास्त्रों का अध्ययन किया और उसने अपने धर्म के ग्रंथों में जो जो जैसा-जैसा लिखा था के अनुसार उसने अपने जीवन में आचरण किया। उसने अपने हाथ की कारीगरी से अपनी जीविका का अर्जन करते हुए, परलोक का भय रखते हुए, अपना भोजन लिया अर्थात् जीव दया को बरता।

षट्पात्

राज्य लहिहु सुहि रीति नियत महमूद निबाहिय।

यानें बेगम इक्क बिहित कुलरीति बिबाहिय।

करत नित्य गृहकृत्य कह्यो इक दिन दुख कारन।

दासी इक प्रभु देहु झरत भुरसे कर झारन।

नासुरुद्दीन महमूद निज बेगम को यह सुनि बचन।

खिजि कहिय सर्व मालिक खुदा निज अप्पन कहु कोहु नन ॥२८॥

राजा होने के बावजूद भी उसने अपने जितेन्द्रियपन अथवा अपने आचार में निष्ठा रखने की नीति को उचित ढंग से निबाहा। इसने मात्र एक विवाह किया और अपनी बेगम को भी वह अपनी कुल रीति से विवाह कर लाया। यह बेगम नित्य घर का कार्य अपने हाथों से करती थी। एक दिन परेशान हो कर दु:खी मन से कहने लगी कि हे अल्लाह! एक दासी प्रदान कर दें तो कृपा होगी क्योंकि अब तो रसोई कार्य में झुलसे हुए हाथ जलने लगे हैं। नासरुद्दीन महमूद ने अपनी बेगम का यह बोल जब सुना तो उसे सुना कर बोला कि सभी का वह एक मालिक खुदा है हम आप किसी के मालिक नहीं है इसलिए दासी की माँग कर मालकिन बनने का ख्वाब छोड़ दो।

दोहा

करन लगी डरि पुब्ब क्रम, बेगम बलि बुल्ली न।
अध्व तजै को तंहं इतर, ऐसे स्वामि अधीन॥२९॥
भाग्य बलहु जाकै भयो, इक्खि धर्म अनुकूल।
प्रतिकूलन छिन्नैं पटा, मान न तदपि समूल॥३०॥

अपने पति से ऐसा सुन कर बेगम ने तभी से वापस घर का काम करने का नित्यकर्म अपना लिया। वह फिर नहीं बोली कि उसे दासी चाहिए। ऐसे मालिक (बादशाह) के अधीन रह कर भला अन्य पुरुष कैसे मार्गच्युत हो सकता था। विरोधी लोगों द्वारा उसका पट्टा छीन लिए जाने और इस कारण से समूची मान-मर्यादा भंग करने के बावजूद भी धर्म पर अडिगता देख कर भाग्यबल उसके अनुकूल ही रहा।

षट्पात्

हरी लहिय इहिं कहुँ न गंजि जनपद लिय गक्खर।
तिम लवपुर मुलतान दब्बि गजनी भुव दुद्धर।
इत जय मालव अवनि सद्धि अंतर्बेदी सह।
जितति अदल जमाइ अब्द बिंसति प्रतप्यो यह।
जस लिय अपुब्ब महमूद जिहिं पुत्रन जिम पालिय प्रजा।
ताके प्रताप अति मोदजुत अभय मिले सिंह रु अजा॥३१॥

इस बादशाह ने किसी को नहीं मार कर भी गक्खर के प्रांत को लिया। इसी तरह लाहौर (लवपुर) और मुलतान की भूमि को भी दबा लिया जो दुर्द्धर्ष गजनी के अधीन थी। इसी क्रम में उसने मालवा की भूमि का अधिकार लिया और ऐसे ही अंतर्वेदी क्षेत्र को भी हथियाया। अपने राज्य में सभी जगह अदल न्याय की पुख्ता व्यवस्था कर उसने पूरे बीस वर्ष तक दिल्ली के तख्त पर रह कर राज किया। इसने अपने प्रजाजनों को अपने पुत्र की तरह रखा और पाला इसलिए वह प्रजा की आँख का तारा बना। यह उसके राज्य में होने वाले न्याय की ही बलिहारी थी कि उसके यहाँ सिंह और बकरी साथ-साथ घूमते थे।

दोहा

लवन घृता दिक हीन लहि, सदा असन इहिं साह।
मलिन न किय लघु को हु मन, रहि कुरान मत राह॥३२॥
इक दिन मान्य अमीर इक, हुव महमूद हजूर।
लहि कुरान तस कर लिखित, परयो लखत भ्रम पूर॥३३॥
सुद्धहु कोउक सब्द सो, वाने कहिय असुद्ध।
कुंडल तापें साह किय, बिक्खत सुद्धहु बुद्ध॥३४॥

नमक और देसी घी से रहित भोजन ही इस बादशाह ने अपनी पूरी उम्र भर किया। सादे जीवन वाले इस बादशाह ने अपने राज्य में छोटे से छोटे व्यक्ति का भी दिल नहीं दुखाया। वह सदा कुरान के बताए रास्ते पर चला। एक दिन एक इज्जतदार सामन्त (अमीर) महमूद के दरबार में हाजिर हुआ। उसने जब बादशाह के स्वयं के हाथों से लिखी हुई कुरान की पोथी देखी तो वह हैरान रह गया। इस अमीर ने उस ग्रंथ में कुछ शब्द सही थे फिर भी उन्हें अशुद्ध कहा तब इस बादशाह ने अपनी शुद्ध बुद्धि से उन पर गोलाकार निशान बना दिये।

षट्पात्

वह जब गयउ अमीर कट्टि महमूद सु कुंडल।
सो जिम हो तिम सब्द बहुरि रक्खिय स्वबुद्धिबल।
पुच्छिय अनुगन प्रथम किन्न कुंडल असुद्ध गहि।
ताके जातहि त्वरित रुद्ध सुहि सुद्ध गयो रहि।
को यंहं निदान दासन कहत भनिय साह सुद्धहि भनत।
मन तास अधिक होतो मलिन इम असुद्ध बिहितहु बनत॥३५॥

वह अमीर उन बादशाह के बनाये हुए गोल निशानों को काट कर चला गया पर उस बादशाह ने जो शब्द शुद्ध लिखा हुआ था उसे शुद्ध ही रखा उसमें फेरपार नहीं किया। इस पर जब उसके सेवकों ने पूछा कि पहले इन शब्दों को अशुद्ध गिन कर उन पर गोले के निशान लगाए गए पर उसके जाते ही वह अशुद्ध शब्द शीघ्र ही शुद्ध कैसे हो गए। सेवकों ने जब इसका कारण

जानना चाहा तब बादशाह ने अपनी शुद्ध बुद्धि के आसरे कहा कि दरअसल उसका मन अशुद्ध था इसलिए वह बहुत सारी अशुद्धियाँ निकाल कर गया है इसलिए उसका इसमें क्या दोष?

दोहा

अैसो सज्जन साह यह, हुव जब भूधन हीन।
प्रजा भई रोवत प्रचुर, आकुल सोक अधीन॥३६॥

ऐसा सज्जन बादशाह जिसके भूमि ही धन था जब नहीं रहा अर्थात् जब उसकी मृत्यु हुई तो सारे प्रजाजनों में शोक व्याप्त हो गया और वे व्याकुल हो कर रोने लगे।

सचरणगद्यम्

अैसे सज्जन सप्तम पातसाह नासुरुद्दीन महमूद के अनंतर याही को दास अरु याही को भगिनीपति अष्टम पातसाह गयासुद्दीनबलबन दिल्ली को पट्ट लह्यो।

जाको सेरखां प्रमुख स्वामिधर्मी पातसाही के बर्द्धक आपुनैं अनेक अमीरन कों मारिबे सों सबही संसार नैं दुष्ट कह्यो।

जानैं पहिले सुलतान महमूद के मंत्री सेरखान आदिक आपुनी अच्छी के इच्छक अनेक अमीर मारि डारे सो सुनत ही इतकों तो निर्भय होय मुगलन नैं अटक नदी के वार हू आइ लाहोर पर्यंत पंजाब को प्रातं दाबि लीनों।

अरु इतकों तुगरलखान नाम बंगदेस के अध्यक्ष नैं जोर पाइ गयापुरी पर्यन्त आपुनों अमल कीनों॥३७॥

अत्यन्त दयालु और सज्जन सातवें बादशाह नासुरुद्दीन महमूद के बाद इसी का एक दास और इसी बादशाह का बहनोई आठवें बादशाह के रूप में दिल्ली के तख्त पर आसीन हुआ। इसका नाम गयासुद्दीन बलबन था। इस बादशाह के स्वामिभक्त शेर खां आदि को पातसाही के वर्द्धन (विकास) हेतु अपने अनेक अमीर सामन्तों को मारने के सबब पूरे संसार ने दुष्ट कहा। जब पहले सुलतान महमूद ने अपनी बादशाहत की अच्छाई और भलाई चाहने वाले मंत्री शेरखां सहित कई अमीरों को मार डाला तो इस की खबर सुनते

ही निर्भय हो कर मुगलों ने अटक नदी के पार तक लाहौर और पंजाब का प्रान्त दबा लिया और इधर पूर्व दिशा की ओर से तुगरलखान नामक बंग देश के अध्यक्ष ने अपने बल के आधार पर गया से पुरी पर्यन्त क्षेत्र दबा कर अपना आधिपत्य कर लिया।

दोहा

बलबन पठयो सज्जि बल, सोहू जुरि घमसान।
मोरि दयो बहु मारिकै, खग्गन तुगरलखान॥३८॥

इसका पता चलते ही बलबन ने अपनी सेना को सज्जित कर वहाँ भेजा। फौज ने वहाँ जाते ही घमासान युद्ध किया पर अपनी तलवारों के प्रहारों से घायल कर तुगरलखान की सेना ने शाही सेना को वतन की ओर मोड़ दिया।

सचरणगद्यम्

या रीति आपुनों पराजय सुनत ही अष्टम सुलतान गयासुद्दीनबलबन बडी सेना के साथ बंगदेस के सूबादार कों जीतिबे के प्रयोजन प्राचीदिसाके प्रांत मैं गयो।

तोहू प्रधन के प्रबंधन पाटव करि कितेक काल तो तुगरल हू परिपंथीन की पृतना के पेच मैं न आवत भयो।

एक दिन दिल्लीस बलबन की सेना को सामंत मलिकमुहयुद्दीन नाम अमीर चालीस असवारन सहित सत्रुन की सेना के सिविरन की सुद्धि निश्चित करिबे के काज आपुनें अनीक सों कढिगयो जानैं सपत्न की सीमा मैं संक्रमि गता गत करत एक ठाम काहू उच्चस्थल मैं चढि सब ही दिसा मैं दुर्जन के देखिबे को दृष्टि दई।

तानैं एक ओर समीप साध्वस को अभाव जानि प्रमाद सों परी ऐसी बैरी बंगेस की बाहिनी बिलोकि लई॥३९॥

इस प्रकार अपनी पराजय सुनते ही दिल्ली का आठवाँ सुलतान गयासुद्दीन बलबन एक बड़ी सेना के साथ बंगदेश के सूबेदार को जीतने के प्रयोजन से पूर्व दिशा वाले प्रान्त की ओर बढ़ा। तब भी तुगरलखान युद्ध के प्रबंधन में अपनी कुशलता के कारण कुछ समय तक तो शत्रुओं की सेना की पकड़ में नहीं आया। एक दिन दिल्लीपति बलबन की सेना का एक सामंत

मलिक मुहय्युद्दीन नामक अमीर ने चालीस घुड़सवारों सहित शत्रु सेना के शिविर की खबर लेने के लिए अपने शिविर से निकल कर शत्रु सीमा में जा कर इधर-उधर की ताक-झाँक करते हुए एक ऊँचे टीले पर चढ़ सभी दिशाओं में देखने का प्रयत्न किया। तब वह क्या देखता है कि पास ही एक तरफ निर्भय हो कर पर गाफिल सी अपने शत्रु बंगेश की फौज पड़ी है।

दोहा

दल तुगरल को देखत हि, दोरि मुहय्युद्दीन।
बलवन जय बुल्लत बली, पैठो बिच सु प्रबीन।।४०।।

तुगरलखान की सेना को देखते ही वह मुहय्युद्दीन दौड़ कर बलबन की जय बोलता हुआ सीधा सेना में घुस गया।

षट्पात्

जिन्ह आवत निज जानि प्रथम नहि रोकिसकै पर।
तुगरल पासहि तेग घुसत डारिय निचोल घर।
ढिग रच्छक गन ढहत कहत बलवन जय कोपित।
परदल सकल प्रपात गिनि सु निजघात अगोपित।
भिरिबो निवारि तुगरल भजत पथ सरित तरि कढन पर्यो।
लगि पिट्ठि मुहय्यद्दीन लघु हनि कलंब असु तस हर्यो।।४१।।

इस तरह अचानक और बेधड़क आते हुए बंग देश के हाकिम की सेना ने पहले तो अपना आदमी समझा इसलिए रोका नहीं और उसने डेरे में घुसते समय तुगरलखान के पास ही अपनी तलवार तंबू में घुसाई। पास खड़े उसके रक्षक मर कर गिरने लगे और मुहय्युद्दीन कुपित हो कर उसी तरह बलबन की जय उच्चारता हुआ तलवार चला रहा था। शत्रु दल को एक झरने की तरह समझ कर उसने अपने शरीर को छुपाये बिना प्रत्यक्ष ही बनाए रखा। तुगरलखान ने यह सोच कर कि इससे भिड़ना व्यर्थ है वह वहाँ से अपने आपको बचाने की गरज से नदी की राह से नाव द्वारा पार होने को झपटा अर्थात् भागने लगा तभी महय्युद्दीन ने पिछे से उसकी पीठ पर शीघ्र ही बाण मार कर उसके प्राणों का हरण किया।

दोहा

भो न तदपि संतुष्ट भट, परि ह्रदनी बलपीन।
तुगरल सिर लायो कतरि, द्रुतहि मुहय्युद्दीन ॥४२ ॥

वीर योद्धा मलिक मुहयुद्दीन की इस पर भी सन्तुष्टि नहीं हुई तो वह नदी में कूद पड़ा और शीघ्र ही आगे जा कर मरे हुए तुगरलखान का सिर नाव में से काट लाया।

सचरणगद्यम्

अैसें दिल्लीस के दल के महाबीर मुहय्युद्दीन नैं तुगरलखान को सीस स्वामी के समीप लाइ धर्‌यो।

ताकों देखि पहलैं तो अैसी सीघ्रता करि आइबे मैं याके हू मरिजैबे को संभव मानि याके संगिन समेत तर्जना करि अष्टम दिल्लीस गयासुद्दीन बलवन नैं पीछैं समय पर चालीस सादी सहायकन सहित मुहय्यद्दीन कों बैभव करि बिख्यात कर्‌यो।

दिल्लीस को बडो पुत्र मुहुम्मद तो पहिलैं लाहोर को बिजय करि मुगलन को भजाई पीछैं लग्यो इहां सत्रुन नैं साम्हैं होई मारि लयो।

यातैं अष्टम दिल्लीस बलवन के अवसान पर राज्य के समर्थ लोकन नें कैखुसरो नामक महमूदसाह के पुत्र के आधिपत्य को औचित्य उडाइ याही बलवन के कनिष्ट पुत्र कुराखान कों गद्दी बैठारिबे को निश्चय धारि लयो ॥४३ ॥

इस तरह दिल्लीपति की सेना के एक वीर योद्धा मुहय्युद्दीन ने शत्रु तुगरलखान का कटा हुआ सिर अपने स्वामी के समक्ष ला कर रखा। जिसे देख कर बादशाह ने सर्वप्रथम तो यह सोचा कि इस प्रकार जल्दबाजी दिखाने में इस मुहय्युद्दीन के स्वयं के मारे जाने का खतरा था। यह सोच कर बादशाह ने मुहय्युद्दीन के रक्षक साथियों को फटकारा उसके बाद दिल्ली के आठवें बादशाह गयासुद्दीन बलबन ने मलिक मुहय्युद्दीन के साथ चालीस सवारों के एक दल को रक्षक की तरह रहने का हुक्म दिया। इस प्रकार बादशाह ने अपने सामन्त वीर मुहय्युद्दीन का रुतबा बढ़ा कर उसे प्रसिद्ध किया। दिल्लीपति गयासुद्दीन बलबन का बड़ा पुत्र मुहम्मद जिसने पहले लाहौर पर फतह पाई

फिर वहाँ से मुगलों को भगाने के लिए उनका पीछा किया। पीछा करते समय भागते हुए मुगल शत्रुओं ने सामना कर उसे मार गिराया। मुहम्मद के मरने के बाद जब दिल्लीपति बादशाह बलबन की मृत्यु हो गई तब राज के मुख्य लोगों ने मिल कर मंत्रणा की और कैखुसरो नामक महमूदशाह के पुत्र का दिल्ली पर अधिकार का औचित्य नहीं माना। तब उन्होंने बलबन के ही छोटे पुत्र कुराखान को दिल्ली के तख्त पर आसीन करने का निश्चय किया।

दोहा

कैखुसरो महमूद के, सुत को स्वत्व बिसारि।
कुराखान निज प्रभुकरन, चाह्यो सबन बिचारि।।४४।।
धीर बीर छम धर्मधर, सदय गंभीर सुजान।
कुराखान बुध नांहिं करि, थिरहु तज्यो निजथान।।४५।।
कुराखान को तब कुमर, भट सचिव न मनभाइ।
कैकुबाद अधिपति करयो चामर छत्र चलाइ।।४६।।

महमूद के पुत्र कैखुसरो के हक को नजर अन्दाज कर राज के सभी लोगों ने कुराखान को अपना मालिक बनाने का विचार किया। पर उस धीर, वीर, समर्थ, धर्म धारण करने वाले, दयालु, गंभीर, सुजान और पंडित कुराखान ने दिल्ली के तख्त पर बैठने से इनकार कर दिया और शीघ्र ही अपना स्थायी निवास भी छोड़ दिया। यह देख कर दिल्ली राज के सामंतों और सचिवों ने अपने मनपसंद के व्यक्ति कुराखान के बेटे कैकुबाद को दिल्ली का आधिपत्य दिया। उसके छत्र धर कर चंवर ढुलाते हुए उसे दिल्ली का बादशाह बनाया।

सचरणगद्यम्

कितेक सचिवादिक धूर्तलोकन नें याही नवम जवनेस केकुबाद को याके पिता कुराखान मैं बिस्वास हो ताकों बिगारि दयो तब तो पिता कों प्रतिकूल जानि कैकुबाद आपुनैं अभीष्ट अनेक व्यसनादिक कुसंग में रच्यो अनर्गल रहन लग्यो।

अरु सप्तम दिल्लीस नासुरुद्दीन महमूद के पुत्र कैखुसरो कों आदि लै कैं अधीस के अभ्युदय के आधार आपुनें अनेक अमीरन कों

छद्मघात सों मारि मदकल मातंग लों बट उब्बट समान बहन लग्यो।

तब तो सबही प्रजा कै जवनेस कैकुबाद में अनिच्छा आई जानि याको पिता कुराखान कोऊ यत्न सों समीप जाइ चातुरी के साथ उपदेस दैकैं आपुनैं पुत्र को कुसंग निवारत भयो।

अरु ताही के अनुमत करि कितेक कुसंगी दुष्ट हे तिनको यो गिनीपुरीसों बिडारत भयो।।४७।।

थोड़े ही समय में राज के कई धूर्त सचिवों ने दिल्ली के इस नौंवें बादशाह केकुबाद को अपने पिता कुराखान की राह पर चलने नहीं दिया। उन धूर्तों ने अपने पिता की शिक्षा और आदर्शों पर विश्वास करने वाले केकुबाद को अपने पिता से विमुख कर दिया। तब अपने पिता को विरुद्ध जान कर केकुबाद अपनी इच्छा से कई व्यसनों और कुसंगत में फंस कर बेरोकटोक रहने लगा। यही नहीं उसने दिल्ली के सातवें बादशाह नासुरुद्दीन महमूद के पुत्र केखुसरो सहित दिल्ली के तख्त के खैरख्वाह और प्रताप को बढ़ाने वाले अपने कई अमीरों को छद्मघात करवा कर मरवा डाला। इसके बाद केकुबाद स्वयं मस्त हाथी की तरह नेक राह छोड़ कर उबड़-खाबड़ गलत रास्तों पर चलने लगा। जब प्रजा का विरोध अपने पुत्र बादशाह के लिए देखा तो उसका पिता कुराखान येन-केन प्रकारेण उसके पास गया और उसने चतुराई के साथ अच्छी शिक्षा का उपदेश दे कर अपने पुत्र को कुसंग की राह से अलग किया फिर उसी की अनुमति से जो कुसंगी और दुष्ट थे उन सभी को दिल्ली नगर से निकाल बाहर करवाया।

दोहा

तदपि प्रमादी साह तकि, कैकुबाद मति कूर।
घर घर मुरि बैठे घनैं, गहिगहि अधिप गरूर।।४८।।
बढिगो साह प्रमाद बस, अैसे खिन अंधार।
दुलहिन दिल्ली मारि दृग, जोबन लग्गी जार।।४९।।

जब उस क्रूर मति और प्रमादी बादशाह केकुबाद की ओछी हरकतें कम न हुई तब उसके दिल्ली तख्त के खैरख्वाह सामन्त उससे विमुख हो कर अपने-अपने घरों में दुबक गए। उन्होंने राजकाज और बादशाहत के

विकास में रुचि लेनी कम कर दी। इधर बादशाह कैकुबाद के बढ़ते प्रमाद से दिल्ली में अंधेरा छाने लगा और इस अंधेरे में दुल्हन दिल्ली अपने भरे योवन के कारण पर पुरुष को आँख मारने लगी।

मनोहरम्

ऐसे समै फीरोज जलालुद्दीन नाम जाको,
खलजी जवन कैकुबाद हिं सो मारि कै।
सत्तरि समा बै वीर दिल्ली के तखत बैठि,
पातसाह दसम कहायो धुरि धारि कैं।
धीरता उदारता दया दि सब जाके गुन,
पीछैं दै छमा यों बढी अग्ग डग डारि कैं।
दुष्ट दंडिबे के रोकिबे के हनिबे के बहु,
बेर बिसवासे तेहु आगस निवारि कै॥५०॥

ऐसे कमजोर समय को पा कर फीरोज जलालुद्दीन नामक जो खिलजी वंश का यवन था ने बादशाह कैकुबाद को मार डाला और बादशाह को मार कर वह वीर अपनी सत्तर वर्ष की आयु में दिल्ली के तख्त पर आसीन हुआ जो दिल्ली का दसवाँ बादशाह कहलाया। उसमें उदारता, दया और धैर्य जैसे गुण थे इनके कारण और क्षमा धारण करने से उसकी लोकप्रियता बढ़ी। फिर दुष्टों को दंडित करने, दुष्टता को रोकने और उनको मारने से उसकी ख्याति फैली। उसने लोगों को विश्वास में ले कर प्रजा के साथ होने वाले अत्याचारों और अपराधों को रोका इससे वह प्रजा का प्यारा शासक बना।

दोहा

भावी भूप सुभांड सम, अति सहनत्व अराति।
दिल्लीसहिं अंगमि दुमति, खलन गही बढि ख्याति॥५१॥
क्रूर भतीजा साह को, दुष्ट अलाबुद्दीन।
काका कों मारन कुहक, लख्खन छित्र हुव लीन॥५२॥
पुनि पुनि कहिय सु साह प्रति, जिन जानिय तिनजाइ।
तदपि न चेत्यो मोह तकि, हितकर मन्नत हाइ॥५३॥

बरस सत्त या गति बच्यो, दसम जलालुद्दीन।
कबहु भतीजे व्याल को, पहुंच्यो दाव हु पीन॥५४॥
कट्टि जलालुद्दीन कंहं, संचि दुरित भर सीस।
भयउ अलाबुद्दीन भुव, एगारहम अधीस॥५५॥

बूंदी के भविष्य में होने वाले राजा सुभांड की तरह अत्यन्त सहनशील होने के कारण खोटी बुद्धि वाले दुष्टों की बन आई। उन्होंने बादशाह को अपने चंगुल में फँसा लिया। इसी बादशाह का एक अत्यन्त क्रूरमति भतीजा अलाउद्दीन था। वह इन्द्रजालिक (कपटबाज) दुष्ट अपने चाचा को मारने के लिए उचित अवसर और कमजोर क्षणों की प्रतीक्षा करने लगा। जिस जिस को इस बात की भनक लगी उन खैरख्वाहों ने जा कर बादशाह को कई बार सावधान किया पर हाय! उस मोहांध बादशाह ने अपनी रक्षा की तनिक भी फिक्र नहीं की। सात वर्षों तक बच कर जिसने दिल्ली की बादशाहत की वही जलालुद्दीन अपने भतीजे रूपी कराल सर्प का दाव लगते ही मारा गया। उसी के भतीजे अलाउद्दीन ने अपने चाचा बादशाह को मार कर अपने सिर पर पापों की गठरी बाँधी लेकिन अन्ततः वह दिल्ली के तख्त पर बैठने वाला ग्यारहवाँ बादशाह अलाउद्दीन कहलाया।

सचरणगद्यम्

ऐसें आपुनैं काका दसम दिल्लीस जलालुद्दीन कों बिस्वासघात सों मारि याहीको भतीज खलजी जवन अलाबुद्दीन ग्यारहों दिल्लीस भयो।

अरु समर्थ सामंत सचिवन को गंजि सबन के सिर पैं प्रभुसक्ति कों प्रसारि उग्रता के अनुसार एक आपुनों ही अमोघ आदेस रहन दयो।

जानैं केही बेर मुगलन कों पराजय दैकैं गुजरात जैसे जनपद कों जीति दिल्ली को सूबा बनायो।

जाके आतंककरि सुभट सचिवादि आर्य म्लेच्छ जे जे यामैं अनिच्छा फरत हे तिनहू नैं जोर आगैं जेर होइ मन मैं बुरो मान्यों तथापि सेवक भाव जनायो॥५६॥

इस प्रकार अपने चाचा और दिल्ली के दसवें बादशाह जलालुद्दीन को

विश्वासघात से मार कर खिलजी यवन अलाउद्दीन दिल्ली का ग्यारहवाँ बादशाह बना। बादशाह बनते ही उसने अपने कइ ताकतवर सामन्तों और सचिवों को दबा कर सभी के सिर पर अपनी पभुशक्ति के पभाव को जमाया। उसने अपने राज में मात्र अपनी ही अमोघ आज्ञा चलाइ। इसी अलाउद्दीन ने कइ बार अपने मुगल शत्रुओं को हराया और गुजरात जैसे जनपद को जीत कर गुजरात को दिल्ली का एक सूबा (पांत) बनाया। इसने अपने भय से अपने उन सारे योद्धाओं, सचिवों जिनमें आय भी थे यवन भी, जो इसे पसन्द नहीं करते थे, बलपूवक समपण करवाया जिसका उन्होंने मन ही मन बुरा भी माना पर उनमें से सभी को इसके सामने दास्य भाव अपनाना पड़ा।

दोहा

साह अलाउद्दीन सम, उग्र निदेस न ओर।
हुव यातैं करजोरि हुव, जेर सकल जिहिं जोर॥५७॥
तदपि लखहु नृप राम तंहं, नारिन चित्त निलज्ज।
अैसे पहु की अंगना, करहि कुनारिन कज्ज॥५८॥

बादशाह अलाउद्दीन जैसी कठोर आज्ञा देने वाला और कोइ शासक नहीं हुआ इसी के फलस्वरूप इसके शत्रु भी करबद्ध हो कर सदा इसके काबू में रहे। हे राजा रामसिंह! आप देखें कि स्त्री का चित्त कितना निलज्ज होता है कि ऐसे बहादुर बादशाह की स्त्री हो कर भी उसने चरित्रहीन स्त्री की भूमिका निभाइ।

सचरणगद्यम्

अैसें इंद्रप्रस्थ के दसमें अधीस आपुनैं पितृव्यक निज धर्म के निधान म्लेछराज जलालुद्दीन कों मारि ताकी गद्दी पाइ पातसाह अलाबुद्दीन आर्यावर्त्त की अपूर्ब सासकता लई।

अरु जिततितके आर्यन कों जेर करि आपुनी आज्ञाकों अमोघ प्रसारि दई।

एक समय दुर्दिन के अंधकार मैं स्त्रीजन सहित मृगया को रिंसु कोई महाबन कों बिनर बिंहिस्त्र कराइ ताकी सीमा पर आपुनैं अंतरंग इक्केन कों जामिक राखि तिनके बाहिर सेना को परिवेस पारि मध्य में

सहस्त्रन नारिन समेत आप ही एक पुरुष आखेट रमत भयो।

अरु सायं संध्या के समय वृष्टि पवन दोउन के प्रसार करि सुद्धांत की स्त्रीन को संघात जत्रकुत्र होइ कुंज कंदरा दिक अनेक आश्रय सोधि छिपि गयो ॥५९॥

इस पकार दिल्ली (इन्दपस्थ) के दसवें बादशाह और अपने चाचा जो अपने धम को ही अपना धन मानते थे, ऐसे म्लेच्छराज जलालुद्दीन को मार कर उनकी गद्दी पा कर अलाउद्दीन ने पूरे आयावत की अपूव हुकूमत पाइ। उसने यहाँ वहाँ सभी जगह के आय राजाओं को दबा कर अपनी अमोघ आज्ञा उन पर चलाइ। एक बार मेघ से आच्छादित दिन के अंधकार में उसने अपनी बेगमों सहित आखेट खेलने की इच्छा से एक घने जंगल को मनुष्य रहित करवाया। अच्छे शिकार वाले इस ेत्र की सीमा पर चारों ओर अपने अन्तरंग विश्वास योग्य योद्धाओं को पहरेदार बना कर नियुक्त किया। यही नहीं पूरे ेत्र के एक घेरा अपनी सेना का लगवाया फिर वह उस जंगल के बीच अपनी बेगमों सहित अकेला शिकार खेलने लगा। इसी बीच संध्या घिर आइ और साथ ही तेज वषा के साथ तूफान आ गया। तेज हवा और वषा से बचने के लिए उसकी बेगमों ने पहाड़ की कन्दराओं में जहाँ जगह मिली वहाँ आश्रय लिया।

एक हुरम ध्वांत भीरु भई महिमासाहि नाम एक इक्का जहाँ जामिक हो तहां आइ वाही के उर सो लागि कितेक काल मैं कंपादिक त्रास के चिह्न तजि वाही कों प्रिय मानि संभोग चाह्यो।

अरु महिमासाहि हू स्वामी सों बहिर्मुख होइ वाही अंगना को इष्ट निबाह्यो।

ताही समय कोऊ सिंह को आगमन भयो जाकों महिमासाह नैं भावी बुंदी कै अधीस रविमल्ल के समान सुरतासनसों ही तीर लगाई मारयो।

अरु बेगम हू यवनेन्द्र को भूलिं याही इक्के कों आपुमैं असुन को आलंबन बिचारयो ॥६०॥

उनमें से एक बेगम अंधेरे और तेज हवा से डर कर कायर की तरह कांपने लगी। इस बेगम ने महिमासाही नामक एक सिपाही जो वहाँ पहरेदार

की तरह तैनात था को अपनी बाँहों में भर लिया और डर के मारे उसके सीने से जा लगी। थोड़े ही समय के बाद जब उसके शरीर का काँपना थमा तब उसे भान हुआ पर यह क्या वह तो उसी को अपना पियतम मानने लगी और तुरन्त ही उससे भोग करने की इच्छा पकट की। उस महिमाशाह ने भी अपने स्वामी से विमुख हो स्त्री की इच्छापूण करने में अपना हित समझा। वह उस सिपाही के साथ रति कीड़ा में संलग्न हो गइ। इसी समय वहाँ कहीं से एक शेर आ गया। इस शेर को महिमासाह ने बूंदी के भावी राजा रविमल की तरह रति करते हुए ही तीर चला कर मार गिराया और उस बेगम ने अपने पति को बिसार कर पहरेदार सिपाही महिमाशाह को ही अपने पाणों का आधार माना।

दोहा

किते तबहि भजिगो कहत, सह तिय महिमासाहि।
बहुरि पलायो कति बदत, दिल्लीपति उर दाहि॥६१॥
तिन कितहु न स्व सरन तक्यो, महिप टारि हम्मीर।
भजत दुर्ग रनथंभ लहि, धरयो निदि्ठ हिय धीर॥६२॥

कुछ लोग कहते हैं कि वह बेगम वहाँ से अपने उस पिय सिपाही महिमाशाह के साथ कहीं भाग गइ। कइ लोगों का मत है कि नहीं दिल्लीपति का दिल जला करउसने बाद में पलायन किया। इस महिमाशाह बेगम ने और कहीं शरण नहीं मिलेगी यह जान कर राजा हम्मीर की शरण में जाना स्वीकार किया। वह बेगम वहाँ से भागते हुए रणथंभोर के दुग में जा कर ठहरी। वहाँ की सुरीति शरण में ही उसके चित्त ने चैन पाया।

इतिश्री वंशभास्करे महाचम्पूके पूर्वायणे चतुर्थ राशौ बीतिहोत्र-चण्डासि वंशवर्णन बीजहड्डाधिराडस्थिपाल वंश्या नुवंश्यविहितव्या-ख्यानावसरव्याहार्यबम्बावदेशबङ्गदेव तत्कुमारदेवसिंह समयचरित्रे हड्डाधिराजबङ्गदेव पर लोकप्रापणानन्तरप्राप्तपितृपट्टनरेन्द्रदेवसिंह स्व-कीयसप्तमपुत्रसमरसिंहा र्थस्वार्धराज्यसमेतस्कन्धावारीकृतबुंदीवितरण स्वयंवैभवविरक्तभावभजन समरसिंह बुंदीप्रापणसमयसंवत्सहितसाङ्गपंचा ङ्गादिसाधनीयबास्तुमुहूर्तज्ञापन समुदितगुरु शुक्रै कराशिसांगत्यसूचना-सहितितत्रत्यरवि चंद्र राश्यादिभोगभाषण चंडासिराजपृथ्वीराज कनिष्ट-पुत्रसामन्तसिंह मुख्यबंशीयंसंहतयवनेन्द्रभट्टभिल्लजैत्रसिंह रणधीर भ्रातृद्वय रणस्तम्भदुर्गसमाक्रमण वितीर्णस्वानुजरणधीरार्थपञ्च लक्ष रौप्यकपट्टो-

पेतछाणिदुर्गजैत्र परलोकप्रापण प्राप्तपितृपट्टमारितबणिगमात्यसमाश्वासिताधिकारीकृततत्पुत्रसुर्जन जयमल्ल रायपाल त्रिक हम्मीर क्षात्रधर्मनिर्वहण।

श्री वंशभास्कर महाचम्पू के पूवायण की चतुथराशि में अग्निवंशी चहुवान वंश वणन के कारण हड्डाधिराज अस्थिपाल के वंश और वंश की शाखाओं की कथा बताने के समय के वचनों में बम्बावदा के पति बङ्गदेव और उसके पुत्र देवसिंह के समय के चरित्र में हड्डाधिराज बङ्गदेव के परलोक पाप्त हुए बाद पिता का पाट पाकर नरेन्द देवसिंह का अपने सातवें पुत्र समरसिंह के लिये आधे राज्य सहित बूंदी को राजधानी बनाकर देना, स्वयं देवसिंह का वैभव से विरक्त होना, समरसिंह के बूदी पाप्त करने के सम्वत् सहित और अङ्गों सहित पञ्चाङ्ग आदि साधने योग्य नांगल करने की सूचना करना, बृहस्पति और शुक के एक राशि पर साथ उदय होने की सूचना सहित वहाँ पर सूय और चन्दमा के राशि आदि भोगने का कथन, चहुवान राजा पृथ्वीराज के छोटे पुत्र सामन्तसिंह के मुख्य वंश वाले जैत्रसिंह और रणधीर दोनों भाइयों का बादशाह के उमराव भीलों को मारकर रणतभंवर (रणथंभोर) का गढ़ लेना, अपने छोटे भाइ धीर के लिये पाँच लाख रुपयों का पट्टा सहित छाणीगढ़ देकर जैत्रसिंह का परलोक पाप्त होना, पिता का पाट पाकर बनिया जाति के कामदार को मारकर उसके पुत्र सुजन, जयमल्ल और रायपाल पर विश्वास कर फिर से अधिकारी बनाकर हम्मीर का ाात्रधम को निबाहना।

दुर्दिनतिमिरसस्त्रीजनमृगयारिरंसुयवनराडलाबुद्दीन प्रत्यन्तर सेखमहिमासाहि सम्मिलिन तदासक्तव्यवायबन्धस्थितमहिमासाहिबाणविद्याबलसमागतसिंहनिपातन परस्परप्रसक्तकथितान्यतरकालपलायितसस्त्रीकमहिमासाहिरणस्तम्भराजहम्मीर शरणग्रहण भूतदिल्लीशयवनेन्द्रसङ्ख्या समाख्या सूचनावसरसूचितसंवत्समयप्राप्तदिल्लीपट्टप्रथम पातसाहकुतबुद्दीन स्वावसानसमयतुरगपातमरण महमूद सहाबुद्दीन द्वयान्यतमसम्बन्धितद्दालस्यलेखभेधद्वापरदर्शन नरेन्द्रविक्रम मुहम्मदरसूल सामसीह सम्बद्धसंबत्रयान्तरसम्यक्त्वसूचन यवने ङ्गेज ग्रंथादिगदितम्लेच्छदिल्लीसमाक्रमणसम्वदसाङ्गत्यद्योतन कथितशककालनृपपृथ्वीराज ग्रहणोत्तर सार्द्धसमात्रया नन्तरदिल्लीम्लेच्छमाहिपत्यप्रवर्तन द्वितीय

यवनेन्द्राऽऽरामसाहाऽल्पकालराज्य करण तदनन्तरकुतबुद्दीन दासजामात्रिलतमिसा परनामतृतीय यवनेन्द्रसमसुद्दीन चिरराज्यानुष्ठान तदनन्तरदूरीकृतकृताल्पराज्यसमसुद्दीनसुतस्वभ्रातृचतुर्थ यवनेन्द्ररुक्नुद्दीन निरङ्कनामतद्भगिनीरजिया प्रासभ्यपुरस्सरपितृपट्टप्रापण मारण कीलनान्यतमोपायदूरीकृतस्त्रीजात्यस्वाम्यतदनुजबहरामसाह पंचम पातसाहीभवन।

मेघ से ढके हुए दिन के अन्धकार में स्त्रियों सहित शिकार की इच्छा वाले बादशाह अलाउद्दीन की स्त्री का दूर होकर शेख महिमासाह से मिलना, उसमें आसक्त मैथुन करने में स्थित महिमासाह का बाणविद्या के बल से आये हुइ सिंह को मारना, ऊपर कहे अनुसार अथवा किसी दूसरे समय में परस्पर आसक्त हुए महिमाशह का उस सिपाही सहित भागकर रणथंभोर के राजा हम्मीर की शरण लेना, पहले हुए बादशाहों की संख्या और नामों की सूचना और ऊपर जताये हुए सम्वत् के समय में दिल्ली का पाट पाकर पथम बादशाह कुतबुद्दीन का अन्त समय घोड़े से गिरकर मरना, महमूद (पैगम्बर) और शाहबुद्दीन दोनों से और अन्य बहुतों से सम्बन्ध रखने वाले, तदालस्य लेखों के भेद का सन्देह दिखाना, राजा विकम, मुहम्मद रसूल और इसा मसीह तीनों के सम्वतों के अन्तर की सूचना करना, यवन और अंगेजों के गन्थ आदि से कहे हुए म्लेच्छों के दिल्ली लेने के सम्वत् की असत्यता दिखाना, कहे हुए सम्वत् में राजा पृथ्वीराज को पकड़े बाद साढ़े तीन महीनों के अन्तर से दिल्ली में यवनों का राज्य होना, दूसरे बादशाह आरामसाह का थोड़े समय राज्य करना, उसके बाद कुतुबुद्दीन का चाकर और उसी का जमाइ इलतमिस (इल्तुतमिश) जो दूसरे नाम से शमसुद्दीन था उसका बहुत समय तक राज्य करना, इसके बाद थोड़े समय तक राज्य करने वाले चौथे बादशाह रुकुनुद्दीन को बादशाहों की गणना के बिना अंकवाली रजिया बेगम का हठपूवक दूर कर के आगे होकर पिता का पाट लेना, उसको मारकर अथवा कैद करके और उपाय से दूर करके स्त्री जाति को अस्वामि करके उसी के छोटे भाइ बहरामशाह का पाँचवाँ बादशाह होना।

तत्समयसमागतविधिवृद्धवद्धबाहिनीबाल्यमुगलम्लेच्छचङ्गेजखान चीन ख्वारजम खुरासाणादिदेशविजयन बहरामानन्तरतत्पुत्रषष्ट यवनेन्द्रमसऊदसाह दिल्लीगद्दिकोपविशन तदनन्तरतत्पितृव्यक्रप्राक्सोढकारकष्ट्सर्वगुणसम्पन्नवृद्धवयः प्राप्तदिल्लीपट्ट दयालुदाससप्तम

यवनेन्द्रनासुरुद्दीनमहमूद महानसकर्मकृशदहनदाहदीर्णदोर्लतस्वपत्नी-प्रार्थितैक किङ्कर्यनर्पण जितगक्खर लाहोर मुलतान मालव समस्थल्या-दिदेशसदाकृतलवण घृता दिवर्जितस्वशिल्पक्रीतान्नाशनपुत्रवत्पालित-प्रजमहमूद स्वावसरसमागतसामन्तान्तरकथनहेतुकस्वलिखितकुरानशुद्ध-शब्दाऽशुद्धतास्थापन तद्गमनोत्तरानुगपृष्टनिदानसप्तम दिल्लीशतन्मूढ-चित्ताल्हादार्थतत्क्रियाकथन कृतचिरराज्यमहमूदानन्तरप्राप्तपट्टपरिणीत-दिल्लीशभगिनीतद्दासाष्टम पातसाहगयासुद्दीनबलवन शेरखाना दिश्यालकमान्यमन्त्रिजनमारण तत्समयमुगलयवनगण पाश्चात्य बङ्गाध्यक्ष प्राच्य प्रान्तसमाक्रमण श्रुतप्रतिहतस्वसैन्यसन्नद्धप्रस्थितप्राचीनगम्यप्राप्त बलवन वीरमुख्यमुहयुद्दीन स्वकरकृतबङ्गाध्यक्षतुगरलखान मर्द्धानयन।

उसी के समय में विधानपूवक बड़ी सेना बांधकर चपल मुगल यवन चंगेजखान का चीन, ख्वारजम और खुरासाण आदि देश विजय करना, बहराम के बाद उसी का काका जो पहले कैद में बहुत कष्ट सहकर निकला था उसका सब गुणों से सम्पन्न वृद्धावस्था में दिल्ली का पाट लेकर दयालु स्त्री सहित सातवें बादशाह नासुरुद्दीन महमूद की रसोइ के कम से दुबल और अग्नि की दाह से जल गये हैं हाथ जिसके ऐसी अपनी स्त्री को पाथना करने पर एक दासी नहीं देना, गक्खर, लाहौर, मुलतान, मालवा, अन्तवेद आदि देश जीत लेने पर भी सद्रैव अपने हाथ की बनाइ हुइ चीजों को बेचकर बिना लवण और बिना घृत आदि का भोजन कर पुत्र के समान पजा को पालना, और महमूद को अपने समय पर आये हुए एक अमीर के कहने के कारण अपने हाथ की लिखी हुइ कुरान के शुद्ध शब्द को अशुद्ध स्थापन करना, उस उमराव के गये बाद नौकर के कारण पूछने पर उस सातवें बादशाह का उस मूख उमराव के चित्त को पसन्न करने की किया का कहना, बहुत समय पयन्त राज करने के बाद उस बादशाह की बहन को विवाह कर उसी का दास गयासुद्दीन बलवन आठवाँ बादशाह हुआ जिसके शेरखाँ आदि इज्जतदार वजीरों को मार डालने से उसी के समय में पश्चिम देशों के पान्त मुगल जाति के यवनों के समूह से और पूवदिशा के पान्त बङ्गाला के हाकिम से दबा लिया जाना, अपनी सेना का नाश सुनकर सज्जीभूत होकर पूव दिशा के जाने योग्य पान्त में बलवन का जाना, मुख्य वीर मुहयुद्दीन का अपने हाथ में बङ्गाले के हाकिम तुगरलखां का मस्तक लाना।

दिल्लीशतत्तर्जनपूर्बकसमुचितावसरसर्वाधिकसत्करण यवनेन्द्र-ज्येष्ठपुत्र मुहम्मद प्राक्कालपञ्जाबप्रान्तमुगलबिजयकरणोत्तरतद्रणमरण-ज्ञापन सयुत्साहितकैखुसरो नामक महमूद पुत्रस्वत्वसामन्त सचिव बर्गबलबन कनिष्टसूनुकुराखानकृताधिपत्यप्रास्यनादरोत्तरतत्पुत्रकैकुबाद नवम यवनेन्द्रीकरण यत्लावसरमिलितमनस्विजनककुराखान हतकैखुस-रोप्रमुखराज्यबर्द्धकबी रकुसङ्गदुष्टस्वपुत्रकैकुबाद प्रबोधनपूर्बकदुष्टजन-निष्कासन यवनराजप्रमादप्रागल्भ्यप्रसन्नसामन्तबर्गप्रातीप्यसमादान-समयहत कैकुबाद बर्षसप्तति बयस्कखलजिजलालुद्दीनफीरोज दशम दिल्लीशीभवन क्षान्तानेकानेकापराधदशम दिल्लीशतितिक्षुतमत्वसहा-यसमात्यसापत्न्यविहितवैजन्यविश्वास व्यापादनतद्भ्रातृजलालुद्दीन स्व-पितृव्यसंहरण प्राप्तपट्टप्राय: पराजितमुगलमण्डलजितगौर्जरजनपदैकादश दिल्लीशयवनंद्रालाबुद्दीन स्वप्रतापप्रणतसर्वसामन्त सचिव संघशासन कारितबिनर बिहिंस्त्र काननसर्बस्त्रीजनसमुपेतमृगयारम माणैक पुरुषा-लाबुदीन पत्न्यन्तरवृष्टि बात व्याकुल परिजनपलायनावसरमहिमासाहि नामैकस्वभर्तृभटसम्मिलन तद्विभ्रमव्यामोहबिगतधर्मपशुक्रियाप्रवृत्तमहि-मासाहिसमागतसिंहबाणबेधन पश्चात्तत्पन्न्युपेतसूचितान्यतमसमय-पलायित महिमासाहि रणस्तम्भराजचाहुवाणचण्डांशुहम्मीर नरेन्द्र शरणग्रहणं सप्तत्रिंशो मयूख: ॥३७॥ आदित: षट्चत्वारिंशदुत्तरैकशततम: ॥१४६॥

बादशाह का उसको धमकाकर उचित समय पर सबसे अधिक सत्कार करना, बादशाह के बड़े पुत्र मुहम्मद की पहिले समय में पंजाब पान्त में मुगलों को विजय कर फिर उसी युद्ध में मरने की सूचना करना, कैखुसरो नामक महमूदशाह सातवें बादशाह के पुत्र का हक उडा कर उमराव और वजीरों के समूह ने बलवन के छोटे पुत्र कुराखान को बादशाह करना चाहा जिसके इनकार करने पर कुराखान के पुत्र कैकुबाद को नवाँ बादशाह करना, कैखुसरो आदि राज्य के बढ़ाने वाले वीरों को मारकर खोटी संगत वाले अपने दुष्ट पुत्र कैकुबाद को समझा कर समय मिलने पर वीर पिता कुराखान का दुष्ट जनों को निकालना, बादशाह का पमाद पगल्भ होने से अपसन्न होकर उमरावों के पतिकूल होने के समय कैकुबाद को मारकर सत्तर वष की अवस्था में खिलजी जलालुद्दीन फीरोज का दिल्ली पर दसवाँ बादशाह होना, दसवें बादशाह जलालुद्दीन फीरोज की अत्यन्त ममता की सहायता से अनेकानेक अपराध सहन और संगह करके शत्रुओं में एकान्त में विश्वास

करने से उसके भतीजे का अपने काका जलालुद्दीन को मारना, पट्ट पाकर मुगल मंडल को पाय: पराजित करके गुजरात देश को विजय कर ग्यारहवें बादशाह अलाउद्दीन का अपने पताप से पणाम योग्य होकर सब उमराव और वजीरों के समूह पर हुकूमत करना, वन को बिना मनुष्य कर सब स्त्रीजनों के साथ शिकार खेलने में एक ही पुरुष अलाउद्दीन रहा वहाँ पति से दूर होकर वृष्टि और पवन से व्याकुल अपने लोगों के भागने के समय महिमाशाह नामक अपने पति के योद्धा से मिलना, उस विभम में विपरीत ज्ञान से धम छोड़कर पशुकिया में पवृत्त हुए महिमाशाह का आये हुए सिंह को बाण से मारना, पीछे उस स्त्री सहित बताये हुए अथवा अन्य समय में भागकर महिमाशाह का रणथंभोर के राजा चहुवानों के सूय नरेन्द हम्मीरसिंह की शरण लेने का सैंतीसवाँ मयूख समाप्त हुआ। और आदि से एक सौ छियालीस मयूख हुए।

प्रायो ब्रजदेशीय प्राकृत मिश्रित भाषा

दोहा

सरन दैन को यह समय, कहिय जवन कर जोरि।
निडर रहहु अक्खिय नृपहु, क्यों न लरहु बहु कोरि॥१॥

महिमाशाह ने करबद्ध पाथना करते हुए कहा कि हे राजा! शरण में गहने का यही समय है अब हम आपकी सुरांति शरण में है। इस पर राजा हम्मीर ने कहा कि अब चिन्ता करने की कोइ बात नहीं। आप लोग निश्चिंत रहें। मैं आप लोगों के लिए सहष लड़ूँगा।

सचरणगद्यम्

ऐसें अभय दैकैं चंडासिराज हम्मीर दिल्ली के अधीस म्लेच्छ राज अलाबुद्दीन के अपराधी महिमासाहि कों आपुनैं सरन राखि लयो।

सो जानत ही यवनेंद्र सोंपि दैबे की कहाई तबहू स्वकीय राजधर्म को प्रतिभू करि नांहिं दैबे को उत्तर दयो।

तदनन्तर बडे बिस्तार की बरूथिनी बनाई दिल्ली को एगारहों पातसाह अलाबुद्दीन कोप करि रनथंभ पैं चलायो।

अरु सेना के संभार सों मेदनी कों मचकावत सेस के सीसन को सहस्त्र ही हलायो॥२॥

इस पकार उन्हें अभय दान दे कर चहुवान राजा हम्मीर ने दिल्ली के यवन बादशाह अलाउद्दीन के अपराधी महिमाशाह को अपनी शरण में रख लिया। यह खबर जब दिल्ली पहुँची तो बादशाह ने कहलवाया कि मेरे अपराधियों को मुझे सौंप दो! तब राजा ने अपने राज्य धम को जामिन बना कर उत्तर कहलाया कि मैं नहीं सौंपूँगा। तदनन्तर अपनी बड़ी भारी सेना को सज्जित कर दिल्ली का ग्यारहवाँ बादशाह अलाउद्दीन कुपित हो कर रणथंभोर पर आकमण करने चला और उसने अपनी जंगी सेना के भार से धरती को कंपायमान कर शेषनाग के हजारों फनों को हिला दिया।

दोहा

जगती अतिजगती जहाँ, बिक्रम सक गत बेर।
साह सजव हम्मीर सिर, किय प्रयान बल केर॥३॥
सोदर महिमासाह को, मीर गाबरू नाम।
अरु नबाव अजमत अली, करन स्वामि जयकाम॥४॥
अपरनाम अहमद अली, रनपटु खान करीम।
हिम्मति पुब्ब बहादुर हु, अलीखान भटभीम॥५॥
अबदुलखान नबाब अरु, नाम सिकंदर नेक।
सिदकीमीर रहीम सह, उमगे जवन अनेक॥६॥
भुग्गैं दिल्लिय जिन भुजन, तिन बल उद्धत तोर।
महरमखान बजीर मति, सज्जिय साह सजोर॥७॥

यह समय विकम संवत् के तेरह सौ बारहवें वष के गुजरने का है जब बादशाह अलाउद्दीन ने शीघता से राजा हम्मीर पर आकमण करने को अपनी सेना सहित पयाण किया। महिमाशाह का सहोदर भाइ जो मीर गाबरू नामक था और नवाब अजमत अली दोनों अपने मालिक के विजयकामी थे। वे अपने स्वामी की फतह के लिए लड़ने आए। इनके अतिरिक्त खान करीम जिसका अवर नाम अहमद अली भी था और बहादुर जिसके नाम के आदि में हिम्मत थी अथात् हिम्मत बहादुर और अली खान जैसे बड़े योद्धा भी बादशाही सेना में थे। नवाब अब्दुलखान और सिकन्दर खान जैसे अनेक योद्धा जिनमें मीर सिद्दकी और रहीम थे। ये सारे यवन शाही सेना के साथ रणोत्सुक हो पूरी उमंग के साथ चले। यही नहीं जिसने अपने बल के सहारे

दिल्ली के भुज भांगे (भुज भांगना एक मुहावरा है जिसका अथ है मार कर दंडित करना) ऐसा महरमखान बुद्धिमान वजीर भी शाही सेना के साथ सज्जित हो कर बढ़ा।

षट्पात्

भुजगराज फन भग्गि कमठ खप्पर कररक्किय।
किरिपति दंतुलि कोटि बिज्जु जुग छबि बररक्किय।
पीलुन दिसन प्रमेह बढिग अतिसार बरब्बर।
सहसा दल संक्रमत चमकि भवभूत चराचर।
गढगढन गज्ज आकंप गहि चकित लज्ज रक्खन चहत।
उपदा पठाइ सद्धत अखिल बीर नियम दुव नृप बहत॥८॥

सपराज शेषनाग के फन टूट कर कमठ (कछुए) की पीठ तड़कने लगी। वराह की दोनों दंतुलियों के अगभाग टूटने को हुए और उसकी आँखों के आगे मानों करोड़ों बिजलियाँ चमक उठी हों। दसों दिशाओं के दिग्पाल हाथियों को बहुमूत्र की शिकायत हो गइ। दस्त होने लगे। यह सभी कुछ इसलिए हुआ कि अचानक सेना ने पयाण किया। सेना के इसँ तरह चलने से संसार के चर और अचर सभी पाणी डर उठे। सेना के पयाण के माग में पड़ने वाले राजा लोग तरह-तरह की भेंट और नजराने भेज कर बादशाह को पसन्न करने के काय में संलग्न हो गए। ऐसे कठिन समय में वीरों का नियम तो मात्र दो राजाओं ने ही धारण किया।

दोहा

पहु लक्खन चित्तोर पति, इक सगब्ब सीसोद।
पर संभर रनथंभपुर, मुरि हम्मीर समोद॥९॥
धम्म लज्ज अज्जन धरैं, उभय महीपति एह।
अनुगभाव सद्धै अवर, बंछै अधम बचेहि॥१०॥
जे जैंसे मृगराज कों जंबुक सद्धतजात।
इम अंतिक रतकील वा, लूम अराल हलात॥११॥

इन दो राजाओं में से एक तो चित्तौड़गढ़ का स्वामी स्वाभिमानी सिसोदिया वंशीय राजा गढ़ लमणसिंह था और दूसरा रणथंभोर का चहुवान राजा हम्मीर। ये दोनों राजा मोदपूवक भिड़ने को मुड़े। आर्यों के धम और लज्जा को धारण करने वाले ये दोनों राजा ही थे। शेष सारे आय राजा दास भाव की साधना कर स्वयं की जान बचाने वाले निकले। इन दोनों के अतिरिक्त बाकी के सारे राजा तो ऐसे व्यवहार का पदशन कर रहे थे जैसे सिंह को पसन्न करने को गीदड़ करता है। अथवा जैसे हाथी के पास आ कर कुत्ते अपनी टेढ़ी पूँछ को हिलाते हैं।

ते गति संकहि काल तकि, सद्धत आवत साह।
दोउ न बिन ओरन दिप्यो, रक्खन अज्जन राह॥१२॥
आवत दल ठिग अधिप के, रुपि काका रनधीर।
कहि पठई पहिलें करहु, इतकों प्रसभ अमीर॥१३॥
कै बंदी मोकों करहु, वा तुम होहु असीर।
आदि हमारे ईस व्है, प्रभु व्है वा तुम पीर॥१४॥

उनकी गति ले कर इस कठिन समय में डरे हुए राजा आते हुए बादशाह को पसन्न करने के लिए वैसी ही भंगिमा बनाने लगे। इन दो राजाओं के अतिरिक्त अन्य कोइ राजा आर्यों के माग के साथ आगे आता हुआ नजर नहीं आया। शाही सेना का पचंड दल जब रणथंभोर के नजदीक आया तो सबसे पहले उसे रोकने के लिए राजा का चाचा रणधीर राह में अवरोध रूप हो कर आया और उसने अपना पत्र भिजवा कर बादशाह से कहलवाया कि आगे बढ़ने से पूव एक के गव को तिरोहित करो। या तो तुम मुझे बंदी बनाओ अथवा तुम मृत्यु को पाप्त हो, या तो हमारे आदि देव महादेव ही मेरे इश्वर रूप रहेंगे सभी जगह या फिर तुम्हारे पीर।

पज्झटिका

यह पत्र छानिगढके अधीस, रनधीर पठायउ रक्खि रीस।
सो सुनत अलाबुद्दीन साह, पहिलैं इत आयउ नद प्रबाह॥१५॥
विक्रम सक दुव भुव त्रि ससि बेर, रचि चैत्र बिसद गढ छानि घेर।
अबिरत लगाई तोपन अलात, पटके कि पुरंदर बज्रपात॥१६॥

मिलि कटक चंद्र परिबेख मान, मंडिय रन तोपन बल अमान।
हम्मीर पितृव्यक अति उछाह, रनधीर रचिय रन समन राह॥१७॥

इस पकार का पत्र छानिगढ़ के स्वामी रणधीर ने कुपित हो कर भिजवाया। जिसे सुनते ही बादशाह अलाउद्दीन नदी के पवाह की तरह बहता हुआ पहले इधर (छानिगढ़ की ओर) आया। विकमी संवत् तेरह सौ बारह के वष में चैत्र माह के शुक्ल पा में बादशाही सेना ने छानिगढ़ को घेर लिया फिर अपने साथ लाइ गइ तोपों के बारूद में अग्नि लगा कर निरन्तर दुग पर गोले बरसाने लगे मानों इन्द का वजपात हो रहा हो। चन्दमा के चारों ओर बनने वाले गोले की तरह सेना ने दुग को पूरा घेर कर तोपों से अपरिमित युद्ध रचा। उधर से राजा हम्मीर के चाचा रणधीर ने उत्साहपूवक यमराज की तरह हो कर युद्ध शुरु किया।

कलि साह पंच हायन टिकाय, खल जनन बहुन गो अज्ज खाय।
भट मुख्य साहके च्यारि भंजि, रन तल्प लह्यो रनधीर रंजि॥१८॥
नृप राम सुनहु चउ जवन नाम, रनधीर दियउ जिन्ह भवबिराम।
क्रमअबदुल अहमद बलि करीम, अजमतअली हुमृत समरसीम॥१९॥
चहुवान मुख्य चउ खलन खाइ, आहव झर्‍यो सु रनधीर आइ।
लै साह छानिगढ़ प्रसभ लग्गि, आयउ अल्हनपुर झरत अग्गि॥२०॥

बादशाह ने पाँच दिनों तक लगातार युद्ध चालू रखा और इस अवधि में कइ आर्यों को खा गया अथात् कइ हिन्दू योद्धा मार डाले। उधर विरोध में रणोत्सुक रणधीर ने भयंकर युद्ध किया और बादशाह के चार बड़े सामन्त योद्धाओं को मार कर स्वयं रणशय्या पर सो गया। हे राजा रामसिंह! अब आप उन चारों यवन सामन्त योद्धाओं के नाम सुनें जिनके जीवन को चहुवान रणधीर ने युद्ध में विराम दिया अथात् युद्ध में मार कर उनका संसार में आवागमन मिटा दिया। चहुवान रणधीर के हाथों रणभूमि में मारे जाने वाले कमशः अब्दुल, अहमद, करीम और अजमतअली थे। शाही सेना के इन चार मुख्य सामन्त योद्धाओं को खा कर रणभूमि में वह चहुवान रणधीर स्वयं गिर पड़ा। छानिगढ़ के इस पकार विजित हो कर ढह जाने पर वह बादशाह सदप अपनी तोपों से आग बरसाता हुआ अल्हनपुर आया।

हम्मीर बीर तंहं भिल्ल भोज, फेरिय द्वि बेर रतिवाह फोज।
अल्हनपुर तें पुनि साह आइ, रन के गिरि पटक्यो दल रिसाइ॥२१॥
तोपन चढाई तंहं लाग तक्कि, लिय छाइ दुर्ग गोलन ललक्कि।
करि रुद्ध दरे चउ फोज फेरि, घंटिन चउरासिन निविड घेरि॥२२॥
दल बचन गर्द जिततित दिवाइ, लग्गिय रिपु तोपन लाय लाइ।
चित्तोर रान लक्खन सुचित्त, सुनि यह सहाय दिय महत मित्त॥२३॥

जहाँ राजा हम्मीर के वीर भोज नामक भील नायक ने रात्रि में अचानक हमला कर शाही सेना को दो बार भगाया। पर सवेरा होने पर अल्हनपुर से बादशाह आगे बढ़ा और उसने अपनी कोधित फौज के साथ रणथंभोर की पहाड़ी के तले मोचा डाला। आते ही तोपों के गोलों से निशाने साध कर पूरे रणथंभोर के दुग को दहकते लाल गोलों से आच्छादित कर डाला। शाही सेना ने दुग को सभी ओर से घेर लिया और दुग के चारों माग अवरुद्ध कर दिये। इसके साथ ही विशाल बादशाही सेना ने चौंरासी सघन घाटियों को घेर लिया। और सेना के बचाव के लिए जगह जगह खड्डे खुदवा दिये फिर अपनी तोपों से शत्रु आग उगलने लगा। अच्छे हृदय वाले चित्तौड़गढ़ के राणा गढ़ लमणसिंह ने अपने मित्र को बड़ी सहायता दी।

सजि अष्टि सहंस दल जव समीर, बल्लन करि तिनबिच मुख्य बीर।
रनथंभ भीर दिय सिक्ख रान, आयउ तब बल्लन खग उडान॥२४॥
हय सल खट जोजन तें बहोरि, जब धार बेसरन भार जोरि।
सबरन सहाय पथ सैल सीस, उल्लंघि लह्यो रनथम्भ ईस॥२५॥
हम्मीर सुनत अररन हटाइ, ब्रजि समुख कोस बहु धन बटाइ।
सचि अतुल बधाई लाइ संग, रनथंभ पैठि किय सुमह रंग॥२६॥

उन्होंने अपनी सोलह हजार की संख्या वाली पवन वेग से लड़ने वाली सेना को सज्जित किया और बल्लन को उसका सेनापति बना कर जब रणथंभोर की सहायता करने के लिए रवाना किया तो वह वीर बल्लन भी सेना सहित पी की उड़ान के समान सत्वर पहुँचा। घोड़े, ऊँट आदि जब छह योजन की दूरी पार कर पहुँचे तब खच्चरों ने सेना की सामगी का भार ढोया। भीलों की सहायता से पवतों के शिखर वाले सीधे माग से पहाड़ लाँघती सेना

ने रणथंभोर के स्वामी को पाया अथात् उनसे जा मिली। चहुवान राजा हम्मीर ने सेना का आगमन सुनते ही तुरन्त अपने दुग के दरवाजे खुलवाए और एक कोस तक स्वयं ने सामने जा कर सेना की पेशवाइ की और हर्षित हो कर इनाम में धन बाँटा। फिर सेना को अपने साथ ले कर वह दुग में आया और वहाँ आ कर बड़ा उत्सव किया।

आवाज मचिगक तोपन अपार, संगीत दान हुव बिनु सुमार।
प्रचुरहि लुटाइ बसु दीन पोखि, सम्भर लिय साह उछाह सोखि॥२७॥
जिम मुक्ख्य बुल्लि तब जवनराज, मह कारन पुच्छिय रचि समाज।
जब अरज खान महरम बजीर, किय जोरि करन बढ़ुहिं प्रबीर॥२८॥
चित्तोर रान लक्खन बिचारि, सोलह सहंस्र पृतना प्रसारि।
बल्लन चमूप करि हित बढाई, रनथम्भ भीर पठयो रिसाइ॥२९॥
ते जोजन खट सन मय तुरंग, पठवाइ पारि भिल्लन प्रसंग।
हम्मीर सुभट लहि भोज भिल्ल, व्है पत्ति गये गिरिपथ हठिल्ल॥३०॥
बर्द्धापन ताको यह बिसेस, नय धर्म रीति मंडिय नरेस।
सुनि साह कहिय पथ गहन सोधि, बहुरिन बहु अैहैं हित प्रबोधि॥३१॥
अन्नादि सकल जीवन उपाय, याही मग लैहैं अैंचि आय।
इहिं हेतु इहां के ग्राम्य आनि, जर देहु लेहु मग मर्म जानि॥३२॥

उधर से तोपों के अपार धमाके हो रहे थे और दुग वाले उत्सव में संगीत और दान का बेशुमार दौर चल रहा था। राजा हम्मीर ने इस खुशी के अवसर पर बहुत सारा धन दे कर दीन व्यक्तियों का पोषण किया और चहुवान ने बादशाह के उत्साह को सोख लिया। तब बादशाह ने अपने यवन सरदारों को बुला कर बैठक की जिसमें उसने पूछा कि दुग में यह उत्सव किस बात का है ? इस पर वीर वजीर महरमखान ने आगे बढ़ कर अपने हाथ जोड़ कर निवेदन किया कि चित्तौड़गढ़ के राणा गढ़ लमणसिंह ने अपने मित्र की सहायता करने और हमारी खिलाफत करने को सोलह हजार की संख्या वाली सेना भेजी है। इस सेना का सेनापति वीर बल्लन को बना कर रणथंभोर की मदद को भेजा है। यह सेना छह योजन का फासला तय कर ऊँटों और घोड़ों के साथ भीलों द्वारा बताए छोटे रास्ते से सत्वर पहुँची है। यही नहीं इस सेना के कइ योद्धा राजा हम्मीर के वीर नायक भोज भील के

साथ पैदल ही पहाड़ी पथों पर चले गए हैं। यह उत्सव इसी खुशी में धम और नीति में पवीण राजा हम्मीर ने आयोजित किया है। यह सुन कर बादशाह ने कहा कि शत्रु ने गहन रास्ते चुन कर अपना हित करने का सोचा है। वे इस पकार इन रास्तों से सेना के लिए खाद्य सामगी आदि पाप्त करते रहेंगे। इसलिए अब यह आवश्यक हो गया कि तुम लोग यहाँ से स्थानीय गामीण लोगों को बुला कर उन्हें धन दे कर इन रास्तों का भेद जानो।

रुक्कहु तमाम तुम कोह राह, संचरि सकैं न बलि इम सिपाह।
यह सुनत सजव जिततित बजीर, प्रतिमग्ग गिरिन पठये प्रबीर॥३३॥
परि परिधि तीन जोजन प्रमान, जालिय जरि रुक्किय अखिल जान।
चलि तोप फैर सहंसन प्रचंड, आराव इक्क मच्चिग अखंड॥३४॥
फैलिय चटकारिन अमित फैर, नीरहु हुव दुर्लभ निकट नैर।
गिरि बिपिन भूमि तरु कोट ग्राव, सब धूमरंग हुव सुचि स्वभाव॥३५॥

इस पकार यहाँ के सारे रास्ते जान कर तुम सारे पहाड़ी रास्तों को रोक लो जिससे शत्रु के सिपाही और अधिक संख्या में उधर न जा सके। बादशाह से यह निदेश पाते ही वजीर ने शीघ ही अपने वीरों को पत्येक ऐसे मार्गों पर यहाँ वहाँ तैनात किया। इस पकार तीन जोजन की परिधि वाला लंबा घेरा डाल कर सिपाहियों का जाल-सा बिछा दिया। इसके बाद अपनी सैकड़ों तोपों से गोले दागना शुरू करवाया। तोपों का शोर निरंतर पवाहित होने वाला हो गया अथात् उनके चलने के बीच एक अबाधित कम बन गया। चुटकी बजाने जितने समय में तोपें चलने लगी और धमाका से नगर के समीप नीरवता दुलभ वस्तु की तरह हो गइ। पवत, वन, भूमि, पेड़ पाचीर के पत्थर आदि सभी चीजें गोलों की अगन से धुमिल रंग की हो गइ।

गर्तनबिच उत के इत गिरात, पारत इत के उत बज्रबात।
हम्मीर बंधु जल्हन गहीर, बल्लन बलि लक्खन रान बीर॥३६॥
कढि कबहु कबहु ए दुव कराल, जुत भटन पारि रतिवाह जाल।
भिरि देत साह दल मथि भजाइ, अति प्रसभ जवन पुनि रुपत आइ॥
मारत रचि हल्ला बढत मीर, पबिसात दुर्ग पच्छे प्रबीर।
छिदि गोलन कति तरु होत छार, अंगार मचत जिततित अपार॥३८॥

तोपों के गोले उधर के इधर गिरने लगे और इधर के गोले उधर वज्रपात के समान गिरने लगे। राजा हम्मीर का भाइ गंभीर वीर जल्हन और राणा का वीर सेनापति बल्लन ये दोनों कोध में विकराल हो कभी-कभी रात्रि को अचानक हमला करने के लिए अवश्य अपने वीर योद्धाओं के साथ दुग से निकलते और शाही सेना से भिड़ कर उसे दूर भगा देते पर तुरन्त ही हठी यवन वापस वहीं आ जाते। हल्ला बोल कर अथात् धावा कर बढ़ते हुए कुछ यवन वीर दुग के पीछे से पवेश करते। शाही सेना के तोपों के गोलों से कइ पेड़ जल कर राख हो गए और चारों ओर उछलते हुए अंगारे ही अंगारे ही नजर आने लगे।

रंचहु रच्यो न तंहं गगन रम्य, अतिधूम भयउ पच्छिन अगम्य।
खग उडत गिरत कति कुलट खाइ, परत कि करेटु झखपोत पाइ॥३९॥
लगि बातबेग अति उडि अलात, जारत कति कोसन प्रांत जात।
इम लसत तिमिर गोलन उडान, मानहु अलात प्रेतन मसान॥४०॥
मिटि गहन सु पद्धर होत मग्ग, इत उत प्रपात गोलन उदग्ग।
कसमसत सेस भजि भूमिकंप, सुचि अंधकार जलद कि ससंप॥४१॥
तपि दूर दूर सरिता तड़ाग, थिर होत सलिल आवट्टि थाग।
पूप कि कटाह जलजंतु पंति, भावित भटित्र हुव भंतिभंति॥४२॥

आकाश जरा-सा भी सुन्दर न रह गया। सारा धुएँ से भर जाने के कारण सुरम्य पायियों के आने जाने के काबिल न रहा। पी उड़ते हुए कुलांट (गिरह) खा कर भूमि पर गिरने लगे मानों किलकिला पी मछली के बच्चे को देख कर झपटता हुआ नीचे आ रहा हो। गोलों की चिनगारियाँ वेग से चलते पवन में मिल कर कोसों दूर-दूर के पान्त को जलाने लगी। चारों ओर अंधेरे में उड़ते हुए गोले यों लगने लगे जैसे श्मशान में पेत अंगारे उड़ा रहे हों। घने जंगल जल कर सीधे मार्गों में बदलने लगे जब उन पर ऊपर से गोले गिरने लगे। शेषनाग कसमसा उठा और पृथ्वी के काँपने से भूकम्प होने लगा। अग्नि और अंधकार दोनों मिलकर ऐसे दिखाइ देने लगे मानों बिजलियाँ और मेघ साथ-साथ हों। तोपों की आग से दूर-दूर के तालाब और नदियाँ उबलने लगीं जिससे उनका पानी सूखने लगा और वहाँ पैदल जाने के रास्ते बनने लगे। उबलते पानी के कारण जल के जीव कड़ाह में पूए की तरह उबल कर भूने हुए कबाब हो गए।

ढिग पुरन राल गंधक कुढार, छिप्रहि उडि संगिन करत छार।
पारद के क्रेता हानिपाइ, उर कुट्टि बुंब पारत अघाय ॥४३॥
कालिय पन नालिय गन कितेक, उल्कामय लालिय धरत एक।
भट केक सलिल उपचार भुल्लि, डहि तोप भरत खिन मरत डुल्लि ॥४४॥
गुटिका फुलिंग बिखरन विसाल, करका खद्योत कि जलद काल।
हम्मीर रत्ति परिखद सुहाइ, इक पुष्पमहल बैठत सु आइ ॥४५॥
रचिकैं रनके गिरि सिर समाज, रत्तिहि इत बैठत जवनराज।
अन्योन्य सभा पिक्खि न अघात, पढि वाहवाह उच्छाह पात ॥४६॥

नगर के पास डाली गइ गंधक (बारुद) आग पाते ही पल भर में साथ वाली वस्तुओं को भस्म कर देती और पारे के खरीदने वाले सौदागर अपनी छाती पीट-पीट कर जोर से रोने लगे। कालिका के नियम की तरह तोपों की नालों का समूह अग्निमय लाल रंग धारण करने लगा अथात् कालिका रक्तपान करने से जैसे लाल रंग वाली हो जाती है वैसे ही आग उगलती तोपें लाल हो रही हैं। कइ वीर तपती हुइ लाल तोप को पहले पानी से उपचार करना भूल कर अथात् ठंडी करना भूल कर तोप भरते हुए जल कर मरने लगे। तोप के गोले और उनसे उड़ती चिंगारियां बिखर कर चारों ओर ऐसा वातावरण बना रहे हैं मानों वषाकाल में मेघों से ओले बरस रहे हों और उनके बीच जुगनू उड़ रहे हों। राजा हम्मीर पत्येक रात्रि को पुष्प महल में अपना दरबार लगा कर उसमें बैठता है। उधर रणथंभोर के पहाड़ पर युद्ध रच कर रात को यवन लोग वहाँ पहाड़ों पर सभा रच कर अथात् इकट्ठे हो कर बैठते हैं। दोनों ओर के दल अपनी सभा रचते हुए नहीं अघा रहे परस्पर वाह वाह कर उछाह पाते हैं।

बिनु चरहु बिदित इत उत उदंत, गहि दूरबीन कचकच गिनत।
संभरढिग इक निसरीति सच्च, चंद्रकला पातुरि रचत नच्च ॥४७॥
ताकी एडी बिच तक्कि तीर, दिय मीर गाबरू पटु प्रबीर।
अक्खिय इत महिमासाहि इक्खि, सर सिद्ध अनुज मोसोंहि सिक्खि ॥४८॥
मैं अबहि साहके छत्र मारि, इक बान देत सिर सों उतारि।
गदि इम रु छत्र दिय द्रुत गिराइ, यह किय अपुब्ब नृप सरन आइ ॥४९॥

सो पिक्खि नृपहु महिमादिसाहि, संबोधिय बहुबिध गुन सिराहि।
इम लरत गये बहु बित्ति अब्द, संतत मिट्यो न तंहं तोप सब्द।।५०।।

दूतों के बिना ही इधर और उधर के सारे वृत्तांत मालूम हो रहे हैं। बस दूरबीन से देख कर वे अपने शत्रु के केश-केश गिन लेते हैं अथात् छोटी से छोटी हलचल को देख लेते हैं। चहुवान राजा के समा एक रात्रि समारोह में जब चन्दकला नामक गणिका नाच रही थी कि तभी उसकी एड़ी का निशाना ले कर यवन गाबरू ने एक तीर मारा। इसे देख कर महिमाशाह बेगम ने कहा कि सरसिद्ध मेरे छोटे भाइ ने मुझसे ही धनुविद्या सीखी है। मैं अभी बादशाह का छत्र काट कर अपने बाण से उसका सिर उतार सकता हूँ। इतना कहकर उसने अपना एक तीर चला कर सचमुच बादशाह का छत्र काट गिराया और यह अपूव कम कर वह राजा के पास आया। राजा हम्मीर ने यह देख कर महिमाशाह के निशाने की पशंसा की और साथ ही उसके गुणों की तारीफ करते कहा कि हमें इस तरह लड़ते हुए कइ दिन व्यतीत हो गए हैं पर अभी तक ये निरंतर होने वाले तोपों के धमाके नहीं थमे हैं।

दोहा

साहहि इम चउदह समा, पंच छोनि नव मास।
रन बिरचन रनथंभ सों, बोरयो बिजय बिसास।।५१।।
तजि प्रयत्न जवनेस तब, जंपिय दिल्लिय जान।
संभर सचिवन तंहं सठन, अरिपन गहिय अमान।।५२।।

बादशाह को इस तरह यहाँ घेरा डाले चौदह वष पाँच माह उन्नीस दिन व्यतीत हो गए और युद्ध में कोइ निणय नहीं निकल पाया तब उसके मन में इस रणथंभोर दुग को जीत लेने की आशा ीण हो गइ। उसे मन ही मन विश्वास हो गया कि जीत हमारी न हो सकेगी। तब यवनेश ने इस दुग को फतह करने के अपने सारे पयत्न छोड़ कर दिल्ली लौटने का विचार किया पर तभी चहुवान राजा के मूख सचिवों ने अमाप शत्रुता निभाइ अथात् वे शत्रु से जा मिले।

षट्पात्

मिली सुर्जन जयमल्ल रायपाल सोदर त्रय।
बालन स्वजनक बैर भूप बिश्वास बीत भय।

मंडि मंत्र निज निलय इक्क छन्नैं कढि आयउ।
मिलत साह मनमोरि सकल गढ मर्म सुनायउ।
हम सचिव रिक्त कोसन कहहिं महिप सुनत कढ्ढि रु मरहिं।
रावरो अमल रनथंभगढ़ किंकर हम छलबल करहिं ॥५३॥

सुजन, जयमल और रायपाल नामक तीनों भाइयों ने अपने पिता का वैर लेने के सबब राजा से निडर हो कर विश्वासघात किया। उन्होंने अपने घर में बैठ कर पहले मंत्रणा की फिर चुपके से वहाँ से निकल कर बादशाह से आ मिले और उसे पूरे रणथंभोर गढ़ के सारे ममस्थल बता दिये अथात् उन्होंने वे सारे विकल्प बताए जिनसे दुग फतह हो सकता था। आगे कहा कि हम सभी सचिव साथ जा कर राजा से खजाना खाली होने की बात कहेंगे जिसे सुनते ही राजा दुग से बाहर आएगा और मारा जाएगा। हम आपके दास हैं अत. रणथंभोर के दुग पर छल-बलपूवक आपका आधिपत्य करवा कर ही मानेंगे।

दोहा

इम कहि साहहि रक्खि इन, लिय गढछानि लिखाइ।
अन्न कोस नट्ठे अखिल, अक्खिय भूपहिं आइ ॥५४॥
बज्रपात सम यह बचन, सुनत दुर्ग हुव सोर।
महिपति चहि निश्चय मरन, मह किय बीरन मोर ॥५५॥
जंपिय महिमासाहि जब, महिप देहु अब मोहि।
अप्प कहिय को आइ अरि, तक्कैं मोछित तोहि ॥५६॥
तिम रानिय आसावतिय सोंपन महिमासाहि।
पुच्छिय तहं अक्खिय प्रिया, न बचहु बच न निबाहि ॥५७॥
इक रानिय आसावतिय, देवल कुमरि द्वितीय।
सज्ज भई चहि सहगमन, गुन सुहि मन्त्रि गरीय ॥५८॥
मरन धारि हम्मीर तब, कहि निज रतन कुमार।
गिनि सिसुत्व चित्तोरगढ़, पठ्यो छन्न प्रचार ॥५९॥
बझन लै तिहिं गो बहुरि तबहि दुग्ग चित्तोर।
निंदा सहि नृप रान की, जो प्रबिस्यो तजि जोर ॥६०॥

बादशाह को यह सब कुछ कह कर उन्होंने गुप्त रूप से उससे गढ़ का पट्टा लिखवा लिया फिर वे सारे मिल कर राजा के पास आए। वहाँ आ कर उन्होंने कहा कि हे राजा! हमारा खजाना और अन्न के भण्डार समाप्त हो गए हैं। वजपात के समान इन वचनों को सुन कर पूरे दुग में शोर (हाहाकार) मच गया और वीरों के मुकुट चहुवान हम्मीर सिंह ने मरने का निश्चय कर उत्सव किया। तब महिमाशाह ने राजा से कहा कि हे राजा! अब आप राज्य मुझे सौंप दें। आपने कहा था कि मेरे रहते कौन शत्रु यहाँ आ कर तेरी ओर देख भी सकता है पर अब स्थितियाँ बदल गइ है मुझे सौंप कर सुलह कर लीजिये। इसी आशय की बात रानी आशावती से राजा ने पूछी कि अब महिमाशाह को सौंप दे क्या? इस पर उसकी पिय रानी ने कहा कि हे राजा! अपने वचन का निवाह नहीं कर बचिये मत। मरने की सोच कर तब राजा हम्मीर ने अपने पुत्र राजकुमार रत्नसिंह को बुलवाया और उसकी बाल्यावस्था देख कर उसे गुप्त रीति से चित्तौड़गढ़ भिजवा दिया। वीर बल्लन ने इस कुमार रत्नसिंह के साथ जब चित्तौड़गढ़ के दुग में पवेश लिया तो उसे अपने स्वामी राणा गढ़ लमणसिंह द्वारा की गइ घोर निंदा को सुनना पड़ा पर फिर भी वह भीतर गया।

षट्पात्

इत हम्मीर अधीस अरर प्रातहि खुलाइ अर।
साह कटक मथि सजव दारि सिदकी रु सिकंदर।
हनि पुनि खानरहीम खानमहरम वजीर खल।
तिलतिल हेतिन तुट्टि बसिय सुरलोक महाबल।
कति कहत जानि न बचत कियउ हर उपदा निज सिर हरखि।
महिमा रु मीर दुव रन मिलत परिग जुज्झि भुजबल परखि॥६१॥

इधर चहुवान राजा हम्मीर ने पातः होते ही शीघ दुग के दरवाजे खोलने का आदेश दिया। दरवाजे खुलते ही वह वीर शाही सेना पर टूट पड़ा और शीघ ही उसने सिद्की और सिकंदर को मार गिराया। इसके बाद रहीम खान और दुष्ट वजीर महरमखान को मार कर वह महाबली चहुवान शत्रुओं के शस्त्र पहारों से कट कर तिल-तिल हो स्वगलोक को गया। कुछ लोगों

का यह भी मत है कि युद्ध में अपने बचने की उम्मीद नहीं देख कर उसंने हष के साथ अपना सिर काट कर महादेव को अपित कर दिया। राजा की तरह वह महिमाशाह और मीर गबरू दोनों लड़ते हुए रणभूमि में जूझते हुए मर गए।

दोहा

सर दुव त्रि ससि तपस्य सित, जंहं विक्रम सक जात।
रन रजरज हम्मीर हुव, अंकुरि जस अवदात॥६२॥
बरस अष्टि हम्मीर वय, सरन रक्खि वह सेख।
तीस समा बय मैं तदनु, लहि त्रिदिव रु हुव लेख॥६३॥
यह पिक्खत आसावति रु, देवलकुमरि उदार।
गढ मज्झहि किय सहगमन, रचि दु पक्ख उद्धार॥६४॥
मिच्छ अलाबुद्दीन इम, हनि संगर हम्मीर।
लरि किल्ला रनथम्भ लिय, बरस चउद्दह बीर॥६५॥

विकम संवत् तेरह सौ पच्चीस के वष में फाल्गुन माह के शुक्ल पा में जबकि यह वष समाप्ति पर था, अपने उज्ज्वल यश को अंकुरित कर युद्ध में वह चहुवान राजा हम्मीर कण-कण हो कर बिखर गया। चहुवान राजा हम्मीर ने जब महिमाशाह को शरण दी उस समय उसकी उम सोलह बरस की थी और तीस वष की आयु में उसने स्वगलोक जा कर देवताओं की जगह ली। अपने पति को मरा हुआ देख कर उसकी दोनों रानियों आशावती और देवल कुंवरी ने दुग में ही सहगमन किया अथात् सती हो कर अपने और अपने पति दोनों के कुलों का उद्धार किया। यवन बादशाह अलाउद्दीन ने इस पकार युद्ध में राजा हम्मीर सिंह को मार कर विजय पाप्त की और रणथंभोर के दुग को चौदह वष तक निरन्तर लड़ कर अन्ततः जीत कर ही दम लिया।

इतिश्री बंशभास्करे महाचम्पूके पूर्वायणे चतुर्थ राशौ बीतिहोत्र-वसुधेश्वर बीज्यबर्णनबीजहड्डाधिराडस्थिपाल वंश्यानुवंश्यविहितव्या-ख्यानावसरव्याहार्यबम्बाबद बुन्दीश्वरनरेन्द्रदेवसिंह समकालीनरण-स्तम्भराजचण्डासिकुलकोटीरनरेन्द्रहम्मीर चरित्रेश्रुतैतदुदन्तविज्ञातचाहु-वाणप्रत्यनीकत्वजिगीषुयवनेन्द्रदुगशशित्रिचंद्र मित बिक्रमसमासमयरण-

स्तम्भागमन चित्रकूटराजशीर्षोद्द लक्ष्मण रणस्तम्भराजचहुवाणहम्मीर तत्समयक्षात्रधर्मधारकत्वसूचन प्रथमपञ्च वर्ष कृतरणज्ञाततद्धतस्वभट-चतुष्क निपातितरणधीरम्लेच्छराजछाणिदुर्गसमाक्रमण समागताल्हण-भिल्लभोजसौप्तिकद्वय बिध्वस्तसैन्यम्लेच्छराजरणस्तम्भोपकण्ठरणशैल-समारोहण चित्रकूटराजराणालक्ष्मणहम्मीर सहायार्थसेनानीबल्लणसमेत-षोडशसहस्त्र सैन्यसम्प्रेषण हम्मीर सगौरवतद्वर्द्धापनश्रुतैतदुदन्तयवनेन्द्र-प्रतिबोधितवजीरतत्सानुमत्समस्तसरणि सन्ध्या दिरोधन हम्मीर बन्धु जल्हण राणाभटबल्लण द्वयान्तरासौप्तिकादिसंख्यवलपरपृतनाप्रतारण निशावसर-सभासमीक्षणयवनेन्द्रवीरमीरगाव रुसम्भरराजमारङ्गनृत्यङ्गणिकाचन्द्रक-लापार्ष्णिप्रदरबेधन।

श्री वंशभास्कर महाचम्पू के पूवायण की चतुथ राशि में अग्निवंशी चहुवान वंशवणन के कारण हड्डाधिराज अस्थिपाल के वंश और वंश की शाखाओं की कथा बनाने के वचनों में बम्बावदा और बूंदी के पति राजा देवसिंह के समय में होने वाले रणस्तम्भ के राजा चहुवान वंश के मुकुट नरेन्द हम्मीर सिंह के चरित्र में उसका वृत्तांत सुनकर चहुवान की शत्रुता जानकर जीतने की इच्छा वाले बादशाह का विकम के सम्वत् तेरह सो इक्कीस में रणथंभोर आना, चित्तौड़ के राजा सिसोदियँा लमणसिंह और रणस्तम्भ के राजा चहुवान हम्मीरसिंह का उस समय ात्रधम धारण करने की सूचना करना, पथम पाँच वष युद्ध करके उसके मारे हुए चार वीरों को जानकर रणधीर को मारकर बादशाह का छांनीगढ लेना, अल्हनपुर में आने पर हम्मीरसिंह के भरोसेवाले वीर भोज नामक भील के दो रतिवाहों से विध्वंस हुइ सेना से बादशाह का रणथंभोर के समीप युद्ध के पवत पर चढ़ना, चित्तौड़ के राजा महाराणा लमणसिंह का सहायता के लिये सेनापति बल्लन सहित सोलह हजार सेना भेजना, हम्मीरसिंह का गौरव के साथ उत्सव सुनकर बादशाह का वजीर को समझाकर उसकी सलाह से सब माग और पवतों की संधियों (घाटियों) को रोकना, हम्मीर के भाइ जल्हन और राणा के भट बल्लन का जुदा-जुदा रतिवाह देकर युद्ध में शत्रु की सेना को तोड़कर नाश करना, रात्रि के समय सभा देखकर बादशाह के वीर मीरगाबरू का चहुवान की सभा में नृत्य करती हुइ चन्दकला नामक गणिका की एडी में तीर लगाना।

महि मासाहिसायकयवनेन्द्रच्छत्रछेदन हम्मीराऽमात्यबाणग्भ्रातृत्रय त्यक्तरणस्तरणजिगमिषूभूतयवनेन्द्रप्रतिमोटन तत्प्रसादप्राप्तच्छाणिदुर्ग-बणिक्त्रय विश्वस्तनृपकर्णमित्थ्यानष्टाऽन्ना दिनाशनिवेदन नृपज्ञातैत-दुदन्तयवनेन्द्रवशीभवितुकाममहिमासाहिनिवारण पतिपृष्टराज्याऽऽशावती शरणागतप्रेषणवर्जन तदनन्तराऽऽशावती देवकुलकुमारी राज्ञीद्वय सहगमननिश्चयन चण्डासिराजहम्मीर स्वीयकुमाररत्नसिंह बल्लण-सार्थचित्रकूटप्रस्थापन पातरुद्घाटितदुर्गद्वारकृतावमर्दनिपातितसिदकि सिकंदर रहीम महरमादिम्लेच्छमण्डलहम्मीरस्वर्गसमारोहण मतान्त-रतन्मूर्द्धाशिवसमर्पणसूचन महिमासाहि मीरगाबरू परस्परप्रहारप्राणत्यजन हम्मीरमरणादिसमबर्ष बय आदि विवेचन प्रेक्षितपतिपतनराज्ञीद्वय दुर्गान्तपावकप्रविशन यवनराडलाबुद्दीन रणस्तम्भदुर्गसमाक्रमण मष्टत्रिंशा मयूखः ॥३७॥ आदितः सप्तचत्वारिंशदुत्तरैकशततमः ॥१४७॥

महिमाशाह का बाण से बादशाह के छत्र को काटना, हम्मीरसिंह के मन्त्री तीन वैश्य भाइयों का युद्ध को छोड़कर जाने की इच्छा वाले बादशाह को मोड़ना, उस पसन्नता से छाणीगढ़ पाकर तीनों बनियों को विश्वास किये हुए राजा के कानों में अन्नादिक खत्म हो जाने की बात कहना इसके बाद महिमाशाह का स्वयं को बादशाह को सौंपने का आगह करना पर राजा हम्मीर का इससे इनकार करना। पति के पूछने पर रानी आशावती का शरणागत को देने से मना करना, बाद में आशावती और दवलकुमारी दोनों रानियों के सती होने का निश्चय करना, चहुवान राजा हम्मीरसिंह का अपने कुमार रत्नसिंह को बल्लन के साथ चित्तौड़ भेजना, पभात समय गढ़ के द्वार खोल, युद्ध करके सिद्दकी, सिकन्दर, रहीम, हरम खान आदि म्लेच्छगण को मारकर हम्मीर का स्वग जाना, मतान्तर से शिव को मस्तक भेंट करने की सूचना करना, महिमाशाह और मीरगाबरू का परस्पर के पहारों से पाण छोड़ना, हम्मीरसिंह के मरण आदि सब वष और अवस्था का विवेचन करना, पति का नाश देखकर दोनों रानियों का गढ़ में ही अग्नि में पवेश करना, बादशाह अलाउद्दीन का रणथंभोर गढ़ लेने का अड़तीसवाँ मयूख समाप्त हुआ। और आदि से एक सौ सैंतालीस मयूख हुए।

इतिश्रीमदखिलमहीभृन्मुकुटमल्लीमाल्यमकरन्दमद्यमत्तमिलिन्द मुखरितचरणचिन्हिताऽऽरातिचूडबूंदीपूर्विलासिनीविलासिचाहुवाणचूडा-

मणिभारतीभागधेयजीवन्मुक्तिपद्यापथिकहड्डो पटङ्किचाहुवाणमहाराजाधिराजमहारावराजेन्द्र श्रीरामसिंह देवऽऽज्ञयागीर्वाणगिरादिषड् भाषावेशसुभ्रूभुजङ्गकाव्याकूपारकर्णधारविग्रहपौराणिकवंशविरोचनचक्रिचरणारविन्दचञ्चरीकचारुचमत्कृतचेतनचारणचक्रचण्डांशुचण्डीदानाऽऽत्मजमिश्रणसुकविसूर्यमल्लविहितवंशभास्करे महाचम्पूके पूर्वायणे मुहुक्कर्म्माणमारभ्यकुमारसमरसिंह बुन्दीप्राप्तिपर्यंतसप्तचत्वारिंश त्कुलपुरुषपर्यंतसमाचरितवर्णनं चतुर्थो राशिः समाप्त॥४॥

श्रीमान् सब राजाओं के मुकुटों में रहे हुए मोगरे के पुष्प सम्बन्धी मकरन्द (पुष्परस) रूप मद्य से मस्त हुए भमरों से शब्दायमान चरण कर चिह्नयुक्त किये हैं शत्रुओं के मस्तक जिन्होंने, बून्दीपुरी रूपी स्त्री के विलासी चहुवानों के शिरोमणि, सरस्वती है दायभाग में जिनके अथवा सरस्वती से कर लेने वाले अथात् पूण विद्वान, जीवन्मुक्ति माग के चलने वाले, हाडा पदवी वाले चहुवान महाराजाधिराज महारावराजेन्द श्रीरामसिंह देव की आज्ञा से संस्कृत भाषा आदि छह भाषा रूपी गणिकाओं के पति, काव्य रूपी समुद के कैवतक (केवटिये) शरीरवाले, पौराणिक चारण वंश के सूय, विष्णु भगवान् के चरणारविन्द के भमर, सुन्दर चमत्कारिक बुद्धिवाले चारणगण के सूय चण्डीदान के पुत्र मिश्रण (मीसण) शाखा के श्रेष्ट कवि सूयमह्ल के रचे हुए वंशभास्कर नामिक महाचम्पू के पूवायण में मुहुक्कमा से पारम्भ करके कुमार समरसिंह को बूंदी पाप्त हुइ वहाँ पयन्त सैंतालीस पीढ़ियों के समाचरित वणन की चतुथ राशि समाप्त हुइ।